नमो नमो निम्मलदंसणस्स

पूज्य आनंद-क्षमा-ललित-सुशील-सुधर्मसागर-गुरुभ्यो नमः

सवृत्तिक-आगम-सुत्ताणि

भाग 10

आगम - ५

'भगवती' मूलं एवं वृत्तिः [३]

मूल संशोधक :- पूज्यपाद आगमोद्धारक आचार्यश्री आनंदसागरसूरीश्वरजी महाराजसाहेब

अभिनव-संकलनकर्ता :- आगम दिवाकर मुनिश्री दीपरत्नसागरजी [M.Com., M.Ed., Ph.D., श्रुतमहर्षि]

पूज्य शासनप्रभावक आचार्यश्री हर्षसागरसूरिजी की प्रेरणा से

'वर्धमान जैन आगम मंदिर संस्था' पालिताणा

ईस प्रोजेक्ट के संपूर्ण-अनुदान-दाता

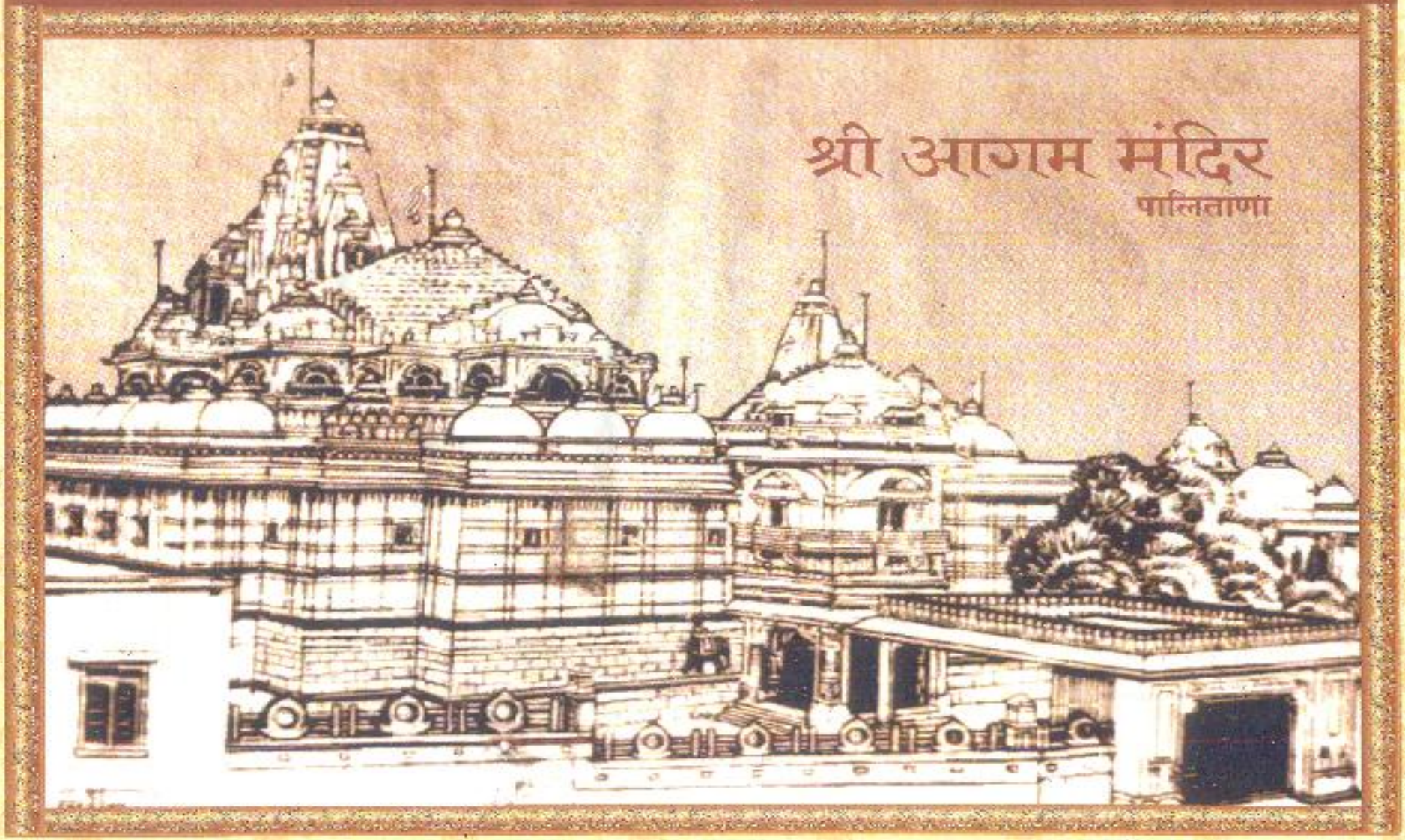

नमो नमो निम्मलदंसणस्स

सवृत्तिक-आगम-सुत्ताणि

मूल संशोधक

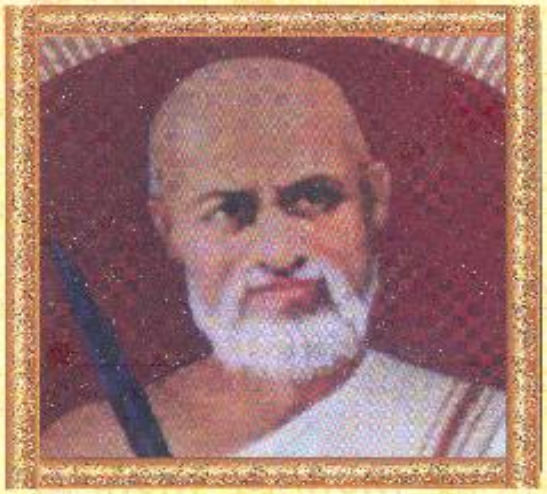

पूज्यपाद आगमोद्धारक आचार्य
श्री आनंदसागरसूरीश्वरजी महाराज

अभिनव-संकलनकर्ता

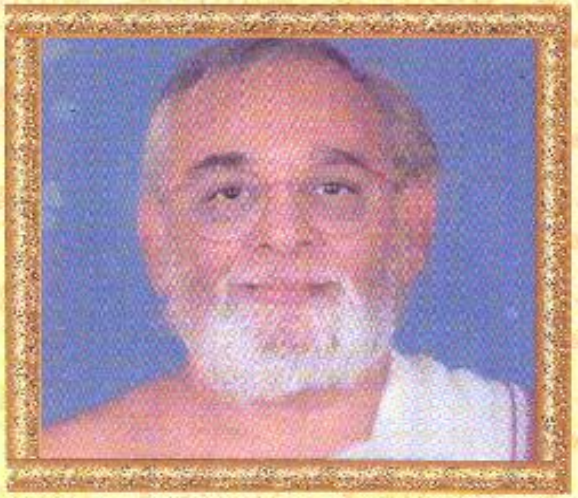

आगम दिवाकर मुनिश्री दीपरत्नसागरजी
[M.Com., M.Ed., Ph.D., श्रुतमहर्षि]

प्रत-प्राप्ति और पेज-सेटिंग कर्ता : www.jainelibrary.org के चेरमन श्री प्रवीणभाई शाह, अमेरिका
मुद्रक : नवप्रभात प्रिन्टींग प्रेस अमदावाद Mo 9825598855 / 9825306275

आगम

वाचना शताब्दी वर्ष

नमो नमो निम्मलदंसणस्स

पूज्य श्रीआनंद-क्षमा-ललित-सुशील-सुधर्मसागर गुरूभ्यो नम:

“भगवती” मूलं एवं वृत्ति: [भाग-3]

(अपरनाम- “व्याख्याप्रज्ञप्ति”) शतक- १२ से २०

[मूलं एवं अभयदेवसूरि रचिता वृत्ति:]

[आद्य संपादक: - पूज्य आगमोद्धारक आचार्यदेव श्री आनंदसागर सूरीश्वरजी म॰ सा॰]

(किञ्चित् वैशिष्ठ्यं समर्पितेन सह)

पुन: संकलनकर्ता→ **मुनि दीपरत्नसागर** (M.Com., M.Ed., Ph.D.)

28/07/2017, शुक्रवार, २०७३ श्रावण शुक्ल ५

‘सवृत्तिक-आगम-सुत्ताणि’ श्रेणि भाग-१०

श्री आगमोद्धारक-वाचना-शताब्दी-वर्ष-निमित्त ‘आगम-वृत्ति-मुद्रण-प्रोजेक्ट’

सामाचारी-संरक्षक, ज्ञानधनी, आगम-संशोधक, तीव्र-मेधावी, समाधिमृत्यु-प्राप्त, बहुमुखीप्रतिभाधारक

पूज्यपाद आगमोद्धारक आचार्यदेव श्री आनंदसागरसूरीश्वरजी महाराज साहेब

◆ जिन्होने शुद्ध-श्रद्धा, सम्यक्-श्रुत आराधना, यथाख्यातचारित्र के प्रति गति और अंत समय देह-ममत्व के त्याग के द्वारा कायोत्सर्ग नामक अभ्यंतर-तप कि मिशाल कायम कि है ऐसे बहुश्रुत आचार्य श्री सागरानंदसूरीश्वरजी महाराज का परिचय कराना मेरे लिए नामुमकिन है, फ़िर भी गुरुभक्ति बुद्धि से श्रद्धांजली स्वरुप एक मामुली सी झलक पैस करने का यह प्रयास मात्र है |

◆ चारित्र-ग्रहण के बाद अल्प कालमे जो अपने गुरुदेव की छत्रछाया से दूर हो गये, तो भी गुरुदेव के स्वर्ग-गमन को सिर्फ़ कर्मो का प्रभाव मानकर अपने संयम के लक्ष्य प्रति स्थिर रहते हुए अकेले ज्ञान-मार्ग कि साधना के पथ पर चले | पढाई के लिए ही कितने महिनो तक रोज एकासणा तप के साथ बारह किल्लोमिटर पैदल विहार भी किया | लेकिन अपने मंझिल पे डटे रहे, और परिणाम स्वरुप संस्कृत एवं प्राकृत भाषा का, प्राचीन लिपिओ का, व्याकरण-न्याय-साहित्य आदि का सम्पूर्ण ज्ञान प्राप्त किया | जैन आगमशास्त्रो के समुद्र को भी पार कर गए|

◆ एक अकेला आदमी भी क्या नहीं कर शकता? इस प्रश्न का उत्तर हमें इस महापुरुष के जीवन और कवन से मिल गया, जब वे चल पड़े देवर्द्धिगणी क्षमाश्रमण के स्थापित पथ पर. बिना किसी सहाय लिए हुए सिर्फ अकेले ही "जैन-आगम-शास्त्रो" को दीर्घजीवी बनाने के लिए अनेक हस्तप्रतो से शुद्ध-पाठ तैयार किये | दो वैकल्पिक आगम, कल्पसूत्र और निर्युक्तिओ को जोड़कर ४५ आगम-शास्त्रो को संशोधित कर के संपादित किया | फिर पालीताणामें आगम मंदिर बनवाकर आरस-पत्थर के ऊपर ये सभी आगम-साहित्य को कंडारा, सूरतमें ताम्रपत्र पर भी अंकित करवाए और "आगम मंजूषा" नाम से मुद्रण भी करवा के बड़ी बड़ी पेटीमें रखवा के गाँव गाँव भेज दिए | वर्तमानकालमे सर्व प्रथमबार ऐसा कार्य हुआ |

◆ सिर्फ मूल आगम के कार्य से ही उन के कदम रुके नही थे, उन्होंने आगमो की वृत्ति, चूर्णि, निर्युक्ति, अवचूरी, संस्कृत-छाया आदि का भी संशोधन-सम्पादन किया | उपयोगी विषयो के लिए उन्होंने एक लाख श्लोक प्रमाण संस्कृत-प्राकृत नए ग्रंथो की रचना भी की | कितने ही ग्रंथो की प्रस्तावना भी लिखी | ये सम्यक्-श्रुत मुद्रित करवाने के लिए आगमोदय समिति, देवचंद लालभाई इत्यादि विभिन्न संस्था की स्थापना भी की |

◆ ज्ञानमार्ग के अलावा सम्मेतशिखर, अंतरीक्षजी, केशरियाजी आदि तीर्थरक्षा कर के सम्यक-दर्शन-आराधना का परिचय भी दिया | राजाओं को प्रतिबोध कर के और वाचनाओ द्वारा अपनी प्रवचन-प्रभावकता भी उजागर करवाई | बालदिक्षा, देवद्रव्य-संरक्षण, तिथि-प्रश्न इत्यादि विषयोमे सत्य-पक्षमें अंत तक दृढ़ रहे | जैनशासन के लिए जब जरुरत पड़ी तब अदालती कारवाईओ का सामना भी बड़ी निडरता से किया था |

◆ सागरानंदजी के नाम से मशहूर हो चुके पूज्य आनंदसागरसूरीश्वरजीने अपने परिवार स्वरुप ७०० साधू-साध्वीजी भी शासन को भेट किये |

...ये थे हमारे गुरुदेव "सागरजी"... *.....मुनि दीपरत्नसागर...*

संयमैकलक्षी, उपधान-तप-प्रेरक, चारित्र-मार्ग-रागी, प्रवचन-पटु, सुपरिवार-युक्त

पूज्य गच्छाधिपतिआचार्यदेव श्री देवेन्द्रसागरसूरीश्वरजी महाराज साहेब

*** परमपूज्य आचार्यश्री आनंदसागरसूरीश्वरजी के पाट-परंपरामे हुए तिसरे गच्छाधिपति थे पूज्य आचार्य श्री देवेन्द्रसागरसूरीश्वरजी, जो एक पून्यवान् आत्मा थे, दीक्षा ग्रहण के बाद अल्पकालमे ही एक शिष्य के गुरु बन गये | फ़िर क्या ! शिष्यो कि संख्या बढती चली, बढ़ते हुए पुन्य के साथ-साथ वे आखिर 'गच्छाधिपति' पद पे आरूढ़ हो गए | इस महात्मा का पुन्य सिर्फ शिष्यों तक सिमित नही था, वे जहा कहीं भी 'उपधान-तप' की प्रेरणा करते थे, तुरंत ही वहां 'उपधान' हो जाते थे | प्रवचनपटुता एवं पर्षदापुन्य के कारण उन के उपदेश-प्राप्त बहोत आत्माओने संयम-मार्ग का स्वीकार किया | खुद भी संयमैकलक्षी होने के कारण चारित्रमार्ग के रागी तो थे ही, साथसाथ ज्ञानमार्ग का स्पर्श भी उन का निरंतर रहेता था | आप कभी भी दुपहर को चले जाइए, वे खुद अकेले या शिष्य-परिवार के साथ कोई भी ग्रन्थ के अध्ययन-अध्यापनमें रत दिखाई देंगे |

*** ये तो हमने उनके जीवन के दो-तीन पहेलु दिखाए | एक और भी अनुसरणीय बात उन के जीवनमें देखने को मिली थी- 'आराधना-प्रेम'. कैसी भी शारीरिक स्थिति हो, मगर उन्होंने दोनों शाश्वती ओलीजी, [पोष}दशमी, शुक्ल पंचमी, त्रिकाल देववंदन, पर्व या पर्वतिथि के देववंदन आदि आराधना कभी नहीं छोड़ी | आखरी सालोमें जब उन को एहसास हो गया की अब 'अंतिम-आराधना' का अवसर नजदीक है, तब उन के मुहमें एक ही रटण बारबार चालु हो गया- "*अरिहंतनुं शरण, सिद्धनुं शरण, साधुनुं शरण, केवली भगवंते भाखेला धर्मनुं शरण* " इसी चार शरणो के रटण के साथ ही वे समाधि-मृत्यु-रूप सम्यक् निद्रा को प्राप्त हुए थे | ऐसे महान् सूरिवर को भावबरी वंदना |

*** मुनि दीपरत्नसागर...

◆◆◆ श्री वर्धमान जैन आगम मंदिर संस्था, पालिताणा ◆◆◆

पूज्यपाद आनंदसागर-सूरीश्वरजी की बौद्धिक-प्रतिभा का मूर्तिमंत स्वरुप ऐसी इस संस्था की स्थापना विक्रम-संवत १९९९ मे महा-वद ५ को हुइ| *पूज्य आचार्य हर्षसागरसूरिजी की प्रेरणा से* जिन की तरफ़ से इस *सवृत्तिक-आगम-सुत्ताणि* के लिए संपूर्ण द्रव्य-सहाय की प्राप्ति हुइ |

शिल्प-स्थापत्य, शिलोत्कीर्ण आगम और समवसरण स्थित नयनरम्य ४५ चौमुख जिन-प्रतिमाजी से सुशोभित ऐसा ये 'आगममंदिर' है, जो शत्रुंजय-गिरिराज कि तलेटीमे स्थित है | वर्तमान २४ जिनवर, २० विहरमान जिनवर और १ शाश्वत मिलाकर ४५ चौमुखजी यहा बिराजमान है | जहां ४० समवसरण की रचना मेरु पर्वत के तिनो काण्ड के वर्णो के अनुसार चार अलग-अलग रंगो के आरस-पत्थर से बना है, देवो द्वारा रचित समवसरण के शास्त्र वर्णन-अनुसार आगम-मंदिर कि समवसरण का स्थापत्य है | ऐसी अनेक विशेषता से युक्त ये आगममंदिर है |

**** मुनि दीपरत्नसागर...*

'सागर-समुदाय-एकता-संरक्षक, तीर्थ-उद्धार-कार्य-प्रवृत्त, गुणानुरागी'

इस "सवृत्तिक-आगम-सुत्ताणि' श्रेणि भाग १ से ४० के संपूर्ण अनुदान के प्रेरणादाता

पूज्य शासनप्रभावक आचार्य श्री हर्षसागरसूरिजी महाराज साहेब

पूज्यपाद स्व॰ गच्छाधिपति देवेन्द्रसागर-सूरीश्वरजी के विनयी शिष्य एवं दो गच्छाधिपतिओ के मुख्य सहायक के रुपमे 'सागर समुदाय' के सुचारु संचालक पूज्य हर्षसागरसूरिजी, जिन की प्रेरणा से ये "सवृत्तिक-आगम-सुत्ताणि" के मुद्रण के लिए संपूर्ण द्रव्यराशि प्राप्त हुई , उनका अत्यल्प परिचय यहां करेंगे| समुदाय-एकता के लिए सदैव प्रयत्नशील रहते हुए ये महात्मा *समुदाय के साधु-साध्वीजी* की आवश्यकताओकी पूर्ती के लिए भी प्रवृत्त रहेते है, प्राचीन-अर्वाचीन तीर्थो के जीर्णोद्धार एवं विकाश के लिए भी उत्साहित रहेते है, ज्ञान-क्षेत्र अछूता न रहे इसीलिए अनुमोदना, अनुदान एवं समय मिलने पर शास्त्र-वांचनमें भी रूचि रखते है | समुदाय के जरूरतमंद साध्वीजी भगवंतो के आवास का विषय हो या साध्वीजी के विहारमें मजदूर का वेतन चुकाना हो, ऐसे छोटे-छोटे कार्यो के प्रति भी उन का लक्ष्य रहेता है | दर्शन-शुद्धि के लिए जब उन्होंने समग्र भारतवर्ष के १०० साल तक के पुराने जिनालयो में १८ अभिषेक की प्रेरणा की, उस वक्त लगभग सभी अभिषेक-सामग्री की द्रव्य-शुद्धि का ख़याल रखते हुए अपनी मेधावी बुद्धि का परिचय दिया था, साथमे अनुकंपा भाव से पुजारी या विधि करानेवाले को यत्किंचित् बहुमान प्रगट करते हुए कुछ धन-राशि प्रदान करवाई |

ऐसे बहुगुण-संपन्न महात्मा पूज्य आचार्यश्री हर्षसागर-सूरिजी को हम भावभरी वंदना करते हुए इस श्रुतकार्य का प्रारंभ करने जा रहे है |

**** मुनि दीपरत्नसागर*

[कात्रेज]पूना, शंखेश्वर, कपडवंज, प्रभासपाटण आदि स्थानोमे आगममंदिर के प्रेरक, कर्मग्रंथ अभ्यासु, निस्पृह महात्मा

पूज्यपाद गच्छाधिपति आचार्य श्री दौलतसागर-सूरीश्वरजी महाराज साहेब

(एवं) अजातशत्रु, स्वाध्याय-रसिक, प्रशांतमूर्ती और अपने गुरु के प्रीतिपात्र

परम पूज्य आचार्य श्री नंदीवर्धनसागर-सूरिजी महाराज साहेब

इस पवित्र श्रुत-कार्यमे दोनो सूरिवरो का स्मरण करते हुए कोटि कोटि वंदना के साथ

.....मुनि दीपरत्नसागर

मूलांक::	विषय:	पृष्ठांक:	मूलांक:	विषय:	पृष्ठांक:	मूलांक:	विषय:	पृष्ठांक:
♦	शतकं - १		..♦	.....शतकं - ३		..♦	.....शतकं - ५	
००१	उद्देशक: ०१ चलन		१७०	उद्देशक: ०२ चमरोत्पात		२६४	उद्देशक: ०९ राजगृह	
०२६	उद्देशक: ०२ दु:ख		१७८	उद्देशक: ०३ क्रिया		२७१	उद्देशक: १० चन्द्रमा	
०३४	उद्देशक: ०३ कांक्षाप्रदोष		१८४	उद्देशक: ०४ यान		♦	शतकं - ६	
०४६	उद्देशक: ०४ कर्मप्रकृति		१८९	उद्देशक: ०५ स्त्री		२७२	उद्देशक: ०१ वेदना	
०५२	उद्देशक: ०५ पृथ्वी		१९१	उद्देशक: ०६ नगर		२७७	उद्देशक: ०२ आहार	
०६९	उद्देशक: ०६ यावंत		१९३	उद्देशक: ०७ लोकपाल		२७८	उद्देशक: ०३ महा-आश्रव	
०७९	उद्देशक: ०७ नैरयिक		२०१	उद्देशक: ०८ देवाधिपति		२८६	उद्देशक: ०४ सप्रदेशक	
०८५	उद्देशक: ०८ बाल		२०५	उद्देशक: ०९ इन्द्रिय		२९१	उद्देशक: ०५ तमस्काय	
०९४	उद्देशक: ०९ गुरुत्व		२०६	उद्देशक: १० परिषद्		३००	उद्देशक: ०६ भव्य	
१०२	उद्देशक: १० चलत		♦	शतकं - ४		३०२	उद्देशक: ०७ शाली	
♦	शतकं - २		२०७	उद्देशका: १-४ लोकपाल-विमान		३१३	उद्देशक: ०८ पृथ्वी	
१०५	उद्देशक: ०१ स्कंदक		२१०	उद्देशका: ५-८लोकपालराजधानी		३१७	उद्देशक: ०९ कर्म	
११८	उद्देशक: ०२ समुद्घात		२११	उद्देशक: ०९ नैरयिक		३२०	उद्देशक: १० अन्ययूथिक	
११९	उद्देशक: ०३ पृथ्वी		२१२	उद्देशक: १० लेश्या		♦..	शतकं - ७....	
१२२	उद्देशक: ०४ इन्द्रिय		♦..	शतकं - ५.....		३२७	उद्देशक: ०१ आहार	
१२३	उद्देशक: ०५ अन्यतीर्थिक		२१५	उद्देशक: ०१ रवि		३३९	उद्देशक: ०२ विरति	
१३८	उद्देशक: ०६ भाषा		२२०	उद्देशक: ०२ वायु		३४५	उद्देशक: ०३ स्थावर	
१३९	उद्देशक: ०७ देव		२२३	उद्देशक: ०३ जालग्रंथिका		३५१	उद्देशक: ०४ जीव	
१४०	उद्देशक: ०८ चमरचंचा		२२५	उद्देशक: ०४ शब्द		३५३	उद्देशक: ०५ पक्षी	
१४१	उद्देशक: ०९ समयक्षेत्र		२४१	उद्देशक: ०५ छद्मस्थ		३५५	उद्देशक: ०६ आयु	
१४२	उद्देशक: १० अस्तिकाय		२४४	उद्देशक: ०६ आयु		३६१	उद्देशक: ०७ अनगार	
♦..	शतकं - ३.....		२५३	उद्देशक: ०७ पुद्गल		३६५	उद्देशक: ०८ छद्मस्थ	
१५१	उद्देशक: ०१ चमरविकुर्वणा		२६२	उद्देशक: ०८ निर्ग्रन्थीपुत्र		३७१	उद्देशक: ०९ असंवृत	

मूलांक:	विषय:	पृष्ठांक:	मूलांक:	विषय:	पृष्ठांक:	मूलांक:	विषय:	पृष्ठांक:
..♦	.....शतकं - ७		..♦	.....शतकं - १०		..♦	.....शतकं - १२	----
३७७	उद्देशक: १० अन्यतीर्थिक		४८२	उद्देशक: ०३ आत्मऋद्धि		५४२	उद्देशक: ०५ अतिपात	०४७
♦	शतकं - ८		४८७	उद्देशक: ०४ श्यामहस्ती		५४६	उद्देशक: ०६ राह्	०५५
३८१	उद्देशक: ०१ पुद्गल		४८८	उद्देशक: ०५ देव		५५०	उद्देशक: ०७ लोक	०६३
३८९	उद्देशक: ०२ आशीविष		४९०	उद्देशक: ०६ सभा		५५२	उद्देशक: ०८ नाग	०६८
३९७	उद्देशक: ०३ वृक्ष		४९३	उद्देशका: ०७-३४ अंतर्द्वीप		५५४	उद्देशक: ०९ देव	०७१
४००	उद्देशक: ०४ क्रिया		♦	शतकं - ११		५६०	उद्देशक: १० आत्मा	०८१
४०१	उद्देशक: ०५ आजीविक		४९४	उद्देशक: ०१ उत्पल		♦	शतकं - १३	०९७
४०५	उद्देशक: ०६ प्रासुकआहार		४९९	उद्देशक: ०२ शालूक		५६३	उद्देशक: ०१ पृथ्वी	०९७
४१०	उद्देशक: ०७ अदत्तादान		५००	उद्देशक: ०३ पलाश		५६७	उद्देशक: ०२ देव	१०७
४१२	उद्देशक: ०८ प्रत्यनिक		५०१	उद्देशक: ०४ कुम्भिक		५६८	उद्देशक: ०३ नरक	११३
४२२	उद्देशक: ०९ प्रयोगबन्ध		५०२	उद्देशक: ०५ नालिक		५६९	उद्देशक: ०४ पृथ्वी	११४
४३०	उद्देशक: १० आराधना		५०३	उद्देशक: ०६ पद्म		५८४	उद्देशक: ०५ आहार	१३८
♦	शतकं - ९		५०४	उद्देशक: ०७ कर्णिक		५८५	उद्देशक: ०६ उपपात	१३९
४३८	उद्देशक: ०१ जम्बू		५०५	उद्देशक: ०८ नलिन		५८९	उद्देशक: ०७ भाषा	१४७
४४०	उद्देशक: ०२ ज्योतिष्क		५०६	उद्देशक: ०९ शिवराजर्षि		५९३	उद्देशक: ०८ कर्मप्रकृति	१५७
४४४	उद्देशका: ०३-३० अंतर्द्विप		५१०	उद्देशक: १० लोक		५९४	उद्देशक: ०९ अनगारवैक्रिय	१५८
४४५	उद्देशक: ३१ असोच्चा		५१४	उद्देशक: ११ काल		५९५	उद्देशक: १० समुद्घात	१६३
४५१	उद्देशक: ३२ गांगेय		५२५	उद्देशक: १२ आलभिका		♦..	शतकं - १४.....	१६५
४६०	उद्देशक: ३३ कुण्डग्राम		♦..	शतकं - १२.....	०१०	५९६	उद्देशक: ०१ चरम	१६५
४७१	उद्देशक: ३४ पुरुषघातक		५२९	उद्देशक: ०१ शंख	०१०	६००	उद्देशक: ०२ उन्माद	१७३
♦..	शतकं - १०.....		५३४	उद्देशक: ०२ जयंति	०१८	६०३	उद्देशक: ०३ शरीर	१७८
४७३	उद्देशक: ०१ दिशा		५३७	उद्देशक: ०३ पृथ्वी	०२७	६०७	उद्देशक: ०४ पुद्गल	१८२
४७७	उद्देशक: ०२ संवृतअनगार		५३८	उद्देशक: ०४ पुद्गल	०२७	६१२	उद्देशक: ०५ अग्नि	१८७

मूलांक::	विषय:	पृष्ठांक:	मूलांक:	विषय:	पृष्ठांक:	मूलांक:	विषय:	पृष्ठांक:
..♦	.....शतकं - १४	----	..♦	.....शतकं - १७	----	..♦	.....शतकं - १९	----
६१५	उद्देशक: ०६ आहार	१९३	७०६	उद्देशक: ०४ क्रिया	३६०	७७०	उद्देशक: ०८ निर्वृत्ति	४४५
६१८	उद्देशक: ०७ संश्लिष्ट	१९८	७०८	उद्देशका: ६-११ पृथ्व्यादिकाय	३६१	७७४	उद्देशक: ०९ करण	४४९
६२४	उद्देशक: ०८ अंतर	२०८	७१५	उद्देशक: १२ एकेन्द्रिय	३६२	७७५	उद्देशक: १० व्यंतर	४५०
६३१	उद्देशक: ०९ अनगार	२१५	७१६	उद्देशका:१३-१७ नागादिकुमार	३६२	♦	शतकं - २०	४५१
६३६	उद्देशक: १० केवली	२१९	♦	शतकं - १८	३६७	७७९	उद्देशक: ०१ बेईन्द्रिय	४५१
♦	शतकं - १५	२२२	७२१	उद्देशक: ०१ प्रथम	३६७	७८१	उद्देशक: ०२ आकाश	४५४
६३७	--गोशालक	----	७२७	उद्देशक: ०२ विशाखा	३७९	७८३	उद्देशक: ०३ प्राणवध	४५६
♦	शतकं - १६	२९७	७२८	उद्देशक: ०३ माकंदीपुत्र	३८३	७८५	उद्देशक: ०४ उपचय	४५९
६६०	उद्देशक: ०१ अधिकरण	२९७	७३३	उद्देशक: ०४ प्राणातिपात	३९२	७८६	उद्देशक: ०५ परमाणु	४६०
६६६	उद्देशक: ०२ जरा	३०३	७३६	उद्देशक: ०५ असुरकुमार	३९६	७८९	उद्देशक: ०६ अंतर	४८२
६७०	उद्देशक: ०३ कर्म	३०९	७४०	उद्देशक: ०६ गुडवर्णादि	४००	७९२	उद्देशक: ०७ बन्ध	४८५
६७२	उद्देशक: ०४ जावंतिय	३१२	७४२	उद्देशक: ०७ केवली	४०२	७९३	उद्देशक: ०८ भूमि	४८७
६७३	उद्देशक: ०५ गंगदत्त	३१५	७४९	उद्देशक: ०८ अनगारक्रिया	४१२	८०१	उद्देशक: ०९ चारण	४९१
६७७	उद्देशक: ०६ स्वप्न	३२२	७५०	उद्देशक: ०९ भव्यद्रव्य	४१६	८०३	उद्देशक: १० आयु	४९५
६८२	उद्देशक: ०७ उपयोग	३३१	७५३	उद्देशक: १० सोमिल	४१८	♦	शतकं - २१	
६८३	उद्देशक: ०८ लोक	३३२	♦..	शतकं - १९.....	४२६	८०६	वग्गं: १ शाली-आदि	
६८७	उद्देशक: ०९ बलिन्द्र	३४०	७५८	उद्देशक: ०१ लेश्या	४२६	८१५	वग्गा:२-८ मूलअलसी, वंश,	
६८८	उद्देशक: १० अवधि	३४२	७६०	उद्देशक: ०२ गर्भ	४२७		इक्षु,सेडिय, अम्मरुह, तुलसी	
६८९	उद्देशक: ११-१४ दविपादि०	३४३	७६१	उद्देशक: ०३ पृथ्वी	४२८	♦	शतकं - २२	
♦..	शतकं - १७.....	३४४	७६५	उद्देशक: ०४ महाश्रव	४३९	८२२	वग्गा:१-६ताड़,निम्ब,अगस्ति	
६९३	उद्देशक: ०१ कुंजर	३४४	७६६	उद्देशक: ०५ चरम	४४१		वेंगन, सिरियक,पुष्पकलिका	
६९९	उद्देशक: ०२ संयत	३४९	७६८	उद्देशक: ०६ दवीप	४४२	♦	शतकं - २३	
७०३	उद्देशक: ०३ शैलेशी	३५५	७६९	उद्देशक: ०७ भवन	४४३	८२९	वग्गा:१-४आलू,लोही,आय,पाठा	

मूलांक::	विषय:	पृष्ठांक	मूलांक:	विषय:	पृष्ठांक:	मूलांक:	विषय:	पृष्ठांक:
♦	शतकं - २४		♦	शतकं - २८		♦	शतकं - ३५	
८३५	उद्देशक: ०१ नैरयिक		९९२	उद्देशका: १-११ जीव आदि--		१०४४	एकेन्द्रिय शतकानि-१२	
८४३	उद्देशक: ०२ परिमाण			जाव २६ शतक		♦	शतकं - ३६	
८४४	उद्देशक: ०३-११नागादिकुमारा		♦	शतकं - २९		१०५८	बेन्द्रिय शतकानि-१२	
८४६	उद्देशक: १२-१६ पृथ्व्यादि		९९५	उद्देशका: १-११ जीव आदि--		♦	शतकं - ३७	
८५३	उद्देशक: १७-२० बेईन्द्रियादि			जाव २६ शतक		१०६१	त्रिन्द्रिय शतक	
८५७	उद्देशक: २१-२४ मनुष्यादि		♦	शतकं - ३०		♦	शतकं - ३८	
♦	शतकं - २५		९९८	उद्देशका: १-११ समवसरण,		१०६२	चतुरिन्द्रिय शतक	
८६१	उद्देशका: १-१२ लेश्या, द्रव्य,			लेश्या आदि		♦	शतकं - ३९	
	संस्थान, युग्म,पर्यव, निर्गन्थ		♦	शतकं - ३१		१०६३	असंज्ञीपंचेन्द्रिय शतकानि	
	संयत, ओघ, भव्य, अभव्य,		१००३	उद्देशका: १-२८ युग्म, नरक,		♦	शतकं - ४०	
	सम्यग्दृष्टि, मिथ्यादृष्टि			उपपात आदि विषयका:		१०६४	संज्ञीपंचेन्द्रिय शतकानि	
♦	शतकं - २६		♦	शतकं - ३२		♦	शतकं - ४१	
९७५	उद्देशका: १-११ जीव, लेश्या,		१०१६	उद्देशका: १-२८ नारक्स्य---		१०६८ से	उद्देशका: १-१९६ राशियुग्म,	
	पखिय, दृष्टि, अज्ञान, ज्ञान,			उद्वर्तन, उपपात, लेश्यादि		---१०७९	त्र्योजराशि, द्वापरयुग्मराशि	
	संज्ञा,वेद,कषाय,उपयोग,योग		♦	शतकं - ३३			कल्योजराशि इत्यादि	
♦	शतकं - २७		१०१८	एकेन्द्रिय शतकानि-१२			----------	
९९१	उद्देशका: १-११ जीव आदि--		♦	शतकं - ३४		१०८० से	उपसंहार गाथा	
	जाव २६ शतक		१०३३	एकेन्द्रिय शतकानि-१२		---१०८६	परिसमाप्त:	

[भगवती- मूलं एवं वृत्तिः] इस प्रकाशन की विकास-गाथा

यह प्रत सबसे पहले "(श्रीमद्) भगवतीसूत्र" के नामसे सन १९१८ (विक्रम संवत १९७४) में आगमोदय समिति द्वारा प्रकाशित हुई, इस के संपादक-महोदय थे पूज्यपाद आगमोद्धारक आचार्यदेव श्री आनंदसागरसूरीश्वरजी (सागरानंदसूरिजी) महाराज साहेब |

इसी प्रत को फिर से दुसरे पूज्यश्रीओने अपने-अपने नामसे भी छपवाई, जिसमे उन्होंने खुदने तो कुछ नहीं किया, मगर इसी प्रत को ऑफसेट करवा के, अपना एवं अपनी प्रकाशन संस्था का नाम छाप दिया. जिसमे किसीने पूज्यपाद् सागरानंदसूरिजी के नाम को आगे रखा, और अपनी वफादारी दिखाई, तो किसीने स्वयं को ही इस पुरे कार्य का कर्ता बता दिया और श्रीमद्सागरानंदसूरिजी तथा प्रकाशक का नाम ही मिटा दिया |

✤ हमारा ये प्रयास क्यों? ✤ आगम की सेवा करने के हमें तो बहोत अवसर मिले, ४५-आगम सटीक भी हमने ३० भागोमे १२५०० से ज्यादा पृष्ठोमें प्रकाशित करवाए है, किन्तु लोगो की पूज्य श्री सागरानंदसूरीश्वरजी के प्रति श्रद्धा तथा प्रत स्वरुप प्राचीन प्रथा का आदर देखकर हमने इसी प्रत को स्केन करवाई, उसके बाद एक स्पेशियल फोरमेट बनवाया, जिसमे बीचमे पूज्यश्री संपादित प्रत ज्यों की त्यों रख दी, ऊपर शीर्षस्थानमे आगम का नाम, फिर शतक-वग्र्ग-उद्देशक-मूलसूत्र- आदि के नंबर लिख दिए, ताँकि पढ़नेवाले को प्रत्येक पेज पर कौनसा शतक, उद्देशक आदि चल रहे है उसका सरलता से ज्ञान हो शके, बायीं तरफ आगम का क्रम और इसी प्रत का सूत्रक्रम दिया है, उसके साथ वहाँ 'दीप अनुक्रम' भी दिया है, जिससे हमारे प्राकृत, संस्कृत, हिंदी गुजराती, इंग्लिश आदि सभी आगम प्रकाशनोमें प्रवेश कर शके | हमारे अनुक्रम तो प्रत्येक प्रकाशनोमें एक सामान और क्रमशः आगे बढते हुए ही है, इसीलिए सिर्फ क्रम नंबर दिए है, मगर प्रत में गाथा और सूत्रों के नंबर अलग-अलग होने से हमने जहां सूत्र है वहाँ कौंस [-] दिए है और जहां गाथा है वहाँ ||-|| ऐसी दो लाइन खींची है|

हमने एक अनुक्रमणिका भी बनायी है, जिसमे प्रत्येक शतक, वग्र्ग एवं उद्देशक लिख दिये है और साथमें इस सम्पादन के पृष्ठांक भी दे दिए है, जिससे अभ्यासक व्यक्ति अपने चहिते शतक या विषय तक आसानी से पहुँच शकता है | अनेक पृष्ठ के नीचे विशिष्ठ फूटनोट भी लिखी है, जिसमे उस पृष्ठ पर चल रहे ख़ास विषयवस्तु की, मूल प्रतमें रही हुई कोई-कोई मुद्रण-भूल की या क्रमांकन सम्बन्धी जानकारी प्राप्त होती है |

शासनप्रभावक पूज्य आचार्यश्री हर्षसागरसूरिजी म०सा० की प्रेरणासे और श्री वर्धमान जैन आगममंदिर, पालिताणा की संपूर्ण द्रव्य सहाय से ये 'सवृत्तिक-आगम-सुत्ताणि' भाग-१० का मुद्रण हुआ है, हम उन के प्रति हमारा आभार व्यक्त करते है |

.....मुनि दीपरत्नसागर.

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [४३७--४३९] + गाथा

दीप अनुक्रम [५२९--५३२]

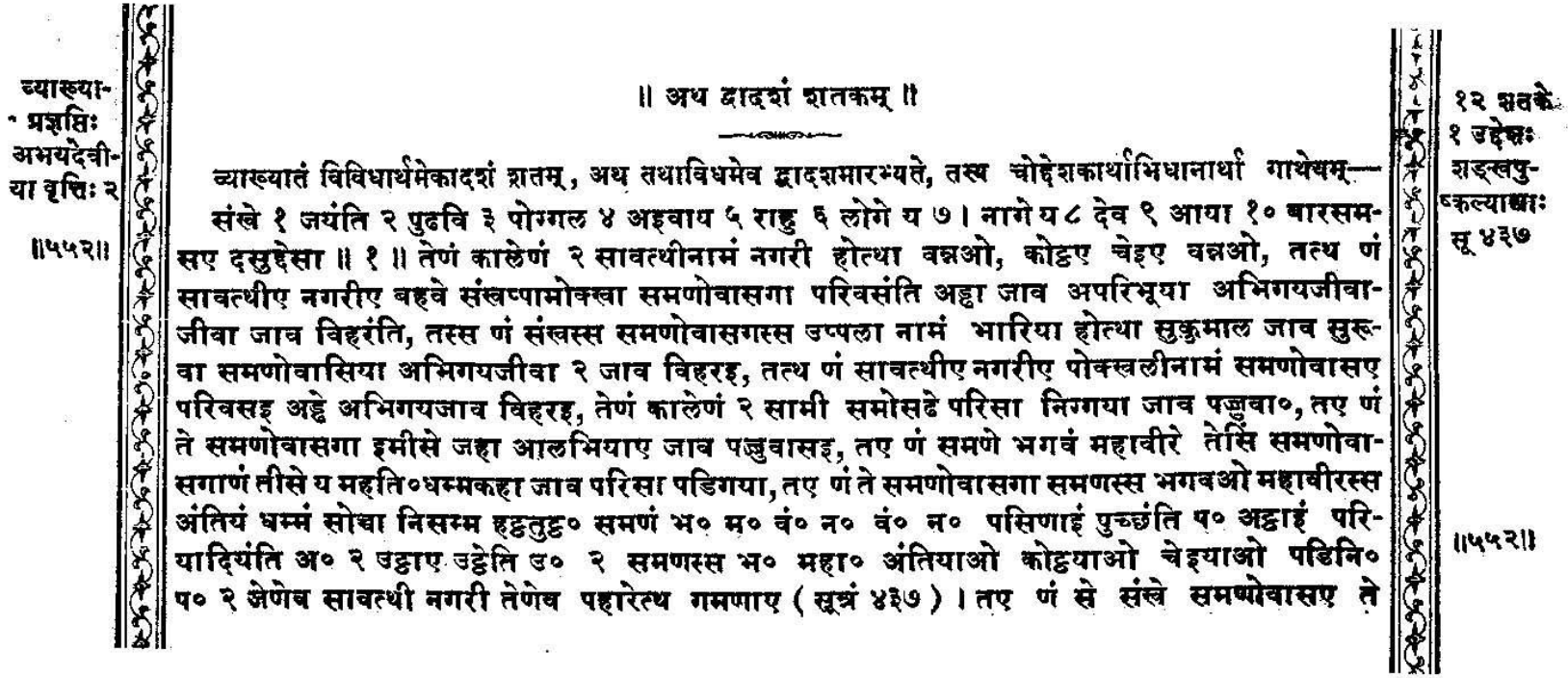

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥५५२॥

॥ अथ द्वादशं शतकम् ॥

व्याख्यातं विविधार्थमेकादशं शतम्, अथ तथाविधमेव द्वादशमारभ्यते, तस्य चोद्देशकार्थाभिधानार्था गाथेयम्—

संखे १ जयंति २ पुढवि ३ पोग्गल ४ अइवाय ५ राहु ६ लोगे य ७। नागे य ८ देव ९ आया १० बारसमसए दसुद्देसा ॥ १ ॥ तेणं कालेणं २ सावत्थीनामं नगरी होत्था वन्नओ, कोट्ठए चेइए वन्नओ, तत्थ णं सावत्थीए नगरीए बहवे संखप्पामोक्खा समणोवासगा परिवसंति अड्ढा जाव अपरिभूया अभिगयजीवाजीवा जाव विहरंति, तस्स णं संखस्स समणोवासगस्स उप्पला नामं भारिया होत्था सुकुमाल जाव सुरूवा समणोवासिया अभिगयजीवा २ जाव विहरइ, तत्थ णं सावत्थीए नगरीए पोक्खलीनामं समणोवासए परिवसइ अड्ढे अभिगयजाव विहरइ, तेणं कालेणं २ सामी समोसढे परिसा निग्गया जाव पज्जुवा०, तए णं ते समणोवासगा इमीसे जहा आलभियाए जाव पज्जुवासइ, तए णं समणे भगवं महावीरे तेसिं समणोवासगाणं तीसे य महति०धम्मकहा जाव परिसा पडिगया, तए णं ते समणोवासगा समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियं धम्मं सोच्चा निसम्म हट्ठतुट्ठ० समणं भ० म० वं० न० वं० न० पसिणाइं पुच्छंति प० अट्ठाइं परियादियंति अ० २ उट्ठाए उट्ठेति उ० २ समणस्स भ० महा० अंतियाओ कोट्ठयाओ चेइयाओ पडिनि० प० २ जेणेव सावत्थी नगरी तेणेव पहारेत्थ गमणाए (सूत्रं ४३७)। तए णं से संखे समणोवासए ते

१२ शतके १ उद्देशः शङ्खपुष्कल्यादयः सू ४३७

॥५५२॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र द्वादशं शतकं आरभ्यते

अथ द्वादशमे शतके प्रथम-उद्देशक: आरभ्यते

शंख नामक श्रमणोपासकस्य वृतांत

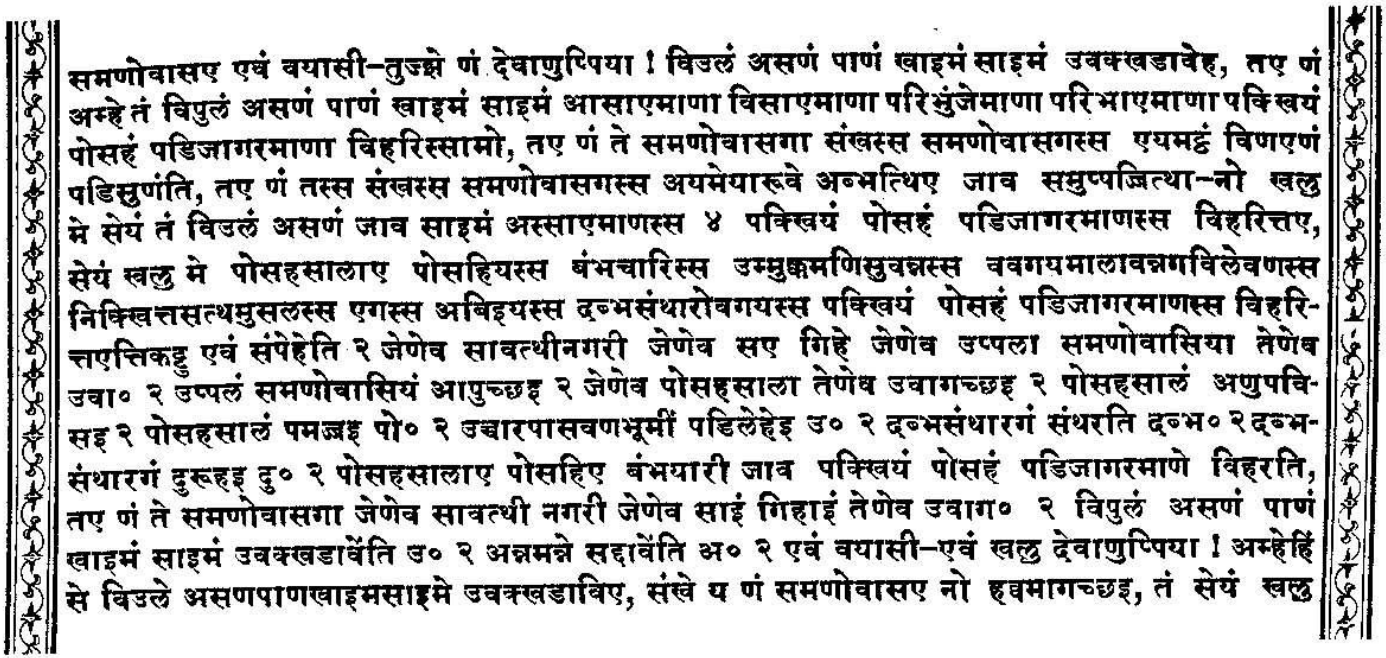

समणोवासए एवं वयासी–तुब्भे णं देवाणुप्पिया ! विउलं असणं पाणं खाइमं साइमं उवक्खडावेह, तए णं अम्हे तं विपुलं असणं पाणं खाइमं साइमं आसाएमाणा विसाएमाणा परिभुंजेमाणा परिभाएमाणा पक्खियं पोसहं पडिजागरमाणा विहरिस्सामो, तए णं ते समणोवासगा संखस्स समणोवासगस्स एयमट्ठं विणएणं पडिसुणंति, तए णं तस्स संखस्स समणोवासगस्स अयमेयारूवे अब्भत्थिए जाव समुप्पज्जित्था–नो खलु मे सेयं तं विउलं असणं जाव साइमं अस्साएमाणस्स ४ पक्खियं पोसहं पडिजागरमाणस्स विहरित्तए, सेयं खलु मे पोसहसालाए पोसहियस्स बंभचारिस्स उम्मुक्कमणिसुवन्नस्स ववगयमालावन्नगविलेवणस्स निक्खित्तसत्थमुसलस्स एगस्स अबिइयस्स दब्भसंथारोवगयस्स पक्खियं पोसहं पडिजागरमाणस्स विहरित्तएत्तिकट्टु एवं संपेहेति २ जेणेव सावत्थीनगरी जेणेव सए गिहे जेणेव उप्पला समणोवासिया तेणेव उवा० २ उप्पलं समणोवासियं आपुच्छइ २ जेणेव पोसहसाला तेणेव उवागच्छइ २ पोसहसालं अणुपविसइ २ पोसहसालं पमज्जइ पो० २ उच्चारपासवणभूमीं पडिलेहेइ उ० २ दब्भसंथारगं संथरति दब्भ० २ दब्भसंथारगं दुरूहइ दु० २ पोसहसालाए पोसहिए बंभयारी जाव पक्खियं पोसहं पडिजागरमाणे विहरति, तए णं ते समणोवासगा जेणेव सावत्थी नगरी जेणेव साइं गिहाइं तेणेव उवाग० २ विपुलं असणं पाणं खाइमं साइमं उवक्खडावेंति उ० २ अन्नमन्ने सद्दावेंति अ० २ एवं वयासी–एवं खलु देवाणुप्पिया ! अम्हेहिं से विउले असणपाणखाइमसाइमे उवक्खडाविए, संखे य णं समणोवासए नो हव्वमागच्छइ, तं सेयं खलु

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [४३७--४३९] + गाथा

दीप अनुक्रम [५२९--५३२]

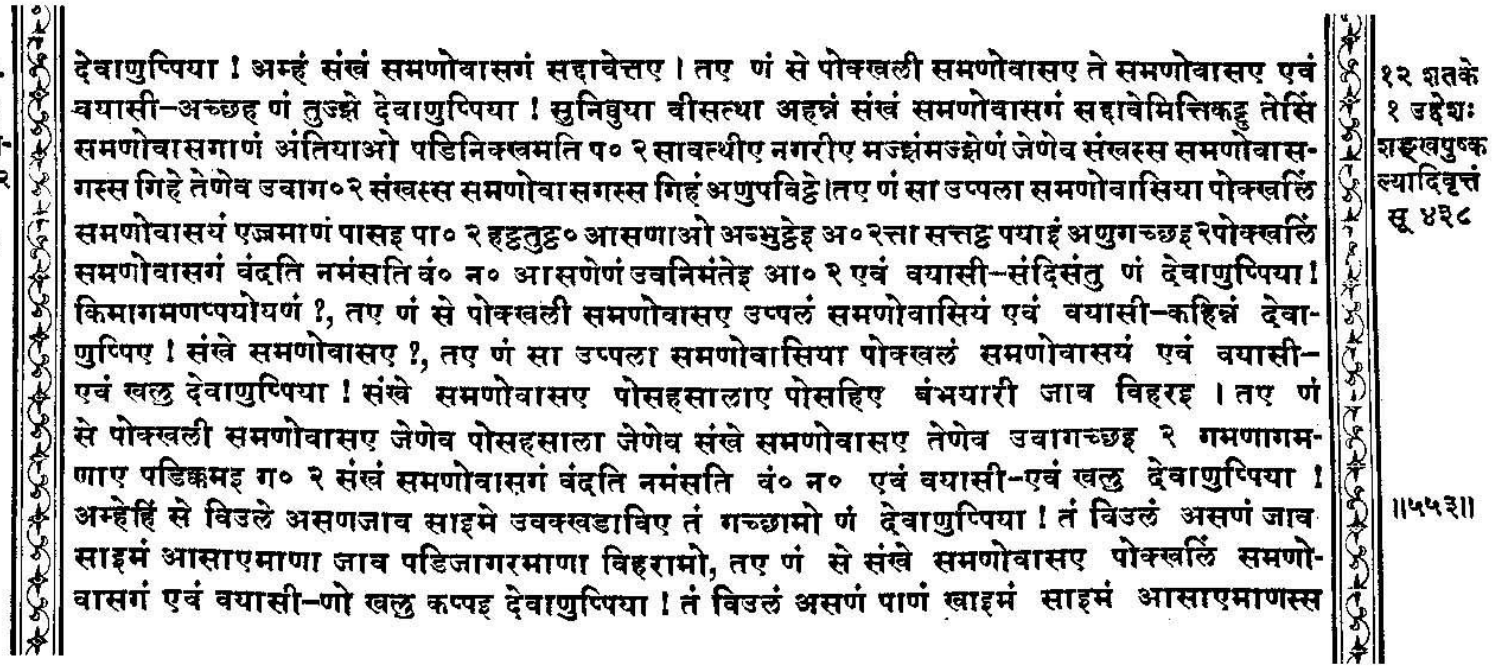

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः२

॥५५३॥

देवाणुप्पिया ! अम्हं संखं समणोवासगं सद्दावेत्तए । तए णं से पोक्खली समणोवासए ते समणोवासए एवं वयासी–अच्छह णं तुज्झे देवाणुप्पिया ! सुनिवुया वीसत्था अहन्नं संखं समणोवासगं सद्दावेमित्तिकट्टु तेसिं समणोवासगाणं अंतियाओ पडिनिक्खमति प० २ सावत्थीए नगरीए मज्झंमज्झेणं जेणेव संखस्स समणोवास-गस्स गिहे तेणेव उवाग०२ संखस्स समणोवासगस्स गिहं अणुपविट्ठे ।तए णं सा उप्पला समणोवासिया पोक्खलिं समणोवासयं एज्जमाणं पासइ पा० २ हट्ठतुट्ठ० आसणाओ अब्भुट्ठेइ अ०२त्ता सत्तट्ठ पयाइं अणुगच्छइ२पोक्खलिं समणोवासगं वंदति नमंसति वं० न० आसणेणं उवनिमंतेइ आ० २ एवं वयासी–संदिसंतु णं देवाणुप्पिया! किमागमणप्पयोयणं ?, तए णं से पोक्खली समणोवासए उप्पलं समणोवासियं एवं वयासी–कहिन्नं देवा-णुप्पिए ! संखे समणोवासए ?, तए णं सा उप्पला समणोवासिया पोक्खलं समणोवासयं एवं वयासी– एवं खलु देवाणुप्पिया ! संखे समणोवासए पोसहसालाए पोसहिए बंभयारी जाव विहरइ । तए णं से पोक्खली समणोवासए जेणेव पोसहसाला जेणेव संखे समणोवासए तेणेव उवागच्छइ २ गमणागम-णाए पडिक्कमइ ग० २ संखं समणोवासगं वंदति नमंसति वं० न० एवं वयासी–एवं खलु देवाणुप्पिया ! अम्हेहिं से विउले असणजाव साइमे उवक्खडाविए तं गच्छामो णं देवाणुप्पिया ! तं विउलं असणं जाव साइमं आसाएमाणा जाव पडिजागरमाणा विहरामो, तए णं से संखे समणोवासए पोक्खलिं समणो-वासगं एवं वयासी–णो खलु कप्पइ देवाणुप्पिया ! तं विउलं असणं पाणं खाइमं साइमं आसाएमाणस्स

१२ शतके १ उद्देशः शङ्खपुष्क ल्यादिवृत्तं सू ४३८

॥५५३॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

शंख नामक श्रमणोपासकस्य वृतांत

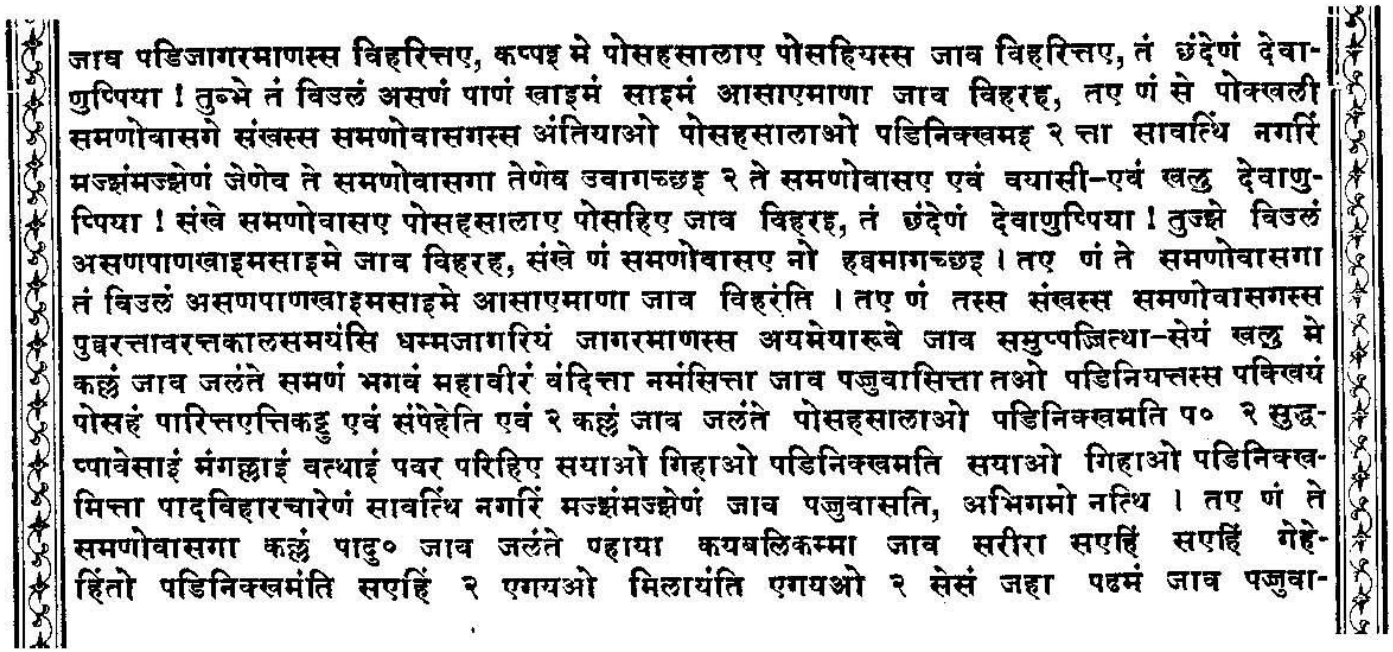

जाव पडिजागरमाणस्स विहरित्तए, कप्पइ मे पोसहसालाए पोसहियस्स जाव विहरित्तए, तं छंदेणं देवाणुप्पिया ! तुब्भे तं विउलं असणं पाणं खाइमं साइमं आसाएमाणा जाव विहरह, तए णं से पोक्खली समणोवासगे संखस्स समणोवासगस्स अंतियाओ पोसहसालाओ पडिनिक्खमइ २ त्ता सावत्थिं नगरिं मज्झंमज्झेणं जेणेव ते समणोवासगा तेणेव उवागच्छइ २ ते समणोवासए एवं वयासी–एवं खलु देवाणुप्पिया ! संखे समणोवासए पोसहसालाए पोसहिए जाव विहरइ, तं छंदेणं देवाणुप्पिया ! तुब्भे विउलं असणपाणखाइमसाइमे जाव विहरह, संखे णं समणोवासए नो हव्वमागच्छइ । तए णं ते समणोवासगा तं विउलं असणपाणखाइमसाइमे आसाएमाणा जाव विहरंति । तए णं तस्स संखस्स समणोवासगस्स पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि धम्मजागरियं जागरमाणस्स अयमेयारूवे जाव समुप्पज्जित्था–सेयं खलु मे कल्लं जाव जलंते समणं भगवं महावीरं वंदित्ता नमंसित्ता जाव पज्जुवासित्ता तओ पडिनियत्तस्स पक्खियं पोसहं पारित्तएत्तिकट्टु एवं संपेहेति एवं २ कल्लं जाव जलंते पोसहसालाओ पडिनिक्खमति प० २ सुद्धप्पावेसाइं मंगल्लाइं वत्थाइं पवर परिहिए सयाओ गिहाओ पडिनिक्खमति सयाओ गिहाओ पडिनिक्खमित्ता पादविहारचारेणं सावत्थिं नगरिं मज्झंमज्झेणं जाव पज्जुवासति, अभिगमो नत्थि । तए णं ते समणोवासगा कल्लं पादु० जाव जलंते ण्हाया कयबलिकम्मा जाव सरीरा सएहिं सएहिं गेहेहिंतो पडिनिक्खमंति सएहिं २ एगयओ मिलायंति एगयओ २ सेसं जहा पढमं जाव पज्जुवा-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	शंख नामक श्रमणोपासकस्य वृतांत

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [४३७--४३९] + गाथा

दीप अनुक्रम [५२९--५३२]

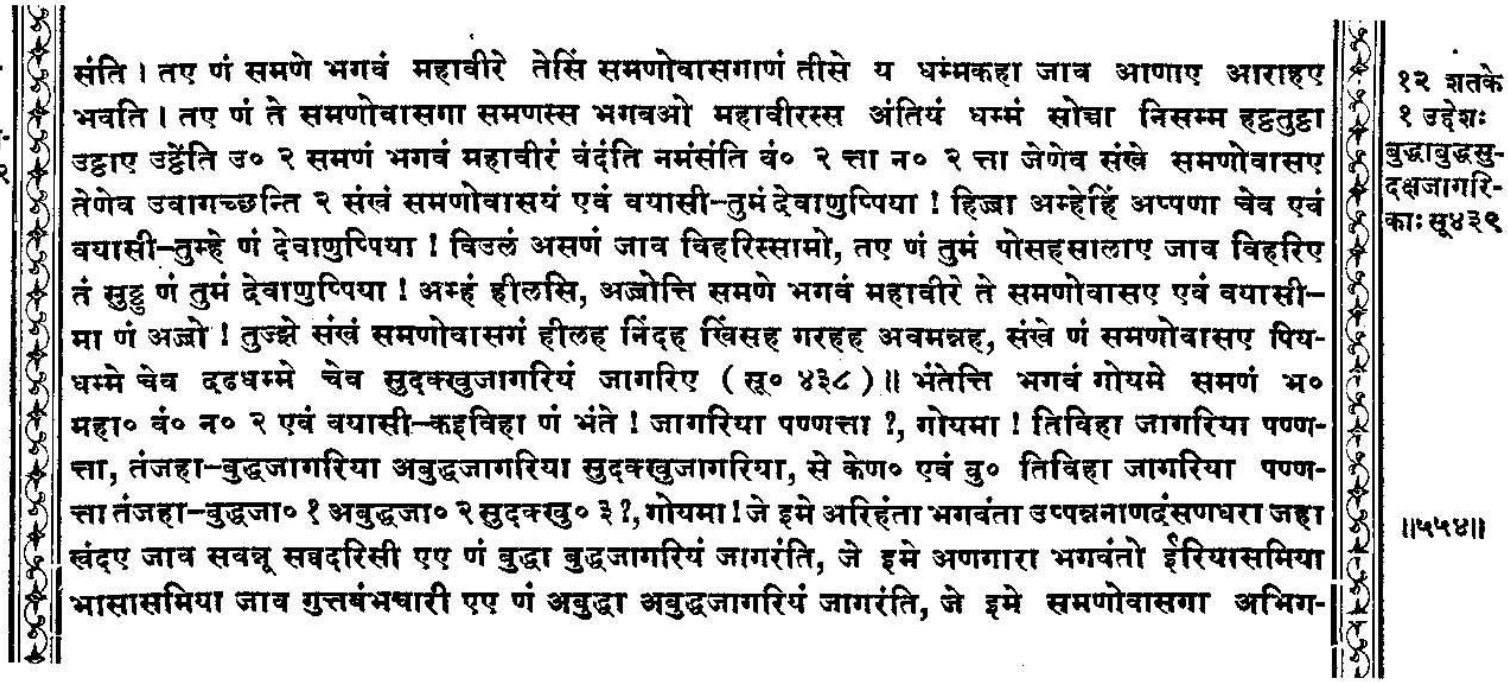

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥५५४॥

संति । तए णं समणे भगवं महावीरे तेसिं समणोवासगाणं तीसे य धम्मकहा जाव आणाए आराहए भवति । तए णं ते समणोवासगा समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियं धम्मं सोचा निसम्म हट्ठतुट्ठा उट्ठाए उट्ठेंति उ० २ समणं भगवं महावीरं वंदंति नमंसंति वं० २ त्ता न० २ त्ता जेणेव संखे समणोवासए तेणेव उवागच्छन्ति २ संखं समणोवासयं एवं वयासी–तुमं देवाणुप्पिया ! हिज्जा अम्हेहिं अप्पणा चेव एवं वयासी–तुम्हे णं देवाणुप्पिया ! विउलं असणं जाव विहरिस्सामो, तए णं तुमं पोसहसालाए जाव विहरिए तं सुट्ठु णं तुमं देवाणुप्पिया ! अम्हं हीलसि, अज्जोत्ति समणे भगवं महावीरे ते समणोवासए एवं वयासी– मा णं अज्जो ! तुज्झे संखं समणोवासगं हीलह निंदह खिंसह गरहह अवमन्नह, संखे णं समणोवासए पिय-धम्मे चेव दढधम्मे चेव सुदक्खुजागरियं जागरिए (सू० ४३८)॥ भंतेत्ति भगवं गोयमे समणं भ० महा० वं० न० २ एवं वयासी–कइविहा णं भंते ! जागरिया पण्णत्ता ?, गोयमा ! तिविहा जागरिया पण्ण-त्ता, तंजहा–बुद्धजागरिया अबुद्धजागरिया सुदक्खुजागरिया, से केण० एवं वु० तिविहा जागरिया पण्ण-त्ता तंजहा–बुद्धजा० १ अबुद्धजा० २ सुदक्खु० ३ ?, गोयमा ! जे इमे अरिहंता भगवंता उप्पन्ननाणदंसणधरा जहा खंदए जाव सवन्नू सवदरिसी एए णं बुद्धा बुद्धजागरियं जागरंति, जे इमे अणगारा भगवंतो ईरियासमिया भासासमिया जाव गुत्तबंभचारी एए णं अबुद्धा अबुद्धजागरियं जागरंति, जे इमे समणोवासगा अभिग-

१२ शतके १ उद्देशः बुद्धाबुद्धसु-दक्षजागरि-काः सू४३९

॥५५४॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

शंख नामक श्रमणोपासकस्य वृतांत, बुद्ध-आदि जागरिका

यजीवाजीवा जाव विहरन्ति एते णं सुदक्खुजागरियं जागरंति, से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ तिविहा जागरिया जाव सुदक्खुजागरिया (सूत्रं ४३९) ॥

'संखे'त्यादि ॥ शङ्खश्रमणोपासकविषयः प्रथम उद्देशकः । 'जयंति'त्ति जयन्त्यभिधानश्राविकाविषयो द्वितीयः । 'पुढवि'त्ति रत्नप्रभापृथिवीविषयस्तृतीयः । 'पुग्गल'त्ति पुद्गलविषयश्चतुर्थः । 'अइवाए'त्ति प्राणातिपातादिविषयः पञ्चमः । 'राहु'त्ति राहुवक्तव्यतार्थः षष्ठः । 'लोगे य'त्ति लोकविषयः सप्तमः । 'नागे य'त्ति सर्पवक्तव्यतार्थोऽष्टमः । 'देव'त्ति देवभेदविषयो नवमः । 'आय'त्ति आत्मभेदनिरूपणार्थो दशम इति ॥ तत्र प्रथमोद्देशके किञ्चिल्लिख्यते— 'आसाएमाण'त्ति ईषत्स्वादयन्तो बहु च त्यजन्तः इक्षुखण्डादेरिव 'विस्साएमाण'त्ति विशेषेण स्वादयन्तोऽल्पमेव त्यजन्तः खर्जूरादेरिव 'परिभाएमाण'त्ति ददतः 'परिभुंजेमाण'त्ति सर्वमुपभुञ्जाना अल्पमप्यपरित्यजन्तः, एतेषां च पदानां वार्त्तमानिकप्रत्ययान्तत्वेऽप्यतीतप्रत्ययान्तता द्रष्टव्या, ततश्च तद्विपुलमशनाद्यास्वादितवन्तः सन्तः 'पक्खियं पोसहं पडिजागरमाणा विहरिस्सामो'त्ति पक्षे–अर्द्धमासि भवं पाक्षिकं 'पौषधम्' अव्यापारपौषधं 'प्रतिजाग्रतः' अनुपालयन्तः 'विहरिष्यामः' स्थास्यामः, यच्चेहातीतकालीनप्रत्ययान्तत्वेऽपि वार्त्तमानिकप्रत्ययोपादानं तद्भोजनानन्तरमेवाक्षेपेण पौषधाभ्युपगमप्रदर्शनार्थं, एवमुत्तरत्रापि गमनिका कार्येत्येके, अन्ये तु व्याचक्षते–इह किल पौषधं पर्वदिनानुष्ठानं, तच्च द्वेधा–इष्टजनभोजनदानादिरूपमाहारादिपौषधरूपं च, तत्र शङ्ख इष्टजनभोजनदानरूपं पौषधं कर्त्तुकामः सन् यदुक्तवांस्तदर्शयतेदमुक्तं—'तए णं अम्हे तं विउलं असणपाणखाइमसाइमं अस्साएमाणा'इत्यादि, पुनश्च

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

शंख नामक श्रमणोपासकस्य वृतांत

प्रत सूत्रांक [४३७--४३९] + गाथा

दीप अनुक्रम [५२९--५३२]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥५५५॥

शङ्ख एव संवेगविशेषवशादाद्यपौषधविनिवृत्तमनाः द्वितीयपौषधं चिकीर्षुर्यच्चिन्तितवांस्तद्दर्शयतेदमुक्तम्—'नो खलु मे सेयं त'मित्यादि, 'एगस्स अबिइयस्स'त्ति 'एकस्य' बाह्यसहायापेक्षया केवलस्य 'अद्वितीयस्य' तथाविधक्रोधादिसहायापेक्षया केवलस्यैव, न चैकस्येति भणनादेकाकिन एव पौषधशालायां पौषधं कर्त्तुं कल्पत इत्यवधारणीयं, एतस्य चरितानुवादरूपत्वात् तथा ग्रन्थान्तरे बहूनां श्रावकाणां पौषधशालायां मिलनश्रवणाद्दोषाभावात्परस्परेण स्मारणादिविशिष्टगुणसम्भवाच्चेति। 'गमणागमणाए पडिक्कमइ'त्ति ईर्यापथिकीं प्रतिक्रामतीत्यर्थः, 'छंदेणं'ति स्वाभिप्रायेण न तु मदीयाज्ञयेति। 'पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि'त्ति पूर्वरात्रश्च–रात्रेः पूर्वो भागः अपगता रात्रिरपररात्रः स च पूर्वरात्रापररात्रस्तल्लक्षणः कालसमयो यः स तथा तत्र 'धम्मजागरियं'ति धर्माय धर्मचिन्तया वा जागरिका–जागरणं धर्म्मजागरिका तां 'पारित्तएत्तिकट्टु एवं संपेहेइ'त्ति 'पारयितुं' पारं नेतुम् 'एवं सम्प्रेक्षते' इत्यालोचयति, किमित्याह—'इतिकर्त्तुम्' एतस्यैवार्थस्य करणायेति। 'अभिगमो णत्थि'त्ति पञ्चप्रकारः पूर्वोक्तोऽभिगमो नास्त्यस्य, सचित्तादिद्रव्याणां विमोचनीयानामभावादिति। 'जहा पढमं'ति यथा तेषामेव प्रथमनिर्गमस्तथा द्वितीयनिर्गमोऽपि वाच्य इत्यर्थः, 'हिज्जो'त्ति ह्यो–ह्यस्तनदिने 'सुदुक्खुजागरियं जागरिए'त्ति सुट्ठु दरिसणं जस्स सो सुदक्खू तस्स जागरिया–प्रमादनिद्राव्यपोहेन जागरणं सुदक्खुजागरिया तां जागरितः कृतवानित्यर्थः, 'बुद्धा बुद्धजागरियं जागरंति'त्ति बुद्धाः केवलावबोधेन, ते च बुद्धानां–व्यपोढाज्ञाननिद्राणां जागरिका–प्रबोधो बुद्धजागरिका तां कुर्वन्ति 'अबुद्धा अबुद्धजागरियं जागरंति'त्ति अबुद्धाः केवलज्ञानाभावेन यथासम्भवं शेषज्ञानसद्भावाच्च बुद्धसदृशास्ते चाबुद्धानां–

१२ शतके १ उद्देशः शङ्खादि-वृत्तं जागरिकाच

॥५५५॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

शंख नामक श्रमणोपासकस्य वृतांत

छद्मस्थज्ञानवतां या जागरिका सा तथा तां जाग्रति ॥ अथ भगवन्तं शङ्खस्तेषां मनाक्परिकुपितश्रमणोपासकानां कोपोपशमनाय क्रोधादिविपाकं पृच्छन्नाह—

तए णं से संखे समणोवासए समणं भ० महावीरं वंदइ नमं० २ एवं वयासी–कोहवसट्टे णं भंते ! जीवे किं बंधए किं पकरेति किं चिणाति किं उवचिणाति ?, संखा ! कोहवसट्टे णं जीवे आउयवज्जाओ सत्त कम्मपगडीओ सिढिलबंधणबद्धाओ एवं जहा पढमसए असंवुडस्स अणगारस्स जाव अणुपरियट्टइ । माणवसट्टे णं भंते ! जीवे एवं चेव । एवं मायावसट्टेवि एवं लोभवसट्टेवि जाव अणुपरियट्टइ । तए णं ते समणोवासगा समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियं एयमट्ठं सोच्चा निसम्म भीया तत्था तसिया संसारभउव्विग्गा समणं भगवं महावीरं वं० नमं० २ जेणेव संखे समणोवासए तेणेव उवा० २ संखं समणोवासगं वं० न० २ त्ता एयमट्ठं संमं विणएणं भुज्जो २ खामेंति । तए णं ते समणोवासगा सेसं जहा आलंभियाए जाव पडिगया, भंतेत्ति भगवं गोयमे समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ २ एवं वयासी–पभू णं भंते ! संखे समणोवासए देवाणुप्पियाणं अंतियं सेसं जहा इसिभद्दपुत्तस्स जाव अंतं काहेति । सेवं भंते ! सेवं भंते त्ति जाव विहरइ (सूत्रं ४४०) ॥ १२–१ ॥

'कोहवसट्टे ण'मित्यादि, 'इसिभद्दपुत्तस्स'त्ति अनन्तरशतोक्तस्येति ॥ द्वादशशते प्रथमः ॥ १२–१ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	अत्र द्वादशमे शतके प्रथम-उद्देशक: परिसमाप्त: शंख नामक श्रमणोपासकस्य वृतांत

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [४४१--४४३]

दीप अनुक्रम [५३४--५३६]

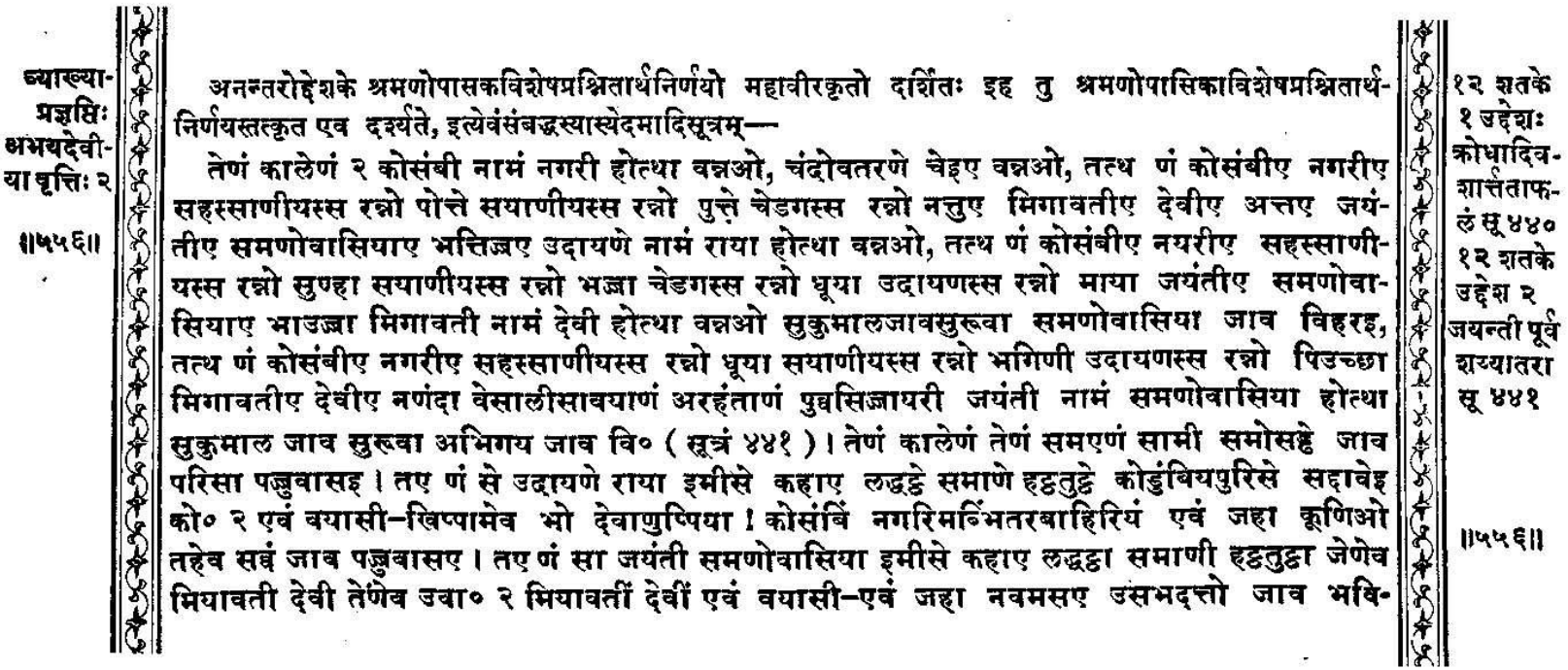

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥५५६॥

अनन्तरोद्देशके श्रमणोपासकविशेषप्रश्नितार्थनिर्णयो महावीरकृतो दर्शितः इह तु श्रमणोपासिकाविशेषप्रश्नितार्थ-निर्णयस्तत्कृत एव दर्श्यते, इत्येवंसंबद्धस्यास्येदमादिसूत्रम्—

तेणं कालेणं २ कोसंबी नामं नगरी होत्था वन्नओ, चंदोवतरणे चेइए वन्नओ, तत्थ णं कोसंबीए नगरीए सहस्साणीयस्स रन्नो पोत्ते सयाणीयस्स रन्नो पुत्ते चेडगस्स रन्नो नत्तुए मिगावतीए देवीए अत्तए जयं-तीए समणोवासियाए भत्तिज्जए उदायणे नामं राया होत्था वन्नओ, तत्थ णं कोसंबीए नयरीए सहस्साणी-यस्स रन्नो सुण्हा सयाणीयस्स रन्नो भज्जा चेडगस्स रन्नो धूया उदायणस्स रन्नो माया जयंतीए समणोवा-सियाए भाउज्जा मिगावती नामं देवी होत्था वन्नओ सुकुमालजावसुरूवा समणोवासिया जाव विहरइ, तत्थ णं कोसंबीए नगरीए सहस्साणीयस्स रन्नो धूया सयाणीयस्स रन्नो भगिणी उदायणस्स रन्नो पिउच्छा मिगावतीए देवीए णणंदा वेसालीसावयाणं अरहंताणं पुव्वसिज्जायरी जयंती नामं समणोवासिया होत्था सुकुमाल जाव सुरूवा अभिगय जाव वि० (सूत्रं ४४१) । तेणं कालेणं तेणं समएणं सामी समोसढे जाव परिसा पज्जुवासइ । तए णं से उदायणे राया इमीसे कहाए लद्धट्ठे समाणे हट्ठतुट्ठे कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ को० २ एवं वयासी–खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया ! कोसंबिं नगरिमब्भिंतरबाहिरियं एवं जहा कूणिओ तहेव सव्वं जाव पज्जुवासए । तए णं सा जयंती समणोवासिया इमीसे कहाए लद्धट्ठा समाणी हट्ठतुट्ठा जेणेव मियावती देवी तेणेव उवा० २ मियावतीं देवीं एवं वयासी–एवं जहा नवमसए उसभदत्तो जाव भवि-

१२ शतके १ उद्देशः क्रोधादिव-शात्तताफ-लं सू ४४० १२ शतके उद्देश २ जयन्ती पूर्व शय्यातरा सू ४४१

॥५५६॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अथ द्वादशमे शतके द्वितीय-उद्देशक: आरभ्यते

जयंति श्रमणोपासिका एवं तस्या प्रश्ना:

प्रत सूत्रांक [४४१--४४३]

दीप अनुक्रम [५३४--५३६]

स्सइ । तए णं सा मियावती देवी जयंतीए समणोवासियाए जहा देवाणंदा जाव पडिसुणेति । तए णं सा मियावती देवी कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ को० २ एवं वयासी–खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया ! लहुकरणजुत्त-जोइयजाव धम्मियं जाणप्पवरं जुत्तामेव उवट्ठवेह जाव उवट्ठवेंति जाव पच्चप्पिणंति । तए णं सा मियावती देवी जयंतीए समणोवासियाए सद्धिं ण्हाया कयबलिकम्मा जाव सरीरा बहूहिं खुज्जाहिं जाव अंतेउराओ निग्गच्छति अं० २ जेणेव बाहिरिया उवट्ठाणसाला जेणेव धम्मिए जाणप्पवरे तेणेव उ० २ जाव रूढा । तए णं सा मियावती देवी जयंतीए समणोवासियाए सद्धिं धम्मियं जाणप्पवरं दुरूढा समाणी नियगपरियालगा जहा उसभदत्तो जाव धम्मियाओ जाणप्पवराओ पच्चोरुहइ । तए णं सा मियावती देवी जयंतीए समणोवासियाए सद्धिं बहूहिं खुज्जाहिं जहा देवाणंदा जाव वं० नमं० उदायणं रायं पुरओ कट्टु ठितिया चेव जाव पज्जुवासइ । तए णं समणे भगवं महा०उदायणस्स रन्नो मियावईए देवीए जयंतीए समणोवासियाए तीसे य महतिमहा० जाव धम्मं० परिसा पडिगया उदायणे पडिगए मियावती देवीवि पडिगया (सूत्रं ४४२) । तए णं सा जयंती समणोवासिया समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियं धम्मं सोच्चा निसम्म हट्ठतुट्ठा समणं भ० महावीरं वं० न० २ एवं वयासी–कहिन्नं भंते ! जीवा गरुयत्तं हव्वमागच्छन्ति ?, जयंती ! पाणाइवाएणं जाव मिच्छादंसणसल्लेणं, एवं खलु जीवा गरुयत्तं हव्वं० एवं जहा पढमसए जाव वीयीवयंति । भवसिद्धियत्तणं भंते ! जीवाणं किं सभावओ परिणामओ ?, जयं-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जयंति श्रमणोपासिका एवं तस्या प्रश्ना:

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [४४१--४४३]

दीप अनुक्रम [५३४--५३६]

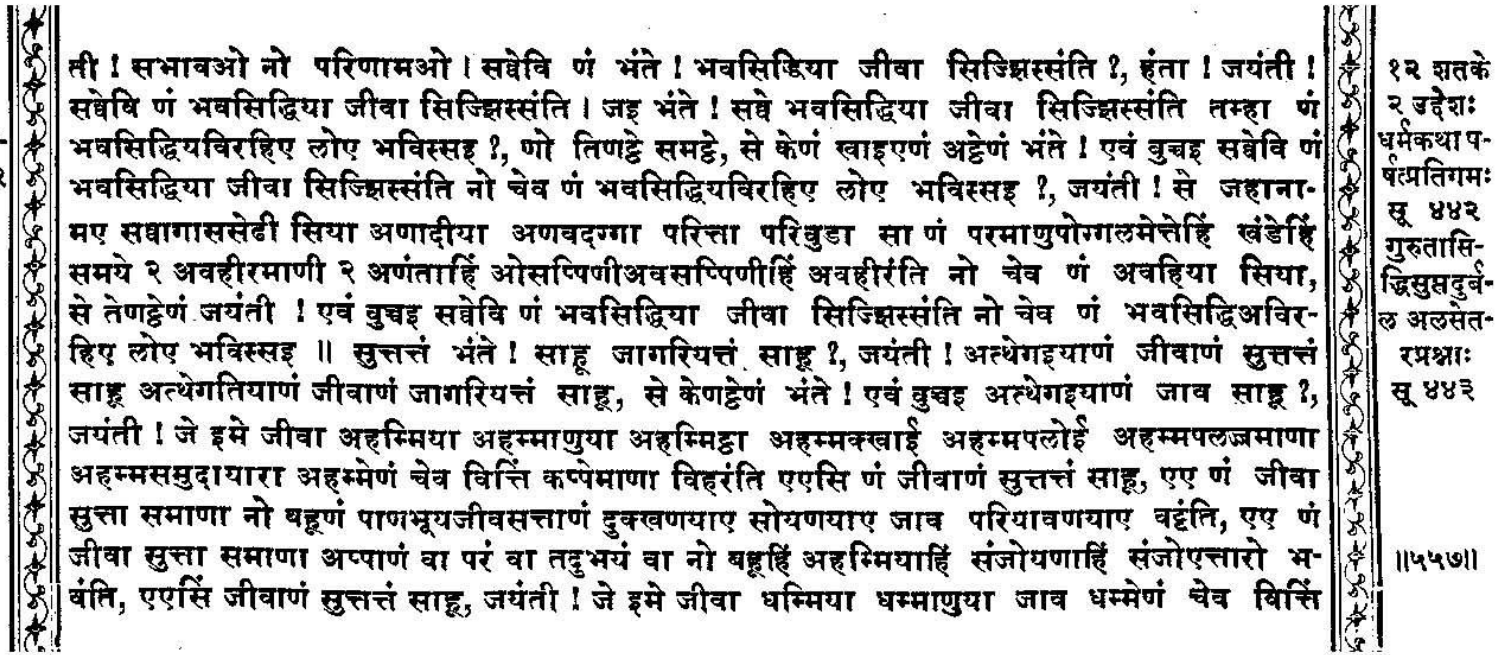

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥५५७॥

ती ! सभावओ नो परिणामओ । सव्वेवि णं भंते ! भवसिद्धिया जीवा सिज्झिस्संति ?, हंता ! जयंती ! सव्वेवि णं भवसिद्धिया जीवा सिज्झिस्संति । जइ भंते ! सव्वे भवसिद्धिया जीवा सिज्झिस्संति तम्हा णं भवसिद्धियविरहिए लोए भविस्सइ ?, णो तिणट्ठे समट्ठे, से केणं खाइएणं अट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ सव्वेवि णं भवसिद्धिया जीवा सिज्झिस्संति नो चेव णं भवसिद्धियविरहिए लोए भविस्सइ ?, जयंती ! से जहानामए सव्वागाससेढी सिया अणादीया अणवदग्गा परित्ता परिवुडा सा णं परमाणुपोग्गलमेत्तेहिं खंडेहिं समये २ अवहीरमाणी २ अणंताहिं ओसप्पिणीअवसप्पिणीहिं अवहीरंति नो चेव णं अवहिया सिया, से तेणट्ठेणं जयंती ! एवं वुच्चइ सव्वेवि णं भवसिद्धिया जीवा सिज्झिस्संति नो चेव णं भवसिद्धिअविरहिए लोए भविस्सइ ॥ सुत्तत्तं भंते ! साहू जागरियत्तं साहू ?, जयंती ! अत्थेगइयाणं जीवाणं सुत्तत्तं साहू अत्थेगतियाणं जीवाणं जागरियत्तं साहू, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ अत्थेगइयाणं जाव साहू ?, जयंती ! जे इमे जीवा अहम्मिया अहम्माणुया अहम्मिट्ठा अहम्मक्खाई अहम्मपलोई अहम्मपलज्जमाणा अहम्मसमुदायारा अहम्मेणं चेव वित्तिं कप्पेमाणा विहरंति एएसि णं जीवाणं सुत्तत्तं साहू, एए णं जीवा सुत्ता समाणा नो बहूणं पाणभूयजीवसत्ताणं दुक्खणयाए सोयणयाए जाव परियावणयाए वट्टंति, एए णं जीवा सुत्ता समाणा अप्पाणं वा परं वा तदुभयं वा नो बहूहिं अहम्मियाहिं संजोयणाहिं संजोएत्तारो भवंति, एएसिं जीवाणं सुत्तत्तं साहू, जयंती ! जे इमे जीवा धम्मिया धम्माणुया जाव धम्मेणं चेव वित्तिं

१२ शतके २ उद्देशः धर्मकथा पर्यंतप्रतिगमः सू ४४२ गुरुतासिद्धिसुप्तदुर्बल अलसंतप्रश्नाः सू ४४३

॥५५७॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जयंति श्रमणोपासिका एवं तस्या प्रश्ना:

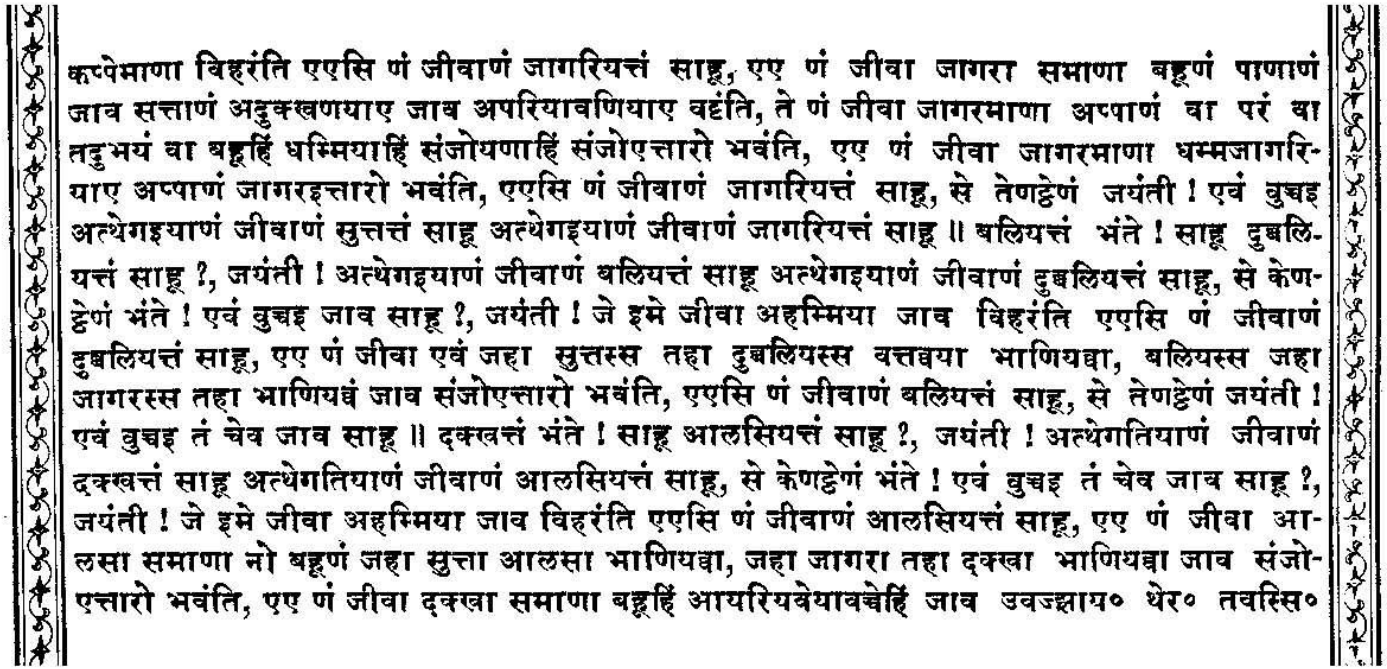

कप्पेमाणा विहरंति एएसि णं जीवाणं जागरियत्तं साहू, एए णं जीवा जागरा समाणा बहूणं पाणाणं जाव सत्ताणं अदुक्खणयाए जाव अपरियावणियाए वट्टंति, ते णं जीवा जागरमाणा अप्पाणं वा परं वा तदुभयं वा बहूहिं धम्मियाहिं संजोयणाहिं संजोएत्तारो भवंति, एए णं जीवा जागरमाणा धम्मजागरियाए अप्पाणं जागरइत्तारो भवंति, एएसि णं जीवाणं जागरियत्तं साहू, से तेणट्ठेणं जयंती ! एवं वुचइ अत्थेगइयाणं जीवाणं सुत्तत्तं साहू अत्थेगइयाणं जीवाणं जागरियत्तं साहू ॥ बलियत्तं भंते ! साहू दुबलियत्तं साहू ?, जयंती ! अत्थेगइयाणं जीवाणं बलियत्तं साहू अत्थेगइयाणं जीवाणं दुबलियत्तं साहू, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुचइ जाव साहू ?, जयंती ! जे इमे जीवा अहम्मिया जाव विहरंति एएसि णं जीवाणं दुबलियत्तं साहू, एए णं जीवा एवं जहा सुत्तस्स तहा दुबलियस्स वत्तव्वया भाणियव्वा, बलियस्स जहा जागरस्स तहा भाणियव्वं जाव संजोएत्तारो भवंति, एएसि णं जीवाणं बलियत्तं साहू, से तेणट्ठेणं जयंती ! एवं वुचइ तं चेव जाव साहू ॥ दक्खत्तं भंते ! साहू आलसियत्तं साहू ?, जयंती ! अत्थेगतियाणं जीवाणं दक्खत्तं साहू अत्थेगतियाणं जीवाणं आलसियत्तं साहू, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुचइ तं चेव जाव साहू ?, जयंती ! जे इमे जीवा अहम्मिया जाव विहरंति एएसि णं जीवाणं आलसियत्तं साहू, एए णं जीवा आलसा समाणा नो बहूणं जहा सुत्ता आलसा भाणियव्वा, जहा जागरा तहा दक्खा भाणियव्वा जाव संजोएत्तारो भवंति, एए णं जीवा दक्खा समाणा बहूहिं आयरियवेयावच्चेहिं जाव उवज्झाय० थेर० तवस्सि०

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जयंति श्रमणोपासिका एवं तस्या प्रश्ना:

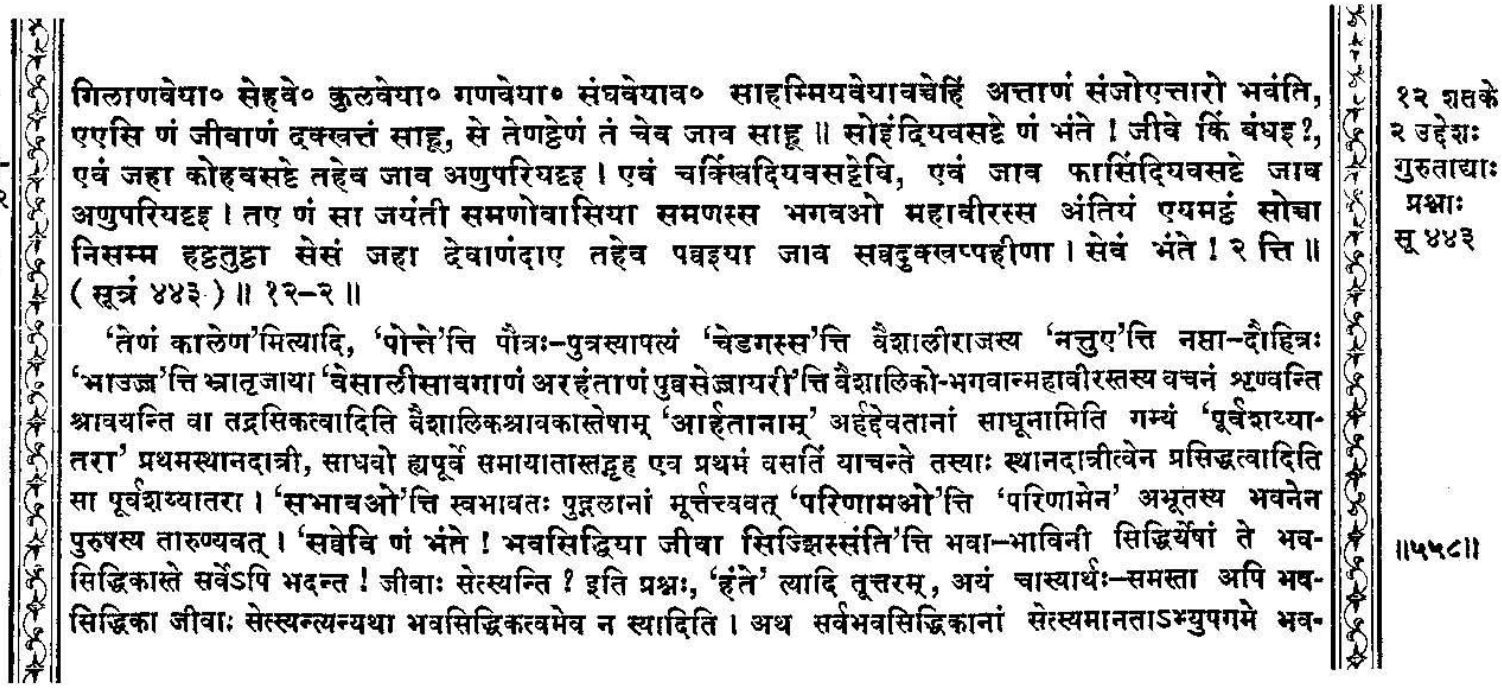

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥५५८॥

गिलाणवेया० सेहवे० कुलवेया० गणवेया० संघवेयाव० साहम्मियवेयावच्चेहिं अत्ताणं संजोएत्तारो भवंति, एएसि णं जीवाणं दुक्खत्तं साहू, से तेणट्ठेणं तं चेव जाव साहू ॥ सोइंदियवसट्टे णं भंते ! जीवे किं बंधइ ?, एवं जहा कोहवसट्टे तहेव जाव अणुपरियट्टइ । एवं चक्खिंदियवसट्टेवि, एवं जाव फासिंदियवसट्टे जाव अणुपरियट्टइ । तए णं सा जयंती समणोवासिया समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियं एयमट्ठं सोच्चा निसम्म हट्ठतुट्ठा सेसं जहा देवाणंदाए तहेव पव्वइया जाव सव्वदुक्खप्पहीणा । सेवं भंते ! २ त्ति ॥ (सूत्रं ४४३) ॥ १२–२ ॥

'तेणं कालेण'मित्यादि, 'पोत्ते'त्ति पौत्रः–पुत्रस्यापत्यं 'चेडगस्स'त्ति वैशालीराजस्य 'नत्तुए'त्ति नप्ता–दौहित्रः 'भाउज्ज'त्ति भ्रातृजाया 'वेसालीसावगाणं अरहंताणं पुवसेज्जायरी'त्ति वैशालिको-भगवान्महावीरस्तस्य वचनं शृण्वन्ति श्रावयन्ति वा तद्रसिकत्वादिति वैशालिकश्रावकास्तेषाम् 'आर्हतानाम्' अर्हद्देवतानां साधूनामिति गम्यं 'पूर्वशय्यातरा' प्रथमस्थानदात्री, साधवो ह्यपूर्वे समायातास्तद्गृह एव प्रथमं वसतिं याचन्ते तस्याः स्थानदात्रीत्वेन प्रसिद्धत्वादिति सा पूर्वशय्यातरा । 'सभावओ'त्ति स्वभावतः पुद्गलानां मूर्त्तत्ववत् 'परिणामओ'त्ति 'परिणामेन' अभूतस्य भवनेन पुरुषस्य तारुण्यवत् । 'सवेवि णं भंते ! भवसिद्धिया जीवा सिज्झिस्संति'त्ति भवा–भाविनी सिद्धिर्येषां ते भवसिद्धिकास्ते सर्वेऽपि भदन्त ! जीवाः सेत्स्यन्ति ? इति प्रश्नः, 'हंते' त्यादि तूत्तरम्, अयं चास्यार्थः–समस्ता अपि भवसिद्धिका जीवाः सेत्स्यन्त्यन्यथा भवसिद्धिकत्वमेव न स्यादिति । अथ सर्वभवसिद्धिकानां सेत्स्यमानताऽभ्युपगमे भव-

१२ शतके २ उद्देशः गुरुताद्याः प्रश्नाः सू ४४३

॥५५८॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	जयंति श्रमणोपासिका एवं तस्या प्रश्ना:

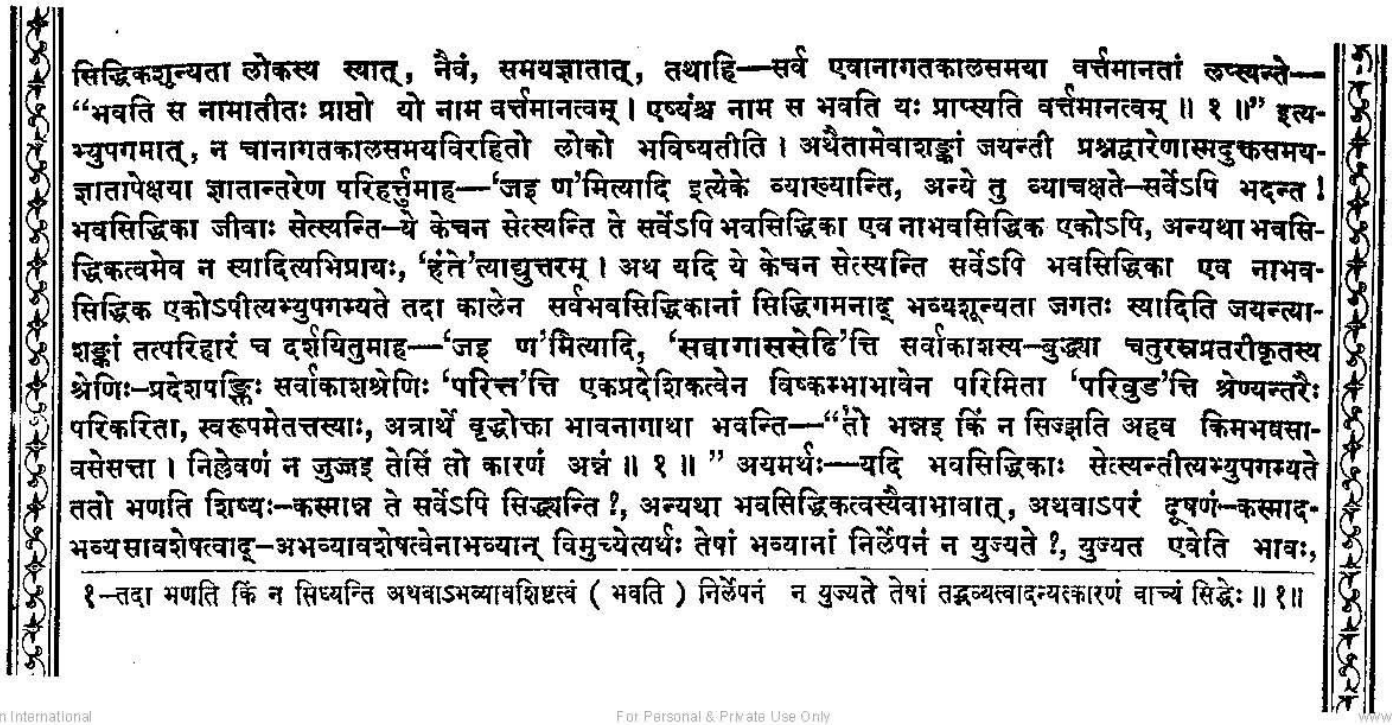

सिद्धिकशून्यता लोकस्य स्यात्, नैवं, समयज्ञातात्, तथाहि—सर्व एवानागतकालसमया वर्त्तमानतां लप्स्यन्ते—"भवति स नामातीतः प्राप्तो यो नाम वर्त्तमानत्वम्। एष्यंश्च नाम स भवति यः प्राप्स्यति वर्त्तमानत्वम् ॥ १ ॥" इत्यभ्युपगमात्, न चानागतकालसमयविरहितो लोको भविष्यतीति। अथैतामेवाशङ्कां जयन्ती प्रश्नद्वारेणास्मदुक्तसमयज्ञातापेक्षया ज्ञातान्तरेण परिहर्त्तुमाह—'जइ ण'मित्यादि इत्येके व्याख्यान्ति, अन्ये तु व्याचक्षते—सर्वेऽपि भदन्त! भवसिद्धिका जीवाः सेत्स्यन्ति—ये केचन सेत्स्यन्ति ते सर्वेऽपि भवसिद्धिका एव नाभवसिद्धिक एकोऽपि, अन्यथा भवसिद्धिकत्वमेव न स्यादित्यभिप्रायः, 'हंते'त्याद्युत्तरम्। अथ यदि ये केचन सेत्स्यन्ति सर्वेऽपि भवसिद्धिका एव नाभवसिद्धिक एकोऽपीत्यभ्युपगम्यते तदा कालेन सर्वभवसिद्धिकानां सिद्धिगमनाद् भव्यशून्यता जगतः स्यादिति जयन्त्याशङ्कां तत्परिहारं च दर्शयितुमाह—'जइ ण'मित्यादि, 'सव्वागाससेढि'त्ति सर्वाकाशस्य—बुद्ध्या चतुरस्रप्रतरीकृतस्य श्रेणिः—प्रदेशपङ्क्तिः सर्वाकाशश्रेणिः 'परित्त'त्ति एकप्रदेशिकत्वेन विष्कम्भाभावेन परिमिता 'परिवुड'त्ति श्रेण्यन्तरैः परिकरिता, स्वरूपमेतत्तस्याः, अत्रार्थे वृद्धोक्ता भावनागाथा भवन्ति—"तो भन्नइ किं न सिज्झति अहव किमभवसावसेसत्ता। निल्लेवणं न जुज्जइ तेसिं तो कारणं अन्नं ॥ १ ॥" अयमर्थः—यदि भवसिद्धिकाः सेत्स्यन्तीत्यभ्युपगम्यते ततो भणति शिष्यः—कस्मान्न ते सर्वेऽपि सिद्ध्यन्ति?, अन्यथा भवसिद्धिकत्वस्यैवाभावात्, अथवाऽपरं दूषणं—कस्मादभव्यसावशेषत्वाद्—अभव्यावशेषत्वेनाभव्यान् विमुच्येत्यर्थः तेषां भव्यानां निर्लेपनं न युज्यते?, युज्यत एवेति भावः,

१—तदा भणति किं न सिध्यन्ति अथवाऽभव्यावशिष्टत्वं (भवति) निर्लेपनं न युज्यते तेषां तद्भव्यत्वादन्यत्कारणं वाच्यं सिद्धेः ॥ १॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [४४१--४४३]

दीप अनुक्रम [५३४--५३६]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

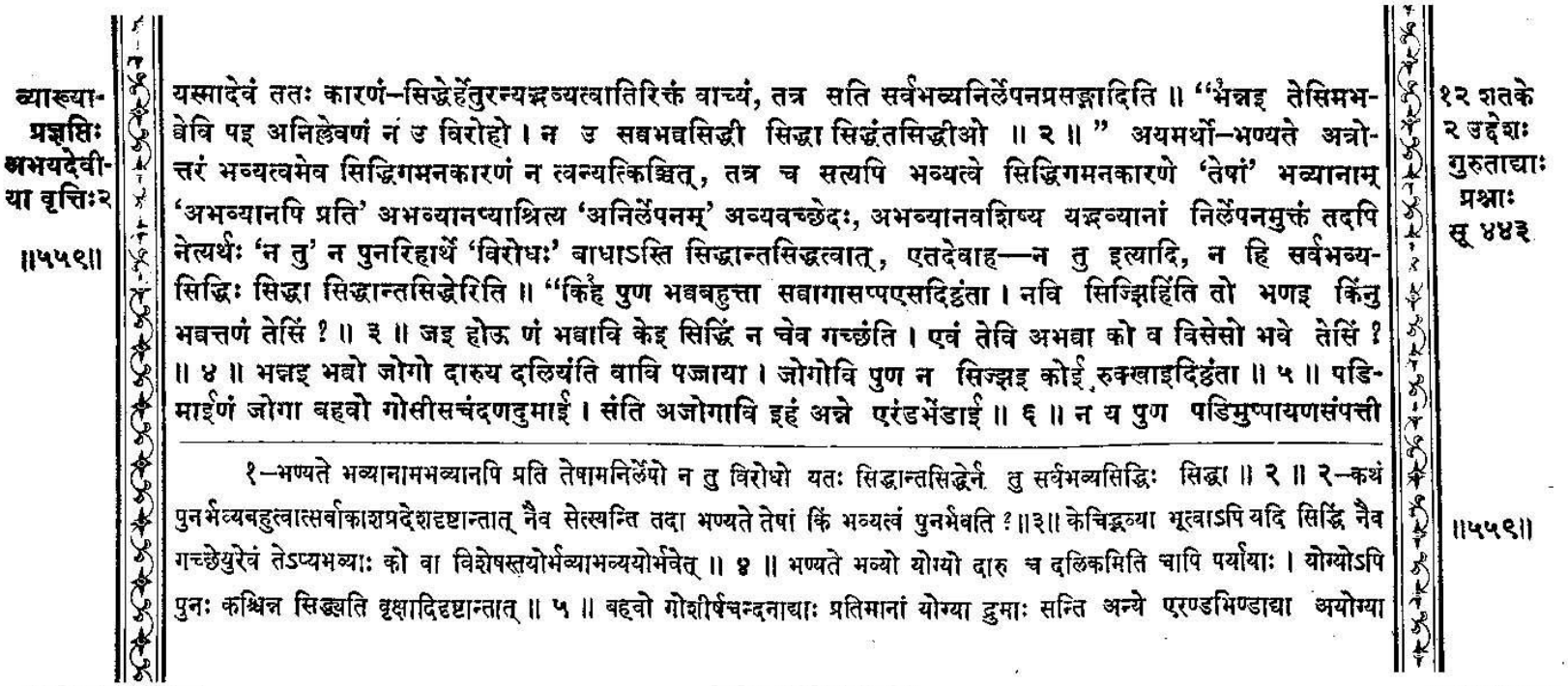

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः२ ॥५५९॥

यस्मादेवं ततः कारणं–सिद्धेर्हेतुरन्यद्भव्यत्वातिरिक्तं वाच्यं, तत्र सति सर्वभव्यनिर्लेपनप्रसङ्गादिति ॥ "भन्नइ तेसिमभवेवि पइ अनिलेवणं नं उ विरोहो । न उ सवभवसिद्धी सिद्धा सिद्धंतसिद्धीओ ॥ २ ॥" अयमर्थो–भण्यते अत्रोत्तरं भव्यत्वमेव सिद्धिगमनकारणं न त्वन्यत्किञ्चित्, तत्र च सत्यपि भव्यत्वे सिद्धिगमनकारणे 'तेषां' भव्यानाम् 'अभव्यानपि प्रति' अभव्यानाश्रित्य 'अनिर्लेपनम्' अव्यवच्छेदः, अभव्यानवशिष्य यद्भव्यानां निर्लेपनमुक्तं तदपि नेत्यर्थः 'न तु' न पुनरिहार्थे 'विरोधः' बाधाऽस्ति सिद्धान्तसिद्धत्वात्, एतदेवाह—न तु इत्यादि, न हि सर्वभव्यसिद्धिः सिद्धा सिद्धान्तसिद्धेरिति ॥ "किंह पुण भवबहुत्ता सवागासप्पएसदिट्ठंता । नवि सिज्झिहिंति तो भणइ किंनु भवत्तणं तेसिं ? ॥ ३ ॥ जइ होऊ णं भवावि केइ सिद्धिं न चेव गच्छंति । एवं तेवि अभवा को व विसेसो भवे तेसिं ? ॥ ४ ॥ भन्नइ भवो जोगो दारुय दलियंति वावि पज्जाया । जोगोवि पुण न सिज्झइ कोई रुक्खाइदिट्ठंता ॥ ५ ॥ पडिमाईणं जोगा बहवो गोसीसचंदणदुमाई । संति अजोगावि इहं अन्ने एरंडभेंडाई ॥ ६ ॥ न य पुण पडिमुप्पायणसंपत्ती

१२ शतके २ उद्देशः गुरुताद्याः प्रश्नाः सू ४४३

१–भण्यते भव्यानामभव्यानपि प्रति तेषामनिर्लेपो न तु विरोधो यतः सिद्धान्तसिद्धेर्न तु सर्वभव्यसिद्धिः सिद्धा ॥ २ ॥ २–कथं पुनर्भव्यबहुत्वात्सर्वाकाशप्रदेशदृष्टान्तात् नैव सेत्स्यन्ति तदा भण्यते तेषां किं भव्यत्वं पुनर्भवति ? ॥३॥ केचिद्भव्या भूत्वाऽपि यदि सिद्धिं नैव गच्छेयुरेवं तेऽप्यभव्याः को वा विशेषस्तयोर्भव्याभव्ययोर्भवेत् ॥ ४ ॥ भण्यते भव्यो योग्यो दारु च दलिकमिति चापि पर्यायाः । योग्योऽपि पुनः कश्चिन्न सिद्ध्यति वृक्षादिदृष्टान्तात् ॥ ५ ॥ बहवो गोशीर्षचन्दनाद्याः प्रतिमानां योग्या द्रुमाः सन्ति अन्ये एरण्डभिण्डाद्या अयोग्या

॥५५९॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जयंति श्रमणोपासिका एवं तस्या प्रश्ना:

होइ सव्वजोगाणं । जेसिंपि असंपत्ती न य तेसि अजोग्गया होइ ॥ ७ ॥ किं पुण जा संपत्ती सा नियमा होइ जोग्गरुक्खाणं । न य होइ अजोग्गाणं एमेव य भवसिज्झणया ॥ ८ ॥ सिज्झिस्संति य भव्वा सव्वेवित्ति भणियं च जं पहुणा । तंपि य एयाएच्चिय दिट्ठीए जयंतिपुच्छाए ॥ ९ ॥ भव्यानामेव सिद्धिरित्येतया दृष्ट्या–मतेनेति ॥ "अहवा पडुच्च कालं न सव्वभव्वाण होइ वोच्छित्ती । जं तीतणागयाओ अद्धाओ दोवि तुल्लाओ ॥ १० ॥ तत्थातीतद्धाए सिद्धो एक्को अणंतभागो सिं । कामं तावइओ च्चिय सिज्झिहिइ अणागयद्धाए ॥ ११ ॥ ते दो अणंतभागा होउं सोच्चिय अणंतभागो सिं । एवंपि सव्वभव्वाण सिद्धिगमणं अणिद्दिट्ठं ॥ १२ ॥" तौ द्वावप्यनन्तभागौ मीलितौ सर्वजीवानामनन्त एव भाग इति, यत्पुनरिदमुच्यते–अतीताद्धातोऽनागताद्धाऽनन्तगुणेति तन्मतान्तरं, तस्य चेदं बीजं–यदि द्वे अपि ते समाने स्यातां तदा मुहूर्त्तादावतिक्रान्तेऽतीताद्धा समधिका अनागताद्धा च हीनेति हतं समत्वम्, एवं च मुहूर्त्तादिभिः प्रतिक्षणं क्षीयमाणाऽप्यनागताद्धा यतो न क्षीयते ततोऽवसितं ततः साऽनन्तगुणेति, यच्चोभयोः समत्वं तदेवं–यथाऽनागताद्धाया

अपि सन्ति ॥ ६ ॥ नैव च सर्वेषां योग्यानां प्रतिमोत्पादनसम्पत्तिर्भवति । येषामप्यसम्प्राप्तिर्न च तेषामयोग्यता भवति ॥ ७ ॥ किं पुनर्या सम्प्राप्तिः सा नियमाद् योग्यवृक्षाणां भवति नैवायोग्यानां एवमेव च सर्वभव्यसिद्धिरपि ॥ ८ ॥ सर्वेऽपि भव्याः सेत्स्यन्तीति प्रभुणा यद्भणितं तदप्यनयैव दृष्ट्या जयन्तीपृच्छायाम् ॥ ९ ॥ १–अथवा कालं प्रतीत्य सर्वभव्यानां व्युच्छित्तिर्न भवति यतोऽतीतानागताद्धे द्वे अपि तुल्ये स्तः ॥ १० ॥ तत्रातीताद्धायां भव्यजीवानामनन्तभाग एकः सिद्धस्तावानेव चानागताद्धायां सेत्स्यति प्रक्रामम् ॥ ११ ॥ तौ द्वावपि अनन्तभागौ संमील्यैषामनन्तभागः स एवैव, एवमपि सर्वभव्यानां सिद्धिगमनं न निर्दिष्टम् ॥ १२ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

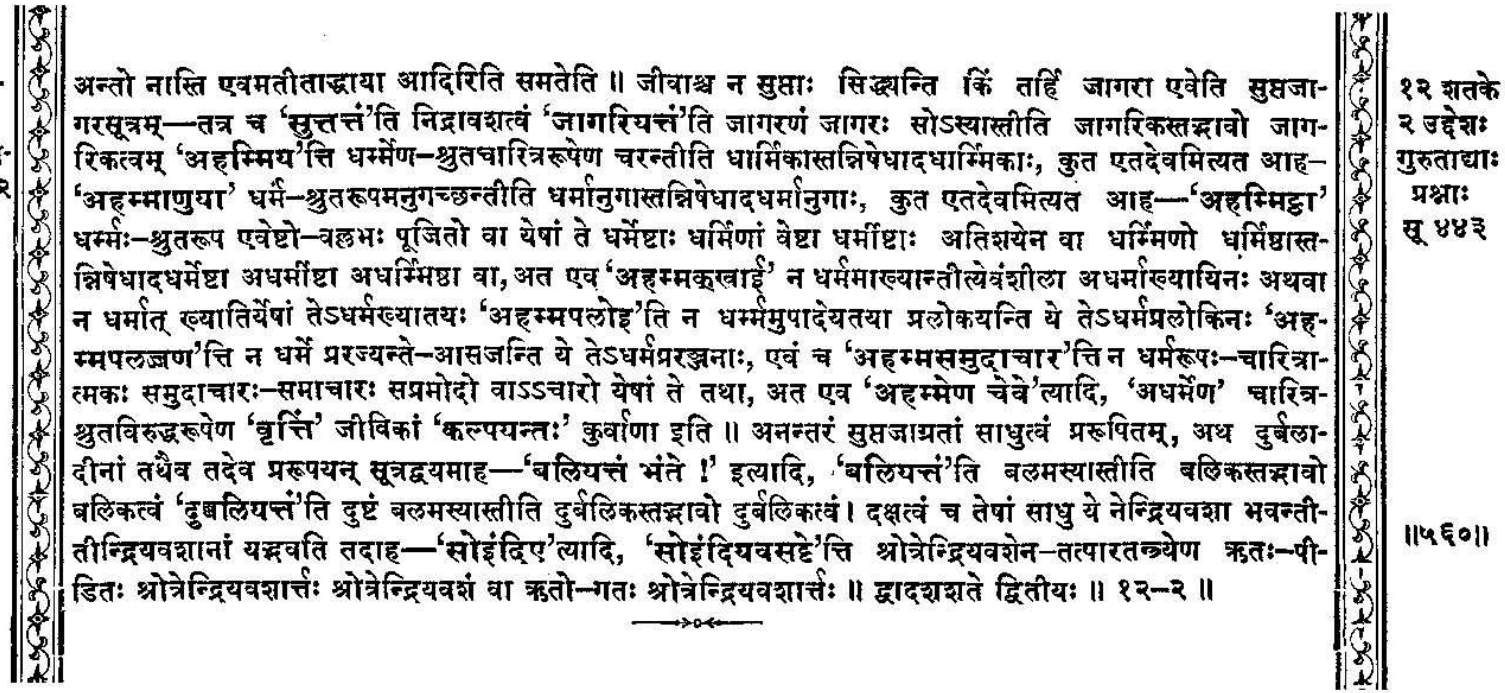

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥५६०॥

अन्तो नास्ति एवमतीताद्धाया आदिरिति समतेति ॥ जीवाश्च न सुप्ताः सिद्ध्यन्ति किं तर्हि जागरा एवेति सुप्तजागरसूत्रम्—तत्र च 'सुत्तत्तं'ति निद्रावशत्वं 'जागरियत्तं'ति जागरणं जागरः सोऽस्यास्तीति जागरिकस्तद्भावो जागरिकत्वम् 'अहम्मिय'त्ति धर्म्मेण–श्रुतचारित्ररूपेण चरन्तीति धार्मिकास्तन्निषेधादधार्म्मिकाः, कुत एतदेवमित्यत आह–'अहम्माणुया' धर्मं–श्रुतरूपमनुगच्छन्तीति धर्मानुगास्तन्निषेधादधर्मानुगाः, कुत एतदेवमित्यत आह—'अहम्मिट्ठा' धर्म्मः–श्रुतरूप एवेष्टो–वल्लभः पूजितो वा येषां ते धर्मेष्टाः धर्मिणां वेष्टा धर्मीष्टाः अतिशयेन वा धर्म्मिणो धर्मिष्ठास्तन्निषेधादधर्मेष्टा अधर्मीष्टा अधर्म्मिष्ठा वा, अत एव 'अहम्मक्खाई' न धर्ममाख्यान्तीत्येवंशीला अधर्माख्यायिनः अथवा न धर्मात् ख्यातिर्येषां तेऽधर्मख्यातयः 'अहम्मपलोइ'ति न धर्म्ममुपादेयतया प्रलोकयन्ति ये तेऽधर्मप्रलोकिनः 'अहम्मपलज्जण'त्ति न धर्मे प्रज्यन्ते–आसजन्ति ये तेऽधर्मप्रज्ञनाः, एवं च 'अहम्मसमुदाचार'त्ति न धर्मरूपः–चारित्रात्मकः समुदाचारः–समाचारः सप्रमोदो वाऽऽचारो येषां ते तथा, अत एव 'अहम्मेण चेवे'त्यादि, 'अधर्मेण' चारित्रश्रुतविरुद्धरूपेण 'वृत्तिं' जीविकां 'कल्पयन्तः' कुर्वाणा इति ॥ अनन्तरं सुप्तजाग्रतां साधुत्वं प्ररूपितम्, अथ दुर्बलादीनां तथैव तदेव प्ररूपयन् सूत्रद्वयमाह—'बलियत्तं भंते !' इत्यादि, 'बलियत्तं'ति बलमस्यास्तीति बलिकस्तद्भावो बलिकत्वं 'दुब्बलियत्तं'ति दुष्टं बलमस्यास्तीति दुर्बलिकस्तद्भावो दुर्बलिकत्वं। दक्षत्वं च तेषां साधु ये नेन्द्रियवशा भवन्तीतीन्द्रियवशानां यद्भवति तदाह—'सोइंदिए'त्यादि, 'सोइंदियवसट्टे'त्ति श्रोत्रेन्द्रियवशेन–तत्परतन्त्र्येण कृतः–पीडितः श्रोत्रेन्द्रियवशार्त्तः श्रोत्रेन्द्रियवशं वा कृतो–गतः श्रोत्रेन्द्रियवशार्त्तः ॥ द्वादशशते द्वितीयः ॥ १२–२ ॥

१२ शतके २ उद्देशः गुरुताद्याः प्रश्नाः सू ४४३

॥५६०॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र द्वादशमे शतके द्वितीय-उद्देशक: परिसमाप्त:

जयंति श्रमणोपासिका एवं तस्या प्रश्ना:

अनन्तरं श्रोत्रादीन्द्रियवशार्त्ता अष्टकर्म्मप्रकृतीर्बध्नन्तीत्युक्तं, तद्बन्धनाच्च नरकपृथिवीष्वप्युत्पद्यन्त इति नरकपृथिवीस्वरूपप्रतिपादनाय तृतीयोद्देशकमाह, तस्य चेदमादिसूत्रम्—

रायगिहे जाव एवं वयासी–कइ णं भंते ! पुढवीओ पन्नत्ताओ ?, गोयमा ! सत्त पुढवीओ पण्णत्ताओ, तंजहा–पढमा दोच्चा जाव सत्तमा । पढमा णं भंते ! पुढवी किंनामा किंगोत्ता पण्णत्ता ?, गोयमा ! घम्मा नामेणं रयणप्पभा गोत्तेणं एवं जहा जीवाभिगमे पढमो नेरइयउद्देसओ सो चेव निरवसेसो भाणियव्वो जाव अप्पाबहुगंति । सेवं भंते ! सेवं भंतेत्ति ॥ (सूत्रं ४४४) ॥

'रायगिहे'इत्यादि, 'किंनामा किंगोय'त्ति तत्र नाम–यादृच्छिकमभिधानं गोत्रं च–अन्वर्थिकमिति 'एवं जहा जीवाभिगमे'इत्यादिना यत्सूचितं तदिदं—'दोच्चा णं भंते ! पुढवी किंनामा किंगोया पन्नत्ता ?, गोयमा ! वंसा नामेणं सक्करप्पभा गोत्तेण'मित्यादीति ॥ द्वादशशते तृतीयः ॥ १२–३ ॥

अनन्तरं पृथिव्य उक्तास्ताश्च पुद्गलात्मिका इति पुद्गलांश्चिन्तयंश्चतुर्थोद्देशकमाह, तस्य चेदमादिसूत्रम्—

रायगिहे जाव एवं वयासी–दो भंते ! परमाणुपोग्गला एगयओ साहन्नंति एगयओ साहण्णित्ता किं भवति ?, गोयमा ! दुप्पएसिए खंधे भवइ, से भिज्जमाणे दुहा कज्जइ एगयओ परमाणुपोग्गले एगयओ परमाणुपोग्गले भवइ । तिन्नि भंते ! परमाणुपोग्गला एगयओ साहन्नंति २ किं भवति ?, गोयमा ! तिपए-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र द्वादशमे शतके तृतीय-उद्देशक: आरब्ध: एवं परिसमाप्त:

अथ द्वादशमे शतके चतुर्थ-उद्देशक: आरभ्यते

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [४४५]

दीप अनुक्रम [५३८]

सिए खंधे भवति, से भिज्जमाणे दुहावि तिहावि कज्जइ, दुहा कज्जमाणे एगयओ परमाणुपोग्गले एगयओ दुपएसिए खंधे भवइ, तिहा कज्जमाणे तिण्णि परमाणुपोग्गला भवंति। चत्तारि भंते ! परमाणुपोग्गला एगयओ साहन्नंति जाव पुच्छा, गोयमा ! चउपएसिए खंधे भवइ, से भिज्जमाणे दुहावि तिहावि चउहावि कज्जइ, दुहा कज्जमाणे एगयओ परमाणुपोग्गले एगयओ तिपएसिए खंधे भवइ, अहवा दो दुपएसिया खंधा भवंति, तिहा कज्जमाणे एगयओ दो परमाणुपोग्गला एगयओ दुप्पएसिए खंधे भवइ, चउहा कज्जमाणे चत्तारि परमाणुपोग्गला भवंति। पंच भंते ! परमाणुपोग्गला पुच्छा, गोयमा ! पंचपएसिए खंधे भवइ, से भिज्जमाणे दुहावि तिहावि चउहावि पंचहावि कज्जइ, दुहा कज्जमाणे एगयओ परमाणुपोग्गले एगयओ चउपएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ दुपएसिए खंधे भवति एगयओ तिपएसिए खंधे भवइ, तिहा कज्जमाणे एगयओ दो परमाणुपोग्गला एगयओ तिप्पएसिए खंधे भवति अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले एगयओ दो दुपएसिया खंधा भवंति, चउहा कज्जमाणे एगयओ तिन्नि परमाणुपोग्गला एगयओ दुप्पएसिए खंधे भवति, पंचहा कज्जमाणे पंच परमाणुपोग्गला भवंति। छब्भंते ! परमाणुपोग्गला पुच्छा, गोयमा ! छप्पएसिए खंधे भवइ, से भिज्जमाणे दुहावि तिहावि जाव छहिहावि कज्जइ, दुहा कज्जमाणे एगयओ परमाणुपोग्गले एगयओ पंचपएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ दुप्पएसिए खंधे एगयओ चउपएसिए खंधे भवइ अहवा दो तिपएसिया खंधा भवइ, तिहा कज्जमाणे एगयओ दो परमाणुपोग्गला एगयओ चउपए-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सिए खंधे भवइ अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले एगयओ दुपएसिए खंधे एगयओ तिपएसिए खंधे भवइ अहवा तिन्नि दुपएसिया खंधा भवन्ति चउहा कज्जमाणे एगयओ तिन्नि परमाणुपोग्गला एगयओ तिपएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ दो परमाणुपोग्गला भवंति एगयओ दो दुप्पएसिया खंधा भवंति, पंचहा कज्जमाणे एगयओ चत्तारि परमाणुपोग्गला एगयओ दुपएसिए खंधे भवति, छहा कज्जमाणे छ परमाणुपोग्गला भवंति। सत्त भंते ! परमाणुपोग्गला पुच्छा, गोयमा ! सत्तपएसिए खंधे भवइ, से भिज्जमाणे दुहावि जाव सत्तहावि कज्जइ, दुहा कज्जमाणे एगयओ परमाणुपोग्गले एगयओ छप्पएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ दुप्पएसिए खंधे भवइ एगयओ पंचपएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ तिप्पएसिए एगयओ चउपएसिए खंधे भवइ, तिहा कज्जमाणे एगयओ दो परमाणुपोग्गला एगयओ पंचपएसिए खंधे भवति अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले एगयओ दुपएसिए खंधे एगयओ चउपएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ परमाणु० एगयओ दो तिपएसिया खंधा भवंति अहवा एगयओ दो दुपएसिया खंधा भवंति एगयओ तिपएसिए खंधे भवति, चउहा कज्जमाणे एगयओ तिन्नि परमाणुपोग्गला एगयओ चउप्पएसिए खंधे भवति अहवा एगयओ दो परमाणुपोग्गला एगयओ दुपएसिए खंधे एगयओ तिपएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ परमाणु० एगयओ तिन्नि दुपएसिया खंधा भवंति, पंचहा कज्जमाणे एगयओ चत्तारि परमाणुपोग्गला एगयओ तिपएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ तिन्नि परमाणु० एगयओ दो दुपएसिया खंधा भवंति, छहा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥५६२॥

कज्जमाणे एगयओ पंच परमाणुपोग्गला एगयओ दुपएसिए खंधे भवइ, सत्तहा कज्जमाणे सत्त परमाणुपोग्गला भवंति । अट्ठ भंते ! परमाणुपोग्गला पुच्छा, गोयमा ! अट्ठपएसिए खंधे भवइ जाव दुहा कज्जमाणे एगयओ परमाणु० एगयओ सत्तपएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ दुपएसिए खंधे एगयओ छप्पएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ तिपएसिए० एगयओ पंचपएसिए खंधे भवइ अहवा दो चउप्पएसिया खंधा भवंति, तिहा कज्जमाणे एगयओ परमाणु० एगयओ छप्पएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ परमाणु० एगयओ दुप्पएसिए खंधे एगयओ पंचपएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ परमाणु० एगयओ तिपएसिए खंधे एगयओ चउप्पएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ दो दुपएसिया खंधा एगयओ चउप्पएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ दुपएसिए खंधे एगयओ दो तिपएसिया खंधा भवंति, चउहा कज्जमाणे एगयओ तिन्नि परमाणुपोग्गला एगयओ पंचपएसिए खंधे भवति अहवा एगयओ दोन्नि परमाणुपोग्गला एगयओ दुपएसिए खंधे एगयओ चउप्पएसिए खंधे भवति अहवा एगयओ दो परमाणु० एगयओ दो तिपएसिया खंधा भवंति अहवा एगयओ परमाणु० एगयओ दो दुपएसिया खंधा एगयओ तिपएसिए खंधे भवति अहवा चत्तारि दुपएसिया खंधा भवंति, पंचहा कज्जमाणे एगयओ चत्तारि परमाणुपोग्गला एगयओ चउप्पएसिए खंधे भवति अहवा एगयओ तिन्नि परमाणु० एगयओ दुपएसिए एगयओ तिपएसिए खंधे भवति अहवा एगयओ दो परमाणु० एगयओ तिन्नि दुपएसिया खंधा भवंति, छहा कज्जमाणे एगयओ पंच परमाणु० एग-

१२ शतके ४ उद्देशः अनन्ताणु कान्तसंयो-गविभागभं गाः सू४४५

॥५६२॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

यओ तिपएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ चत्तारि परमाणु० एगयओ दो दुपएसिया खंधा भवइ, सत्तहा कज्जमाणे एगयओ छ परमाणुपोग्गला एगयओ दुपएसिए खंधे भवइ अट्ठहा कज्जमाणे अट्ठ परमाणुपोग्गला भवंति ॥ नव भंते ! परमाणुपोग्गला पुच्छा, गोयमा ! जाव नवविहा कज्जंति, दुहा कज्जमाणे एगयओ परमाणु० एगयओ अट्ठपएसिए खंधे भवति, एवं एक्केक्कं संचारेतेहिं जाव अहवा एगयओ चउप्पएसिए खंधे एगयओ पंचपएसिए खंधे भवति, तिहा कज्जमाणे एगयओ दो परमाणुपोग्गला एगयओ सत्तपएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ परमाणु० एगयओ दुपएसिए एगयओ छप्पएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ परमाणु० एगयओ तिपएसिए खंधे एगयओ पंचपएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ परमाणु० एगयओ दो चउप्पएसिया खंधा भवंति अहवा एगयओ दुपएसिए खंधे एगयओ तिपएसिए खंधे एगयओ चउपएसिए खंधे भवइ अहवा तिन्नि तिपएसिया खंधा भवंति, चउहा कज्जमाणे एगयओ तिन्नि परमाणु० एगयओ छप्पएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ दो परमाणु० एगयओ दुपएसिए खंधे एगयओ पंचपएसिए खंधे भवति अहवा एगयओ दो परमाणु० एगयओ तिपएसिए खंधे एगयओ चउप्पएसिए खंधे भवति अहवा एगयओ परमाणु० एगयओ दो दुपएसिया खंधा एगयओ चउप्पएसिए खंधे भवति अहवा एगयओ परमाणु० एगयओ दुपएसिए खंधे एगयओ दो तिपएसिया खंधा भवंति अहवा एगयओ तिन्नि दुप्पएसिया खंधा एगयओ तिपएसिए खंधे भवति, पंचहा कज्जमाणे एगयओ चत्तारि परमाणु० एगयओ पंचपएसिए

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [४४५]

दीप अनुक्रम [५३८]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥५६३॥

खंधे भवइ अहवा एगयओ तिन्नि परमाणु० एगयओ दुपएसिए० एगयओ चउप्पएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ तिन्नि परमाणु० एगयओ दो तिपएसिया खंधा भवंति अहवा एगयओ दो परमाणुपोग्गला एगयओ दो दुपएसिया खंधा एगयओ तिपएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ परमाणु० एगयओ चत्तारि दुपएसिया खंधा भवंति, छहा कज्जमाणे एगयओ पंच परमाणुपोग्गला एगयओ चउप्पएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ चत्तारि परमाणु० एगयओ दुप्पएसिए० एगयओ तिपएसिए खंधे भवति अहवा एगयओ तिन्नि परमाणु० एगयओ तिन्नि दुप्पएसिया खंधा भवंति, सत्तहा कज्जमाणे एगयओ छ परमाणु० एगयओ तिप्पएसिए खंधे भवति अहवा एगयओ पंच परमाणु० एगयओ दो दुपएसिया खंधा भवंति, अट्ठहा कज्जमाणे एगयओ सत्त परमाणु० एगयओ दुपएसिए खंधे भवति, नवहा कज्जमाणे नव परमाणुपोग्गला भवंति ॥ दस भंते ! परमाणुपोग्गला जाव दुहा कज्जमाणे एगयओ परमाणुपोग्गले एगयओ नवपएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ दुपएसिए खंधे एगयओ अट्ठ पएसिए खंधे भवइ एवं एक्केक्कं संचारेयव्वंति जाव अहवा दो पंच पएसिया खंधा भवंति, तिहा कज्जमाणे एगयओ दो परमाणु० एगयओ अट्ठपएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ परमाणु० एगयओ दुपएसिए० एगयओ सत्तपएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ परमाणु० एगयओ तिपएसिए खंधे भवइ एगयओ छप्पएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ परमाणु० एगयओ चउप्पएसिए एगयओ पंचपएसिए खंधे भवति अहवा एगयओ दुपएसिए खंधे० एगयओ दो चउप्पएसिया खंधा भवंति

१२ शतके ४ उद्देशः अनन्ताणुकान्तसंयोगविभागभंगाः सू४४५

॥५६३॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अहवा एगयओ दो तिपएसिया खंधा० एगयओ चउप्पएसिए खंधे भवइ, चउहा कज्जमाणे एगयओ तिन्नि परमाणु० एगयओ सत्तपएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ दो परमाणु० एगयओ दुपएसि० एगयओ छप्पएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ दो परमाणु० एगयओ तिप्पएसिए खंधे एगयओ पंचपएसिए खंधे भवति अहवा एगयओ दो परमाणु० एगयओ दो चउप्पएसिया खंधा भवंति अहवा एगयओ परमाणु० एगयओ दुपएसिए एगयओ तिपएसिए एगयओ चउप्पएसिए खंधे भवति अहवा एगयओ परमाणु० एगयओ तिन्नि तिपएसिया खंधा भवंति अहवा एगयओ तिन्नि दुपएसिया खंधा एगयओ चउपएसिए खंधे भवति अहवा एगयओ दो दुपएसिया खंधा एगयओ दो तिपएसिया खंधा भवंति, पंचहा कज्जमाणे एगयओ चत्तारि परमाणुपोग्गला एगयओ छपएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ तिन्नि परमाणु० एगयओ दुपएसिए खंधे० एगयओ पंचपएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ तिन्नि परमाणु० एगयओ तिपएसिए खंधे एगयओ चउपएसिए खंधे भवति अहवा एगयओ दो परमाणु० एगयओ दुपएसिए खंधे० एगयओ दो तिपएसिया खंधा भवंति अहवा एगयओ परमाणु० एगयओ तिन्नि दुपएसिया० एगयओ तिपएसिए खंधे भवति अहवा पंच दुपएसिया खंधा भवंति, छहा कज्जमाणे एगयओ पंच परमाणु० एगयओ पंचपएसिए खंधे भवति अहवा एगयओ चत्तारि परमाणु० एगयओ दुपएसिए० एगयओ चउपएसिए खंधे भवति अहवा एगयओ चत्तारि परमाणु० एगयओ दो तिपएसिया खंधा भवंति अहवा एगयओ तिन्नि परमाणु० एगयओ

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [४४५]

दीप अनुक्रम [५३८]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥५६४॥

दो दुपएसिया खंधा० एगयओ तिपएसिए खंधे भवति अहवा एगयओ दो परमाणु० एगयओ चत्तारि दुपएसिया खंधा भवंति, सत्तहा कज्जमाणे एगयओ छ परमाणु० एगयओ चउप्पएसिए खंधे भवति अहवा एगयओ पंच परमाणु० एगयओ दुपएसिए एगयओ तिपएसिए खंधे भवति अहवा एगयओ चत्तारि परमाणु० एगयओ तिन्नि दुपएसिया खंधा भवंति, अट्ठहा कज्जमाणे एगयओ सत्त परमाणु० एगयओ तिपएसिए खंधे भवति अहवा एगयओ छ परमाणु० एगयओ दो दुपएसिया खंधा भवंति, नवहा कज्जमाणे एगयओ अट्ठ परमाणु० एगयओ दुपएसिए खंधे भवति अहवा एगयओ छ परमाणु० एगयओ दो दुपएसिया खंधा भवंति, दसहा कज्जमाणे दस परमाणुपोग्गला भवंति । संखेज्जा भंते ! परमाणुपोग्गला एगयओ साहन्नंति एगयओ साहण्णित्ता किं भवति ?, गोयमा ! संखेज्जपएसिए खंधे भवति, से भिज्जमाणे दुहावि जाव दसहावि संखेज्जहावि कज्जंति, दुहा कज्जमाणे एगयओ परमाणुपोग्गले एगयओ संखेज्जपएसिए खंधे भवति अहवा एगयओ दुपएसिए खंधे एगयओ संखेज्जपएसिए खंधे भवति एवं अहवा एगयओ तिपएसिए एगयओ सं० खंधे भवति एवं जाव अहवा एगयओ दसपएसिए खंधे एगयओ संखेज्जपएसिए खंधे भवति अहवा दो संखेज्जपएसिया खंधा भवंति, तिहा कज्जमाणे एगयओ दो परमाणु० एगयओ संखेज्जपएसिए खंधे भवति अहवा एगयओ परमाणु० एगयओ दुपएसिए खंधे० एगयओ संखेज्जपएसिए खंधे भवति अहवा एगयओ परमाणु० एगयओ तिपएसिए खंधे० एगयओ संखेज्जपएसिए खंधे भवइ

१२ शतके ४ उद्देशः अनन्ताणु कान्तसंयोगविभागभंगाः सू४४५

॥५६४॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [४४५]

दीप अनुक्रम [५३८]

एवं जाव अहवा एगयओ परमाणु० एगयओ दसपएसिए खंधे० एगयओ संखेज्जपएसिए खंधे भवंति अहवा एगयओ परमाणु० एगयओ दो संखेज्जपएसिया खंधा भवंति अहवा एगयओ दुपएसिए० एगयओ दो संखेज्जपएसिया खंधा भवंति, एवं जाव अहवा एगयओ दसपएसिए० एगयओ दो संखेज्जपएसिया खंधा भवंति अहवा तिन्नि संखेज्जपएसिया खंधा भवंति, चउहा कज्जमाणे एगयओ तिन्नि परमाणु० एगयओ संखेज्जपएसिए भवति अहवा एगयओ दो परमाणु० एगयओ दुपएसिए० एगयओ संखेज्जपएसिए भवति अहवा एगयओ दो परमाणु० एगयओ तिप्पएसिए० एगयओ संखेज्जपएसिए भवति एवं जाव अहवा एगयओ दो परमाणु० एगयओ दसपएसिए एगयओ संखेज्जपएसिए भवति अहवा एगयओ दो परमाणु० एगयओ दो संखेज्जपएसिया खंधा भवंति अहवा एगयओ परमाणु० एगयओ दुपएसिए एगयओ दो संखेज्जपएसिया खंधा भवंति जाव अहवा एगयओ परमाणु० एगयओ दसपएसिए एगयओ दो संखेज्जपएसिया खंधा भवंति अहवा एगयओ परमाणु० एगयओ तिन्नि संखेज्जपएसिया खंधा भवंति अहवा एगयओ दुपएसिए एगयओ तिन्नि संखेज्जपएसिया भवंति जाव अहवा एगयओ दसपएसिए एगयओ तिन्नि संखेज्जपएसिया भवंति अहवा चत्तारि संखेज्जपएसिया भवंति एवं एएणं कमेणं पंचगसंजोगोवि भाणियव्वो जाव नवगसंजोगो, दसहा कज्जमाणे एगयओ नव परमाणु० एगयओ संखेज्जपएसिए भवति अहवा एगयओ अट्ठ परमाणु० एगयओ दुपएसिए एगयओ संखेज्जपएसिए खंधे भवति, एएणं कमेणं एक्केक्को पू० जाव अहवा एगयओ दसपएसिए एगयओ

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [४४५]

दीप अनुक्रम [५३८]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः२

॥५६५॥

नव संखेज्जपएसिया भवंति अहवा दस संखेज्जपएसिया खंधा भवंति संखेज्जहा कज्जमाणे संखेज्जा परमाणु-पोग्गला भवंति। असंखेज्जा भंते ! परमाणुपोग्गला एगयओ साहणंति एगयओ साहणित्ता किं भवति ?, गोयमा ! असंखेज्जपएसिए खंधे भवति, से भिज्जमाणे दुहावि जाव दसहावि संखेज्जहावि असंखेज्जहावि कज्जइ, दुहा कज्जमाणे एगयओ परमाणु० एगयओ असंखेज्जपएसिए भवति जाव अहवा एगयओ दसपए-सिए एगयओ असंखिज्जपएसिए भवति अहवा एगयओ संखेज्जपएसिए खंधे एगयओ असंखेज्जपएसिए खंधे भवति अहवा दो असंखेज्जपएसिया खंधा भवंति, तिहा कज्जमाणे एगयओ दो परमाणु० एगयओ असं-खेज्जपएसिए भवति अहवा एगयओ परमाणु० एगयओ दुपएसिए एगयओ असंखिज्जपएसिए भवति जाव अहवा एगयओ परमाणु० एगयओ दसपएसिए एगयओ असंखेज्जपएसिए भवति अहवा एगे परमाणु० एगे संखेज्जपएसिए एगे असंखेज्जपएसिए भवति अहवा एगे परमाणु० एगयओ दो असंखेज्जपएसिया खंधा भवंति अहवा एगे दुपएसिए एगयओ दो असंखेज्जपएसिया भवंति एवं जाव अहवा एगे संखेज्जपएसिए भवति एगयओ दो असंखिज्जपएसिया खंधा भवंति अहवा तिन्नि असंखेज्जपएसिया भवंति, चउहा कज्जमाणे एग-यओ तिन्नि परमाणु० एग० असंखेज्जपएसिए भवति एवं चउक्कगसंजोगो जाव दसगसंजोगो एए जहेव संखेज्जपएसियस्स नवरं असंखेज्जगं एगं अहिगं भाणियव्वं जाव अहवा दस असंखेज्जपएसिया खंधा भवंति, संखेज्जहा कज्जमाणे एगयओ संखेज्जा परमाणुपोग्गला एगयओ असंखेज्जपएसिए खंधे भवति अहवा एगयओ

१२ शतके ४ उद्देशः अनन्ताणु कान्तसंयो-गविभागभं गाः सू४४५

॥५६५॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

संखेज्जा दुपएसिया खंधा एगयओ असंखेज्जपएसिए खंधे भवति एवं जाव अहवा एगयओ संखेज्जा दसपएसिया खंधा एगयओ असंखेज्जपएसिए खंधे भवति अहवा एगयओ संखिज्जा संखिज्जपएसिया खंधा एगयओ असंखिज्जपएसिए खंधे भवति अहवा संखेज्जा असंखेज्जपएसिया खंधा भवंति, असंखिज्जहा कज्जमाणे असंखेज्जा परमाणुपोग्गला भवंति। अणंता णं भंते ! परमाणुपोग्गला जाव किं भवंति ?, गोयमा ! अणंतपएसिए खंधे भवति, से भिज्जमाणे दुहावि तिहावि जाव दसहावि संखिज्जा असंखिज्जा अणंतहावि कज्जइ, दुहा कज्जमाणे एगयओ परमाणुपोग्गले एगयओ अणंतपएसिए खंधे जाव अहवा दो अणंतपएसिया खंधा भवंति, तिहा कज्जमाणे एगयओ दो परमाणु० एगयओ अणंतपएसिए भवति अहवा एग० परमाणु० एग० दुपएसिए एग० अणंतपएसिए भवति जाव अहवा एग० परमाणु० एग० असंखेज्जपएसिए एग० अणंतपएसिए भवति अहवा एग० परमाणु० एग० दो अणंतपएसिया भवंति अहवा एग० दुपएसिए एग० दो अणंतपएसिया भवंति एवं जाव अहवा एगयओ दसपएसिए एगयओ दो अणंतपएसिया खंधा भवंति अहवा एग० संखेज्जपदे० एगयओ दो अणंतपएसिया खंधा भवंति अहवा एग० असंखेज्जपएसिए खंधे एगयओ दो अणंतपएसिया खंधा भवंति अहवा तिन्नि अणंतपएसिया खंधा भवंति, चउहा कज्जमाणे एग० तिन्नि परमाणु० एगयओ अणंतपएसिए भवति एवं चउक्कसंजोगो जाव असंखेज्जगसंजोगो, एते सव्वे जहेव असंखेज्जाणं भणिया तहेव अणंताणवि भाणियव्वा नवरं एक्कं अणंतगं अब्भहियं भाणियव्वं जाव अहवा एगयओ संखे-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥५६६॥

ज्जा संखिज्जपएसिया खंधा एग० अणंतपएसिया भवंति अहवा एग० संखेज्जा असंखेज्जपएसिया खंधा एग० अणंत-पएसिए खंधे भवति अहवा संखिज्जा अणंतपएसिया खंधा भवंति, असंखेज्जहा कज्जमाणे एगयओ असंखेज्जा परमाणु० एग० अणंतपएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ असंखिज्जा दुपएसिया खंधा एग० अणंतपएसिए भवति जाव अहवा एग० असंखेज्जा संखिज्जपएसिया एग० अणंतपएसिए भवति अहवा एग० असंखिज्जा असंखिज्जपएसिया खंधा एग० अणंतपएसिए भवति अहवा असंखेज्जा अणंतपएसिया खंधा भवंति, अणंतहा कज्जमाणे अणंता परमाणुपोग्गला भवंति (सूत्रं ४४५) ॥

'रायगिहे' इत्यादि 'एगयओ'त्ति एकत्वतः एकतयेत्यर्थः 'साहन्नंति'त्ति संहन्येते संहतौ भवत इत्यर्थः, द्विप्रदेशिकस्कन्धस्य भेदे एको विकल्पः, त्रिप्रदेशिकस्य द्वौ, चतुष्प्रदेशिकस्य चत्वारः, पञ्चप्रदेशिकस्य षट्, षट्प्रदेशिकस्य दश, सप्तप्रदेशिकस्य चतुर्दश, अष्टप्रदेशिकस्यैकविंशतिः, नवप्रदेशिकस्याष्टाविंशतिः, दशप्रदेशिकस्य चत्वारिंशत्, सङ्ख्यातप्रदेशिकस्य द्विधाभेदे ११ त्रिधा भेदे २१ चतुर्द्धा भेदे ३१ पञ्चधाभेदे ४१ षोढात्वे ५१ सप्तधात्वे ६१ अष्टधात्वे ७१ नवधात्वे ८१ दशधात्वे ९१ सङ्ख्यातभेदत्वे त्वेक एव विकल्पः, तमेवाह—'संखेज्जहा कज्जमाणे संखेज्जा परमाणुपोग्गला भवंति'त्ति, असङ्ख्यातप्रदेशिकस्य तु द्विधाभावे १२ त्रिधात्वे २३ चतुर्द्धात्वे ३४ पञ्चधात्वे ४५ षोढात्वे ५६ सप्तधात्वे ६७ अष्टधात्वे ७८ नवधात्वे ८९ दशभेदत्वे १०० सङ्ख्यातभेदत्वे द्वादश असङ्ख्यातभेदकरणे त्वेक एव, तमेवाह—'असंखेज्जा परमाणुपोग्गला भवंति'त्ति, अनन्तप्रदेशिकस्य तु द्विधात्वे १३ त्रिधात्वे २५ चतुर्द्धात्वे ३७ पञ्चधात्वे ४९

१२ शतके ४ उद्देशः अनन्ताणुकान्तसंयोगविभागभंगाः सू४४५

॥५६६॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

षड्विधत्वे ६१ सप्तधात्वे ७३ अष्टधात्वे ८५ नवधात्वे ९७ दशधात्वे १०९ सङ्ख्यातत्वे १२ असङ्ख्यातत्वे १३ अनन्तभेदकरणे त्वेक एव विकल्पः, तमेवाह—'अणंतहा कज्जमाणे'इत्यादि ॥ 'दो भंते ! परमाणुपोग्गला साहण्णंती'त्यादिना पुद्गलानां प्राक् संहननमुक्तं 'से भिज्जमाणे दुहा कज्जइ'इत्यादिना च तेषां भेद उक्तः, अथ तावेवाश्रित्याह—

एएसि णं भंते ! परमाणुपोग्गलाणं साहणणाभेदाणुवाएणं अणंताणंता पोग्गलपरियट्टा समणुगंतवा भवंतीति मक्खाया ?, हंता गोयमा ! एएसि णं परमाणुपोग्गलाणं साहणणा जाव मक्खाया ॥ कइविहे णं भंते ! पोग्गलपरियट्टे पण्णत्ते ?, गोयमा ! सत्तविहा पो० परि० पण्णत्ता, तंजहा–ओरालियपो० परि० वेउव्विय० तेयापो० कम्मापो० मणपो० परियट्टे वइपोग्गलपरियट्टे आणापाणुपोग्गलपरियट्टे । नेरइयाणं भंते ! कतिविहे पोग्गलपरियट्टे पण्णत्ते ?, गोयमा ! सत्तविहे पोग्गलपरियट्टे पण्णत्ते, तंजहा–ओरालियपो० वेउव्वियपोग्गलपरियट्टे जाव आणापाणुपोग्गलपरियट्टे एवं जाव वेमाणियाणं ॥ एगमेगस्स णं भंते ! नेरइयस्स केवइया ओरालियपोग्गलपरियट्टा अतीया ?, अणंता, केवइया पुरेक्खडा ?, कस्सइ अत्थि कस्सइ नत्थि जस्सत्थि जहन्नेणं एक्को वा दो वा तिन्नि वा उक्कोसेणं संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता वा । एगमेगस्स णं भंते ! असुरकुमारस्स केवतिया ओरालियपोग्गला० ?, एवं चेव, एवं जाव वेमाणियस्स । एगमेगस्स णं भंते ! नेरइयस्स केवतिया वेउव्वियपोग्गलपरियट्टा अतीया ?, अणंता, एवं जहेव ओरालियपोग्गलपरियट्टा तहेव वेउव्वियपोग्गलपरियट्टावि भाणियवा, एवं जाव वेमाणियस्स आणापाणुपोग्गलपरियट्टा, एते

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

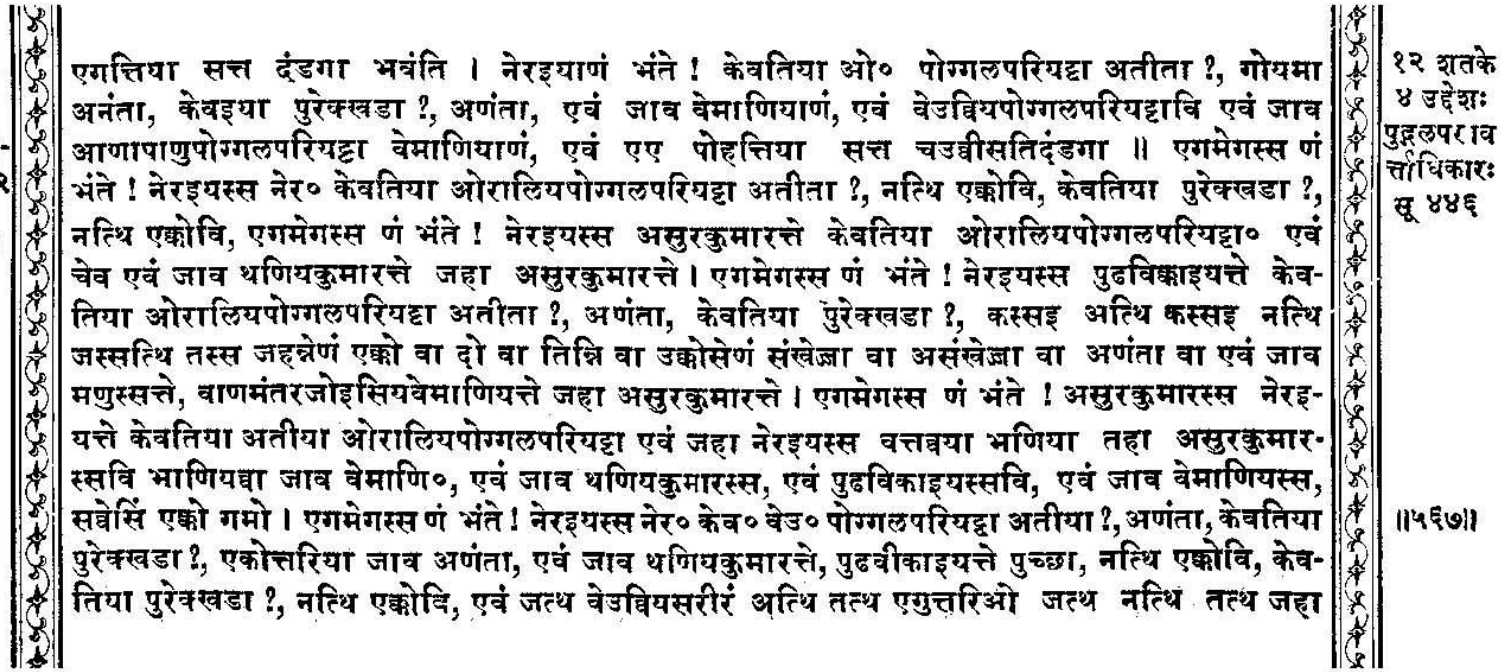

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥५६७॥

एगत्तिया सत्त दंडगा भवंति । नेरइयाणं भंते ! केवतिया ओ० पोग्गलपरियट्टा अतीता ?, गोयमा अनंता, केवइया पुरेक्खडा ?, अणंता, एवं जाव वेमाणियाणं, एवं वेउव्वियपोग्गलपरियट्टावि एवं जाव आणापाणुपोग्गलपरियट्टा वेमाणियाणं, एवं एए पोहत्तिया सत्त चउवीसतिदंडगा ॥ एगमेगस्स णं भंते ! नेरइयस्स नेर० केवतिया ओरालियपोग्गलपरियट्टा अतीता ?, नत्थि एक्कोवि, केवतिया पुरेक्खडा ?, नत्थि एक्कोवि, एगमेगस्स णं भंते ! नेरइयस्स असुरकुमारत्ते केवतिया ओरालियपोग्गलपरियट्टा० एवं चेव एवं जाव थणियकुमारत्ते जहा असुरकुमारत्ते । एगमेगस्स णं भंते ! नेरइयस्स पुढविक्काइयत्ते केवतिया ओरालियपोग्गलपरियट्टा अतीता ?, अणंता, केवतिया पुरेक्खडा ?, कस्सइ अत्थि कस्सइ नत्थि जस्सत्थि तस्स जहन्नेणं एक्को वा दो वा तिन्नि वा उक्कोसेणं संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता वा एवं जाव मणुस्सत्ते, वाणमंतरजोइसियवेमाणियत्ते जहा असुरकुमारत्ते । एगमेगस्स णं भंते ! असुरकुमारस्स नेरइयत्ते केवतिया अतीया ओरालियपोग्गलपरियट्टा एवं जहा नेरइयस्स वत्तव्वया भणिया तहा असुरकुमारस्सवि भाणियव्वा जाव वेमाणि०, एवं जाव थणियकुमारस्स, एवं पुढविकाइयस्सवि, एवं जाव वेमाणियस्स, सव्वेसिं एक्को गमो । एगमेगस्स णं भंते ! नेरइयस्स नेर० केव० वेउ० पोग्गलपरियट्टा अतीया ?, अणंता, केवतिया पुरेक्खडा ?, एकोत्तरिया जाव अणंता, एवं जाव थणियकुमारत्ते, पुढवीकाइयत्ते पुच्छा, नत्थि एक्कोवि, केवतिया पुरेक्खडा ?, नत्थि एक्कोवि, एवं जत्थ वेउव्वियसरीरं अत्थि तत्थ एगुत्तरिओ जत्थ नत्थि तत्थ जहा

१२ शतके ४ उद्देशः पुद्गलपरावर्त्ताधिकारः सू ४४६

॥५६७॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पुढविकाइयत्ते तहा भाणियव्वं, जाव वेमाणियस्स वेमाणियत्ते । तेयापोग्गलपरियट्टा कम्मापोग्गलपरियट्टा य सव्वत्थ एक्कोत्तरिया भाणियव्वा, मणपोग्गलपरियट्टा सव्वेसु पंचिंदिएसु एगोत्तरिया, विगलिंदिएसु नत्थि, वइपोग्गलपरियट्टा एवं चेव, नवरं एगिंदिएसु नत्थि भाणियव्वा । आणापाणुपोग्गलपरियट्टा सव्वत्थ एकोत्तरिया जाव वेमाणियस्स वेमाणियत्ते । नेरइयाणं भंते ! नेरइयत्ते केवतिया ओरालियपोग्गलपरियट्टा अतीया ?, नत्थि एक्कोवि, केवइया पुरेक्खडा ?, नत्थि एक्कोवि, एवं जाव थणियकुमारत्ते, पुढविकाइयत्ते पुच्छा, गोयमा ! अणंता, केवइया पुरेक्खडा ?, अणंता, एवं जाव मणुस्सत्ते, वाणमंतरजोइसियवेमाणियत्ते जहा नेरइयत्ते एवं जाव वेमाणियस्स वेमाणियत्ते, एवं सत्तवि पोग्गलपरियट्टा भाणियव्वा, जत्थ अत्थि तत्थ अतीयावि पुरेक्खडावि अणंता भाणियव्वा, जत्थ नत्थि तत्थ दोवि नत्थि भाणियव्वा जाव वेमाणियाणं वेमाणियत्ते केवतिया आणापाणुपोग्गलपरियट्टा अतीया ?, अणंता, केवतिया पुरेक्खडा ?, अणंता (सूत्रं ४४६) ॥

'एएसि ण'मित्यादि, 'एतेषाम्'अनन्तरोक्तस्वरूपाणां परमाणुपुद्गलानां परमाणूनामित्यर्थः 'साहणणाभेयाणुवाएणं'ति 'साहणण'त्ति प्राकृतत्वात् संहननं–सङ्घातो भेदश्च–वियोजनं तयोरनुपातो–योगः संहननभेदानुपातस्तेन सर्वपुद्गलद्रव्यैः सह परमाणूनां संयोगेन वियोगेन चेत्यर्थः, 'अणंताणंत'त्ति अनन्तेन गुणिता अनन्ता अनन्तानन्ताः, एकोऽपि हि परमाणुर्द्व्यणुकादिभिरनन्ताणुकान्तैर्द्रव्यैः सह संयुज्यमानोऽनन्तान् परिवर्त्तान् लभते, प्रतिद्रव्यं परिवर्त्तभावात्, अनन्तत्वाच्च परमाणूनां, प्रतिपरमाणु चानन्तत्वात्परिवर्त्तानां परमाणुपुद्गलपरिवर्त्तानामनन्तानन्तत्वं द्रष्टव्य-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥५६८॥

मिति । 'पुग्गलपरियट्ट'त्ति पुद्गलैः–पुद्गलद्रव्यैः सह परिवर्त्ताः–परमाणूनां मीलनानि पुद्गलपरिवर्त्ताः 'समनुगन्तव्याः' अनुगन्तव्या भवन्तीति हेतोः 'आख्याताः' प्ररूपिताः भगवद्भिरिति गम्यते, मकारश्च प्राकृतशैलीप्रभवः ॥ अथ पुद्गलपरावर्त्तस्यैव भेदाभिधानायाह—'कइविहे ण'मित्यादि, 'ओरालियपोग्गलपरियट्टे'त्ति औदारिकशरीरे वर्त्तमानेन जीवेन यदौदारिकशरीरप्रायोग्यद्रव्याणामौदारिकशरीरतया सामस्त्येन ग्रहणमसावौदारिकपुद्गलपरिवर्त्तः, एवमन्येऽपि । 'नेरइयाणं'ति नारकजीवानामनादौ संसारे संसरतां सप्तविधः पुद्गलपरावर्त्तः प्रज्ञप्तः ॥ 'एगमेगस्से'त्यादि, अतीतानन्ता अनादित्वात् अतीतकालस्य जीवस्य चानादित्वात् अपरापरपुद्गलग्रहणस्वरूपत्वाच्चेति । 'पुरक्खडे'ति पुरस्कृता भविष्यन्तः 'कस्सइ अत्थि कस्सइ नत्थि'त्ति कस्यापि जीवस्य दूरभव्यस्याभव्यस्य वा ते सन्ति, कस्यापि न सन्ति, उद्धृत्य यो मानुषत्वमासाद्य सिद्धिं यास्यति सङ्ख्येयैरसङ्ख्येयैर्वा भवैर्यास्यति यः सिद्धिं तस्यापि परिवर्त्तो नास्ति, अनन्तकालपूर्यत्वात्तस्येति । 'एगत्तिय'त्ति एकत्विकाः–एकनारकाद्याश्रयाः 'सत्त'त्ति औदारिकादिसप्तविधपुद्गलविषयत्वात्सप्तदण्डकाश्चतुर्विंशतिदण्डका भवन्ति, एकत्वपृथक्त्वदण्डकानां चायं विशेषः–एकत्वदण्डकेषु पुरस्कृतपुद्गलपरावर्त्ताः कस्यापि न सन्त्यपि, बहुत्वदण्डकेषु तु ते सन्ति, जीवसामान्याश्रयणादिति ॥ 'एगमेगस्से'त्यादि, 'नत्थि एक्कोवि'त्ति नारकत्वे वर्त्तमानस्यौदारिकपुद्गलग्रहणाभावादिति ॥ 'एगमेगस्स णं भंते ! नेरइयस्स असुरकुमारत्ते'इत्यादि, इह च नैरयिकस्य वर्त्तमानकालीनस्य असुरकुमारत्वे चातीतानागतकालसम्बन्धिनि 'एगुत्तरिया जाव अणंता व'त्ति अनेनेदं सूचितं–'कस्सइ अत्थि कस्सइ नत्थि, जस्सत्थि तस्स जहन्नेणं एक्को वा दोन्नि वा तिन्नि वा उक्कोसेणं सं-

१२ शतके ४ उद्देशः पुद्गलपरावर्त्ताधिकारः सू ४४६

॥५६८॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

खेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता वा'इति 'एवं जत्थ वेउव्वियसरीरं तत्थ एकोत्तरिओ'त्ति यत्र वायुकाये मनुष्य-पञ्चेन्द्रियतिर्यक्षु व्यन्तरादिषु च वैक्रियशरीरं तत्रैको वेत्यादि वाच्यमित्यर्थः, 'जत्थ नत्थी'त्यादि यत्राप्कायादौ नास्ति वैक्रियं तत्र यथा पृथिवीकायिकत्वे तथा वाच्यं, न सन्ति वैक्रियपुद्गलपरावर्त्ता इति वाच्यमित्यर्थः, 'तेयापोग्गले'त्यादि तैजसकार्म्मणपुद्गलपरावर्त्ता भविष्यन्त एकादयः सर्वेषु नारकादिजीवपदेषु पूर्ववद्वाच्यास्तैजसकार्म्मणयोः सर्वेषु भावा-दिति । 'मणपोग्गले'त्यादि, मनःपुद्गलपरावर्त्ताः पञ्चेन्द्रियेष्वेव सन्ति, भविष्यन्तश्च ते एकोत्तरिकाः पूर्ववद्वाच्याः, 'विगलिंदिएसु नत्थि'त्ति विकलेन्द्रियग्रहणेन चैकेन्द्रिया अपि ग्राह्याः तेषामपीन्द्रियाणामसम्पूर्णत्वात् मनोवृत्तेश्चा-भावाद् अतस्तेष्वपि मनःपुद्गलपरावर्त्ता न सन्ति । 'वइपोग्गलपरियट्टा एवं चेव'त्ति तैजसादिपरिवर्त्तवत्सर्वनारकादि-जीवपदेषु वाच्याः, नवरमेकेन्द्रियेषु वचनाभावान्न सन्तीति वाच्याः । 'नेरइयाण'मित्यादिना पृथक्त्वदण्डकानाह, 'जाव वेमाणियाण'मित्यादिना पर्यन्तिमदण्डको दर्शितः ॥ अथौदारिकादिपुद्गलपरावर्त्तानां स्वरूपमुपदर्शयितुमाह—

से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ–ओरालियपोग्गलपरियट्टा ओ० ?, गोयमा ! जण्णं जीवेणं ओरालियसरीरे वट्टमाणेणं ओरालियसरीरपयोगाइं दव्वाइं ओरालियसरीरत्ताए गहियाइं बद्धाइं पुट्ठाइं कडाइं पट्ठवियाइं निविट्ठाइं अभिनिविट्ठाइं अभिसमन्नागयाइं परियाइयाइं परिणामियाइं निज्जिन्नाइं निसिरियाइं निसिट्ठाइं भवंति से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ ओरालियपोग्गलपरियट्टे ओरा० २, एवं वेउव्वियपोग्गलपरियट्टेवि, नवरं वेउव्वियसरीरे वट्टमाणेणं वेउव्वियसरीरप्पयोगाइं सेसं तं चेव सव्वं एवं जाव आणापाणुपोग्गलपरियट्टे, नवरं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

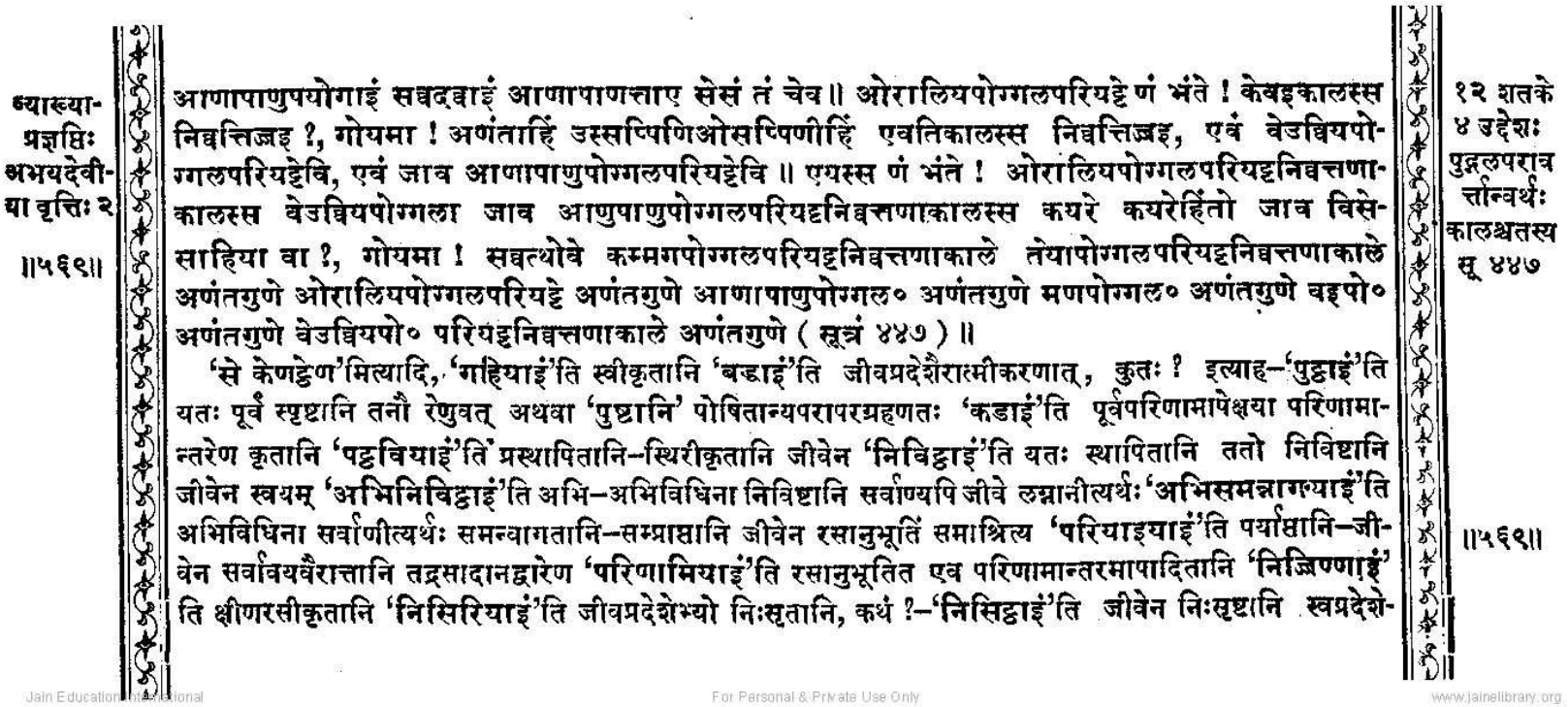

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥५६९॥

आणापाणुपयोगाइं सव्वदव्वाइं आणापाणत्ताए सेसं तं चेव॥ ओरालियपोग्गलपरियट्टे णं भंते ! केवइकालस्स निवत्तिज्जइ ?, गोयमा ! अणंताहिं उस्सप्पिणिओसप्पिणीहिं एवतिकालस्स निवत्तिज्जइ, एवं वेउव्वियपोग्गलपरियट्टेवि, एवं जाव आणापाणुपोग्गलपरियट्टेवि ॥ एयस्स णं भंते ! ओरालियपोग्गलपरियट्टनिवत्तणाकालस्स वेउव्वियपोग्गला जाव आणुपाणुपोग्गलपरियट्टनिवत्तणाकालस्स कयरे कयरेहिंतो जाव विसेसाहिया वा ?, गोयमा ! सव्वत्थोवे कम्मगपोग्गलपरियट्टनिवत्तणाकाले तेयापोग्गलपरियट्टनिवत्तणाकाले अणंतगुणे ओरालियपोग्गलपरियट्टे अणंतगुणे आणापाणुपोग्गल० अणंतगुणे मणपोग्गल० अणंतगुणे वइपो० अणंतगुणे वेउव्वियपो० परियट्टनिवत्तणाकाले अणंतगुणे (सूत्रं ४४७) ॥

'से केणट्ठेण'मित्यादि, 'गहियाइं'ति स्वीकृतानि 'बद्धाइं'ति जीवप्रदेशैरात्मीकरणात्, कुतः ? इत्याह–'पुट्ठाइं'ति यतः पूर्वं स्पृष्टानि तनौ रेणुवत् अथवा 'पुष्टानि' पोषितान्यपरापरग्रहणतः 'कडाइं'ति पूर्वपरिणामापेक्षया परिणामान्तरेण कृतानि 'पट्ठवियाइं'ति प्रस्थापितानि–स्थिरीकृतानि जीवेन 'निविट्ठाइं'ति यतः स्थापितानि ततो निविष्टानि जीवेन स्वयम् 'अभिनिविट्ठाइं'ति अभि–अभिविधिना निविष्टानि सर्वाण्यपि जीवे लग्नानीत्यर्थः 'अभिसमन्नागयाइं'ति अभिविधिना सर्वाणीत्यर्थः समन्वागतानि–सम्प्राप्तानि जीवेन रसानुभूतिं समाश्रित्य 'परियाइयाइं'ति पर्यापानि–जीवेन सर्वावयवैरात्तानि तद्ग्रसादानद्वारेण 'परिणामियाइं'ति रसानुभूतित एव परिणामान्तरमापादितानि 'निज्झिण्णाइं'ति क्षीणरसीकृतानि 'निसिरियाइं'ति जीवप्रदेशेभ्यो निःसृतानि, कथं ?–'निसिट्ठाइं'ति जीवेन निःसृष्टानि स्वप्रदेशे-

१२ शतके ४ उद्देशः पुद्गलपरावर्त्तान्वर्थः कालश्चतस्य सू ४४७

॥५६९॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भ्यस्त्याजितानि, इहाद्यानि चत्वारि पदान्यौदारिकपुद्गलानां ग्रहणविषयाणि तदुत्तराणि तु पञ्च स्थितिविषयाणि तदुत्तराणि तु चत्वारि विगमविषयाणीति ॥ अथ पुद्गलपरावर्त्तानां निर्वर्त्तनकालं तदल्पबहुत्वं च दर्शयन्नाह—'ओरालिये'त्यादि, 'केवइकालस्स'त्ति कियता कालेन निर्वर्त्यते ?, 'अणंताहिं उस्सप्पिणिओसप्पिणीहिं'ति एकस्य जीवस्य ग्राहकत्वात् पुद्गलानां चानन्तत्वात् पूर्वगृहीतानां च ग्रहणस्यागण्यमानत्वादनन्ता अवसर्प्पिण्य इत्यादि सुष्ठूक्तमिति । 'सव्वत्थोवे कम्मगपोग्गले'त्यादि, सर्वस्तोकः कार्म्मणपुद्गलपरिवर्त्तनिर्वर्त्तनाकालः, ते हि सूक्ष्मा बहुतमपरमाणुनिष्पन्नाश्च भवन्ति, ततस्ते सकृदपि बहवो गृह्यन्ते, सर्वेषु च नारकादिपदेषु वर्त्तमानस्य जीवस्य तेऽनुसमयं ग्रहणमायान्तीति स्वल्पकालेनापि तत्सकलपुद्गलग्रहणं भवतीति, ततस्तैजसपुद्गलपरिवर्त्तनिर्वर्त्तनाकालोऽनन्तगुणो, यतः स्थूलत्वेन तैजसपुद्गलानामल्पानामेकदा ग्रहणम्, एकग्रहणे चाल्पप्रदेशनिष्पन्नत्वेन तेषामल्पानामेव तदणूनां ग्रहणं भवत्यतोऽनन्तगुणोऽसाविति, तत औदारिकपुद्गलपरिवर्त्तनिर्वर्त्तनाकालोऽनन्तगुणो, यत औदारिकपुद्गला अतिस्थूराः, स्थूराणां चाल्पानामेवैकदा ग्रहणं भवति अल्पतरप्रदेशाश्च ते ततस्तद्ग्रहणेऽप्येकदाऽल्पा एवाणवो गृह्यन्ते, न च कार्म्मणतैजसपुद्गलवत्तेषां सर्वपदेषु ग्रहणमस्ति, औदारिकशरीरिणामेव तद्ग्रहणाद्, अतो बृहतैव कालेन तेषां ग्रहणमिति, तत आनप्राणपुद्गलपरिवर्त्तनाकालोऽनन्तगुणः, यद्यपि हि औदारिकपुद्गलेभ्य आनप्राणपुद्गलाः सूक्ष्मा बहुप्रदेशिकाश्चेति तेषामल्पकालेन ग्रहणं संभवति तथाऽप्यपर्याप्तकावस्थायां तेषामग्रहणात्पर्याप्तकावस्थायामप्यौदारिकशरीरपुद्गलापेक्षया तेषामल्पीयसामेव ग्रहणान्न शीघ्रं तद्ग्रहणमित्यौदारिकपुद्गलपरिवर्त्तनिर्वर्त्तनाकालादनन्तगुणताऽऽनप्राणपुद्गलपरिवर्त्तनिर्वर्त्तनाकालस्येति,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [४४७, ४४८]

दीप अनुक्रम [५४०, ५४१]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥५७०॥

ततो मनःपुद्गलपरिवर्त्तनिर्वर्त्तनाकालोऽनन्तगुणः, कथम् ?, यद्यप्यानप्राणपुद्गलेभ्यो मनःपुद्गलाः सूक्ष्मा बहुप्रदेशाश्चेत्यल्पकालेन तेषां ग्रहणं भवति तथाऽप्येकेन्द्रियादिकायस्थितिवशान्मनसश्चिरेण लाभान्मानसपुद्गलपरिवर्त्तो बहुकालसाध्य इत्यनन्तगुण उक्तः, ततोऽपि वाक्पुद्गलपरिवर्त्तनिर्वर्त्तनाकालोऽनन्तगुणः, कथम् ?, यद्यपि मनसः सकाशाद्भाषाशीघ्रतरं लभ्यते द्वीन्द्रियाद्यवस्थायां च भवति तथाऽपि मनोद्रव्येभ्यो भाषाद्रव्याणामतिस्थूलतया स्तोकानामेवैकदा ग्रहणात्ततोऽनन्तगुणो वाक्पुद्गलपरिवर्त्तनिर्वर्त्तनाकाल इति, ततो वैक्रियपुद्गलपरिवर्त्तनिर्वर्त्तनाकालोऽनन्तगुणो, वैक्रियशरीरस्यातिबहुकाललभ्यत्वादिति ॥ पुद्गलपरिवर्त्तानामेवाल्पबहुत्वं दर्शयन्नाह—

एएसि णं भंते ! ओरालियपोग्गलपरियट्टाणं जाव आणापाणुपोग्गलपरियट्टाण य कयरे २ हिंतो जाव विसेसाहिया वा ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा वेउव्वियपो० वइपो० परि० अणंतगुणा मणपोग्गलप० अणंत० आणापाणुपोग्गल० अनंतगुणा ओरालियपो० अणंतगुणा तेयापो० अणंत० कम्मगपोग्गल० अणंतगुणा । सेवं भंते ! सेवं भंतेत्ति भगवं जाव विहरइ (सूत्रं ४४८) ॥ १२–४ ॥

'एएसि ण'मित्यादि, सर्वस्तोका वैक्रियपुद्गलपरिवर्त्ता बहुतमकालनिर्वर्त्तनीयत्वात्तेषां, ततोऽनन्तगुणा वाग्विषया अल्पतरकालनिर्वर्त्त्यत्वात्, एवं पूर्वोक्तयुक्त्या बहुबहुतराः क्रमेणान्येऽपि वाच्या इति ॥ द्वादशशते चतुर्थः ॥ १२–४ ॥ ॥ ग्रन्थाग्रम् ॥ १२००० ॥

१२ शतवे ४ उद्देशः परावर्त्ता-ल्पबहुत्वं सू ४४८

॥५७०॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र द्वादशमे शतके चतुर्थ-उद्देशक: परिसमाप्त:

अनन्तरोद्देशके पुद्गला उक्तास्तत्प्रस्तावात्कर्मपुद्गलस्वरूपाभिधानाय पञ्चमोद्देशकमाह—

रायगिहे जाव एवं वयासी–अह भंते ! पाणाइवा० मुसा० अदि० मेहु० परि० एस णं कतिवन्ने कतिगंधे कतिरसे कतिफासे पण्णत्ते ?, गोयमा ! पंचवन्ने पंचरसे दुगंधे चउफासे पण्णत्ते ॥ अह भंते ! कोहे १ कोवे २ रोसे ३ दोसे ४ अखमे ५ संजलणे ६ कलहे ७ चंडिक्क ८ भंडणे ९ विवादे १० एस णं कतिवन्ने जाव कतिफासे पण्णत्ते ?, गोयमा ! पंचवन्ने पंचरसे दुगंधे चउफासे पण्णत्ते ॥ अह भंते ! माणे मदे दप्पे थंभे गव्वे अत्तुक्कोसे परपरिवाए उक्कासे अवक्कासे उन्नामे दुन्नामे १२ एस णं कतिवन्ने ४ ?, गोयमा ! पंचवन्ने जहा कोहे तहेव । अह भंते ! माया उवही नियडी वलये गहणे णूमे कक्के कुरूए जिम्हे किविसे १० आयरणया गूहणया वंचणया पलिउंचणया सातिजोगे य १५ एस णं कतिवन्ने ४ ?, गोयमा ! पंचवन्ने जहेव कोहे ॥ अह भंते ! लोभे इच्छा मुच्छा कंखा गेही तण्हा भिज्झा अभिज्झा आसासणया पत्थणया १० लालप्पणया कामासा भोगासा जीवियासा मरणासा नंदीरागे १६ एस णं कतिवन्ने ?, जहेव कोहे । अह भंते ! पेज्जे दोसे कलहे जाव मिच्छादंसणसल्ले एस णं कतिवन्ने ! जहेव कोहे तहेव चउफासे ॥ (सूत्रं ४४९) अह भंते ! पाणाइवायवेरमणे जाव परिग्गहवेरमणे कोहविवेगे जाव मिच्छादंसणसल्लविवेगे एस णं कतिवन्ने जाव कतिफासे पण्णत्ते ?, गोयमा ! अवन्ने अगंधे अरसे अफासे पण्णत्ते ॥ अह भंते ! उप्पत्तिया वेणइया कम्मिया परिणामिया एस णं कतिवन्ना तं चेव जाव अफासा पन्नत्ता ॥ अह भंते ! उग्गहे ईहा अवाये

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अथ द्वादशमे शतके पंचम-उद्देशक: आरभ्यते

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः२

॥५७१॥

धारणा एस णं कतिवन्ना ?, एवं चेव जाव अफासा पन्नत्ता ॥ अह भंते ! उट्ठाणे कम्मे बले वीरिए पुरिसक्कारपरक्कमे एस णं कतिवन्ने ? तं चेव जाव अफासे पन्नत्ते । सत्तमे णं भंते ! उवासंतरे कतिवन्ने ? एवं चेव जाव अफासे पन्नत्ते । सत्तमे णं भंते ! तणुवाए कतिवन्ने ?, जहा पाणाइवाए, नवरं अट्ठफासे पण्णत्ते, एवं जहा सत्तमे तणुवाए तहा सत्तमे घणवाए घणोदधि पुढवी, छट्ठे उवासंतरे अवन्ने, तणुवाए जाव छट्ठी पुढवी एयाइं अट्ठ फासाइं, एवं जहा सत्तमाए पुढवीए वत्तव्वया भणिया तहा जाव पढमाए पुढवीए भाणियव्वं, जंबुद्दीवे २ सयंभुरमणे समुद्दे सोहम्मे कप्पे जाव ईसिपब्भारा पुढवी नेरतियावासा जाव वेमाणियावासा एयाणि सव्वाणि अट्ठफासाणि । नेरइया णं भंते ! कतिवन्ना जाव कतिफासा पन्नत्ता ?, गोयमा ! वेउव्वियतेयाइं पडुच्च पंचवन्ना पंचरसा दुग्गंधा अट्ठफासा पण्णत्ता, कम्मगं पडुच्च पंचवन्ना पंचरसा दुगंधा चउफासा पण्णत्ता, जीवं पडुच्च अवन्ना जाव अफासा पण्णत्ता, एवं जाव थणिय०, पुढविकाइयपुच्छा, गोयमा ! ओरालियतेयगाइं पडुच्च पंचवन्ना जाव अट्ठफासा पण्णत्ता, कम्मगं पडुच्च जहा नेर०, जीवं पडुच्च तहेव, एवं जाव चउरिंदि०, नवरं वाउक्काइया ओरा० वेउ० तेयगाइं पडुच्च पंचवन्ना जाव अट्ठफासा पण्णत्ता, सेसं जहा नेरइयाणं, पंचिंदियतिरिक्खजोणिया जहा वाउक्काइया, मणुस्साणं पुच्छा ओरालियवेउव्वियआहारगतेयगाइं पडुच्च पंचवन्ना जाव अट्ठफासा पण्णत्ता, कम्मगं जीवं च पडुच्च जहा नेर०, वाणमंतरजोइसियवेमा-

१२ शतके ५ उद्देशः पापस्थान वर्णादिः विरमण प्रभृति वर्णादिः सू ४४९-४५०

॥५७१॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

णिया जहा नेर०, धम्मत्थिकाए जाव पोग्गल० एए सव्वे अवन्ना, नवरं पोग्गल० पंचवन्ने पंचरसे दुगंधे अट्ठफासे पण्णत्ते, णाणावरणिज्जे जाव अंतराइए एयाणि चउफासाणि, कण्हलेसा णं भंते ! कइवन्ना० ? पुच्छा दव्वलेसं पडुच्च पंचवन्ना जाव अट्ठफासा पण्णत्ता, भावलेसं पडुच्च अवन्ना ४, एवं जाव सुक्कलेस्सा, सम्मद्दिट्ठि ३ चक्खुद्दंसणे ४ आभिणिबोहियणाणे जाव विब्भंगणाणे आहारसन्ना जाव परिग्गहसन्ना एयाणि अवन्नाणि ४, ओरालियसरीरे जाव तेयगसरीरे एयाणि अट्ठफासाणि कम्मगसरीरे चउफासे, मणजोगे वयजोगे य चउफासे, कायजोगे अट्ठफासे, सागारोवओगे य अणागारोवओगे य अवन्ना । सव्वद्धा णं भंते ! कतिवन्ना ? पुच्छा, गोयमा ! अत्थेगतिया सव्वद्धा पंचवन्ना जाव अट्ठफासा पण्णत्ता अत्थेगतिया सव्वद्धा पंचवन्ना चउफासा पण्णत्ता अत्थेगतिया सव्वद्धा एगगंधा एगवण्णा एगरसा दुफासा पन्नत्ता अत्थेगइया सव्वद्धा अवन्ना जाव अफासा पन्नत्ता, एवं सव्वपएसावि सव्वपज्जवावि, तीयद्धा अवन्ना जाव अफासा पण्णत्ता, एवं अणागयद्धावि, एवं सव्वद्धावि ॥ (सूत्रं ४५०)

'रायगिहे'इत्यादि 'पाणाइवाए'त्ति प्राणातिपातजनितं तज्जनकं वा चारित्रमोहनीयं कर्मोपचारात् प्राणातिपात एव, एवमुत्तरत्रापि, तस्य च पुद्गलरूपत्वाद्वर्णादयो भवन्तीत्यत उक्तं 'पंचवन्ने' इत्यादि, आह च–"पंचरसपंचवन्नेहिं परिणयं दुविहगंधचउफासं । दवियमणंतपएसं सिद्धेहिं अणंतगुण हीणं ॥ १ ॥" इति [पञ्चभी रसैः पञ्चभिर्वर्णैः परिणतं द्विविधगन्धं चतुःस्पर्शम् । अनन्तप्रदेशं द्रव्यं सिद्धेभ्योऽनन्तगुणं हीनम् ॥ १ ॥] 'चउफासे'त्ति स्निग्धरूक्षशीतोष्णा-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

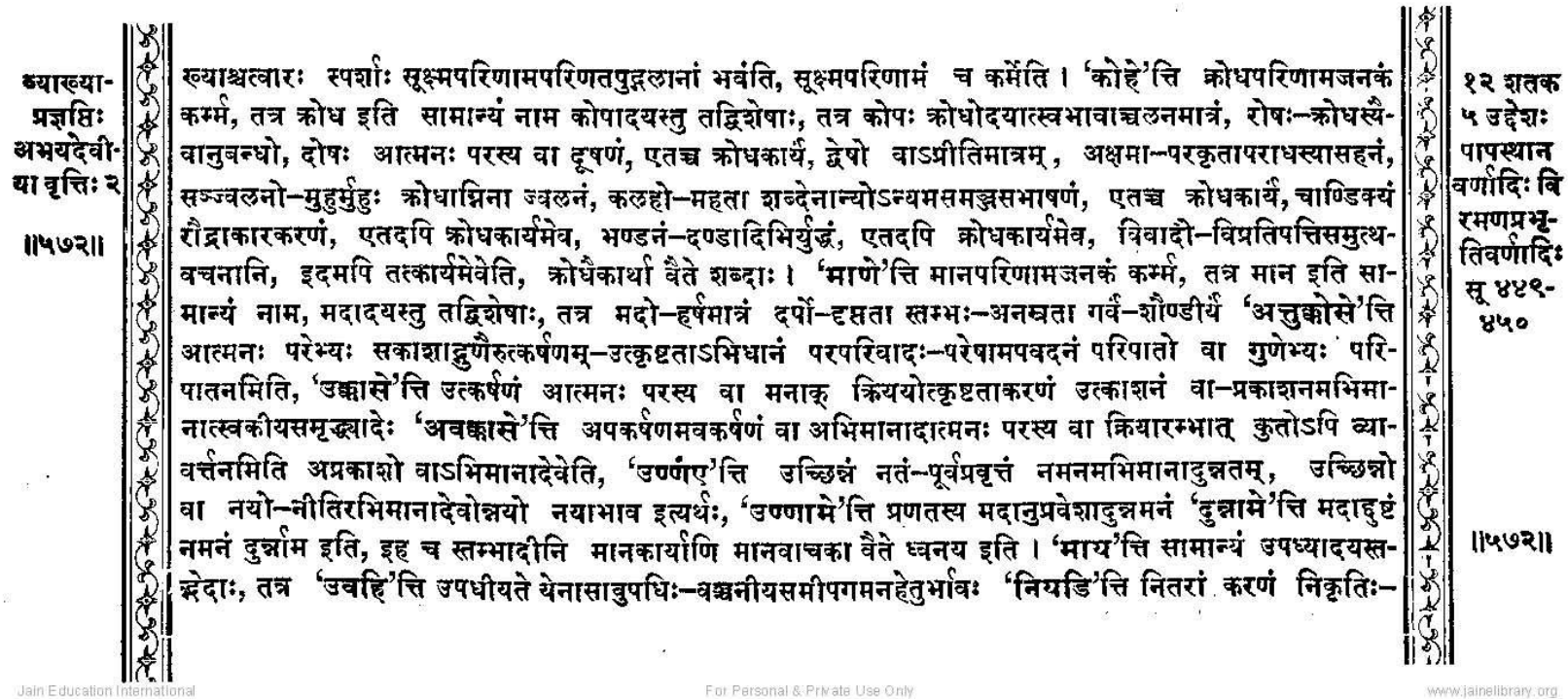

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥५७२॥

ख्याश्चत्वारः स्पर्शाः सूक्ष्मपरिणामपरिणतपुद्गलानां भवंति, सूक्ष्मपरिणामं च कर्मेति । 'कोहे'त्ति क्रोधपरिणामजनकं कर्म्म, तत्र क्रोध इति सामान्यं नाम कोपादयस्तु तद्विशेषाः, तत्र कोपः क्रोधोदयात्स्वभावाच्चलनमात्रं, रोषः–क्रोधस्यैवानुबन्धो, दोषः आत्मनः परस्य वा दूषणं, एतच्च क्रोधकार्यं, द्वेषो वाऽप्रीतिमात्रम्, अक्षमा–परकृतापराधस्यासहनं, सञ्ज्वलनो–मुहुर्मुहुः क्रोधाग्निना ज्वलनं, कलहो–महता शब्देनान्योऽन्यमसमञ्जसभाषणं, एतच्च क्रोधकार्यं, चाण्डिक्यं रौद्राकारकरणं, एतदपि क्रोधकार्यमेव, भण्डनं–दण्डादिभिर्युद्धं, एतदपि क्रोधकार्यमेव, विवादो–विप्रतिपत्तिसमुत्थवचनानि, इदमपि तत्कार्यमेवेति, क्रोधैकार्था वैते शब्दाः । 'माणे'त्ति मानपरिणामजनकं कर्म्म, तत्र मान इति सामान्यं नाम, मदादयस्तु तद्विशेषाः, तत्र मदो–हर्षमात्रं दर्पो–दृप्तता स्तम्भः–अनम्रता गर्वं–शौण्डीर्यं 'अत्तुक्कोसे'त्ति आत्मनः परेभ्यः सकाशाद्गुणैरुत्कर्षणम्–उत्कृष्टताऽभिधानं परपरिवादः–परेषामपवदनं परिपातो वा गुणेभ्यः परिपातनमिति, 'उक्कासे'त्ति उत्कर्षणं आत्मनः परस्य वा मनाक् क्रियायोत्कृष्टताकरणं उत्काशनं वा–प्रकाशनमभिमानात्स्वकीयसमृद्ध्यादेः 'अवक्कासे'त्ति अपकर्षणमवकर्षणं वा अभिमानादात्मनः परस्य वा क्रियारम्भात् कुतोऽपि व्यावर्त्तनमिति अप्रकाशो वाऽभिमानादेवेति, 'उण्णए'त्ति उच्छ्रितं नतं–पूर्वप्रवृत्तं नमनमभिमानादुन्नतम्, उच्छ्रितो वा नयो–नीतिरभिमानादेवोन्नयो नयाभाव इत्यर्थः, 'उण्णामे'त्ति प्रणतस्य मदानुप्रवेशादुन्नमनं 'दुन्नामे'त्ति मदाद्दुष्टं नमनं दुर्न्नाम इति, इह च स्तम्भादीनि मानकार्याणि मानवाचका वैते ध्वनय इति । 'माय'त्ति सामान्यं उपध्यादयस्तद्भेदाः, तत्र 'उवहि'त्ति उपधीयते येनासावुपधिः–वञ्चनीयसमीपगमनहेतुर्भावः 'नियडि'त्ति नितरां करणं निकृतिः–

१२ शतक ५ उद्देशः पापस्थान वर्णादिः विरमणप्रभृतिवर्णादिः सू ४४९-४५०

॥५७२॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

आदरकरणेन परवञ्चनं पूर्वकृतमायाप्रच्छादनार्थं वा मायान्तरकरणं 'वलए'त्ति येन भावेन वलयमिव वक्रं वचनं चेष्टा वा प्रवर्त्तते स भावो वलयं 'गहणे'त्ति परव्यामोहनाय यद्वचनजालं तद्गहनमिव गहनं 'णूमे'त्ति परवञ्चनाय निम्नताया निम्नस्थानस्य वाऽश्रयणं तन्नूमंति 'कक्के'त्ति कल्कं हिंसादिरूपं पापं तन्निमित्तो यो वञ्चनाभिप्रायः स कल्कमेवोच्यते 'कुरूए'त्ति कुत्सितं यथा भवत्येवं रूपयति–विमोहयति यत्तत्कुरूपं भाण्डादिकर्म मायाविशेष एव 'जिम्हे'त्ति येन परवञ्चनाभिप्रायेण जैह्यं–क्रियासु मान्द्यमालम्बते स भावो जैह्यमेवेति 'किब्बिसे'त्ति यतो मायाविशेषाज्जन्मान्तरेऽत्रैव वा भवे किल्विषः–किल्बिषिको भवति स किल्बिष एवेति, 'आयरणय'त्ति यतो मायाविशेषादादरणं–अभ्युपगमं कस्यापि वस्तुनः करोत्यसावादरणं, ताप्रत्ययस्य च स्वार्थिकत्वाद् आयरणया, आचरणं वा–परप्रतारणाय विविधक्रियाणामाचरणं, 'गूहनया' गूहनं गोपायनं स्वरूपस्य 'वंचणया' वञ्चनं–परस्य प्रतारणं 'पलिउंचणया' प्रतिकुञ्चनं सरलतया प्रवृत्तस्य वचनस्य खण्डनं 'साइजोगे'त्ति अविश्रम्भसम्बन्धः सातिशयेन वा द्रव्येण निरतिशयस्य योगस्तत्प्रतिरूपकरणमित्यर्थः, मायैकार्था वैते ध्वनय इति। 'लोभे'त्ति सामान्यं इच्छादयस्तद्विशेषाः, तत्रेच्छा–अभिलाषमात्रं 'मुच्छा कंखा गेही'त्ति मूर्च्छा–संरक्षणानुबन्धः काङ्क्षा–अप्राप्तार्थाशंसा 'गेहि'त्ति गृद्धिः–प्राप्तार्थेष्वासक्तिः 'तण्ह'त्ति तृष्णा–प्राप्तार्थानामव्ययेच्छा 'भिज्ज'त्ति अभि–व्याप्त्या विषयाणां ध्यानं–तदेकाग्रत्वमभिध्या पिधानादिवदकारलोपाद्भिध्या 'अभिज्झ'त्ति न भिध्या अभिध्या भिध्यासदृशं भावान्तरं, तत्र दृढाभिनिवेशो भिध्या ध्यानलक्षणत्वात्तस्याः, अदृढाभिनिवेशस्त्वभिध्या चित्तलक्षणत्वात्तस्याः, ध्यानचित्तयोस्त्वयं विशेषः–"जं थिरमज्झवसाणं तं झाणं जं चलं तयं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

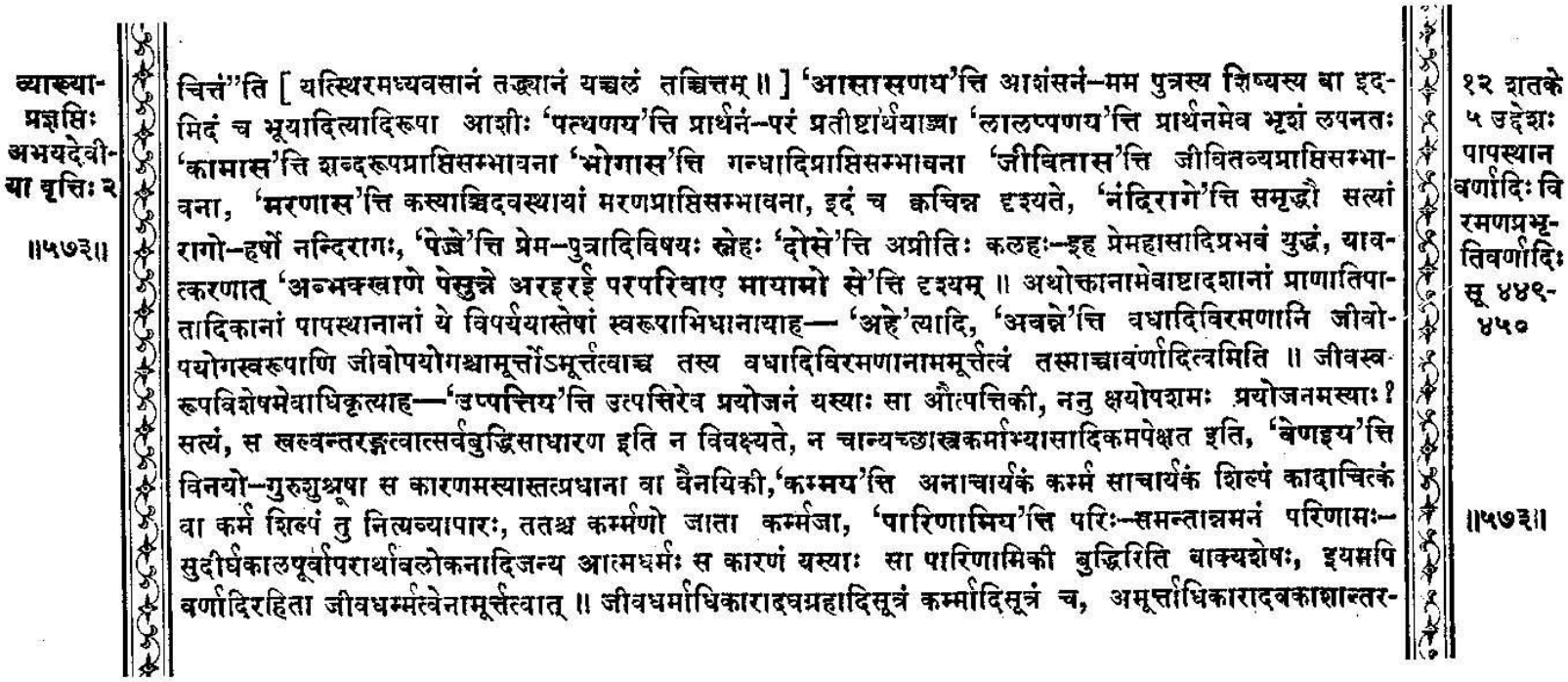

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥५७३॥

चित्तं"ति [यत्स्थिरमध्यवसानं तद्ध्यानं यच्चलं तच्चित्तम् ॥] 'आसासणय'त्ति आशंसनं–मम पुत्रस्य शिष्यस्य वा इद-मिदं च भूयादित्यादिरूपा आशीः 'पत्थणय'त्ति प्रार्थनं–परं प्रतीष्टार्थयाञ्चा 'लालप्पणय'त्ति प्रार्थनमेव भृशं लपनतः 'कामास'त्ति शब्दरूपप्राप्तिसम्भावना 'भोगास'त्ति गन्धादिप्राप्तिसम्भावना 'जीवितास'त्ति जीवितव्यप्राप्तिसम्भा-वना, 'मरणास'त्ति कस्याञ्चिदवस्थायां मरणप्राप्तिसम्भावना, इदं च क्वचिन्न दृश्यते, 'नंदिरागे'त्ति समृद्धौ सत्यां रागो–हर्षो नन्दिरागः, 'पेज्जे'त्ति प्रेम–पुत्रादिविषयः स्नेहः 'दोसे'त्ति अप्रीतिः कलहः–इह प्रेमहासादिप्रभवं युद्धं, याव-त्करणात् 'अब्भक्खाणे पेसुन्ने अरइरई परपरिवाए मायामो से'त्ति दृश्यम् ॥ अथोक्तानामेवाष्टादशानां प्राणातिपा-तादिकानां पापस्थानानां ये विपर्ययास्तेषां स्वरूपाभिधानायाह— 'अहे'त्यादि, 'अवन्ने'त्ति वधादिविरमणानि जीवो-पयोगस्वरूपाणि जीवोपयोगश्चामूर्त्तोऽमूर्त्तत्वाच्च तस्य वधादिविरमणानाममूर्त्तत्वं तस्माच्चावर्णादित्वमिति ॥ जीवस्व-रूपविशेषमेवाधिकृत्याह—'उप्पत्तिय'त्ति उत्पत्तिरेव प्रयोजनं यस्याः सा औत्पत्तिकी, ननु क्षयोपशमः प्रयोजनमस्याः? सत्यं, स खल्वन्तरङ्गत्वात्सर्वबुद्धिसाधारण इति न विवक्ष्यते, न चान्यच्छास्त्रकर्माभ्यासादिकमपेक्षत इति, 'वेणइय'त्ति विनयो–गुरुशुश्रूषा स कारणमस्यास्तत्प्रधाना वा वैनयिकी,'कम्मय'त्ति अनाचार्यकं कर्म्म साचार्यकं शिल्पं कादाचित्कं वा कर्म शिल्पं तु नित्यव्यापारः, ततश्च कर्म्मणो जाता कर्म्मजा, 'पारिणामिय'त्ति परिः–समन्तान्नमनं परिणामः–सुदीर्घकालपूर्वापरार्थावलोकनादिजन्य आत्मधर्मः स कारणं यस्याः सा पारिणामिकी बुद्धिरिति वाक्यशेषः, इयमपि वर्णादिरहिता जीवधर्म्मत्वेनामूर्त्तत्वात् ॥ जीवधर्माधिकारादघग्रहादिसूत्रं कर्म्मादिसूत्रं च, अमूर्त्ताधिकारादवकाशान्तर-

१२ शतके ५ उद्देशः पापस्थान वर्णादिः वि रमणप्रभृ-तिवर्णादिः सू ४४९-४५०

॥५७३॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सूत्रं अमूर्त्तत्वविपर्ययात्तनुवातादिसूत्राणि चाह—तत्र च 'सत्तमे णं भंते ! उवासंतरे'त्ति प्रथमद्वितीयपृथिव्योर्यदन्तराले आकाशखण्डं तत्प्रथमं तदपेक्षया सप्तमं सप्तम्या अधस्तात्तस्योपरिष्टात्सप्तमस्तनुवातस्तस्योपरि सप्तमो घनवातस्तस्याप्युपरि सप्तमो घनोदधिस्तस्याप्युपरि सप्तमी पृथिवी, तनुवातादीनां च पञ्चवर्णादित्वं पौद्गलिकत्वेन मूर्त्तत्वात्, अष्टस्पर्शत्वं च बादरपरिणामत्वात्, अष्टौ च स्पर्शाः शीतोष्णस्निग्धरूक्षमृदुकठिनलघुगुरुभेदादिति । जम्बूद्वीपे इत्यत्र यावत्करणाल्लवणसमुद्रादीनि पदानि वाच्यानि 'जाव वेमाणियावासा' इह यावत्करणादसुरकुमारावासादिपरिग्रहः, ते च भवनानि नगराणि विमानानि तिर्यग्लोके तन्नगर्यश्चेति । 'वेउव्वियतेयाइं पडुच्च'त्ति वैक्रियतैजसशरीरे हि बादरपरिणामपुद्गलरूपे ततो बादरत्वात्तयोर्नारकाणामष्टस्पर्शत्वं, 'कम्मगं पडुच्च'त्ति कार्म्मणं हि सूक्ष्मपरिणामपुद्गलरूपमतश्चतुःस्पर्शं, ते च शीतोष्णस्निग्धरूक्षाः 'धम्मत्थिकाए' इह यावत्करणादेवं दृश्यम्–'अधम्मत्थिकाए आगासत्थिकाए पोग्गलत्थिकाए अद्धासमए आवलिया मुहुत्ते'इत्यादि, 'दव्वलेसं पडुच्च'त्ति इह द्रव्यलेश्यावर्णः 'भावलेसं पडुच्च'त्ति भावलेश्या–आन्तरः परिणामः, इह च कृष्णलेश्यादीनि परिग्रहसञ्ज्ञाऽवसानानि अवर्णादीनि जीवपरिणामत्वात्, औदारिकादीनि चत्वारि शरीराणि पञ्चवर्णादिविशेषणानि अष्टस्पर्शानि च बादरपरिणामपुद्गलरूपत्वात्, सर्वत्र च चतुःस्पर्शत्वे सूक्ष्मपरिणामः कारणं अष्टस्पर्शत्वे च बादरपरिणामः कारणं वाच्यमिति, 'सव्वदव्व'त्ति सर्वद्रव्याणि धर्मास्तिकायादीनि 'अत्थेगइया सव्वदव्वा पंचवन्ने'त्यादि बादरपुद्गलद्रव्याणि प्रतीत्योक्तं सर्वद्रव्याणां मध्ये कानिचित्पञ्चवर्णादीनीति भावार्थः 'चउफासा' इत्येतच्च पुद्गलद्रव्याण्येव सूक्ष्माणि प्रतीत्योक्तं 'एगगंधे'त्यादि च परमाण्वा-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

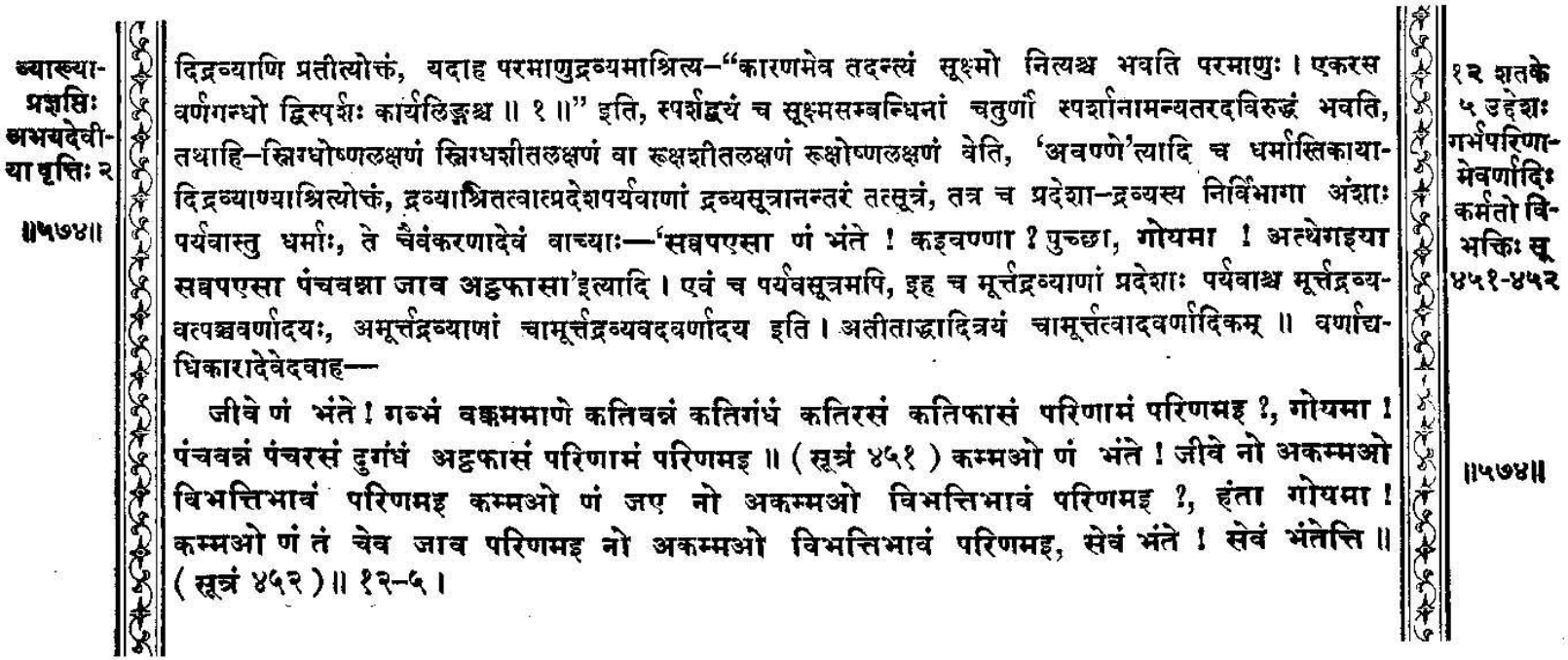

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥५७४॥

दिद्रव्याणि प्रतीत्योक्तं, यदाह परमाणुद्रव्यमाश्रित्य–"कारणमेव तदन्त्यं सूक्ष्मो नित्यश्च भवति परमाणुः। एकरस वर्णगन्धो द्विस्पर्शः कार्यलिङ्गश्च ॥ १ ॥" इति, स्पर्शद्वयं च सूक्ष्मसम्बन्धिनां चतुर्णां स्पर्शानामन्यतरदविरुद्धं भवति, तथाहि–स्निग्धोष्णलक्षणं स्निग्धशीतलक्षणं वा रूक्षशीतलक्षणं रूक्षोष्णलक्षणं वेति, 'अवण्णे'त्यादि च धर्मास्तिकाया-दिद्रव्याण्याश्रित्योक्तं, द्रव्याश्रितत्वात्प्रदेशपर्यवाणां द्रव्यसूत्रानन्तरं तत्सूत्रं, तत्र च प्रदेशा–द्रव्यस्य निर्विभागा अंशाः पर्यवास्तु धर्माः, ते चैवंकरणादेवं वाच्याः—'सव्वपएसा णं भंते ! कइवण्णा ? पुच्छा, गोयमा ! अत्थेगइया सव्वपएसा पंचवण्णा जाव अट्ठफासा'इत्यादि। एवं च पर्यवसूत्रमपि, इह च मूर्त्तद्रव्याणां प्रदेशाः पर्यवाश्च मूर्त्तद्रव्य-वत्पञ्चवर्णादयः, अमूर्त्तद्रव्याणां चामूर्त्तद्रव्यवदवर्णादय इति। अतीताद्धादित्रयं चामूर्त्तत्वादवर्णादिकम् ॥ वर्णाद्य-धिकारादेवेदवाह—

जीवे णं भंते ! गब्भं वक्कममाणे कतिवन्नं कतिगंधं कतिरसं कतिफासं परिणामं परिणमइ ?, गोयमा ! पंचवन्नं पंचरसं दुगंधं अट्ठफासं परिणामं परिणमइ ॥ (सूत्रं ४५१) कम्मओ णं भंते ! जीवे नो अकम्मओ विभत्तिभावं परिणमइ कम्मओ णं जए नो अकम्मओ विभत्तिभावं परिणमइ ?, हंता गोयमा ! कम्मओ णं तं चेव जाव परिणमइ नो अकम्मओ विभत्तिभावं परिणमइ, सेवं भंते ! सेवं भंतेत्ति ॥ (सूत्रं ४५२) ॥ १२–५ ।

१२ शतके ५ उद्देशः गर्भपरिणा-मेवर्णादिः कर्मतो वि-भक्तिः सू ४५१-४५२

॥५७४॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

'जीवे ण'मित्यादि, 'परिणामं परिणमइ'त्ति स्वरूपं गच्छति कतिवर्णादिना रूपेण परिणमतीत्यर्थः 'पंचवन्नं'ति गर्भव्युत्क्रमणकाले जीवशरीरस्य पञ्चवर्णादित्वात् गर्भव्युत्क्रमणकाले जीवपरिणामस्य पञ्चवर्णादित्वमवसेयमिति ॥ अनन्तरं गर्भं व्युत्क्रामन् जीवो वर्णादिभिर्विचित्रं परिणामं परिणमतीत्युक्तम्, अथ विचित्रपरिणाम एव जीवस्य यतो भवति तद्दर्शयितुमाह—'कम्मओ ण'मित्यादि, कर्म्मतः सकाशान्नो अकर्म्मतः–न कर्म्माणि विना जीवो 'विभक्तिभावं' विभागरूपं भावं नारकतिर्यग्मनुष्यामरभवेषु नानारूपं परिणाममित्यर्थः 'परिणमति' गच्छति तथा 'कम्मओ णं जए'त्ति गच्छति तांस्तान्नारकादिभावानिति 'जगत्' जीवसमूहो जीवद्रव्यस्यैव वा विशेषो जङ्गमाभिधानो 'जगन्ति जङ्गमान्याहु'रिति वचनादिति ॥ द्वादशशते पञ्चमः ॥ १२–५ ॥

जगतो विभक्तिभावः कर्म्मत इति पञ्चमोद्देशकान्ते उक्तं, स च राहुग्रसने चन्द्रस्यापि स्यादिति शङ्कानिरासाय षष्ठोद्देशकमाह, तस्य चेदमादिसूत्रम्—

रायगिहे जाव एवं वयासी–बहुजणे णं भंते ! अन्नमन्नस्स एवमाइक्खति जाव एवं परूवेइ–एवं खलु राहू चंदं गेण्हति एवं० २, से कहमेयं भंते ! एवं ?, गोयमा ! जन्नं से बहुजणे णं अन्नमन्नस्स जाव मिच्छं ते एवमाहंसु, अहं पुण गोयमा ! एवमाइक्खामि जाव एवं परूवेमि–एवं खलु राहू देवे महिड्ढीए जाव महेसक्खे वरवत्थधरे वरमल्लधरे वरगंधधरे वराभरणधारी, राहुस्स णं देवस्स नव नामधेज्जा पण्णत्ता, तंजहा–सिंघा-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	अत्र द्वादशमे शतके पंचम-उद्देशक: परिसमाप्त: अथ द्वादशमे शतके षष्ठं-उद्देशक: आरभ्यते राहू, राहो: नव नामानि, राहूविमान, ग्रहण

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [४५३]

दीप अनुक्रम [५४६]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥५७५॥

डए १ जडिलए २ खंभए [खत्तए] ३ खरए ४ दद्दुरे ५ मगरे ६ मच्छे ७ कच्छभे ८ कण्हसप्पे ९, राहुस्स णं देवस्स विमाणा पंचवन्ना पण्णत्ता, तंजहा–किण्हा नीला लोहिया हालिद्दा सुक्किल्ला, अत्थि कालए राहुविमाणे खंजणवन्नाभे पण्णत्ते अत्थि नीलए राहुविमाणे लाउयवन्नाभे प० अत्थि लोहिए राहुविमाणे-मंजिट्ठवन्नाभे पं० अत्थि पीतए राहुविमाणे हालिद्दवन्नाभे पन्नत्ते अत्थि सुक्किल्लए राहुविमाणे भासरासि वन्नाभे पन्नत्ते ॥ जया णं राहू आगच्छमाणे वा गच्छमाणे वा विउव्वमाणे वा परियारेमाणे वा चंदलेस्सं पुरच्छिमेणं आवरेत्ता णं पच्चच्छिमेणं वीतीवयइ तदा णं पुरच्छिमेणं चंदे उवदंसेति पच्चच्छिमेणं राहू, जदा णं राहू आगच्छमाणे वा गच्छमाणे वा विउव्वमाणे वा परियारेमाणे चंदलेस्सं पच्चच्छिमेणं आवरेत्ताणं पुरच्छिमेणं वीतीवयति तदा णं पच्चच्छिमेणं चंदे उवदंसेति पुरच्छिमेणं राहू, एवं जहा पुरच्छिमेणं पच्चच्छिमेणं दो आलावगा भणिया एवं दाहिणेणं उत्तरेण य दो आलावगा भा०, एवं उत्तरपुरच्छिमेण दाहिण-पच्चच्छिमेण य दो आलावगा भा० दाहिणपुरच्छिमेणं उत्तरपुरच्छिमेणं दो आलावगा भा० एवं चेव जाव तदा णं उत्तरपच्चच्छिमे णं चंदे उवदंसेति दाहिणपुरच्छिमेणं राहू, जदा णं राहू आगच्छमाणे वा गच्छमाणे विउव्व० परियारेमाणे चंदलेस्सं आवरेमाणे २ चिट्ठति तदा णं मणुस्सलोए मणुस्सा वदंति–एवं खलु राहू चंदं गे० एवं०, जदा णं राहू आगच्छमाणे ४ चंदस्स लेस्सं आवरेत्ताणं पासेणं वीइवयइ तदा णं मणुस्सलोए मणुस्सा वदंति–एवं खलु चंदेणं राहुस्स कुच्छी भिन्ना एवं०, जदा णं राहू आगच्छमाणे वा ४

१२ शतके ६ उद्देशः राहुविमानं सू ४५३

॥५७५॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	राहू, राहो: नव नामानि, राहूविमान, ग्रहण

चंदस्स लेस्सं आवरेत्ताणं पच्चोसक्कइ तदा णं मणुस्सलोए मणुस्सा वदंति–एवं खलु राहुणा चंदे वंते, एवं०, जदा णं राहू आगच्छमाणे वा ४ जाव परियारेमाणे वा चंदलेस्सं अहे सपक्खिं सपडिदिसिं आवरेत्ताणं चिट्ठति तदा णं मणुस्सलोए मणुस्सा वदंति–एवं खलु राहुणा चंदे घत्थे एवं०॥ कतिविहे णं भंते ! राहू पन्नत्ते ? गोयमा ! दुविहे राहू पन्नत्ते ?, तंजहा–धुवराहू पव्वराहू य, तत्थ णं जे से धुवराहू से णं बहुलपक्खस्स पाडिवए [ग्रन्थाग्रम् ८०००] पन्नरसतिभागेणं पन्नरसइभागं चंदस्स लेस्सं आवरेमाणे २ चिट्ठति, तंजहा– पढमाए पढमं भागं बितियाए बितियं भागं जाव पन्नरसेसु पन्नरसमं भागं, चरिमसमये चंदे रत्ते भवति अवसेसे समये चंदे रत्ते य विरत्ते य भवति, तमेव सुक्कपक्खस्स उवदंसेमाणे उव० २ चिट्ठति पढमाए पढमं भागं जाव पन्नरसेसु पन्नरसमं भागं, चरिमसमये चंदे विरत्ते भवइ अवसेसे समये चंदे रत्ते य विरत्ते य भवइ, तत्थ णं जे से पव्वराहू से जहन्नेणं छण्हं मासाणं उक्कोसेणं बायालीसाए मासाणं चंदस्स अडयालीसाए संवच्छराणं सूरस्स (सूत्रं ४५३)

'रायगिहे'इत्यादि, 'मिच्छंते एवमाहसु'त्ति, इह तद्वचनमिथ्यात्वमप्रमाणकत्वात् कुप्रवचनसंस्कारोपनीतत्वाच्च, ग्रहणं हि राहुचन्द्रयोर्विमानापेक्षं, न च विमानयोर्ग्रासकग्रसनीयसम्भवोऽस्ति आश्रयमात्रत्वान्नरभवनानामिव, अथेदं गृहमनेन ग्रस्तमिति दृष्टस्तद्व्यवहारः ?, सत्यं, स खल्वाच्छाद्याच्छादकभावे सति नान्यथा, आच्छादनभावेन च ग्रासविवक्षायामिहापि न विरोध इति । अथ यदत्र सम्यक् तदर्शयितुमाह—'अहं पुणे'त्यादि ॥ 'खंजणवन्नाभे'त्ति खञ्जनं–

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [४५३]

दीप अनुक्रम [५४६]

दीपमल्लिकामलस्तस्य यो वर्णस्तद्वदाभा यस्य तत्तथा 'लाउयवन्नाभे'त्ति 'लाउयं'ति तुम्बिका तच्चेहापक्वावस्थं ग्राह्यमिति 'भासरासिवण्णाभे'त्ति भस्मराशिवर्णाभं, ततश्च किमित्याह—'जया ण'मित्यादि, 'आगच्छमाणे व'त्ति गत्वाऽतिचारेण ततः प्रतिनिवर्त्तमानः कृष्णवर्णादिना विमानेनेति शेषः 'गच्छमाणे व'त्ति स्वभावचारेण चरन्, एतेन च पदद्वयेन स्वाभाविकी गतिरुक्ता, 'विउव्वमाणे व'त्ति विकुर्वणां कुर्वन् 'परियारेमाणे व'त्ति परिचारयन् कामक्रीडां कुर्वन्, एतस्मिन् द्वयेऽतित्वरया प्रवर्त्तमानो विसंस्थुलचेष्टया स्वविमानमसमञ्जसं वलयति, एतच्च द्वयमस्वाभाविकविमानगतिग्रहणायोक्तमिति, 'चंदलेसं पुरच्छिमेणं आवरेत्ताणं'ति स्वविमानेन चन्द्रविमानावरणे चन्द्रदीप्तेरावृत्तत्वाच्चन्द्रलेश्यां पुरस्तादावृत्य 'पच्चच्छिमेणं वीइवयइ'त्ति चन्द्रापेक्षया परेण यातीत्यर्थः 'पुरच्छिमेणं चंदे उवदंसेइ पच्चच्छिमेणं राहु'त्ति राह्वपेक्षया पूर्वस्यां दिशि चन्द्र आत्मानमुपदर्शयति चन्द्रापेक्षया च पश्चिमायां राहुरात्मानमुपदर्शयतीत्यर्थः । एवंविधस्वभावतायां च राहोश्चन्द्रस्य यद्भवति तदाह—'जया ण'मित्यादि, 'आवरेमाणे' इत्यत्र द्विर्वचनं तिष्ठतीति क्रियाविशेषणत्वात् 'चंदेण राहुस्स कुच्छी भिन्न'त्ति राहोरंशस्य मध्येन चन्द्रो गत इति वाच्यं, चन्द्रेण राहोः कुक्षिर्भिन्न इति व्यपदिशन्तीति, 'पच्चोसक्कइ'त्ति 'प्रत्यवसर्प्पति' व्यावर्त्तते 'वंते'त्ति 'वान्तः' परित्यक्तः, 'सपक्खिं सपडिदिसं'ति सपक्षं–समानदिग् यथा भवति सप्रतिदिक्–समानविदिक् च यथा भवतीत्येवं चन्द्रलेश्यां 'आवृत्त्य' अवष्टभ्य तिष्ठतीत्येवं योगः, अत आवरणमात्रमेवेदं वैच्चसिकं चन्द्रस्य राहुणा ग्रसनं न तु कार्मणमिति ॥ अथ राहोर्भेदमाह—'कइविहे ण'मित्यादि, यश्चन्द्रस्य सदैव संनिहितः संचरति स ध्रुवराहुः, आह च—

॥५७६॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

राहू, राहो: नव नामानि, राहूविमान, ग्रहण

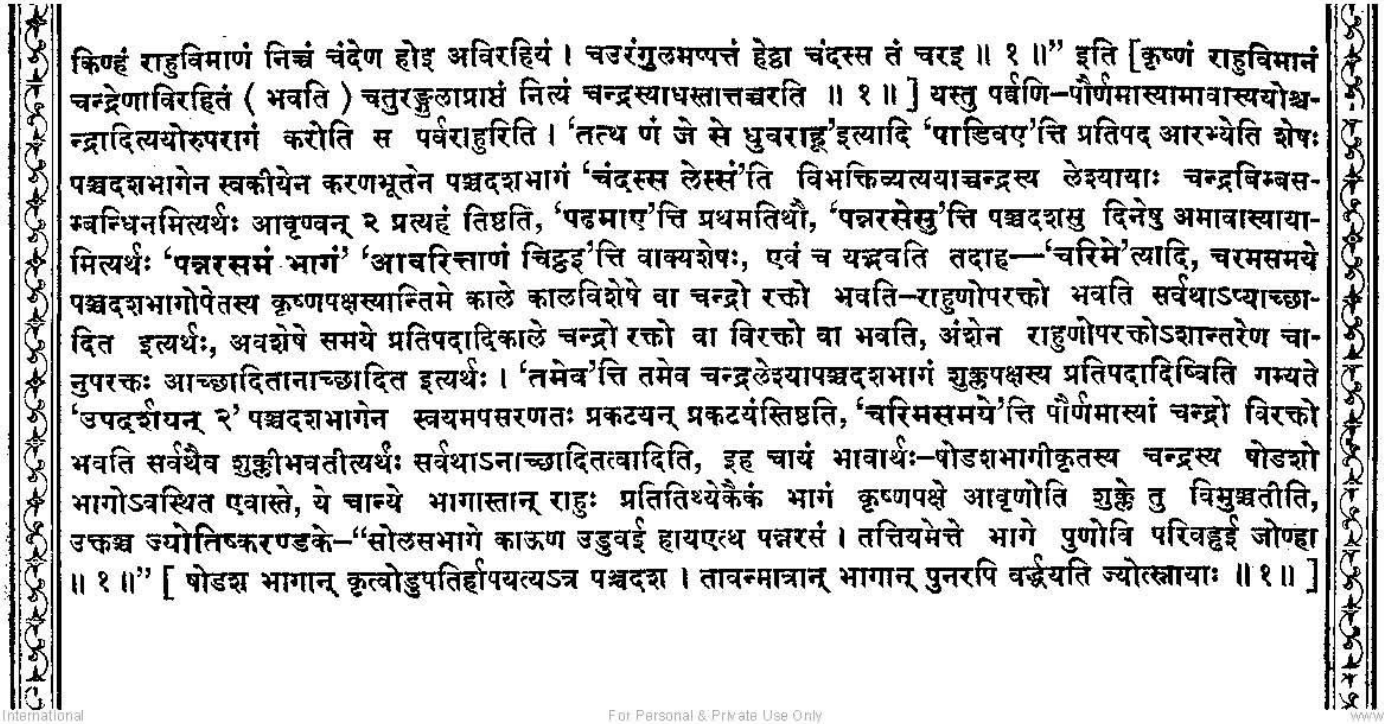

किण्हं राहुविमाणं निच्चं चंदेण होइ अविरहियं । चउरंगुलमप्पत्तं हेट्ठा चंदस्स तं चरइ ॥ १ ॥" इति [कृष्णं राहुविमानं चन्द्रेणाविरहितं (भवति) चतुरङ्गुलाप्राप्तं नित्यं चन्द्रस्याधस्ात्तच्चरति ॥ १ ॥] यस्तु पर्वणि–पौर्णमास्यामावास्ययोश्चन्द्रादित्ययोरुपरागं करोति स पर्वराहुरिति । 'तत्थ णं जे से धुवराहू'इत्यादि 'पाडिवए'त्ति प्रतिपद आरभ्येति शेषः पञ्चदशभागेन स्वकीयेन करणभूतेन पञ्चदशभागं 'चंदस्स लेस्सं'ति विभक्तिव्यत्ययाच्चन्द्रस्य लेश्यायाः चन्द्रबिम्बसम्बन्धिनमित्यर्थः आवृण्वन् २ प्रत्यहं तिष्ठति, 'पढमाए'त्ति प्रथमतिथौ, 'पन्नरसेसु'त्ति पञ्चदशसु दिनेषु अमावास्यायामित्यर्थः 'पन्नरसमं भागं' 'आवरित्ताणं चिट्ठइ'त्ति वाक्यशेषः, एवं च यद्भवति तदाह—'चरिमे'त्यादि, चरमसमये पञ्चदशभागोपेतस्य कृष्णपक्षस्यान्तिमे काले कालविशेषे वा चन्द्रो रक्तो भवति–राहुणोपरक्तो भवति सर्वथाऽप्याच्छादित इत्यर्थः, अवशेषे समये प्रतिपदादिकाले चन्द्रो रक्तो वा विरक्तो वा भवति, अंशेन राहुणोपरक्तोऽशान्तरेण चानुपरक्तः आच्छादितानाच्छादित इत्यर्थः । 'तमेव'त्ति तमेव चन्द्रलेश्यापञ्चदशभागं शुक्लपक्षस्य प्रतिपदादिष्विति गम्यते 'उपदर्शयन् २' पञ्चदशभागेन स्वयमपसरणतः प्रकटयन् प्रकटयंस्तिष्ठति, 'चरिमसमये'त्ति पौर्णमास्यां चन्द्रो विरक्तो भवति सर्वथैव शुक्लीभवतीत्यर्थः सर्वथाऽनाच्छादितत्वादिति, इह चायं भावार्थः–षोडशभागीकृतस्य चन्द्रस्य षोडशो भागोऽवस्थित एवास्ते, ये चान्ये भागास्तान् राहुः प्रतितिथ्येकैकं भागं कृष्णपक्षे आवृणोति शुक्ले तु विमुञ्चतीति, उक्तञ्च ज्योतिष्करण्डके–"सोलसभागे काऊण उडुवई हायएत्थ पन्नरसं । तत्तियमेत्ते भागे पुणोवि परिवड्ढई जोण्हा ॥ १ ॥" [षोडश भागान् कृत्वोडुपतिर्हीपयत्यत्र पञ्चदश । तावन्मात्रान् भागान् पुनरपि वर्द्धयति ज्योत्स्नायाः ॥ १ ॥]

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

राहू, राहो: नव नामानि, राहूविमान, ग्रहण

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः२

॥५७७॥

इति, इह तु षोडशभागकल्पना न कृता व्यवहारिणां षोडशभागस्यावस्थितस्यानुपलक्षणादिति सम्भावयाम इति, अनु चन्द्रविमानस्य पञ्चैकषष्टिभागन्यूनयोजनप्रमाणत्वाद् राहुविमानस्य च ग्रहविमानत्वेनार्द्धयोजनप्रमाणत्वात्कथं पञ्चदशे दिने चन्द्रविमानस्य महत्त्वेनेतरस्य च लघुत्वेन सर्वावरणं स्यात् ? इति, अत्रोच्यते, यदिदं ग्रहविमानानामर्द्धयोजन-मिति प्रमाणं तत्प्रायिकं, ततश्च राहोर्ग्रहस्योक्ताधिकप्रमाणमपि विमानं संभाव्यते, अन्ये पुनराहुः–लघीयसोऽपि राहु-विमानस्य महता तमिस्रारश्मिजालेन तदावियत इति, ननु कतिपयान् दिवसान् यावद् ध्रुवराहुविमानं वृत्तमुपलभ्यते ग्रहण इव कतिपयांश्च न तथेति किमत्र कारणम् ?, अत्रोच्यते, येषु दिवसेष्वत्यर्थं तमसाऽभिभूयते शशी तेषु तद्वि-मानं वृत्तमाभाति येषु पुनर्नाभिभूयतेऽसौ विशुद्ध्यमानत्वात् तेषु न वृत्तमाभाति, तथा चोक्तम्—"वट्टच्छेओ कइय-इदिवसे ध्रुवराहुणो विमाणस्स । दीसइ परं न दीसइ जह गहणे पवराहुस्स ॥१॥" आचार्य आह—"अत्यर्थं नहि तम-साऽभिभूयते जं ससी विसुज्झंतो । तेण न वट्टच्छेओ गहणे उ तमो तमोबहुलो ॥ १ ॥" इति । [कतिपयदिवसेषु ध्रुव-राहोर्विमानस्य वृत्तभागो दृश्यते यथा ग्रहणे पर्वराहोः कतिपयेषु च न तथा दृश्यते ॥१॥ यद्विशुद्ध्यमानः शशी तमसाऽ-त्यर्थं नैवाभिभूयतेऽतो न वृत्तभागः (उपलभ्यते) ग्रहणे तमस्तमोबहुलः पर्वराहुः ॥ २ ॥] 'तत्थ णं जे से पव्वे'त्यादि, 'बायालीसाए मासाणं' सार्द्धस्य वर्षत्रयस्योपरि चन्द्रस्य लेश्यामावृत्य तिष्ठतीति गम्यं, सूरस्याप्येवं नवरमुत्कृष्टतयाऽ-ष्टचत्वारिंशता संवत्सराणामिति ॥ अथ चन्द्रस्य 'ससि'त्ति यदभिधानं तस्यान्वर्थाभिधानायाह—

से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ–चंदे ससी २?, गोयमा ! चंदस्स णं जोइसिंदस्स जोइसरन्नो मियंके विमाणे

१२ शतके ६ उद्देशः राहुविमानं सू ४५३

॥५७७॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	राहू, राहो: नव नामानि, राहूविमान, ग्रहण

कंता देवी कंताओ देवीओ कंताइं आसणसयणखंभभंडमत्तोवगरणाइं अप्पणोवि य णं चंदे जोइसिंदे जोइसराया सोमे कंते सुभए पियदंसणे सुरूवे से तेणट्ठेणं जाव ससी ॥ (सूत्रं ४५४) से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ–सूरे आइच्चे सूरे० २ ?, गोयमा ! सूरादिया णं समयाइ वा आवलियाइ वा जाव उस्सप्पिणीइ वा अवसप्पिणीइ वा से तेणट्ठेणं जाव आइच्चे० २ ॥ (सूत्रं ४५५)

'से केण'मित्यादि, 'मियंके'त्ति मृगचिह्नत्वात् मृगाङ्के विमानेऽधिकरणभूते 'सोमे'त्ति 'सौम्यः' अरौद्राकारो नीरोगो वा 'कंते'त्ति कान्तियोगात् 'सुभए'त्ति सुभगः–सौभाग्ययुक्तत्वाद्वल्लभो जनस्य 'पियदंसणे'त्ति प्रेमकारिदर्शनः, कस्मादेवम्? अत आह–सुरूपः 'से तेण'मित्यादि अथ तेन कारणेनोच्यते 'ससी'ति सह श्रिया वर्त्तत इति सश्रीः तदीयदेवादीनां स्वस्य च कान्त्यादियुक्तत्वादिति, प्राकृतभाषापेक्षया च ससीति सिद्धम् ॥ अथादित्यशब्दस्यान्वर्थाभिधानायाह—

'से केण'मित्यादि, 'सूराईय'त्ति सूरः आदिः–प्रथमो येषां ते सूरादिकाः, के ? इत्याह—'समयाइ व'त्ति समयाः–अहोरात्रादिकालभेदानां निर्विभागा अंशाः, तथाहि–सूर्योदयमवधिं कृत्वाऽहोरात्रारम्भकः समयो गण्यते आवलिका मुहूर्त्तादयश्चेति 'से तेण'मित्यादि अथ तेनार्थेन सूर आदित्य इत्युच्यते, आदौ अहोरात्रसमयादीनां भव आदित्य इति व्युत्पत्तेः, त्यप्रत्ययश्चेहार्षत्वादिति ॥ अथ तयोरेवाग्रमहिष्यादिदर्शनायाह—

चंदस्स णं भंते ! जोइसिंदस्स जोइसरन्नो कति अग्गमहिसीओ पण्णत्ताओ जहा दसमसए जाव णो चेव णं मेहुणवत्तियं। सूरस्सवि तहेव। चंदमसूरिया णं भंते ! जोइसिंदा जोइसरायाणो केरिसए काम-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

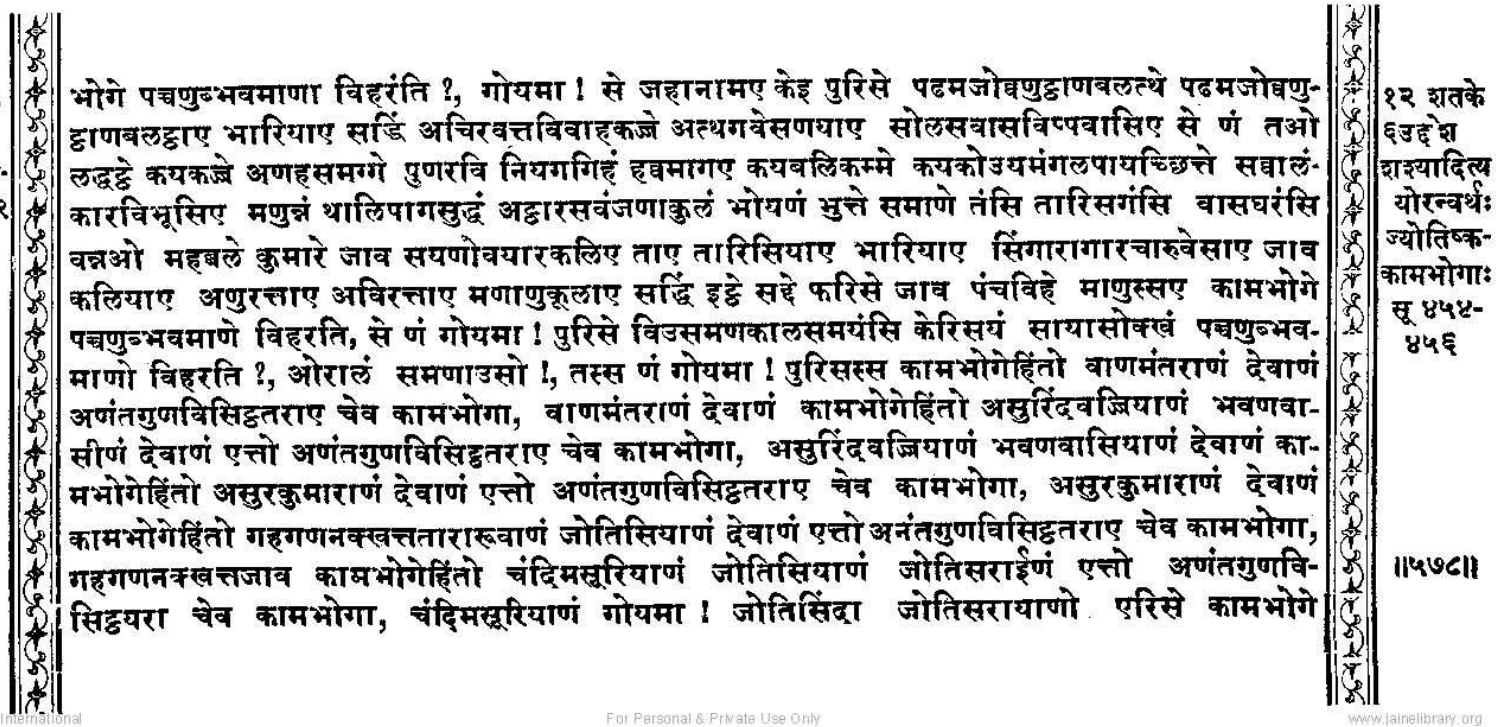

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥५७८॥

भोगे पच्चणुब्भवमाणा विहरंति ?, गोयमा ! से जहानामए केइ पुरिसे पढमजोव्वणुट्ठाणबलत्थे पढमजोव्वणुट्ठाणबलट्ठाए भारियाए सद्धिं अचिरवत्तविवाहकज्जे अत्थगवेसणयाए सोलसवासविप्पवासिए से णं तओ लद्धट्ठे कयकज्जे अणहसमग्गे पुणरवि नियगगिहं हव्वमागए कयबलिकम्मे कयकोउयमंगलपायच्छित्ते सव्वालंकारविभूसिए मणुन्नं थालिपागसुद्धं अट्ठारसवंजणाकुलं भोयणं भुत्ते समाणे तंसि तारिसगंसि वासघरंसि वन्नओ महबले कुमारे जाव सयणोवयारकलिए ताए तारिसियाए भारियाए सिंगारागारचारुवेसाए जाव कलियाए अणुरत्ताए अविरत्ताए मणाणुकूलाए सद्धिं इट्ठे सद्दे फरिसे जाव पंचविहे माणुस्सए कामभोगे पच्चणुब्भवमाणे विहरति, से णं गोयमा ! पुरिसे विउसमणकालसमयंसि केरिसयं सायासोक्खं पच्चणुब्भवमाणो विहरति ?, ओरालं समणाउसो !, तस्स णं गोयमा ! पुरिसस्स कामभोगेहिंतो वाणमंतराणं देवाणं अणंतगुणविसिट्ठतराए चेव कामभोगा, वाणमंतराणं देवाणं कामभोगेहिंतो असुरिंदवज्जियाणं भवणवासीणं देवाणं एत्तो अणंतगुणविसिट्ठतराए चेव कामभोगा, असुरिंदवज्जियाणं भवणवासियाणं देवाणं कामभोगेहिंतो असुरकुमाराणं देवाणं एत्तो अणंतगुणविसिट्ठतराए चेव कामभोगा, असुरकुमाराणं देवाणं कामभोगेहिंतो गहगणनक्खत्ततारारूवाणं जोतिसियाणं देवाणं एत्तो अनंतगुणविसिट्ठतराए चेव कामभोगा, गहगणनक्खत्तजाव कामभोगेहिंतो चंदिमसूरियाणं जोतिसियाणं जोतिसराईणं एत्तो अणंतगुणविसिट्ठयरा चेव कामभोगा, चंदिमसूरियाणं गोयमा ! जोतिसिंदा जोतिसरायाणो एरिसे कामभोगे

१२ शतके ६उद्देश शश्यादित्य योरन्वर्थः ज्योतिष्क-कामभोगाः सू ४५४-४५६

॥५७८॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

चन्द्र एवं सूर्यस्य काम-भोग:

पवणुब्भवमाणा विहरंति । सेवं भंते ! सेवं भंतेत्ति भगवं गोयमे समणं भगवं महावीरं जाव विहरइ ॥ (सूत्रं ४५६) ॥ १२–६ ॥

'चंदस्से'त्यादि, 'पढमजोवणुट्ठाणबलत्थे'त्ति 'प्रथमयौवनोत्थाने' प्रथमयौवनोद्भमे यद्बलं–प्राणस्तत्र यस्तिष्ठति स तथा 'अचिरवत्तविवाहकज्जे' अचिरवृत्तविवाहकार्यः 'वन्नओ महाबले'त्ति महाबलोद्देशके वासगृहवर्णको दृश्य इत्यर्थः 'अणुरत्ताए'त्ति अनुरागवत्या 'अविरत्ताए'त्ति विप्रियकरणेऽप्यविरक्तया 'मणाणुकूलाए'त्ति पतिमनसोऽनुकूलवृत्तिकया 'विउसमणकालसमयंसि'त्ति व्यवशमनं–पुंवेदविकारोपशमस्तस्य यः कालसमयः स तथा तत्र रतावसान इत्यर्थः, इति भगवता पृष्टो गौतम आह–'ओरालं समणाउसो'त्ति, 'तस्स णं गोयमा ! पुरिसस्स कामभोगेहिंतो' इहाग्रेतनः 'एत्तो'त्ति शब्दो योज्यते ततश्चैतेभ्य उक्तस्वरूपेभ्यो व्यन्तराणां देवानामनन्तगुणविशिष्टतया चैव कामभोगा भवन्तीति, क्वचित्तु एत्तोशब्दो नाभिधीयते एवेति द्वादशशते षष्ठः ॥ १२–६ ॥

अनन्तरोद्देशके चन्द्रादीनामतिशयसौख्यमुक्तं, ते च लोकस्यांशे भवन्तीति लोकांशे जीवस्य जन्ममरणवक्तव्यताप्ररूपणार्थः सप्तमोद्देशक उच्यते, तस्य चेदमादिसूत्रम्—

तेणं कालेणं २ जाव एवं वयासी–केमहालए णं भंते ! लोए पन्नत्ते ?, गोयमा ! महतिमहालए लोए पन्नत्ते, पुरच्छिमेणं असंखेज्जाओ जोयणकोडाकोडीओ दाहिणेणं असंखिज्जाओ एवं चेव एवं पच्चच्छिमेणवि एवं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	अत्र द्वादशमे शतके षष्ठं-उद्देशक: परिसमाप्त: अथ द्वादशमे शतके सप्तम-उद्देशक: आरभ्यते चन्द्र एवं सूर्यस्य काम-भोग:

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥५७९॥

उत्तरेणवि एवं उड्ढंपि अहे असंखेज्जाओ जोयणकोडाकोडीओ आयामविक्खंभेणं । एयंसि णं भंते ! एमहालगंसि लोगंसि अत्थि केइ परमाणुपोग्गलमेत्तेवि पएसे जत्थ णं अयं जीवे न जाए वा न मए वावि ?, गोयमा ! नो इणट्ठे समट्ठे, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुचइ एयंसि णं एमहालगंसि लोगंसि नत्थि केइ परमाणुपोग्गलमेत्तेवि पएसे जत्थ णं अयं जीवे ण जाए वा न मए वावि ?, गोयमा ! से जहानामए–केइ पुरिसे अयासयस्स एगं महं अयावयं करेज्जा, से णं तत्थ जहन्नेणं एक्को वा दो वा तिन्नि वा उक्कोसेणं अयासहस्सं पक्खिवेज्जा ताओ णं तत्थ पउरगोयराओ पउरपाणियाओ जहन्नेणं एगाहं वा बियाहं वा तियाहं वा उक्कोसेणं छम्मासे परिवसेज्जा, अत्थि णं गोयमा ! तस्स अयावयस्स केई परमाणुपोग्गलमेत्तेवि पएसे जे णं तासिं अयाणं उच्चारेण वा पासवणेण वा खेलेण वा सिंघाणएण वा वंतेण वा पित्तेण वा पूएण वा सुक्केण वा सोणिएण वा चम्मेहिं वा रोमेहिं वा सिंगेहिं वा खुरेहिं वा नहेहिं वा अणाकंतपुवे भवइ ?, भगवं ! णो तिणट्ठे समट्ठे, होज्जावि णं गोयमा ! तस्स अयावयस्स केई परमाणुपोग्गलमेत्तेवि पएसे जे णं तासिं अयाणं उच्चारेण वा जाव णहेहिं वा अणक्कंतपुवे णो चेव णं एयंसि एमहालगंसि लोगंसि लोगस्स य सासयं भावं संसारस्स य अणादिभावं जीवस्स य णिच्चभावं कम्मबहुत्तं जम्मणमरणबाहुल्लं च पडुच्च नत्थि केइ परमाणुपोग्गलमेत्तेवि पएसे जत्थ णं अयं जीवे न जाए वा न मए वावि, से तेणट्ठेणं तं चेव जाव न मए वावि ॥ (सूत्रं ४५७)

१२ शतके ७ उद्देशः महति लोके जन्ममरणाभ्यां व्यापकता सू ४५७

॥५७९॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

'तेण'मित्यादि, 'परमाणुपोग्गलमेत्तेवि'त्ति इहापिः सम्भावनायां 'अयासयस्स'त्ति षष्ठ्याश्चतुर्थ्यर्थत्वाद् अजाशताय 'अयावयं'ति अजाव्रजम् अजावाटकमित्यर्थः 'उक्कोसेणं अयासहस्सं पक्खिवेज्ज'त्ति यदिहाजाशतप्रायोग्ये वाटके उत्कर्षेणाजासहस्रप्रक्षेपणमभिहितं तत्तासामतिसङ्कीर्णतयाऽवस्थानख्यापनार्थमिति, 'पउरगोयरा ओ पउरपाणीयाओ'त्ति प्रचुरचरणभूमयः प्रचुरपानीयाश्च, अनेन च तासां प्रचुरमूत्रपुरीषसम्भवो बुभुक्षापिपासाविरहेण सुस्थतया चिरंजीवित्वं चोक्तं 'नहेहि व'त्ति नखाः–खुराग्रभागास्तैः 'नो चेव णं एयंसि एमहालयंसि लोगंसि' इत्यस्य 'अत्थि केइ पमाणुपोग्गलमेत्तेवि पएसे' इत्यादिना पूर्वोक्ताभिलापेन सम्बन्धः, महत्त्वाल्लोकस्य, कथमिदमिति चेदत आह— 'लोगस्से'त्यादि क्षयिणो ह्येवं न संभवतीत्यत उक्तं लोकस्य शाश्वतभावं प्रतीत्येति योगः, शाश्वतत्वेऽपि लोकस्य संसारस्य सादित्वे नैवं स्यादित्यनादित्वं तस्योक्तं, नानाजीवापेक्षया संसारस्यानादित्वेऽपि विवक्षितजीवस्यानित्यत्वे नोक्तोऽर्थः स्यादतो जीवस्य नित्यत्वमुक्तं, नित्यत्वेऽपि जीवस्य कर्माल्पत्वे तथाविधसंसरणाभावान्नोक्तं वस्तु स्यादतः कर्म्मबाहुल्यमुक्तं, कर्म्मबाहुल्येऽपि जन्मादेरल्पत्वे नोक्तोऽर्थः स्यादिति जन्मादिबाहुल्यमुक्तमिति ॥ एतदेव प्रपञ्चयन्नाह—

कति णं भंते ! पुढवीओ पण्णत्ताओ ?, गोयमा ! सत्त पुढवीओ पण्णत्ताओ जहा पढमसए पंचमउद्देसए तहेव आवासा ठावेयव्वा जाव अणुत्तरविमाणेत्ति जाव अपराजिए सव्वट्ठसिद्धे । अयन्नं भंते ! जीवे इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए तीसाए निरयावाससयसहस्सेसु एगमेगंसि निरयावासंसि पुढविकाइयत्ताए जाव

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

वणस्सइकाइयत्ताए नरगत्ताए नेरइयत्ताए उववन्नपुव्वे ?, हंता गोयमा ! असइं अदुवा अणंतखुत्तो, अयन्नं भंते ! जीवे सक्करप्पभाए पुढवीए पणवीसा एवं जहा रयणप्पभाए तहेव दो आलावगा भाणियव्वा, एवं जाव धूमप्पभाए । अयन्नं भंते ! जीवे तमाए पुढवीए पंचूणे निरयावाससयसहस्से एगमेगंसि सेसं तं चेव, अयन्नं भंते ! जीवे अहेसत्तमाए पुढवीए पंचसु अणुत्तरेसु महतिमहालएसु महानिरएसु एगमेगंसि निरयावासंसि सेसं जहा रयणप्पभाए, अयन्नं भंते ! जीवे चोसट्ठीए असुरकुमारावाससयसहस्सेसु एगमेगंसि असुरकुमारावासंसि पुढविकाइयत्ताए जाव वणस्सइकाइयत्ताए देवत्ताए देवीत्ताए आसणसयणभंडमत्तोवगरणत्ताए उववन्नपुव्वे ?, हंता गोयमा ! जाव अणंत खुत्तो, सव्वजीवावि णं भंते ! एवं चेव, एवं थणियकुमारेसु, नाणत्तं आवासेसु, आवासा पुव्वभणिया, अयन्नं भंते ! जीवे असंखेज्जेसु पुढविकाइयावाससयसहस्सेसु एगमेगंसि पुढविकाइयावासंसि पुढविकाइयत्ताए जाव वण० उववन्नपुव्वे ?, हंता गोयमा ! जाव अणंत खुत्तो एवं सव्वजीवावि एवं जाव वणस्सइकाइएसु, अयण्णं भंते ! जीवे असंखेज्जेसु बेंदियावाससयसहस्सेसु एगमेगंसि बेंदियावासंसि पुढविकाइयत्ताए जाव वणस्सइकाइयत्ताए बेइंदियत्ताए उववन्नपुव्वे ?, हंता गोयमा ! जाव खुत्तो, सव्वजीवावि णं एवं चेव एवं जाव मणुस्सेसु, नवरं तेंदियएसु जाव वणस्सइकाइयत्ताए तेंदियत्ताए चउरिंदिएसु चउरिंदियत्ताए पंचिंदियतिरिक्खजोणिएसु पंचिंदियतिरिक्खजोणियत्ताए मणुस्सेसु मणुस्सत्ताए सेसं जहा बेंदियाणं, वाणमंतरजोइसियसोहम्मीसाणेसु य जहा असुरकुमाराणं, अयण्णं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भंते ! जीवे सणंकुमारे कप्पे बारससु विमाणावाससयसहस्सेसु एगमेगंसि विमाणिपावासंसि पुढविका-इयत्ताए सेसं जहा असुरकुमाराणं जाव अणंतखुत्तो, नो चेव णं देवीत्ताए, एवं सव्वजीवावि, एवं जाव आणयपाणएसु, एवं आरणच्चुएसुवि, अयन्नं भंते ! जीवे तिसुवि अट्ठारसुत्तरेसु गेविज्जविमाणावाससयेसु एवं चेव, अयन्नं भंते ! जीवे पंचसु अणुत्तरविमाणेसु एगमेगंसि अणुत्तरविमाणंसि पुढवि तहेव जाव अणंत-खुत्तो नो चेव णं देवत्ताए वा देवीत्ताए वा एवं सव्वजीवावि। अयन्नं भंते ! जीवे सव्वजीवाणं माइत्ताए पियत्ताए भाइत्ताए भगिणित्ताए भज्जत्ताए पुत्तत्ताए धूयत्ताए सुण्हत्ताए उववन्नपुवे ?, हंता गोयमा ! असइं अदुवा अणंतखुत्तो, सव्वजीवावि णं भंते ! इमस्स जीवस्स माइत्ताए जाव उववन्नपुवे ?, हंता गोयमा ! जाव अणं-तखुत्तो, अयण्णं भंते ! जीवे सव्वजीवाणं अरित्ताए वेरियत्ताए घायकत्ताए वहगत्ताए पडिणीयत्ताए पच्चामि-त्तत्ताए उववन्नपुवे ?, हंता गोयमा ! जाव अणंतखुत्तो, सव्वजीवावि णं भंते ! एवं चेव, अयन्नं भंते ! जीवे सव्वजीवाणं रायत्ताए जुवरायत्ताए जाव सत्थवाहत्ताए उववन्नपुवे ?, हंता गोयमा ! असतिं जाव अणंत-खुत्तो, सव्वजीवाणं एवं चेव। अयन्नं भंते ! जीवे सव्वजीवाणं दासत्ताए पेसत्ताए भयगत्ताए भाइल्लगत्ताए भोगपुरिसत्ताए सीसत्ताए वेसत्ताए उववन्नपुवे ?, हंता गोयमा ! जाव अणंतखुत्तो, एवं सव्वजीवावि अणं-तखुत्तो। सेवं भंते ! सेवं भंतेत्ति जाव विहरइ ॥ (सूत्रं ४५८) १२–७ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [४५८]

दीप अनुक्रम [५५१]

'कइ ण'मित्यादि, '**नरगत्ताए**'त्ति नरकावासपृथिवीकायिकतयेत्यर्थः '**असइं**'ति असकृद्–अनेकशः '**अदुव**'त्ति अथवा '**अणंतखुत्तो**'त्ति अनन्तकृत्वः–अनन्तवारान् '**असंखेज्जेसु पुढविकाइयावाससयसहस्सेसु**'त्ति इहासङ्ख्यातेषु पृथिवीकायिकावासेषु एतावतैव सिद्धेर्यच्छतसहस्रग्रहणं तत्तेषामतिबहुत्वख्यापनार्थं, नवरं '**तेइंदिएसु**'इत्यादि त्रीन्द्रियादिसूत्रेषु द्वीन्द्रियसूत्रात् त्रीन्द्रियचतुरिन्द्रियेत्यादिनैव विशेष इत्यर्थः '**नो चेव णं देवीत्ताए**'त्ति ईशानान्तेष्वेव देवस्थानेषु देव्य उत्पद्यन्ते सनत्कुमारादिषु पुनर्नेतिकृत्वा '**नो चेव णं देवत्ताए देवीत्ताए व**'त्ति अनुत्तरविमानेष्वनन्तकृत्वो देवा नोत्पद्यन्ते देव्यश्च सर्वथैवेति '**नो चेव ण**'मित्याद्युक्तमिति, '**अरित्ताए**'त्ति सामान्यतः शत्रुभावेन '**वेरियत्ताए**'त्ति वैरिकः–शत्रुभावानुबन्धयुक्तस्तत्तया '**घायगत्ताए**'त्ति मारकतया '**वहगत्ताए**'त्ति व्यधकतया ताडकतयेत्यर्थः '**पडिणीयत्ताए**'त्ति प्रत्यनीकतया–कार्योपघातकतया '**पडामित्तत्ताए**'त्ति अमित्रसहायतया '**दासत्ताए**'त्ति गृहदासीपुत्रतया '**पेसत्ताए**'त्ति प्रेष्यतया–आदेश्यतया '**भयगत्ताए**'त्ति भृतकतया दुष्कालादौ पोषिततया '**भाइल्लगत्ताए**'त्ति कृष्यादिलाभस्य भागग्राहकत्वेन '**भोगपुरिसत्ताए**'त्ति अन्यैरुपार्जितार्थानां भोगकारिनरतया '**सीसत्ताए**'त्ति शिक्षणीयतया '**वेसत्ताए**'त्ति द्वेष्यतयेति ॥ द्वादशशते सप्तमः ॥ १२–७ ॥

सप्तमे जीवानामुत्पत्तिश्चिन्तिता, अष्टमेऽपि सैव भङ्ग्यन्तरेण चिन्त्यते, इत्येवंसम्बद्धस्यास्येदमादिसूत्रम्—

तेणं कालेणं तेणं समएणं जाव एवं वयासी–देवे णं भंते ! महड्ढीए जाव महेसक्खे अणंतरं चयं चइत्ता

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र द्वादशमे शतके सप्तम-उद्देशक: परिसमाप्त:

अथ द्वादशमे शतके अष्टम-उद्देशक: आरभ्यते

बिसरीरेसु नागेसु उववज्जेज्जा ?, हंता गोयमा ! उववज्जेज्जा, से णं तत्थ अचियवंदियपूइयसक्कारियसम्माणिए दिव्वे सच्चे सच्चोवाए संनिहियपाडिहेरे यावि भवेज्जा ?, हंता भवेज्जा से णं भंते ! तओहिंतो अणंतरं उव्वट्टित्ता सिज्झेज्जा बुज्झेज्जा जाव अंतं करेज्जा ?, हंता सिज्झिज्जा जाव अंतं करेज्जा, देवे णं भंते ! महड्ढीए एवं चेव जाव बिसरीरेसु मणीसु उववज्जेज्जा, एवं चेव जहा नागाणं, देवे णं भंते ! महड्ढीए जाव बिसरीरेसु रुक्खेसु उववज्जेज्जा ?, हंता उववज्जेज्जा एवं चेव, नवरं इमं नाणत्तं जाव सन्निहियपाडिहेरे लाउल्लोइयमहिते यावि भवेज्जा ?, हंता भवेज्जा सेसं तं चेव जाव अंतं करेज्जा ॥ (सूत्रं ४५९)

'तेण' मित्यादि, **'बिसरीरेसु'**त्ति द्वे शरीरे येषां ते द्विशरीरास्तेषु, ये हि नागशरीरं त्यक्त्वा मनुष्यशरीरमवाप्य सेत्स्यन्ति ते द्विशरीरा इति, **'नागेसु'**त्ति सर्पेषु हस्तिषु वा **'तत्थ'**त्ति नागजन्मनि यत्र वा क्षेत्रे जातः **'अचिए'**त्यादि, इहार्चितादिपदानां पञ्चानां कर्म्मधारयः तत्र चार्चितश्चन्दनादिना वन्दितः स्तुत्या पूजितः पुष्पादिना सत्कारितो–वस्त्रादिना सन्मानितः प्रतिपत्तिविशेषेण **'दिव्वे'**त्ति प्रधानः **'सच्चे'**त्ति स्वभावादिप्रकारेण तदुपदिष्टस्यावितथत्वात् **'सच्चोवाए'**त्ति सत्यावपातः सफलसेव इत्यर्थः, कुत एतत् ? इत्याह—**'सन्निहियपाडिहेरे'**त्ति सन्निहितं–अदूरवर्त्ति प्रातिहार्यं–पूर्वसङ्गतिकादिदेवताकृतं प्रतिहारकर्म यस्य स तथा **'मणीसु'**त्ति पृथिवीकायविकारेषु **'लाउल्लोइयमहिए'**त्ति **'लाइयं'**ति छगणादिना भूमिकायाः संमृष्टीकरणं **'उल्लोइयं'**ति सेटिकादिना कुड्यानां धवलनं एतेनैव द्वयेन महितो यः स तथा, एतच्च विशेषणं वृक्षस्य पीठापेक्षया, विशिष्टवृक्षा हि बद्धपीठा भवन्तीति ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [४६०]

दीप अनुक्रम [५५३]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥५८२॥

अह भंते ! गोलंगूलवसभे कुक्कुडवसभे मंडुक्कवसभे एए णं निस्सीला निव्वया निग्गुणा निम्मेरा निप्पच्चक्खा-णपोसहोववासा कालमासे कालं किच्चा इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए उक्कोसेणं सागरोवमट्ठितीयंसि नरगंसि नेरइयत्ताए उववज्जेज्जा ?। समणे भगवं महावीरे वागरेइ–उववज्जमाणे उववन्नेत्ति वत्तव्वं सिया। अह भंते! सीहे वग्घे जहा उस्सप्पिणीउद्देसए जाव परस्सरे एए णं निस्सीला एवं चेव जाव वत्तव्वं सिया, अह भंते ! ढंके कंके विलए मग्गुए सिखीए, एए णं निस्सीला०, सेसं तं चेव जाव वत्तव्वं सिया। सेवं भंते ! सेवं भंते! जाव विहरइ ॥ (सूत्रं ४६०) १२–८ ॥

'गोलंगूलवसभे'त्ति गोलाङ्गूलानां–वानराणां मध्ये महान् स एव वा विदग्धो विदग्धपर्यायत्वाद्वृषभशब्दस्य, एवं कुर्कुटवृषभोऽपि, एवं मण्डूकवृषभोऽपि, 'निस्सील'त्ति समाधानरहिताः 'निव्वय'त्ति अणुव्रतरहिताः 'निग्गुण'त्ति गुण-व्रतैः क्षमादिभिर्वा रहिताः 'नेरइयत्ताए उववज्जेज्जा' इति प्रश्नः, इह च 'उववज्जेज्जा' इत्येतदुत्तरं, तस्य चासम्भवमाश-ङ्क्यमानस्तत्परिहारमाह—'समणे'इत्यादि, असम्भवश्चैवं–यत्र समये गोलाङ्गूलादयो न तत्र समये नारकास्ते अतः कथं ते नारकतयोत्पद्यन्ते इति वक्तव्यं स्याद् ?, अत्रोच्यते–श्रमणो भगवान् महावीरो न तु जमाल्यादिः एवं व्याकरोति–यदुत उत्पद्यमानमुत्पन्नमिति वक्तव्यं स्यात्, क्रियाकालनिष्ठाकालयोरभेदाद्, अतस्ते गोलाङ्गूलप्रभृतयो नारकतयोत्पत्तु-कामा नारका एवेतिकृत्वा सुधूच्यते 'नेरइयत्ताए उववज्जेज्ज'त्ति, 'उस्सप्पिणिउद्देसए'त्ति सप्तमशतस्य षष्ठ इति ॥ द्वादशशतेऽष्टमः ॥ १२–८ ॥

१२ शतके ८ उद्देशः नागमण्या-दौदेवागमः द्विशरीरता च गोलाङ्-गूलादेर्नर-कः सू ४५९-४६०

॥५८२॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र द्वादशमे शतके अष्टम-उद्देशक: परिसमाप्त:

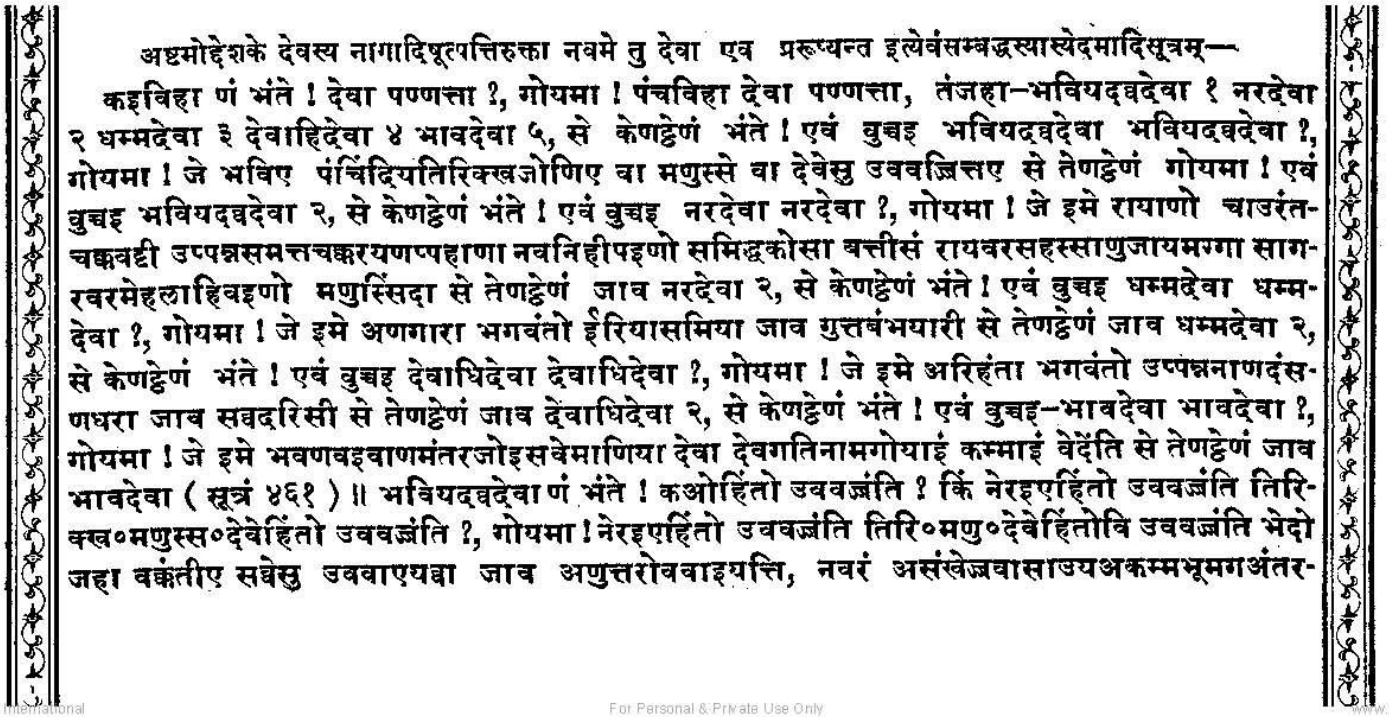

अष्टमोद्देशके देवस्य नागादिषूत्पत्तिरुक्ता नवमे तु देवा एव प्ररूप्यन्त इत्येवंसम्बद्धस्यास्येदमादिसूत्रम्—

कइविहा णं भंते ! देवा पण्णत्ता ?, गोयमा ! पंचविहा देवा पण्णत्ता, तंजहा–भवियदव्वदेवा १ नरदेवा २ धम्मदेवा ३ देवाहिदेवा ४ भावदेवा ५, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ भवियदव्वदेवा भवियदव्वदेवा ?, गोयमा ! जे भविए पंचिंदियतिरिक्खजोणिए वा मणुस्से वा देवेसु उववज्जित्तए से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ भवियदव्वदेवा २, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ नरदेवा नरदेवा ?, गोयमा ! जे इमे रायाणो चाउरंतचक्कवट्टी उप्पन्नसमत्तचक्करयणप्पहाणा नवनिहीपइणो समिद्धकोसा बत्तीसं रायवरसहस्साणुजायमग्गा सागरवरमेहलाहिवइणो मणुस्सिंदा से तेणट्ठेणं जाव नरदेवा २, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ धम्मदेवा धम्मदेवा ?, गोयमा ! जे इमे अणगारा भगवंतो ईरियासमिया जाव गुत्तबंभयारी से तेणट्ठेणं जाव धम्मदेवा २, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ देवाधिदेवा देवाधिदेवा ?, गोयमा ! जे इमे अरिहंता भगवंतो उप्पन्ननाणदंसणधरा जाव सव्वदरिसी से तेणट्ठेणं जाव देवाधिदेवा २, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ–भावदेवा भावदेवा ?, गोयमा ! जे इमे भवणवइवाणमंतरजोइसवेमाणिया देवा देवगतिनामगोयाइं कम्माइं वेदेंति से तेणट्ठेणं जाव भावदेवा (सूत्रं ४६१) ॥ भवियदव्वदेवा णं भंते ! कओहिंतो उववज्जंति ? किं नेरइएहिंतो उववज्जंति तिरिक्ख०मणुस्स०देवेहिंतो उववज्जंति ?, गोयमा ! नेरइएहिंतो उववज्जंति तिरि०मणु०देवेहिंतोवि उववज्जंति भेदो जहा वक्कंतीए सव्वेसु उववाएयव्वा जाव अणुत्तरोववाइयत्ति, नवरं असंखेज्जवासाउयअकम्मभूमगअंतर-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अथ द्वादशमे शतके नवम-उद्देशक: आरभ्यते

'देव' शब्दस्य अर्थ एवं तस्य भेद-प्रभेदा:

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [४६१--४६६]

दीप अनुक्रम [५५४--५५९]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः२

॥५८३॥

दीवगसवट्ठसिद्धवज्जं जाव अपराजियदेवेहिंतोवि उववज्जंति, णो सवट्ठसिद्धदेवेहिंतो उववज्जंति। नरदेवा णं भंते ! कओहिंतो उववज्जंति ? किं नेरतिए० ? पुच्छा, गोयमा ! नेरतिएहिंतोवि उववज्जंति नो तिरि० नो मणु० देवेहिंतोवि उववज्जंति, जइ नेरइएहिंतो उववज्जंति किं रयणप्पभापुढविनेरइएहिंतो उववज्जंति जाव अहे सत्तमापुढविनेरइएहिंतो उववज्जंति ?, गोयमा ! रयणप्पभापुढविनेरइएहिंतो उववज्जंति नो सक्करजाव नो अहेसत्तमापुढविनेरइएहिंतो उववज्जंति, जइ देवेहिंतो उववज्जंति किं भवणवासिदेवेहिंतो उववज्जंति वाणमंतर० जोइसिय० वेमाणियदेवेहिंतो उववज्जंति ?, गोयमा ! भवणवासिदेवेहिंतोवि उववज्जंति वाणमंतर एवं सवदेवेसु उववाएयवा वक्कंतीभेदेणं जाव सवट्ठसिद्धत्ति, धम्मदेवा णं भंते ! कओहिंतो उववज्जंति किं नेरइए० ? एवं वक्कंतीभेदेणं सवेसु उववाएयवा जाव सवट्ठसिद्धत्ति, नवरं तमा अहेसत्तमाए नो उववाओ असंखिज्जवासाउयअकम्मभूमगअंतरदीवगवज्जेसु, देवाधिदेवाणं भंते ! कतोहिंतो उवउज्जंति किं नेरइएहिंतो उववज्जंति ? पुच्छा, गोयमा ! नेरइएहिंतो उववज्जंति नो तिरि० नो मणु० देवेहिंतोवि उववज्जंति, जइ नेरइएहिंतो एवं तिसु पुढवीसु उववज्जंति सेसाओ खोडेयवाओ, जइ देवेहिंतो०, वेमाणिएसु सवेसु उववज्जंति जाव सवट्ठसिद्धत्ति, सेसा खोडेयवा, भावदेवा णं भंते ! कओहिंतो उववज्जंति ?, एवं जहा वक्कंतीए भवणवासीणं उववाओ तहा भाणियवो ॥ (सूत्रं ४६२) भवियदवदेवाणं भंते ! केवतियं कालं ठिती पण्णत्ता ?, गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं तिन्नि पलिओवमाइं, नरदेवाणं पुच्छा-

१२ शतके ९ उद्देशः भव्यद्रव्य-देवादीनां स्वरूपमा-गतिश्च सू ४६१-४६२

॥५८३॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

'देव' शब्दस्य अर्थ एवं तस्य भेद-प्रभेदा:

प्रत सूत्रांक [४६१--४६६] दीप अनुक्रम [५५४--५५९]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति: 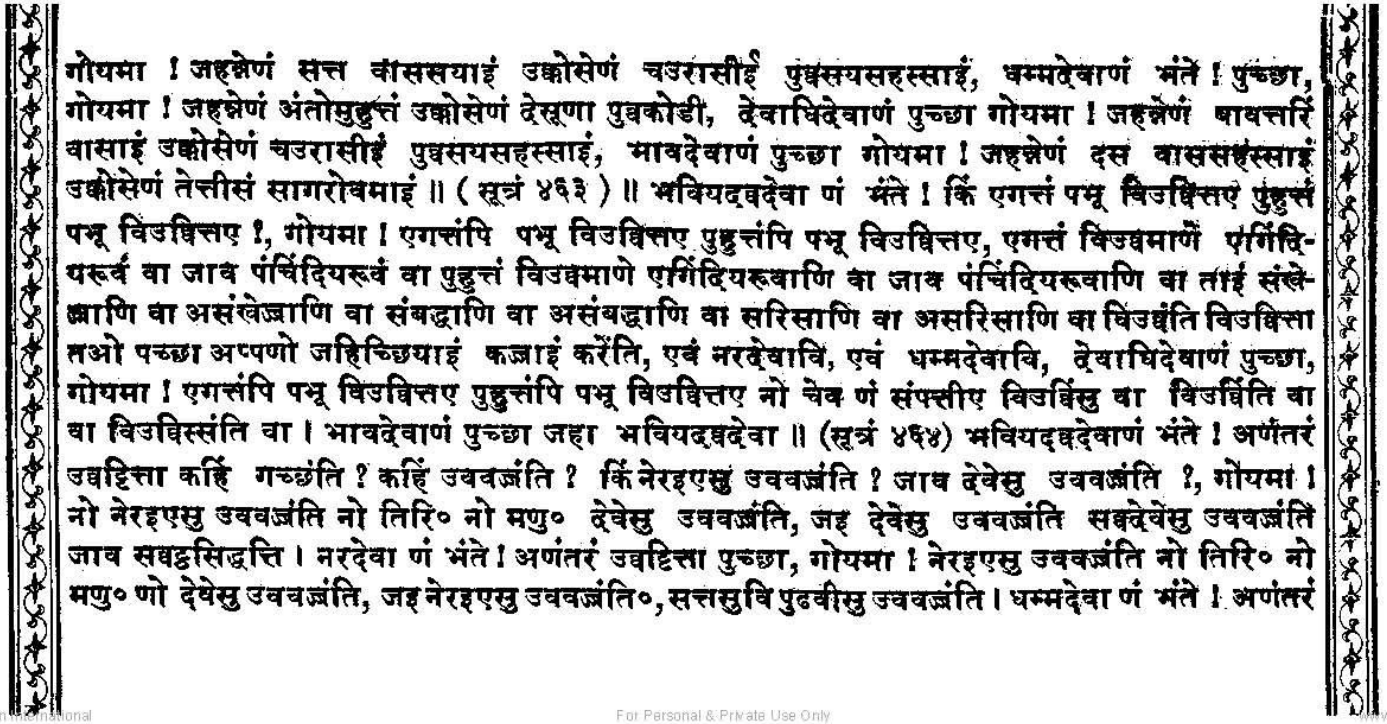 गोयमा ! जहन्नेणं सत्त वाससयाइं उक्कोसेणं चउरासीइं पुव्वसयसहस्साइं, धम्मदेवाणं भंते ! पुच्छा, गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं देसूणा पुव्वकोडी, देवाधिदेवाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं बावत्तरिं वासाइं उक्कोसेणं चउरासीइं पुव्वसयसहस्साइं, भावदेवाणं पुच्छा गोयमा ! जहन्नेणं दस वाससहस्साइं उक्कोसेणं तेत्तीसं सागरोवमाइं ॥ (सूत्रं ४६३) ॥ भवियदव्वदेवा णं भंते ! किं एगत्तं पभू विउवित्तए पुहुत्तं पभू विउवित्तए ?, गोयमा ! एगत्तंपि पभू विउवित्तए पुहुत्तंपि पभू विउवित्तए, एगत्तं विउव्वमाणे एगिंदियरूवं वा जाव पंचिंदियरूवं वा पुहुत्तं विउव्वमाणे एगिंदियरूवाणि वा जाव पंचिंदियरूवाणि वा ताई संखेज्जाणि वा असंखेज्जाणि वा संबद्धाणि वा असंबद्धाणि वा सरिसाणि वा असरिसाणि वा विउव्वंति विउवित्ता तओ पच्छा अप्पणो जहिच्छियाइं कज्जाइं करेंति, एवं नरदेवावि, एवं धम्मदेवावि, देवाधिदेवाणं पुच्छा, गोयमा ! एगत्तंपि पभू विउवित्तए पुहुत्तंपि पभू विउवित्तए नो चेव णं संपत्तीए विउविंसु वा विउव्वंति वा विउविस्संति वा । भावदेवाणं पुच्छा जहा भवियदव्वदेवा ॥ (सूत्रं ४६४) भवियदव्वदेवाणं भंते ! अणंतरं उव्वट्टित्ता कहिं गच्छंति ? कहिं उववज्जंति ? किं नेरइएसु उववज्जंति ? जाव देवेसु उववज्जंति ?, गोयमा ! नो नेरइएसु उववज्जंति नो तिरि० नो मणु० देवेसु उववज्जंति, जइ देवेसु उववज्जंति सव्वदेवेसु उववज्जंति जाव सव्वट्ठसिद्धत्ति । नरदेवा णं भंते ! अणंतरं उव्वट्टित्ता पुच्छा, गोयमा ! नेरइएसु उववज्जंति नो तिरि० नो मणु० णो देवेसु उववज्जंति, जइ नेरइएसु उववज्जंति०, सत्तसुवि पुढवीसु उववज्जंति । धम्मदेवा णं भंते ! अणंतरं Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org
	'देव' शब्दस्य अर्थ एवं तस्य भेद-प्रभेदा:

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [४६१--४६६]

दीप अनुक्रम [५५४--५५९]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥५८४॥

पुच्छा, गोयमा ! नो नेरइएसु उववज्जेज्जा नो तिरि० नो मणु० देवेसु उववज्जंति, जइ देवेसु उववज्जंति किं भवणवासि पुच्छा, गोयमा ! नो भवणवासिदेवेसु उववज्जंति नो वाणमंतर० नो जोइसिय० वेमाणियदेवेसु उववज्जंति, सवेसु वेमाणिएसु उववज्जंति जाव सवट्ठसिद्धअणुत्तरोववाइएसु जाव उववज्जंति, अत्थेगइया सिज्झंति जाव अंतं करेंति । देवाधिदेवा अणंतरं उवट्टित्ता कहिं गच्छंति कहिं उववज्जंति ?, गोयमा ! सिज्झंति जाव अंतं करेंति । भावदेवा णं भंते ! अणंतरं उवट्टित्ता पुच्छा जहा वक्कंतीए असुरकुमाराणं उवट्टणा तहा भाणियवा ॥ भवियदवदेवे णं भंते ! भवियदवदेवेत्ति कालओ केवचिरं होइ ?, गोयमा ! जह-न्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं तिन्नि पलिओवमाइं, एवं जहेव ठिई सचेव संचिट्ठणावि जाव भावदेवस्स, नवरं धम्मदेवस्स जह० एक्कं समयं उक्कोसेणं देसूणा पुवकोडी ॥ भवियदवदेवस्स णं भंते ! केवतियं कालं अंतरं होइ?,गोयमा ! जह० दसवाससहस्साइं अंतोमुहुत्तमब्भहियाइं उक्कोसेणं अणंतं कालं वणस्सइकालो। नरदेवाणं पुच्छा, गोयमा ! जहन्नेणं सातिरेगं सागरोवमं उक्कोसेणं अणंतं कालं अवड्ढं पोग्गलपरियट्टं देसूणं । धम्म-देवस्स णं पुच्छा, गोयमा ! जहन्नेणं पलिओवमपुहुत्तं उक्कोसेणं अणंतं कालं जाव अवड्ढं पोग्गलपरियट्टं देसूणं । देवाधिदेवाणं पुच्छा, गोयमा ! नत्थि अंतरं । भावदेवस्स णं पुच्छा, गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं अणंतं कालं वणस्सइकालो ॥ एएसि णं भंते ! भवियदवदेवाणं नरदेवाणं जाव भावदेवाण य कयरे २ जाव विसेसाहिया वा ?, गोयमा ! सवत्थोवा नरदेवा देवाधिदेवा संखेज्जगुणा धम्मदेवा संखेज्जगुणा

१२ शतके ९ उद्देशः भव्यद्रव्य-देवादिस्थि-तिवैक्रियो द्वर्त्तनान्त-राल्पबहु-त्वानि सू ४६३-४६५

॥५८४॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

'देव' शब्दस्य अर्थ एवं तस्य भेद-प्रभेदा:

भवियदव्वदेवा असंखेज्जगुणा भावदेवा असंखेज्जगुणा ॥ (सूत्रं ४६५) ॥ एएसि णं भंते ! भावदेवाणं भवणवासीणं वाणमंतराणं जोइसियाणं वेमाणियाणं सोहम्मगाणं जाव अच्चुयगाणं गेवेज्जगाणं अणुत्तरोववाइयाण य कयरे २ जाव विसेसाहिया वा ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा अणुत्तरोववाइया भावदेवा उवरिमगेवेज्जा भावदेवा संखेज्जगुणा मज्झिमगेवेज्जा संखेज्जगुणा हेट्ठिमगेवेज्जा संखेज्जगुणा अच्चुए कप्पे देवा संखेज्जगुणा जाव आणयकप्पे देवा संखेज्जगुणा एवं जहा जीवाभिगमे तिविहे देवपुरिसे अप्पाबहुयं जाव जोतिसिया भावदेवा असंखेज्जगुणा । सेवं भंते ! २ ॥ (सूत्रं ४६६) ॥ बारसमसयस्स नवमो ॥ १२–९ ॥

'कइविहा ण'मित्यादि, दीव्यन्ति–क्रीडां कुर्वन्ति दीव्यन्ते वा–स्तूयन्ते वाऽऽराध्यतयेति देवाः 'भवियदव्वदेव'त्ति द्रव्यभूता देवा द्रव्यदेवाः, द्रव्यता चाप्राधान्याद्भूतभावित्वाद्भाविभावत्वाद्वा, तत्राप्राधान्यादेवगुणशून्या देवा द्रव्यदेवा यथा साध्वाभासा द्रव्यसाधवः, भूतभावपक्षे तु भूतस्य देवत्वपर्यायस्य प्रतिपन्नकारणा भावदेवत्वाच्युता द्रव्यदेवाः, भाविभावपक्षे तु भाविनो देवत्वपर्यायस्य योग्या देवतयोत्पत्स्यमाना द्रव्यदेवाः, तत्र भाविभावपक्षपरिग्रहार्थमाह–भव्याश्च ते द्रव्यदेवाश्चेति भव्यद्रव्यदेवाः, 'नरदेव'त्ति नराणां मध्ये देवा–आराध्याः क्रीडाकान्त्यादियुक्ता वा नराश्च ते देवाश्चेति वा नरदेवाः, 'धम्मदेव'त्ति धर्मेण–श्रुतादिना देवा धर्म्मप्रधाना वा देवा धर्मदेवाः, 'देवाइदेव'त्ति देवान् शेषानतिक्रान्ताः पारमार्थिकदेवत्वयोगादेवा देवातिदेवाः, 'देवाहिदेव'त्ति क्वचिद्दृश्यते तत्र च देवानामधिकाः पारमार्थिकदेवत्वयोगाद् देवा देवाधिदेवाः, 'भावदेव'त्ति भावेन–देवगत्यादिकर्मोदयजातपर्यायेण देवा भावदेवाः । 'जे

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

'देव' शब्दस्य अर्थ एवं तस्य भेद-प्रभेदा:

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [४६१--४६६]

दीप अनुक्रम [५५४--५५९]

भविए' इत्यादि, इह जातौ एकवचनमतो बहुवचनार्थं व्याख्येयं, ततश्च ये भव्याः–योग्याः पञ्चेन्द्रियतिर्यग्यौनिका वा मनुष्या वा देवेषूत्पत्तुं ते यस्माद्भाविदेवभावा इति गम्यं अथ 'तेनार्थेन' तेन कारणेन हे गौतम ! तान् प्रत्येवमुच्यते–भव्यद्रव्यदेवा इति । 'जे इमे' इत्यादि, 'चाउरंतचक्कवट्टि'त्ति चतुरन्ताया भरतादिपृथिव्या एते स्वामिन इति चातुरन्ताः चक्रेण वर्त्तनशीलत्वाच्चक्रवर्त्तिनस्ततः कर्म्मधारयः, चतुरन्तग्रहणेन च वासुदेवादीनां व्युदासः, ते यस्मादिति वाक्यशेषः 'उप्पन्नसमत्तचक्करयणप्पहाण'त्ति आर्षत्वान्निर्देशस्योत्पन्नं समस्तरत्नप्रधानं चक्रं येषां ते तथा 'सागरवरमेहलाहिवइणो'त्ति सागर एव वरा मेखला–काञ्ची यस्याः सा सागरवरमेखला–पृथ्वी तस्या अधिपतयो ये ते तथा, सागरमेखलान्तपृथिव्यधिपतय इति भावः, 'से तेणट्ठेणं'ति अथ 'तेनार्थेन' तेन कारणेन गौतम ! तान् प्रत्येवमुच्यते–नरदेवा इति । 'जे इमे' इत्यादि, ये इमेऽनगारा भगवन्तस्ते यस्मादिति वाक्यशेषः ईर्यासमिता इत्यादि 'से तेणट्ठेणं'-ति अथ तेनार्थेन गौतम ! तान् प्रत्येवमुच्यते धर्मदेवा इति । 'जे इमे' इत्यादि, ये इमेऽर्हन्तो भगवन्तस्ते यस्मादुत्पन्न-ज्ञानदर्शनधरा इत्यादि 'से तेणट्ठेणं'ति अथ तेनार्थेन तान् प्रति गौतम एवमुच्यते–देवातिदेवा इति। 'जे इमे'इत्यादि, ये इमे भवनपतयस्ते यस्माद्देवगतिनामगोत्रे कर्मणी वेदयन्ति अनेनार्थेन तान् प्रत्येवमुच्यते–भावदेवा इति । एवं देवान् प्ररूप्य तेषामेवोत्पादं प्ररूपयन्नाह–'भवियदव्वदेवा णं भंते !' इत्यादि,'भेदो'त्ति 'जइ नेरइएहिंतो उववज्जंति किं रयणप्पभापुढविनेरइएहिंतो' इत्यादि भेदो वाच्यः, 'जहा वक्कंतीए'त्ति यथा प्रज्ञापनाषष्ठपदे, नवरमित्यादि, 'असंखेज्जवासाउय'त्ति असङ्ख्यातवर्षायुष्काः कर्म्मभूमिजाः पञ्चेन्द्रियतिर्यग्मनुष्या असङ्ख्यातवर्षायुष्कमकर्म्मभूमिजादीनां

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

'देव' शब्दस्य अर्थ एवं तस्य भेद-प्रभेदा:

साक्षादेव गृहीतत्वात् एतेभ्यश्चोद्वृत्ता भव्यद्रव्यदेवा न भवन्ति, भावदेवेष्वेव तेषामुत्पादात्, सर्वार्थसिद्धिकास्तु भव्यद्रव्यसिद्धा एव भवन्तीत्यत एतेभ्योऽन्ये सर्वे भव्यद्रव्यदेवतयोत्पादनीया इति, धर्म्मदेवसूत्रे 'नवर'मित्यादि, 'तम'त्ति षष्ठपृथिवीं तत उद्वृत्तानां चारित्रं नास्ति, तथाऽधःसप्तम्यास्तेजसो वायोरसङ्ख्येयवर्षायुष्ककर्मभूमिजेभ्योऽकर्मभूमिजेभ्योऽन्तरद्वीपजेभ्यश्चोद्वृत्तानां मानुषत्वाभावान्न चारित्रं, ततश्च न धर्म्मदेवत्वमिति । देवाधिदेवसूत्रे 'तिसु पुढवीसु उववज्जंति'त्ति तिसृभ्यः पृथिवीभ्य उद्वृत्ता देवातिदेवा उत्पद्यन्ते 'सेसाओ खोडेयव्वाओ'त्ति शेषाः पृथिव्यो निषेधयितव्या इत्यर्थः ताभ्य उद्वृत्तानां देवातिदेवत्वस्याभावादिति । 'भावदेवा ण'मित्यादि, इह च बहुतरस्थानेभ्य उद्वृत्ता भवनवासितयोत्पद्यन्ते असङ्ख्येनामपि तेषूत्पादाद् अत उक्तं 'जहा वक्कंतीए भवणवासीणं उववाओ'इत्यादि ॥ अथ तेषामेव स्थितिं प्ररूपयन्नाह—'भवियदव्वदेवाण'मित्यादि, 'जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं'ति अन्तर्मुहूर्त्तायुषः पञ्चेन्द्रियतिरश्चो देवेषूत्पादाद्भव्यद्रव्यदेवस्य जघन्याऽन्तर्मुहूर्त्तस्थितिः, 'उक्कोसेणं तिन्नि पलिओवमाइं'ति उत्तरकुर्वादिमनुजादीनां देवेष्वेवोत्पादात् ते च भव्यद्रव्यदेवाः तेषां चोत्कर्षतो यथोक्ता स्थितिरिति । 'सत्त वाससयाइं'ति यथा ब्रह्मदत्तस्य 'चउरासीपुव्वसयसहस्साइं'ति यथा भरतस्य । धर्मदेवानां 'जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं'ति योऽन्तर्मुहूर्त्तावशेषायुश्चारित्रं प्रतिपद्यते तदपेक्षमिदं, 'उक्कोसेणं देसूणा पुव्वकोडी'ति तु यो देशोनपूर्वकोट्यायुश्चारित्रं प्रतिपद्यते तदपेक्षमिति, ऊनता च पूर्वकोट्या अष्टाभिर्वर्षैः अष्टवर्षस्यैव प्रव्रज्यार्हत्वात्, यच्च षड्वर्षस्त्रिवर्षो वा प्रव्रजितोऽतिमुक्तको वैरस्वामी वा तत्कादाचित्कमिति न सूत्रावतारीति । देवातिदेवानां 'जहन्नेणं बावत्तरिं वासाइं'ति श्रीमन्महावीरस्येव 'उक्कोसेणं चउरा-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

'देव' शब्दस्य अर्थ एवं तस्य भेद-प्रभेदा:

सीइ पुव्वसयसहस्साइं'ति ऋषभस्वामिनो यथा । भावदेवानां 'जहन्नेणं दस वाससहस्साइं'ति यथा व्यन्तराणां 'उक्कोसेणं तेत्तीसं सागरोवमाइं'ति यथा सर्वार्थसिद्धदेवानां ॥ अथ तेषामेव विकुर्वणां प्ररूपयन्नाह—'भवियदव्वदेवा ण'मित्यादि 'एगत्तं पभू विउव्वित्तए'त्ति भव्यद्रव्यदेवो मनुष्यः पञ्चेन्द्रियतिर्यग्वा वैक्रियलब्धिसम्पन्नः 'एकत्वम्' एकरूपं 'प्रभुः' समर्थो विकुर्वयितुं 'पुहुत्तं'ति नानारूपाणि, देवातिदेवास्तु सर्वथा औत्सुक्यवर्जितत्वान्न विकुर्वते शक्तिसद्भावेऽपीत्यत उच्यते—'नो चेव ण'मित्यादि, 'संपत्तीए'त्ति वैक्रियरूपसम्पादनेन, विकुर्वणशक्तिस्तु विद्यते, तल्लब्धिमात्रस्य विद्यमानत्वात् ॥ अथ तेषामेवोद्वर्त्तनां प्ररूपयन्नाह—'भवियदव्वे'त्यादि, इह च भविकद्रव्यदेवानां भाविदेवभवस्वभावत्वान्नारकादिभवत्रयनिषेधः । नरदेवसूत्रे तु 'नेरइएसु उववज्जंति'त्ति अत्यक्तकामभोगा नरदेवा नैरयिकेषूत्पद्यन्ते शेषत्रये तु तन्निषेधः, तत्र च यद्यपि केचिच्चक्रवर्त्तिनो देवेषूत्पद्यन्ते तथाऽपि ते नरदेवत्वत्यागेन धर्म्मदेवत्वप्राप्ताविति न दोषः, 'जहा वक्कंतीए असुरकुमाराणं उव्वट्टणा तहा भाणियव्व'त्ति असुरकुमारा बहुषु जीवस्थानेषु गच्छन्तीतिकृत्वा तैरतिदेशः कृतः, असुरादयो हीशानान्ताः पृथिव्यादिष्वपि गच्छन्तीति ॥ अथ तेषामेवानुबन्धं प्ररूपयन्नाह—'भवियदव्वदेवे ण'मित्यादि, 'भवियदव्वदेवेइ'त्ति भव्यद्रव्यदेव इत्यमुं पर्यायमत्यजन्नित्यर्थः 'जहन्नेणमंतोमुहुत्त'मित्यादि पूर्ववदिति । 'एवं जहेव ठिई सचेव संचिट्ठणावि'त्ति 'एवम्' अनेन न्यायेन यैव 'स्थितिः' भवस्थितिः प्राग् वर्णिता सैवैषां संस्थितिरपि तत्पर्यायानुबन्धोऽपीत्यर्थः, विशेषं त्वाह—'नवर'मित्यादि, धर्मदेवस्य जघन्येनैकं समयं स्थितिः अशुभभावं गत्वा ततो निवृत्तस्य शुभभावप्रतिपत्तिसमयानन्तरमेव मरणादिति ॥ अथै-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

'देव' शब्दस्य अर्थ एवं तस्य भेद-प्रभेदा:

तेषामेवान्तरं प्ररूपयन्नाह—'भवियदव्वदेवस्स णं भंते !' इत्यादि, 'जहन्नेणं दसवाससहस्साइं अंतोमुहुत्तमब्भहियाइं'ति भव्यद्रव्यदेवस्यान्तरं जघन्येन दशवर्षसहस्राण्यन्तर्मुहूर्त्ताभ्यधिकानि, कथं ?, भव्यद्रव्यदेवो भूत्वा दशवर्षसहस्रस्थितिषु व्यन्तरादिषूत्पद्य च्युत्वा शुभपृथिव्यादौ गत्वाऽन्तर्मुहूर्त्तं स्थित्वा पुनर्भव्यद्रव्यदेव एवोपजायत इत्येवं, एतच्च टीकामुपजीव्य व्याख्यातं, इह कश्चिदाह—ननु देवत्वाच्च्युतस्यानन्तरमेव भव्यद्रव्यदेवतयोत्पत्तिसम्भवाद्दशवर्षसहस्राण्येव जघन्यतस्तस्यान्तरं भवत्यतः कथमन्तर्मुहूर्त्ताभ्यधिकानि तान्युक्तानि इति, अत्रोच्यते—सर्वजघन्यायुर्देवश्च्युतः सन् शुभपृथिव्यादिषूत्पद्य भव्यद्रव्यदेवेषूत्पद्यत इति टीकाकारमतमवसीयते, तथा च यथोक्तमन्तरं भवतीति, अन्ये पुनराहुः—इह बद्धायुरेव भव्यद्रव्यदेवोऽभिप्रेतस्तेन जघन्यस्थितिकादेवत्वाच्च्युत्वाऽन्तर्मुहूर्त्तस्थितिकभव्यद्रव्यदेवत्वेनोत्पन्नस्यान्तर्मुहूर्त्तोपरि देवायुषो बन्धनाद् यथोक्तमन्तरं भवतीति, अथवा भव्यद्रव्यदेवस्य जन्ममनोर्मरणयोर्वाऽन्तरस्य ग्रहणाद् यथोक्तमन्तरमिति। 'नरदेवाण'मित्यादि, 'जहन्नेणं साइरेगं सागरोवमं'ति, कथम् ?, अपरित्यक्तसङ्गाश्चक्रवर्त्तिनो नरकपृथिवीषूत्पद्यन्ते, तासु च यथास्वमुत्कृष्टस्थितयो भवन्ति, ततश्च नरदेवो मृतः प्रथमपृथिव्यामुत्पन्नस्तत्र चोत्कृष्टां स्थितिं सागरोपमप्रमाणामनुभूय नरदेवो जातः, इत्येवं सागरोपमं, सातिरेकत्वं च नरदेवभवे चक्ररत्नोत्पत्तेरर्वाचीनकालेन द्रष्टव्यं, उत्कृष्टतस्तु देशोनं पुद्गलपरावर्त्तार्द्धं, कथं ?, चक्रवर्त्तित्वं हि सम्यग्दृष्टय एव निर्वर्त्तयन्ति, तेषां च देशोनापार्द्धपुद्गलपरावर्त्त एव संसारो भवति, तदन्त्यभवे च कश्चिन्नरदेवत्वं लभत इत्येवमिति। 'धम्मदेवस्स ण'-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

'देव' शब्दस्य अर्थ एवं तस्य भेद-प्रभेदा:

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [४६१--४६६]

दीप अनुक्रम [५५४--५५९]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥५८७॥

मित्यादि, 'जहन्नेणं पलिओवमपुहत्तं'ति, कथं ?, चारित्रवान् कश्चित् सौधर्मे पल्योपमपृथक्त्वायुष्केषूत्पद्य ततश्च्युतो धर्म्मदेवत्वं लभत इत्येवमिति, यच्च मनुजत्वे उत्पन्नश्चारित्रं विनाऽऽस्ते तदधिकमपि सत् पल्योपमपृथक्त्वेऽन्तर्भावितमिति । 'भावदेवस्स ण'मित्यादि, 'जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं'ति, कथं ?, भावदेवश्च्युतोऽन्तर्मुहूर्त्तमन्यत्र स्थित्वा पुनरपि भावदेवो जात इत्येयं जघन्येनान्तर्मुहूर्त्तमन्तरमिति ॥ अथैतेषामेवाल्पबहुत्वं प्ररूपयन्नाह—'एएसि ण'मित्यादि, 'सव्वत्थोवा नरदेव'त्ति भरतैरवतेषु प्रत्येकं द्वादशानामेव तेषामुत्पत्तेर्विजयेषु च वासुदेवसम्भवात् सर्वेष्वेकदाऽनुत्पत्तेरिति । 'देवाहिदेवा संखेज्जगुण'त्ति भरतादिषु प्रत्येकं तेषां चक्रवर्त्तिभ्यो द्विगुणतयोत्पत्तेर्विजयेषु च वासुदेवोपेतेष्वप्युत्पत्तेरिति । 'धम्मदेवा संखेज्जगुण'त्ति साधूनामेकदाऽपि कोटीसहस्रपृथक्त्वसद्भावादिति, 'भविअदव्वदेवा असंखेज्जगुण'त्ति देशविरतादीनां देवगतिगामिनामसङ्ख्यातत्वात्, 'भावदेवा असंखेज्जगुण'त्ति स्वरूपेणैव तेषामतिबहुत्वादिति ॥ अथ भावदेवविशेषाणां भवनपत्यादीनामल्पबहुत्वप्ररूपणायाह—'एएसि ण'मित्यादि, 'जहा जीवाभिगमे तिविहे'इत्यादि, इह च 'तिविहे'त्ति त्रिविधजीवाधिकार इत्यर्थः देवपुरुषाणामल्पबहुत्वमुक्तं तथेहापि वाच्यं, तच्चैवं—'सहस्सारे कप्पे देवा असंखेज्जगुणा महासुक्के असंखेज्जगुणा लंतए असंखेज्जगुणा बंभलोए देवा असंखेज्जगुणा माहिंदे देवा असंखेज्जगुणा सणंकुमारे कप्पे देवा असंखेज्जगुणा ईसाणे देवा असंखेज्जगुणा सोहम्मे देवा संखेज्जगुणा भवणवासिदेवा असंखेज्जगुणा वाणमंतरा देवा असंखेज्जगुण'त्ति ॥ द्वादशशते नवमः ॥ १२–९ ॥

१२ शतके ९ उद्देशः भव्यद्रव्यदेवाद्याः भावदेवाल्पबहुत्वं सू ४६६

॥५८७॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र द्वादशमे शतके नवम-उद्देशक: परिसमाप्त:

'देव' शब्दस्य अर्थ एवं तस्य भेद-प्रभेदा:

प्रत सूत्रांक [४६७--४६८]

दीप अनुक्रम [५६०--५६१]

नवमोद्देशके देवा उक्तास्ते चात्मन इत्यात्मस्वरूपस्य भेदतो निरूपणाय दशमोद्देशकमाह, तस्य चेदमादिसूत्रम्—

कइविहा णं भंते ! आया पण्णत्ता ?, गोयमा ! अट्ठविहा आया पण्णत्ता, तंजहा–दवियाया कसायाया जोगाया उवओगाया णाणाया दंसणाया चरित्ताया वीरियाया ॥ जस्स णं भंते ! दवियाया तस्स कसायाया जस्स कसायाया तस्स दवियाया ?, गोयमा ! जस्स दवियाया तस्स कसायाया सिय अत्थि सिय नत्थि जस्स पुण कसायाया तस्स दवियाया नियमं अत्थि ।जस्स णं भंते ! दवियाया तस्स जोगाया ? एवं जहा दवियाया कसायाया भणिया तहा दवियाया जोगाया भाणियव्वा । जस्स णं भंते ! दवियाया तस्स उवओगाया एवं सव्वत्थ पुच्छा भाणियव्वा, गोयमा ! जस्स दवियाया तस्स उवओगाया नियमं अत्थि, जस्सवि उवओगाया तस्सवि दवियाया नियमं अत्थि, जस्स दवियाया तस्स णाणाया भयणाए जस्स पुण णाणाया तस्स दवियाया नियमं अत्थि, जस्स दवियाया तस्स दंसणाया नियमं अत्थि जस्सवि दंसणाया तस्स दवियाया नियमं अत्थि, जस्स दवियाया तस्स चरित्ताया भयणाए जस्स पुण चरित्ताया तस्स दवियाया नियमं अत्थि, एवं वीरियायाएवि समं । जस्स णं भंते ! कसायाया तस्स जोगाया पुच्छा, गोयमा ! जस्स कसायाया तस्स जोगाया नियमं अत्थि, जस्स पुण जोगाया तस्स कसायाया सिय अत्थि सिय नत्थि, एवं उवओगायाएवि समं कसायाया नेयव्वा, कसायाया य णाणाया य परोप्परं दोवि भइयव्वाओ, जहा कसायाया य उवओगाया य तहा कसायाया य दंसणाया य कसायाया य चरित्ताया

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अथ द्वादशमे शतके दशम-उद्देशक: आरभ्यते

'आत्मा' शब्दस्य अर्थ एवं तस्य द्रव्यात्मा आदि अष्ट-भेदा:

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [४६७--४६८]

दीप अनुक्रम [५६०--५६१]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥५८८॥

य दोवि परोप्परं भइयव्वाओ, जहा कसायाया य जोगाया य तहा कसायाया य वीरियाया य भाणि-यव्वाओ, एवं जहा कसायायाए वत्तव्वया भणिया तहा जोगायाएवि उवरिमाहिं समं भाणियव्वाओ। जहा दवियायाए वत्तव्वया भणिया तहा उवयोगायाएवि उवरिल्लाहिं समं भाणियव्वा । जस्स नाणाया तस्स दंसणाया नियमं अत्थि जस्स पुण दंसणाया तस्स णाणाया भयणाए, जस्स नाणाया तस्स चरित्ता-या सिय अत्थि सिय नत्थि जस्स पुण चरित्ताया तस्स नाणाया नियमं अत्थि, णाणाया वीरियाया दोवि परोप्परं भयणाए । जस्स दंसणाया तस्स उवरिमाओ दोवि भयणाए, जस्स पुण ताओ तस्स दंसणाया नियमं अत्थि । जस्स चरित्ताया तस्स वीरियाया नियमं अत्थि जस्स पुण वीरियाया तस्स चरित्ताया सिय अत्थि सिय नत्थि ॥ एयासि णं भंते ! दवियायाणं कसायायाणं जाव वीरियायाण य कयरे २ जाव विसेसा० ? गोयमा ! सव्वत्थोवाओ चरित्तायाओ नाणायाओ अणंतगुणाओ कसायाओ अणंत०जोगाया-ओ वि० वीरियायाओवि उवयोगदवियदंसणायाओ तिन्निवि तुल्लाओ वि० ॥ (सूत्रं ४६७) आया भंते ! नाणे अन्नाणे ?, गोयमा ! आया सिय नाणे सिय अन्नाणे णाणे पुण नियमं आया ॥ आया भंते ! नेरइयाणं नाणे अन्ने नेरइयाणं नाणे ? गोयमा ! आया नेरइयाणं सिय नाणे सिय अन्नाणे नाणे पुण से नियमं आया एवं जाव थणियकुमाराणं, आया भंते ! पुढवि० अन्नाणे अन्ने पुढविकाइयाणं अन्नाणे ? गोयमा ! आया पुढविकाइयाणं नियमं अन्नाणे अन्नाणेवि नियमं आया, एवं जाव वणस्सइका०, बेइंदिय-

१२ शतके १० उद्देशः द्रव्यात्मा-द्याः सू ४६७ ज्ञानादिभे-दाभेदः सू ४६८

॥५८८॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

'आत्मा' शब्दस्य अर्थ एवं तस्य द्रव्यात्मा आदि अष्ट-भेदा:

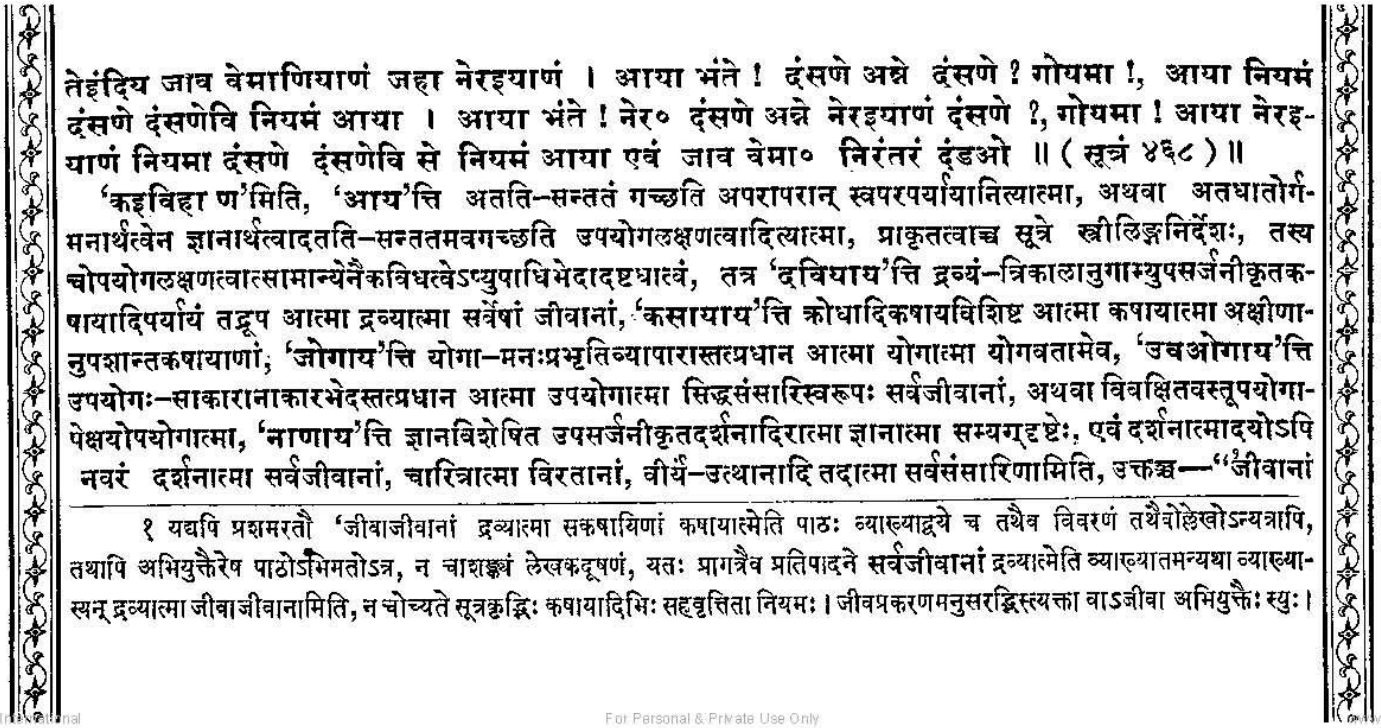

तेइंदिय जाव वेमाणियाणं जहा नेरइयाणं । आया भंते ! दंसणे अन्ने दंसणे ? गोयमा !, आया नियमं दंसणे दंसणेवि नियमं आया । आया भंते ! नेर० दंसणे अन्ने नेरइयाणं दंसणे ?, गोयमा ! आया नेरइयाणं नियमा दंसणे दंसणेवि से नियमं आया एवं जाव वेमा० निरंतरं दंडओ ॥ (सूत्रं ४६८) ॥

'कइविहा ण'मिति, 'आय'त्ति अतति–सन्ततं गच्छति अपरापरान् स्वपरपर्यायानित्यात्मा, अथवा अतधातोर्गमनार्थत्वेन ज्ञानार्थत्वादतति–सन्ततमवगच्छति उपयोगलक्षणत्वादित्यात्मा, प्राकृतत्वाच्च सूत्रे स्त्रीलिङ्गनिर्देशः, तस्य चोपयोगलक्षणत्वात्सामान्येनैकविधत्वेऽप्युपाधिभेदादष्टधात्वं, तत्र 'दविआय'त्ति द्रव्यं–त्रिकालानुगाम्युपसर्जनीकृतकषायादिपर्यायं तद्रूप आत्मा द्रव्यात्मा सर्वेषां जीवानां, 'कसायाय'त्ति क्रोधादिकषायविशिष्ट आत्मा कषायात्मा अक्षीणानुपशान्तकषायाणां; 'जोगाय'त्ति योगा–मनःप्रभृतिव्यापारास्तत्प्रधान आत्मा योगात्मा योगवतामेव, 'उवओगाय'त्ति उपयोगः–साकारानाकारभेदस्तत्प्रधान आत्मा उपयोगात्मा सिद्धसंसारिस्वरूपः सर्वजीवानां, अथवा विवक्षितवस्तूपयोगापेक्षयोपयोगात्मा, 'नाणाय'त्ति ज्ञानविशेषित उपसर्जनीकृतदर्शनादिरात्मा ज्ञानात्मा सम्यग्दृष्टेः, एवं दर्शनात्मादयोऽपि नवरं दर्शनात्मा सर्वजीवानां, चारित्रात्मा विरतानां, वीर्य–उत्थानादि तदात्मा सर्वसंसारिणामिति, उक्तञ्च—"[१]जीवानां

१ यद्यपि प्रशमरतौ 'जीवाजीवानां द्रव्यात्मा सकषायिणां कषायात्मेति पाठः व्याख्याद्वये च तथैव विवरणं तथैवोल्लेखोऽन्यत्रापि, तथापि अभियुक्तैरेष पाठोऽभिमतोऽत्र, न चाशङ्क्यं लेखकदूषणं, यतः प्रागत्रैव प्रतिपादने सर्वजीवानां द्रव्यात्मेति व्याख्यातमन्यथा व्याख्यास्यन् द्रव्यात्मा जीवाजीवानामिति, न चोच्यते सूत्रकृद्भिः कषायादिभिः सहवृत्तिता नियमः । जीवप्रकरणमनुसरद्भिस्त्यक्ता वाऽजीवा अभियुक्तैः स्युः ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	'आत्मा' शब्दस्य अर्थ एवं तस्य द्रव्यात्मा आदि अष्ट-भेदा:

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [४६७--४६८]

दीप अनुक्रम [५६०--५६१]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः२ ॥५८९॥

द्रव्यात्मा ज्ञेयः सकषायिणां कषायात्मा । योगः सयोगिनां पुनरुपयोगः सर्वजीवानाम् ॥ १ ॥ ज्ञानं सम्यग्दृष्टेर्दर्शनमथ भवति सर्वजीवानाम् । चारित्रं विरतानां तु सर्वसंसारिणां वीर्यम् ॥ २ ॥" इति ॥ एवमष्टधाऽऽत्मानं प्ररूप्याथ यस्यात्मभेदस्य यदन्यदात्मभेदान्तरं युज्यते च न युज्यते च तस्य तदर्शयितुमाह—'जस्स ण'मित्यादि, इहाष्टौ पदानि स्थाप्यन्ते, तत्र प्रथमपदं शेषैः सप्तभिः सह चिन्त्यते, तत्र यस्य जीवस्य 'द्रव्यात्मा' द्रव्यात्मत्वं जीवत्वमित्यर्थः तस्य कषायात्मा 'स्यादस्ति' कदाचिदस्ति सकषायावस्थायां 'स्यान्नास्ति' कदाचिन्नास्ति क्षीणोपशान्तकषायावस्थायां, यस्य पुनः कषायात्माऽस्ति तस्य द्रव्यात्मा द्रव्यात्मत्वं–जीवत्वं नियमादस्ति, जीवत्वं विना कषायाणामभावादिति । तथा यस्य द्रव्यात्मा तस्य योगात्माऽस्ति, योगवतामिव, नास्ति चायोगिसिद्धानामिव, तथा यस्य योगात्मा तस्य द्रव्यात्मा नियमादस्ति, जीवत्वं विना योगानामभावात्, एतदेव पूर्वसूत्रोपमानेन दर्शयन्नाह—'एवं जहा दवियाये'त्यादि । तथा यस्य जीवस्य द्रव्यात्मा तस्य नियमादुपयोगात्मा, यस्याप्युपयोगात्मा तस्य नियमाद्द्रव्यात्मा, एतयोः परस्परेणाविनाभूतत्वाद् यथा सिद्धस्य, तदन्यस्य च द्रव्यात्माऽस्त्युपयोगात्मा चोपयोगलक्षणत्वाज्जीवानां, एतदेवाह–'जस्स दवियाये'त्यादि । तथा 'जस्स दवियाया तस्स नाणाया भयणाए जस्स पुण नाणाया तस्स दवियाया नियमं अत्थि'त्ति यस्य जीवस्य द्रव्यात्मा तस्य ज्ञानात्मा स्यादस्ति यथा सम्यग्दृष्टीनां स्यान्नास्ति यथा मिथ्यादृष्टीनामित्येवं भजना, यस्य तु ज्ञानात्मा तस्य द्रव्यात्मा नियमादस्ति, यथा सिद्धस्येति । 'जस्स दवियाया तस्स दंसणाया नियमं अत्थि'त्ति यथा सिद्धस्य केवलदर्शनं 'जस्सवि दंसणाया तस्स दवियाया नियमं अत्थि'त्ति यथा

१२ शतके १० उद्देशः द्रव्यात्माद्याः सू ४६७ ज्ञानादिभेदाभेदः सू ४६८

॥५८९॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

'आत्मा' शब्दस्य अर्थ एवं तस्य द्रव्यात्मा आदि अष्ट-भेदा:

चक्षुर्दर्शनादिदर्शनवतां जीवत्वमिति, तथा 'जस्स दवियाया तस्स चरित्ताया भयणाए'त्ति यतः सिद्धस्याविरतस्य वा द्रव्यात्मत्वे सत्यपि चारित्रात्मा नास्ति विरतानां चास्तीति भजनेति, 'जस्स पुण चरित्ताया तस्स दवियाया नियमं अत्थि'त्ति चारित्रिणां जीवत्वाव्यभिचारित्वादिति, 'एवं वीरियातेवि समं'ति यथा द्रव्यात्मनश्चारित्रात्मना सह भजनोक्ता नियमश्चैवं वीर्यात्मनाऽपि सहेति, तथाहि–यस्य द्रव्यात्मा तस्य वीर्यात्मा नास्ति, यथा सकरणवीर्यापेक्षया सिद्धस्य तदन्यस्य त्वस्तीति भजना, वीर्यात्मनस्तु द्रव्यात्माऽस्त्येव यथा संसारिणामिति ७॥ अथ कषायात्मना सहान्यानि षट् पदानि चिन्त्यन्ते—'जस्स ण'मित्यादि, यस्य कषायात्मा तस्य योगात्माऽस्त्येव, नहि सकषायोऽयोगी भवति, यस्य तु योगात्मा तस्य कषायात्मा स्याद्वा न वा, सयोगानां सकषायाणामकषायाणां च भावादिति, 'एवं उवओगाया, एवी'त्यादि, अयमर्थः–यस्य कषायात्मा तस्योपयोगात्माऽवश्यं भवति, उपयोगरहितस्य कषायाणामभावात्, यस्य पुनरुपयोगात्मा तस्य कषायात्मा भजनया, उपयोगात्मतायां सत्यामपि कषायिणामेव कषायात्मा भवति निष्कषायाणां तु नासाविति भजनेति, तथा 'कसायाया य नाणाया य परोप्परं दोवि भइयव्वाओ'त्ति, कथम् ?, यस्य कषायात्मा तस्य ज्ञानात्मा स्यादस्ति स्यान्नास्ति, यतः कषायिणः सम्यग्दृष्टेर्ज्ञानात्माऽस्ति मिथ्यादृष्टेस्तु तस्य नास्त्यसाविति भजना, तथा यस्य ज्ञानात्मास्ति तस्य कषायात्मा स्यादस्ति स्यान्नास्ति, ज्ञानिनां कषायभावात् तदभावाच्चेति भजनेति, 'जहा कसायाया उवओगायाँ य तहा कसायाया य दंसणाया य'त्ति अतिदेशः, तस्माच्चेदं लब्धं–'जस्स कसायाया तस्स दंसणाया नियमं अत्थि' दर्शनरहितस्य घटादेः कषायात्मनोऽभावात् 'जस्स पुण दंसणाया तस्स कसायाया सिय

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

'आत्मा' शब्दस्य अर्थ एवं तस्य द्रव्यात्मा आदि अष्ट-भेदा:

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [४६७--४६८]

दीप अनुक्रम [५६०--५६१]

अत्थि सिय नत्थि' दर्शनवतां कषायसद्भावात्तदभावाच्चेति, दृष्टान्तार्थस्तु प्राक् प्रसिद्ध एवेति, 'कसायाया य चरित्ताया य दोवि परोप्परं भइयव्वाओ'त्ति, भजना चैवं–यस्य कषायात्मा तस्य चारित्रात्मा स्यादस्ति स्यान्नास्ति, कथं ?, कषायिणां चारित्रस्य सद्भावात् प्रमत्तयतीनामिव तदभावाच्चासंयतानामिवेति, तथा यस्य चारित्रात्मा तस्य कषायात्मा स्यादस्ति स्यान्नास्ति, कथं ?, सामायिकादिचारित्रिणां कषायाणां भावाद् यथाख्यातचारित्रिणां च तदभावादिति, 'जहा कसायाया य जोगाया य तहा कसायाया वीरियाया य भाणियव्वाओ'त्ति दृष्टान्तः प्राक् प्रसिद्धः, दार्ष्टान्तिकस्त्वेवं-यस्य कषायात्मा तस्य वीर्यात्मा नियमादस्ति, न हि कषायवान् वीर्यविकलोऽस्ति, यस्य पुनर्वीर्यात्मा तस्य कषायात्मा भजनया, यतो वीर्यवान् सकषायोऽपि स्याद् यथा संयतः अकषायोऽपि स्याद् यथा केवलीति ६। अथ योगात्माऽग्रेतनपदैः पञ्चभिः सह चिन्तनीयस्तत्र च लाघवार्थमतिदिशन्नाह–'एवं जहा कसायाया वत्तव्वया भणिया तहा जोगायाएवि उवरिमाहिं समं भाणियव्व'त्ति, सा चैवम्–यस्य योगात्मा तस्योपयोगात्मा नियमाद् यथा सयोगानां, यस्य पुनरुपयोगात्मा तस्य योगात्मा स्यादस्ति यथा सयोगानां स्यान्नास्ति यथाऽयोगिनां सिद्धानां चेति, तथा यस्य योगात्मा तस्य ज्ञानात्मा स्यादस्ति सम्यग्दृष्टीनामिव स्यान्नास्ति मिथ्यादृष्टीनामिव, यस्य ज्ञानात्मा तस्यापि योगात्मा स्यादस्ति सयोगिनामिव स्यान्नास्त्ययोगिनामिवेति, तथा यस्य योगात्मा तस्य दर्शनात्माऽस्त्येव योगिनामिव यस्य च दर्शनात्मा तस्य योगात्मा स्यादस्ति योगवतामिव स्यान्नास्त्ययोगिनामिव, तथा यस्य योगात्मा तस्य चारित्रात्मा स्यादस्ति विरतानामिव स्यान्नास्त्यविरतानामिव, यस्यापि चारित्रात्मा तस्य योगात्मा स्यादस्ति सयोगचारित्रवतामिव स्यान्नास्त्ययोगिनामिवेति,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

'आत्मा' शब्दस्य अर्थ एवं तस्य द्रव्यात्मा आदि अष्ट-भेदा:

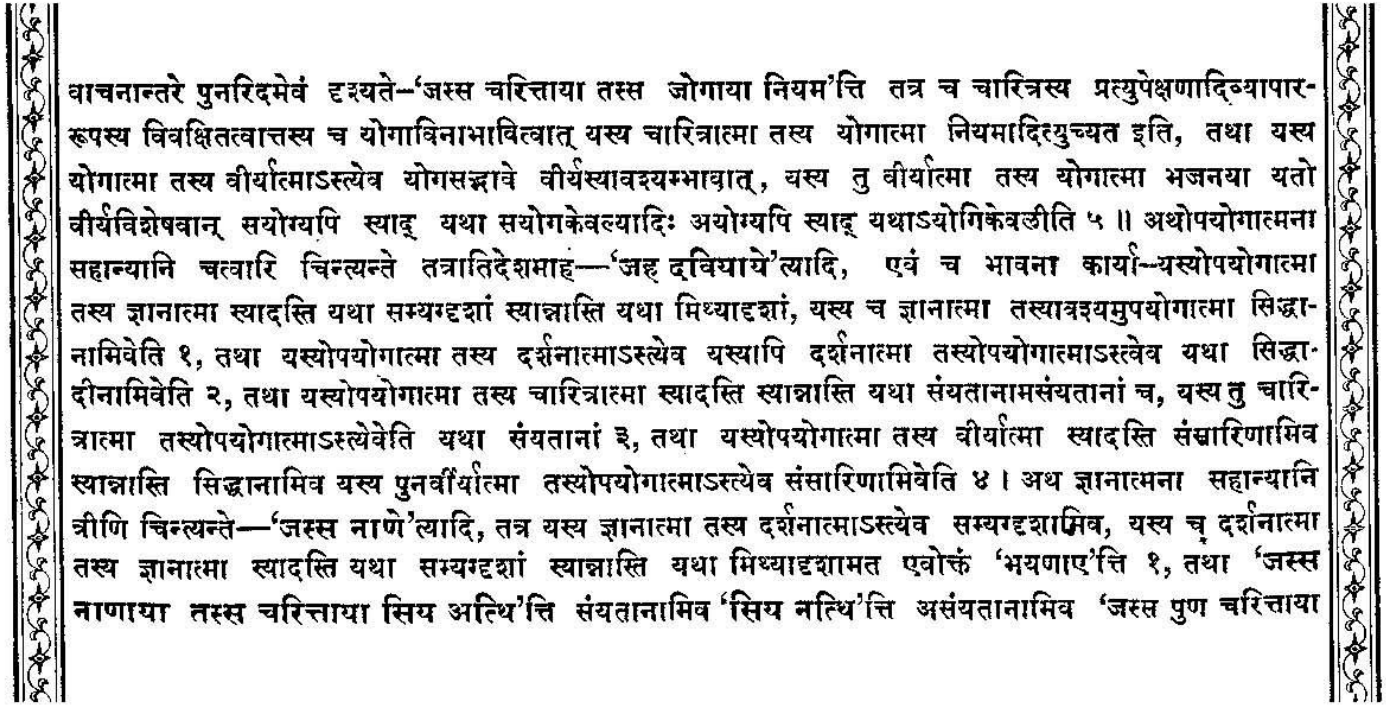

वाचनान्तरे पुनरिदमेवं दृश्यते–'जस्स चरित्ताया तस्स जोगाया नियम'त्ति तत्र च चारित्रस्य प्रत्युपेक्षणादिव्यापार-रूपस्य विवक्षितत्वात्तस्य च योगाविनाभावित्वात् यस्य चारित्रात्मा तस्य योगात्मा नियमादित्युच्यत इति, तथा यस्य योगात्मा तस्य वीर्यात्माऽस्त्येव योगसद्भावे वीर्यस्यावश्यम्भावात्, यस्य तु वीर्यात्मा तस्य योगात्मा भजनया यतो वीर्यविशेषवान् सयोग्यपि स्याद् यथा सयोगकेवल्यादिः अयोग्यपि स्याद् यथाऽयोगिकेवलीति ५ ॥ अथोपयोगात्मना सहान्यानि चत्वारि चिन्त्यन्ते तत्रातिदेशमाह—'जह दविया'त्यादि, एवं च भावना कार्या–यस्योपयोगात्मा तस्य ज्ञानात्मा स्यादस्ति यथा सम्यग्दृशां स्यान्नास्ति यथा मिथ्यादृशां, यस्य च ज्ञानात्मा तस्यावश्यमुपयोगात्मा सिद्धा-नामिवेति १, तथा यस्योपयोगात्मा तस्य दर्शनात्माऽस्त्येव यस्यापि दर्शनात्मा तस्योपयोगात्माऽस्त्वेव यथा सिद्धा-दीनामिवेति २, तथा यस्योपयोगात्मा तस्य चारित्रात्मा स्यादस्ति स्यान्नास्ति यथा संयतानामसंयतानां च, यस्य तु चारि-त्रात्मा तस्योपयोगात्माऽस्त्येवेति यथा संयतानां ३, तथा यस्योपयोगात्मा तस्य वीर्यात्मा स्यादस्ति संसारिणामिव स्यान्नास्ति सिद्धानामिव यस्य पुनर्वीर्यात्मा तस्योपयोगात्माऽस्त्येव संसारिणामिवेति ४ । अथ ज्ञानात्मना सहान्यानि त्रीणि चिन्त्यन्ते—'जस्स नाणे'त्यादि, तत्र यस्य ज्ञानात्मा तस्य दर्शनात्माऽस्त्येव सम्यग्दृशामिव, यस्य च दर्शनात्मा तस्य ज्ञानात्मा स्यादस्ति यथा सम्यग्दृशां स्यान्नास्ति यथा मिथ्यादृशामत एवोक्तं 'भयणाए'त्ति १, तथा 'जस्स नाणाया तस्स चरित्ताया सिय अत्थि'त्ति संयतानामिव 'सिय नत्थि'त्ति असंयतानामिव 'जस्स पुण चरित्ताया

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	'आत्मा' शब्दस्य अर्थ एवं तस्य द्रव्यात्मा आदि अष्ट-भेदा:

तस्स नाणाया नियमं अत्थि'त्ति ज्ञानं विना चारित्रस्याभावादिति २, तथा 'णाणाये'त्यादि अस्यार्थः–यस्य ज्ञानात्मा तस्य वीर्यात्मा स्यादस्ति केवल्यादीनामिव स्यान्नास्ति सिद्धानामिव, यस्यापि वीर्यात्मा तस्य ज्ञानात्मा स्यादस्ति सम्यग्दृष्टेरिव स्यान्नास्ति मिथ्यादृश इवेति ३॥ अथ दर्शनात्मना सह द्वे चिन्त्येते—'जस्स दंसणाये'त्यादि, भावना चास्य–यस्य दर्शनात्मा तस्य चारित्रात्मा स्यादस्ति संयतानामिव स्यान्नास्त्यसंयतानामिव, यस्य च चारित्रात्मा तस्य दर्शनात्माऽस्त्येव साधूनामिवेति १, तथा यस्य दर्शनात्मा तस्य वीर्यात्मा स्यादस्ति संसारिणामिव स्यान्नास्ति सिद्धानामिव, यस्य च वीर्यात्मा तस्य दर्शनात्माऽस्त्येव संसारिणामिवेति २ ॥ अथान्तिमपदयोर्योजना—'जस्स चरित्ते'त्यादि, यस्य चारित्रात्मा तस्य वीर्यात्माऽस्त्येव, वीर्यं विना चारित्रस्याभावात्, यस्य पुनर्वीर्यात्मा तस्य चारित्रात्मा स्यादस्ति साधूनामिव स्यान्नास्त्यसंयतानामिवेति ॥ अधुनैषामेवात्मनामल्पबहुत्वमुच्यते—'सव्वत्थोवाओ चरित्तायाओ'त्ति चारित्रिणां सङ्ख्यातत्वात् 'णाणायाओ अणंतगुणाओ'त्ति सिद्धादीनां सम्यग्दृशां चारित्रेभ्योऽनन्तगुणत्वात् 'कसायाओ अणंतगुणाओ'त्ति सिद्धेभ्यः कषायोदयवतामनन्तगुणत्वात् 'जोगायाओ विसेसाहियाओ'त्ति अपगतकषायोदयैर्योगवद्भिरधिका इत्यर्थः 'वीरियायाओ विसेसाहियाओ'त्ति अयोगिभिरधिका इत्यर्थः, अयोगिनां वीर्यवत्त्वादिति, 'उवओगदवियदंसणायाओ तिण्णिवि तुल्लाओ विसेसाहियाओ'त्ति परस्परापेक्षया तुल्याः, सर्वेषां सामान्यजीवरूपत्वात्, वीर्यात्मभ्यः सकाशादुपयोगद्रव्यदर्शनात्मानो विशेषाधिका यतो वीर्यात्मानः सिद्धाश्च मीलिता उपयोगाद्यात्मानो भवन्ति, ते च वीर्यात्मभ्यः

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

'आत्मा' शब्दस्य अर्थ एवं तस्य द्रव्यात्मा आदि अष्ट-भेदा:

सिद्धराशिनाऽधिका भवन्तीति, भवन्ति चात्र गाथाः—"कोडीसहस्सपुहुत्तं जईण तो थोवियाओ चरणाया । णाणायाऽणंतगुणा पडुच्च सिद्धे य सिद्धाओ ॥१॥ होंति कसायायाओऽणंतगुणा जेण ते सरागाणं । जोगाया भणियाओ अयोगिवज्जाण तो अहिया ॥ २ ॥ जं सेलेसिगयाणवि लद्धी विरियं तओ समहियाओ । उवओगदवियदंसण सव्वजिया णं ततो अहिया ॥ ३ ॥" इति ॥ अथात्मन एव स्वरूपनिरूपणायाह—'आया भंते ! नाणे' इत्यादि, आत्मा ज्ञानं योऽयमात्माऽसौ ज्ञानं न तयोर्भेदः अथात्मनोऽन्यज्ज्ञानमिति प्रश्नः, उत्तरं तु–आत्मा स्याज्ज्ञानं सम्यक्त्वे सति मत्यादिज्ञानस्वभावत्वात्तस्य, स्यादज्ञानं मिथ्यात्वे सति तस्य मत्यज्ञानादिस्वभावत्वात्, ज्ञानं पुनर्नियमादात्मा आत्मधर्मत्वाज्ज्ञानस्य, न च सर्वथा धर्मो धर्मिणो भिद्यते, सर्वथा भेदे हि विप्रकृष्टगुणिनो गुणमात्रोपलब्धौ प्रतिनियतगुणिविषय एव संशयो न स्यात्, तदन्येभ्योऽपि तस्य भेदाविशेषात्, दृश्यते च यदा कश्चिद्धरिततरुतरुणशाखाविसररन्ध्रोदरान्तरतः किमपि शुक्लं पश्यति तदा किमियं पताका किमियं बलाका ? इत्येवं प्रतिनियतगुणिविषयोऽसौ, नापि धर्मिणो धर्मः सर्वथैवाभिन्नः, सर्वथैवाभेदे हि संशयानुत्पत्तिरेव, गुणग्रहणत एव गुणिनोऽपि गृहीतत्वादतः कथञ्चिदभेदपक्षमाश्रित्य ज्ञानं पुनर्नियमादात्मेत्युच्यत इति, इह चात्मा ज्ञानं व्यभिचरति ज्ञानं त्वात्मानं न व्यभिचरति खदिरवनस्पतिवदिति सूत्र-

१ यतीनां कोटीसहस्रपृथक्त्वं ततः स्तोकाश्चरणात्मानः ज्ञानात्मानोऽनन्तगुणाः सिद्धाः सिद्धान् प्रतीत्य ॥ १ ॥ कषायात्मानोऽनन्तगुणा भवन्ति यतस्ते सरागाणां ततो योगात्मानोऽधिका अयोगिवर्ज्या यतो भणिताः॥ २ ॥ यच्छैलेशीगतानामपि लब्धिवीर्यं ततस्ते समधिकाः । उपयोगद्रव्यदर्शनात्मानः सर्वे जीवास्ततोऽधिकाः ॥ ३ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [४६७--४६८]

दीप अनुक्रम [५६०--५६१]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥५९२॥

गर्भार्थ इति ॥ अमुमेवार्थं दण्डके निरूपयन्नाह—'आया'त्यादि, नारकाणां 'आत्मा' आत्मस्वरूपं ज्ञानं उतान्यन्नारकाणां ज्ञानं ? तेभ्यो व्यतिरिक्तमित्यर्थः इति प्रश्नः, उत्तरं तु आत्मा नारकाणां स्याज्ज्ञानं सम्यग्दर्शनभावात् स्यादज्ञानं मिथ्यादर्शनभावात्, ज्ञानं पुनः 'से'त्ति तन्नारकसम्बन्धि आत्मा न तद्व्यतिरिक्तमित्यर्थः ॥ 'आया भंते ! पुढविक्काइयाण'-मित्यादि, 'आत्मा' आत्मस्वरूपमज्ञानमुतान्यत्तत्तेषां ?, उत्तरं तु—आत्मा तेषामज्ञानरूपो नान्यत्तत्तेभ्य इति भावार्थः । एवं दर्शनसूत्राण्यपि, नवरं सम्यग्दृष्टिमिथ्यादृष्ट्योर्दर्शनस्याविशिष्टत्वादात्मा दर्शनं दर्शनमप्यात्मैवेति वाच्यं, यत्र हि धर्मे विपर्ययो नास्ति तत्र नियम एवोपनीयते न व्यभिचारो, यथेहैव दर्शने, यत्र तु विपर्ययोऽस्ति तत्र व्यभिचारो नियमश्च-यथा ज्ञाने, आत्मा ज्ञानरूपोऽज्ञानरूपश्चेति व्यभिचारः, ज्ञानं त्वात्मैवेति नियम इति ॥

आया भंते ! रयणप्पभापु० अन्ना रयणप्पभा पुढवी !, गोयमा ! रयणप्पभा सिय आया सिय नो आया सिय अवत्तव्वं आयाति य नो आयाइ य, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ रयणप्पभा पुढवी सिय आया सिय नो आया सिय अवत्तव्वं आतातिय नो आतातिय ?, गोयमा ! अप्पणो आदिट्ठे आया परस्स आदिट्ठे नो आया तदुभयस्स आदिट्ठे अवत्तव्वं रयणप्पभा पुढवी आयातिय नो आयाति य से तेणट्ठेणं तं चेव जाव नो आयातिय । आया भंते ! सक्करप्पभा पुढवी जहा रयणप्पभा पुढवी तहा सक्करप्पभाएवि एवं जाव अहे सत्तमा । आया भंते ! सोहम्मकप्पे पुच्छा, गोयमा ! सोहम्मे कप्पे सिय आया सिय नो आया जाव नो आयाति य, से केणट्ठेणं भंते ! जाव नो आयातिय ?, गोयमा ! अप्पणो आइट्ठे आया परस्स आइट्ठे

१२ शतके १० उद्देशः रत्नप्रभाद्य-प्वाद्याश्रि-ता भङ्गाः सू ४६९

॥५९२॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

'आत्मा' शब्दस्य अर्थ एवं तस्य द्रव्यात्मा आदि अष्ट-भेदा:

प्रत सूत्रांक [४६९]

दीप अनुक्रम [५६२]

नो आया तदुभयस्स आइट्ठे अवत्तव्वं आताति य नो आताति य, से तेणट्ठेणं तं चेव जाव नो आयाति य, एवं जाव अच्चुए कप्पे। आया भंते! गेविज्जविमाणे अन्ने गेविज्जविमाणे एवं जहा रयणप्पभा तहेव, एवं अणुत्तरविमाणावि, एवं ईसिपब्भारावि। आया भंते! परमाणुपोग्गले अन्ने परमाणुपोग्गले? एवं जहा सोहम्मे कप्पे तहा परमाणुपोग्गलेवि भाणियव्वे॥ आया भंते! दुपएसिए खंधे अन्ने दुपएसिए खंधे?, गोयमा! दुपएसिए खंधे सिय आया १ सिय नो आया २ सिय अवत्तव्वं आयाइ य नो आयातिय ३ सिय आया य नो आया य ४ सिय आया य अवत्तव्वं आयाति य नो आयाति य ५ सिय नो आया य अवत्तव्वं आयाति य नो आयाति य ६, से केणट्ठेणं भंते! एवं तं चेव जाव नो आयाति य अवत्तव्वं आयाति य नो आयाति य गोयमा! अप्पणो आदिट्ठे आया १ परस्स आदिट्ठे नो आया २ तदुभयस्स आदिट्ठे अवत्तव्वं दुपएसिए खंधे आयाति य नो आयाति य ३ देसे आदिट्ठे सब्भावपज्जवे देसे आदिट्ठे असब्भावपज्जवे दुप्पएसिए खंधे आया य नो आया य ४ देसे आदिट्ठे सब्भावपज्जवे देसे आदिट्ठे तदुभयपज्जवे दुपएसिए खंधे आया य अवत्तव्वं आयाइ य नो आयाइ य ५ देसे आदिट्ठे असब्भावपज्जवे देसे आदिट्ठे तदुभयपज्जवे दुपएसिए खंधे नो आया य अवत्तव्वं आयाति य नो आयाति य ६ से तेणट्ठेणं तं चेव जाव नो आयाति य॥ आया भंते! तिपएसिए खंधे अन्ने तिपएसिए खंधे?, गोयमा! तिपएसिए खंधे सिय आया १ सिय नो आया २ सिय अवत्तव्वं आयाति य नो आयाति य ३ सिय आया य नो आया य ४ सिय आया य नो आयाओ य ५ सिय

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [४६९]

दीप अनुक्रम [५६२]

आयाउ य नो आया य ६ सिय आया य अवत्तव्वं आयाति य नो आयाति य ७ सिय आयाइय अवत्तव्वाइं आयाओ य नो आयाओ य ८ सिय आयाओ य अवत्तव्वं आयाति य नो आयाति य ९ सिय नो आया य अवत्तव्वं आयाति य नो आयाति य १० सिय आया य अवत्तव्वाइं आयाओ य नो आयाओ य ११ सिय नो आयाओ य अवत्तव्वं आयाइ य नो आयाइ य १२ सिय आया य नो आया य अवत्तव्वं आयाइ य नो आयाइ य १३, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुचइ तिपएसिए खंधे सिय आया एवं चेव उच्चारेयव्वं जाव सिय आया य नो आया य अवत्तव्वं आयाति य नो आयाति य ?, गोयमा ! अप्पणो आइट्ठे आया १ परस्स आइट्ठे नो आया २ तदुभयस्स आइट्ठे अवत्तव्वं आयाति य नो आयाति य ३ देसे आइट्ठे सब्भाव-पज्जवे देसे आदिट्ठे असब्भावपज्जवे तिपएसिए खंधे आया य नो आया य ४ देसे आदिट्ठे सब्भावपज्जवे देसा आइट्ठा असब्भावपज्जवे तिपएसिए खंधे आया य नो आयाओ य ५ देसा आदिट्ठा सब्भावपज्जवे देसे आदिट्ठे असब्भावपज्जवे तिपएसिए खंधे आयाओ य नो आया य ६ देसे आदिट्ठे सब्भावपज्जवे देसे आदिट्ठे तदुभयपज्जवे तिपएसिए खंधे आया य अवत्तव्वं आयाइ य नो आयाइ य ७ देसे आदिट्ठे सब्भावपज्जवे देसा आदिट्ठा तदुभयपज्जवा तिपएसिए खंधे आया य अवत्तव्वाइं आयाउ य नो आयाउ य ८ देसा आदिट्ठा सब्भावपज्जवा देसे आदिट्ठे तदुभयपज्जवे तिपएसिए खंधे आयाउ य अवत्तव्वं आयाति य नो आयाति य ९ एए तिन्नि भंगा, देसे आदिट्ठे असब्भावपज्जवे देसे आदिट्ठे तदुभयपज्जवे तिपएसिए खंधे नो आया य

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अवत्तव्वं आयाइ य नो आयाति य १० देसे आदिट्ठे असब्भावपज्जवे देसा आदिट्ठा तदुभयपज्जवा तिपएसिए खंधे नो आया य अवत्तव्वाइं आयाउ य नो आयाउ य ११ देसा आदिट्ठा असब्भावपज्जवा देसे आदिट्ठे तदुभयपज्जवे तिपएसिए खंधे नो आयाउ य अवत्तव्वं आयाति य नो आयाति य १२ देसे आदिट्ठे सब्भावपज्जवे देसे आदिट्ठे असब्भावपज्जवे देसे आदिट्ठे तदुभयपज्जवे तिपएसिए खंधे आया य नो आया य अवत्तव्वं आयाति य नो आयाइ य १३ से तेणट्ठेणं गोयमा! एवं वुच्चइ तिपएसिए खंधे सिय आया तं चेव जाव नो आयाति य ॥ आया भंते ! चउप्पएसिए खंधे अन्ने० पुच्छा, गोयमा! चउप्पएसिए खंधे सिय आया १ सिय नो आया २ सिय अवत्तव्वं आयाति य नो आयाति य ३ सिय आया य नो आया य ४ सिय आया य अवत्तव्वं ४ सिय नो आया य अवत्तव्वं ४ सिय आया य नो आया य अवत्तव्वं आयाति य नो आयाति य १६ सिय आया य नो आया य अवत्तव्वाइं आयाओ य नो आयाओ य १७ सिय आया य नो आयाओ य अवत्तव्वं आयाति य नो आयाति य १८ सिय आयाओ य नो आया य अवत्तव्वं आयाति य नो आयाति य १९ । से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ चउप्पएसिए खंधे सिय आया य नो आया य अवत्तव्वं तं चेव अट्ठे पडिउच्चारेयव्वं ? गोयमा ! अप्पणो आदिट्ठे आया १ परस्स आदिट्ठे नो आया २ तदुभयस्स आदिट्ठे अवत्तव्वं आयाति य नो आयाति य ३ देसे आदिट्ठे सब्भावपज्जवे देसे आदिट्ठे असब्भावपज्जवे चउभंगो, सब्भावपज्जवेणं तदुभयेण य चउभंगो असब्भावेणं तदुभयेण य चउभंगो, देसे आदिट्ठे सब्भावपज्जवे देसे आदिट्ठे

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [४६९]

दीप अनुक्रम [५६२]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥५९४॥

असब्भावपज्जवे देसे आदिट्ठे तदुभयपज्जवे चउप्पएसिए खंधे आया य नो आया य अवत्तव्वं आयाति य नो आयाति य, देसे आदिट्ठे सब्भावपज्जवे देसे आदिट्ठे असब्भावपज्जवे देसा आदिट्ठा तदुभयपज्जवा चउप्पएसिए खंधे भवइ आया य नो आया य अवत्तव्वाइं आयाओ य नो आयाओ य १७ देसे आदिट्ठे सब्भावपज्जवे देसा आदिट्ठा असब्भावपज्जवा देसे आदिट्ठे तदुभयपज्जवे चउप्पएसिए खंधे आया य नो आयाओ य अवत्तव्वं आयाति य नोआयाति य १७ देसा आइट्ठा सब्भावपज्जवा देसे आइट्ठे असब्भावप० देसे आइट्ठे तदुभयपज्जवे चउप्पएसिए खंधे आयाओ य नोआया य अवत्तव्वं आयाति य नो आयाति य १९ से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ चउप्पएसिए खंधे सिय आया सिय नो आया सिय अवत्तव्वं निक्खेवे ते चेव भंगा उच्चारेयव्वा जाव नो आयाति य॥ आया भंते ! पंचपएसिए खंधे अन्ने पंचपएसिए खंधे ?, गोयमा ! पंचपएसिए खंधे सिय आया १ सिय नो आया २ सिय अवत्तव्वं आयाति य नो आयाति य ३ सिय आया य नो आया य सिय अवत्तव्वं ४ नो आया य अवत्तव्वेण य ४ तियगसंजोगे एक्को ण पडइ, से केणट्ठेणं भंते ! तं चेव पडि-उच्चारेयव्वं ?, गोयमा ! अप्पणो आदिट्ठे आया १ परस्स आदिट्ठे नो आया २ तदुभयस्स आदिट्ठे अवत्तव्वं ३ देसे आदिट्ठे सब्भावपज्जवे देसे आदिट्ठे असब्भावपज्जवे एवं दुयगसंजोगे सव्वे पडंति तियगसंजोगे एक्को ण पडइ। छप्पएसियस्स सव्वे पडंति जहा छप्पएसिए एवं जाव अणंतपएसिए। सेवं भंते ! सेवं भंतेत्ति जाव विहरति॥ (सूत्रं ४६९)॥ दसमो उद्देसो समत्तो॥ बारसमं सयं समत्तं॥ १२–१०॥

१२ शतके १० उद्देशः रत्नप्रभाद्य-पृथ्व्याश्रि-ता भङ्गाः सू ४६९

॥५९४॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

आत्माधिकाराद्रत्नप्रभादिभावानात्मत्वादिभावेन चिन्तयन्नाह—'आया भंते !'इत्यादि, अतति–सततं गच्छति तांस्तान् पर्यायानित्यात्मा ततश्चात्मा–सद्रूपा रत्नप्रभा पृथिवी 'अन्न'त्ति अनात्मा असद्रूपेत्यर्थः 'सिय आया सिय नोआय'त्ति स्यात्सती स्यादसती 'सिय अवत्तव्वं'ति आत्मत्वेनानात्मत्वेन च व्यपदेष्टुमशक्यं वस्त्विति भावः, कथमवक्तव्यम् ? इत्याह—आत्मेति च नोआत्मेति च वक्तुमशक्यमित्यर्थः,'अप्पणो आइट्ठे'त्ति आत्मनः–स्वस्य रत्नप्रभाया एव वर्णादिपर्यायैः 'आदिष्टे'आदेशे सति तैर्व्यपदिष्टा सतीत्यर्थः आत्मा भवति,स्वपर्यायापेक्षया सतीत्यर्थः, 'परस्स आइट्ठे नोआय'त्ति परस्य शर्करादिपृथिव्यन्तरस्य पर्यायैरादिष्टे–आदेशे सति तैर्व्यपदिष्टा सतीत्यर्थः नोआत्मा–अनात्मा भवति, पररूपापेक्षयाऽसतीत्यर्थः, 'तदुभयस्स आइट्ठे अवत्तव्वं'ति तयोः–स्वपरयोरुभयं तदेव वोभयं तदुभयं तस्य पर्यायैरादिष्टे–आदेशे सति तदुभयपर्यायैर्व्यपदिष्टेत्यर्थः 'अवक्तव्यम्' अवाच्यं वस्तु स्यात्, तथाहि–न ह्यसौ आत्मेति वक्तुं शक्या, परपर्यायापेक्षयाऽनात्मत्वात्तस्याः, नाप्यनात्मेति वक्तुं शक्या, स्वपर्यायापेक्षया तस्या आत्मत्वादिति, अवक्तव्यत्वं चात्मानात्मशब्दापेक्षयैव न तु सर्वथा, अवक्तव्यशब्देनैव तस्या उच्यमानत्वाद्, अनभिलाप्यभावानामपि भावपदार्थवस्तुप्रभृतिशब्दैरनभिलाप्यशब्देन वाऽभिलाप्यत्वादिति । एवं परमाणुसूत्रमपि ॥ द्विप्रदेशिकसूत्रे षड् भङ्गाः, तत्राद्यास्त्रयः सकलस्कन्धापेक्षाः पूर्वोक्ता एव तदन्ये तु त्रयो देशापेक्षाः, तत्र च 'गोयमे'त्यत आरभ्य व्याख्यायते–'अप्पणो'त्ति स्वस्य पर्यायैः 'आदिट्ठे'त्ति आदिष्टे–आदेशे सति आदिष्ट इत्यर्थः द्विप्रदेशिकस्कन्ध आत्मा भवति १ एवं परस्य पर्यायैरादिष्टोऽनात्मा २ तदुभयस्य–द्विप्रदेशिकस्कन्धतदन्यस्कन्धलक्षणस्य पर्यायैरादिष्टोऽसाववक्तव्यं वस्तु स्यात्, कथम् ?, आत्मेति

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

चानात्मेति चेति २ । तथा द्विप्रदेशत्वात्तस्य देश एक आदिष्टः, सद्भावप्रधानाः–सत्तानुगताः पर्यवा यस्मिन् स सद्भाव-पर्यवः, अथवा तृतीयाबहुवचनमिदं स्वपर्यवैरित्यर्थः, द्वितीयस्तु देश आदिष्टः असद्भावपर्यवः परपर्यायैरित्यर्थः, परपर्य-वाश्च तदीयद्वितीयदेशसम्बन्धिनो वस्त्वन्तरसम्बन्धिनो वेति, ततश्चासौ द्विप्रदेशिकः स्कन्धः क्रमेणात्मा चेति नोआत्मा चेति ४, तथा तस्य देश आदिष्टः सद्भावपर्यवो देशश्चोभयपर्यवस्ततोऽसावात्मा चावक्तव्यं चेति ५, तथा तस्यैव देश आदिष्टोऽसद्भावपर्यवो देशस्तूभयपर्यवस्ततोऽसौ नोआत्मा चावक्तव्यं च स्यादिति ६, सप्तमः पुनरात्मा च नोआत्मा चावक्तव्यं चेत्येवंरूपो न भवति द्विप्रदेशिके द्व्यंशत्वादस्य त्रिप्रदेशिकादौ तु स्यादिति सप्तभङ्गी ॥ त्रिप्रदेशिकस्कन्धे तु त्रयोदश भङ्गास्तत्र पूर्वोक्तेषु सप्तस्वाद्याः सकलादेशास्त्रयस्तथैव, तदन्येषु तु त्रिषु त्रय-स्त्रय एकवचनबहुवचनभेदात्, सप्तमस्त्वेकविध एव, स्थापना चेयम्—

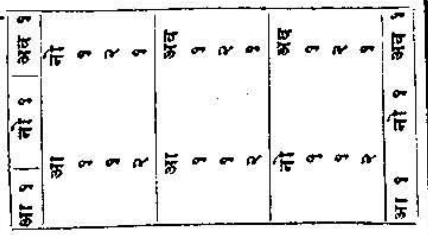

यच्चेह प्रदेशद्वयेऽप्येकवचनं क्वचित्तत्तस्य प्रदेशद्वयस्यैकप्रदेशावगाढत्वादिहेतुनैक-त्वविवक्षणात्, भेदविवक्षायां च बहुवचनमिति ॥ चतुष्प्रदेशिकेऽप्येवं नवरमे-कोनविंशतिर्भङ्गाः, तत्र त्रयः सकलादेशाः तथैव शेषेषु चतुर्षु प्रत्येकं चत्वारो विकल्पाः,ते चैवं चतुर्थादिषु त्रिषु– सप्तमस्त्वेवम्— ॥ पञ्च-प्रदेशिके तु द्वाविंशतिस्तत्राद्यास्त्रयस्तथैव, तदुत्तरेषु च त्रिषु प्रत्येकं चत्वारो

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

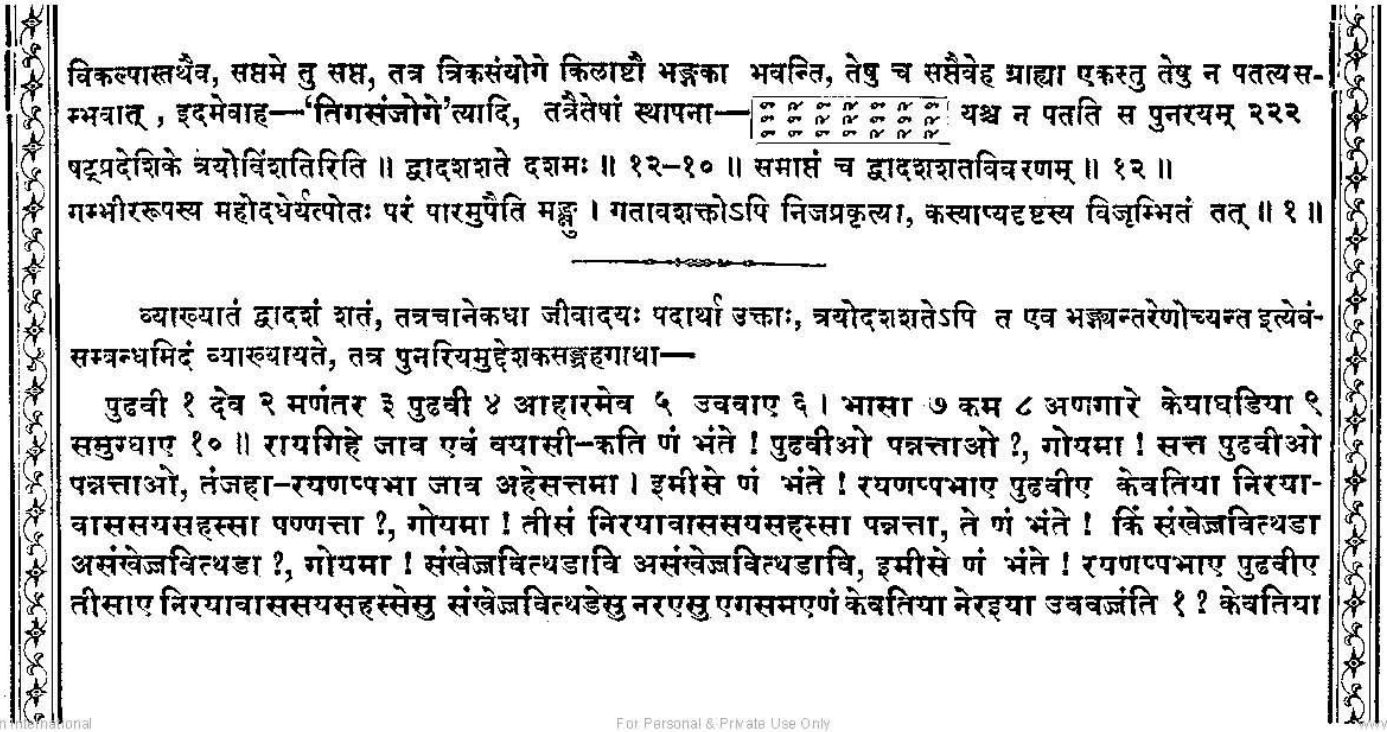

विकल्पास्तथैव, सप्तमे तु सप्त, तत्र त्रिकसंयोगे किलाष्टौ भङ्गका भवन्ति, तेषु च सप्तैवेह ग्राह्या एकस्तु तेषु न पतत्यसम्भवात्, इदमेवाह—'तिगसंजोगे'त्यादि, तत्रैतेषां स्थापना—[illegible] यश्च न पतति स पुनरयम् २२२ षट्प्रदेशिके त्रयोविंशतिरिति ॥ द्वादशशते दशमः ॥ १२–१० ॥ समाप्तं च द्वादशशतविवरणम् ॥ १२ ॥

गम्भीररूपस्य महोदधेर्यत्पोतः परं पारमुपैति मङ्कु । गतावशक्तोऽपि निजप्रकृत्या, कस्याप्यदृष्टस्य विजृम्भितं तत् ॥ १ ॥

व्याख्यातं द्वादशं शतं, तत्रचानेकधा जीवादयः पदार्था उक्ताः, त्रयोदशशतेऽपि त एव भङ्ग्यन्तरेणोच्यन्त इत्येवंसम्बन्धमिदं व्याख्यायते, तत्र पुनरियमुद्देशकसङ्ग्रहगाथा—

पुढवी १ देव २ मणंतर ३ पुढवी ४ आहारमेव ५ उववाए ६ । भासा ७ कम ८ अणगारे केयाघडिया ९ समुग्घाए १० ॥ रायगिहे जाव एवं वयासी–कति णं भंते ! पुढवीओ पन्नत्ताओ ?, गोयमा ! सत्त पुढवीओ पन्नत्ताओ, तंजहा–रयणप्पभा जाव अहेसत्तमा । इमीसे णं भंते ! रयणप्पभाए पुढवीए केवतिया निरयावाससयसहस्सा पण्णत्ता ?, गोयमा ! तीसं निरयावाससयसहस्सा पन्नत्ता, ते णं भंते ! किं संखेज्जवित्थडा असंखेज्जवित्थडा ?, गोयमा ! संखेज्जवित्थडावि असंखेज्जवित्थडावि, इमीसे णं भंते ! रयणप्पभाए पुढवीए तीसाए निरयावाससयसहस्सेसु संखेज्जवित्थडेसु नरएसु एगसमएणं केवतिया नेरइया उववज्जंति १ ? केवतिया

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	अत्र द्वादशमे शतके दशम-उद्देशक: परिसमाप्त: तत् समाप्ते द्वादशमं उद्देशक: अपि परिसमाप्तं अथ त्रयोदशमं शतकं आरभ्यते अथ त्रयोदशमे शतके प्रथम-उद्देशक: आरब्ध: रत्नप्रभा-आदि नरकेषु उत्पाद:

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [४७०--४७२]

दीप अनुक्रम [५६३--५६६]

काउलेस्सा उववज्जंति २? केवइया कण्हपक्खिया उववज्जंति ३? केवतिया सुक्कपक्खिया उववज्जंति ४? केवतिया सन्नी उववज्जंति ५? केवतिया असन्नी उववज्जंति ६? केवतिया भवसिद्धीया उव० ७? केवतिया अभवसिद्धीया उवव० ८? केवतिया आभिणिबोहियनाणी उव० ९? केवइया सुयनाणी उव० १०? केवइया ओहिनाणी उववज्जंति ११? केवइया मइअन्नाणी उवव० १२? केवइया सुयअन्नाणी उव० १३? केवइया विब्भंगनाणी उवव० १४? केवइया चक्खुदंसणी उव० १५? केवइया अचक्खुदंसणी उवव० १६? केवइया ओहिदंसणी उवव० १७? केवइया आहारसन्नोवउत्ता उवव० १८? केवइया भयसन्नोवउत्ता उव० १९? केवइया मेहुणसन्नोवउत्ता उवव २०? केवइया परिग्गहसन्नोवउत्ता उवव० २१? केवइया इत्थिवेयगा उवव० २२? केवइया पुरिसवेदगा उवव० २३? केवइया नपुंसगवेदगा उवव० २४? केवइया कोहकसाई उवव० २५? जाव केवइया लोभकसायी उवव० २८? केवइया सोइंदियउवउत्ता उव० २९? जाव केवइया फासिंदियोवउत्ता उव० ३३? केवइया नोइंदियोवउत्ता उव० ३४? केवतिया मणजोगी उवव० ३५? केवतिया वइजोगी उवव० ३६? केवतिया कायजोगी उवव० ३७? केवतिया सागारोवउत्ता उवव० ३८? केवतिया अणागारोवउत्ता उवव० ३९?, गोयमा! इमीसे णं रयणप्पभाए पुढवीए तीसाए निरयावाससयसहस्सेसु संखेज्जवित्थडेसु नरएसु जहन्नेणं एक्को वा दो वा तिन्नि वा उक्कोसेणं संखेज्जा नेरइया उवव०, जहन्नेणं एक्को वा दो वा तिन्नि वा उक्को० संखेज्जा काउलेस्सा उव०, जहन्नेणं एक्को वा दो वा तिन्नि वा उक्कोसेणं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

रत्नप्रभा-आदि नरकेषु उत्पाद:

संखेज्जा कण्हपक्खिया उव०, एवं सुक्कपक्खियावि, एवं सन्नी एवं असन्नीवि एवं भवसिद्धीया एवं अभवसिद्धिया आभिणिबोहियना० सुयना० ओहिना० मइअन्नाणी सुयअन्नाणी विभंगना० चक्खुदंसणी ण उवव० जहन्नेणं एक्को वा दो वा तिन्नि वा उक्कोसे० संखे० अचक्खुदंसणी उवव० एवं ओहिदंसणीवि आहारसन्नोवउत्तावि जाव परिग्गहसन्नोवउ० इत्थीवेयगा न उव० पुरिसवेयगावि न उव० जहन्नेणं एक्को वा दो वा तिन्नि वा उक्कोसेणं संखेज्जा नपुंसगवेदगा उवव० एवं कोहकसाई जाव लोभ० सोइंदियउवउत्ता न उवव० एवं जाव फासिंदिओवउत्ता न उवव० जहन्नेणं एक्को वा दो वा तिन्नि वा उक्कोसेणं संखेज्जा नोइंदिओवउत्ता उववज्जंति मणजोगी ण उववज्जंति एवं वइजोगीवि जहन्नेणं एक्को वा दो वा तिन्नि वा उक्कोसेणं संखेज्जा कायजोगी उववज्जंति एवं सागारोवउत्तावि एवं अणागारोवउत्तावि ॥ इमीसे णं भंते ! रयणप्पभाए पुढवीए तीसाए निरयावाससयसहस्सेसु संखेज्जवित्थडेसु नरएसु एगसमएणं केवइया नेरइया उववट्टंति ? केवतिया काउलेस्सा उववट्टंति ? जाव केवतिया अणागारोवउत्ता उववट्टंति ?, गोयमा ! इमीसे णं रयणप्पभाए पुढवीए तीसाए निरयावाससयसहस्सेसु संखेज्जवित्थडेसु नरएसु एगसमएणं जहन्नेणं एक्को वा दो वा तिन्नि वा उक्कोसेणं संखेज्जा नेरइया उववट्टंति, एवं जाव सन्नी, असन्नी ण उववट्टंति, जहन्नेणं एक्को वा दो वा तिन्नि वा उक्कोसेणं संखेज्जा भवसिद्धीया उववट्टंति एवं जाव सुयअन्नाणी विभंगनाणी ण उववट्टंति, चक्खुदंसणी ण उववट्टंति, जहन्नेणं एक्को वा दो वा तिन्नि वा उक्कोसेणं संखेज्जा अचक्खुदंसणी उववट्टंति, एवं जाव

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

रत्नप्रभा-आदि नरकेषु उत्पाद:

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [४७०--४७२]

दीप अनुक्रम [५६३--५६६]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥५९७॥

लोभकसायी, सोइंदियउवउत्ता ण उव्वट्टंति एवं जाव फासिंदियोवउत्ता न उव्वट्टंति, जहन्नेणं एक्को वा दो वा तिन्नि वा उक्कोसेणं संखेज्जा नोइंदियोवउत्ता उव्वट्टंति मणजोगी न उव्वट्टंति एवं वइजोगीवि जहन्नेणं एक्को वा दो वा तिन्नि वा उक्कोसेणं संखेज्जा कायजोगी उव्वट्टंति एवं सागारोवउत्ता अणागारोवउत्ता ॥ इमीसे णं भंते ! रयणप्पभाए पुढवीए तीसाए निरयावाससयसहस्सेसु संखेज्जवित्थडेसु नरएसु केवइया नेरइया पन्नत्ता ? केवइया काउलेस्सा जाव केवतिया अणागारोवउत्ता पन्नत्ता ? केवतिया अणंतरोववन्नगा पन्नत्ता १ ? केवइया परंपरोववन्नगा पन्नत्ता २ ? केवइया अणंतरोगाढा पन्नत्ता ३ ? केवइया परंपरोगाढा प० ४ ? केवइया अणंतराहारा पं० ५ ? केवतिया परंपराहारा ६ ? केवतिया अणंतरपज्जत्ता प० ७ ? केवतिया परंपरपज्जत्ता पन्नत्ता ८ ? केवतिया चरिमा प० ९ ? केवतिया अचरिमा पं० १० ?, गोयमा ! इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए तीसाए निरयावाससयसहस्सेसु संखेज्जवित्थडेसु नरएसु संखेज्जा नेरतिया प० संखेज्जा काउलेसा प० एवं जाव संखेज्जा सन्नी प०, असन्नी सिय अत्थि सिय नत्थि जइ अत्थि जहन्नेणं एक्को वा दो वा तिन्नि वा उक्कोसेणं संखेज्जा प०, संखेज्जा भवसिद्धी प० एवं जाव संखेज्जा परिग्गहसन्नोवउत्ता प० इत्थिवेदगा नत्थि पुरिसवेदगा नत्थि संखेज्जा नपुंसगवेदगा प०, एवं कोहकसायीवि माणकसाई जहा असन्नी एवं जाव लोभक० संखेज्जा सोइंदियोवउत्ता प० एवं जाव फासिंदियोवउत्ता नोइंदियोवउत्ता जहा असन्नी संखेज्जा मणजोगी प० एवं जाव अणागारोवउत्ता, अणंतरोववन्नगा सिय अत्थि सिय नत्थि जइ अत्थि जहा असन्नी, संखेज्जा

१२ शतके १ उद्देशः रत्नप्रभादि-पृत्पादः सू ४७०

॥५९७॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

रत्नप्रभा-आदि नरकेषु उत्पाद:

प्रत सूत्रांक [४७०--४७२]

दीप अनुक्रम [५६३--५६६]

परंपरोववन्न० प०, एवं जहा अणंतरोववन्नगा तहा अणंतरोगाढगा अणंतराहारगा अणंतरपज्जत्तगा परंपरोगाढगा जाव अचरिमा जहा परंपरोववन्नगा ॥ इमीसे णं भंते ! रयणप्पभाए पुढवीए तीसाए निरयावाससयसहस्सेसु असंखेज्जवित्थडेसु एगसमएणं केवतिया नेरइया उववज्जंति जाव केवतिया अणागारोवउत्ता उववज्जंति ?, गोयमा ! इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए तीसाए निरयावाससयसहस्सेसु असंखेज्जवित्थडेसु नरएसु एगसमएणं जह० एक्को वा दो वा तिन्नि वा उक्को० असंखेज्जा नेरइया उवव०, एवं जहेव संखेज्जवित्थडेसु तिन्नि गमगा तहा असंखेज्जवित्थडेसुवि तिन्नि गमगा, नवरं असंखेज्जा भा० सेसं तं चेव जाव असंखेज्जा अचरिमा प०, नाणत्तं लेस्सासु, लेसाओ जहा पढमसए नवरं संखेज्जवित्थडेसुवि असंखेज्जवित्थडेसुवि ओहिनाणी ओहिदंसणी य संखेज्जा उव्वट्टावेयव्वा, सेसं तं चेव ॥ सक्करप्पभाए णं भंते ! पुढवीए केवतिया निरयावास० पुच्छा, गोयमा ! पणवीसं निरयावाससयसहस्सा पण्णत्ता, ते णं भंते ! किं संखेज्जवित्थडा असंखेज्जवित्थडा एवं जहा रयणप्पभाए तहा सक्करप्पभाएवि, नवरं असन्नी तिसुवि गमएसु न भन्नति, सेसं तं चेव । वालुयप्पभाए णं पुच्छा, गोयमा ! पन्नरस निरयावाससयसहस्सा प० सेसं जहा सक्करप्पभाए णाणत्तं लेसासु लेसाओ जहा पढमसए ॥ पंकप्पभाए पुच्छा, गोयमा ! दस निरयावास०, एवं जहा सक्करप्पभाए नवरं ओहिनाणी ओहिदंसणी य न उव्वट्टंति, सेसं तं चेव ॥ धूमप्पभाए णं पुच्छा, गोयमा ! तिन्नि निरयावाससयसहस्सा एवं जहा पंकप्पभाए ॥ तमाए णं भंते ! पुढवीए केवतिया निरयावास० पुच्छा, गोयमा ! एगे पंचूणे

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

रत्नप्रभा-आदि नरकेषु उत्पाद:

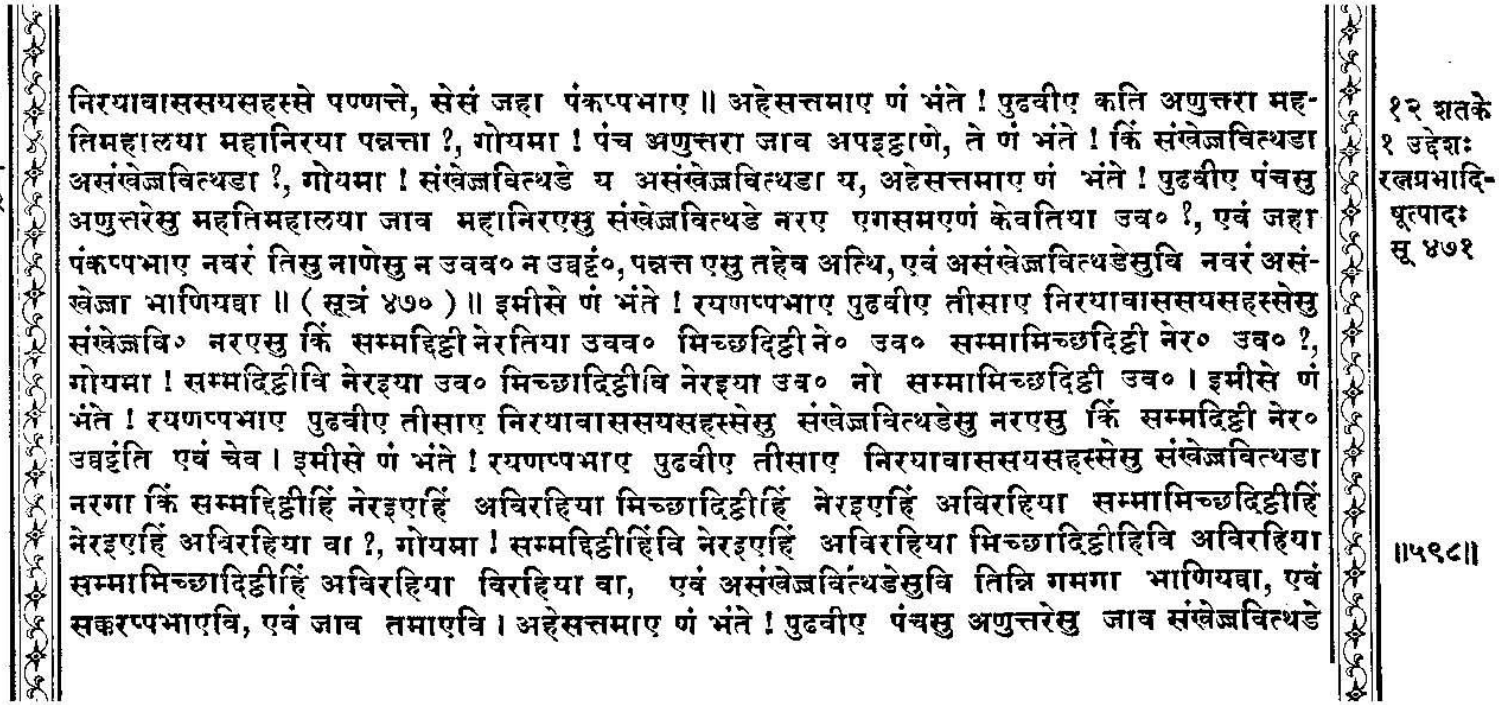

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥५९८॥

निरयावाससयसहस्से पण्णत्ते, सेसं जहा पंकप्पभाए ॥ अहेसत्तमाए णं भंते ! पुढवीए कति अणुत्तरा महतिमहालया महानिरया पन्नत्ता ?, गोयमा ! पंच अणुत्तरा जाव अपइट्ठाणे, ते णं भंते ! किं संखेज्जवित्थडा असंखेज्जवित्थडा ?, गोयमा ! संखेज्जवित्थडे य असंखेज्जवित्थडा य, अहेसत्तमाए णं भंते ! पुढवीए पंचसु अणुत्तरेसु महतिमहालया जाव महानिरएसु संखेज्जवित्थडे नरए एगसमएणं केवतिया उव० ?, एवं जहा पंकप्पभाए नवरं तिसु नाणेसु न उवव० न उव्वट्ट०, पन्नत्त एसु तहेव अत्थि, एवं असंखेज्जवित्थडेसुवि नवरं असंखेज्जा भाणियव्वा ॥ (सूत्रं ४७०) ॥ इमीसे णं भंते ! रयणप्पभाए पुढवीए तीसाए निरयावाससयसहस्सेसु संखेज्जवि० नरएसु किं सम्मद्दिट्ठी नेरतिया उवव० मिच्छदिट्ठी ने० उव० सम्मामिच्छदिट्ठी नेर० उव० ?, गोयमा ! सम्मद्दिट्ठीवि नेरइया उव० मिच्छादिट्ठीवि नेरइया उव० नो सम्मामिच्छदिट्ठी उव० । इमीसे णं भंते ! रयणप्पभाए पुढवीए तीसाए निरयावाससयसहस्सेसु संखेज्जवित्थडेसु नरएसु किं सम्मद्दिट्ठी नेर० उव्वट्टंति एवं चेव । इमीसे णं भंते ! रयणप्पभाए पुढवीए तीसाए निरयावाससयसहस्सेसु संखेज्जवित्थडा नरगा किं सम्मद्दिट्ठीहिं नेरइएहिं अविरहिया मिच्छादिट्ठीहिं नेरइएहिं अविरहिया सम्मामिच्छदिट्ठीहिं नेरइएहिं अविरहिया वा ?, गोयमा ! सम्मद्दिट्ठीहिंवि नेरइएहिं अविरहिया मिच्छादिट्ठीहिवि अविरहिया सम्मामिच्छादिट्ठीहिं अविरहिया विरहिया वा, एवं असंखेज्जवित्थडेसुवि तिन्नि गमगा भाणियव्वा, एवं सक्करप्पभाएवि, एवं जाव तमाएवि । अहेसत्तमाए णं भंते ! पुढवीए पंचसु अणुत्तरेसु जाव संखेज्जवित्थडे

१२ शतके १ उद्देशः रत्नप्रभादि-पृथ्वुत्पादः सू ४७१

॥५९८॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

रत्नप्रभा-आदि नरकेषु उत्पाद:

नरए किं सम्मद्दिट्ठीनेरइया पुच्छा, गोयमा ! सम्मद्दिट्ठीनेरइया न उवव० मिच्छादिट्ठीनेरइया उवव० सम्मामिच्छदिट्ठी नेरइया न उवव० एवं उव्वट्टंतिवि अविरहिए जहेव रयणप्पभाए, एवं असंखेज्जवित्थडेसुवि तिन्नि गमगा ॥(सूत्रं ४७१) से नूणं भंते ! कण्हलेस्से नीललेस्से जाव सुक्कलेस्से भवित्ता कण्हलेस्सेसु नेरइएसु उवव० ?, हंता गोयमा ! कण्हलेस्से जाव उववज्जंति, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुचइ कण्हलेस्से जाव उववज्जंति ?, गोयमा ! लेस्सट्ठाणेसु संकिलिस्समाणेसु संकि० २ कण्हलेसं परिणमइ कण्ह० २ कण्हलेसेसु नेरइएसु उववज्जंति से तेणट्ठेणं जाव उववज्जंति । से नूणं भंते ! कण्हलेस्से जाव सुक्कले से भवित्ता नीललेस्सेसु नेरइएसु उववज्जंति ?, हंता गोयमा ! जाव उववज्जंति, से केणट्ठेणं जाव उववज्जंति ?, गोयमा ! लेस्सट्ठाणेसु संकिलिस्समाणेसु वा विसुज्झमाणेसु नीललेस्सं परिणमंति नील० २ नीललेस्सेसु नेरइएसु उवव० से तेणट्ठेणं गोयमा ! जाव उवव०, से नूणं भंते ! कण्हलेस्से नील जाव भवित्ता काउलेस्सेसु नेरइएसु उवव० एवं जहा नीललेस्साए तहा काउलेस्सावि भाणियव्वा जाव से तेणट्ठेणं जाव उववज्जंति । सेवं भंते ! सेवं भंते ! (सूत्रं ४७२) ॥ १३–१ ॥

'पुढवी'त्यादि, 'पुढवी'ति नरकपृथिवीविषयः प्रथमः १, 'देव'त्ति देवप्ररूपणार्थो द्वितीयः २ 'अणंतर'त्ति अनन्तराहारा नारका इत्याद्यर्थः प्रतिपादनपरस्तृतीयः ३, 'पुढवि'त्ति पृथिवीगतवक्तव्यताप्रतिबद्धश्चतुर्थः ४, 'आहारे'त्ति नारकाद्याहारप्ररूपणार्थः पञ्चमः ५, 'उववाए'त्ति नारकाद्युपपातार्थः षष्ठः ६, 'भास'त्ति भाषार्थः सप्तमः ७ 'कम्म'त्ति

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

रत्नप्रभा-आदि नरकेषु उत्पाद:

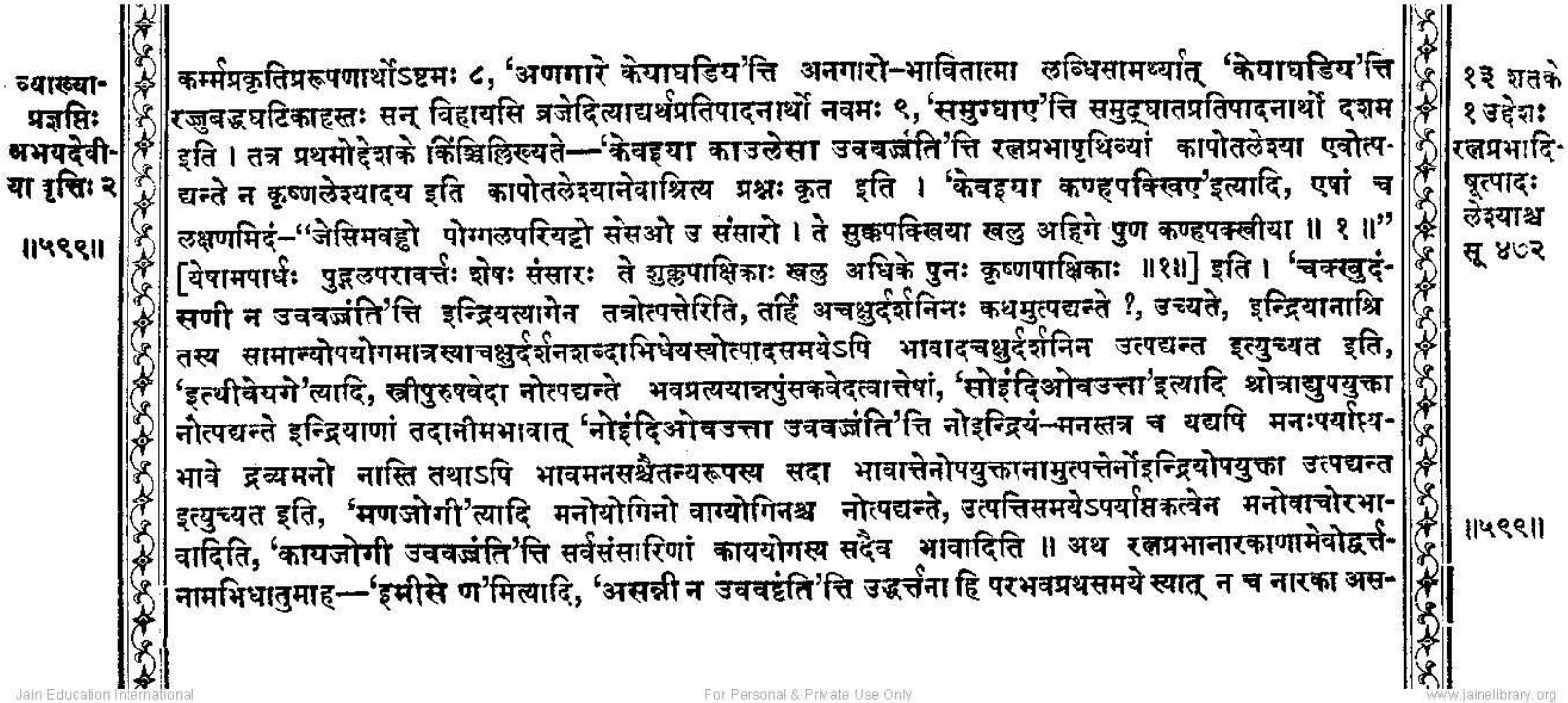

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥५९९॥

कर्म्मप्रकृतिप्ररूपणार्थोऽष्टमः ८, 'अणगारे केयाघडिय'त्ति अनगारो–भावितात्मा लब्धिसामर्थ्यात् 'केयाघडिय'त्ति रज्जुबद्धघटिकाहस्तः सन् विहायसि व्रजेदित्याद्यर्थप्रतिपादनार्थो नवमः ९, 'समुग्घाए'त्ति समुद्घातप्रतिपादनार्थो दशम इति । तत्र प्रथमोद्देशके किंञ्चिल्लिख्यते—'केवइया काउलेसा उववज्जंति'त्ति रत्नप्रभापृथिव्यां कापोतलेश्या एवोत्पद्यन्ते न कृष्णलेश्यादय इति कापोतलेश्यानेवाश्रित्य प्रश्नः कृत इति । 'केवइया कण्हपक्खिए'इत्यादि, एषां च लक्षणमिदं–"जेसिमवड्ढो पोग्गलपरियट्टो सेसओ उ संसारो । ते सुक्कपक्खिया खलु अहिगे पुण कण्हपक्खीया ॥ १ ॥" [येषामपार्धः पुद्गलपरावर्त्तः शेषः संसारः ते शुक्लपाक्षिकाः खलु अधिके पुनः कृष्णपाक्षिकाः ॥१॥] इति । 'चक्खुदंसणी न उववज्जंति'त्ति इन्द्रियत्यागेन तत्रोत्पत्तेरिति, तर्हि अचक्षुर्दर्शनिनः कथमुत्पद्यन्ते ?, उच्यते, इन्द्रियानाश्रित्य तस्य सामान्योपयोगमात्रस्याचक्षुर्दर्शनशब्दाभिधेयस्योत्पादसमयेऽपि भावादचक्षुर्दर्शनिन उत्पद्यन्त इत्युच्यत इति, 'इत्थीवेयगे'त्यादि, स्त्रीपुरुषवेदा नोत्पद्यन्ते भवप्रत्ययान्नपुंसकवेदत्वात्तेषां, 'सोइंदिओवउत्ता'इत्यादि श्रोत्राद्युपयुक्ता नोत्पद्यन्ते इन्द्रियाणां तदानीमभावात् 'नोइंदिओवउत्ता उववज्जंति'त्ति नोइन्द्रियं–मनस्तत्र च यद्यपि मनःपर्याप्त्यभावे द्रव्यमनो नास्ति तथाऽपि भावमनसश्चैतन्यरूपस्य सदा भावात्तेनोपयुक्तानामुत्पत्तेर्नोइन्द्रियोपयुक्ता उत्पद्यन्त इत्युच्यत इति, 'मणजोगी'त्यादि मनोयोगिनो वाग्योगिनश्च नोत्पद्यन्ते, उत्पत्तिसमयेऽपर्याप्तकत्वेन मनोवाचोरभावादिति, 'कायजोगी उववज्जंति'त्ति सर्वसंसारिणां काययोगस्य सदैव भावादिति ॥ अथ रत्नप्रभानारकाणामेवोद्वर्त्तनामभिधातुमाह—'इमीसे ण'मित्यादि, 'असन्नी न उववट्टंति'त्ति उद्वर्त्तना हि परभवप्रथमसमये स्यात् न च नारका अस-

१३ शतके १ उद्देशः रत्नप्रभादिषूत्पादः लेश्याश्च सू ४७२

॥५९९॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

रत्नप्रभा-आदि नरकेषु उत्पादः

ञ्जिषूत्पद्यन्तेऽतस्तेऽसञ्ज्ञिनः सन्तो नोद्वर्त्तन्त इत्युच्यते, एवं 'विभंगनाणी न उववट्टंती'त्यपि भावनीयं, शेषाणि तु पदान्युत्पादवद्व्याख्येयानि, उक्तञ्च चूर्ण्याम्—"असन्निणो य विब्भंगिणो य उव्वट्टणाइ वज्जेज्जा । दोसुवि य चक्खुदंसणी मणवइ तह इंदियाइं वा ॥ १ ॥" इति ॥ अनन्तरं रत्नप्रभानारकाणामुत्पादे उद्वर्त्तनायां च परिमाणमुक्तमथ तेषामेव सत्तायां तदाह—'इमीसे ण'मित्यादि, 'केवइया अणंतरोववन्नग'त्ति कियन्तः प्रथमसमयोत्पन्नाः ? इत्यर्थः 'परंपरोववन्नग'त्ति उत्पत्तिसमयापेक्षया द्व्यादिसमयेषु वर्त्तमानाः 'अणंतरावगाढ'त्ति विवक्षितक्षेत्रे प्रथमसमयावगाढाः 'परंपरोगाढ'त्ति विवक्षितक्षेत्रे द्वितीयादिकः समयोऽवगाढे येषां ते परम्परावगाढाः 'केवइया चरिम'त्ति चरमो नारकभवेषु स एव भवो येषां ते चरमाः, नारकभवस्य वा चरमसमये वर्त्तमानाश्चरमाः, अचरमास्त्वितरे, 'असन्नी सिय अत्थि सिय नत्थि'त्ति असञ्ज्ञिभ्य उद्वृत्य ये नारकत्वेनोत्पन्नास्तेऽपर्याप्तकावस्थायामसञ्ज्ञिनो भूतभावत्वात्ते चाल्पा इति कृत्वा 'सिय अत्थी'त्याद्युक्तं, मानमायालोभकषायोपयुक्तानां नोइन्द्रियोपयुक्तानामनन्तरोपपन्नानामनन्तरावगाढानामनन्तराहारकाणामनन्तरपर्याप्तकानां च कादाचित्कत्वात् 'सिय अत्थि'इत्यादि वाच्यं, शेषाणां तु बहुत्वात्सञ्ज्ञाता इति वाच्यमिति ॥ अनन्तरं सञ्ज्ञातविस्तृतनरकावासनारकवक्तव्यतोक्ता, अथ तद्विपर्ययवक्तव्यतामभिधातुमाह—'इमीसे ण'मित्यादि, 'तिन्नि गमग'त्ति 'उववज्जंति उव्वट्टंति पन्नत्त'त्ति एते त्रयो गमाः, 'ओहिनाणी ओहिदंसणी य संखेज्जा उव्वट्टावेयव्व'त्ति, कथं ?, ते हि तीर्थङ्करादय एव भवन्ति, ते च स्तोकाः स्तोकत्वाच्च सङ्ख्याता एवेति, 'नवरं असन्नी तिसुवि गमएसु न भन्नति' कस्मात् ?, उच्यते—असञ्ज्ञिनः प्रथमायामेवोत्पद्यन्ते 'असन्नी खलु पढमं' इति वचना-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [४७०--४७२]

दीप अनुक्रम [५६३--५६६]

दिति, 'णाणत्तं लेसासु लेसाओ जहा पढमसए'त्ति, इहाद्यपृथिवीद्वयापेक्षया तृतीयादिपृथिवीषु नानात्वं लेश्यासु भवति, ताश्च यथा प्रथमशते तथाऽध्येयाः, तत्र च सङ्ग्रहगाथेयं–"काऊ दोसु तइयाइ मीसिया नीलिया चउत्थीए । पंचमियाए मीसा कण्हा तत्तो परमकण्हा ॥ १ ॥" [द्वयोः कापोता तृतीयायां मिश्रा चतुर्थ्यां नीला पञ्चम्यां मिश्रा कृष्णा ततः परमकृष्णा ॥ १ ॥] इति 'नवरं ओहिनाणी ओहिदंसणी य न उववज्जंति'त्ति, कस्मात् ?, उच्यते, ते हि प्रायस्तीर्थकरा एव, ते च चतुर्थ्या उद्वृत्ता नोत्पद्यन्त इति, 'जाव अपइट्ठाणे'त्ति इह यावत्करणात् 'काले महाकाले रोरुए महारोरुए'त्ति दृश्यम्, इह च मध्यम एव सङ्ग्रहेयविस्तृत इति, 'नवरं तिसु णाणेसु न उववज्जंति न उव्वट्टंति'त्ति सम्यक्त्वभ्रष्टानामेव तत्रोत्पादात् तत उद्वर्त्तनाच्चाद्येषु त्रिषु ज्ञानेषु नोत्पद्यन्ते नापि चोद्वर्त्तन्त इति 'पन्नत्ताएसु तहेव अत्थि'त्ति एतेषु पञ्चसु नरकावासेषु कियन्त आभिनिबोधिकज्ञानिनः श्रुतज्ञानिनोऽवधिज्ञानिनश्च प्रज्ञप्ताः ? इत्यत्र तृतीयगमे तथैव–प्रथमादिपृथिवीष्विव सन्ति, तत्रोत्पन्नानां सम्यग्दर्शनलाभे आभिनिबोधिकादिज्ञानत्रयभावादिति ॥ अथ रत्नप्रभादिनारकवक्तव्यतामेव सम्यग्दृष्ट्यादीनाश्रित्याह—'इमीसे ण'मित्यादि, 'नो सम्मामिच्छादिट्ठी उववज्जंति'त्ति "न सम्ममिच्छो कुणइ काल" [सम्यग्मिथ्यादृग् न करोति कालम्] मिति वचनात् मिश्रदृष्टयो न म्रियन्ते नापि तद्भवप्रत्ययं तेषामवधिज्ञानं स्यात् येन मिश्रदृष्टयः सन्तस्ते उत्पद्येरन्, 'सम्मामिच्छदिट्ठीहिं नेरइएहिं अविरहिया विरहिया व'त्ति कादाचित्कत्वेन तेषां विरहसंभवादिति ॥ अथ नारकवक्तव्यतामेव भङ्ग्यन्तरेणाह— 'से नूण'मित्यादि, 'लेसट्ठाणेसु'त्ति लेश्याभेदेषु 'संकिलिस्समाणेसु'त्ति अविशुद्धिं गच्छत्सु 'कण्हलेसं परिणमइ'त्ति

॥६००॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

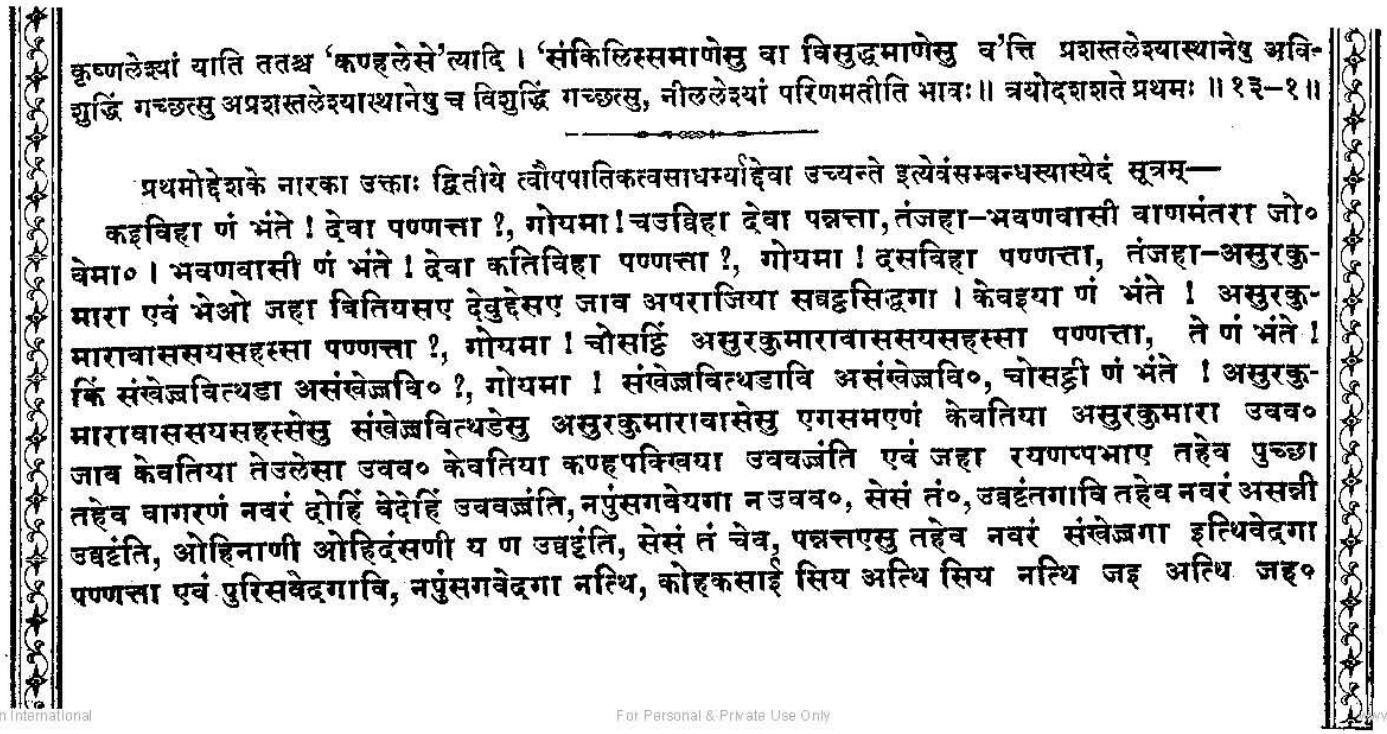

कृष्णलेश्यां याति ततश्च 'कण्हलेसे'त्यादि । 'संकिलिस्समाणेसु वा विसुद्धमाणेसु व'त्ति प्रशस्तलेश्यास्थानेषु अविशुद्धिं गच्छत्सु अप्रशस्तलेश्यास्थानेषु च विशुद्धिं गच्छत्सु, नीललेश्यां परिणमतीति भावः॥ त्रयोदशशते प्रथमः ॥ १३–१॥

प्रथमोद्देशके नारका उक्ताः द्वितीये त्वौपपातिकत्वसाधर्म्याद्देवा उच्यन्ते इत्येवंसम्बन्धस्यास्येदं सूत्रम्—

कइविहा णं भंते ! देवा पण्णत्ता ?, गोयमा ! चउव्विहा देवा पन्नत्ता, तंजहा–भवणवासी वाणमंतरा जो० वेमा० । भवणवासी णं भंते ! देवा कतिविहा पण्णत्ता ?, गोयमा ! दसविहा पण्णत्ता, तंजहा–असुरकुमारा एवं भेओ जहा बितियसए देवुद्देसए जाव अपराजिया सव्वट्ठसिद्धगा । केवइया णं भंते ! असुरकुमारावाससयसहस्सा पण्णत्ता ?, गोयमा ! चोसट्ठिं असुरकुमारावाससयसहस्सा पण्णत्ता, ते णं भंते ! किं संखेज्जवित्थडा असंखेज्जवि० ?, गोयमा ! संखेज्जवित्थडावि असंखेज्जवि०, चोसट्ठीए णं भंते ! असुरकुमारावाससयसहस्सेसु संखेज्जवित्थडेसु असुरकुमारावासेसु एगसमएणं केवतिया असुरकुमारा उवव० जाव केवतिया तेउलेसा उवव० केवतिया कण्हपक्खिया उववज्जंति एवं जहा रयणप्पभाए तहेव पुच्छा तहेव वागरणं नवरं दोहिं वेदेहिं उववज्जंति, नपुंसगवेयगा न उवव०, सेसं तं०, उव्वट्टंतगावि तहेव नवरं असन्नी उव्वट्टंति, ओहिनाणी ओहिदंसणी य ण उव्वट्टंति, सेसं तं चेव, पन्नत्तएसु तहेव नवरं संखेज्जगा इत्थिवेदगा पण्णत्ता एवं पुरिसवेदगावि, नपुंसगवेदगा नत्थि, कोहकसाई सिय अत्थि सिय नत्थि जइ अत्थि जह०

व्या० १०१

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र त्रयोदशमे शतके प्रथम-उद्देशक: परिसमाप्त:

अथ त्रयोदशमे शतके द्वितीय-उद्देशक: आरब्ध:

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [४७३]

दीप अनुक्रम [५६७]

एक्को वा दो वा तिन्नि वा उक्कोसेणं संखेज्जा पण्णत्ता एवं माण माया संखेज्जा लोभकसाई पण्णत्ता सेसं तं चेव तिसुवि गमएसु संखेज्जेसु चत्तारि लेस्साओ भाणियव्वाओ, एवं असंखेज्जवित्थडेसुवि नवरं तिसुवि गमएसु असंखेज्जा भाणियव्वा जाव असंखेज्जा अचरिमा पण्णत्ता । केवतिया णं भंते ! नागकुमारावास० ? एवं जाव थणियकुमारा नवरं जत्थ जत्तिया भवणा ॥ केवतिया णं भंते ! वाणमंतरावाससयसहस्सा पन्नत्ता ?, गोयमा ! असंखेज्जा वाणमंतरावाससयसहस्सा पन्नत्ता, ते णं भंते ! किं संखेज्जवित्थडा असंखेज्जवित्थडा ?, गोयमा ! संखेज्जवित्थडा नो असंखेज्जवित्थडा, संखेज्जेसु णं भंते ! वाणमंतरावाससयसहस्सेसु एगसमएणं केवतिया वाणमंतरा उवव० ?, एवं जहा असुरकुमाराणं संखेज्जवित्थडेसु तिन्नि गमगा तहेव भाणियव्वा वाणमंतराणवि तिन्नि गमगा । केवतिया णं भंते ! जोतिसियविमाणावाससयसहस्सा पण्णत्ता ?, गोयमा ! असंखेज्जा जोइसियविमाणावाससयसहस्सा पण्णत्ता, ते णं भंते ! किं संखेज्जवित्थडा० ?, एवं जहा वाणमंतराणं तहा जोइसियाणवि तिन्नि गमगा भाणियव्वा नवरं एगा तेउलेस्सा, उववज्जंतेसु पन्नत्तेसु य असन्नी नत्थि, सेसं तं चेव ॥ सोहम्मे णं भंते ! कप्पे केवतिया विमाणावाससयसहस्सा पन्नत्ता ?, गोयमा ! बत्तीसं विमाणावाससयसहस्सा पण्णत्ता, ते णं भंते ! किं संखेज्जवित्थडा असंखेज्जवित्थडा ?, गोयमा ! संखेज्जवित्थडावि असंखेज्जवित्थडावि, सोहम्मे णं भंते ! कप्पे बत्तीसाए विमाणावाससयसहस्सेसु संखेज्जवित्थडेसु विमाणेसु एगसमएणं केवतिया सोहम्मा देवा उववज्जंति ? केवतिया तेउलेसा उववज्जंति ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

एवं जहा जोइसियाणं तिन्नि गमगा तहेव तिन्नि गमगा भाणियव्वा नवरं तिसुवि संखेज्जा भाणियव्वा, ओहिनाणी ओहिदंसणी य चयावेयव्वा, सेसं तं चेव। असंखेज्जवित्थडेसु एवं चेव तिन्नि गमगा णवरं तिसुवि गमएसु असंखेज्जा भाणियव्वा, ओहिनाणी य ओहिदंसणी य संखेज्जा चयंति, सेसं तं चेव, एवं जहा सोहम्मे वत्तव्वया भणिया तहा ईसाणेवि छ गमगा भाणियव्वा, सणंकुमारे एवं चेव नवरं इत्थीवेयगा न उववज्जंति पन्नत्तेसु य न भण्णंति, असन्नी तिसुवि गमएसु न भण्णंति, सेसं तं चेव, एवं जाव सहस्सारे, नाणत्तं विमाणेसु लेस्सासु य, सेसं तं चेव ॥ आणयपाणयेसु णं भंते ! कप्पेसु केवतिया विमाणावाससया पण्णत्ता ?, गोयमा ! चत्तारि विमाणावाससया पण्णत्ता, ते णं भंते ! किं संखेज्ज० असंखे० गोयमा ! संखेज्जवित्थ० असंखेज्जवि० एवं संखेज्जवित्थडेसु तिन्नि गमगा जहा सहस्सारे असंखेज्जवित्थडे० उववज्जंतेसु य चयंतेसु य एवं चेव संखेज्जा भाणियव्वा पन्नत्तेसु असंखेज्जा नवरं नोइंदियोवउत्ता अणंतरोववन्नगा अणंतरोगाढगा अणंतराहारगा अणंतरपज्जत्तगा य एएसिं जहन्नेणं एक्को वा दो वा तिन्नि वा उक्कोसेणं संखेज्जा पं० सेसा असंखेज्जा भाणियव्वा। आरणच्चुएसु एवं चेव जहा आणयपाणएसु नाणत्तं विमाणेसु, एवं गेवेज्जगावि। कति णं भंते ! अणुत्तरविमाणा पन्नत्ता ?, गोयमा ! पंच अणुत्तरविमाणा पन्नत्ता, ते णं भंते ! किं संखेज्जवित्थडा असंखेज्जवित्थडा ?, गोयमा ! संखेज्जवित्थडे य असंखेज्जवित्थडा य, पंचसु णं भंते ! अणुत्तरविमाणेसु संखेज्जवित्थडे विमाणे एगसमएणं केवतिया अणुत्तरोववाइया देवा उवव० ?, केवतिया सुक्कलेस्सा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥६०२॥

उवव० ? पुच्छा, तहेव गोयमा ! पंचसु णं अणुत्तरविमाणेसु संखेज्जवित्थडे अणुत्तरविमाणे एगसमएणं जह० एक्को वा दो वा तिन्नि वा उक्कोसेणं संखेज्जा अणुत्तरोववाइया देवा उववज्जंति एवं जहा गेवेज्जविमाणेसु संखेज्जवित्थडेसु नवरं किण्हपक्खिया अभवसिद्धिया तिसु अन्नाणेसु एए न उववज्जंति न चयंति न पन्नत्तएसु भाणियव्वा अचरिमावि खोडिज्जंति जाव संखेज्जा चरिमा पं० सेसं तं०, असंखेज्जवित्थडेसुवि एए न भन्नंति नवरं अचरिमा अत्थि, सेसं जहा गेवेज्जएसु असंखेज्जवित्थडेसु जाव असंखेज्जा अचरिमा प० । चोसट्ठीए णं भंते ! असुरकुमारावाससयसहस्सेसु संखेज्जवित्थडेसु असुरकुमारावासेसु किं सम्मद्दिट्ठी असुरकुमारा उवव०मिच्छादिट्ठी एवं जहा रयणप्पभाए तिन्नि आलावगा भणिया तहा भाणियव्वा, एवं असंखेज्जवित्थडेसुवि तिन्नि गमगा, एवं जाव गेवेज्जवि० अणुत्तरवि० एवं चेव, नवरं तिसुवि आलावएसु मिच्छादिट्ठी सम्मामिच्छादिट्ठी य न भन्नंति, सेसं तं चेव । से नूणं भंते ! कण्हलेस्सा नीलजाव सुक्कलेस्से भवित्ता कण्हलेस्सेसु देवेसु उवव० ?, हंता गोयमा ! एवं जहेव नेरइएसु पढमे उद्देसए तहेव भाणियव्वं, नीललेसाएवि जहेव नेरइयाणं जहा नीललेस्साए, एवं जाव पम्हलेस्सेसु सुक्कलेस्सेसु एवं चेव, नवरं लेस्सट्ठाणेसु विसुज्झमाणेसु वि० २ सुक्कलेस्सं परिणमति सु० २ सुक्कलेस्सेसु देवेसु उववज्जंति, से तेणट्ठेणं जाव उववज्जंति । सेवं भंते ! सेवं भंते ! (सूत्रं ४७३) ॥ १३–२ ॥

'कइविहे'त्यादि, 'संखेज्जवित्थडावि असंखेज्जवित्थडावि'त्ति इह गाथा—"जंबुद्दीवसमा खलु भवणा जे हुंति

१३ शतके २ उद्देशः देवेष्वावासोत्पादादि सू ४७३

॥६०२॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

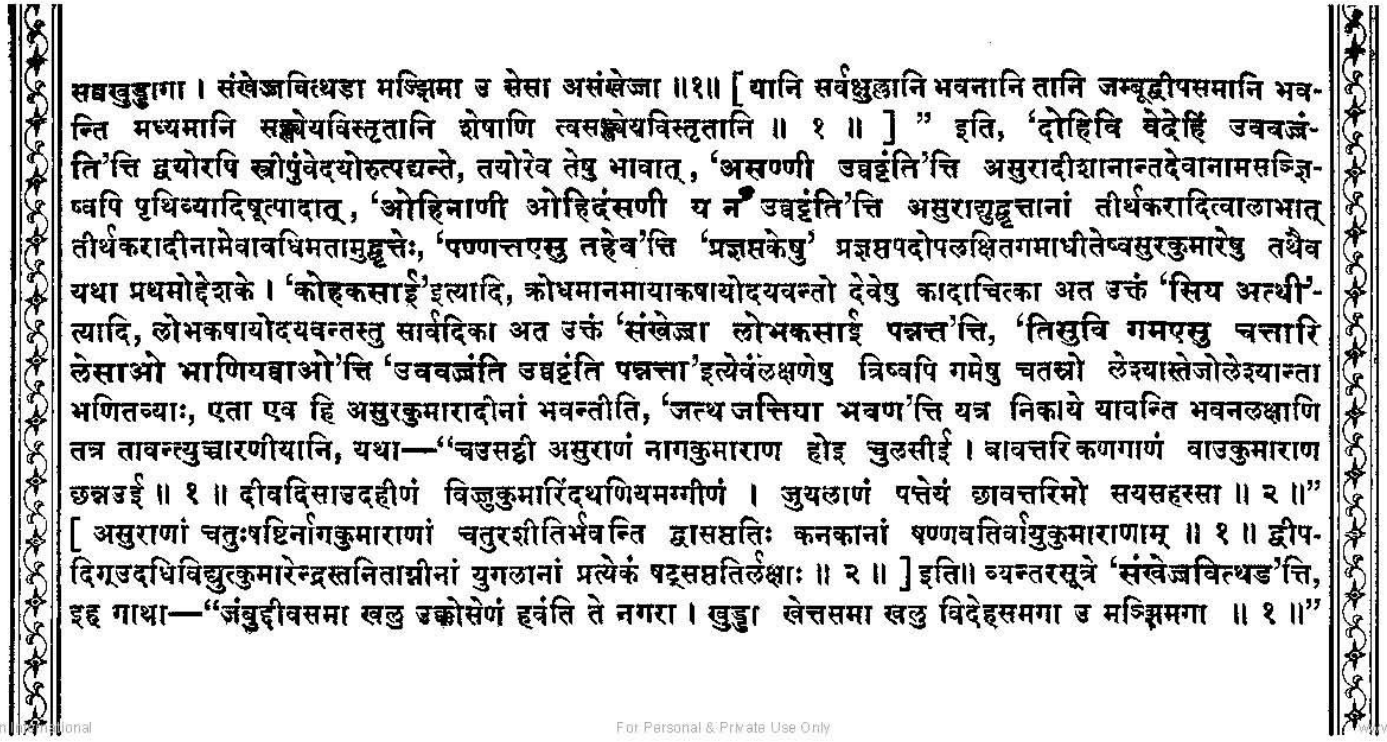

सबखुड्डागा । संखेज्जवित्थडा मज्झिमा उ सेसा असंखेज्जा ॥१॥ [थानि सर्वक्षुल्लानि भवनानि तानि जम्बूद्वीपसमानि भवन्ति मध्यमानि सङ्ख्येयविस्तृतानि शेषाणि त्वसङ्ख्येयविस्तृतानि ॥ १ ॥] " इति, 'दोहिवि वेदेहिं उववज्जंति'त्ति द्वयोरपि स्त्रीपुंवेदयोरुत्पद्यन्ते, तयोरेव तेषु भावात्, 'असण्णी उववट्टंति'त्ति असुरादीशानान्तदेवानामसञ्ज्ञिष्वपि पृथिव्यादिषूत्पादात्, 'ओहिनाणी ओहिदंसणी य न उववट्टंति'त्ति असुराद्युद्वृत्तानां तीर्थकरादित्वालाभात् तीर्थकरादीनामेवावधिमतामुद्वृत्तेः, 'पण्णत्तएसु तहेव'त्ति 'प्रज्ञप्तकेषु' प्रज्ञप्तपदोपलक्षितगमाधीतेष्वसुरकुमारेषु तथैव यथा प्रथमोद्देशके । 'कोहकसाई'इत्यादि, क्रोधमानमायाकषायोदयवन्तो देवेषु कादाचित्का अत उक्तं 'सिय अत्थी'त्यादि, लोभकषायोदयवन्तस्तु सार्वदिका अत उक्तं 'संखेज्जा लोभकसाई पन्नत्त'त्ति, 'तिसुवि गमएसु चत्तारि लेसाओ भाणियव्वाओ'त्ति 'उववज्जंति उववट्टंति पन्नत्ता'इत्येवंलक्षणेषु त्रिष्वपि गमेषु चतस्रो लेश्यास्तेजोलेश्यान्ता भणितव्याः, एता एव हि असुरकुमारादीनां भवन्तीति, 'जत्थ जत्तिया भवण'त्ति यत्र निकाये यावन्ति भवनलक्षाणि तत्र तावन्त्युच्चारणीयानि, यथा—"चउसट्ठी असुराणं नागकुमाराण होइ चुलसीई । बावत्तरि कणगाणं वाउकुमाराण छन्नउई ॥ १ ॥ दीवदिसाउदहीणं विज्जुकुमारिंदथणियमग्गीणं । जुयलाणं पत्तेयं छावत्तरिमो सयसहस्सा ॥ २ ॥" [असुराणां चतुःषष्टिर्नागकुमाराणां चतुरशीतिर्भवन्ति द्वासप्ततिः कनकानां षण्णवतिर्वायुकुमाराणाम् ॥ १ ॥ द्वीपदिग्उदधिविद्युत्कुमारेन्द्रस्तनिताग्नीनां युगलानां प्रत्येकं षट्सप्ततिर्लक्षाः ॥ २ ॥] इति॥ व्यन्तरसूत्रे 'संखेज्जवित्थड'त्ति, इह गाथा—"जंबुदीवसमा खलु उक्कोसेणं हवंति ते नगरा । खुड्डा खेत्तसमा खलु विदेहसमगा उ मज्झिमगा ॥ १ ॥"

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

[उत्कृष्टेन जम्बूद्वीपसमानि तानि नगराणि भरतसमानि क्षुल्लानि विदेहसमानि मध्यमानि ॥१॥] इति ॥ ज्योतिष्कसूत्रे सङ्ख्यातविस्तृता विमानावासाः 'एगसट्ठिभागं काऊण जोयण'मित्यादिना ग्रन्थेन प्रमातव्याः 'नवरं एगा तेउलेस्स'त्ति व्यन्तरेषु लेश्याचतुष्टयमुक्तमेतेषु तु तेजोलेश्यैवैका वाच्या, तथा 'उववज्जंतेसु पन्नत्तेसु य असन्नी नत्थि'त्ति व्यन्तरेष्वसञ्ज्ञिन उत्पद्यन्त इत्युक्तमिह तु तन्निषेधः, प्रज्ञप्तेष्वपीह तन्निषेध उत्पादाभावादिति ॥ सौधर्म्मसूत्रे 'ओहिनाणी' ततश्च्युता यतस्तीर्थकरादयो भवन्त्यतोऽवधिज्ञानादयश्चावयितव्याः 'ओहिनाणी ओहिदंसणी य संखेज्जा चयंति'त्ति सङ्ख्यातानामेव तीर्थकरादित्वेनोत्पादादिति । 'छ गमग'त्ति उत्पादादयस्त्रयः सङ्ख्यातविस्तृतानाश्रित्य अत एव च त्रयोऽसङ्ख्यातविस्तृतानाश्रित्य एवं षड् गमाः, 'नवरं इत्थिवेयगे'त्यादि, स्त्रियः सनत्कुमारादिषु नोत्पद्यन्ते न च सन्ति उद्वृत्तौ तु स्युः 'असन्नी तिसुवि गमएसु न भन्नइ'त्ति सनत्कुमारादिदेवानां सञ्ज्ञिभ्य एवोत्पादेन च्युतानां च सञ्ज्ञिष्वेव गमनेन गमत्रयेष्वसञ्ज्ञित्वस्याभावादिति । 'एवं जाव सहस्सारे'त्ति सहस्रारान्तेषु तिरश्चामुत्पादेनासङ्ख्यातानां त्रिष्वपि गमेषु भावादिति । 'पाणत्तं विमाणेसु लेसासु य'त्ति तत्र विमानेषु नानात्वं 'बत्तीसअट्ठचीसे'त्यादिना ग्रन्थेन समवसेयं, लेश्यासु पुनरिदं—तेऊ १ तेऊ २ तहा तेउ पम्ह ३ पम्हा ४ य पम्हसुक्का य ५ । सुक्का य ६ परमसुक्का ७ सुक्काइविमाणवासीणं ॥ १ ॥"[तेजः १ तेजः २ तथा तेजः ३ पद्मा च ४ पद्मशुक्ला च ५ शुक्ला च ६ परमशुक्ला ७ शुक्रादिविमानवासिनां (लेश्या) ॥ १ ॥] इति, इह च सर्वेष्वपि शुक्रादिदेवस्थानेषु परमशुक्लेति ॥ आनतादिसूत्रे 'संखेज्जवित्थडेसु'इत्यादि, उत्पादेऽवस्थाने च्यवने च सङ्ख्यातविस्तृतत्वाद्विमानानां सङ्ख्याता एव भवन्तीति

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावः, असङ्ख्यातविस्तृतेषु पुनरुत्पादच्यवनयोः सङ्ख्याता एव, यतो गर्भजमनुष्येभ्य एवानतादिषूत्पद्यन्ते ते च सङ्ख्याता एव, तथाऽऽनतादिभ्यश्च्युता गर्भजमनुष्येष्वेवोत्पद्यन्तेऽतः समयेन सङ्ख्यातानामेवोत्पादच्यवनसम्भवः, अवस्थितिस्त्वसङ्ख्यातानामपि स्यादसङ्ख्यातजीवितत्वेनैकदैव जीवितकालेऽसङ्ख्यातानामुत्पादादिति । 'पन्नत्तेसु असंखेज्जा नवरं नोइंदिओवउत्ते'त्यादि प्रज्ञप्तकगमेऽसङ्ख्येया वाच्याः केवलं नोइन्द्रियोपयुक्तादिषु पञ्चसु पदेषु सङ्ख्याता एव, तेषामुत्पादावसर एव भावाद्, उत्पत्तिश्च सङ्ख्यातानामेवेति दर्शितं प्रागिति, 'पंच अणुत्तरोववाइय'त्ति तत्र मध्यमं सङ्ख्यातविस्तृतं योजनलक्षप्रमाणत्वादिति । 'नवरं कण्हपक्खिए'त्यादि, इह सम्यग्दृष्टीनामेवोत्पादात् कृष्णपाक्षिकादिपदानां गमत्रयेऽपि निषेधः, 'अचरिमावि खोडिज्जंति'त्ति येषां चरमोऽनुत्तरदेवभवः स एव ते चरमास्तदितरे त्वचरमास्ते च निषेधनीयाः, यतश्चरमा एव मध्यमे विमाने उत्पद्यन्त इति । 'असंखेज्जवित्थडेसुवि एए न भन्नंति'ति इहैते कृष्णपाक्षिकादयः 'नवरं अचरिमा अत्थि'त्ति यतो बाह्यविमानेषु पुनरुत्पद्यन्त इति । 'तिन्नि आलावग'त्ति सम्यग्दृष्टिमिथ्यादृष्टिसम्यग्मिथ्यादृष्टिविषया इति । 'नवरं तिसुवि आलावगेसु'इत्यादि, उप्पत्तीए चवणे पन्नत्तालावए य मिथ्यादृष्टिः सम्यग्मिथ्यादृष्टिश्च न वाच्यः, अनुत्तरसुरेषु तस्यासम्भवादिति॥ त्रयोदशशते द्वितीयः ॥ १३–२ ॥

अनन्तरोद्देशके देववक्तव्यतोक्ता, देवाश्च प्रायः परिचारणावन्त इति परिचारणानिरूपणार्थं तृतीयोद्देशकमाह, तस्य चेदमादि सूत्रम्—

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र त्रयोदशमे शतके द्वितीय-उद्देशक: परिसमाप्त:

अथ त्रयोदशमे शतके तृतीय-उद्देशक: आरब्ध:

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [४७४]

दीप अनुक्रम [५६८]

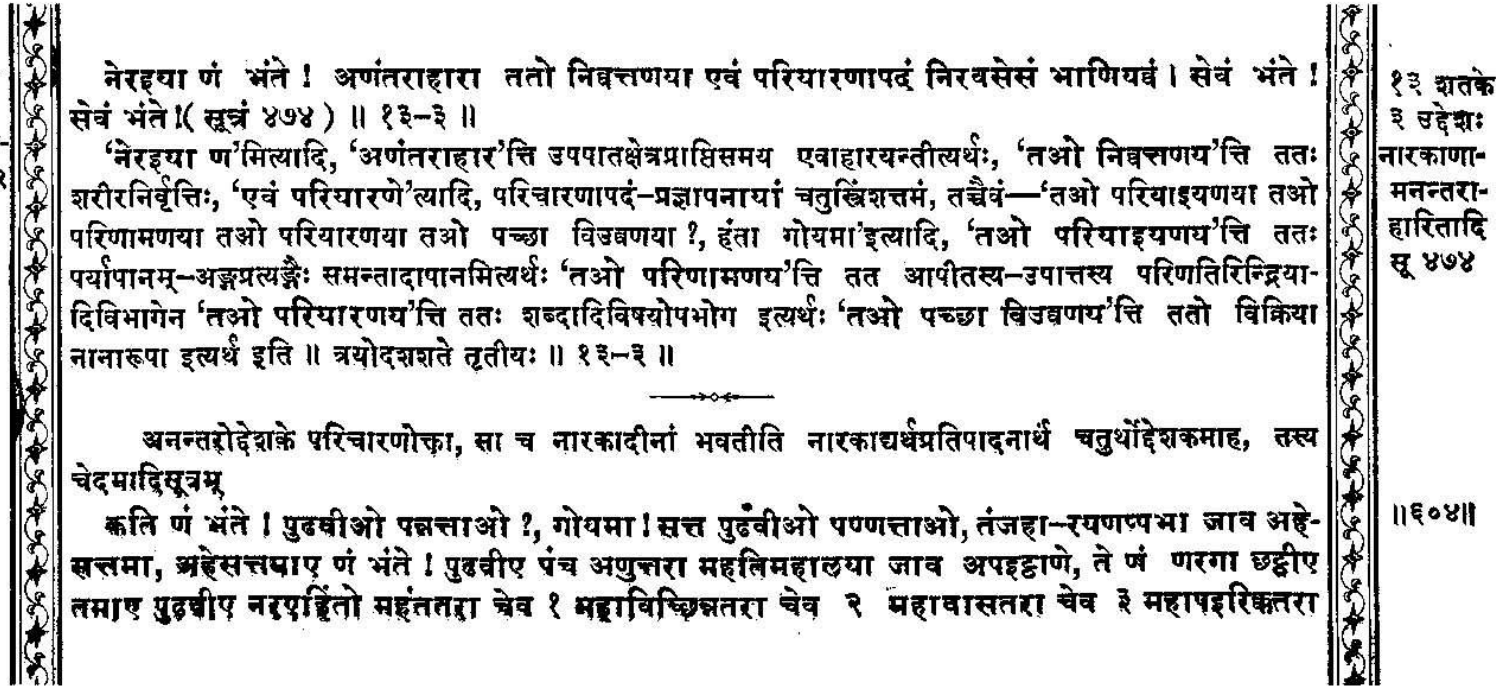

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥६०४॥

नेरइया णं भंते ! अणंतराहारा ततो निवत्तणया एवं परियारणापदं निरवसेसं भाणियवं । सेवं भंते ! सेवं भंते !(सूत्रं ४७४) ॥ १३–३ ॥

'नेरइया ण'मित्यादि, 'अणंतराहार'त्ति उपपातक्षेत्रप्राप्तिसमय एवाहारयन्तीत्यर्थः, 'तओ निवत्तणय'त्ति ततः शरीरनिर्वृत्तिः, 'एवं परियारणे'त्यादि, परिचारणापदं–प्रज्ञापनायां चतुस्त्रिंशत्तमं, तच्चैवं—'तओ परियाइयणया तओ परिणामणया तओ परियारणया तओ पच्छा विउव्वणया ?, हंता गोयमा'इत्यादि, 'तओ परियाइयणय'त्ति ततः पर्यापानम्–अङ्गप्रत्यङ्गैः समन्तादापानमित्यर्थः 'तओ परिणामणय'त्ति तत आपीतस्य–उपात्तस्य परिणतिरिन्द्रिया-दिविभागेन 'तओ परियारणय'त्ति ततः शब्दादिविषयोपभोग इत्यर्थः 'तओ पच्छा विउव्वणय'त्ति ततो विक्रिया नानारूपा इत्यर्थं इति ॥ त्रयोदशशते तृतीयः ॥ १३–३ ॥

अनन्तरोद्देशके परिचारणोक्ता, सा च नारकादीनां भवतीति नारकाद्यर्थप्रतिपादनार्थं चतुर्थोद्देशकमाह, तस्य चेदमादिसूत्रम्

कति णं भंते ! पुढवीओ पन्नत्ताओ ?, गोयमा ! सत्त पुढवीओ पण्णत्ताओ, तंजहा–रयणप्पभा जाव अहे-सत्तमा, अहेसत्तमाए णं भंते ! पुढवीए पंच अणुत्तरा महतिमहालया जाव अपइट्ठाणे, ते णं णरगा छट्ठीए तमाए पुढवीए नरएहिंतो महंततरा चेव १ महाविच्छिन्नतरा चेव २ महावासतरा चेव ३ महापइरिक्कतरा

१३ शतके ३ उद्देशः नारकाणा-मनन्तरा-हारितादि सू ४७४

॥६०४॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र त्रयोदशमे शतके तृतीय-उद्देशक: परिसमाप्त:

अथ त्रयोदशमे शतके चतुर्थ-उद्देशक: आरब्ध:

चेव ४, णो तहा महापवेसणतरा चेव १ नो आइन्नतरा चेव २ नो आउलतरा चेव ३ अणोयणतरा चेव ४, तेसु णं नरएसु नेरतिया छट्ठीए तमाए पुढवीए नेरइएहिंतो महाकम्मतरा चेव १ महाकिरियतरा चेव २ महासवतरा चेव ३ महावेयणतरा चेव ४ नो तहा अप्पकम्मतरा चेव १ नो अप्पकिरियतरा चेव २ नो अप्पासवतरा चेव ३ नो अप्पवेदणतरा चेव ४ अप्पड्ढियतरा चेव १ अप्पजुत्तियतरा चेव २ नो तहा महड्ढियतरा चेव १ नो महजुइयतरा चेव २। छट्ठीए णं तमाए पुढवीए एगे पंचूणे निरयावाससयसहस्से पण्णत्ते, ते णं नरगा अहेसत्तमाए पुढवीए नेरइएहिंतो नो तहा महत्तरा चेव महाविच्छिन्न० ४ महप्पवेसणतरा चेव आइन्न० ४ तेसु णं नरएसु णं नेरतिया अहेसत्तमाए पुढवीए नेरइएहिंतो अप्पकम्मतरा चेव अप्पकिरि० ४ नो तहा महाकम्मतरा चेव महाकिरिय ४ महड्ढियतरा चेव महाजुइयतरा चेव नो तहा अप्पड्ढियतरा चेव अप्पजुइयतरा चेव। छट्ठीए णं तमाए पुढवीए नरगा पंचमाए धूमप्पभाए पु० नरएहिंतो महत्तरा चेव ४ नो तहा महप्पवेसणतरा चेव ४, तेसु णं नरएसु नेरतिया पंचमाए धूमप्पभाए पुढवीएहिंतो महाकम्मतरा चेव ४ नो तहा अप्पकम्मतरा चेव ४ अप्पड्ढियतरा चेव २ नो तहा महड्ढियतरा चेव २, पंचमाए णं धूमप्पभाए पुढवीए तिन्नि निरयावाससयसहस्सा पन्नत्ता एवं जहा छट्ठीए भणिया एवं सत्तवि पुढवीओ परोप्परं भण्णंति जाव रयणप्पभंति जाव नो तहा महड्ढियतरा चेव अप्पजुत्तियतरा चेव (सूत्रं ४७५)॥

'कइ ण'मित्यादि, इह च द्वारगाथे क्वचिद् दृश्येते, तद्यथा—"नेरइय १ फास २ पणिही ३ निरयंते ४ चेव लोय-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [४७५]

दीप अनुक्रम [५६९]

मज्झे य ५। दिसिविदिसाण य पवहा ६ पवत्तणं अत्थिकाएहिं ७ ॥ १ ॥ अत्थी पएसफुसणा ८ ओगाहणया य जीव-मोगाढा। अत्थि पएसनिसीयण बहुस्समे लोगसंठाणे ॥ २ ॥" इति, अनयोश्चार्थ उद्देशकार्थाधिगमावगम्य एवेति, 'महंततरा चेव'त्ति आयामतः 'विच्छिन्नतरा चेव'त्ति विष्कम्भतः 'महावासतरा चेव'त्ति अवकाशो–बहूनां विव-क्षितद्रव्याणामवस्थानयोग्यं क्षेत्रं महानवकाशो येषु ते महावकाशाः अतिशयेन महावकाशा महावकाशतराः, ते च महाजनसङ्कीर्णा अपि भवन्तीत्यत उच्यते 'महापइरिक्कतरा चेव'त्ति महत्प्रतिरिक्तं–विजनमतिशयेन येषु ते तथा 'नो तहा महापवेसणतरा चेव'त्ति 'नो' नैव 'तथा' तेन प्रकारेण यथा षष्ठपृथिवीनरका अतिशयेन महत्प्रवेशनं–गत्य-न्तरान्नरकगतौ जीवानां प्रवेशो येषु ते तथा, षष्ठपृथिव्यपेक्षयाऽसङ्ख्यगुणहीनत्वात्तन्नारकाणामिति, नोशब्द उत्तरपदद्व-येऽपि सम्बन्धनीयः, यत एव नो महाप्रवेशनतरा अत एव 'नो आइन्नतरा चेव'त्ति नात्यन्तमाकीर्णाः–सङ्कीर्णा नारकैः 'नो आउलतरा चेव'त्ति इतिकर्त्तव्यतया ये आकुला नारकलोकास्तेषामतिशयेन योगादाकुलतरास्ततो नोशब्दयोगः, किमुक्तं भवति ?–'अणोमाणतरा चेव'त्ति अतिशयेनासङ्कीर्णा इत्यर्थः क्वचित्पुनरिदमेवं दृश्यते–'अणोयणतरा चेव'-त्ति तत्र चानोदनतराः व्याकुलजनाभावादतिशयेन परस्परं नोदनवर्जिता इत्यर्थः 'महाकम्मतर'त्ति आयुष्कवेदनीया-दिकर्म्मणां महत्त्वात् 'महाकिरियतर'त्ति कायिक्यादिक्रियाणां महत्त्वात् तत्काले कायमहत्त्वात्पूर्वकाले च महारम्भा-दित्वाद् अत एव महाश्रवतरा इति 'महावेयणतर'त्ति महाकर्मत्वात्, 'नो तहे'त्यादिना निषेधतस्तदेवोक्तं, विधिप्रति-षेधतो वाक्यप्रवृत्तेः, नोशब्दश्चेह प्रत्येकं सम्बन्धनीयः पदचतुष्टय इति, तथा 'अप्पड्ढियतर'त्ति अवध्यादिऋद्धेरल्प-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

त्वात् 'अप्पज्जुइयतर'त्ति दीप्तेरभावात्, एतदेव व्यतिरेकेणोच्यते—'नो तहामहड्ढिए'इत्यादि, नोशब्दः पदद्वयेऽपि सम्बन्धनीयः ॥

रयणप्पभापुढविनेरइया णं भंते ! केरिसयं पुढविफासं पच्चणुब्भवमाणा विहरंति ?, गोयमा ! अणिट्ठं जाव अमणामं एवं जाव अहेसत्तमपुढविनेरइया एवं आउफासं एवं जाव वणस्सइफासं (सूत्रं ४७६) ॥ इमा णं भंते ! रयणप्पभापुढवी दोच्चं सक्करप्पभं पुढविं पणिहाय सव्वमहंतिया बाहल्लेणं सव्वखुड्डिया सव्वंतेसु एवं जहा जीवाभिगमे बितिए नेरइयउद्देसए ॥ (सूत्रं ४७७) ॥ इमीसे णं भंते ! रयणप्पभाए पुढवीए णिरयपरिसामंतेसु जे पुढविक्काइया एवं जहा नेरइयउद्देसए जाव अहेसत्तमाए (सूत्रं ४७८) ॥ कहि णं भंते ! लोगस्स आयाममज्झे पण्णत्ते ?, गोयमा ! इमीसे णं रयणप्पभाए उवासंतरस्स असंखेज्जतिभागं ओगाहेत्ता एत्थ णं लोगस्स आयाममज्झे पण्णत्ते । कहि णं भंते ! अहेलोगस्स आयाममज्झे पण्णत्ते ?, गोयमा ! चउत्थीए पंकप्पभाए पुढवीए उवासंतरस्स सातिरेगं अद्धं ओगाहित्ता एत्थ णं अहेलोगस्स आयाममज्झे पण्णत्ते, कहि णं भंते ! उड्ढलोगस्स आयाममज्झे पण्णत्ते ?, गोयमा ! उप्पिं सणंकुमारमाहिंदाणं कप्पाणं हेट्ठिं बंभलोए कप्पे रिट्ठविमाणे पत्थडे एत्थ णं उड्ढलोगस्स आयाममज्झे पण्णत्ते । कहिन्नं भंते ! तिरियलोगस्स आयाममज्झे पण्णत्ते ?, गोयमा ! जंबूदीवे २ मंदरस्स पव्वयस्स बहुमज्झदेसभाए इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए उवरिमहेट्ठिल्लेसु खुड्डागपयरेसु एत्थ णं तिरियलोगस्समज्झे अट्ठपएसिए रुयए पण्णत्ते, जओ णं इमाओ

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

दस दिसाओ पवहंति, तंजहा–पुरच्छिमा पुरच्छिमदाहिणा एवं जहा दसमसए नामधेज्जंति (सूत्रं ४७९)॥ इंदा णं भंते ! दिसा किमादीया किंपवहा कतिपदेसादीया कतिपदेसुत्तरा कतिपदेसीया किंपज्जवसिया किंसंठिया पन्नत्ता ?, गोयमा ! इंदा णं दिसा रुयगादीया रुयगप्पवहा दुपएसादीया दुपएसुत्तरा लोगं पडुच्च असंखेज्जपएसिया अलोगं पडुच्च अणंतपएसिया लोगं पडुच्च साईया सपज्जवसिया अलोगं पडुच्च साईया अपज्जवसिया लोगं पडुच्च मुरजसंठिया अलोगं पडुच्च सगडुद्धिसंठिया पन्नत्ता । अग्गेयी णं भंते ! दिसा किमादीया किंपवहा कतिपएसादीया कतिपएसविच्छिन्ना कतिपएसीया किंपज्जवसिया किंसंठिया पन्नत्ता ?, गोयमा ! अग्गेयी णं दिसा रुयगादीया रुयगप्पवहा एगपएसादीया एगपएसविच्छिन्ना अणुत्तरा लोगं पडुच्च असंखेज्जपएसीया अलोगं पडुच्च अणंतपएसीया लोगं पडुच्च साइया सपज्जव० अलोगं पडुच्च साइया अपज्जवसिया छिन्नमुत्तावलिसंठिया पण्णत्ता । जमा जहा इंदा, नेरइया जहा अग्गेयी, एवं जहा इंदा तहा दिसाओ चत्तारि जहा अग्गेई तहा चत्तारिवि विदिसाओ । विमला णं भंते ! दिसा किमादीया० ?, पुच्छा जहा अग्गेयीए, गोयमा ! विमला णं दिसा रुयगादीया रुयगप्पवहा चउप्पएसादीया दुपएसविच्छिन्ना अणुत्तरा लोगं पडुच्च सेसं जहा अग्गेयीए नवरं रुयगसंठिया पण्णत्ता एवं तमावि (४८०) ॥

स्पर्शद्वारे 'एवं जाव वणस्सइफासं'ति इह यावत्करणात्तेजस्कायिकस्पर्शसूत्रं वायुकायिकस्पर्शसूत्रं च सूचितं, तत्र च कश्चिदाह–ननु सप्तस्वपि पृथिवीषु तेजस्कायिकवर्जपृथिवीकायिकादिस्पर्शो नारकाणां युक्तः येषां तासु विद्यमानत्वात्

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

बादरतेजसां तु समयक्षेत्र एव सद्भावात् सूक्ष्मतेजसां पुनस्तत्र सद्भावेऽपि स्पर्शनेन्द्रियाविषयत्वादिति, अत्रोच्यते, इह तेजस्कायिकस्येव परमाधार्मिकविनिर्मितज्वलनसदृशवस्तुनः स्पर्शः तेजस्कायिकस्पर्श इति व्याख्येयं न तु साक्षात्तेजस्कायिकस्यैव असंभवात् अथवा भवान्तरानुभूततेजस्कायिकपर्यायपृथिवीकायिकादिजीवस्पर्शापेक्षयेदं व्याख्येयमिति ॥ प्रणिधिद्वारे 'पणिहाय'त्ति प्रणिधाय–प्रतीत्य 'सव्वमहंतिय'त्ति सर्वथा महती अशीतिसहस्राधिकयोजनलक्षप्रमाणत्वाद्रत्नप्रभाबाहल्यस्य शर्कराप्रभाबाहल्यस्य च द्वात्रिंशत्सहस्राधिकयोजनलक्षमानत्वात् 'सव्वखुड्डिया सव्वंतेसु'त्ति सर्वथा लघ्वी 'सर्वान्तेषु' पूर्वापरदक्षिणोत्तरविभागेषु, आयामविष्कम्भाभ्यां रज्जुप्रमाणत्वाद्रत्नप्रभायास्ततो महत्तरत्वात् शर्कराप्रभायाः, 'एवं जहा जीवाभिगमे'इत्यादि, अनेन च यत्सूचितं तदिदं—'हंता गोयमा ! इमा णं रयणप्पभा पुढवी दोच्चं पुढविं पणिहाय जाव सव्वखुड्डिया सव्वंतेसु । दोच्चा णं भंते ! पुढवी तच्चं पुढविं पणिहाय सव्वखुड्डिया जाव सव्वंतेसु, एवं एएणं अभिलावेणं जाव छट्ठिया पुढवी अहे सत्तमं पुढविं पणिहाय जाव सव्वखुड्डिया सव्वंतेसु'त्ति ॥ निरयान्तद्वारे 'निरयपरिसामंतेसु'त्ति निरयावासानां पार्श्वत इत्यर्थः 'जहा नेरइयउद्देसए'त्ति जीवाभिगमसम्बन्धिनि, तत्र चैवमिदं सूत्रम्—'आउक्काइया तेउक्काइया वाउक्काइया वणस्सइकाइया, ते णं जीवा महाकम्मतरा चेव जाव महावेयणतरा चेव ?, हंता गोयमा !' इत्यादि ॥ लोकमध्यद्वारे 'चउत्थीए पंकप्पभाए'इत्यादि, रुचकस्याधो नवयोजनशतान्यतिक्रम्याधोलोको भवति लोकान्तं यावत्, स च सातिरेकाः सप्त रज्जवस्तन्मध्यभागः चतुर्थ्याः पञ्चम्याश्च पृथिव्या यदवकाशान्तरं तस्य सातिरेकमर्द्धमतिवाह्य भवतीति, तथा रुचकस्योपरि नवयोजनशतान्यतिक्रम्योर्द्धलोको व्यपदि-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

इयते लोकान्तमेव यावत्, स च सप्त रज्जवः किञ्चिदूनास्तस्य च मध्यभागप्रतिपादनायाह—'उप्पिं सणंकुमारमाहिंदाणं कप्पाण'मित्यादि । तथा 'उवरिमहिट्ठिल्लेसु खुड्डागपयरेसु'त्ति लोकस्य वज्रमध्यत्वाद्रत्नप्रभाया रत्नकाण्डे सर्वक्षुल्लकं प्रतरद्वयमस्ति, तयोश्चोपरिमो यत आरभ्य लोकस्योपरिमुखा वृद्धिः 'हेट्ठिल्ले'त्ति अधस्तनो यत आरभ्य लोकस्याधोमुखा वृद्धिः तयोरुपरिमाधस्तनयोः 'खुड्डागपयरेसु'त्ति क्षुल्लकप्रतरयोः सर्वलघुप्रदेशप्रतरयोः 'एत्थ णं'ति प्रज्ञापकेनोपायतः प्रदर्श्यमाने तिर्यग्लोकमध्येऽष्टप्रदेशको रुचकः प्रज्ञप्तः, यश्च तिर्यग्लोकमध्ये प्रज्ञप्तः स सामर्थ्यात्तिर्यग्लोकायाममध्यं भवत्येवेति, किम्भूतोऽसावष्टप्रदेशिको रुचकः ? इत्याह—'जओ णं इमाओ'इत्यादि, तस्य चेयं स्थापना—

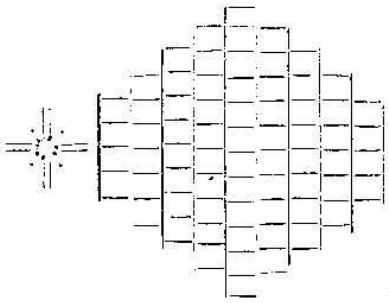

॥ दिग्विदिक्प्रवहद्वारे 'किमाइय'त्ति क आदिः—प्रथमो यस्याः सा किमादिका आदिश्च विवक्षया विपर्ययेणापि स्यादित्यत आह—'किंपवह'त्ति प्रवहति—प्रवर्त्तते अस्मादिति प्रवहः कः प्रवहो यस्याः सा तथा 'कतिपएसाइय'त्ति कति प्रदेशा आदिर्यस्याः सा कतिप्रदेशादिका 'कतिपएसुत्तर'त्ति कतिप्रदेशा उत्तरे—वृद्धौ यस्याः सा तथा 'लोगं पडुच्च मुरजसंठिय'त्ति लोकान्तस्य परिमण्डलाकारत्वेन मुरजसंस्थानता दिशः स्यात्ततश्च लोकान्तं प्रतीत्य मुरजसंस्थितेत्युक्तं, एतस्य च पूर्वां दिशमाश्रित्य चूर्णिकारकृतेयं भावना—'पुव्वुत्तराए पएसहाणीए तहा दाहिणपुव्वाए रुयगदेसे मुरजहेट्ठं दिसि अंते चउप्पएसा दट्ठवा मज्झे य तुंडं हवइ'त्ति, एतस्य चेयं स्थापना—

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

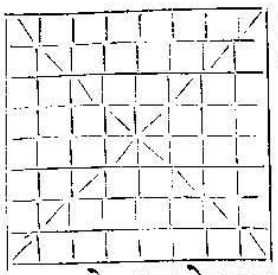

। 'अलोगं पडुच्च सगडुद्धिसंठिय'त्ति रुचके तु तुण्डं कल्पनीयं आदौ संकीर्णत्वात् तत उत्तरोत्तरं विस्तीर्णत्वादिति, 'एगपएसविच्छिन्न'त्ति, कथम् ? अत आह—'अणुत्तर'त्ति वृद्धिवर्जिता यत इति ॥

किमियं भंते ! लोएत्ति पवुच्चइ ?, गोयमा ! पंचत्थिकाया, एस णं एवतिए लोएत्ति पवुच्चइ, तंजहा–धम्मत्थिकाए अहम्मत्थिकाए जाव पोग्गलत्थिकाए । धम्मत्थिकाए णं भंते ! जीवाणं किं पवत्तति ?, गोयमा ! धम्मत्थिकाएणं जीवाणं आगमणगमण भासुम्मेसमणजोगा वइजोगा कायजोगा जे यावन्ने तहप्पगारा चला भावा सवे ते धम्मत्थिकाए पवत्तंति, गइलक्खणे णं धम्मत्थिकाए । अहम्मत्थिकाएणं जीवाणं किं पवत्तति ?, गोयमा ! अहम्मत्थिकाएणं जीवाणं ठाणनिसीयणतुयट्टण मणस्स य एगत्तीभावकरणता जे यावन्ने० थिरा भावा सवे ते अहम्मत्थिकाये पवत्तंति, ठाणलक्खणे णं अहम्मत्थिकाए ॥ आगासत्थिकाए णं भंते ! जीवाणं अजीवाण य किं पवत्तति ?, गोयमा ! आगासत्थिकाएणं जीवदव्वाण य अजीवदव्वाण य भायणभूए–एगेणवि से पुन्ने दोहिवि पुन्ने सयंपि माएज्जा । कोडिसएणवि पुन्ने कोडिसहस्संपि माएज्जा ॥१॥ अवगाहणालक्खणे णं आगासत्थिकाए ॥ जीवत्थिकाएणं भंते ! जीवाणं किं पवत्तति ?, गोयमा ! जीवत्थिकाएणं जीवे अणंताणं आभिणिबोहियनाणपज्जवाणं अणंताणं सुयनाणपज्जवाणं एवं जहा बितियसए अत्थिकायउद्देसए जाव उवओगं गच्छति, उवओ-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

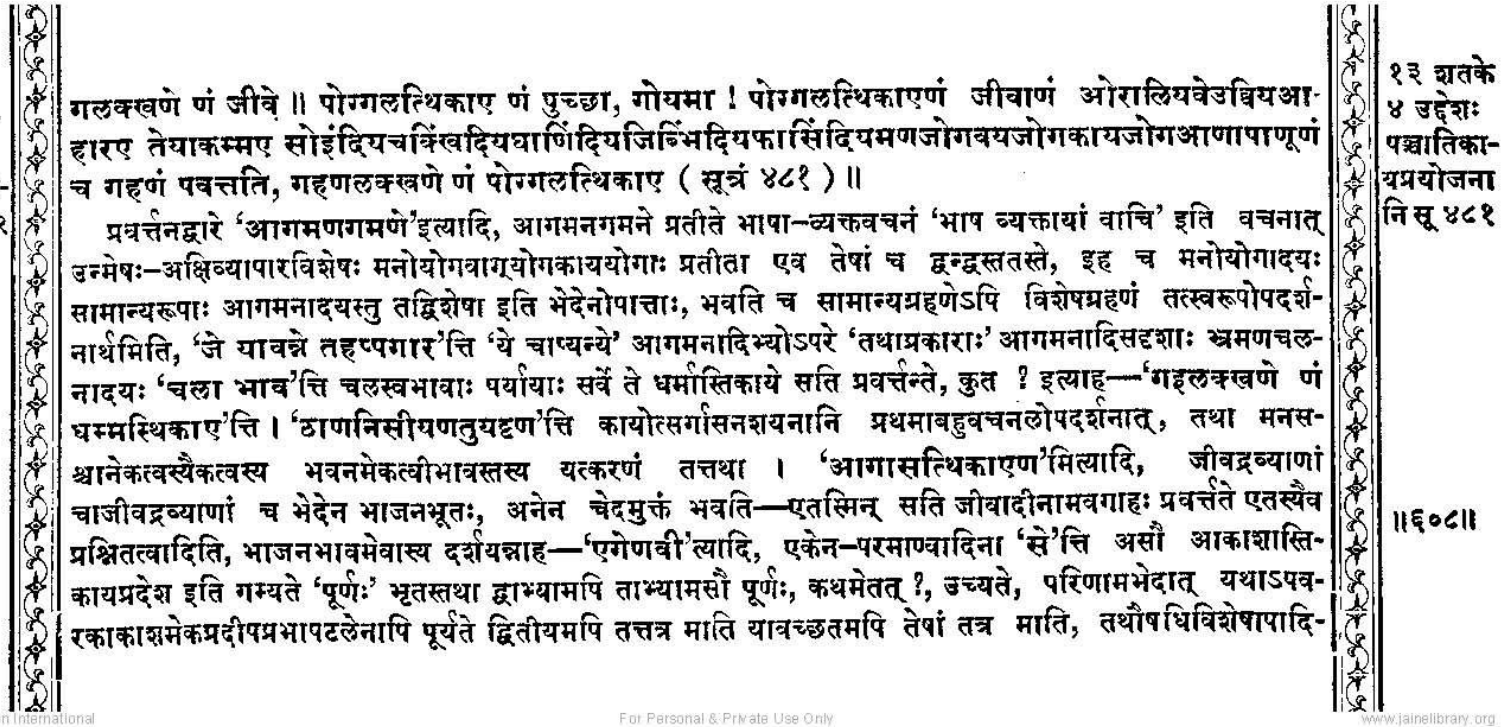

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥६०८॥

गलक्खणे णं जीवे ॥ पोग्गलत्थिकाए णं पुच्छा, गोयमा ! पोग्गलत्थिकाएणं जीवाणं ओरालियवेउव्वियआहारए तेयाकम्मए सोइंदियचक्खिंदियघाणिंदियजिब्भिंदियफासिंदियमणजोगवयजोगकायजोगआणापाणूणं च गहणं पवत्तति, गहणलक्खणे णं पोग्गलत्थिकाए (सूत्रं ४८१) ॥

प्रवर्त्तनद्वारे 'आगमणगमणे'इत्यादि, आगमनगमने प्रतीते भाषा–व्यक्तवचनं 'भाष व्यक्तायां वाचि' इति वचनात् उन्मेषः–अक्षिव्यापारविशेषः मनोयोगवाग्योगकाययोगाः प्रतीता एव तेषां च द्वन्द्वस्ततस्ते, इह च मनोयोगादयः सामान्यरूपाः आगमनादयस्तु तद्विशेषा इति भेदेनोपात्ताः, भवति च सामान्यग्रहणेऽपि विशेषग्रहणं तत्स्वरूपोपदर्शनार्थमिति, 'जे यावन्ने तहप्पगार'त्ति 'ये चाप्यन्ये' आगमनादिभ्योऽपरे 'तथाप्रकाराः' आगमनादिसदृशाः भ्रमणचलनादयः 'चला भाव'त्ति चलस्वभावाः पर्यायाः सर्वे ते धर्मास्तिकाये सति प्रवर्त्तन्ते, कुत ? इत्याह—'गहलक्खणे णं धम्मत्थिकाए'त्ति । 'ठाणनिसीयणतुयट्टण'त्ति कायोत्सर्गासनशयनानि प्रथमाबहुवचनलोपदर्शनात्, तथा मनसश्चानेकत्वस्यैकत्वस्य भवनमेकत्वीभावस्तस्य यत्करणं तत्तथा । 'आगासत्थिकाएण'मित्यादि, जीवद्रव्याणां चाजीवद्रव्याणां च भेदेन भाजनभूतः, अनेन चेदमुक्तं भवति—एतस्मिन् सति जीवादीनामवगाहः प्रवर्त्तते एतस्यैव प्रश्नितत्वादिति, भाजनभावमेवास्य दर्शयन्नाह—'एगेणवी'त्यादि, एकेन–परमाण्वादिना 'से'त्ति असौ आकाशास्तिकायप्रदेश इति गम्यते 'पूर्णः' भृतस्तथा द्वाभ्यामपि ताभ्यामसौ पूर्णः, कथमेतत् ?, उच्यते, परिणामभेदात् यथाऽपवरकाकाशमेकप्रदीपप्रभापटलेनापि पूर्यते द्वितीयमपि तत्तत्र माति यावच्छतमपि तेषां तत्र माति, तथौषधिविशेषादि-

१३ शतके ४ उद्देशः पञ्चास्तिकायप्रयोजनानि सू ४८१

॥६०८॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	***अत्र शिर्षक-स्थाने मूल-संपादने एका सामान्य स्खलना वर्तते- 'पंचास्तिकाय' स्थाने 'पंचातिकाय' मुद्रितं

तपरिणामादेकत्र पारदकर्षे सुवर्णकर्षशतं प्रविशति, पारदकर्षीभूतं च सदौषधिसामर्थ्यात् पुनः पारदस्य कर्षः सुवर्णस्य च कर्षशतं भवति विचित्रत्वात्पुद्गलपरिणामस्येति, 'अवगाहणालक्खणे णं'ति इहावगाहना–आश्रयभावः ॥ 'जीवत्थिकाएण'मित्यादि, जीवास्तिकायेनेति अन्तर्भूतभावप्रत्ययत्वाज्जीवास्तिकायत्वेन जीवतयेत्यर्थः भदन्त ! जीवानां किं प्रवर्त्तते ? इति प्रश्नः, उत्तरं तु प्रतीतार्थमेवेति ॥ 'पोग्गलत्थिकाएण'मित्यादि, इहौदारिकादिशरीराणां श्रोत्रेन्द्रियादीनां मनोयोगान्तानामानप्राणानां च ग्रहणं प्रवर्त्तते इति वाक्यार्थः, पुद्गलमयत्वादौदारिकादीनामिति ॥ अस्तिकायप्रदेशस्पर्शद्वारे—

एगे भंते ! धम्मत्थिकायपदेसे केवतिएहिं धम्मत्थिकायपएसेहिं पुट्ठे ?, गोयमा ! जहन्नपदे तिहिं उक्कोसपदे छहिं । केवतिएहिं अहम्मत्थिकायपएसेहिं पुट्ठे ?, गोयमा ! जहन्नपए चउहिं उक्कोसपए सत्तहिं । केवतिएहिं आगासत्थिकायपएसेहिं पुट्ठे ?, गोयमा ! सत्तहिं । केवतिएहिं जीवत्थिकायपएसेहिं पुट्ठे ?, गोयमा ! अणंतेहिं । केवतिएहिं पोग्गलत्थिकायपएसेहिं पुट्ठे ?, गोयमा ! अणंतेहिं । केवतिएहिं अद्धासमएहिं पुट्ठे ?, सिय पुट्ठे सिय नो पुट्ठे जइ पुट्ठे नियमं अणंतेहिं ॥ एगे भंते ! अहम्मत्थिकायपएसे केवतिएहिं धम्मत्थिकायपएसेहिं पुट्ठे ?, गोयमा ! जहन्नपए चउहिं उक्कोसपए सत्तहिं । केवतिएहिं अहम्मत्थिकायपएसेहिं पुट्ठे ? जहन्नपए तिहिं उक्कोसपए छहिं सेसं जहा धम्मत्थिकायस्स ॥ एगे भंते ! आगासत्थिकायपएसे केवतिएहिं धम्मत्थिकायपएसेहिं पुट्ठे ?, गोयमा ! सिय पुट्ठे सिय नो पुट्ठे, जइ पुट्ठे जहन्नपदे एक्केण वा दोहिं वा तीहिं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वा चउहिं वा उक्कोसपए सत्तहिं, एवं अहम्मत्थिकायप्पएसेहिवि । केवतिएहिं आगासत्थिकाय० ? छहिं, केवतिएहिं जीवत्थिकायपएसेहिं पुट्ठे ?, सिय पुट्ठे सिय नो पुट्ठे, जइ पुट्ठे नियमं अणंतेहिं । एवं पोग्गलत्थिकायपएसेहिवि अद्धासमएहिवि (सूत्रं ४८२) ॥ एगे भंते ! जीवत्थिकायपएसे केवतिएहिं धम्मत्थि० पुच्छा जहन्नपदे चउहिं उक्कोसपए सत्तहिं, एवं अहम्मत्थिकायपएसेहिवि । केवतिएहिं आगासत्थि० ?, सत्तहिं । केवतिएहिं जीवत्थि० ?, सेसं जहा धम्मत्थिकायस्स ॥ एगे भंते ! पोग्गलत्थिकायपएसे केवतिएहिं धम्मत्थिकायपए० ? एवं जहेव जीवत्थिकायस्स ॥ दो भंते ! पोग्गलत्थिकायप्पएसा केवतिएहिं धम्मत्थिकायपएसेहिं पुट्ठा ?, जहन्नपए छहिं उक्कोसपए बारसहिं, एवं अहम्मत्थिकायप्पएसेहिवि । केवतिएहिं आगासत्थिकाय० ?, बारसहिं, सेसं जहा धम्मत्थिकायस्स ॥ तिन्नि भंते ! पोग्गलत्थिकायपएसा केवतिएहिं धम्मत्थि० ?, जहन्नपए अट्ठहिं उक्कोसपए सत्तरसहिं । एवं अहम्मत्थिकायपएसेहिवि । केवतिएहिं आगासत्थि० ?, सत्तरसहिं, सेसं जहा धम्मत्थिकायस्स । एवं एएणं गमेणं भाणियव्वं जाव दस, नवरं जहन्नपदे दोन्नि पक्खिवियव्वा उक्कोसपए पंच । चत्तारि पोग्गलत्थिकायस्स०, जहन्नपए दसहिं उक्को० बावीसाए, पंच पुग्गल०, जह० बारसहिं उक्कोस० सत्तावीसाए, छ पोग्गल० जह० चोद्दसहिं उक्को० बत्तीसाए, सत्त पो० जहन्नेणं सोलसहिं उक्को० सत्ततीसाए, अट्ठ पो० जहन्न० अट्ठारसहिं उक्कोसेणं बायालीसाए, नव पो० जहन्न० वीसाए उक्को० सीयालीसाए, दस जह० बावीसाए उक्को० बावन्नाए । आगासत्थिकायस्स सवत्थ उक्कोसगं भाणियव्वं ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	मूल संपादने सूत्र-क्रमांकने किंचित् स्खलना दृश्यते–सूत्रक्रमांक ४८२ द्वि-वारान् लिखितं संभाव्यते

संखेज्जा भंते ! पोग्गलत्थिकायपएसा केवतिएहिं धम्मत्थिकायपएसेहिं पुट्ठा ?, जहन्नपदे तेणेव संखेज्जएणं दुगुणेणं दुरूवाहिएणं उक्कोसपए तेणेव संखेज्जएणं पंचगुणेणं दुरूवाहिएणं, केवतिएहिं अधम्मत्थिकायएहिं एवं चेव, केवतिएहिं आगासत्थिकाय० तेणेव संखेज्जएणं पंचगुणेणं दुरूवाहिएणं, केवइएहिं जीवत्थिकाय०?, अणंतेहिं, केवइएहिं पोग्गलत्थिकाय० ?, अणंतेहिं, केवइएहिं अद्धासमएहिं ?, सिय पुट्ठे सिय नो पुट्ठे जाव अणंतेहिं । असंखेज्जा भंते ! पोग्गलत्थिकायप्पएसा केवतिएहिं धम्मत्थि० ?, जहन्नपए तेणेव असंखेज्जएणं दुगुणेणं दुरूवाहिएणं उक्को० तेणेव असंखेज्जएणं पंचगुणेणं दुरूवाहिएणं, सेसं जहा संखेज्जाणं जाव नियमं अणंतेहिं ॥ अणंता भंते ! पोग्गलत्थिकायपएसा केवतिएहिं धम्मत्थिकाय०, एवं जहा असंखेज्जा तहा अणंताविं निरवसेसं ॥ एगे भंते ! अद्धासमए केवतिएहिं धम्मत्थिकायपएसेहिं पुट्ठे ?, सत्तहिं, केवतिएहिं अहम्मत्थि० ?, एवं चेव एवं आगासत्थिकाएहिवि, केवतिएहिं जीव० ?, अणंतेहिं, एवं जाव अद्धासमएहिं॥ धम्मत्थिकाए णं भंते ! केवतिएहिं धम्मत्थिकायप्पएसेहिं पुट्ठे ?, नत्थि एक्केणवि, केवतिएहिं अधम्मत्थिकायप्पएसेहिं ?, असंखेज्जेहिं, केवतिएहिं आगासत्थि० प० ?, असंखेज्जेहिं, केवतिएहिं जीवत्थिकायपए० ?, अणंतेहिं, केवतिएहिं पोग्गलत्थिकायपएसेहिं ?, अणंतेहिं, केवतिएहिं अद्धासमएहिं ?, सिय पुट्ठे सिय नो पुट्ठे, जइ पुट्ठे नियमा अणंतेहिं । अहम्मत्थिकाए णं भंते ! केव० धम्मत्थिकाय० ?, असंखेज्जेहिं, केवतिएहिं अहम्मत्थि० ?, णत्थि एक्केणवि, सेसं जहा धम्मत्थिकायस्स, एवं एएणं गमएणं सव्वेवि सट्ठाणए नत्थि एक्केणवि पुट्ठा,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मूल संपादने सूत्र-क्रमांकने किंचित् स्खलना दृश्यते–सूत्रक्रमांक ४८२ द्वि-वारान् लिखितं संभाव्यते

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥६१०॥

परट्ठाणए आदिल्लएहिं तिहिं असंखेज्जेहिं भाणियव्वं, पच्छिल्लएसु अणंता भाणियव्वा, जाव अद्धासमयोत्ति, जाव केवतिएहिं अद्धासमएहिं पुट्ठे ?, नत्थि एक्केणवि ॥

'एगे भंते ! धम्मत्थिकायप्पएसे'इत्यादि, 'जहन्नपए तिहिं'ति जघन्यपदं लोकान्तनिष्कुटरूपं यत्रैकस्य धर्मास्तिकायादिप्रदेशस्यातिस्तोकैरन्यैः स्पर्शना भवति तच्च भूम्यासन्नापवरककोणदेशप्रायं, इहोपरितनेनैकेन द्वाभ्यां च पार्श्वत एको विवक्षितः प्रदेशः स्पृष्टः, एवं जघन्येन त्रिभिरिति। 'उक्कोसपए छहिं'ति विवक्षितस्यैक उपर्येकोऽधस्तनश्चत्वारो दिक्षु इत्येवं षड्भिरिदं च प्रतरमध्ये, स्थापना च— ०००। 'जहन्नपदे चउहिं'ति धर्मास्तिकायप्रदेशो जघन्यपदेऽधर्मास्तिकायप्रदेशैश्चतुर्भिः स्पृष्ट इति, कथं ?, तथैव त्रयः, ° चतुर्थस्तु धर्मास्तिकायप्रदेशस्थानस्थित एवेति, उत्कृष्टपदे सप्तभिरिति, कथं ?, षड् दिक्षट्के, सप्तमस्तु धर्मास्तिकायप्रदेशस्थ एवेति २, आकाशप्रदेशैः सप्तभिरेव, लोकान्तेऽप्यलोकाकाशप्रदेशानां विद्यमानत्वात् ३, 'केवतिएहिं जीवत्थिकाए'इत्यादि 'अणंतेहिं'ति अनन्तैरनन्तजीवसम्बन्धिनामनन्तानां प्रदेशानां तत्रैकधर्मास्तिकायप्रदेशे पार्श्वतश्च दिक्त्रयादौ विद्यमानत्वादिति ४, एवं पुद्गलास्तिकायप्रदेशैरपि ५, 'केवतिएहिं अद्धासमएहिं'इत्यादि, अद्धासमयः समयक्षेत्र एव न परतोऽतः स्यात्स्पृष्टः स्यान्नेति, 'जइ पुट्ठे नियमं अणंतेहिं'ति अनादित्वादद्धासमयानां अथवा वर्त्तमानसमयालिङ्गितान्यनन्तानि द्रव्याण्यनन्ता एव समया इत्यनन्तैस्तैः स्पृष्ट इत्युच्यत इति ६ ॥ अधर्मास्तिकायप्रदेशस्य शेषाणां प्रदेशैः स्पर्शना धर्मास्तिकायप्रदेशस्पर्शनाऽनुसारेणावसेया ६ ॥ 'एगे भंते ! आगासत्थिकायपएसे'इत्यादि, 'सिय पुट्ठे'त्ति लोकमाश्रित्य 'सिय

१३ शतके ४ उद्देशः अस्तिकायतत्प्रदेशस्पर्शना सू ४८२

॥६१०॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	मूल संपादने सूत्र-क्रमांकने किंचित् स्खलना दृश्यते–सूत्रक्रमांक ४८२ द्वि-वारान् लिखितं संभाव्यते

नो पुट्ठे'त्ति अलोकमाश्रित्य 'जइ पुट्ठे'इत्यादि यदि स्पृष्टस्तदा जघन्यपदे एकेन धर्मास्तिकायप्रदेशेन स्पृष्टः, कथम् ?, एवंविधलोकान्तवर्त्तिना धर्मास्तिकायैकप्रदेशेन शेषधर्मास्तिकायप्रदेशेभ्यो निर्गतेनैकोऽग्रभागवर्त्यलोकाकाशप्रदेशः स्पृष्टो वक्रगतस्त्वसौ द्वाभ्यां यस्य चालोकाकाशप्र [□□] देशस्याग्र [□□] तोऽधस्तादुपरि च धर्मास्तिकायप्रदेशाः सन्ति स त्रिभिर्धर्मास्तिकायप्रदेशैः स्पृष्टः, स चैवम्— [□□] यस्त्वेवं— [□□] लोकान्ते कोणगतो व्योमप्रदेशोऽसावेकेन धर्मास्ति-कायप्रदेशेन तदवगाढेनान्येन चोपरिवर्त्ति नाऽधोवर्तिना [□□] वा द्वाभ्यां च दिग्द्वयावस्थिताभ्यां स्पृष्ट इत्येवं चतुर्भिः यश्चाध उपरि च तथा दिग्द्वये तत्रैव वर्त्तमानेन धर्मास्तिकायप्रदेशेन स्पृष्टः स पञ्चभिः यः पुनरध उपरि च तथा दिक्त्रये तत्रैव च प्रवर्त्तमानेन धर्मास्तिकायप्रदेशेन स्पृष्टः स षड्भिः, यश्चाध उपरि च तथा दिक्चतुष्टये तत्रैव च वर्त्तमानेन धर्मास्तिकायप्रदेशेन स्पृष्टः स सप्तभिर्धर्म्मास्तिकायप्रदेशैः स्पृष्टो भवतीति १, एवमधर्मास्तिकायप्रदेशैरपि २ 'केवइएहिं आगासत्थिकायपएसेहिं ?, 'छहिं'ति एकस्य लोकाकाशप्रदेशस्यालोकाकाशप्रदेशस्य वा षड्दिग्व्यवस्थितैरेव स्पर्शनात् षड्भिरित्युक्तम् ३ जीवास्तिकायसूत्रे 'सिय पुट्ठे'त्ति यद्यसौ लोकाकाशप्रदेशो विवक्षितस्ततः स्पृष्टः 'सिय नो पुट्ठे'त्ति यद्यसावलोकाकाशप्रदेशविशेषस्तदा न स्पृष्टो जीवानां तत्राभावादिति ४–५ एवं पुद्गलाद्धाप्रदेशैः ६ ॥ 'एगे भंते ! जीवत्थिकायप्पएसे'इत्यादि, जघन्यपदे लोकान्तकोणलक्षणे सर्वाल्पत्वात्तत्र स्पर्शकप्रदेशानां चतुर्भिरिति, कथम् ?, अध उपरि वा एको द्वौ च दिशोरेकस्तु यत्र जीवप्रदेश एवावगाढ इत्येवं, एकश्च जीवास्तिकायप्रदेश एकत्रा-काशप्रदेशादौ केवलिसमुद्घात एव लभ्यत इति, 'उक्कोसपए सत्तहिं'ति पूर्ववत्, 'एवं अहम्मे'त्यादि पूर्वोक्तानुसा-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	मूल संपादने सूत्र-क्रमांकने किंचित् स्खलना दृश्यते–सूत्रक्रमांक ४८२ द्वि-वारान् लिखितं संभाव्यते

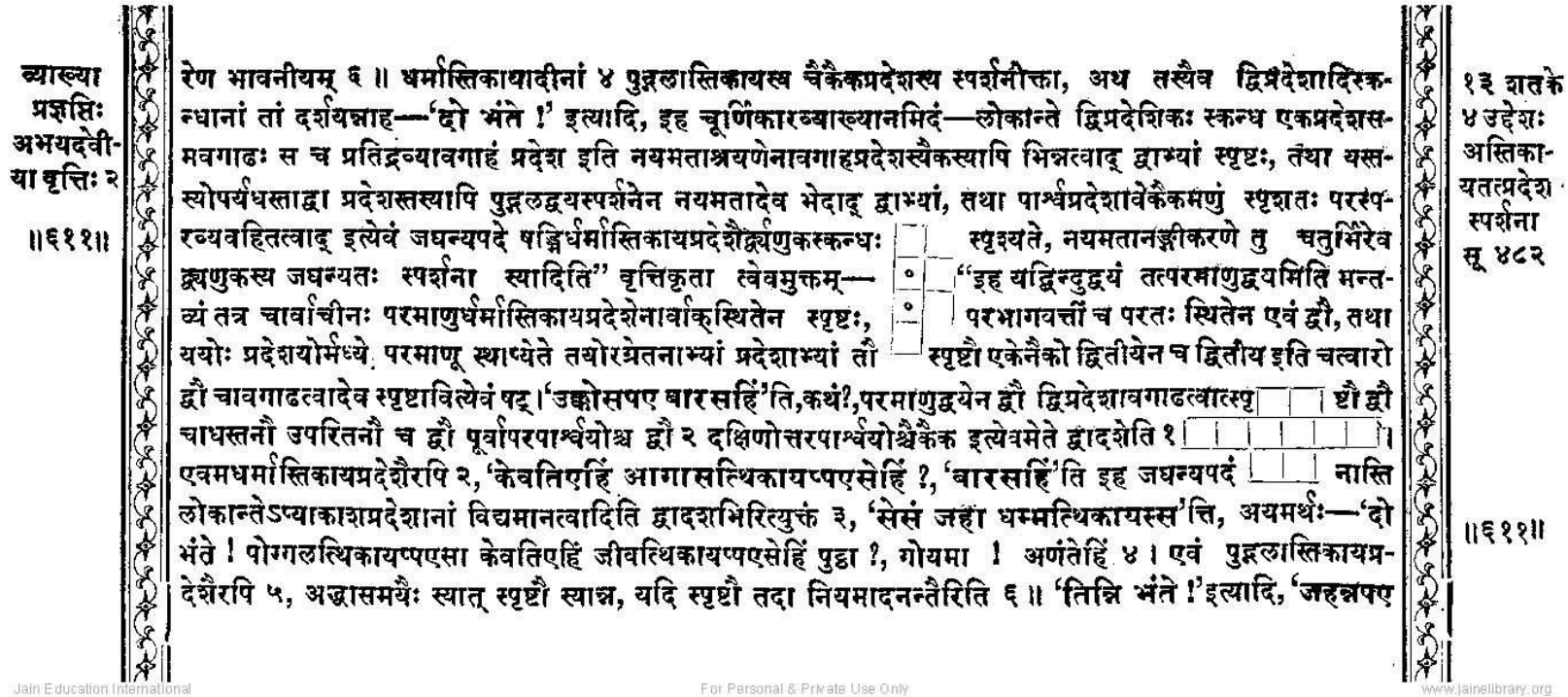

व्याख्या प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २

॥६११॥

रेण भावनीयम् ६ ॥ धर्मास्तिकायादीनां ४ पुद्गलास्तिकायस्य चैकैकप्रदेशस्य स्पर्शनोक्ता, अथ तस्यैव द्विप्रदेशादिस्कन्धानां तां दर्शयन्नाह—'दो भंते !' इत्यादि, इह चूर्णिकारव्याख्यानमिदं—लोकान्ते द्विप्रदेशिकः स्कन्ध एकप्रदेशसमवगाढः स च प्रतिद्रव्यावगाहं प्रदेश इति नयमताश्रयणेनावगाहप्रदेशस्यैकस्यापि भिन्नत्वाद् द्वाभ्यां स्पृष्टः, तथा यस्योपर्यधस्ताद्वा प्रदेशस्तस्यापि पुद्गलद्वयस्पर्शनेन नयमतादेव भेदाद् द्वाभ्यां, तथा पार्श्वप्रदेशावेकैकमणुं स्पृशतः परस्परव्यवहितत्वाद् इत्येवं जघन्यपदे षड्भिर्धर्मास्तिकायप्रदेशैर्द्व्यणुकस्कन्धः [ ] स्पृश्यते, नयमतानङ्गीकरणे तु चतुर्भिरेव द्व्यणुकस्य जघन्यतः स्पर्शना स्यादिति" वृत्तिकृता त्वेवमुक्तम्— [ ] "इह यद्विन्दुद्वयं तत्परमाणुद्वयमिति मन्तव्यं तत्र चार्वाचीनः परमाणुर्धर्मास्तिकायप्रदेशेनार्वाक्स्थितेन स्पृष्टः, [ ] परभागवर्त्ती च परतः स्थितेन एवं द्वौ, तथा ययोः प्रदेशयोर्मध्ये परमाणू स्थाप्येते तयोरग्रेतनाभ्यां प्रदेशाभ्यां तौ [ ] स्पृष्टौ एकेनैको द्वितीयेन च द्वितीय इति चत्वारो द्वौ चावगाढत्वादेव स्पृष्टावित्येवं षट्।'उक्कोसपए बारसहिं'ति,कथं?,परमाणुद्वयेन द्वौ द्विप्रदेशावगाढत्वात्स्पृ[ ]ष्टौ द्वौ चाधस्तनौ उपरितनौ च द्वौ पूर्वापरपार्श्वयोश्च द्वौ २ दक्षिणोत्तरपार्श्वयोश्चैकैक इत्येवमेते द्वादशेति १[ ]। एवमधर्मास्तिकायप्रदेशैरपि २,'केवतिएहिं आगासत्थिकायप्पएसेहिं ?,'बारसहिं'ति इह जघन्यपदं [ ] नास्ति लोकान्तेऽप्याकाशप्रदेशानां विद्यमानत्वादिति द्वादशभिरित्युक्तं ३,'सेसं जहा धम्मत्थिकायस्स'त्ति, अयमर्थः—'दो भंते ! पोग्गलत्थिकायप्पएसा केवतिएहिं जीवत्थिकायप्पएसेहिं पुट्ठा ?, गोयमा ! अणंतेहिं ४। एवं पुद्गलास्तिकायप्रदेशैरपि ५, अद्धासमयैः स्यात् स्पृष्टौ स्यान्न, यदि स्पृष्टौ तदा नियमादनन्तैरिति ६ ॥ 'तिन्नि भंते !'इत्यादि,'जहन्नपए

१३ शतके ४ उद्देशः अस्तिकायतत्प्रदेश स्पर्शना सू ४८२

॥६११॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मूल संपादने सूत्र-क्रमांकने किंचित् स्खलना दृश्यते–सूत्रक्रमांक ४८२ द्वि-वारान् लिखितं संभाव्यते

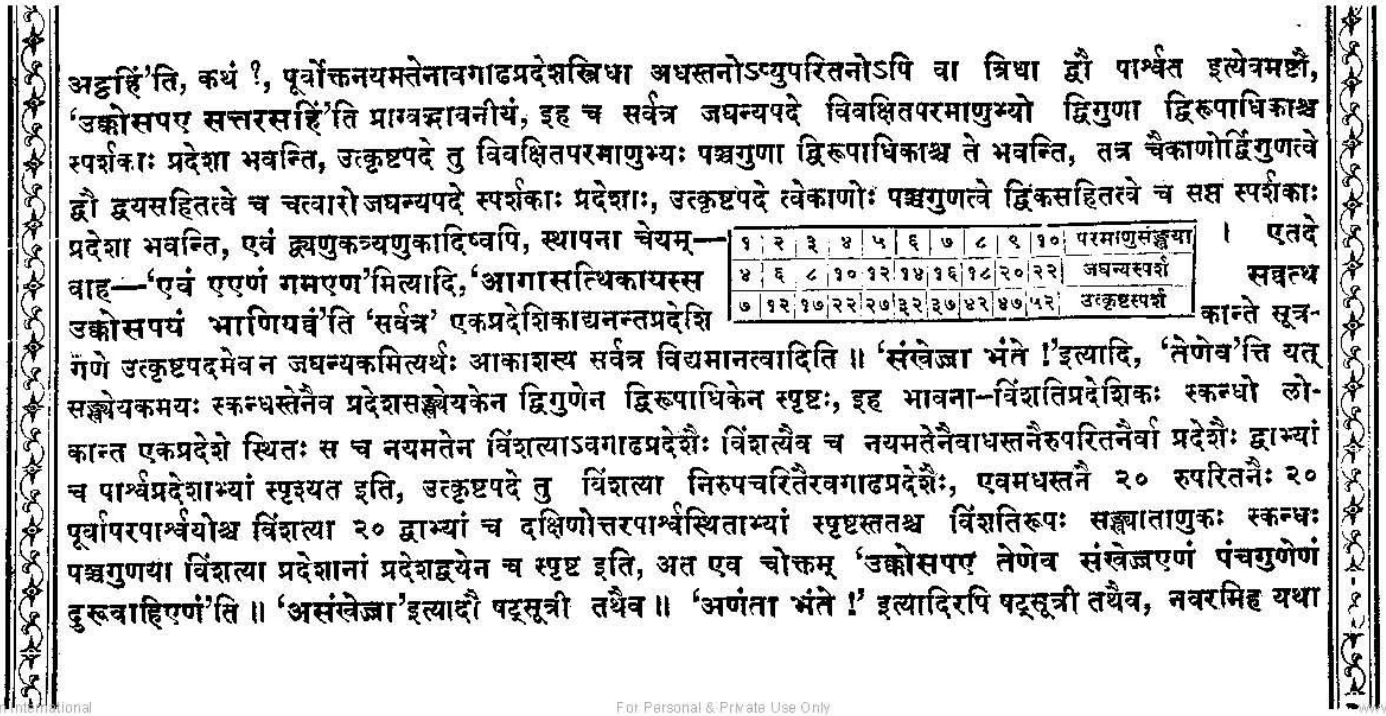

अट्ठहिं'ति, कथं ?, पूर्वोक्तनयमतेनावगाढप्रदेशस्त्रिधा अधस्तनोऽप्युपरितनोऽपि वा त्रिधा द्वौ पार्श्वत इत्येवमष्टौ, 'उक्कोसपए सत्तरसहिं'ति प्राग्वद्भावनीयं, इह च सर्वत्र जघन्यपदे विवक्षितपरमाणुभ्यो द्विगुणा द्विरूपाधिकाश्च स्पर्शकाः प्रदेशा भवन्ति, उत्कृष्टपदे तु विवक्षितपरमाणुभ्यः पञ्चगुणा द्विरूपाधिकाश्च ते भवन्ति, तत्र चैकाणोर्द्विगुणत्वे द्वौ द्वयसहितत्वे च चत्वारो जघन्यपदे स्पर्शकाः प्रदेशाः, उत्कृष्टपदे त्वेकाणोः पञ्चगुणत्वे द्विकसहितत्वे च सप्त स्पर्शकाः प्रदेशा भवन्ति, एवं द्व्यणुकत्र्यणुकादिष्वपि, स्थापना चेयम्—

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	परमाणुसङ्ख्या
४	६	८	१०	१२	१४	१६	१८	२०	२२	जघन्यस्पर्श
७	१२	१७	२२	२७	३२	३७	४२	४७	५२	उत्कृष्टस्पर्श

। एतदेवाह—'एवं एएणं गमएण'मित्यादि, 'आगासत्थिकायस्स सव्वत्थ उक्कोसपयं भाणियव्वं'ति 'सर्वत्र' एकप्रदेशिकाद्यनन्तप्रदेशिकान्ते सूत्रगणे उत्कृष्टपदमेव न जघन्यकमित्यर्थः आकाशस्य सर्वत्र विद्यमानत्वादिति ॥ 'संखेज्जा भंते !'इत्यादि, 'तेणेव'त्ति यत् सङ्ख्येयकमयः स्कन्धस्तेनैव प्रदेशसङ्ख्येयकेन द्विगुणेन द्विरूपाधिकेन स्पृष्टः, इह भावना–विंशतिप्रदेशिकः स्कन्धो लोकान्त एकप्रदेशे स्थितः स च नयमतेन विंशत्याऽवगाढप्रदेशैः विंशत्यैव च नयमतेनैवाधस्तनैरुपरितनैर्वा प्रदेशैः द्वाभ्यां च पार्श्वप्रदेशाभ्यां स्पृश्यत इति, उत्कृष्टपदे तु विंशत्या निरुपचरितैरवगाढप्रदेशैः, एवमधस्तनै २० रुपरितनैः २० पूर्वापरपार्श्वयोश्च विंशत्या २० द्वाभ्यां च दक्षिणोत्तरपार्श्वस्थिताभ्यां स्पृष्टस्ततश्च विंशतिरूपः सङ्ख्यातागुकः स्कन्धः पञ्चगुणया विंशत्या प्रदेशानां प्रदेशद्वयेन च स्पृष्ट इति, अत एव चोक्तम् 'उक्कोसपए तेणेव संखेज्जएणं पंचगुणेणं दुरूवाहिएणं'ति ॥ 'असंखेज्जा'इत्यादौ षट्सूत्री तथैव ॥ 'अणंता भंते !' इत्यादिरपि षट्सूत्री तथैव, नवरमिह यथा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	मूल संपादने सूत्र-क्रमांकने किंचित् स्खलना दृश्यते–सूत्रक्रमांक ४८२ द्वि-वारान् लिखितं संभाव्यते

प्रत सूत्रांक [४८२-४८२R]

दीप अनुक्रम [५७८--५७९]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

जघन्यपदे औपचारिका अवगाहप्रदेशा अधस्तना उपरितना वा तथोत्कृष्टपदेऽपि, न हि निरुपचरिता अनन्ता आकाशप्रदेशा अवगाहतः सन्ति, लोकस्याप्यसङ्ख्यातप्रदेशात्मकत्वादिति । इह च प्रकरणे इमे वृद्धोक्तगाथे भवतः—"धम्माइप्पएसेहिं दुपएसाई जहन्नयपयम्मि । दुगुणदुरूवहिएणं तेणेव कहं नु हु फुसेज्जा ? ॥ १ ॥ एत्थ पुण जहन्नपयं लोगंते तत्थ लोगमालिहिउं । फुसणा दावेयवा अहवा खंभाइकोडीए ॥२॥" इति [जघन्यपदे द्विप्रदेशादिद्विगुणद्विरूपाधिकैर्धर्मादिप्रदेशैस्तेनैव कथं नु स्पृशेत् ? ॥ १ ॥ अत्र जघन्यपदं लोकान्ते ततो लोकमालिख्य स्पर्शनां दर्शयेद् अथवा स्तम्भादिकोट्याम् ॥ २ ॥] 'एगे भंते ! अद्धासमए'इत्यादि, इह वर्त्तमानसमयविशिष्टः समयक्षेत्रमध्यवर्त्ती परमाणुरद्धासमयो ग्राह्यः, अन्यथा तस्य धर्मास्तिकायादिप्रदेशैः सप्तभिः स्पर्शना न स्यात्, इह च जघन्यपदं नास्ति, मनुष्यक्षेत्रमध्यवर्त्तित्वादद्धासमयस्य, जघन्यपदस्य च लोकान्त एव सम्भवादिति, तत्र सप्तभिरिति, कथम् ?, अद्धासमयविशिष्टं परमाणुद्रव्यमेकत्र धर्मास्तिकायप्रदेशेऽवगाढमन्ये च तस्य षट्सु दिक्ष्विति सप्तेति, जीवास्तिकायप्रदेशैश्चानन्तैरेकप्रदेशेऽपि तेषामनन्तत्वात्, 'एवं जाव अद्धासमएहिं'ति, इह यावत्करणादिदं सूचितम्—एकोऽद्धासमयोऽनन्तैः पुद्गलास्तिकायप्रदेशैरद्धासमयैश्च स्पृष्ट इति, भावना चास्यैवम्—अद्धासमयविशिष्टमणुद्रव्यमद्धासमयः, स चैकः पुद्गलास्तिकायप्रदेशैरनन्तैः स्पृश्यते, एकद्रव्यस्य स्थाने पार्श्वतश्चानन्तानां पुद्गलानां सद्भावात्, तथाऽद्धासमयैरनन्तैरसौ स्पृश्यते अद्धासमयविशिष्टानामनन्तानामप्यणुद्रव्याणामद्धासमयत्वेन विवक्षितत्वात् तेषां च तस्य स्थाने तत्पार्श्वतश्च सद्भावादिति ॥ धर्मास्तिकायादीनां प्रदेशतः स्पर्शनोक्ताऽथ द्रव्यतस्तामाह—'धम्मत्थिकाएणं'मित्यादि, 'नत्थि एगेणवि'त्ति सकलस्य धर्मास्तिकायद्र-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मूल संपादने सूत्र-क्रमांकने किंचित् स्खलना दृश्यते–सूत्रक्रमांक ४८२ द्वि-वारान् लिखितं संभाव्यते

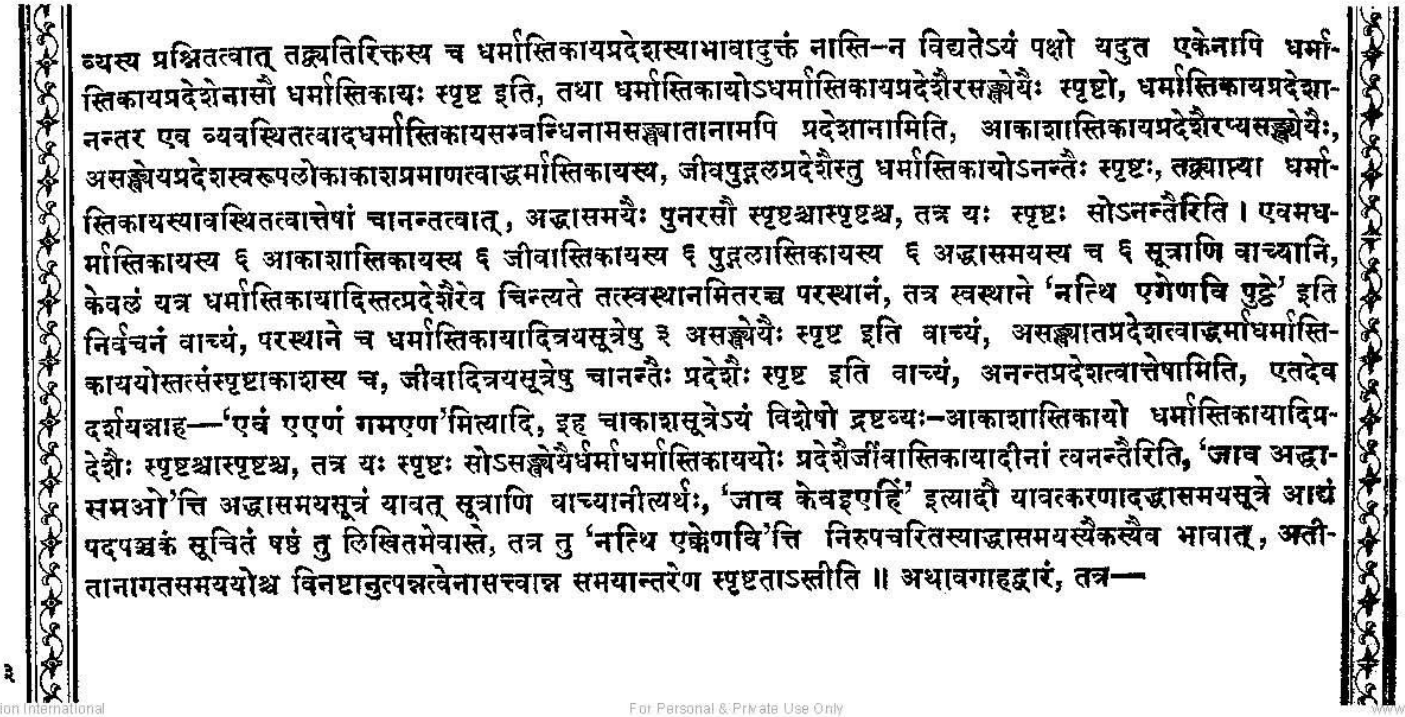

व्या० १०३

व्यस्य प्रश्नितत्वात् तद्व्यतिरिक्तस्य च धर्मास्तिकायप्रदेशस्याभावादुक्तं नास्ति–न विद्यतेऽयं पक्षो यदुत एकेनापि धर्मास्तिकायप्रदेशेनासौ धर्मास्तिकायः स्पृष्ट इति, तथा धर्मास्तिकायोऽधर्मास्तिकायप्रदेशैरसङ्ख्येयैः स्पृष्टो, धर्मास्तिकायप्रदेशानन्तर एव व्यवस्थितत्वादधर्मास्तिकायसम्बन्धिनामसङ्ख्यातानामपि प्रदेशानामिति, आकाशास्तिकायप्रदेशैरप्यसङ्ख्येयैः, असङ्ख्येयप्रदेशस्वरूपलोकाकाशप्रमाणत्वाद्धर्मास्तिकायस्य, जीवपुद्गलप्रदेशैस्तु धर्मास्तिकायोऽनन्तैः स्पृष्टः, तद्व्याप्त्या धर्मास्तिकायस्यावस्थितत्वात्तेषां चानन्तत्वात्, अद्धासमयैः पुनरसौ स्पृष्टश्चास्पृष्टश्च, तत्र यः स्पृष्टः सोऽनन्तैरिति । एवमधर्मास्तिकायस्य ६ आकाशास्तिकायस्य ६ जीवास्तिकायस्य ६ पुद्गलास्तिकायस्य ६ अद्धासमयस्य च ६ सूत्राणि वाच्यानि, केवलं यत्र धर्मास्तिकायादिस्तत्प्रदेशैरेव चिन्त्यते तत्स्वस्थानमितरच्च परस्थानं, तत्र स्वस्थाने 'नत्थि एगेणवि पुट्ठे' इति निर्वचनं वाच्यं, परस्थाने च धर्मास्तिकायादित्रयसूत्रेषु ३ असङ्ख्येयैः स्पृष्ट इति वाच्यं, असङ्ख्यातप्रदेशत्वाद्धर्माधर्मास्तिकाययोस्तत्संस्पृष्टाकाशस्य च, जीवादित्रयसूत्रेषु चानन्तैः प्रदेशैः स्पृष्ट इति वाच्यं, अनन्तप्रदेशत्वात्तेषामिति, एतदेव दर्शयन्नाह—'एवं एएणं गमएणं'मित्यादि, इह चाकाशसूत्रेऽयं विशेषो द्रष्टव्यः–आकाशास्तिकायो धर्मास्तिकायादिप्रदेशैः स्पृष्टश्चास्पृष्टश्च, तत्र यः स्पृष्टः सोऽसङ्ख्येयैर्धर्माधर्मास्तिकाययोः प्रदेशैर्जीवास्तिकायादीनां त्वनन्तैरिति, 'जाव अद्धासमओ'त्ति अद्धासमयसूत्रं यावत् सूत्राणि वाच्यानीत्यर्थः, 'जाव केवइएहिं' इत्यादौ यावत्करणादद्धासमयसूत्रे आद्यं पदपञ्चकं सूचितं षष्ठं तु लिखितमेवास्ते, तत्र तु 'नत्थि एक्केणवि'त्ति निरुपचरितस्याद्धासमयस्यैकस्यैव भावात्, अतीतानागतसमययोश्च विनष्टानुत्पन्नत्वेनासत्त्वान्न समयान्तरेण स्पृष्टताऽस्तीति ॥ अथावगाहद्वारं, तत्र—

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	मूल संपादने सूत्र-क्रमांकने किंचित् स्खलना दृश्यते–सूत्रक्रमांक ४८२ द्वि-वारान् लिखितं संभाव्यते

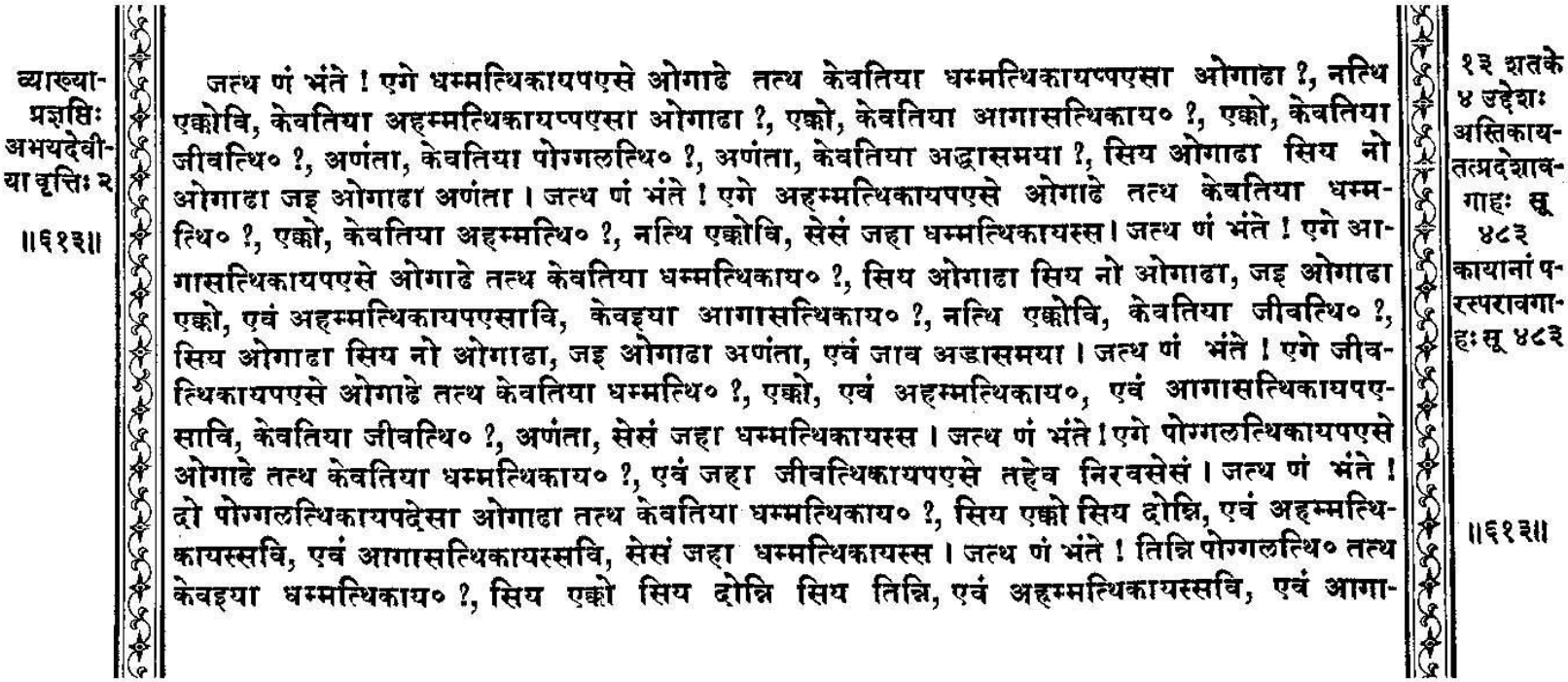

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥६१३॥

जत्थ णं भंते ! एगे धम्मत्थिकायपएसे ओगाढे तत्थ केवतिया धम्मत्थिकायप्पएसा ओगाढा ?, नत्थि एक्कोवि, केवतिया अहम्मत्थिकायप्पएसा ओगाढा ?, एक्को, केवतिया आगासत्थिकाय० ?, एक्को, केवतिया जीवत्थि० ?, अणंता, केवतिया पोग्गलत्थि० ?, अणंता, केवतिया अद्धासमया ?, सिय ओगाढा सिय नो ओगाढा जइ ओगाढा अणंता । जत्थ णं भंते ! एगे अहम्मत्थिकायपएसे ओगाढे तत्थ केवतिया धम्मत्थि० ?, एक्को, केवतिया अहम्मत्थि० ?, नत्थि एक्कोवि, सेसं जहा धम्मत्थिकायस्स। जत्थ णं भंते ! एगे आगासत्थिकायपएसे ओगाढे तत्थ केवतिया धम्मत्थिकाय० ?, सिय ओगाढा सिय नो ओगाढा, जइ ओगाढा एक्को, एवं अहम्मत्थिकायपएसावि, केवइया आगासत्थिकाय० ?, नत्थि एक्कोवि, केवतिया जीवत्थि० ?, सिय ओगाढा सिय नो ओगाढा, जइ ओगाढा अणंता, एवं जाव अद्धासमया । जत्थ णं भंते ! एगे जीवत्थिकायपएसे ओगाढे तत्थ केवतिया धम्मत्थि० ?, एक्को, एवं अहम्मत्थिकाय०, एवं आगासत्थिकायपएसावि, केवतिया जीवत्थि० ?, अणंता, सेसं जहा धम्मत्थिकायस्स । जत्थ णं भंते ! एगे पोग्गलत्थिकायपएसे ओगाढे तत्थ केवतिया धम्मत्थिकाय० ?, एवं जहा जीवत्थिकायपएसे तहेव निरवसेसं । जत्थ णं भंते ! दो पोग्गलत्थिकायपदेसा ओगाढा तत्थ केवतिया धम्मत्थिकाय० ?, सिय एक्को सिय दोण्णि, एवं अहम्मत्थिकायस्सवि, एवं आगासत्थिकायस्सवि, सेसं जहा धम्मत्थिकायस्स । जत्थ णं भंते ! तिन्नि पोग्गलत्थि० तत्थ केवइया धम्मत्थिकाय० ?, सिय एक्को सिय दोन्नि सिय तिन्नि, एवं अहम्मत्थिकायस्सवि, एवं आगा-

१३ शतके ४ उद्देशः अस्तिकाय-तत्प्रदेशाव-गाहः सू ४८३ कायानां प-रस्परावगा-हः सू ४८३

॥६१३॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सत्थिकायस्सवि, सेसं जहेव दोण्हं, एवं एक्केक्को वड्ढियव्वो पएसो आइल्लएहिं तिहिं अत्थिकाएहिं, सेसं जहेव दोण्हं जाव दसण्हं सिय एक्को सिय दोन्नि सिय तिन्नि जाव सिय दस, संखेज्जाणं सिय एक्को सिय दोन्नि जाव सिय दस सिय संखेज्जा, असंखेज्जाणं सिय एक्को जाव सिय संखेज्जा सिय असंखेज्जा, जहा असंखेज्जा एवं अणंतावि। जत्थ णं भंते ! एगे अद्धासमए ओगाढे तत्थ केवतिया धम्मत्थि० ?, एक्को, केवतिया अहम्मत्थि० ?, एक्को, केवतिया आगासत्थि० ?, एक्को, केवइया जीवत्थि० ?, अणंता, एवं जाव अद्धासमया। जत्थ णं भंते ! धम्मत्थिकाए ओगाढे तत्थ केवतिया धम्मत्थिकायप० ओगाढा ?, नत्थि एक्कोवि, केवतिया अहम्मत्थिकाय० ?, असंखेज्जा, केवतिया आगास० ?, असंखेज्जा, केवतिया जीवत्थिकाय० ?, अणंता, एवं जाव अद्धासमया। जत्थ णं भंते ! अहम्मत्थिकाए ओगाढे तत्थ केवतिया धम्मत्थिकाय० ?, असंखेज्जा, केवतिया अहम्मत्थि० ?, नत्थि एक्कोवि, सेसं जहा धम्मत्थिकायस्स, एवं सव्वे, सट्ठाणे नत्थि एक्कोवि भाणियव्वं, परट्ठाणे आदिल्लगा तिन्नि असंखेज्जा भाणियव्वा, पच्छिल्लगा तिन्नि अणंता भाणियव्वा जाव अद्धासमओत्ति जाव केवतिया अद्धासमया ओगाढा नत्थि एक्कोवि (सूत्रं४८३)॥ जत्थ णं भंते ! एगे पुढविकाइए ओगाढे तत्थ णं केवतिया पुढविकाइया ओगाढा ?, असंखेज्जा, केवतिया आउक्काइया ओगाढा ?, असंखेज्जा, केवइया तेउकाइया ओगाढा ?, असंखेज्जा, केवइया वाउ० ओगाढा ?, असंखेज्जा, केवतिया वणस्सइकाइया ओगाढा ?, अणंता। जत्थ णं भंते ! एगे आउकाइए ओगाढे तत्थ णं केवतिया पुढवि० असंखेज्जा, केवतिया आउ०

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

असंखेज्जा, एवं जहेव पुढविकाइयाणं वत्तव्वता तहेव सवेसिं निरवसेसं भाणियवं जाव वणस्सइकाइयाणं जाव केवतिया वणस्सइकाइया ओगाढा ?, अणंता (सूत्रं ४८४) ॥

'जत्थ णं भंते !'इत्यादि, यत्र प्रदेशे एको धर्मास्तिकायस्य प्रदेशोऽवगाढस्तत्रान्यस्तत्प्रदेशो नास्तीतिकृत्वाऽऽह—'नत्थि एक्कोवि'त्ति, धर्मास्तिकायप्रदेशस्थानेऽधर्मास्तिकायप्रदेशस्य विद्यमानत्वादाह–'एक्को'त्ति, एवमाकाशास्तिकायस्याप्येक एव, जीवास्तिकायपुद्गलास्तिकाययोः पुनरनन्ताः प्रदेशा एकैकस्य धर्मास्तिकायप्रदेशस्य स्थाने सन्ति तैः प्रत्येकमनन्तैर्व्याप्तोऽसावत उक्तम्–'अणंत'त्ति, अद्धासमयास्तु मनुष्यलोक एव सन्ति न परतोऽतो धर्मास्तिकायप्रदेशे तेषामवगाहोऽस्ति नास्ति च, यत्रास्ति तत्रानन्तानां भावना तु प्राग्वत्, एतदेवाह—'अद्धासमये'त्यादि ॥ 'जत्थण'मित्यादीन्यधर्मास्तिकायसूत्राणि षड् धर्मास्तिकायसूत्राणीव वाच्यानि, आकाशास्तिकायसूत्रेषु 'सिय ओगाढा सिय नो ओगाढ'त्ति लोकालोकरूपत्वादाकाशस्य लोकाकाशेऽवगाढा अलोकाकाशे तु न तदभावात् ॥ 'जत्थ णं भंते ! पोग्गलत्थिकायपएसे'त्यादि, 'सिय एक्को सिय दोन्नि'त्ति यदैकत्राकाशप्रदेशे द्व्यणुकः स्कन्धोऽवगाढः स्यात्तदा तत्र धर्मास्तिकायप्रदेश एक एव, यदा तु द्वयोराकाशप्रदेशयोरसावावगाढः स्यात्तदा तत्र द्वा धर्मप्रदेशावावगाढौ स्यातामिति, एवमवगाहनानुसारेणाधर्मास्तिकायाकाशास्तिकाययोरपि स्यादेकः स्याद्वाविति भावनीयं, 'सेसं जहा धम्मत्थिकायस्स'त्ति शेषमित्युक्तापेक्षया जीवास्तिकायपुद्गलास्तिकायाद्धासमयलक्षणं त्रयं यथा धर्मास्तिकायप्रदेशावक्तव्यतायामुक्तं तथा पुद्गलप्रदेशद्वयवक्तव्यतायामपि, पुद्गलप्रदेशद्वयस्थाने तदीया अनन्ताः प्रदेशा अवगाढा इत्यर्थः । पुद्गलप्रदेशत्रयसू-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

त्रेषु 'सिय इक्को'इत्यादि, यदा त्रयोऽप्यणव एकत्रावगाढास्तदा तत्रैको धर्मास्तिकायप्रदेशोऽवगाढः, यदा तु द्वयो १।२ स्तदा द्वाववगाढौ, यदा तु त्रिषु । १ । १ । १ । तदा त्रय इति, एवमधर्मास्तिकायस्याकाशास्तिकायस्य च वाच्यं, 'सेसं जहेव दोण्हं'ति 'शेषं' जीवपुद्गलाद्धासमयाश्रितं सूत्रत्रयं यथैव द्वयोः पुद्गलप्रदेशयोरवगाहचिन्तायामधीतं तथैव पुद्गलप्रदेशत्रयचिन्तायामप्यध्येयं, पुद्गलप्रदेशत्रयस्थानेऽनन्ता जीवप्रदेशा अवगाढा इत्येवमध्येयमित्यर्थः, 'एवं एक्केक्को वड्ढेयवो पएसो आइल्लेहिं तिहिं २ अत्थिकाएहिं'ति यथा पुद्गलप्रदेशत्रयावगाहचिन्तायां धर्मास्तिकायादिसूत्रत्रये एकैकःप्रदेशो वृद्धिं नीतः एवं पुद्गलप्रदेशचतुष्टयाद्यवगाहचिन्तायामप्येकैकस्तत्र वर्द्धनीयः, तथाहि—'जत्थ णं भंते ! चत्तारि पुग्गलत्थिकायप्पएसा ओगाढा तत्थ केवइया धम्मत्थिकायप्पएसा ओगाढा ?, सिय एक्को सिय दोन्नि सिय तिन्नि सिय चत्तारि'इत्यादि, भावना चास्य प्रागिव, 'सेसेहिं जहेव दोण्हं'ति शेषेषु जीवास्तिकायादिषु त्रिषु सूत्रेषु पुद्गलप्रदेशचतुष्टयचिन्तायां तथा वाच्यं यथा तेष्वेव पुद्गलप्रदेशद्वयावगाहचिन्तायामुक्तं, तच्चैवं—'जत्थ णं भंते ! चत्तारि पोग्गलत्थिकायप्पएसा ओगाढा तत्थ केवतिया जीवत्थिकायप्पएसा ओगाढा ?, अणंता'इत्यादि, 'जहा असंखेज्जा एवं अणंतावि'त्ति, अस्यायं भावार्थः—'जत्थ णं भंते ! अणंता पोग्गलत्थिकायप्पएसा ओगाढा तत्थ केवतिया धम्मत्थिकायप्पएसा ओगाढा ?, सिय एक्को सिय दोन्नि जाव सिय असंखेज्जा'एतदेवाध्येयं न तु 'सिय अणंत'त्ति, धर्मास्तिकायाधर्मास्तिकायलोकाकाशप्रदेशानामनन्तानामभावादिति ॥ अथ प्रकारान्तरेणावगाहद्वारमेवाह—'जत्थ ण'मित्यादि, धर्मास्तिकायशब्देन समस्ततत्प्रदेशसङ्ग्रहात् प्रदेशान्तराणां चाभावादुच्यते–यत्र धर्मास्तिकायोऽवगाढस्तत्र

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

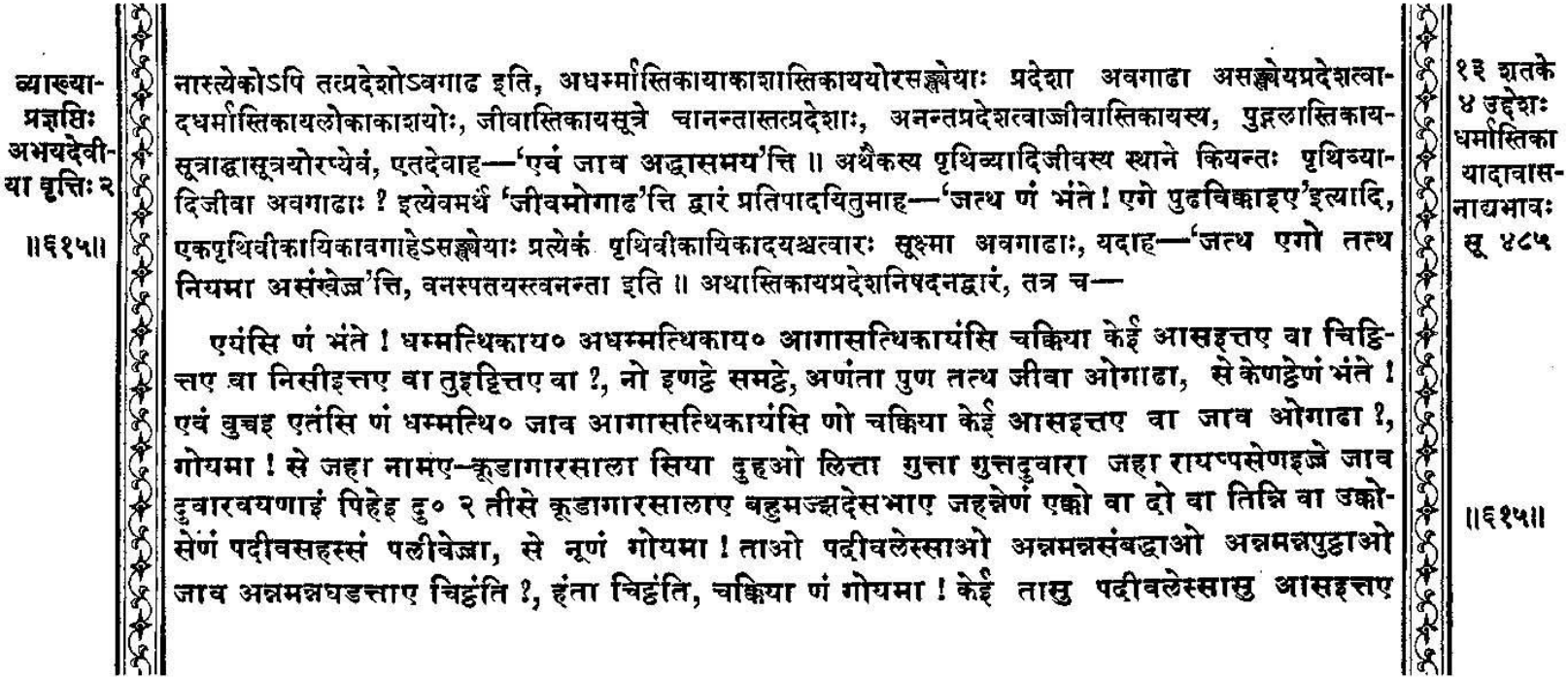

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥६१५॥

नास्त्येकोऽपि तत्प्रदेशोऽवगाढ इति, अधर्म्मास्तिकायाकाशास्तिकाययोरसङ्ख्येयाः प्रदेशा अवगाढा असङ्ख्येयप्रदेशत्वा-दधर्मास्तिकायलोकाकाशयोः, जीवास्तिकायसूत्रे चानन्तास्तत्प्रदेशाः, अनन्तप्रदेशत्वाज्जीवास्तिकायस्य, पुद्गलास्तिकाय-सूत्राद्धासूत्रयोरप्येवं, एतदेवाह—'एवं जाव अद्धासमय'त्ति ॥ अथैकस्य पृथिव्यादिजीवस्य स्थाने कियन्तः पृथिव्या-दिजीवा अवगाढाः ? इत्येवमर्थं 'जीवमोगाढ'त्ति द्वारं प्रतिपादयितुमाह—'जत्थ णं भंते ! एगे पुढविक्काइए'इत्यादि, एकपृथिवीकायिकावगाहेऽसङ्ख्येयाः प्रत्येकं पृथिवीकायिकादयश्चत्वारः सूक्ष्मा अवगाढाः, यदाह—'जत्थ एगो तत्थ नियमा असंखेज्ज'त्ति, वनस्पतयस्त्वनन्ता इति ॥ अथास्तिकायप्रदेशनिषदनद्वारं, तत्र च—

एयंसि णं भंते ! धम्मत्थिकाय० अधम्मत्थिकाय० आगासत्थिकायंसि चक्किया केई आसइत्तए वा चिट्ठि-त्तए वा निसीइत्तए वा तुइट्टित्तए वा ?, नो इणट्ठे समट्ठे, अणंता पुण तत्थ जीवा ओगाढा, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ एतंसि णं धम्मत्थि० जाव आगासत्थिकायंसि णो चक्किया केई आसइत्तए वा जाव ओगाढा ?, गोयमा ! से जहा नामए–कूडागारसाला सिया दुहओ लित्ता गुत्ता गुत्तदुवारा जहा रायप्पसेणइज्जे जाव दुवारवयणाइं पिहेइ दु० २ तीसे कूडागारसालाए बहुमज्झदेसभाए जहन्नेणं एक्को वा दो वा तिन्नि वा उक्को-सेणं पदीवसहस्सं पलीवेज्जा, से नूणं गोयमा ! ताओ पदीवलेस्साओ अन्नमन्नसंबद्धाओ अन्नमन्नपुट्ठाओ जाव अन्नमन्नघडत्ताए चिट्ठंति ?, हंता चिट्ठंति, चक्किया णं गोयमा ! केई तासु पदीवलेस्सासु आसइत्तए

१३ शतके ४ उद्देशः धर्मास्तिका यादावास-नाद्यभावः सू ४८५

॥६१५॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वा जाव तुयट्टित्तए वा ?, भगवं ! णो तिणट्ठे समट्ठे, अणंता पुण तत्थ जीवा ओगाढा, से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ जाव ओगाढा (सूत्रं ४८५) ॥

'एयंसि ण'मित्यादि, एतस्मिन् णमित्यलङ्कारे 'चक्किय'त्ति शक्नुयात्कश्चित् पुरुषः ॥ अथ बहुसमेति द्वारं, तत्र—

कहि णं भंते ! लोए बहुसमे ? कहिणं भंते ! लोए सव्वविग्गहिए पण्णत्ते ?, गोयमा ! इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए उवरिमहेट्ठिल्लेसु खुड्डागपयरेसु एत्थ णं लोए बहुसमे एत्थ णं लोए सव्वविग्गहिए पण्णत्ते । कहि णं भंते ! विग्गहविग्गहिए लोए पण्णत्ते ?, गोयमा ! विग्गहकंडए एत्थ णं विग्गहविग्गहिए लोए पण्णत्ते(सूत्रं४८६)॥

'कहि ण'मित्यादि, 'बहुसमे'त्ति अत्यन्तं समः, लोको हि क्वचिद्वर्द्धमानः क्वचिद्धीयमानोऽतस्तन्निषेधाद्बहुसमो वृद्धिहानिवर्जित इत्यर्थः 'सव्वविग्गहिए'त्ति विग्रहो वक्रं लघुमि(रि)त्यर्थः तदस्यास्तीति विग्रहिकः सर्वथा विग्रहिकः सर्वविग्रहिकः सर्वसङ्क्षिप्त इत्यर्थः, 'उवरिमहेट्ठिल्लेसु खुड्डागपयरेसु'त्ति उपरिमो यमवधीकृत्योर्द्ध्वं प्रतरवृद्धिः प्रवृत्ता, अधस्तनश्च यमवधीकृत्याधः प्रतरप्रवृद्धिः प्रवृत्ता, ततस्तयोरुपरितनाधस्तनयोः क्षुल्लकप्रतरयोः शेषापेक्षया लघुतरयो रज्जुप्रमाणायामविष्कम्भयोस्तिर्यग्लोकमध्यभागवर्त्तिनोः 'एत्थ णं'ति एतयोः–प्रज्ञापकेनोपदर्श्यमानतया प्रत्यक्षयोः 'विग्गहविग्गहिए'त्ति विग्रहो–वक्रं तद्युक्तो विग्रहः–शरीरं यस्यास्ति स विग्रहविग्रहिकः, 'विग्गहकंडए'त्ति विग्रहो–वक्रं कण्डकं–अवयवो विग्रहरूपं कण्डकं–विग्रहकण्डकं तत्र ब्रह्मलोककूर्प्पर इत्यर्थः यत्र वा प्रदेशवृद्ध्या हान्या वा वक्रं भवति तद्विग्रहकण्डकं, तच्च प्रायो लोकान्तेष्वस्तीति ॥ अथ लोकसंस्थानद्वारं, तत्र च—

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [४८७, ४८८]

दीप अनुक्रम [५८३, ५८४]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २ ॥६१६॥

किंसंठिए णं भंते ! लोए पण्णत्ते ?, गोयमा ! सुपइट्ठियसंठिए लोए पण्णत्ते, हेट्ठा विच्छिन्ने मज्झे जहा सत्तमसए पढमुद्देसे जाव अंतं करेति ॥ एयस्स णं भंते ! अहेलोगस्स तिरियलोगस्स उड्ढलोगस्स य कयरे २-हिंतो जाव विसेसाहिया वा ?, गोयमा ! सव्वत्थोवे तिरियलोए उड्ढलोए असंखेज्जगुणे अहेलोए विसेसा-हिए । सेवं भंते सेवं भंतेत्ति (सूत्रं ४८७) ॥ १३–४ ॥

'सव्वत्थोवे तिरियलोए'त्ति अष्टादशयोजनशतायामत्वात्, 'उड्ढलोए असंखेज्जगुणे'त्ति किञ्चिदूनसप्तरज्जूच्छ्रित-त्वात् 'अहे लोए विसेसाहिए'त्ति किञ्चित्समधिकसप्तरज्जूच्छ्रितत्वादिति ॥ त्रयोदशशते चतुर्थः ॥१३–४ ॥

अनन्तरोद्देशके लोकस्वरूपमुक्तं, तत्र च नारकादयो भवन्तीति नारकादिवक्तव्यतां पञ्चमोद्देशकेनाह, तस्य चेदमादिसूत्रम्—

नेरइया णं भंते ! किं सचित्ताहारा अचित्ताहारा मीसाहारा ?, गोयमा ! नो सचित्ताहारा अचित्ताहारा नो मीसाहारा, एवं असुरकुमारा पढमो नेरइयउद्देसओ निरवसेसो भाणियव्वो ॥ सेवं भंते ! सेवं भंतेत्ति (सूत्रं ४८८) ॥ १३–५ ॥

'नेरइया णं भंते !'इत्यादि, 'पढमो नेरइयउद्देसओ'इत्यादि, अयं च प्रज्ञापनायामष्टाविंशतितमस्याहारपदस्य प्रथमः, स चैवं दृश्यः—'नेरइया णं भंते ! किं सचित्ताहारा अचित्ताहारा मीसाहारा ?, गोयमा ! नो सचित्ताहारा अचि-त्ताहारा नो मीसाहारा ।' 'एवं असुरकुमारे'त्यादीति ॥ त्रयोदशशते पञ्चमः ॥ १३–५ ॥

१३ शतके ४ उद्देशः लोकसंस्था-नाल्पबहुत्वे सू ४८६ १३ शतक ५ उद्देशः नारकादी-नामाहारः सू ४८८ ॥६१६॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र त्रयोदशमे शतके चतुर्थ-उद्देशक: परिसमाप्त:

अथ त्रयोदशमे शतके पंचम-उद्देशक: आरब्ध: एवं परिसमाप्त:

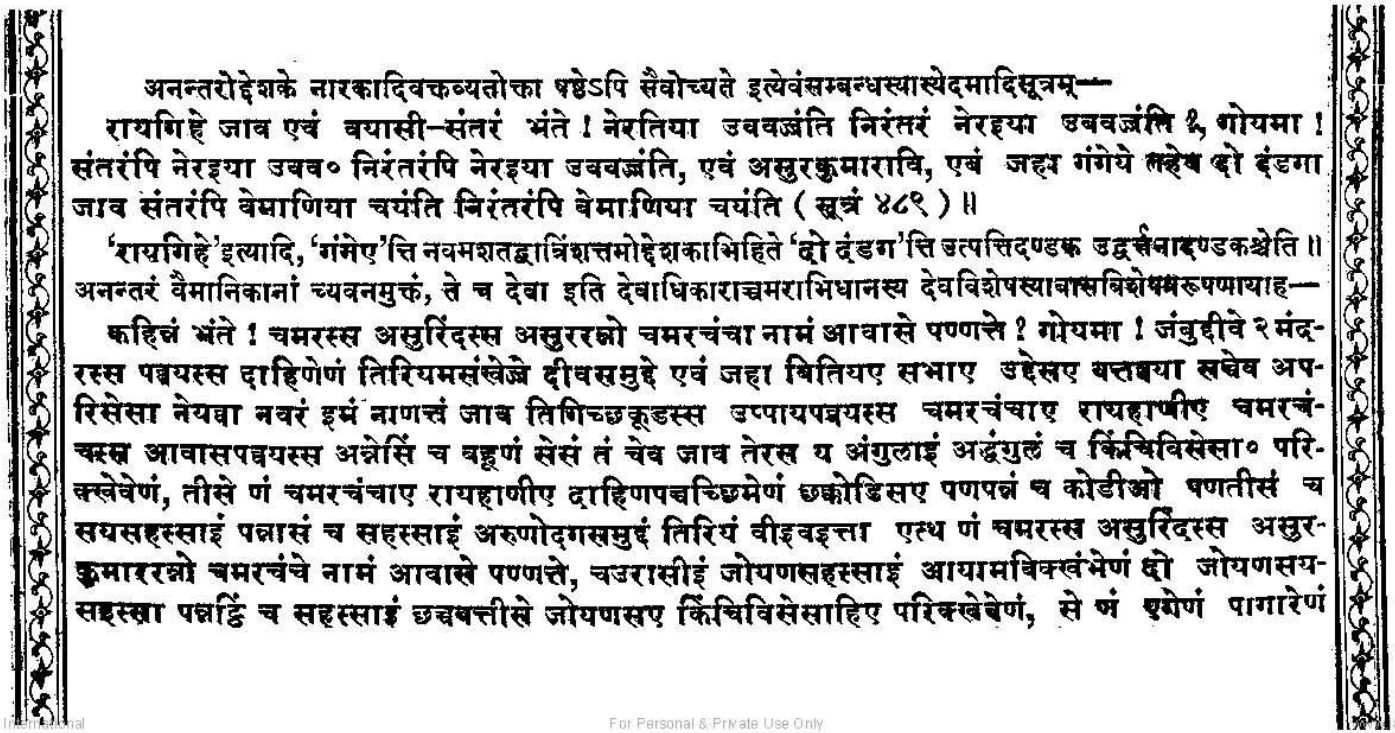

अनन्तरोद्देशके नारकादिवक्तव्यतोक्ता षष्ठेऽपि सैवोच्यते इत्येवंसम्बन्धस्यास्येदमादिसूत्रम्—

रायगिहे जाव एवं वयासी–संतरं भंते ! नेरतिया उववज्जंति निरंतरं नेरइया उववज्जंति ?, गोयमा ! संतरंपि नेरइया उवव० निरंतरंपि नेरइया उववज्जंति, एवं असुरकुमारावि, एवं जहा गंगेये तहेव दो दंडगा जाव संतरंपि वेमाणिया चयंति निरंतरंपि वेमाणिया चयंति (सूत्रं ४८९) ॥

'रायगिहे' इत्यादि, 'गंगेए' त्ति नवमशतद्वात्रिंशत्तमोद्देशकाभिहिते 'दो दंडग' त्ति उत्पत्तिदण्डक उद्वर्त्तनादण्डकश्चेति ॥

अनन्तरं वैमानिकानां च्यवनमुक्तं, ते च देवा इति देवाधिकाराच्चमराभिधानस्य देवविशेषस्यावासविशेषप्ररूपणायाह—

कहिणं भंते ! चमरस्स असुरिंदस्स असुररन्नो चमरचंचा नामं आवासे पण्णत्ते ? गोयमा ! जंबुद्दीवे २ मंदरस्स पव्वयस्स दाहिणेणं तिरियमसंखेज्जे दीवसमुद्दे एवं जहा बितियए सभाए उद्देसए वत्तव्वया सच्चेव अपरिसेसा नेयव्वा नवरं इमं नाणत्तं जाव तिगिच्छकूडस्स उप्पायपव्वयस्स चमरचंचाए रायहाणीए चमरचंचस्स आवासपव्वयस्स अन्नेसिं च बहूणं सेसं तं चेव जाव तेरस य अंगुलाइं अद्धंगुलं च किंचिविसेसा० परिक्खेवेणं, तीसे णं चमरचंचाए रायहाणीए दाहिणपच्चत्थिमेणं छक्कोडिसए पणपन्नं च कोडीओ पणतीसं च सयसहस्साइं पन्नासं च सहस्साइं अरुणोदगसमुद्दं तिरियं वीइवइत्ता एत्थ णं चमरस्स असुरिंदस्स असुरकुमाररन्नो चमरचंचे नामं आवासे पण्णत्ते, चउरासीइं जोयणसहस्साइं आयामविक्खंभेणं दो जोयणसयसहस्सा पन्नट्ठिं च सहस्साइं छच्चत्तीसे जोयणसए किंचिविसेसाहिए परिक्खेवेणं, से णं एगेणं पागारेणं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अथ त्रयोदशमे शतके षष्ठं-उद्देशक: आरभ्यते

सव्वओ संमता संपरिक्खित्ते, से णं पागारे दिवड्ढं जोयणसयं उड्ढं उच्चत्तेणं एवं चमरचंचाए रायहा-णीए वत्तव्वया भाणियव्वा सभाविहूणा जाव चत्तारि पासायपंतीओ। चमरे णं भंते ! असुरिंदे असुरकु-मारराया चमरचंचे आवासे वसहिं उवेति ?, नो तिणट्ठे समट्ठे, से केणं खाइ अट्ठेणं भंते ! एवं वुचइ चम-रचंचे आवासे च० २ ?, गोयमा ! से जहानामए–इहं मणुस्सलोगंसि उवगारियलेणाइ वा उज्जाणियलेणाइ वा णिज्जाणियलेणाइ वा धारिवारियलेणाइ वा तत्थ णं बहवे मणुस्सा य मणुस्सीओ य आसयंति सयंति जहा रायप्पसेणइज्जे जाव कल्लाणफलवित्तिविसेसं पच्चणुब्भवमाणा विहरंति अन्नत्थ पुण वसहिं उवेंति, एवामेव गोयमा ! चमरस्स असुरिंदस्स असुरकुमाररन्नो चमरचंचे आवासे केवलं किड्डारतिपत्तियं अन्नत्थ पुण वसहिं उवेंति से तेणं० जाव आवासे, सेवं भंते ! सेवं भंतेत्ति जाव विहरइ (सूत्रं ४९०) ॥

'कहिण्णं भंते !' इत्यादि, 'सभाविहूणं'ति सुधर्माद्याः पञ्चेह सभा न वाच्याः, कियदूरं यावदियमिह चमरचंचा-राजधानीवक्तव्यता भणितव्या ? इत्याह—'जाव चत्तारि पासायपंतीओ'त्ति ताश्च प्राक् प्रदर्शिता एवेति, 'उवगा-रियलेणाइ व'त्ति 'औपकारिकलयनानि' प्रासादादिपीठकल्पानि 'उज्जाणियलेणाइ व'त्ति उद्यानगतजनानामुपकारिक-गृहाणि नगरप्रदेशगृहाणि वा 'णिज्जाणियलेणाइ व'त्ति नगरनिर्गमगृहाणि 'धारिवारियलेणाइ व'त्ति धाराप्रधानं वारि-जलं येषु तानि धारावारिकाणि तानि च तानि लयनानि चेति वाक्यम् 'आसयंति'त्ति 'आश्रयन्ते' ईषद्भजन्ते 'सयं-ति'त्ति 'श्रयन्ते' अनीषद्भजन्ते, अथवा 'आसयंति' ईषत्स्वपन्ति 'सयंति' अनीषत्स्वपन्ति 'जहा रायप्पसेणइज्जे'त्ति

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अनेन यत्सूचितं तदिदं–'चिट्ठंति' ऊर्ध्वस्थानेन तेषु तिष्ठन्ति 'निसीयंति' उपविशन्ति 'तुयट्टंति' निषण्णा आसते 'हसंति' परिहासं कुर्वन्ति 'रमन्ते' अक्षादिना रतिं कुर्वन्ति 'ललन्ति' ईप्सितक्रियाविशेषान् कुर्वन्ति 'कीलंति' काम-क्रीडां कुर्वन्ति 'किड्डंति' अन्तर्भूतकारितार्थत्वादन्यान् क्रीडयन्ति 'मोहयन्ति' मोहनं–निधुवनं विदधति । 'पुरापो-राणाणं सुचिन्नाणं सुपरिक्कंताणं सुभाणं कडाणं कम्माणं'ति व्याख्या चास्य प्राग्वदिति, 'वसहिं उवेंति'त्ति वासमुपयान्ति, 'एवामेवे'त्यादि, 'एवमेव' मनुष्याणामौपकारिकादिलयनवच्चमरस्य ३ चमरचञ्च आवासो न निवास-स्थानं केवलं किन्तु 'किड्डारइपत्तियं'ति क्रीडायां रतिः–आनन्दः क्रीडारतिः अथवा क्रीडा च रतिश्च क्रीडारती सा ते वा प्रत्ययो–निमित्तं यत्र तत् क्रीडारतिप्रत्ययं तत्रागच्छतीति शेषः ॥ अनन्तरमसुरकुमारविशेषावासवक्तव्यतोक्ता, असुरकुमारेषु च विराधितदेशसर्वसंयमा उत्पद्यन्ते ततश्च तेषु योऽत्र तीर्थे उत्पन्नस्तद्दर्शनायोपक्रमते—

तए णं समणे भगवं महावीरे अन्नया कयाइ रायगिहाओ नगराओ गुणसिलाओ जाव विहरइ । तेणं कालेणं तेणं समएणं चंपा नामं नयरी होत्था वन्नओ पुन्नभद्दे चेइए वन्नओ, तए णं समणे भगवं महावीरे अन्नया कदाइ पुव्वाणुपुव्विं चरमाणे जाव विहरमाणे जेणेव चंपा नगरी जेणेव पुन्नभद्दे चेतिए तेणेव उवाग० २ जाव विहरइ, तेणं कालेणं २ सिंधुसोवीरेसु जणवएसु वीतीभए नामं नगरे होत्था वन्नओ, तस्स णं वीतीभयस्स नगरस्स बहिया उत्तरपुरच्छिमे दिसीभाए एत्थ णं मियवणे नामं उज्जाणे होत्था सव्वोउय० वन्नओ, तत्थ णं वीतीभए नगरे उदायणे नामं राया होत्था महया वन्नओ, तस्स णं उदायणस्स रन्नो प-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [४९१--४९२]

दीप अनुक्रम [५८७--५८८]

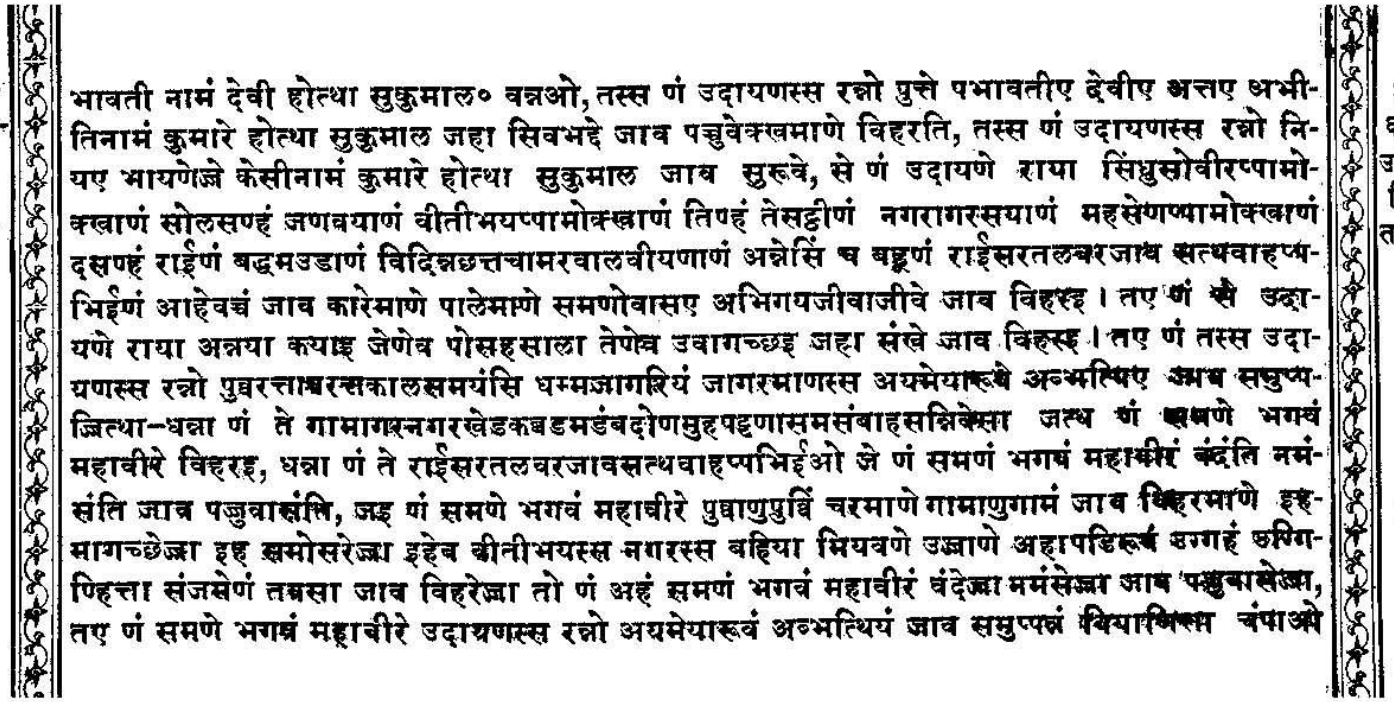

व्याख्या-अभयदेवी-या वृत्तिः

॥६१८॥

भावती नामं देवी होत्था सुकुमाल० वन्नओ, तस्स णं उदायणस्स रन्नो पुत्ते पभावतीए देवीए अत्तए अभीतिनामं कुमारे होत्था सुकुमाल जहा सिवभद्दे जाव पच्चुवेक्खमाणे विहरति, तस्स णं उदायणस्स रन्नो नियए भायणेज्जे केसीनामं कुमारे होत्था सुकुमाल जाव सुरूवे, से णं उदायणे राया सिंधुसोवीरप्पामोक्खाणं सोलसण्हं जणवयाणं वीतीभयप्पामोक्खाणं तिण्हं तेसट्ठीणं नगरागरसयाणं महसेणप्पामोक्खाणं दसण्हं राईणं बद्धमउडाणं विदिन्नछत्तचामरवालवीयणाणं अन्नेसिं च बहूणं राईसरतलवरजाव सत्थवाहप्पभिईणं आहेवच्चं जाव कारेमाणे पालेमाणे समणोवासए अभिगयजीवाजीवे जाव विहरइ। तए णं से उदायणे राया अन्नया कयाइ जेणेव पोसहसाला तेणेव उवागच्छइ जहा संखे जाव विहरइ। तए णं तस्स उदायणस्स रन्नो पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि धम्मजागरियं जागरमाणस्स अयमेयारूवे अज्झत्थिए जाव समुप्पज्जित्था–धन्ना णं ते गामागरनगरखेडकब्बडमडंबदोणमुहपट्टणासमसंबाहसन्निवेसा जत्थ णं समणे भगवं महावीरे विहरइ, धन्ना णं ते राईसरतलवरजावसत्थवाहप्पभिईओ जे णं समणं भगवं महावीरं वंदंति नमंसंति जाव पज्जुवासंति, जइ णं समणे भगवं महावीरे पुव्वाणुपुव्विं चरमाणे गामाणुगामं जाव विहरमाणे इहमागच्छेज्जा इह समोसरेज्जा इहेव वीतीभयस्स नगरस्स बहिया मियवणे उज्जाणे अहापडिरूवं उग्गहं ओगिण्हित्ता संजमेणं तवसा जाव विहरेज्जा तो णं अहं समणं भगवं महावीरं वंदेज्जा नमंसेज्जा जाव पज्जुवासेज्जा, तए णं समणे भगवं महावीरे उदायणस्स रन्नो अयमेयारूवं अज्झत्थियं जाव समुप्पन्नं वियाणित्ता चंपाओ

१३ शतके ६ उद्देशः उदायनामी चिवक्तव्यता सू ४९१

॥६१८॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उदायन-राजर्षि-चरित्रं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [४९१--४९२]

दीप अनुक्रम [५८७--५८८]

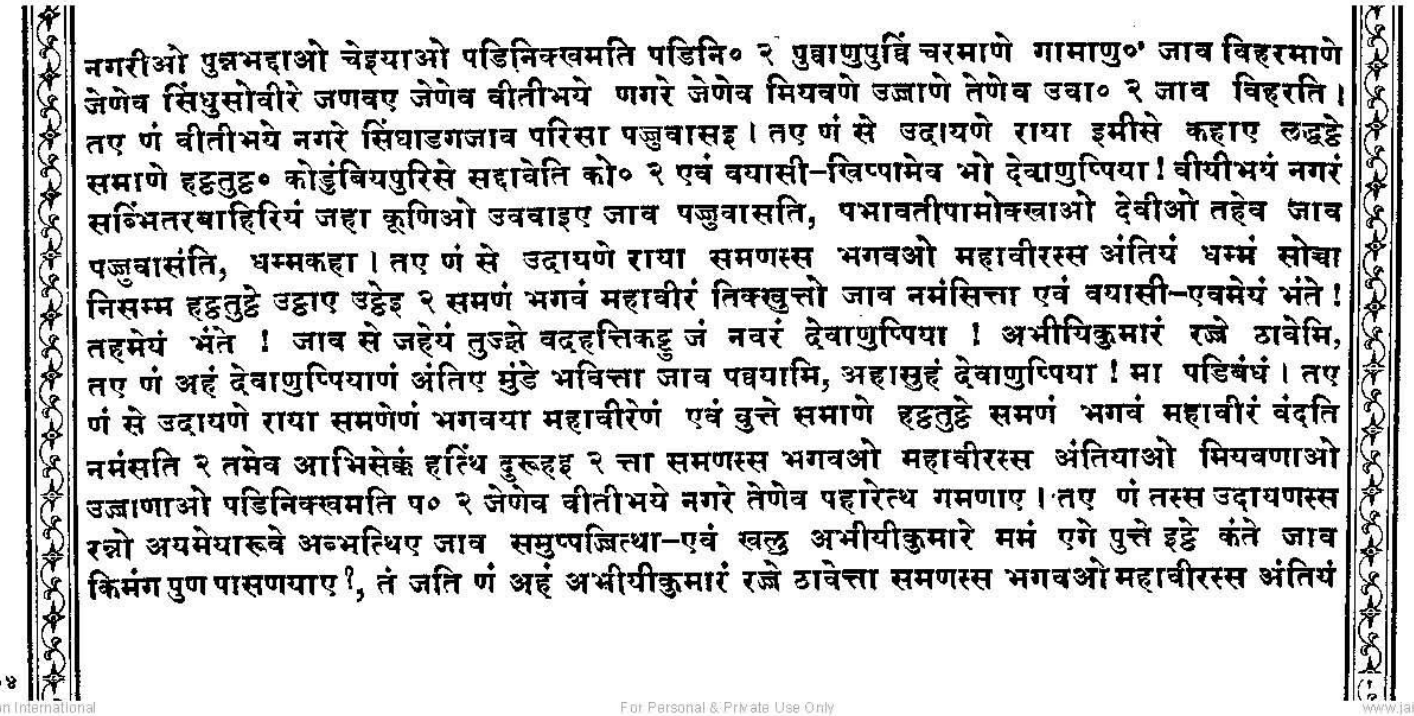

नगरीओ पुन्नभद्दाओ चेइयाओ पडिनिक्खमति पडिनि० २ पुव्वाणुपुव्विं चरमाणे गामाणु० जाव विहरमाणे जेणेव सिंधुसोवीरे जणवए जेणेव वीतीभये णगरे जेणेव मियवणे उज्जाणे तेणेव उवा० २ जाव विहरति। तए णं वीतीभये नगरे सिंघाडगजाव परिसा पज्जुवासइ। तए णं से उदायणे राया इमीसे कहाए लद्धट्ठे समाणे हट्ठतुट्ठ० कोडुंबियपुरिसे सद्दावेति को० २ एवं वयासी–खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया! वीयीभयं नगरं सब्भिंतरबाहिरियं जहा कूणिओ उववाइए जाव पज्जुवासति, पभावतीपामोक्खाओ देवीओ तहेव जाव पज्जुवासंति, धम्मकहा। तए णं से उदायणे राया समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियं धम्मं सोच्चा निसम्म हट्ठतुट्ठे उट्ठाए उट्ठेइ २ समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो जाव नमंसित्ता एवं वयासी–एवमेयं भंते! तहमेयं भंते! जाव से जहेयं तुज्झे वदहत्तिकट्टु जं नवरं देवाणुप्पिया! अभीयिकुमारं रज्जे ठावेमि, तए णं अहं देवाणुप्पियाणं अंतिए मुंडे भवित्ता जाव पव्वयामि, अहासुहं देवाणुप्पिया! मा पडिबंधं। तए णं से उदायणे राया समणेणं भगवया महावीरेणं एवं वुत्ते समाणे हट्ठतुट्ठे समणं भगवं महावीरं वंदति नमंसति २ तमेव आभिसेक्कं हत्थिं दुरूहइ २ त्ता समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियाओ मियवणाओ उज्जाणाओ पडिनिक्खमति प० २ जेणेव वीतीभये नगरे तेणेव पहारेत्थ गमणाए। तए णं तस्स उदायणस्स रन्नो अयमेयारूवे अब्भत्थिए जाव समुप्पज्जित्था–एवं खलु अभीयीकुमारे ममं एगे पुत्ते इट्ठे कंते जाव किमंग पुण पासणयाए?, तं जति णं अहं अभीयीकुमारं रज्जे ठावेत्ता समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियं

व्या० १०४

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उदायन-राजर्षि-चरित्रं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [४९१--४९२]

दीप अनुक्रम [५८७--५८८]

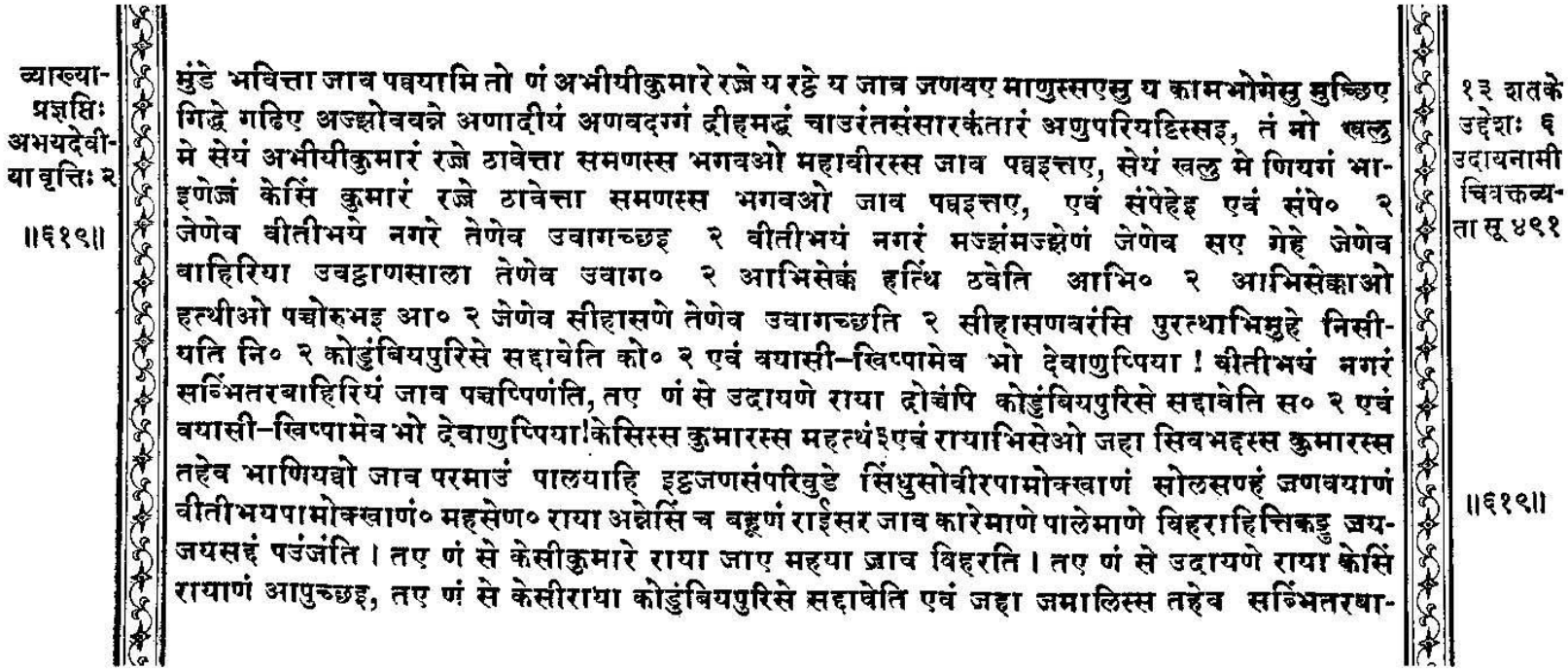

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥६१९॥

मुंडे भवित्ता जाव पव्वयामि तो णं अभीयीकुमारे रज्जे य रट्ठे य जाव जणवए माणुस्सएसु य कामभोगेसु मुच्छिए गिद्धे गढिए अज्झोववन्ने अणादीयं अणवदग्गं दीहमद्धं चाउरंतसंसारकंतारं अणुपरियट्टिस्सइ, तं नो खलु मे सेयं अभीयीकुमारं रज्जे ठावेत्ता समणस्स भगवओ महावीरस्स जाव पव्वइत्तए, सेयं खलु मे णियगं भाइणेज्जं केसिं कुमारं रज्जे ठावेत्ता समणस्स भगवओ जाव पव्वइत्तए, एवं संपेहेइ एवं संपे० २ जेणेव वीतीभये नगरे तेणेव उवागच्छइ २ वीतीभयं नगरं मज्झंमज्झेणं जेणेव सए गेहे जेणेव बाहिरिया उवट्ठाणसाला तेणेव उवाग० २ आभिसेक्कं हत्थिं ठवेति आभि० २ आभिसेक्काओ हत्थीओ पच्चोरुभइ आ० २ जेणेव सीहासणे तेणेव उवागच्छति २ सीहासणवरंसि पुरत्थाभिमुहे निसीयति नि० २ कोडुंबियपुरिसे सद्दावेति को० २ एवं वयासी–खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया ! वीतीभयं नगरं सब्भितरबाहिरियं जाव पच्चप्पिणंति, तए णं से उदायणे राया दोच्चंपि कोडुंबियपुरिसे सद्दावेति स० २ एवं वयासी–खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया! केसिस्स कुमारस्स महत्थं३एवं रायाभिसेओ जहा सिवभद्दस्स कुमारस्स तहेव भाणियव्वो जाव परमाउं पालयाहि इट्ठजणसंपरिवुडे सिंधुसोवीरपामोक्खाणं सोलसण्हं जणवयाणं वीतीभयपामोक्खाणं० महसेण० राया अन्नेसिं च बहूणं राईसर जाव कारेमाणे पालेमाणे विहराहित्तिकट्टु जयजयसद्दं पउंजंति। तए णं से केसीकुमारे राया जाए महया जाव विहरति। तए णं से उदायणे राया केसिं रायाणं आपुच्छइ, तए णं से केसीराया कोडुंबियपुरिसे सद्दावेति एवं जहा जमालिस्स तहेव सब्भितरबा-

१३ शतके उद्देशः ६ उदायनामी चिवक्तव्यता सू ४९१

॥६१९॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उदायन-राजर्षि-चरित्रं

हिरियं तहेव जाव निक्खमणाभिसेयं उवट्ठवेति, तए णं से केसीराया अणेगगणणायग जाव संपरिवुडे उदायणं रायं सीहासणवरंसि पुरत्थाभिमुहे निसीयावेति २ अट्ठसएणं सोवन्नियाणं एवं जहा जमालिस्स जाव एवं वयासी–भण सामी ! किं देमो ? किं पयच्छामो ? किंणा वा ते अट्ठो ?, तए णं से उदायणे राया केसिं रायं एवं वयासी–इच्छामि णं देवाणुप्पिया ! कुत्तियावणाओ एवं जहा जमालिस्स नवरं पउमावती अग्गकेसे पडिच्छइ पियविप्पयोगदूसणा, तए णं से केसी राया दोच्चंपि उत्तरावक्कमणं सीहासणं रयावेति दो० २ उदायणं रायं सेयापीतएहिं कलसेहिं सेसं जहा जमालिस्स जाव सन्निसन्ने तहेव अम्मधाती नवरं पउमावती हंसलक्खणं पडसाडगं गहाय सेसं तं चेव जाव सीयाओ पच्चोरुभति सी० २ जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ २ समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो वंदति नमंसति वं० नमं० उत्तरपुरच्छिमं दिसीभागं अवक्कमति उ० २ सयमेव आभरणमल्लालंकारं तं चेव पउमावती पडिच्छति जाव घडियव्वं सामी ! जाव नो पमादेयव्वंतिकट्टु, केसी राया पउमावती य समणं भगवं महावीरं वंदंति नमंसंति २ जाव पडिगया । तए णं से उदायणे राया सयमेव पंचमुट्ठियं लोयं सेसं जहा उसभदत्तस्स जाव सव्वदुक्खप्पहीणे (सूत्रं ४९१) ॥ तए णं तस्स अभीयिस्स कुमारस्स अन्नदा कयाइ पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि कुडुंबजागरियं जागरमाणस्स अयमेयारूवे अब्भत्थिए जाव समुप्पज्जित्था–एवं खलु अहं उदायणस्स पुत्ते पभावतीए देवीए अत्तए, तए णं से उदायणे राया ममं अवहाय नियगं भायणिज्जं केसिकुमारं रज्जे ठावेत्ता समणस्स भग-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [४९१--४९२]

दीप अनुक्रम [५८७--५८८]

वओ जाव पवइए, इमेणं एयारूवेणं महया अप्पत्तिएणं मणोमाणसिएणं दुक्खेणं अभिभूए समाणे अंतेपुरपरियालसंपरिवुडे सभंडमत्तोवगरणमायाए वीतीभयाओ नयराओ पडिनिग्गच्छंति पडिनि० २ पुव्वाणुपुव्विं चरमाणे गामाणुगामं दूइज्जमाणे जेणेव चंपा नयरी जेणेव कूणिए राया तेणेव उवा० २ कूणियं रायं उवसंपज्जित्ताणं विह० तत्थवि णं से विउलभोगसमितिसमन्नागए यावि होत्था, तए णं से अभीयीकुमारे समणोवासए यावि होत्था, अभिगय जाव विहरइ, उदायणंमि रायरिसिंमि समणुबद्धवेरे यावि होत्था, तेणं कालेणं २ इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए निरयपरिसामंतेसु चोसट्ठिं असुरकुमारावाससयसहस्सा पन्नत्ता, तए णं से अभीयी कुमारे बहूइं वासाइं समणोवासगपरियागं पाउणति पा०२अद्धमासियाए संलेहणाए तीसं भत्ताइं अणसणाए छेएइ२ तस्स ठाणस्स अणालोइयपडिक्कंते कालमासे कालं किच्चा इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए तीसाए निरयपरिसामंतेसु चोयट्ठीए आयावा जाव सहस्सेसु अन्नयरंसि आयावा असुरकुमारावासंसि असुरकुमारदेवत्ताए उव०, तत्थ णं अत्थेग० आयावगाणं असुरकुमाराणं देवाणं एगं पलि० ठिई प० तत्थ णं अभीयिस्सवि देवस्स एगं पलि० ठिई पण्णत्ता। से णं भंते ! अभीयीदेवे ताओ देवलोगाओ आउक्ख० ३ अणंतरं उव्वट्टित्ता कहिं ग० ? कहिं उव० ?, गोयमा ! महाविदेहे वासे सिज्झिहिति जाव अंतं काहिति, सेवं भंते ! सेवं भंतेत्ति (सूत्रं ४९२) ॥ १३–६ ॥

'तए ण'मित्यादि, 'सिंधुसोवीरेसु'त्ति सिन्धुनद्या आसन्नाः सौवीरा–जनपदविशेषाः सिन्धुसौवीरास्तेषु 'वीईभए'त्ति

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उदायन-राजर्षि-चरित्रं

विगता ईतयो भयानि च यतस्तद्वीतिभयं विदर्भेति केचित् 'सव्वोउयवन्नओ'त्ति अनेनेदं सूचितं–'सव्वोउयपुप्फफलसमिद्धे रम्मे नंदणवणप्पगासे'इत्यादीति । 'नगरागरसयाणं'ति करादायकानि नगराणि सुवर्णाद्युत्पत्तिस्थानान्याकरा नगराणि चाकराश्चेति नगराकरास्तेषां शतानि नगराकरशतानि तेषां 'नगरसयाणं'ति क्वचित्पाठः, 'विदिन्नछत्तचामरवालवीयणाणं'ति वितीर्णानि छत्राणि चामररूपवालव्यजनिकाश्च येषां ते तथा तेषाम् । 'अप्पत्तिएणं मणोमाणसिएणं दुक्खेणं'ति 'अप्रीतिकेन' अप्रीतिस्वभावेन मनसो विकारो मानसिकं मनसि मानसिकं न बहिरुपलक्ष्यमाणविकारं यत्तन्मनोमानसिकं तेन, केनैवंविधेन ? इत्याह—दुःखेन, 'सभंडमत्तोवगरणमायाय'त्ति स्वां–स्वकीयां भाण्डमात्रां–भाजनरूपं परिच्छदं उपकरणं च–शय्यादि गृहीत्वेत्यर्थः, अथवा सह भाण्डमात्रया यदुपकरणं तत्तथा तदादाय, 'समणुबद्धवेरि'त्ति अव्यवच्छिन्नवैरिभावः 'निरयपरिसामंतेसु'त्ति नरकपरिपार्श्वतः 'चोयट्ठीए आयावा असुरकुमारावासेसु'त्ति इह 'आयाव'त्ति असुरकुमारविशेषाः, विशेषतस्तु नावगम्यत इति ॥ त्रयोदशशते षष्ठः ॥ १३–६ ॥

य एतेऽनन्तरोद्देशकेऽर्था उक्तास्ते भाषयाऽतो भाषाया एव निरूपणाय सप्तम उच्यते, तस्य चेदमादिसूत्रम्—

रायगिहे जाव एवं वयासी–आया भंते ! भासा अन्ना भासा ?, गोयमा ! नो आया भासा अन्ना भासा, रूविं भंते ! भासा अरूविं भासा ?, गोयमा ! रूविं भासा नो अरूविं भासा, सचित्ता भंते ! भासा अचित्ता भासा ?, गोयमा ! नो सचित्ता भासा अचित्ता भासा, जीवा भंते ! भासा अजीवा भासा ?, गोयमा !

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र त्रयोदशमे शतके षष्ठं-उद्देशक: परिसमाप्त:

अथ त्रयोदशमे शतके सप्तम-उद्देशक: आरब्ध:

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [४९३]

दीप अनुक्रम [५८९]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥६२१॥

नो जीवा भासा अजीवा भासा। जीवाणं भंते ! भासा अजीवाणं भासा ?, गोयमा ! जीवाणं भासा नो अजीवाणं भासा, पुर्विं भंते ! भासा भासिज्जमाणी भासा भासासमयवीतिक्कंता भासा ?, गोयमा ! नो पुर्विं भासा भासिज्जमाणी भासा णो भासासमयवीतिक्कंता भासा, पुर्विं भंते ! भासा भिज्जति भासिज्जमाणी भासा भिज्जति भासासमयवीतिक्कंता भासा भिज्जति ?, गोयमा ! नो पुर्विं भासा भिज्जति भासिज्जमाणी भासा भिज्जइ नो भासासमयवीतिक्कंता भासा भिज्जति। कतिविहा णं भंते ! भासा पण्णत्ता ?, गोयमा ! चउविहा भासा पण्णत्ता, तंजहा–सच्चा मोसा सच्चामोसा असच्चामोसा (सूत्रं ४९३)॥

'रायगिहे' इत्यादि, 'आया भंते ! भास'त्ति काक्काऽध्येयं आत्मा–जीवो भाषा जीवस्वभावा भाषेत्यर्थः यतो जीवेन व्यापार्यते जीवस्य च बन्धमोक्षार्थौ भवति ततो जीवधर्मत्वाज्जीव इति व्यपदेशार्हा ज्ञानवदिति, अथान्या भाषा–न जीवस्वरूपा श्रोत्रेन्द्रियग्राह्यत्वेन मूर्त्ततयाऽऽत्मनो विलक्षणत्वादिति शङ्का अतः प्रश्नः, अत्रोत्तरं—'नो आया भास'त्ति आत्मरूपा नासौ भवति, पुद्गलमयत्वादात्मना च निसृज्यमानत्वात्तथाविधलोष्ठादिवत् अचेतनत्वाच्चाकाशवत्, यच्चोक्तं–जीवेन व्यापार्यमाणत्वाज्जीवः स्याज्ज्ञानवत्तदनैकान्तिकं, जीवव्यापारस्य जीवादत्यन्तं भिन्नस्वरूपेऽपि दात्रादौ दर्शनादिति। 'रूविं भंते ! भास'त्ति रूपिणी भदन्त ! भाषा श्रोत्रस्यानुग्रहोपघातकारित्वात्तथाविधकर्णाभरणादिवत्, अथारूपिणी भाषा चक्षुषाऽनुपलभ्यत्वाद्धर्मास्तिकायादिवदिति शङ्का अतः प्रश्नः, उत्तरं तु रूपिणी भाषा, यच्च चक्षुरग्राह्यत्वमरूपित्वसाधनायोक्तं तदनैकान्तिकं, परमाणुवायुपिशाचादीनां रूपवतामपि चक्षुरग्राह्यत्वेनाभिमत-

१३ शतके ७ उद्देशः भाषाया आत्मत्वादि सू ४९३

॥६२१॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

स्वादिति । अनात्मरूपाऽपि सचित्तासौ भविष्यति जीवच्छरीरवदिति पृच्छन्नाह—'सचित्ते'त्यादि, उत्तरं तु नो सचित्ता जीवनिसृष्टपुद्गलसंहतिरूपत्वात्तथाविधलेष्टुवत्, तथा 'जीवा भंते !'इत्यादि, जीवतीति जीवा–प्राणधारणस्वरूपा भाषा उतैतद्विलक्षणेति प्रश्नः, अत्रोत्तरं नो जीवा, उच्छ्वासादिप्राणानां तस्या अभावादिति। इह कैश्चिदभ्युपगम्यते अपौरुषेयी वेद-भाषा, तन्मतं मनस्याधायाह—'जीवाण'मित्यादि, उत्तरं तु जीवानां भाषा, वर्णानां तास्वादिव्यापारजन्यत्वात् तास्वादि-व्यापारस्य च जीवाश्रितत्वात्, यद्यपि चाजीवेभ्यः शब्द उत्पद्यते तथाऽपि नासौ भाषा, भाषापर्याप्तिजन्यस्यैव शब्दस्य भाषात्वेनाभिमतत्वादिति । तथा 'पुव्वि'मित्यादि, अत्रोत्तरं—नो पूर्वं भाषणाद् भाषा भवति मृत्पिण्डाव-स्थायां घट इव, भाष्यमाणा–निसर्गावस्थायां वर्त्तमाना भाषा घटावस्थायां घटस्वरूपमिव, 'नो' नैव भाषासमयव्यति-क्रान्ता–भाषासमयो–निसृज्यमानावस्थातो यावद्भाषापरिणामसमयस्तं व्यतिक्रान्ता या सा तथा भाषा भवति, घटसम-यातिक्रान्तघटवत् कपालावस्थ इत्यर्थः । 'पुव्विं भंते !'इत्यादि, अत्रोत्तरं–'नो' नैव पूर्वं निसर्गसमयाद्भाषाद्रव्यभेदेन भाषा भिद्यते, भाष्यमाणा भाषा भिद्यते, अयमत्राभिप्रायः—इह कश्चिन्मन्दप्रयत्नो वक्ता भवति स चाभिन्नान्येव शब्दद्रव्याणि निसृजति, तानि च निसृष्टान्यसङ्ख्येयात्मकत्वात् परिस्थूरत्वाच्च विभिद्यन्ते, विभिद्यमानानि च सङ्ख्येयानि योजनानि गत्वा शब्दपरिणामत्यागमेव कुर्वन्ति, कश्चित्तु महाप्रयत्नो भवति स खल्वादानविसर्गप्रयत्नाभ्यां भित्त्वैव विसृजति, तानि च सूक्ष्मत्वाद्बहुत्वाच्चानन्तगुणवृद्ध्या वर्द्धमानानि षट्सु दिक्षु लोकान्तमाप्नुवन्ति, अत्र च यस्यामव-स्थायां शब्दपरिणामस्तस्यां भाष्यमाणताऽवसेयेति, 'नो भासासमयवीइक्कंते'ति परित्यक्तभाषापरिणामेत्यर्थः

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [४९३]

दीप अनुक्रम [५८९]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥६२२॥

उत्कृष्टप्रयत्नस्य तदानीं निवृत्तत्वादितिभावः ॥ अनन्तरं भाषा निरूपिता, सा च प्रायो मनःपूर्विका भवतीति मनो-निरूपणायाह—

आया भंते ! मणे अन्ने मणे ?, गोयमा ! नो आया मणे अन्ने मणे जहा भासा तहा मणेवि जाव नो अजीवाणं मणे, पुव्विं भंते ! मणे मणिज्जमाणे मणे ? एवं जहेव भासा, पुव्विं भंते ! मणे भिज्जति मणिज्ज-माणे मणे भिज्जति मणसमयवीतिक्कंते मणे भिज्जति ?, एवं जहेव भासा । कतिविहे णं भंते ! मणे पण्णत्ते ?, गोयमा ! चउव्विहे मणे पन्नत्ते, तंजहा–सच्चे जाव असच्चामोसे (सूत्रं ४९४) ॥ आया भंते ! काये अन्ने काये ?, गोयमा ! आयावि काये अन्नेवि काये, रूविं भंते ! काये अरूविकाये ?, पुच्छा, गोयमा ! रूविंपि काये अरूविंपि काए, एवं एक्केके पुच्छा, गोयमा ! सचित्तेवि काये अचित्तेवि काए, जीवेवि काए अजीवेवि काए, जीवाणवि काए अजीवाणवि काए, पुव्विं भंते ! काये पुच्छा, गोयमा ! पुव्विंपि काए कायिज्जमाणेवि काए कायसमयवीतिक्कंतेवि काये, पुव्विं भंते ! काये भिज्जति पुच्छा, गोयमा ! पुव्विंपि काए भिज्जति जाव काए भिज्जति ॥ कइविहे णं भंते ! काये पन्नत्ते ?, गोयमा ! सत्तविहे काये पन्नत्ते, तंजहा–ओराले ओरा-लियमीसए वेउव्विए वेउव्वियमीसए आहारए आहारगमीसए कम्मए (सूत्रं ४९५) ॥

'आया भंते ! मणे' इत्यादि, एतत्सूत्राणि च भाषासूत्रवन्नेयानि, केवलमिह मनोद्रव्यसमुदयो मननोपकारी मनः-पर्याप्तिनामकर्मोदयसम्पाद्यो, भेदश्च तेषां विदलनमात्रमिति ॥ अनन्तरं मनो निरूपितं तच्च काये सत्येव भवतीति काय-

१३ शतके ७ उद्देशः मनस आत्मवादि सू ४९४ कायस्या-त्मवादि सू ४९५

॥६२२॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [४९४--४९५]

दीप अनुक्रम [५९०--५९१]

निरूपणायाह—'आया भंते ! काये'इत्यादि, आत्मा कायः कायेन कृतस्यानुभवनात्, न ह्यन्येन कृतमन्योऽनुभवति अकृतागमप्रसङ्गात्, अथान्य आत्मनः कायः कायैकदेशच्छेदेऽपि संवेदनस्य सम्पूर्णत्वेनाभ्युपगमादिति प्रश्नः, [ग्रन्थाग्रम् १३०००] उत्तरं त्वात्माऽपि कायः कथञ्चित्तद्व्यतिरेकात् क्षीरनीरवत् अन्ययस्पिण्डवत् काञ्चनोपलवद्वा, अत एव कायस्पर्शे सत्यात्मनः संवेदनं भवति, अत एव च कायेन कृतमात्मना भवान्तरे वेद्यते, अत्यन्तभेदे चाकृतागमप्रसङ्ग इति, 'अन्नेवि काये'त्ति अत्यन्ताभेदे हि शरीरांशच्छेदे जीवांशच्छेदप्रसङ्गः, तथा च संवेदनासम्पूर्णता स्यात्, तथा शरीरस्य दाहे आत्मनोऽपि दाहप्रसङ्गेन परलोकाभावप्रसङ्ग इत्यतः कथञ्चिदात्मनोऽन्योऽपि काय इति, अन्यैस्तु कार्म्मणकायमाश्रित्यात्मा काय इति व्याख्यातं, कार्मणकायस्य संसार्यात्मनश्च परस्पराव्यभिचरितत्वेनैकस्वरूपत्वात्, 'अन्नेवि काए'त्ति औदारिकादिकायापेक्षया जीवादन्यः कायस्तद्विमोचनेन तद्भेदसिद्धिरिति, 'रूविंपि काए'त्ति रूप्यपि कायः औदारिकादिकायस्थूलरूपापेक्षया, अरूप्यपि कायः कार्म्मणकायस्यातिसूक्ष्मरूपित्वेनारूपित्वविवक्षणात्, 'एवं एक्केक्के पुच्छ'त्ति पूर्वोक्तप्रकारेणैकैकसूत्रे पृच्छा विधेया, तद्यथा—'सचित्ते भंते ! काये अचित्ते काये ?'इत्यादि, अत्रोत्तरं—'सचित्तेवि काए' जीवदवस्थायां चैतन्यसमन्वितत्वात्, 'अचित्तेवि काए' मृतावस्थायां चैतन्यस्याभावात्, 'जीवेवि काये'त्ति जीवोऽपि विवक्षितोच्छ्वासादिप्राणयुक्तोऽपि भवति कायः औदारिकादिशरीरमपेक्ष्य, 'अजीवेवि काये'त्तिअजीवोऽपि उच्छ्वासादिरहितोऽपि भवति कायः कार्म्मणशरीरमपेक्ष्य, 'जीवाणवि काये'त्ति जीवानां सम्बन्धी 'कायः' शरीरं भवति, 'अजीवाणवि काये'त्ति अजीवानामपि स्थापनार्हदादीनां 'कायः' शरीरं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भवति शरीराकार इत्यर्थः 'पुव्विंपि काए'त्ति जीवसम्बन्धकालात्पूर्वमपि कायो भवति यथा भविष्यज्जीवसम्बन्धं मृतदर्दुरशरीरं 'काइज्जमाणेवि काए'त्ति जीवेन चीयमानोऽपि कायो भवति यथा जीवच्छरीरं, 'कायसमयवीतिक्कंतेवि काए'त्ति कायसमयो–जीवेन कायस्य कायताकरणलक्षणस्तं व्यतिक्रान्तो यः स तथा सोऽपि काय एव मृतकडेवरवत्, 'पुव्विंपि काए भिज्जइ'त्ति जीवेन कायतया ग्रहणसमयात्पूर्वमपि कायो मधुघटादिन्यायेन द्रव्यकायो भिद्यते प्रतिक्षणं पुद्गलचयापचयभावात्, 'काइज्जमाणेवि काए भिज्जइ'त्ति जीवेन कायीक्रियमाणोऽपि कायो भिद्यते, सिकताकणकलापमुष्टिग्रहणवत् पुद्गलानामनुक्षणं परिशाटनभावात्, 'कायसमयवीतिक्कंतेऽवि काये भिज्जइ'त्ति कायसमयव्यतिक्रान्तस्य च कायता भूतभावतया घृतकुम्भादिन्यायेन, भेदश्च पुद्गलानां तत्स्वभावतयेति, चूर्णिकारेण पुनः कायसूत्राणि कायशब्दस्य केवलशरीरार्थत्यागेन चयमात्रवाचकत्वमङ्गीकृत्य व्याख्यातानि, यदाह—'कायसद्दो सव्वभावसामन्नसरीरवाई' कायशब्दः सर्वभावानां सामान्यं यच्छरीरं चयमात्रं तद्वाचक इत्यर्थः, एवं च 'आयावि काए सेसदव्वाणिवि काये'त्ति, इदमुक्तं भवति–आत्माऽपि कायः प्रदेशसञ्चय इत्यर्थः तदन्योऽप्यर्थः कायप्रदेशसञ्चयरूपत्वादिति, रूपी कायः पुद्गलस्कन्धापेक्षया, अरूपी कायो जीवधर्मास्तिकायाद्यपेक्षया, सचित्तः कायो जीवच्छरीरापेक्षया, अचित्तः कायोऽचेतनसञ्चयापेक्षया, जीवः कायः–उच्छ्वासादियुक्तावयवसञ्चयरूपः, अजीवः कायः तद्विलक्षणः, जीवानां कायो–जीवराशिः, अजीवानां कायः–परमाण्वादिराशिरिति, एवं शेषाण्यपि॥ अथ कायस्यैव भेदानाह–'कइविहे ण'मित्यादि, अयं च सप्तविधोऽपि प्राग् विस्तरेण व्याख्यातः इह तु स्थानाशून्यार्थं लेशतो व्याख्यायते, तत्र च 'ओरालिए'त्ति औदारिकशरीरमेव पुद्ग-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [४९४--४९५]

दीप अनुक्रम [५९०--५९१]

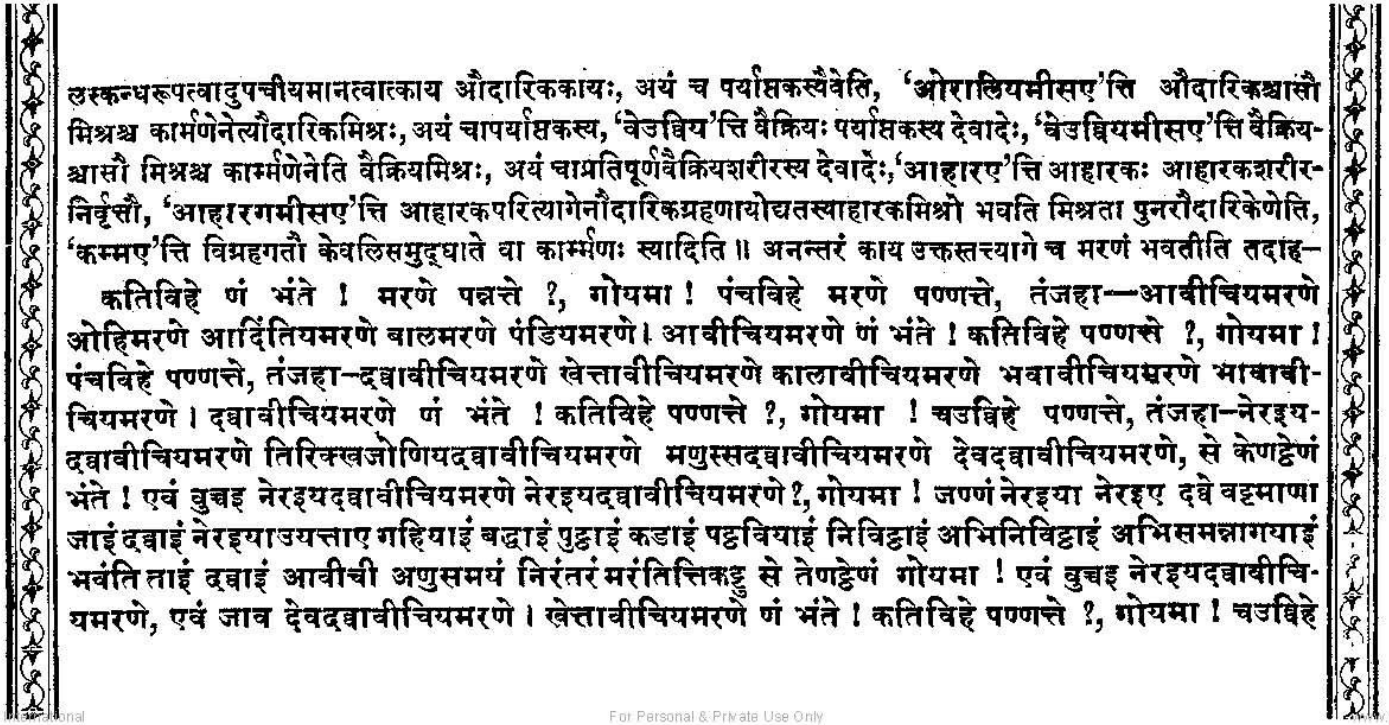

लस्कन्धरूपत्वादुपचीयमानत्वात्काय औदारिककायः, अयं च पर्याप्तकस्यैवेति, 'ओरालियमीसए'त्ति औदारिकश्चासौ मिश्रश्च कार्मणेनेत्यौदारिकमिश्रः, अयं चापर्याप्तकस्य, 'वेउव्विय'त्ति वैक्रियः पर्याप्तकस्य देवादेः, 'वेउव्वियमीसए'त्ति वैक्रियश्चासौ मिश्रश्च कार्म्मणेनेति वैक्रियमिश्रः, अयं चाप्रतिपूर्णवैक्रियशरीरस्य देवादेः, 'आहारए'त्ति आहारकः आहारकशरीरनिर्वृत्तौ, 'आहारगमीसए'त्ति आहारकपरित्यागेनौदारिकग्रहणायोद्यतस्याहारकमिश्रो भवति मिश्रता पुनरौदारिकेणेति, 'कम्मए'त्ति विग्रहगतौ केवलिसमुद्घाते वा कार्म्मणः स्यादिति ॥ अनन्तरं काय उक्तस्तत्यागे च मरणं भवतीति तदाह–

कतिविहे णं भंते ! मरणे पन्नत्ते ?, गोयमा ! पंचविहे मरणे पण्णत्ते, तंजहा—आवीचियमरणे ओहिमरणे आदिंतियमरणे बालमरणे पंडियमरणे। आवीचियमरणे णं भंते ! कतिविहे पण्णत्ते ?, गोयमा ! पंचविहे पण्णत्ते, तंजहा–दव्वावीचियमरणे खेत्तावीचियमरणे कालावीचियमरणे भवावीचियमरणे भावावीचियमरणे। दव्वावीचियमरणे णं भंते ! कतिविहे पण्णत्ते ?, गोयमा ! चउव्विहे पण्णत्ते, तंजहा–नेरइयदव्वावीचियमरणे तिरिक्खजोणियदव्वावीचियमरणे मणुस्सदव्वावीचियमरणे देवदव्वावीचियमरणे, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ नेरइयदव्वावीचियमरणे नेरइयदव्वावीचियमरणे ?, गोयमा ! जण्णं नेरइया नेरइए दव्वे वट्टमाणा जाइं दव्वाइं नेरइयाउयत्ताए गहियाइं बद्धाइं पुट्ठाइं कडाइं पट्ठवियाइं निविट्ठाइं अभिनिविट्ठाइं अभिसमन्नागयाइं भवंति ताइं दव्वाइं आवीची अणुसमयं निरंतरं मरंतित्तिकट्टु से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ नेरइयदव्वावीचियमरणे, एवं जाव देवदव्वावीचियमरणे। खेत्तावीचियमरणे णं भंते ! कतिविहे पण्णत्ते ?, गोयमा ! चउव्विहे

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मरण एवं तस्य आवीचिमरणादि पञ्च भेदा:

पण्णत्ते, तंजहा–नेरइयखेत्तावीचियमरणे जाव देव०, से केणट्ठेणं भंते! एवं० नेरइयखेत्तावीचियमरणे नेर० २?, जण्णं नेरइया नेरइयखेत्ते वट्टमाणा जाइं दव्वाइं नेरइयाउयत्ताए एवं जहेव दव्वावीचियमरणे तहेव खेत्तावीचियमरणेवि, एवं जाव भावावीचियमरणे। ओहिमरणे णं भंते! कतिविहे पण्णत्ते?, गोयमा! पंचविहे पण्णत्ते, तंजहा–दव्वोहिमरणे खेत्तोहिमरणे जाव भावोहिमरणे। दव्वोहिमरणे णं भंते! कतिविहे पण्णत्ते?, गोयमा! चउविहे पण्णत्ते, तंजहा–नेरइयदव्वोहिमरणे जाव देवदव्वोहिमरणे, से केणट्ठेणं भंते! एवं वु० नेरइयदव्वोहिमरणे २?, गोयमा! जण्णं नेरइया नेरइयदव्वे वट्टमाणा जाइं दव्वाइं संपयं मरंति जण्णं नेरइयाताइं दव्वाइं अणागए काले पुणोवि मरिस्संति से तेण० गोयमा! जाव दव्वोहिमरणे, एवं तिरिक्खजोणिय० मणुस्स० देवोहिमरणेवि, एवं एएणं गमेणं खेत्तोहिमरणेवि कालोहिमरणेवि भवोहिमरणेवि भावोहिमरणेवि। आइंतियमरणे णं भंते! पुच्छा, गोयमा! पंचविहे पन्नत्ते, तं०–दव्वादिंतियमरणे खेत्तादिंतियमरणे जाव भावादिंतियमरणे, दव्वादिंतियमरणे णं भंते! कतिविहे प० ?, गो० ! चउविहे प० तं०–नेरइयदव्वाइंतियमरणे जाव देवदव्वादिंतियमरणे, से केणट्ठेणं० एवं वु० नेरइयदव्वादिंतियमरणे नेर० २?, गो० ! जण्णं नेरइया नेरइयदव्वे वट्टमाणा जाइं दव्वाइं संपयं मरंति जेणं नेरइया ताइं दव्वाइं अणागए काले नो पुणोवि मरिस्संति से तेणट्ठेणं जावमरणे, एवं तिरिक्ख०मणुस्स०देवाइंतियमरणे, एवं खेत्ताइंतियमरणेवि एवं जाव भावाइंतियमरणेवि। बालमरणे णं भंते! कतिविहे प० ?, गो० ! दुवालसविहे पं० तं०—वलयमरणं जहा खंदए

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	मरण एवं तस्य आवीचिमरणादि पञ्च भेदा:

जाव गद्धपट्ठे ॥ पंडियमरणे णं भंते ! कइविहे पण्णत्ते ?, गोयमा ! दुविहे पण्णत्ते, तंजहा–पाओवगमणे य भत्तपच्चक्खाणे य । पाओवगमणे णं भंते ! कतिविहे प० ?,गोयमा ! दुविहे प०, तं०–णीहारिमे य अनीहारिमे य जाव नियमं अपडिकम्मे । भत्तपच्चक्खाणे णं भंते ! कतिविहे प० ?, एवं तं चेव नवरं नियमं सपडिकम्मे । सेवं भंते २ त्ति (सूत्रं ४९६) ॥ १३–७ ॥

'कतिविहे णं भंते ! मरणे'इत्यादि, 'आवीइयमरणे'त्ति आ–समन्ताद्वीचयः–प्रतिसमयमनुभूयमानायुषोऽपरापरायुर्दलिकोदयात्पूर्वपूर्वायुर्दलिकविच्युतिलक्षणाऽवस्था यस्मिन् तदावीचिकं अथवाऽविद्यमाना वीचिः–विच्छेदो यत्र तदवीचिकं अवीचिकमेवावीचिकं तच्च तन्मरणं चेत्यावीचिकमरणं, 'ओहिमरणे'त्ति अवधिः–मर्यादा ततश्चावधिना मरणमवधिमरणं, यानि हि नारकादिभवनिबन्धनतयाऽऽयुःकर्मदलिकान्यनुभूय म्रियते, यदि पुनस्तान्येवानुभूय मरिष्यते तदा तदवधिमरणमुच्यते, तद्द्रव्यापेक्षया पुनस्तद्ग्रहणावधिं यावज्जीवस्य मृतत्वात्, संभवति च गृहीतोज्झितानां कर्म्मदलिकानां पुनर्ग्रहणं परिणामवैचित्र्यादिति, 'आइंतियमरणे'त्ति अत्यन्तं भवमात्यन्तिकं तच्च तन्मरणं चेति वाक्यं, यानि हि नरकाद्यायुष्कतया कर्मदलिकान्यनुभूय म्रियते मृतश्च न पुनस्तान्यनुभूय पुनर्मरिष्यत इत्येवं यन्मरणं, तच्च तद्द्रव्यापेक्षयाऽत्यन्तभावित्वादात्यन्तिकमिति, 'बालमरणे'त्ति अविरतमरणं 'पंडियमरणे'त्ति सर्वविरतमरणं, तत्रावीचिकमरणं पञ्चधा द्रव्यादिभेदेन, द्रव्यावीचिकमरणं च चतुर्द्धा नारकादिभेदात्, तत्र नारकद्रव्यावीचिकमरणप्रतिपादनायाह—'जण्ण'मित्यादि, 'यत्' यस्माद्भेतोर्नैरयिका नारकत्वे द्रव्ये नारकजीवत्वेन वर्त्त-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मरण एवं तस्य आवीचिमरणादि पञ्च भेदा:

माना मरन्तीति योगः, 'नेरइयाउयत्ताए'त्ति नैरयिकायुष्कतया 'गहियाइं'ति स्पर्शनतः 'बद्धाइं'ति बन्धनतः 'पुट्ठाइं'ति पोषितानि प्रदेशप्रक्षेपतः 'कडाइं'ति विशिष्टानुभागतः 'पट्ठवियाइं'ति स्थितिसम्पादनेन 'निविट्ठाइं'ति जीवप्रदेशेषु 'अभिनिविट्ठाइं'ति जीवप्रदेशेष्वभिव्याप्त्या निविष्टानि अतिगाढतां गतानीत्यर्थः, ततश्च 'अभिसमन्नागयाइं'ति अभिसमन्वागतानि–उदयावलिकायामागतानि तानि द्रव्याणि 'आविइ'त्ति, किमुक्तं भवति ?–'अणुसमयं'ति अनुसमयं–प्रतिक्षणम्, एतच्च कतिपयसमयसमाश्रयणतोऽपि स्यादत आह—'निरंतरं मरंति'त्ति 'निरन्तरम्', अव्यवच्छेदेन सकलसमयेष्वित्यर्थः म्रियन्ते विमुञ्चन्तीत्यर्थः 'इतिकट्टु'त्ति इतिहेतोर्नैरयिकद्रव्यावीचिकमरणमुच्यत इति शेषः, एतस्यैव निगमनार्थमाह—'से तेणट्ठेण'मित्यादि । 'एवं जाव भावावीचियमरणे'त्ति इह यावत्करणात् कालावीचिकमरणं भवावीचिकमरणं च द्रष्टव्यं, तत्र चैवं पाठः—'कालावीइयमरणे णं भंते ! कइविहे पण्णत्ते ?, गोयमा ! चउव्विहे पण्णत्ते, तंजहा–नेरइयकालावीइयमरणे ४, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ नेरइयकालावीचियमरणे २ ?, गोयमा ! जन्नं नेरइया नेरइयकाले वट्टमाणा'इत्यादि, एवं भवावीचिकमरणमप्यध्येयम् । नैरयिकद्रव्यावधिमरणसूत्रे 'जण्ण'मित्यादि, एवं चेहाक्षरघटना–नैरयिकद्रव्ये वर्त्तमाना ये नैरयिका यानि द्रव्याणि साम्प्रतं म्रियन्ते–त्यजन्ति तानि द्रव्याण्यनागतकाले पुनस्त इति गम्यं मरिष्यन्ते–त्यक्ष्यन्तीति यत्तन्नैरयिकद्रव्यावधिमरणमुच्यत इति शेषः 'से तेणट्ठेण'मित्यादि निगमनम् ॥ पण्डितमरणसूत्रे 'णीहारिमे अणीहारिमे'त्ति यत्पादपोपगमनमाश्रयस्यैकदेशे विधीयते तन्निर्हारिमं, कडेवरस्य निर्हरणीयत्वात्, यच्च गिरिकन्दरादौ विधीयते तद-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मरण एवं तस्य आवीचिमरणादि पञ्च भेदा:

निर्हारिमं, कडेवरस्यानिर्हरणीयत्वात्, 'नियमं अप्पडिकम्मे'त्ति शरीरप्रतिकर्मवर्जितमेव, चतुर्विधाहारप्रत्याख्याननिष्पन्नं चेदं भवतीति, 'तं चेव'त्ति करणान्निर्हारिममनिर्हारिमं चेति दृश्यं, सप्रतिकर्म्मैव चेदं भवतीति ॥ त्रयोदशशते सप्तमः ॥ १३–७ ॥

अनन्तरोद्देशके मरणमुक्तं, तच्चायुष्कर्मस्थितिक्षयरूपमिति कर्म्मणां स्थितिप्रतिपादनार्थोऽष्टम उद्देशकस्तस्य चेदमादिसूत्रम्—

कति णं भंते ! कम्मपगडीओ पण्णत्ताओ ?, गोयमा ! अट्ठ कम्मपगडीओ पण्णत्ताओ एवं बंधट्ठिइउद्देसो भाणियव्वो निरवसेसो जहा पन्नवणाए । सेवं भंते ! सेवं भंते ! (सूत्रं ४९७) ॥ १३–८ ॥

'कति ण'मित्यादि, 'एवं बंधठिइउद्देसओ'त्ति 'एवम्' अनेन प्रश्नोत्तरक्रमेण बन्धस्य–कर्म्मबन्धस्य स्थितिर्बन्धस्थितिः कर्म्मस्थितिरित्यर्थः तदर्थं उद्देशको बन्धस्थित्युद्देशको भणितव्यः, स च प्रज्ञापनायास्त्रयोविंशतितमपदस्य द्वितीयः, इह च वाचनान्तरे सङ्ग्रहणीगाथाऽस्ति, सा चेयं—'पयडीणं भेयठिई बंधोवि य इंदियाणुवाएणं । केरिसय जहन्नठिइं बंधइ उक्कोसियं वावि ॥ १ ॥' अस्याश्चायमर्थः–कर्म्मप्रकृतीनां भेदो वाच्यः, स चैवं—'कइ णं भंते ! कम्मपयडीओ पन्नत्ताओ ?, गोयमा ! अट्ठ कम्मपगडीओ पन्नत्ताओ, तंजहा–नाणावरणिज्जं दंसणावरणिज्ज'मित्यादि, तथा 'नाणावरणिज्जे णं भंते ! कम्मे कतिविहे पण्णत्ते ?, गोयमा ! पंचविहे पण्णत्ते, तंजहा–आभिणिबोहियणा-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र त्रयोदशमे शतके सप्तम-उद्देशक: परिसमाप्त:

अथ त्रयोदशमे शतके अष्टम-उद्देशक: आरब्ध:

णावरणिज्जे सुयणाणावरणिज्जे'इत्यादि। तथा प्रकृतीनां स्थितिर्वाच्या, सा चैवं—नाणावरणिज्जस्स णं भंते! कम्मस्स केवइयं कालं ठिती पण्णत्ता?, गोयमा! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं तीसं सागरोवमकोडाकोडीओ'इत्यादि, तथा बन्धो ज्ञानावरणीयादिकर्म्मणामिन्द्रियानुपातेन वाच्यः, एकेन्द्रियादिर्जीवः कः कियतीं कर्म्मस्थितिं बध्नाति? इति वाच्यमित्यर्थः, स चैवम्—'एगिंदिया णं भंते! जीवा नाणावरणिज्जस्स कम्मस्स किं बंधंति?, गोयमा! जहन्नेणं सागरोवमस्स तिन्नि सत्तभागे पलिओवमस्स असंखेज्जेणं भागेणं ऊणए उक्कोसेणं ते चेव पडिपुन्ने बंधति'इत्यादि, तथा कीदृशो जीवो जघन्यां स्थितिं कर्मणामुत्कृष्टां वा बध्नातीति वाच्यं, तच्चेदं—'नाणावरणिज्जस्स णं भंते! कम्मस्स जहन्नट्ठिइबंधए के०?, गोयमा! अन्नयरे सुहुमसंपराए उवसामए वा खवए वा एस णं गोयमा! णाणावरणिज्जस्स कम्मस्स जहन्नट्ठिइबंधए तवइरित्ते अजहन्ने'इत्यादि॥ त्रयोदशशतेऽष्टमः॥ १३–८॥

अनन्तरोद्देशके कर्म्मस्थितिरुक्ता, कर्म्मवशाच्च वैक्रियकरणशक्तिर्भवतीति तद्वर्णनार्थो नवम उद्देशकस्तस्य चेदमादिसूत्रम्—

रायगिहे जाव एवं वयासी–से जहानामए–केइ पुरिसे केयाघडियं गहाय गच्छेज्जा, एवामेव अणगारेवि भावियप्पा केयाघडियाकिच्चहत्थगएणं अप्पाणेणं उद्धं वेहासं उप्पाएज्जा?, गोयमा! हंता उप्पाएज्जा,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	अत्र त्रयोदशमे शतके अष्टम-उद्देशक: परिसमाप्त: अथ त्रयोदशमे शतके नवम-उद्देशक: आरब्ध:

अणगारे णं भंते ! भावियप्पा केवतियाइं पभू केयाघडियाहत्थकिच्चगयाइं रूवाइं विउव्वित्तए ?, गोयमा ! से जहानामए–जुवतिं जुवाणे हत्थेणं हत्थे एवं जहा तइयसए पंचमुद्देसए जाव नो चेव णं संपत्तीए विउव्विंसु वा विउव्विंति वा विउव्विस्संति वा, से जहानामए–केइ पुरिसे हिरन्नपेलं गहाय गच्छेज्जा एवामेव अणगारेवि भावियप्पा हिरण्णपेलहत्थकिच्चगएणं अप्पाणेणं सेसं तं चेव, एवं सुवन्नपेलं एवं रयणपेलं वइरपेलं वत्थपेलं आभरणपेलं, एवं वियलकिडुं सुंबकिडुं चम्मकिडुं कंबलकिडुं एवं अयभारं तंबभारं तउयभारं सीसगभारं हिरन्नभारं सुवन्नभारं वइरभारं, से जहानामए–वग्गुली सिया दोवि पाए उल्लंबिया २ उड्ढंपादा-अहोसिरा चिट्ठेज्जा एवामेव अणगारेवि भावियप्पा वग्गुलीकिच्चगएणं अप्पाणेणं उड्ढं वेहासं, एवं जन्नोवइयवत्तव्वया भा० जाव विउव्विस्संति वा, से जहानामए–जलोया सिया उदगंसि कायं उव्विहिया २ गच्छेज्जा एवामेव सेसं जहा वग्गुलीए, से जहाणामए–बीयंबीयगसउणे सिया दोवि पाए समतुरंगेमाणे स० २ गच्छेज्जा एवामेव अणगारे सेसं तं चेव, से जहाणामए–पक्खिविरालिए सिया रुक्खाओ रुक्खं डेवेमाणे गच्छेज्जा एवामेव अणगारे सेसं तं चेव, से जहानामए–जीवंजीवगसउणे सिया दोवि पाए समतुरंगेमाणे स० २ गच्छेज्जा एवामेव अणगारे सेसं तं चेव, से जहाणामए–हंसे सिया तीराओ तीरं अभिरममाणे २ गच्छेज्जा एवामेव अणगारे हंसकिच्चगएणं अप्पाणेणं तं चेव, से जहानामए समुद्दवायसए सिया वीईओ वीइं डेवेमाणे गच्छेज्जा एवामेव तहेव, से जहानामए–केइ पुरिसे चक्कं गहाय गच्छेज्जा एवामेव अणगारेवि भावियप्पा चक्क

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हत्थकिच्चगएणं अप्पाणेणं सेसं जहा केयाघडियाए, एवं छत्तं एवं चामरं, से जहानामए–केइ पुरिसे रयणं गहाय गच्छेज्जा एवं चेव, एवं वइरं वेरुलियं जाव रिट्ठं, एवं उप्पलहत्थगं एवं पउमहत्थगं एवं कुमुदहत्थगं एवं जाव से जहानामए–केइ पुरिसे सहस्सपत्तगं गहाय गच्छेज्जा एवं चेव, से जहानामए–केइ पुरिसे भिसं अवदालिय २ गच्छेज्जा एवामेव अणगारेवि भिसकिच्चगएणं अप्पाणेणं तं चेव, से जहानामए–मुणालिया सिया उदगंसि कायं उम्मज्जिय २ चिट्ठिज्जा एवामेव सेसं जहा वग्गुलीए, से जहानामए–वणसंडे सिया किण्हे किण्होभासे जाव निकुरुंबभूए पासादीए ४ एवामेव अणगारेवि भावियप्पा वणसंडकिच्चगएणं अप्पाणेणं उड्ढं वेहासं उप्पाएज्जा सेसं तं चेव, से जहानामए–पुक्खरणी सिया चउक्कोणा समतीरा अणुपुव्वसुजायजाव-सद्दुन्नइयमहुरसरणादिया पासादीया ४ एवामेव अणगारेवि भावियप्पा पोक्खरणीकिच्चगएणं अप्पाणेणं उड्ढं वेहासं उप्पएज्जा ?, हंता उप्पएज्जा, अणगारे णं भंते ! भावियप्पा केवतियाइं पभू पोक्खरणीकिच्चगयाइं रूवाइं विउव्वित्तए ?, सेसं तं चेव जाव विउव्विस्संति वा । से भंते ! किं मायी विउव्वति अमायी विउव्वति ?, गोयमा ! मायी विउव्वइ नो अमायी विउव्वइ, मायी णं तस्स ठाणस्स अणालोइय० एवं जहा तइयसए चउत्थुद्देसए जाव अत्थि तस्स आराहणा । सेवं भंते ! सेवं भंते ! जाव विहरइत्ति (सूत्रं ४९८) ॥ १३–९ ॥

'रायगिहे'इत्यादि, 'केयाघडियं'ति रज्जुप्रान्तबद्धघटिकां 'केयाघडियाकिच्चहत्थगएणं'ति केयाघटिकालक्षणं यत्कृत्यं–कार्यं तत् हस्ते गतं यस्य स तथा तेनात्मना 'वेहासं'ति विभक्तिपरिणामात् 'विहायसि' आकाशे 'केयाघ-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

डियाकिच्चहत्थगयाइं'ति केयाघटिकालक्षणं कृत्यं हस्ते गतं येषां तानि तथा, 'हिरन्नपेडं'ति हिरण्यस्य मञ्जूषां 'वियलकिलं'ति विदलानां वंशार्द्धानां यः कटः स तथा तं 'सुंबकिडुं'ति वीरणकटं 'चम्मकिडुं'ति चर्म्मव्यूतं खट्वादिकं 'कंबलकिडुं'ति ऊर्णामयं कम्बलं–जीनादि, 'वग्गुली'ति चर्म्मपक्षः पक्षिविशेषः 'वग्गुलिकिच्चगएणं'ति वग्गुलीलक्षणं कृत्यं–कार्यं गतं–प्राप्तं येन स तथा तद्रूपतां गत इत्यर्थः, 'एवं जन्नोवइयवत्तव्वया भाणियव्वा'इत्यनेनेदं सूचितं—'हंता उप्पएज्जा, अणगारे णं भंते ! भावियप्पा केवइयाइं पभू वग्गुलिरूवाइं विउवित्तए ?, गोयमा ! से जहानामए–जुवतिं जुवाणे हत्थेणं हत्थे गिण्हेज्जा'इत्यादि, 'जलोय'त्ति जलौका जलजो द्वीन्द्रियजीवविशेषः 'उविहिय'त्ति उद्धूय २ उत्प्रेर्य्य २ इत्यर्थः 'बीयंबीयगसउणे'त्ति बीजंबीजकाभिधानः शकुनिः स्यात् 'दोवि पाए'त्ति द्वावपि पादौ 'समतुरंगेमाणे'त्ति समौ–तुल्यौ तुरङ्गस्य–अश्वस्य समोत्क्षेपणं कुर्वन् समतुरंगयमाणः समकमुत्पाटयन्नित्यर्थः 'पक्खविरालए'त्ति जीवविशेषः 'डेवेमाणे'त्ति अतिक्रामन्नित्यर्थः, 'वीईओ वीईं'ति कल्लोलात् कल्लोलं, 'वेरुलियं' इह यावत्करणादिदं दृश्यं—'लोहियक्खं मसारगल्लं हंसगब्भं पुलगं सोगंधियं जोईरसं अंकं अंजणं रयणं जायरूवं अंजणपुलगं फलिहं'ति, 'कुमुदहत्थगं'इत्यत्र त्वेवं यावत्करणादिदं दृश्यं—'नलिणहत्थगं सुभगहत्थगं सोगंधियहत्थगं पुंडरीयहत्थगं महापुंडरीयहत्थगं सयवत्तहत्थगं'ति, 'बिसं'ति बिसं–मृणालम् 'अवदालिय'त्ति अवदार्य–दारयित्वा 'मुणालिय'त्ति नलिनी कायम् 'उम्मज्जिय'त्ति कायमुन्मज्य–उन्मग्नं कृत्वा, 'किण्हे किण्होभासे'त्ति 'कृष्णः' कृष्णवर्णोऽञ्जनवत्स्वरूपेण कृष्ण एवावभासते—द्रष्टृणां प्रतिभातीति कृष्णावभासः, इह यावत्कारणादिदं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥६२८॥

दृश्यं—'नीले नीलोभासे हरिए हरिओभासे सीए सीओभासे निद्धे निद्धोभासे तिव्वे तिव्वोभासे किण्हे किण्हच्छाए नीले नीलच्छाए हरिए हरियच्छाए सीए सीयच्छाए तिव्वे तिव्वच्छाए घणकडियकडिच्छाए रम्मे महामेहनिउरंबभूए'त्ति तत्र च 'नीले नीलोभासे'त्ति प्रदेशान्तरे 'हरिए हरिओभासे'त्ति प्रदेशान्तरं एव नीलश्च मयूरगलवत् हरितस्तु शुकपिच्छवत् हरितालाभ इति च वृद्धाः, 'सीए सीओभासे'त्ति शीतः स्पर्शापेक्षया वह्याद्याक्रान्तत्वादिति च वृद्धाः 'निद्धे निद्धोभासे'त्ति स्निग्धो रूक्षत्ववर्जितः 'तिव्वे तिव्वोभासे'त्ति 'तीव्रः' वर्णादि-गुणप्रकर्षवान् 'किण्हे किण्हच्छाए'त्ति इह कृष्णशब्दः कृष्णच्छाय इत्यस्य विशेषणमिति न पुनरुक्तता, तथाहि—कृष्णः सन् कृष्णच्छायः, छाया चादित्यावरणजन्यो वस्तुविशेषः, एवमुत्तरपदेष्वपि, 'घणकडियकडिच्छाए'त्ति अन्योऽन्यं शाखानुप्रवेशाद्बहलं निरन्तरच्छाय इत्यर्थः, 'अणुपुव्वसुजाय'इत्यत्र यावत्करणादेवं दृश्यम्—'अणुपुव्वसुजायव-प्पगंभीरसीयलजला' अनुपूर्वेण सुजाता वप्रा यत्र गम्भीरं शीतलं च जलं यत्र सा तथेत्यादि, 'सदुन्न-इयमहुरसरनाइय'त्ति इदमेवं दृश्यं—'सुयबरहिणमयणसालकोंचकोइलकोज्जकाभिंकारककोंडलकजीवंजीवकनंदीमुहकविलपिंगलखगकारंडगचक्कवायकलहंससारसअणेगसउणगणमिहुणविरइयसदुन्नइयमहुरसरनाइय'त्ति तत्र शुकादीनां सारसान्तानामनेकेषां शकुनिगणानां मिथुनैर्विरचितं शब्दोन्नतिकं च–उन्नतशब्दकं मधुरस्वरं च नादितं–लपितं यस्यां सा तथेति ॥ त्रयोदशशते नवमः ॥ १३–९ ॥

१३ शतके ९ उद्देशः साधोः केवल-घटिकादिवै क्रियकृतिः सू ४९८

॥६२८॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र त्रयोदशमे शतके नवम-उद्देशक: परिसमाप्त:

अनन्तरोद्देशके वैक्रियकरणमुक्तं, तच्च समुद्घाते सति छद्मस्थस्य भवतीति छाद्मस्थिकसमुद्घाताभिधानार्थो दशम उद्देशकस्तस्य चेदमादिसूत्रम्—

कति णं भंते ! छाउमत्थियसमुग्घाया पन्नत्ता ?, गोयमा ! छ छाउमत्थिया समुग्घाया पन्नत्ता, तंजहा– वेयणासमुग्घाए एवं छाउमत्थियसमुग्घाया नेयव्वा जहा पन्नवणाए जाव आहारगसमुग्घायेत्ति । सेवं भंते ! सेवं भंतेत्ति (सूत्रं ४९९) ॥ १३–१० ॥ तेरसमं सयं समत्तं ॥

'कइ ण'मित्यादि, 'छाउमत्थिय'त्ति छद्मस्थः–अकेवली तत्र भवाश्छाद्मस्थिकाः 'समुग्घाये'ति 'हन हिंसागत्योः' हननं घातः सम्–एकीभावे उत्–प्राबल्ये ततश्चैकीभावेन प्राबल्येन च घातः समुद्घातः, अथ केन सहैकीभावगमनम् ?, उच्यते, यदाऽऽत्मा वेदनादिसमुद्घातं गतस्तदा वेदनाद्यनुभवज्ञानपरिणत एव भवतीति वेदनाद्यनुभवज्ञानेन सहैकीभावः, प्राबल्येन घातः कथम् ?, उच्यते, यस्माद्वेदनादिसमुद्घातपरिणतो बहून् वेदनीयादिकर्मप्रदेशान् कालान्तरानुभवनयोग्यानुदीरणाकरणेनाकृष्योदये प्रक्षिप्यानुभूय निर्जरयति–आत्मप्रदेशैः सह संश्लिष्टान् सातयतीत्यर्थः अतः प्राबल्येन घात इति, अयं चेह षड्विध इति बहुवचनं, तत्र 'वेयणासमुग्घाए'त्ति एकः, 'एवं छाउमत्थिए' इत्यादिअतिदेशः, 'जहा पन्नवणाए'त्ति इह षट्त्रिंशत्तमपद इति शेषः, ते च शेषाः पञ्चैवं—'कसायसमुग्घाए २ मारणंतियसमुग्घाए ३ वेउव्वियसमुग्घाए ४ तेयगसमुग्घाए ५ आहारगसमुग्घाए ६ ' त्ति, तत्र वेदनासमुद्घातः असद्वेद्यकर्म्माश्रयः कषायसमुद्घातः कषायाख्यचारित्रमोहनीयकर्म्माश्रयः मारणान्तिकसमुद्घातः अन्तर्मुहूर्त्तशे-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अथ त्रयोदशमे शतके दशम-उद्देशक: आरब्ध:

षायुष्ककर्माश्रयः वैकुर्विकतैजसाहारकसमुद्घाताः शरीरनामकर्माश्रयाः, तत्र वेदनासमुद्घातसमुद्धत आत्मा वेद-नीयकर्मपुद्गलशातं करोति, कषायसमुद्घातसमुद्धतः कषायपुद्गलशातं, मारणान्तिकसमुद्घातसमुद्धत आयुष्क-कर्मपुद्गलशातं वैकुर्विकसमुद्घातसमुद्धतस्तु जीवप्रदेशान् शरीराद्बहिर्निष्काश्य शरीरविष्कम्भबाहल्यमात्रमायामतश्च सङ्ख्येयानि योजनानि दण्डं निसृजति निसृज्य च यथास्थूलान् वैक्रियशरीरनामकर्म्मपुद्गलान् प्राग्बद्धान् सातयति सूक्ष्मांश्चादत्ते, यथोक्तं—'वेउव्वियसमुग्घाएणं समोहणइ समोहणित्ता संखेज्जाइं जोयणाइं दंडं निसिरइ २ अहाबायरे पोग्गले परिसाडेइ २ अहासुहुमे पोग्गले आइयइ'त्ति । एवं तैजसाहारकसमुद्घातावपि व्याख्येयाविति ॥ त्रयोदशशते दशमः ॥ १३–१० ॥ समाप्तं च त्रयोदशं शतम् ॥ १३ ॥

त्रयोदशस्यास्य शतस्य वृत्तिः, कृता मया पूज्यपदप्रसादात् ।
न ह्यन्धकारे विहितोद्यमोऽपि, दीपं विना पश्यति वस्तुजातम् ॥ १ ॥

॥ इति समाप्तं श्रीमदभयदेवसूरिवरविवृतायां भगवत्यां शतकं त्रयोदशम् ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	अत्र त्रयोदशमे शतके दशम-उद्देशक: परिसमाप्त: तत् समाप्ते त्रयोदशं शतकं अपि समाप्तं

प्रत सूत्रांक [५००--५०१] + गाथा दीप अनुक्रम [५९६--५९८]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

॥ अथ चतुर्दशशतकम् ॥

व्याख्यातं विचित्रार्थं त्रयोदशं शतम्, अथ विचित्रार्थमेव क्रमायातं चतुर्दशमारभ्यते, तत्र च दशोद्देशकास्तत्सङ्ग्रहगाथा चेयम्—

चर १ उम्माद २ सरीरे ३ पोग्गल ४ अगणी ५ तहा किमाहारे ६। संसिट्ठ ७ मंतरे खलु ८ अणगारे ९ केवली चेव १० ॥ १ ॥ रायगिहे जाव एवं वयासी–अणगारे णं भंते ! भावियप्पा चरमं देवावासं वीतिक्कंते परमं देवावासमसंपत्ते एत्थ णं अंतरा कालं करेज्जा तस्स णं भंते ! कहिं गती कहिं उववाए पन्नत्ते ?, गोयमा ! जे से तत्थ परियस्सओ तल्लेसा देवावासा तहिं तस्स उववाए पन्नत्ते, से य तत्थ गए विराहेज्जा कम्मलेस्सामेव पडिमडइ, से य तत्थ गए नो विराहेज्जा एयामेव लेस्सं उवसंपज्जित्ताणं विहरति ॥ अणगारे णं भंते ! भावियप्पा चरमं असुरकुमारावासं वीतिक्कंते परमअसुरकुमारा० एवं चेव एवं जाव थणियकुमारावासं जोइसियावासं एवं वेमाणियावासं जाव विहरइ ॥ (सूत्र५००) नेरइयाणं भंते ! कहं सीहा गती कहं सीहे गतिविसए पण्णत्ते ?, गोयमा ! से जहानामए–केइ पुरिसे तरुणे बलवं जुगवं जाव निउणसिप्पोवगए आउट्टियं बाहं पसारेज्जा पसारियं वा बाहं आउंटेज्जा विक्खिण्णं वा मुट्ठिं साहरेज्जा साहरियं वा मुट्ठिं विक्खिरेज्जा उन्निमिसियं वा अच्छिं निम्मिसेज्जा निम्मिसियं वा अच्छिं उम्मिसेज्जा, भवे एयारूवे ?, णो तिणट्ठे समट्ठे,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अथ चतुर्दशं शतकं आरभ्यते

अथ चतुर्दशमे शतके प्रथम-उद्देशक: आरब्ध:

प्रत सूत्रांक [५००--५०१] + गाथा

दीप अनुक्रम [५९६--५९८]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः

॥६३०॥

नेरइया णं एगसमएण वा दुसमएण वा तिसमएण वा विग्गहेणं उववज्जंति, नेरइयाणं गोयमा ! तहा सीहा गती तहा सीहे गतिविसए पण्णत्ते एवं जाव वेमाणियाणं, नवरं एगिंदियाणं चउसमइए विग्गहे भाणियव्वे। सेसं तं चेव सूत्रं ५०१) ॥

'चरउम्माद सरीरे'इत्यादि, तत्र 'चर'त्ति सूचामात्रत्वादस्य चरमशब्दोपलक्षितोऽपि चरमः प्रथम उद्देशकः, 'उम्माय'त्ति उन्मादार्थाभिधायकत्वादुन्मादो द्वितीयः, 'सरीरे'त्ति शरीरशब्दोपलक्षितत्वाच्छरीरस्तृतीयः, 'पुग्गल'त्ति पुद्गलार्थाभिधायकत्वात्पुद्गलश्चतुर्थः, 'अगणी'ति अग्निशब्दोपलक्षितत्वादग्निः पञ्चमः,किमाहारे'त्ति किमाहारा इत्येवंविधप्रश्नोपलक्षितत्वात्किमाहारः षष्ठः, 'संसिट्ठ'त्ति 'चिरसंसिट्ठोऽसि गोयम'त्ति इत्यत्र पदे यः संश्लिष्टशब्दस्तदुपलक्षितत्वात् संश्लिष्टोद्देशकः सप्तमः, 'अंतरे'त्ति पृथिवीनामन्तराभिधायकत्वादन्तरोद्देशकोऽष्टमः, 'अणगारे'त्ति अणगारेति पूर्वपदत्वादनगारोद्देशको नवमः, 'केवलि'त्ति केवलीति प्रथमपदत्वात्केवली दशमोद्देशक इति॥ तत्र प्रथमोद्देशके किञ्चिल्लिख्यते—'चरमं देवावासं वीतिक्कंते परमं देवावासं असंपत्ते'त्ति, 'चरमम्' अर्वाग्भागवर्त्तिनं स्थित्यादिभिः 'देवावासं' सौधर्मादिदेवलोकं 'व्यतिक्रान्तः' लङ्घितस्तदुपपातहेतुभूतलेश्यापरिणामापेक्षया 'परमं' परभागवर्त्तिनं स्थित्यादिभिरेव 'देवावासं' सनत्कुमारादिदेवलोकं 'असम्प्राप्तः' तदुपपातहेतुभूतलेश्यापरिणामापेक्षयैव, इदमुक्तं भवति–प्रशस्तेष्वध्यवसायस्थानेषूत्तरोत्तरेषु वर्त्तमान आराद्भागस्थितसौधर्मादिगतदेवस्थित्यादिबन्धयोग्यतामतिक्रान्तः परभागवर्त्तिसनत्कुमारादिगतदेवस्थित्यादिबन्धयोग्यतां चाप्राप्तः 'एत्थ णं अंतर'त्ति इहावसरे 'कालं करेज्ज'त्ति म्रियते यस्तस्य क्वोत्पादः ? इति

१४ शतके १ उद्देशः परावासा-प्राप्तगतिः सू ५०० शीघ्रागतिः सू ५०१

॥६३०॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

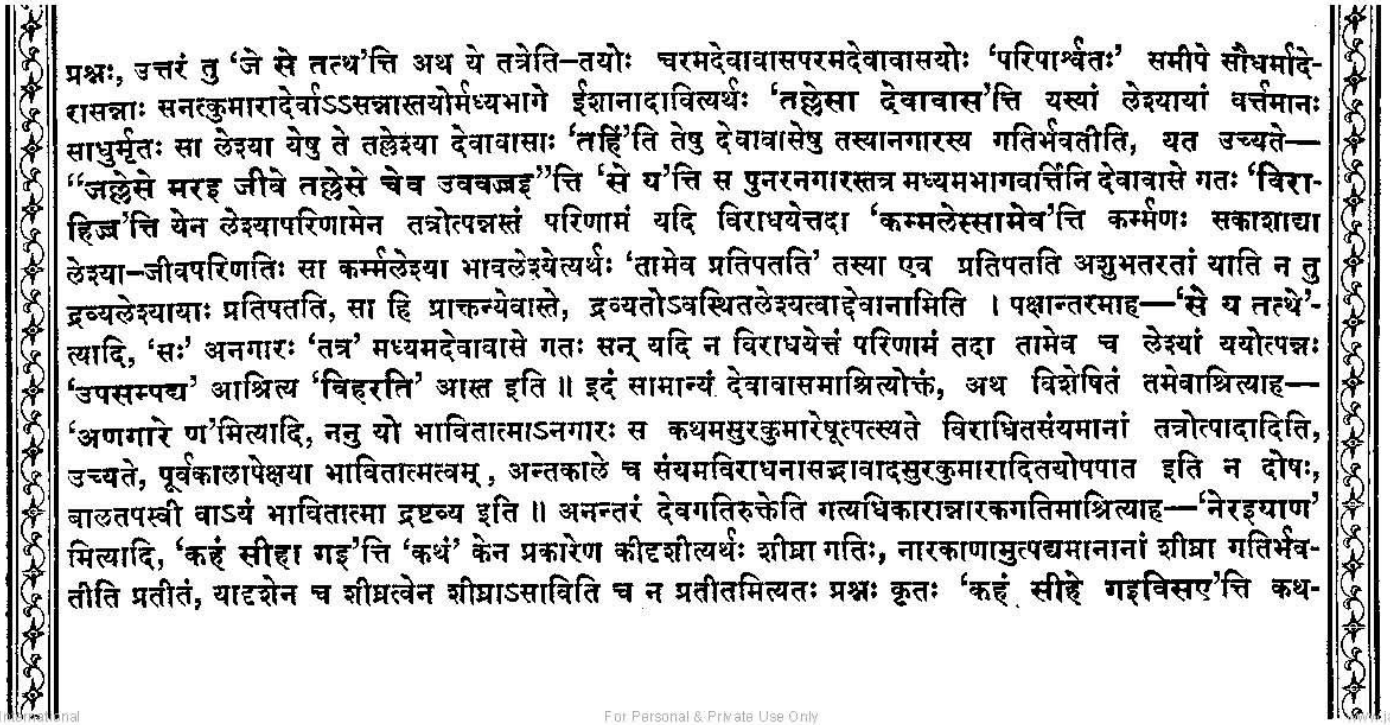

प्रश्नः, उत्तरं तु 'जे से तत्थ'त्ति अथ ये तत्रेति–तयोः चरमदेवावासपरमदेवावासयोः 'परिपार्श्वतः' समीपे सौधर्मादेरासन्नाः सनत्कुमारादेर्वाऽऽसन्नास्तयोर्मध्यभागे ईशानादावित्यर्थः 'तल्लेसा देवावास'त्ति यस्यां लेश्यायां वर्त्तमानः साधुर्मृतः सा लेश्या येषु ते तल्लेश्या देवावासाः 'तहिं'ति तेषु देवावासेषु तस्यानगारस्य गतिर्भवतीति, यत उच्यते—"जल्लेसे मरइ जीवे तल्लेसे चेव उववज्जइ"त्ति 'से य'त्ति स पुनरनगारस्तत्र मध्यमभागवर्त्तिनि देवावासे गतः 'विराहिज्ज'त्ति येन लेश्यापरिणामेन तत्रोत्पन्नस्तं परिणामं यदि विराधयेत्तदा 'कम्मलेस्सामेव'त्ति कर्म्मणः सकाशाद्या लेश्या–जीवपरिणतिः सा कर्म्मलेश्या भावलेश्येत्यर्थः 'तामेव प्रतिपतति' तस्या एव प्रतिपतति अशुभतरतां याति न तु द्रव्यलेश्यायाः प्रतिपतति, सा हि प्राक्तन्येवास्ते, द्रव्यतोऽवस्थितलेश्यत्वाद्देवानामिति । पक्षान्तरमाह—'से य तत्थे'त्यादि, 'सः' अनगारः 'तत्र' मध्यमदेवावासे गतः सन् यदि न विराधयेत्तं परिणामं तदा तामेव च लेश्यां ययोत्पन्नः 'उपसम्पद्य' आश्रित्य 'विहरति' आस्त इति ॥ इदं सामान्यं देवावासमाश्रित्योक्तं, अथ विशेषितं तमेवाश्रित्याह—'अणगारे ण'मित्यादि, ननु यो भावितात्माऽनगारः स कथमसुरकुमारेषूत्पत्स्यते विराधितसंयमानां तत्रोत्पादादिति, उच्यते, पूर्वकालापेक्षया भावितात्मत्वम्, अन्तकाले च संयमविराधनासद्भावादसुरकुमारादितयोपपात इति न दोषः, बालतपस्वी वाऽयं भावितात्मा द्रष्टव्य इति ॥ अनन्तरं देवगतिरुक्तेति गत्यधिकारान्नारकगतिमाश्रित्याह—'नेरइयाण'मित्यादि, 'कहं सीहा गइ'त्ति 'कथं' केन प्रकारेण कीदृशीत्यर्थः शीघ्रा गतिः, नारकाणामुत्पद्यमानानां शीघ्रा गतिर्भवतीति प्रतीतं, यादृशेन च शीघ्रत्वेन शीघ्राऽसाविति च न प्रतीतमित्यतः प्रश्नः कृतः 'कहं सीहे गइविसए'त्ति कथ-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

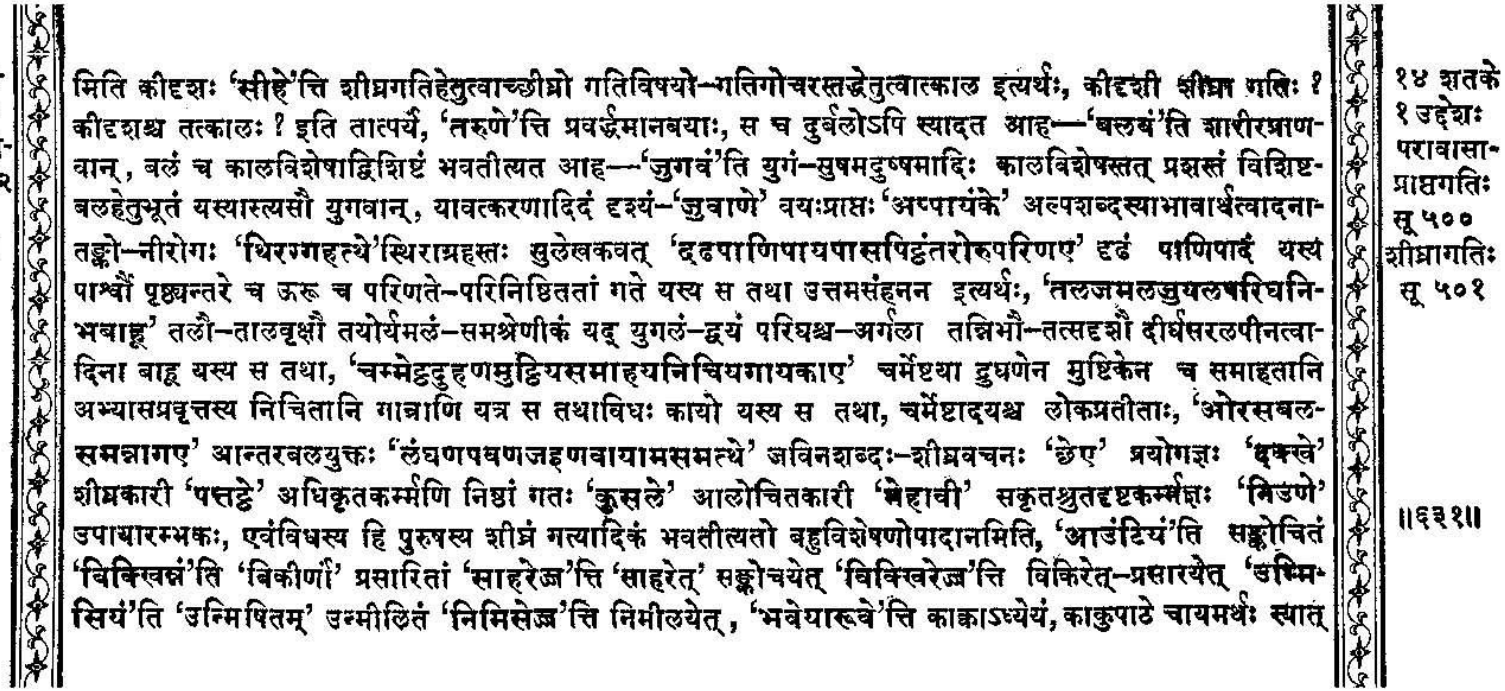

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥६३१॥

मिति कीदृशः 'सीहे'त्ति शीघ्रगतिहेतुत्वाच्छीघ्रो गतिविषयो–गतिगोचरस्तद्धेतुत्वात्काल इत्यर्थः, कीदृशी शीघ्रा गतिः ? कीदृशश्च तत्कालः ? इति तात्पर्यं, 'तरुणे'त्ति प्रवर्द्धमानवयाः, स च दुर्बलोऽपि स्यादत आह—'बलवं'ति शारीरप्राण-वान्, बलं च कालविशेषाद्विशिष्टं भवतीत्यत आह—'जुगवं'ति युगं–सुषमदुष्षमादिः कालविशेषस्तत् प्रशस्तं विशिष्ट-बलहेतुभूतं यस्यास्त्यसौ युगवान्, यावत्करणादिदं दृश्यं–'जुवाणे' वयःप्राप्तः 'अप्पायंके' अल्पशब्दस्याभावार्थत्वादना-तङ्को–नीरोगः 'थिरग्गहत्थे'स्थिराग्रहस्तः सुलेखकवत् 'दृढपाणिपायपासपिट्ठंतरोरुपरिणए' दृढं पाणिपादं यस्य पार्श्वौ पृष्ठ्यन्तरे च ऊरू च परिणते–परिनिष्ठिततां गते यस्य स तथा उत्तमसंहनन इत्यर्थः, 'तलजमलजुयलपरिघनि-भबाहू' तलौ–तालवृक्षौ तयोर्यमलं–समश्रेणीकं यद् युगलं–द्वयं परिघश्च–अर्गला तन्निभौ–तत्सदृशौ दीर्घसरलपीनत्वा-दिना बाहू यस्य स तथा, 'चम्मेट्ठदुहणमुट्ठियसमाहयनिचियगायकाए' चर्मेष्टया द्रुघणेन मुष्टिकेन च समाहतानि अभ्यासप्रवृत्तस्य निचितानि गात्राणि यत्र स तथाविधः कायो यस्य स तथा, चर्मेष्टादयश्च लोकप्रतीताः, 'ओरसबल-समन्नागए' आन्तरबलयुक्तः 'लंघणपवणजइणवायामसमत्थे' जविनशब्दः–शीघ्रवचनः 'छेए' प्रयोगज्ञः 'दक्खे' शीघ्रकारी 'पत्तट्ठे' अधिकृतकर्म्मणि निष्ठां गतः 'कुसले' आलोचितकारी 'मेहावी' सकृतश्रुतदृष्टकर्म्मज्ञः 'निउणे' उपायारम्भकः, एवंविधस्य हि पुरुषस्य शीघ्रं गत्यादिकं भवतीत्यतो बहुविशेषणोपादानमिति, 'आउंटियं'ति सङ्कोचितं 'विक्खित्तं'ति 'विकीर्णां' प्रसारितां 'साहरेज्ज'त्ति 'साहरेत्' सङ्कोचयेत् 'विक्खिरेज्ज'त्ति विकिरेत्–प्रसारयेत् 'उम्मि-सियं'ति 'उन्मिषितम्' उन्मीलितं 'निमिसेज्ज'त्ति निमीलयेत्, 'भवेयारूवे'त्ति काक्काऽध्येयं, काकुपाठे चायमर्थः स्यात्

१४ शतके १ उद्देशः परावासा-प्राप्तगतिः सू ५०० शीघ्रागतिः सू ५०१

॥६३१॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

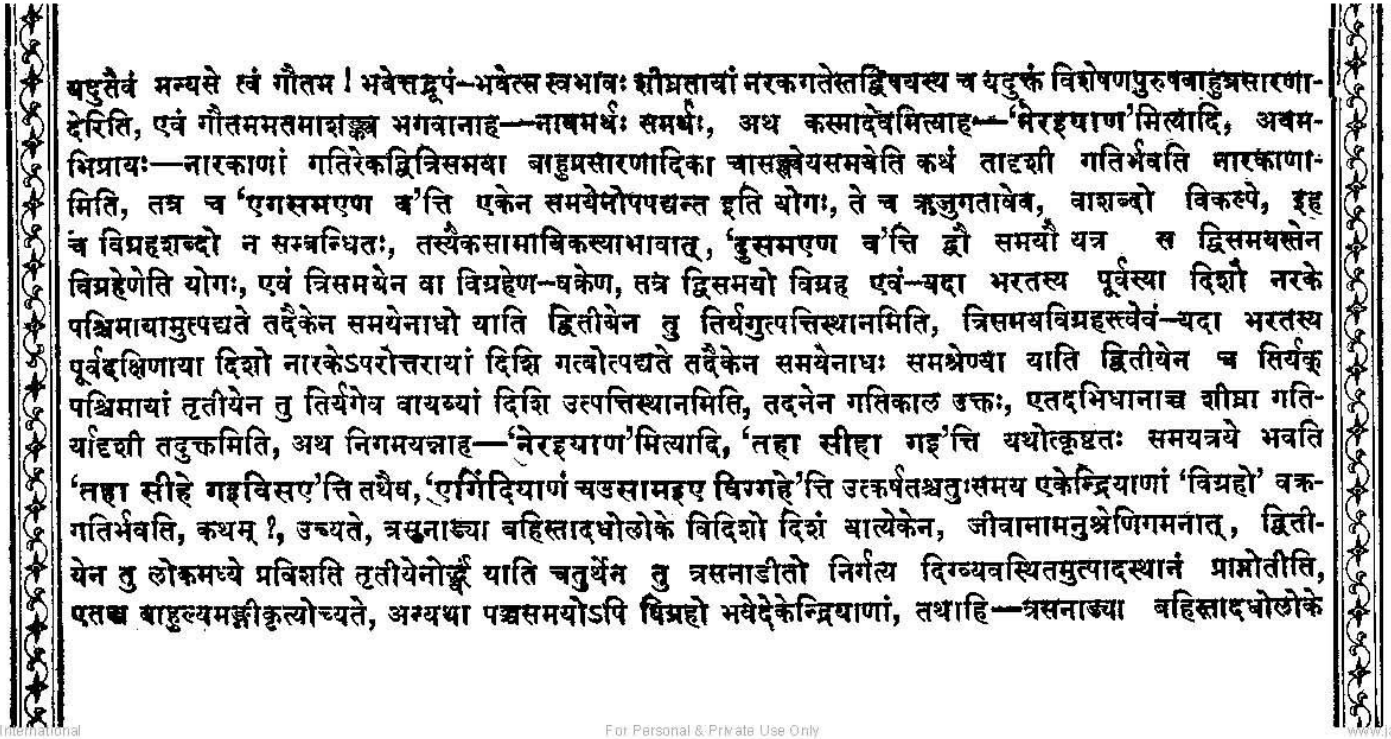

यदुसैवं मन्यसे त्वं गौतम ! भवेत्तद्रूपं–भवेत्स स्वभावः शीघ्रतायां नरकगतेस्तद्विषयस्य च यदुक्तं विशेषणपुरुषबाहुल्यसारणादेरिति, एवं गौतममतमाशङ्क्य भगवानाह—नायमर्थः समर्थः, अथ कस्मादेवमित्याह—'नेरइयाण'मित्यादि, अयमभिप्रायः—नारकाणां गतिरेकद्वित्रिसमया बाहुल्यसारणादिका चासङ्ख्येयसमयेति कथं तादृशी गतिर्भवति नारकाणामिति, तत्र च 'एगसमएण व'त्ति एकेन समयेनोपपद्यन्त इति योगः, ते च ऋजुगतावेव, वाशब्दो विकल्पे, इह च विग्रहशब्दो न सम्बन्धितः, तस्यैकसामायिकस्याभावात्, 'दुसमएण व'त्ति द्वौ समयौ यत्र स द्विसमयस्तेन विग्रहेणेति योगः, एवं त्रिसमयेन वा विग्रहेण–त्रकेण, तत्र द्विसमयो विग्रह एवं–यदा भरतस्य पूर्वस्या दिशो नरके पश्चिमायामुत्पद्यते तदैकेन समयेनाधो याति द्वितीयेन तु तिर्यगुत्पत्तिस्थानमिति, त्रिसमयविग्रहस्त्वेवं–यदा भरतस्य पूर्वदक्षिणाया दिशो नारकेऽपरोत्तरायां दिशि गत्वोत्पद्यते तदैकेन समयेनाधः समश्रेण्या याति द्वितीयेन च तिर्यक् पश्चिमायां तृतीयेन तु तिर्यगेव वायव्यां दिशि उत्पत्तिस्थानमिति, तदनेन गतिकाल उक्तः, एतदभिधानाच्च शीघ्रा गतिर्यादृशी तदुक्तमिति, अथ निगमयन्नाह—'नेरइयाण'मित्यादि, 'तहा सीहा गइ'त्ति यथोत्कृष्टतः समयत्रये भवति 'तहा सीहे गइविसए'त्ति तथैव, 'एगिंदियाणं चउसामइए विग्गहे'त्ति उत्कर्षतश्चतुःसमय एकेन्द्रियाणां 'विग्रहो' वक्रगतिर्भवति, कथम् ?, उच्यते, त्रसनाड्या बहिस्तादधोलोके विदिशो दिशं याप्येकेन, जीवानामनुश्रेणिगमनात्, द्वितीयेन तु लोकमध्ये प्रविशति तृतीयेनोर्द्धं याति चतुर्थेन तु त्रसनाडीतो निर्गत्य दिग्व्यवस्थितमुत्पादस्थानं प्राप्नोतीति, एतच्च बाहुल्यमङ्गीकृत्योच्यते, अन्यथा पञ्चसमयोऽपि विग्रहो भवेदेकेन्द्रियाणां, तथाहि—त्रसनाड्या बहिस्तादधोलोके

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [५००--५०१] + गाथा

दीप अनुक्रम [५९६--५९८]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥६३२॥

विदिशो दिशं यात्येकेन द्वितीयेन लोकमध्ये तृतीयेनोर्द्धलोके चतुर्थेन ततस्तिर्यक् पूर्वादिदिशो निर्गच्छति ततः पञ्चमेन विदिग्व्यवस्थितमुत्पत्तिस्थानं यातीति, उक्तञ्च—"विदिसाउ दिसिं पढमे बीए पइ सरइ नाडिमज्झंमि । उड्ढं तइए तुरिए उ नीइ विदिसं तु पंचमए ॥ १ ॥" [विदिशो दिशं प्रति सरति प्रथमे द्वितीये नाडीमध्यं । तृतीये ऊर्ध्वं तुर्ये निर्गच्छति पंचमे तु विदिशं ॥ १ ॥] इति, 'सेसं तं चेव'त्ति 'पुढविकाइयाणं भंते ! कहं सीहा गई ?'इत्यादि सर्वं यथा नारकाणां तथा वाच्यमित्यर्थः ॥ अनन्तरं गतिमाश्रित्य नारकादिदण्डक उक्तः, अथानन्तरोत्पन्नत्वादि प्रतीत्यापरं तमेवाह—

नेरइया णं भंते ! किं अणंतरोववन्नगा परंपरोववन्नगा अणंतरपरंपरअणुववन्नगा ?, गोयमा ! नेर० अणंतरोववन्नगावि परंपरोववन्नगावि अणंतरपरंपरअणुववन्नगावि, से केण० एवं वु० जाव अणंतरपरंपरअणुववन्नगावि ?, गोयमा ! जे णं नेरइया पढमसमयोववन्नगा ते णं नेरइया अणंतरोववन्नगा, जे णं नेरइया अपढमसमयोववन्नगा ते णं नेरइया परंपरोववन्नगा, जे णं नेर० विग्गहगइसमावन्नगा ते णं नेरइया अणंतरपरंपरअणुववन्नगा, से तेणट्ठेणं जाव अणुववन्नगावि, एवं निरंतरं जाव वेमा० ? । अणंतरोववन्नगा णं भंते ! नेरइया किं नेरइयाउयं पकरेंति तिरिक्ख०मणुस्स०देवाउयं पकरेंति ?, गोयमा ! नो नेरइयाउयं पकरेंति जाव नो देवाउयं पकरेंति । परंपरोववन्नगा णं भंते ! नेरइया किं नेरइयाउयं पकरेंति जाव देवाउयं पकरेंति ?, गोयमा ! नो नेरइयाउयं पकरेंति तिरिक्खजोणियाउयंपि पकरेंति मणुस्साउयंपि पकरेंति नो देवाउयं पकरेंति । अणंतरपरंपरअणुववन्नगा णं भंते ! नेर० किं नेरइयाउयं प० पुच्छा नो नेरइयाउयं पकरेंति जाव

१४ शतके १ उद्देशः अनन्तरा-द्युपपन्नायुः करणादि सू ५०२

॥६३२॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [५०२]

दीप अनुक्रम [५९९]

नो देवाउयं पकरेन्ति, एवं जाव वेमाणिया, नवरं पंचिंदियतिरिक्खजोणिया मणुस्सा य परंपरोववन्नगा चत्तारिवि आउयाइं प०, सेसं तं चेव २ ॥ नेरइया णं भंते ! किं अणंतरनिग्गया परंपरनिग्गया अनंतरपरंपरअनिग्गया ?, गोयमा ! नेरइया णं अणंतरनिग्गयावि जाव अणंतरपरंपरनिग्गयावि, से केणट्ठेणं जाव अणिग्गयावि ?, गोयमा ! जे णं नेरइया पढमसमयनिग्गया ते णं नेरइया अणंतरनिग्गया जे णं नेरइया अपढमसमयनिग्गया ते णं नेरइया परंपरनिग्गया जे णं नेरइया विग्गहगतिसमावन्नगा ते णं नेरइया अणंतरपरंपरअणिग्गया, से तेणट्ठेणं गोयमा ! जाव अणिग्गयावि, एवं जाव वेमाणिया ३ ॥ अणंतरनिग्गया णं भंते ! नेरइया किं नेरइयाउयं पकरेंति जाव देवाउयं पकरेंति ?, गोयमा ! नो नेरइयाउयं पकरेंति जाव नो देवाउयं पकरेंति । परंपरनिग्गया णं भंते ! नेरइया किं नेरइयाउयं० पुच्छा, गोयमा ! नेरइयाउयंपि पकरेंति जाव देवाउयंपि पकरेंति । अणंतरपरंपरअणिग्गया णं भंते ! नेरइया पुच्छा, गोयमा ! नो नेरइयाउयं पकरेंति जाव नो देवाउयं पकरेंति, एवं निरवसेसं जाव वेमाणिया ४ ॥ नेरइया णं भंते ! किं अणंतरं खेदोववन्नगा परंपरखेदोववन्नग अणंतरपरंपरखेदाणुववन्नगा ?, गोयमा ! नेरइया० एवं एएणं अभिलावेणं तं चेव चत्तारि दंडगा भाणियव्वा । सेवं भंते ! सेवं भंतेत्ति जाव विहरइ (सूत्रं ५०२) ॥ चोद्दसमसयस्स पढमो ॥ १४–१ ॥

'नेरइया ण'मित्यादि, 'अणंतरोववन्नग'त्ति न विद्यते अन्तरं–समयादिव्यवधानं उपपन्ने–उपपाते येषां ते अनन्तरोपपन्नकाः 'परंपरोववन्नग'त्ति परम्परा–द्वित्रादिसमयता उपपन्ने–उपपाते येषां ते परम्परोपपन्नकाः, 'अणंतरपरंपरअ-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥६३३॥

णुववन्नग'त्ति अनन्तरं–अव्यधानं परम्परं च–द्वित्रादिसमयरूपमविघमानं उत्पन्नं–उत्पादो येषां ते तथा, एते च विग्रहगतिकाः, विग्रहगतौ हि द्विविधस्याप्युत्पादस्याविद्यमानत्वादिति ॥ अथानन्तरोपपन्नादीनाश्रित्यायुर्बन्धमभिधातुमाह–'अणंतरे'त्यादि, इह चानन्तरोपपन्नानामनन्तरपरम्परानुपपन्नानां च चतुर्विधस्याप्यायुषः प्रतिषेधोऽध्येतव्यः, तस्यामवस्थायां तथाविधाध्यवसायस्थानाभावेन सर्वजीवानामायुषो बन्धाभावात्, स्वायुषस्त्रिभागादौ च शेषे बन्धसद्भावात्, परम्परोपपन्नकास्तु स्वायुषः षण्मासे शेषे मतान्तरेणोत्कर्षतः षण्मासे जघन्यतश्चान्तर्मुहूर्त्ते शेषे भवप्रत्ययात्तिर्यग्मनुष्यायुषी एव कुर्वन्ति नेतरे इति, 'एवं जाव वेमाणिय'त्ति अनेनोक्तालापकत्रययुक्तश्चतुर्विंशतिदण्डकोऽध्येतव्य इति सूचितं, यश्चात्र विशेषस्तं दर्शयितुमाह—'नवरं पंचिंदिए'त्यादि ॥ अथानन्तरनिर्गतत्वादिनाऽपरं दण्डकमाह—'नेरइया ण'मित्यादि, तत्र निश्चितं स्थानान्तरप्राप्त्या गतं–गमनं निर्गतं अनन्तरं–समयादिना निर्व्यवधानं निर्गतं येषां तेऽनन्तरनिर्गतास्ते च येषां नरकादुद्वृत्तानां स्थानान्तरं प्राप्तानां प्रथमः समयो वर्त्तते, तथा परम्परेण–समयपरम्परया निर्गतं येषां ते तथा, ते च येषां नरकादुद्वृत्तानामुत्पत्तिस्थानप्राप्तानां द्व्यादयः समयाः, अनन्तरपरम्परानिर्गतास्तु ये नरकादुद्वृत्ताः सन्तो विग्रहगतौ वर्त्तन्ते न तावदुत्पादक्षेत्रमासादयन्ति तेषामनन्तरभावेन परम्परभावेन चोत्पादक्षेत्राप्राप्तत्वेन निश्चयेनानिर्गतत्वादिति ॥ अथानन्तरनिर्गतादीनाश्रित्यायुर्बन्धमभिधातुमाह—'अणंतरे'त्यादि, इह च परम्परानिर्गता नारकाः सर्वाण्यायूंषि बध्नन्ति, यतस्ते मनुष्याः पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्च एव च भवन्ति, ते च सर्वायुर्बन्धका एवेति, एवं सर्वेऽपि परम्परनिर्गता वैक्रियजन्मानः, औदारिकजन्मानोऽप्युद्वृत्ताः केचिन्मनुष्यपञ्चेन्द्रियतिर्यञ्चो भवन्त्य-

१४ शतके १ उद्देशः अनन्तरा-द्युपपन्नायुः करणादि सू ५०२

॥६३३॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तस्सेऽपि सर्वायुर्बन्धका एवेति ॥ अनन्तरं निर्गता उक्तास्ते च क्वचिदुत्पद्यमानाः सुखेनोत्पद्यन्ते दुःखेन वेति दुःखोत्पन्नकानाश्रित्याह—'नेरइये'त्यादि, 'अनंतरखेदोववन्नग'त्ति अनन्तरं–समयाद्व्यवहितं खेदेन–दुःखेनोपपन्नं–उत्पादक्षेत्रप्राप्तिलक्षणं येषां तेऽनन्तरखेदोपपन्नकाः खेदप्रधानोत्पत्तिप्रथमसमयवर्त्तिन इत्यर्थः 'परंपरखेओववन्नग'त्ति परम्परा–द्वित्रादिसमयता खेदेनोपपन्ने उत्पादे–येषां ते परम्परखेदोपपन्नकाः, 'अणंतरपरंपरखेदाणुववन्नग'त्ति अनन्तरं परम्परं च खेदेन नास्त्युपपन्नकं येषां ते तथा विग्रहगतिवर्त्तिन इत्यर्थः, 'ते चेव चत्तारि दंडगा भाणियव्व'त्ति त एव पूर्वोक्ता उत्पन्नदण्डकादयः खेदशब्दविशेषिताश्चत्वारो दण्डका भणितव्याः, तत्र च प्रथमः खेदोपपन्नदण्डको द्वितीयस्तदायुष्कदण्डकस्तृतीयः खेदनिर्गतदण्डकश्चतुर्थस्तु तदायुष्कदण्डक इति ॥ चतुर्दशशते प्रथमः ॥ १४–१ ॥

अनन्तरोद्देशकेऽनन्तरोपपन्ननैरयिकादिवक्तव्यतोक्ता, नैरयिकादयश्च मोहवन्तो भवन्ति, मोहश्चौन्माद इत्युन्मादप्ररूपणार्थो द्वितीय उद्देशकः, तस्य चेदमादिसूत्रम्—

कतिविहे णं भंते ! उम्मादे पण्णत्ते ?, गोयमा ! दुविहे उम्मादे पण्णत्ते, तंजहा–जक्खावेसे य मोहणिज्जस्स य कम्मस्स उदएणं, तत्थ णं जे से जक्खाएसे से णं सुहवेयणतराए चेव सुहविमोयणतराए चेव, तत्थ णं जे से मोहणिज्जस्स कम्मस्स उदएणं से णं दुहवेयणतराए चेव दुहविमोयणतराए चेव ॥ नेरइयाणं भंते ! कतिविहे उम्मादे पण्णत्ते ?, गोयमा ! दुविहे उम्मादे पण्णत्ते, तंजहा–जक्खावेसे य मोहणिज्जस्स य कम्मस्स उदएणं, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ नेरइयाणं दुविहे उम्मादे पण्णत्ते, तंजहा–जक्खावेसे य मोहणिज्जस्स जाव उदएणं ?,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र चतुर्दशमे शतके प्रथम-उद्देशक: परिसमाप्त:

अथ चतुर्दशमे शतके द्वितीय-उद्देशक: आरब्ध:

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥६३४॥

गोयमा ! देवे वा से असुभे पोग्गले पक्खिवेज्जा, से णं तेसिं असुभाणं पोग्गलाणं पक्खिवणयाए जक्खाएसं उम्मादं पाउणेज्जा, मोहणिज्जस्स वा कम्मस्स उदएणं मोहणिज्जं उम्मायं पाउणेज्जा, से तेणट्ठेणं जाव उम्माए । असुरकुमाराणं भंते! कतिविहे उम्मादे पण्णत्ते ?, एवं जहेव नेरइयाणं नवरं देवे वा से महिड्ढीयतराए असुभे पोग्गले पक्खिवेज्जा से णं तेसिं असुभाणं पोग्गलाणं पक्खिवणयाए जक्खाएसं उम्मादं पाउणेज्जा मोहणिज्जस्स वा सेसं तं चेव, से तेणट्ठेणं जाव उदएणं एवं जाव थणियकुमाराणं, पुढविकाइयाणं जाव मणुस्साणं एएसिं जहा नेरइयाणं, वाणमंतरजोइसवेमाणियाणं जहा असुरकुमाराणं ॥ (सूत्रं५०३) अत्थि णं भंते! पज्जन्ने कालवासी वुट्ठिकायं पकरेंति ?, हंता अत्थि ॥ जाहे णं भंते ! सक्के देविंदे देवराया वुट्ठिकायं काउकामे भवति से कहमियाणिं पकरेति ?, गोयमा ! ताहे चेव णं से सक्के देविंदे देवराया अब्भिंतरपरिसए देवे सद्दावेति, तए णं ते अब्भिंतरपरिसगा देवा सद्दाविया समाणा मज्झिमपरिसए देवे सद्दावेंति, तए णं ते मज्झिमपरिसगा देवा सद्दाविया समाणा बाहिरपरिसए देवे सद्दावेंति, तए णं ते बाहिरपरिसगा देवा सद्दाविया समाणा बाहिरं बाहिरगा देवा सद्दावेंति, तए णं ते बाहिरगा देवा सद्दाविया समाणा आभिओगिए देवे सद्दावेंति, तए णं ते जाव सद्दाविया समाणा वुट्ठिकाए देवे सद्दावेंति, तए णं ते वुट्ठिकाइया देवा सद्दाविया समाणा वुट्ठिकायं पकरेंति, एवं खलु गोयमा ! सक्के देविंदे देवराया वुट्ठिकायं पकरेति ॥ अत्थि णं भंते ! असुरकुमारावि देवा वुट्ठिकायं पकरेंति ?, हंता अत्थि, किं पत्तियन्नं भंते !

१४ शतके २ उद्देशः यक्षावेशमो होन्मादौ सू ५०३ जिनजन्मादौ वृष्टिः सू ५०४

॥६३४॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [५०३--५०४]

दीप अनुक्रम [६००--६०१]

असुरकुमारा देवा वुट्ठिकायं पकरेंति ?, गोयमा ! जे इमे अरहंता भगवंता एएसि णं जम्मणमहिमासु वा निक्खमणमहिमासु वा णाणुप्पायमहिमासु वा परिनिव्वाणमहिमासु वा एवं खलु गोयमा ! असुरकुमारावि देवा वुट्ठिकायं पकरेंति, एवं नागकुमारावि एवं जाव थणियकुमारा वाणमंतरजोइसियवेमाणिय एवं चेव (सूत्रं ५०४) ॥

'कतिविहे ण'मित्यादि, 'उन्मादः' उन्मत्तता विविक्तचेतनाभ्रंश इत्यर्थः 'जक्खाएसे य'त्ति यक्षो–देवस्तेनावेशः–प्राणिनोऽधिष्ठानं यक्षावेशः, 'मोहणिज्जस्से'त्यादि तत्र मोहनीयं–मिथ्यात्वमोहनीयं तस्योदयादुन्मादो भवति यतस्तदुदयवर्त्ती जन्तुरतत्त्वं तत्त्वं मन्यते तत्त्वमपि चातत्त्वं, चारित्रमोहनीयं वा यतस्तदुदये जानन्नपि विषयादीनां स्वरूपमजानन्निव वर्त्तते, अथवा चारित्रमोहनीयस्यैव विशेषो वेदाख्यो मोहनीयं, यतस्तदुदयविशेषेऽप्युन्मत्त एव भवति, यदाह—"चिंतेइ १ दट्ठुमिच्छइ २ दीहं नीससइ ३ तह जरे ४ दाहे ५ । भत्तअरोअग ६ मुच्छा ७ उम्माय ८ न याणई ९ मरणं १० ॥ १ ॥" इति । [चिन्तयति द्रष्टुमिच्छति दीर्घं निःश्वसिति तथा ज्वरो दाहः । भक्तारोचकत्वं मूर्च्छा उन्मादो न जानाति मरणं च ॥] एतयोश्चोन्मादत्वे समानेऽपि विशेषं दर्शयन्नाह—'तत्थ ण'मित्यादि तत्र तयोर्मध्ये 'सुहवेयणतराए चेव'त्ति अतिशयेन सुखेन–मोहजन्योन्मादापेक्षयाऽक्लेशेन वेदनं–अनुभवनं यस्यासौ सुखवेदनतरः स एव सुखवेदनतरकः, चैवशब्दः स्वरूपावधारणे, 'सुहविमोयणतराए चेव'त्ति अतिशयेन सुखेन विमोचनं–वियोजनं यस्मादसौ सुखविमोचनतरः, कप्रत्ययस्तथैव । 'तत्थ ण'मित्यादि, मोहजन्योन्माद इतरापेक्षया दुःखवेदनतरो

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

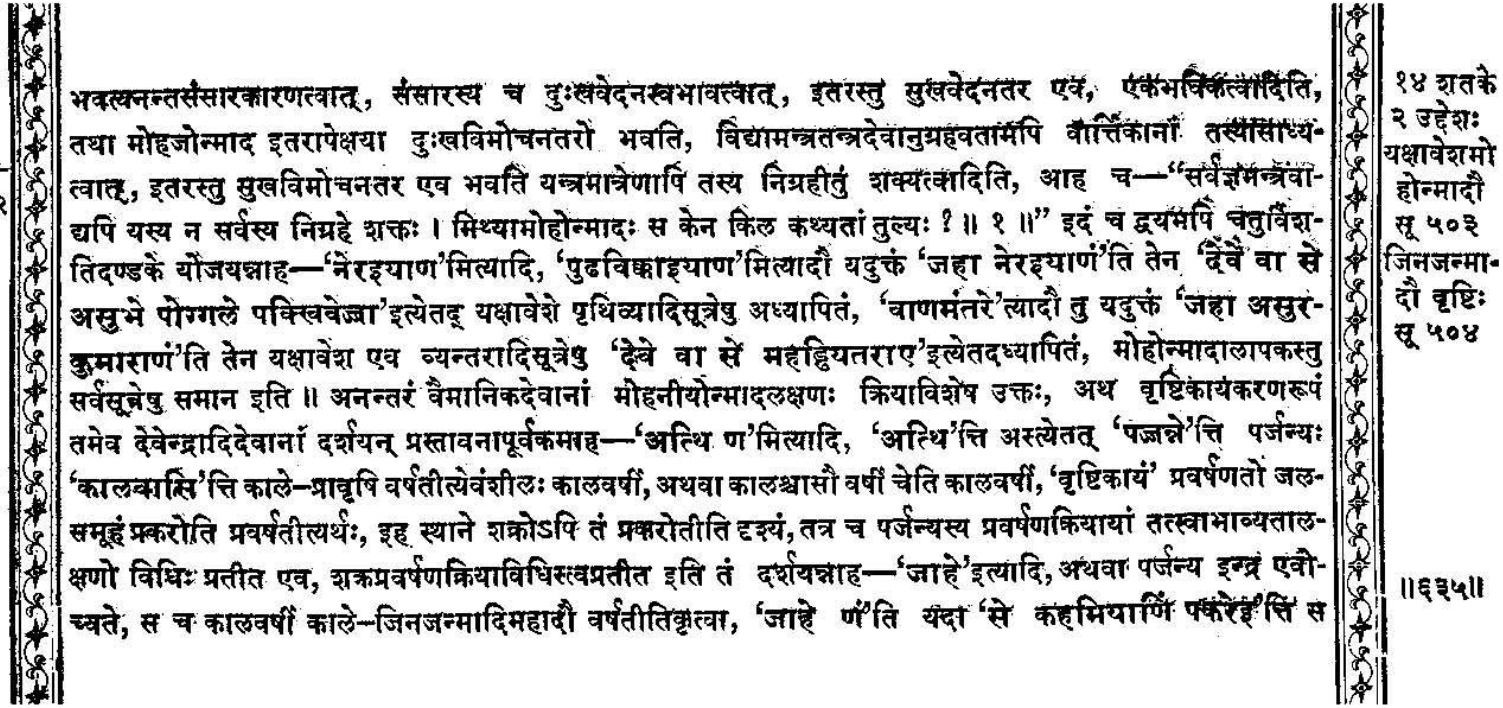

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥६३५॥

भवत्यनन्तसंसारकारणत्वात्, संसारस्य च दुःखवेदनस्वभावत्वात्, इतरस्तु सुखवेदनतर एव, एकभविकत्वादिति, तथा मोहजोन्माद इतरापेक्षया दुःखविमोचनतरो भवति, विद्यामन्त्रतन्त्रदेवानुग्रहवतामपि वार्त्तिकानां तस्यासाध्यत्वात्, इतरस्तु सुखविमोचनतर एव भवति यन्त्रमात्रेणापि तस्य निग्रहीतुं शक्यत्वादिति, आह च—"सर्वज्ञमन्त्रवादयपि यस्य न सर्वस्य निग्रहे शक्तः । मिथ्यामोहोन्मादः स केन किल कथ्यतां तुल्यः ? ॥ १ ॥" इदं च द्वयमपि चतुर्विंशतिदण्डके योजयन्नाह—'नेरइयाण'मित्यादि, 'पुढविक्काइयाण'मित्यादौ यदुक्तं 'जहा नेरइयाणं'ति तेन 'देवे वा से असुभे पोग्गले पक्खिवेज्जा'इत्येतद् यक्षावेशे पृथिव्यादिसूत्रेषु अध्यापितं, 'वाणमंतरे'त्यादौ तु यदुक्तं 'जहा असुरकुमाराणं'ति तेन यक्षावेश एव व्यन्तरादिसूत्रेषु 'देवे वा से महड्ढियतराए'इत्येतदध्यापितं, मोहोन्मादालापकस्तु सर्वसूत्रेषु समान इति ॥ अनन्तरं वैमानिकदेवानां मोहनीयोन्मादलक्षणः क्रियाविशेष उक्तः, अथ वृष्टिकायकरणरूपं तमेव देवेन्द्रादिदेवानां दर्शयन् प्रस्तावनापूर्वकमाह—'अत्थि ण'मित्यादि, 'अत्थि'त्ति अस्त्येतत् 'पज्जन्ने'त्ति पर्जन्यः 'कालवासि'त्ति काले–प्रावृषि वर्षतीत्येवंशीलः कालवर्षी, अथवा कालश्चासौ वर्षी चेति कालवर्षी, 'वृष्टिकायं' प्रवर्षणतो जलसमूहं प्रकरोति प्रवर्षतीत्यर्थः, इह स्थाने शक्रोऽपि तं प्रकरोतीति दृश्यं, तत्र च पर्जन्यस्य प्रवर्षणक्रियायां तत्स्वाभाव्यताल-क्षणो विधिः प्रतीत एव, शक्रप्रवर्षणक्रियाविधिस्त्वप्रतीत इति तं दर्शयन्नाह—'जाहे'त्यादि, अथवा पर्जन्य इन्द्र एवोच्यते, स च कालवर्षी काले–जिनजन्मादिमहादौ वर्षतीतिकृत्वा, 'जाहे णं'ति यदा 'से कहमियाणिं पकरेइ'त्ति स

१४ शतके २ उद्देशः यक्षावेशमोहोन्मादौ सू ५०३ जिनजन्मादौ वृष्टिः सू ५०४

॥६३५॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

शक्रः कथं तदानीं प्रकरोति ?, वृष्टिकायमिति प्रकृतम्। असुरकुमारसूत्रे 'किं पत्तियण्णं'ति किं प्रत्ययं–कारणमाश्रित्येत्यर्थः 'जम्मणमहिमासु व'त्ति जन्ममहिमासु जन्मोत्सवान् निमित्तीकृत्येत्यर्थः ॥ देवक्रियाऽधिकारादिदमपरमाह—

जाहे णं भंते ! ईसाणे देविंदे देवराया तमुक्कायं काउकामे भवति से कहमियाणिं पकरेति ?, गोयमा ! ताहे चेव णं से ईसाणे देविंदे देवराया अब्भिंतरपरिसए देवे सद्दावेति, तए णं ते अब्भिंतरपरिसगा देवा सद्दाविया समाणा एवं जहेव सक्कस्स जाव तए णं ते आभिओगिया देवा सद्दाविया समाणा तमुक्काइए देवे सद्दावेंति, तए णं ते तमुक्काइया देवा सद्दाविया समाणा तमुक्कायं पकरेंति, एवं खलु गोयमा ! ईसाणे देविंदे देवराया तमुक्कायं पकरेति ॥ अत्थि णं भंते ! असुरकुमारावि देवा तमुक्कायं पकरेंति ?, हंता अत्थि । किं पत्तियन्नं भंते ! असुरकुमारा देवा तमुक्कायं पकरेंति ?, गोयमा ! किड्डारतिपत्तियं वा पडिणीयविमोहणट्ठयाए वा गुत्तीसंरक्खणहेउं वा अप्पणो वा सरीरपच्छायणट्ठयाए, एवं खलु गोयमा ! असुरकुमारावि देवा तमुक्कायं पकरेंति एवं जाव वेमाणिया । सेवं भंते २ त्ति जाव विहरइ (सूत्रं ५०५) ॥ १४–२ ॥

'जाहे ण'मित्यादि, 'तमुक्काए'त्ति तमस्कायकारिणः 'किड्डारइपत्तियं'ति क्रीडारूपा रतिः क्रीडारतिः अथवा क्रीडा च–खेलनं रतिश्च–निधुवनं क्रीडारती सैव ते एव वा प्रत्ययः–कारणं यत्र तत् क्रीडारतिप्रत्ययं 'गुत्तीसंरक्खणहेउं व'त्ति गोपनीयद्रव्यसंरक्षणहेतोर्वेति ॥ चतुर्दशशते द्वितीयः ॥ १४–२ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र चतुर्दशमे शतके द्वितीय-उद्देशक: परिसमाप्त:

प्रत सूत्रांक [५०६]

दीप अनुक्रम [६०३]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥६३६॥

द्वितीयोद्देशके देवव्यतिकर उक्तः, तृतीयेऽपि स एवोच्यते इत्येवंसम्बद्धस्यास्येदमादिसूत्रम्—

देवे णं भंते ! महाकाए महासरीरे अणगारस्स भावियप्पणो मज्झंमज्झेणं वीइवएज्जा ?, गोयमा ! अत्थेगइए वीइवएज्जा अत्थेगतिए नो वीइवएज्जा, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुचइ अत्थेगतिए वीइवएज्जा अत्थेगतिए नो वीइवएज्जा ?, गोयमा ! दुविहा देवा पण्णत्ता, तंजहा–मायीमिच्छादिट्ठीउववन्नगा य अमायीसम्मदिट्ठीउववन्नगा य, तत्थ णं जे से मायी मिच्छदिट्ठी उववन्नए देवे से णं अणगारं भावियप्पाणं पासइ २ नो वंदति नो नमंसति नो सक्कारेति नो कल्लाणं मंगलं देवयं चेइयं जाय पज्जुवासति, से णं अणगारस्स भावियप्पणो मज्झंमज्झेणं वीइवएज्जा, तत्थ णं जे से अमायी सम्मदिट्ठिउववन्नए देवे से णं अणगारं भावियप्पाणं पासइ पासित्ता वंदति नमंसति जाव पज्जुवासति, से णं अणगारस्स भावियप्पणो मज्झंमज्झेणं नो वीयीवएज्जा, से तेण० गोयमा ! एवं वुचइ जाव नो वीइवएज्जा । असुरकुमारे णं भंते ! महाकाये महासरीरे एवं चेव एवं देवदंडओ भाणियव्वो जाव वेमाणिए (सूत्रं ५०६) ॥

'देवे ण'मित्यादि, इह च क्वचिदियं द्वारगाथा दृश्यते—"महक्काए सक्कारे सत्थेणं वीईवयंति देवा उ । वासं चेव य ठाणा नेरइयाणं तु परिणामे ॥ १ ॥ " इति, अस्याश्चार्थ उद्देशकार्थाधिगमावगम्य एवेति । 'महाकाय'त्ति महान्–बृहन् प्रशस्तो वा कायो–निकायो यस्य स महाकायः, 'महासरीरे'त्ति बृहत्तनुः । 'एवं देवदंडओ भाणियव्वो'त्ति नारकपृथि-

१४ शतके २ उद्देशः ईशानस्य तमस्करणं सू ५०५ अनगारमध्येन गतिः सू ५०६

॥६३६॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अथ चतुर्दशमे शतके तृतीय-उद्देशक: आरब्ध:

अत्र सूत्र-क्रमांकने मूल-सम्पादने एका स्खालना जाता–उद्देश: ३ स्थाने २ मुद्रितं

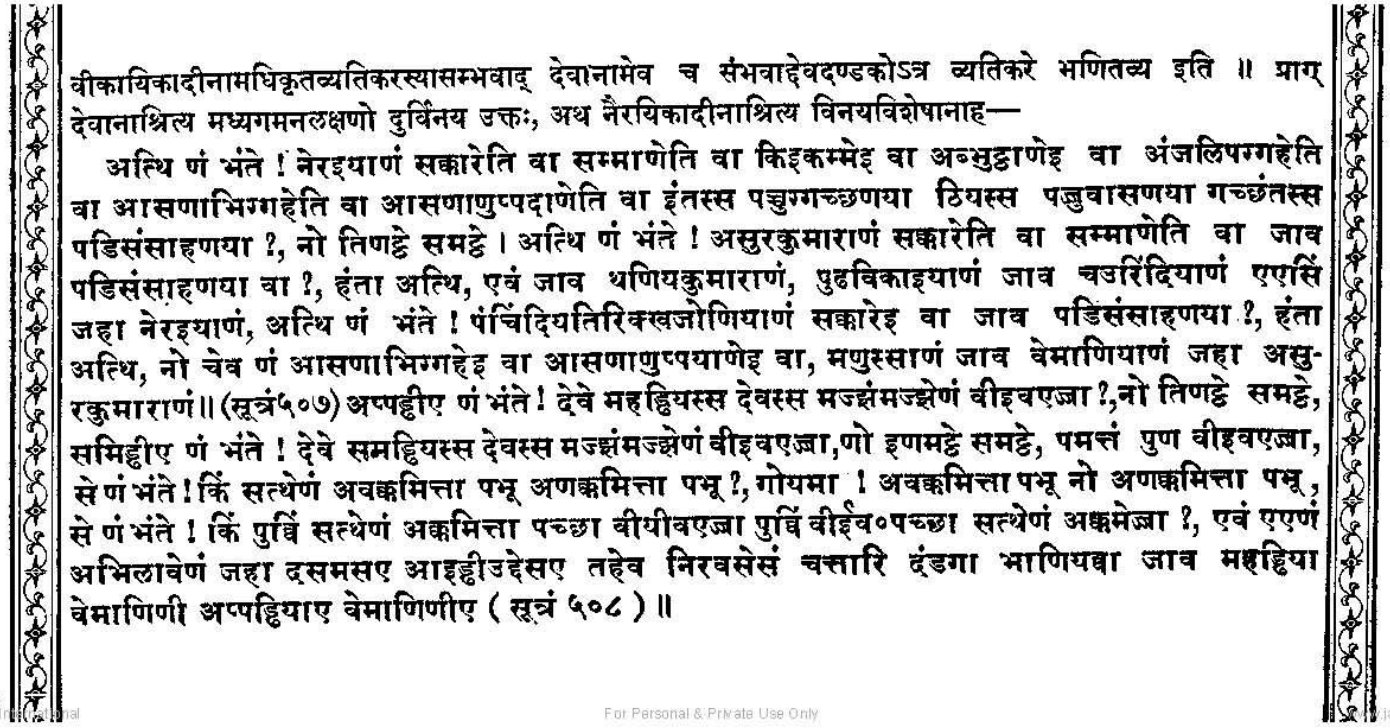

वीकायिकादीनामधिकृतव्यतिकरस्यासम्भवाद् देवानामेव च संभवाद्देवदण्डकोऽत्र व्यतिकरे भणितव्य इति ॥ प्राग् देवानाश्रित्य मध्यगमनलक्षणो दुर्विनय उक्तः, अथ नैरयिकादीनाश्रित्य विनयविशेषानाह—

अत्थि णं भंते ! नेरइयाणं सक्कारेति वा सम्माणेति वा किइकम्मेइ वा अब्भुट्ठाणेइ वा अंजलिपग्गहेति वा आसणाभिग्गहेति वा आसणाणुप्पदाणेति वा इंतस्स पच्चुग्गच्छणया ठियस्स पज्जुवासणया गच्छंतस्स पडिसंसाहणया ?, नो तिणट्ठे समट्ठे । अत्थि णं भंते ! असुरकुमाराणं सक्कारेति वा सम्माणेति वा जाव पडिसंसाहणया वा ?, हंता अत्थि, एवं जाव थणियकुमाराणं, पुढविकाइयाणं जाव चउरिंदियाणं एएसिं जहा नेरइयाणं, अत्थि णं भंते ! पंचिंदियतिरिक्खजोणियाणं सक्कारेइ वा जाव पडिसंसाहणया ?, हंता अत्थि, नो चेव णं आसणाभिग्गहेइ वा आसणाणुप्पयाणेइ वा, मणुस्साणं जाव वेमाणियाणं जहा असुरकुमाराणं॥ (सूत्रं५०७) अप्पड्ढीए णं भंते ! देवे महड्ढियस्स देवस्स मज्झंमज्झेणं वीइवएज्जा ?,नो तिणट्ठे समट्ठे, समिड्ढीए णं भंते ! देवे समड्ढियस्स देवस्स मज्झंमज्झेणं वीइवएज्जा,णो इणमट्ठे समट्ठे, पमत्तं पुण वीइवएज्जा, से णं भंते ! किं सत्थेणं अवक्कमित्ता पभू अणक्कमित्ता पभू ?, गोयमा ! अवक्कमित्ता पभू नो अणक्कमित्ता पभू, से णं भंते ! किं पुव्विं सत्थेणं अक्कमित्ता पच्छा वीयीवएज्जा पुव्विं वीईव०पच्छा सत्थेणं अक्कमेज्जा ?, एवं एएणं अभिलावेणं जहा दसमसए आइड्ढीउद्देसए तहेव निरवसेसं चत्तारि दंडगा भाणियव्वा जाव महड्ढिया वेमाणिणी अप्पड्ढियाए वेमाणिणीए (सूत्रं ५०८) ॥

व्या० १०७

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥६३७॥

'अत्थि ण'मित्यादि, 'सक्कारेइ व'त्ति सत्कारो–विनयार्हेषु वन्दनादिनाऽऽदरकरणं प्रवरवस्त्रादिदानं वा 'सत्कारो पवरवत्थमाईहिं' इति वचनात् 'सम्माणेइ व'त्ति सन्मानः–तथाविधप्रतिपत्तिकरणं 'किइकम्मेइ व'त्ति कृतिकर्म्म–वन्दनं कार्यकरणं वा 'अब्भुट्ठाणेइ व'त्ति अभ्युत्थानं–गौरवार्हदर्शने विष्टरत्यागः 'अंजलिपग्गहेइ व'त्ति अञ्जलिप्रग्रहः–अञ्जलिकरणम् 'आसणाभिग्गहेइ व'त्ति आसनाभिग्रहः–तिष्ठत एव गौरव्यस्यासनानयनपूर्वकमुपविशतेति भणनं 'आसणाणुप्पयाणेइ व'त्ति आसनानुप्रदानं–गौरव्यमाश्रित्यासनस्य स्थानान्तरसञ्चारणं 'इंतस्स पच्चुग्गच्छणय'त्ति आगच्छतो गौरव्यस्याभिमुखगमनं 'ठियस्स पज्जुवासणय'त्ति तिष्ठतो गौरव्यस्य सेवेति 'गच्छंतस्स पडिसंसाहणय'त्ति गच्छतोऽनुव्रजनमिति, अयं च विनयो नारकाणां नास्ति, सततं दुःस्थत्वादिति ॥ पूर्वं विनय उक्तः, अथ तद्विपर्ययभूताविनयविशेषं देवानां परस्परेण प्रतिपादयन्नाह—'अप्पड्ढिए ण'मित्यादि, 'एवं एएणं अभिलावेण'मित्यादौ 'आइड्ढिउद्देसए'त्ति दशमशतस्य तृतीयोद्देशके 'निरवसेसं'ति समस्तं प्रथमं दण्डकसूत्रं वाच्यं, तत्र चाल्पर्द्धिकमहर्द्धिकालापकः समर्द्धिकालापकश्चेत्यालापकद्वयं साक्षादेव दर्शितं, केवलं समर्द्धिकालापकस्यान्तेऽयं सूत्रशेषो दृश्यः—'गोयमा ! पुव्विं सत्थेणं अक्कमित्ता पच्छा वीईवएज्जा नो पुव्विं वीईवइत्ता पच्छा सत्थेणं अक्कमिज्ज'त्ति, तृतीयस्तु महर्द्धिकाल्पर्द्धिकालापक एवं—'महड्ढिए णं भंते ! देवे अप्पड्ढियस्स देवस्स मज्झंमज्झेणं वीईवएज्जा ?, हंता वीईवएज्जा, से णं भंते ! किं सत्थेणं अक्कमित्ता पभू अणक्कमित्ता पभू ?' शस्त्रेण हत्वाऽहत्वा वेत्यर्थः, 'गोयमा ! अक्कमित्तावि पभू अणक्कमित्तावि पभू, से णं भंते ! किं पुव्विं सत्थेणं अक्कमित्ता पच्छा वीईवएज्जा पुव्विं वीईव-

१४ शतके ३ उद्देशः नारकादीनां सत्कारादि देवानां मध्येन गतिः सू ५०७-५०८

॥६३७॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

एज्जा पच्छा सत्थेणं अक्कमेज्जा ?, गोयमा ! पुव्विं वा सत्थेणं अक्कमित्ता पच्छा वीइवएज्जा पुव्विं वा वीइवइत्ता पच्छा सत्थेणं अक्कमिज्ज'त्ति, 'चत्तारि दंडगा भाणियव्व'त्ति तत्र प्रथमदण्डक उक्तालापकत्रयात्मको देवस्य देवस्य च, द्वितीयस्त्वेवंविध एव नवरं देवस्य च देव्याश्च, एवं तृतीयोऽपि नवरं देव्याश्च देवस्य च, चतुर्थोऽप्येवं नवरं देव्याश्च देव्याश्चेति, अत एवाह—'जाव महड्ढिया वेमाणिणी अप्पड्ढियाए वेमाणिणीए'त्ति, 'मज्झंमज्झेण'मित्यादि तु पूर्वोक्तानुसारेणाध्येयमिति ॥ अनन्तरं देववक्तव्यतोक्ता, अथैकान्तदुःखितत्वेन तद्विपर्ययभूता नारका इति तद्वतवक्तव्यतामाह—

रयणप्पभापुढविनेरइया णं भंते ! केरिसियं पोग्गलपरिणामं पच्चणुब्भवमाणा विहरंति ?, गोयमा ! अणिट्ठं जाव अमणामं एवं जाव अहेसत्तमापुढविनेरइया, एवं वेदणापरिणामं एवं जहा जीवाभिगमे बितिए नेरइयउद्देसए जाव अहेसत्तमापुढविनेरइया णं भंते ! केरिसयं परिग्गहसन्नापरिणामं पच्चणुब्भवमाणा विहरंति ?, गोयमा ! अणिट्ठं जाव अमणामं। सेवं भंते ! २ त्ति (सूत्रं ५०९) ॥ १४–३ ॥

'रयणे'त्यादि, 'एवं वेयणापरिणामं'ति पुद्गलपरिणामवद् वेदनापरिणामं प्रत्यनुभवन्ति नारकाः, तत्र चैवमभिलापः—'रयणप्पभापुढविनेरइया णं भंते ! केरिसयं वेयणापरिणामं पच्चणुब्भवमाणा विहरंति ?, गोयमा ! अणिट्ठं जाव अमणामं एवं जाव अहेसत्तमापुढविनेरइया' शेषसूत्रातिदेशायाह—'एवं जहा जीवाभिगमे' इत्यादि, जीवाभिगमोक्तानि चैतानि विंशतिः पदानि, तद्यथा—"पोग्गलपरिणामं १ वेयणाइ २ लेसाइ ३ नामगोए य ४ । अरई ५ भए य ६ सोगे ७ खुहा ८ पिवासा य ९ वाही य १० ॥ १ ॥ उस्सासे ११ अणुतावे १२ कोहे १३ माणे

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [५०९]

दीप अनुक्रम [६०६]

य १४ माय १५ लोभे य १६ । चत्तारि य सन्नाओ २० नेरइयाणं परीणामे ॥ २ ॥" इति, तत्र चाद्यपदद्वयस्याभिलापो दर्शित एव, शेषाणि त्वष्टादशाद्यपदद्वयाभिलापेनाध्येयानीति ॥ चतुर्दशशते तृतीयः ॥ १४–३ ॥

तृतीयोद्देशके नारकाणां पुद्गलपरिणाम उक्त इति, चतुर्थोद्देशकेऽपि पुद्गलपरिणामविशेष एवोच्यते इत्येवंसम्बन्ध-स्यास्येदमादिसूत्रम्—

एस णं भंते ! पोग्गले तीतमणंतं सासयं समयं लुक्खी समयं अलुक्खी समयं लुक्खी वा अलुक्खी वा ? पुव्विं च णं करणेणं अणेगवन्नं अणेगरूवं परिणामं परिणमति ?, अह से परिणामे निज्जिन्ने भवति तओ पच्छा एगवन्ने एगरूवे सिया ?, हंता गोयमा ! एस णं पोग्गले तीते तं चेव जाव एगरूवे सिया ॥ एस णं भंते ! पोग्गले पडुप्पन्नं सासयं समयं ? एवं चेव, एवं अणागयमणंतंपि ॥ एस णं भंते ! खंधे तीतमणंतं ? एवं चेव खंधेवि जहा पोग्गले (सूत्रं ५१०) ॥

'एस णं भंते !'इत्यादि, इह पुनरुद्देशकार्थसङ्ग्रहगाथा क्वचिद् दृश्यते, सा चेयं—"पोग्गल १ खंधे २ जीवे ३ परमाणू ४ सासए य ५ चरमे य । दुविहे खलु परिणामे अजीवाणं च जीवाणं ६ ॥ १ ॥" अस्याश्चार्थ उद्देशकार्थाधिगमावगम्य एवेति, 'पुग्गले'त्ति पुद्गलः परमाणुः स्कन्धरूपश्च 'तीतमणंतं सासयं समयं'ति विभक्तिपरिणामादतीते अनन्ते अप-रिमाणत्वात् शाश्वते अक्षयत्वात् 'समये' काले 'समयं लुक्खी'ति समयमेकं यावद्रूक्षस्पर्शसद्भावाद्रूक्षी, तथा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र चतुर्दशमे शतके तृतीय-उद्देशक: परिसमाप्त:

अथ चतुर्दशमे शतके चतुर्थ-उद्देशक: आरब्ध:

'समयं अलुक्खी'त्ति समयमेकं यावदरूक्षस्पर्शसद्भावाद् 'अरूक्षी' स्निग्धस्पर्शवान् बभूव, इदं च पदद्वयं परमाणौ स्कन्धे च संभवति, तथा 'समयं लुक्खी वा अलुक्खी व'त्ति समयमेव रूक्षश्चारूक्षश्च रूक्षस्निग्धलक्षणस्पर्शद्वयोपेतो बभूव, इदं च स्कन्धापेक्षं यतो द्व्यणुकादिस्कन्धे देशो रूक्षो देशश्चारूक्षो भवतीत्येवं युगपद्रूक्षस्निग्धस्पर्शसम्भवः, वाशब्दौ चेह समुच्चयार्थौ, एवंरूपश्च सन्नसौ किमनेकवर्णादिपरिणामं परिणमति पुनश्चैकवर्णादिपरिणामः स्यात् ? इति पृच्छन्नाह—'पुव्विं च णं करणेणं अणेगवन्नं अणेगरूवं परिणामं परिणमइ'इत्यादि, 'पूर्वं च' एकवर्णादिपरिणामात्प्रागेव 'करणेन' प्रयोगकरणेन विश्रसाकरणेन वा 'अनेकवर्णं' कालनीलादिवर्णभेदेनानेकरूपं गन्धरसस्पर्शसंस्थानभेदेन 'परिणामं' पर्यायं परिणमति अतीकालविषयत्वादस्य परिणतवानिति द्रष्टव्यं पुद्गल इति प्रकृतं, स च यदि परमाणुस्तदा समयभेदेनानेकवर्णादित्वं परिणतवान्, यदि च स्कन्धस्तदा यौगपद्येनापीति। 'अह से'त्ति 'अथ' अनन्तरं सः—एष परमाणोः स्कन्धस्य चानेकवर्णादिपरिणामो 'निर्जीर्णः' क्षीणो भवति परिणामान्तराधायककारणोपनिपातवशात् 'ततः पश्चात्'निर्जरणानन्तरम् 'एकवर्णः' अपेतवर्णान्तरत्वादेकरूपो विवक्षितगन्धादिपर्यायापेक्षयाऽपरपर्यायाणामपेतत्वात् 'सिय'त्ति बभूव अतीतकालविषयत्वादस्येति प्रश्नः, इहोत्तरमेतदेवेति, अनेन च परिणामिता पुद्गलद्रव्यस्य प्रतिपादितेति॥ 'एस ण'मित्यादि वर्त्तमानकालसूत्रं, तत्र च 'पडुप्पन्नं'ति विभक्तिपरिणामात् 'प्रत्युत्पन्ने' वर्त्तमाने 'शाश्वते' सदैव तस्य भावात् 'समये' कालमात्रे 'एवं चेव'त्ति करणात्पूर्वसूत्रोक्तमिदं दृश्यं—'समयं लुक्खी समयं अलुक्खी समयं लुक्खी वा अलुक्खी वा'इत्यादि, यच्चेहानन्तमिति नाधीतं तद्वर्त्तमानसमयस्यानन्तत्वासम्भवात्,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥६३९॥

अतीतानागतसूत्रयोस्त्वनन्तमित्यधीतं तयोरनन्तत्वसम्भवादिति ॥ अनन्तरं पुद्गलस्वरूपं निरूपितं, पुद्गलश्च स्कन्धोऽपि भवतीति पुद्गलभेदभूतस्य स्कन्धस्य स्वरूपं निरूपयन्नाह—'एस णं भंते ! खंधे'इत्यादि ॥ स्कन्धश्च स्वप्रदेशापेक्षया जीवोऽपि स्यादितीत्थमेव जीवस्वरूपं निरूपयन्नाह—

एस णं भंते ! जीवे तीतमणंतं सासयं समयं दुक्खी समयं अदुक्खी समयं दुक्खी वा अदुक्खी वा ? पुव्विं च करणेणं अणेगभूयं परिणामं परिणमइ अह से वेयणिज्जे निज्जिन्ने भवति तओ पच्छा एगभावे एगभूए सिया ?, हंता गोयमा ! एस णं जीवे जाव एगभूए सिया, एवं पडुप्पन्नं सासयं समयं, एवं अणागयमणंतं सासयं समयं (सूत्रं ५११) ॥

'एस णं भंते ! जीवे'इत्यादि, 'एषः' प्रत्यक्षो जीवोऽतीतेऽनन्ते शाश्वते समये समयमेकं दुःखी दुःखहेतुयोगात् समयं चादुःखी सुखहेतुयोगाद्बभूव समयमेव च दुःखी वाऽदुःखी वा, वाशब्दयोः समुच्चयार्थत्वाद् दुःखी च सुखी च तद्धेतुयोगात्, न पुनरेकदा सुखदुःखवेदनमस्ति एकोपयोगत्वाज्जीवस्येति, एवंरूपश्च सन्नसौ स्वहेतुतः किमनेकभावं परिणामं परिणमति पुनश्चैकभावपरिणामः स्यात् ? इति पृच्छन्नाह—'पुव्विं च करणेणं अणेगभावं अणेगभूयं परिणामं परिणमइ' 'पूर्वं च' एकभावपरिणामात्प्रागेव करणेन कालस्वभावादिकारणसंवलिततया शुभाशुभकर्मबन्धहेतुभूतया क्रियया ऽनेको भावः–पर्यायो दुःखित्वादिरूपो यस्मिन् स तथा तमनेकभावं परिणाममिति योगः 'अणेगभूयं'ति अनेकभावत्वादेवानेकरूपं 'परिणामं' स्वभावं 'परिणमइ'त्ति अतीतकालविषयत्वादस्य 'परि-

१४ शतके ४ उद्देशः जीवस्य सुखित्वादि सू ५११

॥६३९॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

णतवान्' प्राप्तवानिति । 'अह से'त्ति अथ 'तत्' दुःखितत्वाद्यनेकभावहेतुभूतं 'वेयणिज्जे'त्ति वेदनीयं कर्म्म उपलक्षणत्वाच्चास्य ज्ञानावरणीयादि च 'निर्जीर्णं' क्षीणं भवति ततः पश्चात् 'एगभावे'त्ति एको भावः सांसारिकसुखविपर्ययात् स्वाभाविकसुखरूपो यस्यासावेकभावोऽत एव 'एकभूतः' एकत्वं प्राप्तः 'सिय'त्ति बभूव कर्म्मकृतधर्म्मान्तरविरहादिति प्रश्नः, इहोत्तरमेतदेव । एवं प्रत्युत्पन्नानागतसूत्रे अपीति ॥ पूर्वं स्कन्ध उक्तः, स च स्कन्धरूपत्यागाद्विनाशी भवति, एवं परमाणुरपि स्यान्न वा ? इत्याशङ्कायामाह—

परमाणुपोग्गले णं भंते ! किं सासए असासए ?, गोयमा ! सिय सासए सिय असासए, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ सिय सासए सिय असासए ?, गोयमा ! दव्वट्ठयाए सासए वन्नपज्जवेहिं जाव फासपज्जवेहिं असासए से तेणट्ठेणं जाव सिय सासए सिय असासए (सूत्रं ५१२) ॥ परमाणुपोग्गले णं भंते ! किं चरमे अचरमे ?, गोयमा ! दव्वादेसेणं नो चरिमे अचरिमे, खेत्तादेसेणं सिय चरिमे सिय अचरिमे, कालादेसेणं सिय चरिमे सिय अचरिमे, भावादेसेणं सिय चरिमे सिय अचरिमे (सूत्रं ५१३) ॥

'परमाणुपोग्गले णं'ति पुद्गलः स्कन्धोऽपि स्यादतः परमाणुग्रहणं 'सासए'त्ति शश्वद्भवनात् 'शाश्वतः' नित्यः अशाश्वतस्त्वनित्यः 'सिय सासए'त्ति कथञ्चिच्छाश्वतः 'दव्वट्ठयाए'त्ति द्रव्यं–उपेक्षितपर्यायं वस्तु तदेवार्थो द्रव्यार्थस्तद्भावस्त्ता तया द्रव्यार्थतया शाश्वतः स्कन्धान्तर्भावेऽपि परमाणुत्वस्याविनष्टत्वात् प्रदेशलक्षणव्यपदेशान्तरव्यपदेश्यत्वात्, 'वन्नपज्जवेहिं'ति परि–सामस्त्येनावन्ति–गच्छन्ति ये ते पर्यवा विशेषा धर्म्मा इत्यनर्थान्तरं ते च वर्णादिभेदादनेकधेत्यतो

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥६४०॥

विशेष्यते–वर्णस्य पर्यवा वर्णपर्यवा अतस्तैः, 'असासए'त्ति विनाशी, पर्यवाणां पर्यवत्वेनैव विनश्वरत्वादिति ॥ परमाण्व-धिकारादेवेदमाह—'परमाणु'इत्यादि, 'चरमे'त्ति यः परमाणुर्यस्माद्विवक्षितभावाच्च्युतः सन् पुनस्तं भावं न प्राप्स्यति स तद्भावापेक्षया चरमः, एतद्विपरीतस्त्वचरम इति, तत्र 'दव्वादेसेणं'ति आदेशः–प्रकारो द्रव्यरूप आदेशो द्रव्यादेशस्तेन नो चरमः, स हि द्रव्यतः परमाणुत्वाच्च्युतः सङ्घातमवाप्यापि ततश्च्युतः परमाणुत्वलक्षणं द्रव्यत्वमवाप्स्यतीति । 'खेत्ता-देसेणं'ति क्षेत्रविशेषितत्वलक्षणप्रकारेण 'स्यात्' कदाचिच्चरमः, कथम् ?,यत्र क्षेत्रे केवली समुद्घातं गतस्तत्र क्षेत्रे यः परमा-णुरवगाढोऽसौ तत्र क्षेत्रे तेन केवलिना समुद्घातगतेन विशेषितो न कदाचनाप्यवगाहं लप्स्यते, केवलिनो निर्वाणगमनादित्येवं क्षेत्रतश्चरमोऽसाविति, निर्विशेषणक्षेत्रापेक्षया त्वचरमः, तत्क्षेत्रावगाहस्य तेन लप्स्यमानत्वादिति । 'कालादेसेणं'ति काल-विशेषितत्वलक्षणप्रकारेण 'सिय चरमे'त्ति कथञ्चिच्चरमः, कथम् ?, यत्र काले पूर्वाह्णादौ केवलिना समुद्घातः कृतस्तत्रैव यः परमाणुतया संवृत्तः स च तं कालविशेषं केवलिसमुद्घातविशेषितं न कदाचनापि प्राप्स्यति तस्य केवलिनः सिद्धिगमनेन पुनः समुद्घाताभावादिति तदपेक्षया कालतश्चरमोऽसाविति, निर्विशेषणकालापेक्षया त्वचरम इति । 'भावाएसेणं'ति भावो–वर्णादिविशेषस्तद्विशेषलक्षणप्रकारेण 'स्याच्चरमः' कथञ्चिच्चरमः, कथं ?, विवक्षितकेवलिसमुद्घातावसरे यः पुद्गलो वर्णादिभावविशेषं परिणतः स विवक्षितकेवलिसमुद्घातविशेषितवर्णपरिणामापेक्षया चरमो यस्मात्तत् केवलिनिर्वाणे पुनस्तं परिणाममसौ न प्राप्स्यतीति, इदं च व्याख्यानं चूर्णिकारमतमुपजीव्य कृतमिति ॥ अनन्तरं परमाणोश्चरमत्वाचरमत्वल-क्षणः परिणामः प्रतिपादितः, अथ परिणामस्यैव भेदाभिधानायाह—

१४ शतके ४ उद्देशः परमाणोः शाश्वतेतर-ते चरमाच-रमते सू ५१२-५१३

॥६४०॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

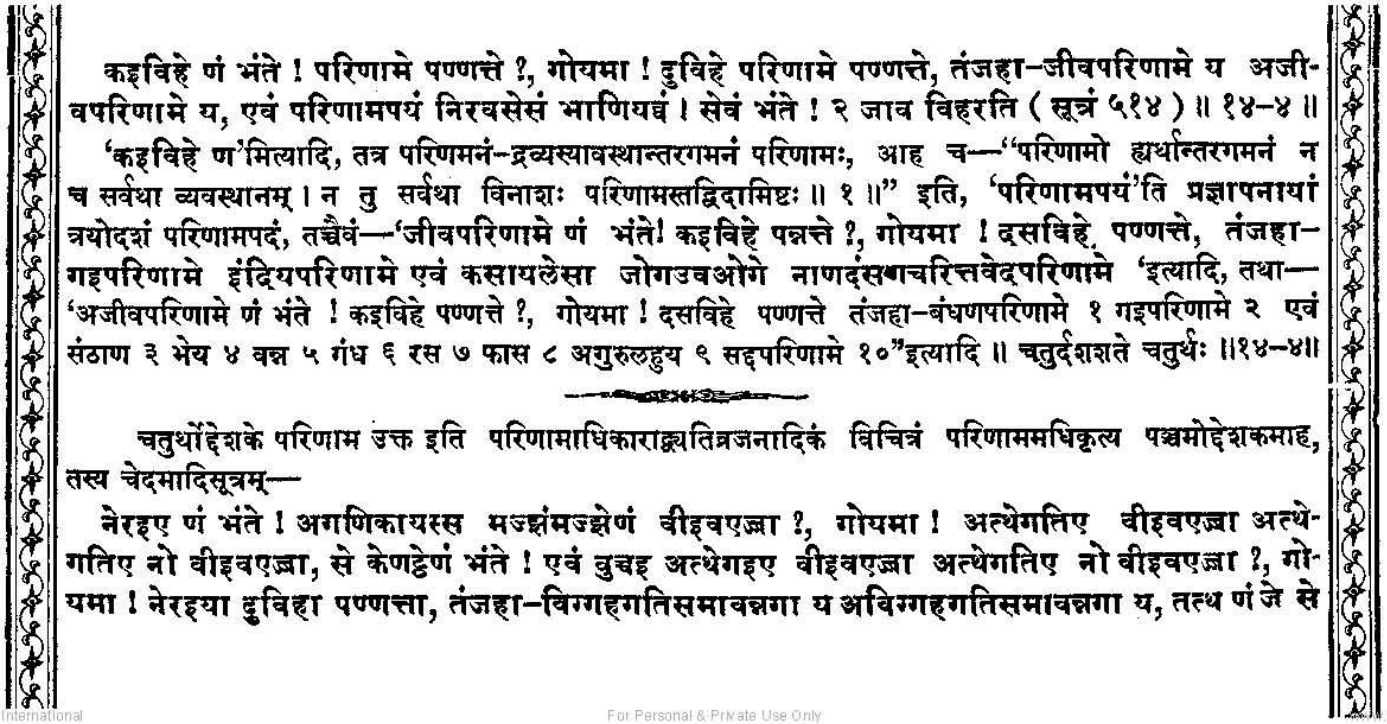

कइविहे णं भंते ! परिणामे पण्णत्ते ?, गोयमा ! दुविहे परिणामे पण्णत्ते, तंजहा–जीवपरिणामे य अजीवपरिणामे य, एवं परिणामपयं निरवसेसं भाणियव्वं । सेवं भंते ! २ जाव विहरति (सूत्रं ५१४) ॥ १४–४ ॥

'कइविहे ण'मित्यादि, तत्र परिणमनं–द्रव्यस्यावस्थान्तरगमनं परिणामः, आह च—"परिणामो ह्यर्थान्तरगमनं न च सर्वथा व्यवस्थानम् । न तु सर्वथा विनाशः परिणामस्तद्विदामिष्टः ॥ १ ॥" इति, 'परिणामपयं'ति प्रज्ञापनायां त्रयोदशं परिणामपदं, तच्चैवं—'जीवपरिणामे णं भंते! कइविहे पन्नत्ते ?, गोयमा ! दसविहे पण्णत्ते, तंजहा–गइपरिणामे इंदियपरिणामे एवं कसायलेसा जोगउवओगे नाणदंसणचरित्तवेदपरिणामे 'इत्यादि, तथा—'अजीवपरिणामे णं भंते ! कइविहे पण्णत्ते ?, गोयमा ! दसविहे पण्णत्ते तंजहा–बंधणपरिणामे १ गइपरिणामे २ एवं संठाण ३ भेय ४ वन्न ५ गंध ६ रस ७ फास ८ अगुरुलहुय ९ सद्दपरिणामे १०"इत्यादि ॥ चतुर्दशशते चतुर्थः ॥१४–४॥

चतुर्थोद्देशके परिणाम उक्त इति परिणामाधिकाराद्व्यतिव्रजनादिकं विचित्रं परिणाममधिकृत्य पञ्चमोद्देशकमाह, तस्य चेदमादिसूत्रम्—

नेरइए णं भंते ! अगणिकायस्स मज्झंमज्झेणं वीइवएज्जा ?, गोयमा ! अत्थेगतिए वीइवएज्जा अत्थेगतिए नो वीइवएज्जा, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ अत्थेगइए वीइवएज्जा अत्थेगतिए नो वीइवएज्जा ?, गोयमा ! नेरइया दुविहा पण्णत्ता, तंजहा–विग्गहगतिसमावन्नगा य अविग्गहगतिसमावन्नगा य, तत्थ णं जे से

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र चतुर्दशमे शतके चतुर्थ-उद्देशक: परिसमाप्त:

अथ चतुर्दशमे शतके पंचम-उद्देशक: आरब्ध:

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [५१५]

दीप अनुक्रम [६१२]

विग्गहगतिसमावन्नए नेरतिए से णं अगणिकायस्स मज्झंमज्झेणं वीइवएज्जा, से णं तत्थ झियाएज्जा ?, णो तिणट्ठे समट्ठे, नो खलु तत्थ सत्थं कमइ, तत्थ णं जे से अविग्गहगइसमावन्नए नेरइए से णं अगणिकायस्स मज्झंमज्झेणं णो वीइवएज्जा, से तेणट्ठेणं जाव नो वीइवएज्जा ॥ अकुरकुमारे णं भंते ! अगणिकायस्स पुच्छा, गोयमा ! अत्थेगतिए वीइवएज्जा अत्थेगतिए नो वीइवएज्जा, से केणट्ठेणं जाव नो वीइवएज्जा ?, गोयमा ! असुरकुमारा दुविहा पण्णत्ता, तंजहा–विग्गहगइसमावन्नगा य अविग्गहगइसमावन्नगा य, तत्थ णं जे से विग्गहगइसमावन्नए असुरकुमारे से णं एवं जहेव नेरतिए जाव वक्कमति, तत्थ णं जे से अविग्गहगइसमावन्नए असुरकुमारे से णं अत्थेगतिए अगणिकायस्स मज्झंमज्झेणं वीतीवएज्जा अत्थेगतिए नो वीइव०, जे णं वीतीवएज्जा से णं तत्थ झियाएज्जा ?, नो तिणट्ठे समट्ठे, नो खलु तत्थ सत्थं कमति, से तेणट्ठेणं एवं जाव थणियकुमारे, एगिंदिया जहा नेरइया । बेइंदिया णं भंते ! अगणिकायस्स मज्झंमज्झेणं जहा असुरकुमारे तहा बेइंदिएवि, नवरं जे णं वीयीवएज्जा से णं तत्थ झियाएज्जा ?, हंता झियाएज्जा, से णं तं चेव एवं जाव चउरिंदिए ॥ पंचिंदियतिरिक्खजोणिए णं भंते ! अगणिकायपुच्छा, गोयमा ! अत्थेगतिए वीइवएज्जा अत्थेगतिए नो वीइवएज्जा, से तेणट्ठेणं० ?, गोयमा ! पंचिंदियतिरिक्खजोणिया दुविहा पण्णत्ता, तंजहा– विग्गहगतिसमावन्नगा य अविग्गहगइमासवन्नगा य, विग्गहगइमासवन्नए जहेव नेरइए जाव नो खलु तत्थ सत्थं कमइ, अविग्गहगइसमावन्नगा पंचिंदियतिरिक्खजोणिया दुविहा पन्नत्ता, तंजहा–इड्ढि-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्पत्ता य अणिहिप्पत्ता य, तत्थ णं जे से इहिप्पत्ते पंचिंदियतिरिक्खजोणिए से णं अत्थेगइए अगणिकायस्स मज्झंमज्झेणं वीयीवएज्जा अत्थेगइए नो वीयीवएज्जा, जे णं वीयीवएज्जा से णं तत्थ झियाएज्जा ?, नो तिणट्ठे समट्ठे, नो खलु तत्थ सत्थं कमइ, तत्थ णं जे से अणिहिप्पत्ते पंचिंदियतिरिक्खजोणिए से णं अत्थेगतिए अगणिकायस्स मज्झंमज्झेणं वीयीवएज्जा अत्थेगतिए नो वीइवएज्जा, जे णं वीयीवएज्जा से णं तत्थ झियाएज्जा ?, हंता झियाएज्जा, से तेणट्ठेणं जाव नो वीयीवएज्जा, एवं मणुस्सेवि, वाणमंतरजोइसियवेमाणिए जहा असुरकुमारे (सूत्रं ५१५) ॥

'नेरइए ण'मित्यादि, इह च क्वचिदुद्देशकार्थसङ्ग्रहगाथा दृश्यते, सा चेयं—"नेरइय अगणिमज्झे दस ठाणा तिरिय पोग्गले देवे । पव्वयभित्ती उल्लंघणा य पल्लंघणा चेव ॥ १ ॥" इति, अर्थश्चास्या उद्देशकार्थावगमगम्य इति, 'नो खलु तत्थ सत्थं कमइ'त्ति विग्रहगतिसमापन्नो हि कार्म्मणशरीरत्वेन सूक्ष्मः, सूक्ष्मत्वाच्च तत्र 'शस्त्रम्' अग्न्यादिकं न क्रामति । 'तत्थ णं जे से'इत्यादि, अविग्रहगतिसमापन्न उत्पत्तिक्षेत्रोपपन्नोऽभिधीयते न तु ऋजुगतिसमापन्नः तस्येह प्रकरणेऽनधिकृतत्वात्, स चाग्निकायस्य मध्येन न व्यतिव्रजति, नारकक्षेत्रे बादराग्निकायस्याभावात्, मनुष्यक्षेत्र एव तद्भावात्, यच्चोत्तराध्ययनादिषु श्रूयते—"हुयासणे जलंतंमि दड्ढपुव्वो अणेगसो ।"इत्यादि तदग्निसदृशद्रव्यान्तरापेक्षयाऽवसेयं, संभवन्ति च तथाविधशक्तिमन्ति द्रव्याणि तेजोलेश्याद्रव्यवदिति ॥ असुरकुमारसूत्रे विग्रहगतिको नारकवत्, अविग्रहगतिकस्तु कोऽप्यग्नेर्मध्येन व्यतिव्रजेत् यो मनुष्यलोकमागच्छति, यस्तु न तत्रागच्छति असौ न व्यतिव्रजेत्,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

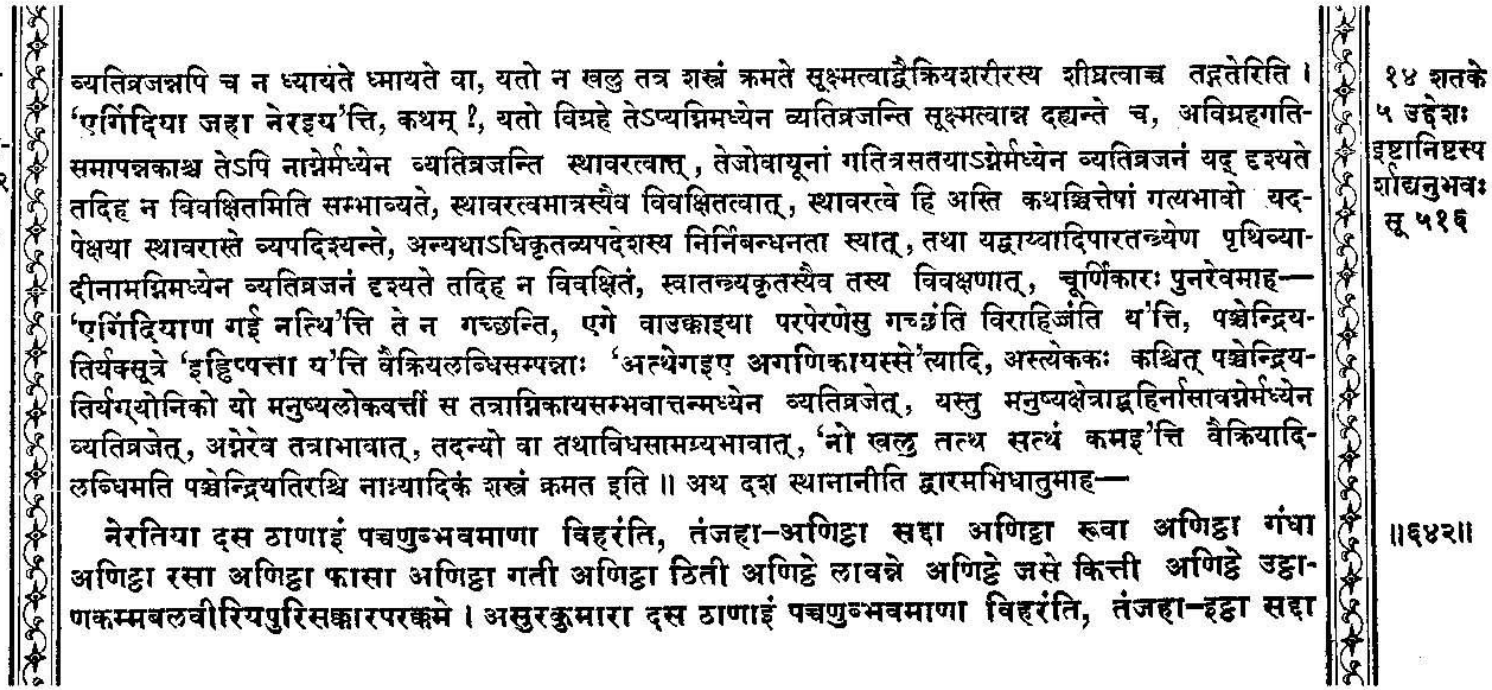

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥६४२॥

व्यतिव्रजन्नपि च न ध्यायते ध्मायते वा, यतो न खलु तत्र शस्त्रं क्रमते सूक्ष्मत्वाद्वैक्रियशरीरस्य शीघ्रत्वाच्च तद्गतेरिति। 'एगिंदिया जहा नेरइय'त्ति, कथम् ?, यतो विग्रहे तेऽप्यग्निमध्येन व्यतिव्रजन्ति सूक्ष्मत्वान्न दह्यन्ते च, अविग्रहगति-समापन्नकाश्च तेऽपि नाग्नेर्मध्येन व्यतिव्रजन्ति स्थावरत्वात्, तेजोवायूनां गतित्रसतयाऽग्नेर्मध्येन व्यतिव्रजनं यद् दृश्यते तदिह न विवक्षितमिति सम्भाव्यते, स्थावरत्वमात्रस्यैव विवक्षितत्वात्, स्थावरत्वे हि अस्ति कथञ्चित्तेषां गत्यभावो यद-पेक्षया स्थावरास्ते व्यपदिश्यन्ते, अन्यथाऽधिकृतव्यपदेशस्य निर्निबन्धनता स्यात्, तथा यद्वाय्वादिपारतन्त्र्येण पृथिव्या-दीनामग्निमध्येन व्यतिव्रजनं दृश्यते तदिह न विवक्षितं, स्वातन्त्र्यकृतस्यैव तस्य विवक्षणात्, चूर्णिकारः पुनरेवमाह— 'एगिंदियाण गई नत्थि'त्ति ते न गच्छन्ति, एगे वाउक्काइया परपेरणेसु गच्छंति विराहिज्जंति य'त्ति, पञ्चेन्द्रिय-तिर्यक्सूत्रे 'इड्ढिप्पत्ता य'त्ति वैक्रियलब्धिसम्पन्नाः 'अत्थेगइए अगणिकायस्से'त्यादि, अस्त्येककः कश्चित् पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिको यो मनुष्यलोकवर्त्ती स तत्राग्निकायसम्भवात्तन्मध्येन व्यतिव्रजेत्, यस्तु मनुष्यक्षेत्राद्बहिर्नासावग्नेर्मध्येन व्यतिव्रजेत्, अग्नेरेव तत्राभावात्, तदन्यो वा तथाविधसामग्र्यभावात्, 'नो खलु तत्थ सत्थं कमइ'त्ति वैक्रियादि-लब्धिमति पञ्चेन्द्रियतिरश्चि नाग्न्यादिकं शस्त्रं क्रमत इति ॥ अथ दश स्थानानीति द्वारमभिधातुमाह—

नेरतिया दस ठाणाइं पच्चणुब्भवमाणा विहरंति, तंजहा–अणिट्ठा सद्दा अणिट्ठा रूवा अणिट्ठा गंधा अणिट्ठा रसा अणिट्ठा फासा अणिट्ठा गती अणिट्ठा ठिती अणिट्ठे लावन्ने अणिट्ठे जसे कित्ती अणिट्ठे उट्ठा-णकम्मबलवीरियपुरिसक्कारपरक्कमे। असुरकुमारा दस ठाणाइं पच्चणुब्भवमाणा विहरंति, तंजहा–इट्ठा सद्दा

१४ शतके ५ उद्देशः इष्टानिष्टस्य शब्द्यनुभवः सू ५१६

॥६४२॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

इट्ठा रूवा जाव इट्ठे उट्ठाणकम्मबलवीरियपुरिसक्कारपरक्कमे एवं जाव थणियकुमारा ॥ पुढविक्काइया छट्ठाणाइं पचणुब्भवमाणा वि०, तं०–इट्ठाणिट्ठा फासा इट्ठाणिट्ठा गती एवं जाव परक्कमे, एवं जाव वणस्सइकाइया । बेइंदिया सत्तट्ठाणाइं पचणुब्भवमाणा विहरंति, तंजहा–इट्ठाणिट्ठा रसा सेसं जहा एगिंदियाणं, तेंदिया णं अट्ठट्ठाणाइं पचणुब्भवमाणा वि०, तं०–इट्ठाणिट्ठा गंधा सेसं जहा बेंदियाणं, चउरिंदिया नवट्ठाणाइं पचणुब्भवमाणा विहरंति, तं०–इट्ठाणिट्ठा रूवा सेसं जहा तेंदियाणं, पंचिंदियतिरिक्खजोणिया दस ठाणाइं पचणुब्भवमाणा विहरंति, तंजहा–इट्ठाणिट्ठा सद्दा जाव परक्कमे, एवं मणुस्सावि, वाणमंतरजोइसियवेमाणिया जहा असुरकुमारा (सूत्रं ५१६) ॥

'नेरइया दस ठाणाइं'इत्यादि, तत्र 'अणिट्ठा गइ'त्ति अप्रशस्तविहायोगतिनामोदयसम्पाद्या नरकगतिरूपा वा, 'अणिट्ठा ठिति'त्ति नरकावस्थानरूपा नरकायुष्करूपा वा 'अणिट्ठे लावन्ने'त्ति लावण्यं–शरीराकृतिविशेषः 'अणिट्ठे जसोकित्ति'त्ति प्राकृतत्वादनिष्टेति द्रष्टव्यं यशसा–सर्वदिग्गामिप्रख्यातिरूपेण पराक्रमकृतेन वा सह कीर्त्तिः–एकदिग्गामिनी प्रख्यातिर्दानफलभूता वा यशःकीर्त्तिः, अनिष्टत्वं च तस्या दुष्प्रख्यातिरूपत्वात्, अणिट्ठे उट्ठाणे'इत्यादि, उत्थानादयो वीर्यान्तरायक्षयोपशमादिजन्यवीर्यविशेषाः, अनिष्टत्वं च तेषां कुत्सितत्वादिति ॥ 'पुढविक्काइए'त्यादि, 'छट्ठाणाइं'ति पृथिवीकायिकानामेकेन्द्रियत्वेन पूर्वोक्तदशस्थानकमध्ये शब्दरूपगन्धरसा न विषय इति स्पर्शादीन्येव षट् ते प्रत्यनुभवन्ति, 'इट्ठाणिट्ठा फास'त्ति सातासातोदयसम्भवात् शुभाशुभक्षेत्रोत्पत्तिभावाच्च, 'इट्ठाणिट्ठा गइ'त्ति यद्यपि

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

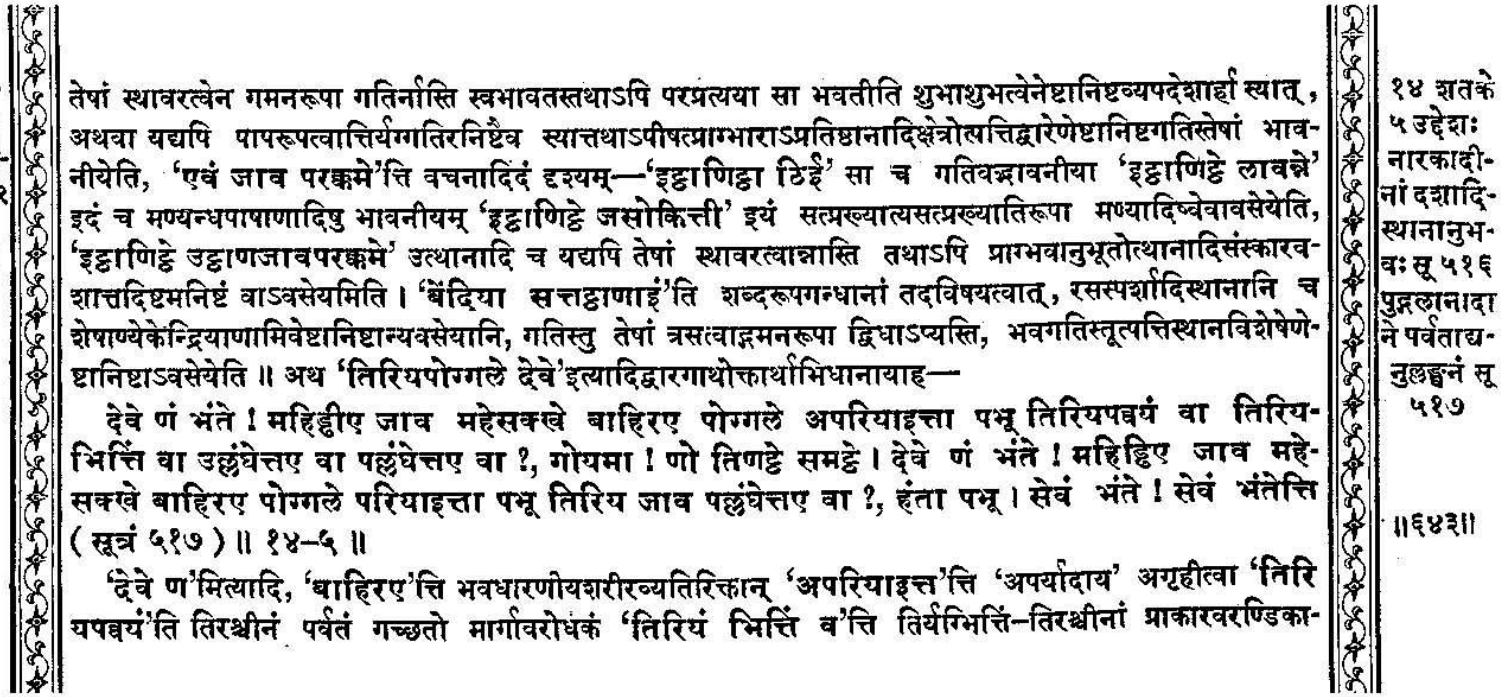

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥६४३॥

तेषां स्थावरत्वेन गमनरूपा गतिर्नास्ति स्वभावतस्तथाऽपि परप्रत्यया सा भवतीति शुभाशुभत्वेनेष्टानिष्टव्यपदेशार्हा स्यात्, अथवा यद्यपि पापरूपत्वात्तिर्यग्गतिरनिष्टैव स्यात्तथाऽपीषत्प्राग्भाराऽप्रतिष्ठानादिक्षेत्रोत्पत्तिद्वारेणेष्टानिष्टगतिस्तेषां भावनीयेति, 'एवं जाव परक्कमे'त्ति वचनादिदं दृश्यम्—'इट्ठाणिट्ठा ठिई' सा च गतिवद्भावनीया 'इट्ठाणिट्ठे लावण्णे' इदं च मण्यन्धपाषाणादिषु भावनीयम् 'इट्ठाणिट्ठे जसोकित्ती' इयं सत्प्रख्यात्यसत्प्रख्यातिरूपा मण्यादिष्वेवावसेयेति, 'इट्ठाणिट्ठे उट्ठाणजावपरक्कमे' उत्थानादि च यद्यपि तेषां स्थावरत्वान्नास्ति तथाऽपि प्राग्भवानुभूतोत्थानादिसंस्कारवशात्तदिष्टमनिष्टं वाऽवसेयमिति। 'बेंदिया सत्तट्ठाणाइं'ति शब्दरूपगन्धानां तदविषयत्वात्, रसस्पर्शादिस्थानानि च शेषाण्येकेन्द्रियाणामिवेष्टानिष्टान्यवसेयानि, गतिस्तु तेषां त्रसत्वाद्गमनरूपा द्विधाऽप्यस्ति, भवगतिस्तूत्पत्तिस्थानविशेषेणेष्टानिष्टाऽवसेयेति ॥ अथ 'तिरियपोग्गले देवे'इत्यादिद्वारगाथोक्तार्थाभिधानायाह—

देवे णं भंते ! महिड्ढीए जाव महेसक्खे बाहिरए पोग्गले अपरियाइत्ता पभू तिरियपव्वयं वा तिरियभित्तिं वा उल्लंघेत्तए वा पल्लंघेत्तए वा ?, गोयमा ! णो तिणट्ठे समट्ठे। देवे णं भंते ! महिड्ढिए जाव महेसक्खे बाहिरए पोग्गले परियाइत्ता पभू तिरिय जाव पल्लंघेत्तए वा ?, हंता पभू। सेवं भंते ! सेवं भंतेत्ति (सूत्रं ५१७) ॥ १४–५ ॥

'देवे ण'मित्यादि, 'बाहिरए'त्ति भवधारणीयशरीरव्यतिरिक्तान् 'अपरियाइत्त'त्ति 'अपर्यादाय' अगृहीत्वा 'तिरियपव्वयं'ति तिरश्चीनं पर्वतं गच्छतो मार्गावरोधकं 'तिरियं भित्तिं व'त्ति तिर्यग्भित्तिं–तिरश्चीनां प्राकारवरण्डिका-

१४ शतके ५ उद्देशः नारकादीनां दशादिस्थानानुभवः सू ५१६ पुद्गलानादाने पर्वताद्यनुल्लङ्घनं सू ५१७

॥६४३॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

दिभित्तिं पर्वतखण्डं वेति 'उल्लंघेत्तए'त्ति सकृदुल्लङ्घने 'पल्लंघेत्तए व'त्ति पुनः पुनर्लङ्घनेनेति ॥ चतुर्दशशते-पञ्चमः ॥ १४–५ ॥

पञ्चमोद्देशके नारकादिजीववक्तव्यतोक्ता षष्ठेऽपि सैवोच्यते इत्येवंसम्बद्धस्यास्येदमादिसूत्रम्—

रायगिहे जाव एवं वयासी–नेरइया णं भंते ! किमाहारा किंपरिणामा किंजोणीया किंठितीया पण्णत्ता ?, गोयमा ! नेरइया णं पोग्गलाहारा पोग्गलपरिणामा पोग्गलजोणिया पोग्गलट्ठितीया कम्मोवगा कम्मनियाणा कम्मट्ठितीया कम्मुणामेव विप्परियासमेंति एवं जाव वेमाणिया (सूत्रं ५१८) ॥ नेरइया णं भंते ! किं वीयीदव्वाइं आहारेंति अवीचिदव्वाइं आहारेंति ?, गोयमा ! नेरतिया वीचिदव्वाइंपि आहारेंति अवीचिदव्वाइंपि आहारेंति, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुचइ नेरतिया वीचि० तं चेव जाव आहारेंति ?, गोयमा ! जे णं नेरइया एगपएसूणाइंपि दव्वाइं आहारेंति ते णं नेरतिया वीचिदव्वाइं आहारेंति, जे णं नेरतिया पडिपुन्नाइं दव्वाइं आहारेंति ते णं नेरइया अवीचिदव्वाइं आहारेंति, से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुचइ जाव आहारेंति, एवं जाव वेमाणिया आहारेंति (सूत्रं ५१९) ॥

'रायगिहे'इत्यादि, 'किमाहार'त्ति किमाहारयन्तीति किमाहाराः 'किंपरिणाम'त्ति किमाहारितं सत्परिणामयन्तीति किंपरिणामाः 'किंजोणीय'त्ति का योनिः–उत्पत्तिस्थानं येषां ते किंयोनिकाः, एवं किंस्थितिकाः, स्थितिश्च अवस्थानहेतुः,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र चतुर्दशमे शतके पंचम-उद्देशक: परिसमाप्त:

अथ चतुर्दशमे शतके षष्ठं-उद्देशक: आरब्ध:

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [५१८--५१९]

दीप अनुक्रम [६१५--६१६]

व्याख्याप्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २ ॥६४४॥

अत्रोत्तरं क्रमेणैव दृश्यं व्यक्तं च, नवरं 'पुग्गलजोणीय'त्ति पुद्गलाः–शीतादिस्पर्शा योनी येषां ते तथा, नारका हि शीतयोनय उष्णयोनयश्चेति, 'पोग्गलट्ठिइय'त्ति पुद्गला–आयुष्ककर्मपुद्गलाः स्थितिर्येषां नरके स्थितिहेतुत्वात्ते तथा, अथ कस्मात्ते पुद्गलस्थितयो भवन्तीत्यत आह—'कम्मोवगे'त्यादि कर्म–ज्ञानावरणादि पुद्गलरूपमुपगच्छन्ति–बन्धनद्वारेणोपयान्तीति कर्मोपगाः, कर्मनिदानं–नारकत्वनिमित्तं कर्म बन्धनिमित्तं वा येषां ते कर्मनिदानाः, तथा कर्मणः–कर्मपुद्गलेभ्यः सकाशात्स्थितिर्येषां ते कर्मस्थितयः, तथा 'कम्मुणामेव विप्परियासमेंति'त्ति कर्मणैव हेतुभूतेन मकार आगमिकः विपर्यासं–पर्यायान्तरं पर्यासापर्यासादिकमायान्ति–प्राप्नुवन्ति अतस्ते पुद्गलस्थितयो भवन्तीति ॥ आहारमेवाश्रित्याह—'नेरइया ण'मित्यादि, 'वीइदव्वाइं'ति वीचिः–विवक्षितद्रव्याणां तदवयवानां च परस्परेण पृथग्भावः 'वीचिर् पृथग्भावे'इति वचनात्, तत्र वीचिप्रधानानि द्रव्याणि वीचिद्रव्याणि एकादिप्रदेशन्यूनानीत्यर्थः, एतन्निषेधादवीचिद्रव्याणि, अयमत्र भावः–यावता द्रव्यसमुदायेनाहारः पूर्यते स एकादिप्रदेशोनो वीचिद्रव्याण्युच्यंते, परिपूर्णस्ववीचिद्रव्याणीति टीकाकारः, चूर्णिकारस्त्वाहारद्रव्यवर्गणामधिकृत्येदं व्याख्यातवान्, तत्र च याः सर्वोत्कृष्टाहारद्रव्यवर्गणास्ता अवीचिद्रव्याणि, यास्तु ताभ्य एकादिना प्रदेशेन हीनास्ता वीचिद्रव्याणीति, 'एगपएसऊणाइंपि दव्वाइं'ति एकप्रदेशोनान्यपि अपिशब्दादनेकप्रदेशोनान्यपीति ॥ अनन्तरं दण्डकस्यान्ते वैमानिकानामाहारभोग उक्तः, अथ वैमानिकविशेषस्य कामभोगोपदर्शनायाह—

जाहे णं भंते ! सक्के देविंदे देवराया दिव्वाइं भोगभोगाइं भुंजिउंकामे भवति से कहमियाणिं पकरेंति ?,

१४ शतके ६ उद्देशः नारकाणां किमाहारत्वादि वीचिद्रव्याहारता सू ५१८-५१९

॥६४४॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गोयमा ! ताहे चेव णं [ग्रंथाग्रम् ९०००] से सक्के देविंदे देवराया एगं महं नेमिपडिरूवगं विउव्वति एगं जोयणसयसहस्सं आयामिक्खंभेणं तिन्नि जोयणसयसहस्साइं जाव अद्धंगुलं च किंचिविसेसाहियं परिक्खेवेणं, तस्स णं नेमिपडिरूवस्स उवरिं बहुसमरमणिज्जे भूमिभागे पन्नत्ते जाव मणीणं फासे, तस्स णं नेमिपडिरूवगस्स बहुमज्झदेसभागे तत्थ णं महं एगं पासायवडेंसगं विउव्वति पंच जोयणसयाइं उड्ढं उच्चत्तेणं अड्ढाइज्जाइं जोयणसयाइं विक्खंभेणं अब्भुग्गयमूसियवन्नओ जाव पडिरूवं, तस्स पासायवडिंसगस्य उल्लोए पउमलयभत्तिचित्ते जाव पडिरूवे, तस्स णं पासायवडेंसगस्स अंतो बहुसमरमणिज्जे भूमिभागे जाव मणीणं फासो मणिपेढिया अट्ठजोयणिया जहा वेमाणियाणं, तीसे णं मणिपेढियाए उवरिं महं एगे देवसयणिज्जे विउव्वइ सयणिज्जवन्नओ जाव पडिरूवे, तत्थ णं से सक्के देविंदे देवराया अट्ठहिं अग्गमहिसीहिं सपरिवाराहिं दोहि य अणिएहिं नट्टाणिएण य गंधव्वाणिएण य सद्धिं महयाहयनट्टजाव दिव्वाइं भोगभोगाइं भुंजमाणे विहरइ ॥ जाहे ईसाणे देविंदे देवराया दिव्वाइं जहा सक्के तहा ईसाणेवि निरवसेसं, एवं सणंकुमारेवि, नवरं पासायवडेंसओ छ जोयणसयाइं उड्ढं उच्चत्तेणं तिन्नि जोयणसयाइं विक्खंभेणं मणिपेढिया तहेव अट्ठजोयणिया, तीसे णं मणिपेढियाए उवरिं एत्थ णं महेगं सीहासणं विउव्वइ सपरिवारं भाणियव्वं, तत्थ णं सणंकुमारे देविंदे देवराया बावत्तरीए सामाणियसाहस्सीहिं जाव चउहिं बावत्तरीहिं आयरक्खदेवसाहस्सीहि य बहूहिं सणंकुमारकप्पवासीहिं वेमाणिएहिं देवेहि य देवीहि य सद्धिं संपरिवुडे महया जाव विहरइ। एवं जहा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [५२०]

दीप अनुक्रम [६१७]

सणंकुमारे तहा जाव पाणओ अच्चुओ नवरं जो जस्स परिवारो सो तस्स भाणियव्वो, पासायउच्चत्तं जं सएसु २ कप्पेसु विमाणाणं उच्चत्तं अद्धद्धं वित्थारो जाव अच्चुयस्स नवजोयणसयाइं उड्ढं उच्चत्तेणं अद्धपंचमाइं जोयणसयाइं विक्खंभेणं, तत्थ णं गोयमा ! अच्चुए देविंदे देवराया दसहिं सामाणियसाहस्सीहिं जाव विहरइ सेसं तं चेव सेवं भंते ! २ त्ति (सूत्रं ५२०) ॥ १४–६ ॥

'जाहे णं'मित्यादि, 'जाहे'त्ति यदा 'भोगभोगाइं'ति भुज्यन्त इति भोगाः–स्पर्शादयः भोगार्हा भोगा भोगभोगाः मनोज्ञस्पर्शादय इत्यर्थः तान् 'से कहमियाणिं पकरेइ'त्ति अथ 'कथं' केन प्रकारेण तदानीं प्रकरोति ?–प्रवर्त्तत इत्यर्थः, 'नेमिपडिरूवगं'ति नेमिः–चक्रधारा तद्योगाच्चक्रमपि नेमिः–तत्प्रतिरूपकं–वृत्ततया तत्सदृशं स्थानमिति शेषः, 'तिन्नि जोयणे'त्यादौ यावत्करणादिदं दृश्यं—'सोलस य जोयणसहस्साइं दो य सयाइं सत्तावीसाहियाइं कोसतियं अट्ठावीसाहियं धणुसयं तेरस य अंगुलाइं'ति, 'उवरिं'ति उपरिष्टात् 'बहुसमरमणिज्जे'त्ति अत्यन्तसमो रम्यश्चेत्यर्थः 'जाव मणीणं फासो'त्ति भूमिभागवर्णकसूत्रावद्वाच्यो यावन्मणीनां स्पर्शवर्णक इत्यर्थः, स चायं—'से जहानामए–आलिंगपोक्खरेइ वा मुइंगपोक्खरेइ वा'इत्यादि, आलिङ्गपुष्करं मुरजमुखपुटं–मर्दलमुखपुटं तद्वत्सम इत्यर्थः, तथा 'सच्छाएहिं सप्पभेहिं समरीईहिं सउज्जोएहिं नाणाविहपंचवन्नेहिं मणीहिं उवसोहिए तंजहा–किण्हेहिं ५'-इत्यादि वर्णगन्धरसस्पर्शवर्णको मणीनां वाच्य इति । 'अब्भुग्गयभूसियवन्नओ'त्ति अभ्युद्गतोच्छ्रितादिः प्रासादवर्णको वाच्य इत्यर्थः, स च पूर्ववत्, 'उल्लोए'त्ति उल्लोकः उल्लोचो वा–उपरितलं 'पउमलयाभत्तिचित्ते'त्ति पद्मानि लताश्च

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पद्मलतास्तद्रूपाभिर्भक्तिभिः–विच्छित्तिभिश्चित्रो यः स तथा, यावत्करणादिदं दृश्यं—'पासाइए दरिसणिज्जे अभिरूवे'त्ति, 'मणिपेढिया अट्ठजोयणिया जहा वेमाणियाणं'ति मणिपीठिका वाच्या, सा चायामविष्कम्भाभ्यामष्टयोजनिका यथा वैमानिकानां सम्बधिनी न तु व्यन्तरादिसत्केव, तस्या अन्यथास्वरूपत्वात्, सा पुनरेवं—'तस्स णं बहुसमरमणिज्जस्सभूमिभागस्स बहुमज्झदेसभाए एत्थ णं महं एगं मणिपेढियं विउव्वइ, सा णं मणिपेढिया अट्ठ जोयणाइं आयामविक्खंभेणं पन्नत्ता चत्तारि जोयणाइं बाहल्लेणं सव्वरयणामई अच्छा जाव पडिरूव'त्ति, 'सयणिज्जवन्नओ'त्ति शयनीयवर्णको वाच्यः, स चैवं—'तस्स णं देवसयणिज्जस्स इमेयारूवे वन्नावासे पण्णत्ते' वर्णकव्यासः–वर्णकविस्तरः, 'तंजहा–नाणामणिमया पडिपाया सोवन्निया पाया णाणामणिमयाइं पायसीसगाइं'इत्यादिरिति, 'दोहि य अणीएहिं'ति अनीकं–सैन्यं 'नट्टाणीएण य'त्ति नाट्यं–नृत्यं तत्कारकमनीकं–जनसमूहो नाट्यानीकं, एवं गन्धर्वानीकं नवरं गन्धर्वं–गीतं, 'महये'त्यादि यावत्करणादेवं दृश्यं—'महयाहयनट्टगीयवाइयतंतीतलतालतुडियघणमुइंगपडुप्पवाइयरवेणं'ति व्याख्या चास्य प्राग्वत्, इह च यत् शक्रस्य सुधर्म्मसभालक्षणभोगस्थानसद्भावेऽपि भोगार्थं नेमिप्रतिरूपकादिविकुर्वणं तज्जिनास्शामाशातनापरिहारार्थं, सुधर्म्मसभायां हि माणवके स्तम्भे जिनास्थीनि समुद्गकेषु सन्ति, तत्प्रत्यासत्तौ च भोगानुभवने तदबहुमानः कृतः स्यात् स चाशातनेति । 'सिंहासणं विउव्वइ'त्ति सनत्कुमारदेवेन्द्रः सिंहासनं विकुरुते न तु शक्रेशानाविव देवशयनीयं, स्पर्शमात्रेण तस्य परिचारकत्वान्न शयनीयेन प्रयोजनमिति भावः, 'सपरिवारं'ति स्वकीयपरिवारयोग्यासनपरिकरितमित्यर्थः, 'नवरं जो जस्स

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [५२०]

दीप अनुक्रम [६१७]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥६४६॥

परिवारो सो तस्स भाणियव्वो त्ति तत्र सनत्कुमारस्य परिवार उक्तः, एवं माहेन्द्रस्य तु सप्ततिः सामानिकसहस्राणि चतस्रश्चाङ्गरक्षसहस्राणां सप्ततयः, ब्रह्मणः षष्टिः सामानिकसहस्राणां लान्तकस्य पञ्चाशत् शुक्रस्य चत्वारिंशत् सहस्रारस्य त्रिंशत् प्राणतस्य विंशतिः अच्युतस्य तु दश सामानिकसहस्राणि, सर्वत्रापि च सामानिकचतुर्गुणा आत्मरक्षा इति । 'पासायउच्चत्तं जं'मित्यादि तत्र सनत्कुमारमाहेन्द्रयोः षड् योजनशतानि प्रासादस्योच्चत्वं ब्रह्मलान्तकयोः सप्त शुक्रसहस्रारयोरष्टौ प्राणतेन्द्रस्याच्युतेन्द्रस्य च नवेति, इह च सनत्कुमारादयः सामानिकादिपरिवारसहितास्तत्र नेमिप्रतिरूपके गच्छन्ति, तत्समक्षमपि स्पर्शादिप्रतिचारणाया अविरुद्धत्वात्, शक्रेशानौ तु न तथा, सामानिकादिपरिवारसमक्षं कायप्रतिचारणाया लज्जनीयत्वेन विरुद्धत्वादिति ॥ चतुर्दशशते षष्ठः ॥ १४–६ ॥

षष्ठोद्देशकान्ते प्राणताच्युतेन्द्रयोर्भोगानुभूतिरुक्ता, सा च तयोः कथञ्चित्तुल्येति तुल्यताऽभिधानार्थः सप्तमोद्देशकः, तस्य चेदमादिसूत्रम्—

रायगिहे जाव एवं वयासी परिसा पडिगया, गोयमादी समणे भगवं महावीरे भगवं गोयमं आमंतेत्ता एवं वयासी–चिरसंसिट्ठोऽसि मे गोयमा ! चिरसंथुओऽसि मे गोयमा ! चिरपरिचिओऽसि मे गोयमा ! चिरजुसिओऽसि मे गोयमा ! चिराणुगओऽसि मे गोयमा ! चिराणुवत्तीसि मे गोयमा ! अणंतरं देवलोए अणंतरं माणुस्सए भवे, किं परं? मरणा कायस्स भेदा इओ चुत्ता दोवि तुल्ला एगट्ठा अविसेसमणाणत्ता भविस्सामो (सूत्रं ५२१) ॥

१४ शतके ७ उद्देशः चिरंसथु-ओऽसिइति श्रीवीरकृत आश्वासः सू ५२१

॥६४६॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र चतुर्दशमे शतके षष्ठं-उद्देशक: परिसमाप्त:

अथ चतुर्दशमे शतके सप्तम-उद्देशक: आरब्ध:

गौतमस्वामिनं श्री-वीर-प्रभो: आश्वासनं

'रायगिहे'इत्यादि, तत्र किल भगवान् श्रीमन्महावीरः केवलज्ञानाप्राप्त्या सखेदस्य गौतमस्वामिनः समाश्वासनायात्मनस्तस्य च भाविनीं तुल्यतां प्रतिपादयितुमिदमाह—'गोयमे'त्यादि, 'चिरसंसिट्ठोऽसि'त्ति चिरं बहुकालं यावत् चिरे वा-अतीते प्रभूते काले संश्लिष्टः-स्नेहात्संबद्धश्चिरसंश्लिष्टः 'असि' भवसि 'मे' मया मम वा त्वं हे गौतम !, 'चिरसंथुओ'त्ति चिरं–बहुकालम् अतीतं यावत् संस्तुतः–स्नेहात्प्रशंसितश्चिरसंस्तुतः, एवं 'चिरपरिचिए'त्ति पुनः पुनर्दर्शनतः परिचितश्चिरपरिचितः, 'चिरजुसिए'त्ति चिरसेवितश्चिरप्रीतो वा 'जुषी प्रीतिसेवनयोः' इति वचनात्, 'चिराणुगए'त्ति चिरमनुगतो ममानुगतिकारित्वात्, 'चिराणुवत्तीसि'त्ति चिरमनुवृत्तिः–अनुकूलवर्त्तिता यस्यासौ चिरानुवृत्तिः, इदं च चिरसंश्लिष्टत्वादिकं क्वासीत् ? इत्याह—'अणंतरं देवलोए'त्ति अनन्तरं–निर्व्यवधानं यथा भवत्येवं देवलोके अनन्तरे देवभवे इत्यर्थः ततोऽपि–अनन्तरं मनुष्यभवे, जात्यर्थत्वादेकवचनस्य देवभवेषु मनुष्यभवेषु चेति द्रष्टव्यं, तत्र किल त्रिपृष्ठभवे भगवतो गौतमः सारथित्वेन चिरसंश्लिष्टत्वादिधर्म्मयुक्त आसीत्, एवमन्येष्वपि भवेषु संभवतीति, एवं च मयि तव गाढत्वेन स्नेहस्य न केवलज्ञानमुत्पद्यते भविष्यति च तवापि स्नेहक्षये तदित्यधृतिं मा कृथा इति गम्यते, 'किं परं?, मरण'त्ति किं बहुना 'परं'ति परतो 'मरणात्' मृत्योः, किमुक्तं भवति ?–कायस्य भेदाद्धेतोः 'इओ चुय'त्ति 'इतः' प्रत्यक्षान्मनुष्यभवाच्च्युतौ 'दोवि'त्ति द्वावप्यावां तुल्यौ भविष्याव इति योगः, तत्र 'तुल्यौ' समानजीवद्रव्यौ 'एकट्ठ'त्ति 'एकार्थौ' एकप्रयोजनावनन्तसुखप्रयोजनत्वात् एकस्थौ वा–एकक्षेत्राश्रितौ सिद्धिक्षेत्रापेक्षयेति 'अविसेसमणाणत्त'त्ति 'अविशेषं' निर्विशेषं यथा भवत्येवम् 'अनानात्वौ' तुल्यज्ञानदर्शनादिपर्यायाविति, इदं च किल यदा भगवता गौतमेन चैत्यवन्दनायाष्टापदं गत्वा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गौतमस्वामिनं श्री-वीर-प्रभो: आश्वासनं

प्रत सूत्रांक [५२१]

दीप अनुक्रम [६१८]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत्यागच्छता पञ्चदशतापसशतानि प्रव्राजितानि समुत्पन्नकेवलानि च श्रीमन्महावीरसमवसरणमानीतानि तीर्थप्रणामकर-णसमनन्तरं च केवलिपर्षदि समुपविष्टानि, गौतमेन चाविदिततत्केवलोत्पादव्यतिकरेणाभिहितानि यथा–आगच्छत भोः साधवः ! भगवन्तं वन्दध्वमिति, जिननायकेन च गौतमोऽभिहितो यथा–गौतम ! मा केवलिनामाशातनां कार्षीः, ततो गौतमो मिथ्यादुष्कृतमदात्, तथा यानहं प्रव्राजयामि तेषां केवलमुत्पद्यते न पुनर्मम ततः किं तन्मे नोत्पत्स्यत एवेति विकल्पादधृतिं चकार, ततो जगद्गुरुणा गदितोऽसौ मनःसमाधानाय, यथा गौतम ! चत्वारः कटा भवन्ति–सुम्बकटो विदलकटश्चर्मकटः कम्बलकटश्चेति, एवं शिष्या अपि गुरोः प्रतिबन्धसाधर्म्येण सुम्बकटसमादयश्चत्वार एव भवन्ति, तत्र त्वं मयि कम्बलकटसमान इत्येतस्यार्थस्य समर्थनाय भगवता तदाऽभिहितमिति ॥ एवं भाविन्यामात्मतुल्यतायां भगव-ताऽभिहितायां 'अतिप्रियमश्रद्धेय'मितिकृत्वा यद्यन्योऽप्येनमर्थं जानाति तदा साधुर्भवतीत्यनेनाभिप्रायेण गौतम एवाह—

जहा णं भंते ! वयं एयमट्ठं जाणामो पासामो तहा णं अणुत्तरोववाइयावि देवा एयमट्ठं जा० पा० ?, हंता गोयमा ! जहा णं वयं एयमट्ठं जाणामो पासामो तहा अणुत्तरोववाइयावि देवा एयमट्ठं जा० पा०, से केण-ट्ठेणं जाव पासंति ?, गोयमा ! अणुत्तरोववाइया णं अणंताओ मणोदव्ववग्गणाओ लद्धाओ पत्ताओ अभि-समन्नागयाओ भवंति, से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ जाव पासंति (सूत्रं ५२२) ॥

'जहा ण मित्यादि, 'एयमट्ठं'ति 'एतमर्थम्' आवयोर्भावितुल्यतालक्षणं 'वयं जाणामो'त्ति यूयं च वयं चेत्येकशेषा-द्वयं तत्र यूयं केवलज्ञानेन जानीथ वयं तु भवदुपदेशात् । तथाऽनुत्तरोपपातिका अपि देवा एनमर्थं जानन्तीति ? प्रश्नः,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गौतमस्वामिनं श्री-वीर-प्रभोः आश्वासनं

अत्रोत्तरं–'हंता गोयमा !'इत्यादि, 'मणोदव्ववग्गणाओ लद्धाओ'त्ति मनोद्रव्यवर्गणा लब्धास्तद्विषयावधिज्ञानलब्धिमात्रापेक्षया 'पत्ताओ'त्ति प्राप्तास्तद्द्रव्यपरिच्छेदतः 'अभिसमन्नागयाओ'त्ति अभिसमन्वागताः तदुणपर्यायपरिच्छेदतः, अयमत्र गर्भार्थः–अनुत्तरोपपातिका देवा विशिष्टावधिना मनोद्रव्यवर्गणा जानन्ति पश्यन्ति च, तासां चावयोरयोग्यवस्थायामदर्शनेन निर्वाणगमनं निश्चिन्वन्ति, ततश्चावयोर्भावितुल्यतालक्षणमर्थं जानन्ति पश्यन्ति चेति व्यपदिश्यत इति ॥ तुल्यताप्रक्रमादेवेदमाह—

कइविहे णं भंते ! तुल्लए पण्णत्ते ?, गोयमा ! छविहे तुल्लए पण्णत्ते, तंजहा–दव्वतुल्लए खेत्ततुल्लए कालतुल्लए भवतुल्लए भावतुल्लए संठाणतुल्लए, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ दव्वतुल्लए ?, गोयमा ! परमाणुपोग्गले परमाणुपोग्गलस्स दव्वओ तुल्ले परमाणुपोग्गले परमाणुपोग्गलवइरित्तस्स दव्वओ णो तुल्ले, दुपएसिए खंधे दुपएसियस्स खंधस्स दव्वओ तुल्ले दुपएसिए खंधे दुपएसियवइरित्तस्स खंधस्स दव्वओ णो तुल्ले एवं जाव दसपएसिए, तुल्लसंखेज्जपएसिए खंधे तुल्लसंखेज्जपएसियस्स खंधस्स दव्वओ तुल्ले तुल्लसंखेज्जपएसिए खंधे तुल्लसंखेज्जपएसियवइरित्तस्स खंधस्स दव्वओ णो तुल्ले, एवं तुल्लअसंखेज्जपएसिएवि एवं तुल्लअणंतपएसिएवि, से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ दव्वओ तुल्लए । से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ खेत्ततुल्लए ?, गोयमा ! एगपएसोगाढे पोग्गले एगपएसोगाढस्स पोग्गलस्स खेत्तओ तुल्ले एगपएसोगाढे पोग्गले एगपएसोगाढवइरित्तस्स पोग्गलस्स खेत्तओ णो तुल्ले, एवं जाव दसपएसोगाढे, तुल्लसंखेज्जपएसोगाढे० तुल्लसंखेज्ज० एवं तुल्लअसंखेज्जपएसोगाढेवि, से तेणट्ठेणं जाव खेत्ततुल्लए।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥६४८॥

से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुचइ कालतुल्लए २ ?, गोयमा ! एगसमयठितीए पोग्गले एग० २ कालओ तुल्ले एगसमयठितीए पोग्गले एगसमयठितीवइरित्तस्स पोग्गलस्स कालओ णो तुल्ले एवं जाव दससमयट्ठितीए तुल्लसंखेज्जसमयठितीए एवं चेव एवं तुल्लअसंखेज्जसमयट्ठितीएवि, से तेणट्ठेणं जाव कालतुल्लए । से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुचइ भवतुल्लए ?, गोयमा ! नेरइए नेरइयस्स भवट्ठयाए तुल्ले नेरइयवइरित्तस्स भवट्ठयाए नो तुल्ले तिरिक्खजोणिए एवं चेव एवं मणुस्से एवं देवेवि, से तेणट्ठेणं जाव भवतुल्लए । से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुचइ भावतुल्लए भावतुल्लए ?, गोयमा ! एगगुणकालए पोग्गले एगगुणकालस्स पोग्गलस्स भावओ तुल्ले एगगुणकालए पोग्गले एगगुणकालगवइरित्तस्स पोग्गलस्स भावओ णो तुल्ले एवं जाव दसगुणकालए एवं तुल्लसंखेज्जगुणकालए पोग्गले एवं तुल्लअसंखेज्जगुणकालएवि एवं तुल्लअणंतगुणकालएवि, जहा कालए एवं नीलए लोहियए हालिद्दे सुक्किल्लए, एवं सुब्भिगंधे एवं दुब्भिगंधे, एवं तित्ते जाव महुरे, एवं कक्खडे जाव लुक्खे, उदइए भावे उदइयस्स भावस्स भावओ तुल्ले उदइए भावे उदइयभाववइरित्तस्स भावस्स भावओ नो तुल्ले, एवं उवसमिए० खइए० खओवसमिए० पारिणामिए० संनिवाइए भावे संनिवाइयस्स भावस्स, से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुचइ भावतुल्लए २ । से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुचइ संठाणतुल्लए २ ?, गोयमा ! परिमंडले संठाणे परिमंडलस्स संठाणस्स संठाणओ तुल्ले परिमंडलसंठाणवइरित्तस्स संठाणओ नो तुल्ले एवं वट्टे तंसे

१४ शतके ७ उद्देशः द्रव्यादि तुल्यता सू ५२३

॥६४८॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

चउरंसे आयए, समचउरंससंठाणे समचउरंसस्स संठाणस्स संठाणओ तुल्ले समचउरंसे संठाणे समचउरंससंठाणवइरित्तस्स संठाणस्स संठाणओ नो तुल्ले एवं परिमंडले एवं जाव हुंडे, से तेण० जाव संठाणतुल्लए सं० २ (सूत्रं ५२३) ॥

'कइविहे' इत्यादि, तुल्यं-समं तदेव तुल्यकं 'दव्वतुल्लए' त्ति द्रव्यतः-एकाणुकाद्यपेक्षया तुल्यकं द्रव्यतुल्यकम्, अथवा द्रव्यं च तत्तुल्यकं च द्रव्यान्तरेणेति द्रव्यतुल्यकं विशेषणव्यत्ययात्, 'खेत्ततुल्लए' त्ति क्षेत्रतः–एकप्रदेशावगाढत्वादिना तुल्यकं क्षेत्रतुल्यकम्, एवं शेषाण्यपि, नवरं भवो–नारकादिः भावो–वर्णादिरौदयिकादिर्वा संस्थानं–परिमण्डलादिः, इह च तुल्यव्यतिरिक्तमतुल्यं भवतीति तदपीह व्याख्यास्यते, 'तुल्लसंखेज्जपएसिए' त्ति तुल्या-समानाः सङ्ख्येयाः प्रदेशा यत्र स तथा, तुल्यग्रहणमिह सङ्ख्यातत्वस्य सङ्ख्यातभेदत्वान्न सङ्ख्यातमात्रेण तुल्यताऽस्य स्याद् अपि तु समानसङ्ख्यत्वेनेत्यस्यार्थस्य प्रतिपादनार्थम्, एवमन्यत्रापीति, यच्चेहानन्तक्षेत्रप्रदेशावगाढत्वमनन्तसमयस्थायित्वं च नोक्तं तदवगाहप्रदेशानां स्थितिसमयानां च पुद्गलानाश्रित्यानन्तानामभावादिति । 'भवट्ठयाए' त्ति भव एवार्थो भवार्थस्तद्भावस्तत्ता तया भवार्थतया, 'उदइए भावे' त्ति उदयः–कर्म्मणां विपाकः स एवौदयिकः–क्रियामात्रं अथवा उदयेन निष्पन्नः औदयिको भावो–नारकत्वादिपर्यायविशेषः औदयिकस्य भावस्य नारकत्वादेर्भावतो–भावसामान्यमाश्रित्य तुल्यः–समः, 'एवं उवसमिए' त्ति औपशमिकोऽप्येवं वाच्यः, तथाहि–'उवसमिए भावे उवसमियस्स भावस्स भावओ तुल्ले उवसमिए भावे उवसमियवइरित्तस्स भावस्स भावओ नो तुल्ले' त्ति, एवं शेषेष्वपि वाच्यं, तत्रोपशमः–उदीर्णस्य कर्म्मणः क्षयोऽनुदीर्णस्य विष्कम्भितोदयत्वं स एवौपशमिकः–क्रियामात्रं उपशमेन वा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [५२३]

दीप अनुक्रम [६२०]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥६४९॥

निर्वृत्तः औपशमिकः–सम्यग्दर्शनादि, 'खइए'त्ति क्षयः–कर्माभावः स एव क्षायिकः क्षयेण वा निर्वृत्तः क्षायिकः–केवल-ज्ञानादिः, 'खओवसमिए'त्ति क्षयेण–उदयप्राप्तकर्मणो विनाशेन सहोपशमो–विष्कम्भितोदयत्वं क्षयोपशमः स एव क्षायोपशमिकः–क्रियामात्रमेव क्षयोपशमेन वा निर्वृत्तः क्षायोपशमिकः–मतिज्ञानादिपर्यायविशेषः, नन्वौपशमिकस्य क्षायो-पशमिकस्य च कः प्रतिविशेषः, उभयत्राप्युदीर्णस्य क्षयस्यानुदीर्णस्य चोपशमस्य भावात् ?, उच्यते, क्षायोपशमिके विपा-कवेदनमेव नास्ति प्रदेशवेदनं पुनरस्त्येव, औपशमिके तु प्रदेशवेदनमपि नास्तीति, 'पारिणामिए'त्ति परिणमनं परिणामः स एव पारिणामिकः, 'सन्निवाइए'त्ति सन्निपातः–औदयिकादिभावानां द्व्यादिसंयोगस्तेन निर्वृत्तः सान्निपातिकः । 'संठा-णतुल्लए'त्ति संस्थानं–आकृतिविशेषः, तच्च द्वेधा–जीवाजीवभेदात्, तत्राजीवसंस्थानं पञ्चधा, तत्र 'परिमंडले संठाणे'त्ति परिमण्डलसंस्थानं बहिस्ताद्वृत्ताकारं मध्ये शुषिरं यथा वलयस्य, तच्च द्वेधा–घनप्रतरभेदात्, 'वट्टे'त्ति वृत्तं–परिमण्डलमे-वान्तःशुषिररहितं यथा कुलालचक्रस्य, इदमपि द्वेधा–घनप्रतरभेदात्, पुनरेकैकं द्विधा–समसङ्ख्यविषमसङ्ख्यप्रदेशभेदात्, एवं त्र्यस्रं चतुरस्रं च, नवरं 'त्र्यस्रं' त्रिकोणं शृङ्गाटकस्येव चतुरस्रं तु चतुष्कोणं यथा कुम्भिकायाः, आयतदीर्घं यथा दण्डस्य, तच्च त्रेधा–श्रेण्यायतप्रतरायतघनायतभेदात्, पुनरेकैकं द्विधा–समसङ्ख्यविषमसङ्ख्यप्रदेशभेदात्, इदं च पञ्चवि-धमपि विश्रसाप्रयोगाभ्यां भवति, जीवसंस्थानं तु संस्थानाभिधाननामकर्म्मोत्तरप्रकृत्युदयसम्पाद्यो जीवानामाकारः, तच्च षोढा, तत्राद्यं 'समचउरंसे'त्ति तुल्यारोहपरिणाहं सम्पूर्णाङ्गावयवं स्वाङ्गुलाष्टशतोच्छ्रयं समचतुरस्रं, तुल्यारोहपरिणाहत्वेन समत्वात् पूर्णावयवत्वेन च चतुरस्रत्वात्तस्य, चतुरस्रं सङ्गतमिति पर्यायौ, 'एवं परिमंडलेवि'त्ति यथा समचतुरस्रमुक्तं

१४ शतके ७ उद्देशः द्रव्यादि तुल्यता सू ५२३

॥६४९॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तथा न्यग्रोधपरिमण्डलमपीत्यर्थः, न्यग्रोधो–वटवृक्षस्तद्वत्परिमण्डलं नाभीत उपरि चतुरस्रलक्षणयुक्तमधश्च तदनुरूपं न भवति–तस्मात्प्रमाणाद्धीनतरमिति, 'एवं जाव हुंडे'त्ति इह यावत्करणात् 'साई खुज्जे वामणे'त्ति दृश्यं तत्र 'साइ'त्ति सादि नाभीतोऽधश्चतुरस्रलक्षणयुक्तमुपरि च तदनुरूपं न भवति, 'खुज्जो'त्ति कुब्जं ग्रीवादौ हस्तपादयोश्चतुरश्रलक्षणयुक्तं सङ्क्षिप्तविकृतमध्यं, 'वामणे'त्ति वामनं लक्षणयुक्तमध्यं ग्रीवादौ हस्तपादयोरप्यादिलक्षणन्यूनं, 'हुंडे'त्ति हुण्डं प्रायः सर्वावयवेष्वादिलक्षणविसंवादोपेतमिति ॥ अनन्तरं संस्थानवक्तव्यतोक्ता, अथ संस्थानवतोऽनगारस्य वक्तव्यताविशेषमभिधातुकाम आह—

भत्तपच्चक्खायए णं भंते ! अणगारे मुच्छिए जाव अज्झोववन्ने आहारमाहारेति अहे णं वीससाए कालं करेति तओ पच्छा अमुच्छिए अगिद्धे जाव अणज्झोववन्ने आहारमाहारेति ?, हंता गोयमा ! भत्तपच्चक्खायए णं अणगारे तं चेव, से केणट्ठेणं भन्ते ! एवं वु० भत्तपच्चक्खायए णं तं चेव ?, गोयमा ! भत्तपच्चक्खायए णं अणगारे [मुच्छिए] मुच्छिए जाव अज्झोववन्ने भवइ अहे णं वीससाए कालं करेइ तओ पच्छा अमुच्छिए जाव आहारे भवइ से तेणट्ठेणं गोयमा ! जाव आहारमाहारेति (सूत्रं ५२४) ॥

'भत्ते'त्यादि, तत्र 'भत्तपच्चक्खायए णं'ति अनशनी 'मूर्च्छितः' सञ्जातमूर्च्छः–जाताहारसंरक्षणानुबन्धः तद्दोषविषये वा मूढः 'मूर्च्छा मोहसमुच्छ्राययोः' इति वचनात्, यावत्करणादिदं दृश्यं—'गढिए' ग्रथित आहारविषयस्नेहतन्तुभिः संदर्भितः 'ग्रन्थ श्रन्थ संदर्भे' इति वचनात् 'गिद्धे' गृद्धः प्राप्ताहारे आसक्तोऽप्राप्तत्वेन वा तदाकाङ्क्षावान् 'गृधु अभिकाङ्क्षायाम्'

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

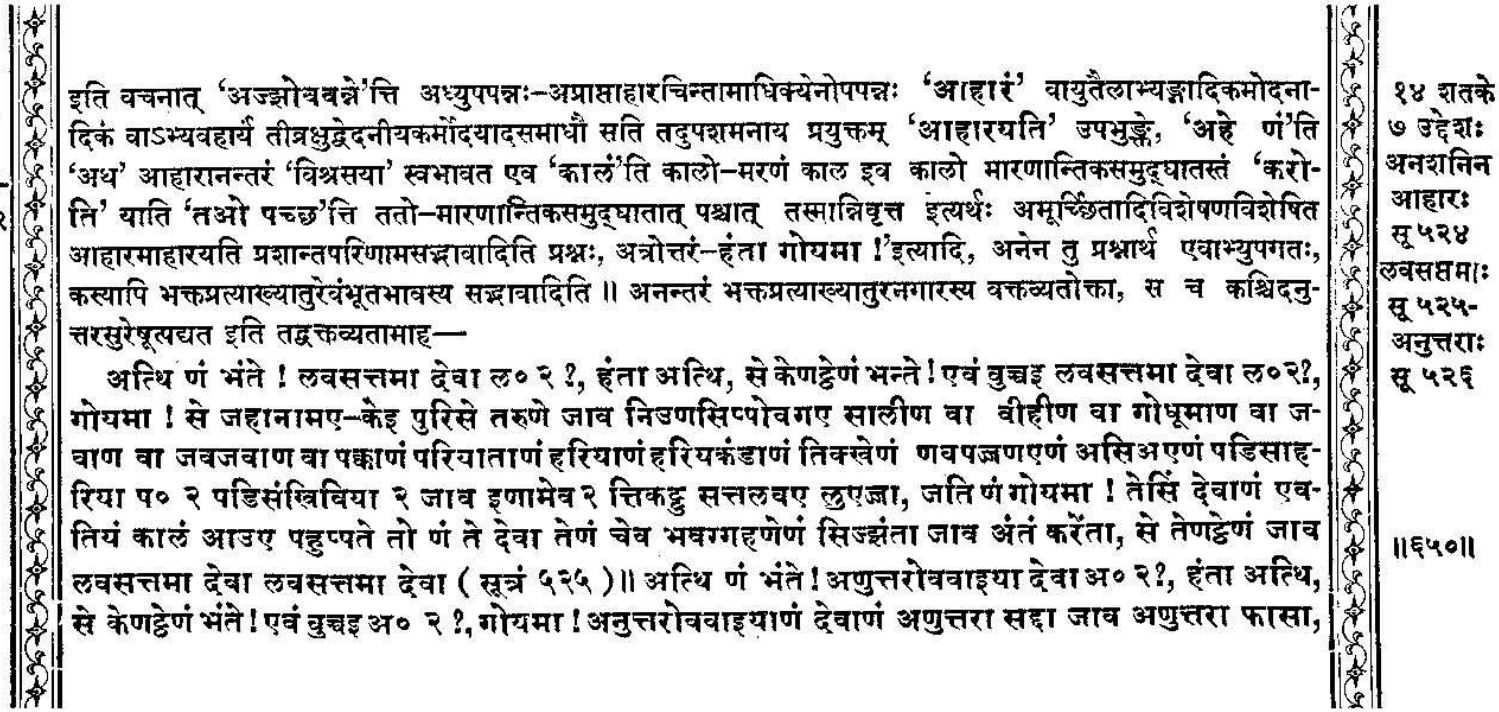

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥६५०॥

इति वचनात् 'अज्झोववन्ने'त्ति अध्युपपन्नः–अप्राप्ताहारचिन्तामाधिक्येनोपपन्नः 'आहारं' वायुतैलाभ्यङ्गादिकमोदनादिकं वाऽभ्यवहार्यं तीव्रक्षुद्वेदनीयकर्मोदयादसमाधौ सति तदुपशमनाय प्रयुक्तम् 'आहारयति' उपभुङ्क्ते, 'अहे णं'ति 'अथ' आहारानन्तरं 'विश्रसया' स्वभावत एव 'कालं'ति कालो–मरणं काल इव कालो मारणान्तिकसमुद्घातस्तं 'करोति' याति 'तओ पच्छ'त्ति ततो–मारणान्तिकसमुद्घातात् पश्चात् तस्मान्निवृत्त इत्यर्थः अमूर्च्छितादिविशेषणविशेषित आहारमाहारयति प्रशान्तपरिणामसद्भावादिति प्रश्नः, अत्रोत्तरं–हंता गोयमा !'इत्यादि, अनेन तु प्रश्नार्थ एवाभ्युपगतः, कस्यापि भक्तप्रत्याख्यातुरेवंभूतभावस्य सद्भावादिति ॥ अनन्तरं भक्तप्रत्याख्यातुरनगारस्य वक्तव्यतोक्ता, स च कश्चिदनुत्तरसुरेषूत्पद्यत इति तद्वक्तव्यतामाह—

अत्थि णं भंते ! लवसत्तमा देवा ल० २ ?, हंता अत्थि, से केणट्ठेणं भन्ते ! एवं वुच्चइ लवसत्तमा देवा ल०२?, गोयमा ! से जहानामए–केइ पुरिसे तरुणे जाव निउणसिप्पोवगए सालीण वा वीहीण वा गोधूमाण वा जवाण वा जवजवाण वा पक्काणं परियातागं हरियाणं हरियकंडाणं तिक्खेणं णवपज्जणएणं असिअएणं पडिसाहरिया प० २ पडिसंखिविया २ जाव इणामेव २ त्तिकट्टु सत्तलवए लुएज्जा, जतिणं गोयमा ! तेसिं देवाणं एवतियं कालं आउए पहुप्पते तो णं ते देवा तेणं चेव भवग्गहणेणं सिज्झंता जाव अंतं करेंता, से तेणट्ठेणं जाव लवसत्तमा देवा लवसत्तमा देवा (सूत्रं ५२५)॥ अत्थि णं भंते ! अणुत्तरोववाइया देवा अ० २?, हंता अत्थि, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ अ० २ ?, गोयमा ! अनुत्तरोववाइयाणं देवाणं अणुत्तरा सद्दा जाव अणुत्तरा फासा,

१४ शतके ७ उद्देशः अनशनिन आहारः सू ५२४ लवसप्तमाः सू ५२५-अनुत्तराः सू ५२६

॥६५०॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुचइ जाव अणुत्तरोववाइया देवा अ० २। अणुत्तरोववाइयाणं भंते ! देवाणं केवतिएणं कम्मावसेसेणं अणुत्तरोववाइयदेवत्ताए उववन्ना ?, गोयमा ! जावतियं छट्ठभत्तिए समणे निग्गंथे कम्मं निज्जरेति एवतिएणं कम्मावसेसेणं अणुत्तरोववाइया देवा देवत्ताए उववन्ना । सेवं भंते ! २त्ति (सूत्रं ५२६) ॥ १४–७ ॥

'अत्थि ण'मित्यादि, लवाः–शाल्यादिकवलिकालवनक्रियाप्रमिताः कालविभागाः सप्त–सप्तसङ्ख्या मानं–प्रमाणं यस्य कालस्यासौ लवसप्तमस्तं लवसप्तमं कालं यावदायुष्यप्रभवति सति ये शुभाध्यवसायवृत्तयः सन्तः सिद्धिं न गता अपि तु देवेषूत्पन्नास्ते लवसप्तमाः, ते च सर्वार्थसिद्धाभिधानानुत्तरसुरविमाननिवासिनः, 'से जहा नामए'त्ति 'सः' कश्चित् 'यथा-नामकः' अनिर्दिष्टनामा पुरुषः 'तरुणे'इत्यादेर्व्याख्यानं प्रागिव 'पक्काणं'ति पक्कानां 'परियायाणं'ति 'पर्यवगतानां' लव-नीयावस्थां प्राप्तानां 'हरियाणं'ति पिङ्गीभूतानां, ते च पत्रापेक्षयाऽपि भवन्तीत्याह—'हरियकंडाणं'ति पिङ्गीभूतजा-लानां 'नवपज्जणएणं'ति नवं–प्रत्यग्रं 'पज्जणयं'ति प्रतापितस्यायोघनकुट्टनेन तीक्ष्णीकृतस्य पायनं–जलनिबोलनं यस्य तन्न-वपायनं तेन 'असियएणं'ति दात्रेण 'पडिसाहरिय'त्ति प्रतिसंहृत्य विकीर्णनालान् बाहुना संगृह्य 'पडिसंखिविय'त्ति मुष्टिग्रहणेन सङ्क्षिप्य 'जाव इणामेवे'त्यादि प्रज्ञापकस्य लवनक्रियाशीघ्रत्वोपदर्शनपरचप्पुटिकादिहस्तव्यापारसूचकं वचनं 'सत्तलवे'त्ति लूयन्त इति लवाः शाल्यादिनालमुष्टयस्तान् लवान् 'लूएज्ज'त्ति लुनीयात्, तत्र च सप्तलवलवने यावान्-कालो भवतीति वाक्यशेषो दृश्यः, ततः किमित्याह–'जइ ण'मित्यादि, 'तेसिं देवाणं'ति द्रव्यदेवत्वे साध्ववस्थायामि त्यर्थः 'तेणं चेव'त्ति यस्य भवग्रहणस्य सम्बन्धि आयुर्न पूर्णं तेनैव, मनुष्यभवग्रहणेनेत्यर्थः ॥ लवसप्तमा अनुत्तरोपपा-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [५२५--५२६]

दीप अनुक्रम [६२२--६२३]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥६५१॥

तिका इत्यनुत्तरोपपातिकदेवप्ररूपणाय सूत्रद्वयमभिधातुमाह—'अत्थि ण'मित्यादि, 'अणुत्तरोववाइय'त्ति अनुत्तरः—सर्वप्रधानोऽनुत्तरशब्दादिविषययोगात् उपपातो—जन्म अनुत्तरोपपातः सोऽस्ति येषां तेऽनुत्तरोपपातिकाः, 'जावइयं छट्ठ-भत्तिए'इत्यादि किल षष्ठभक्तिकः सुसाधुर्यावत् कर्म क्षपयति एतावता कर्म्मावशेषेण—अनिर्जीर्णेनानुत्तरोपपातिका देवा उत्पन्ना इति ॥ चतुर्दशशते सप्तमः ॥ १४—७ ॥

सप्तमे तुल्यतारूपो वस्तुनो धर्मोऽभिहितः, अष्टमे त्वन्तररूपः स एवाभिधीयते इत्येवंसम्बधस्यास्येदमादिसूत्रम्—

इमीसे णं भंते ! रयणप्पभाए पुढवीए सक्करप्पभाए य पुढवीए केवतियं अबाहाए अंतरे पण्णत्ते ?, गोयमा ! असंखेज्जाइं जोयणसहस्साइं अबाहाए अंतरे पण्णत्ते, सक्करप्पभाए णं भंते ! पुढवीए वालुयप्प-भाए य पुढवीए केवतियं एवं चेव एवं जाव तमाए अहेसत्तमाए य, अहेसत्तमाए णं भंते ! पुढवीए अलो-गस्स य केवतियं आबाहाए अंतरे पण्णत्ते ?, गोयमा ! असंखेज्जाइं जोयणसहस्साइं आबाहाए अंतरे पण्णत्ते । इमीसे णं भंते ! रयणप्पभाए पुढवीए जोतिसस्स य केवतियं पुच्छा, गोयमा ! सत्तनउए जोयणसए आबाहाए अंतरे पण्णत्ते, जोतिसस्स णं भंते ! सोहम्मीसाणाण य कप्पाणं केवतियं पुच्छा, गोयमा ! असंखेज्जाइं जोयण जाव अंतरे पण्णत्ते, सोहम्मीसाणाणं भंते ! सणंकुमारमाहिंदाण य केवतियं एवं चेव, सणंकुमारमाहिंदाणं भंते ! बंभलोगस्स कप्पस्स य केवतियं एवं चेव, बंभलोगस्स णं भंते ! लंतगस्स य

१४ शतके ८ उद्देशः पृथ्व्याद्यन्त रं सू ५२७

॥६५१॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र चतुर्दशमे शतके सप्तम-उद्देशक: परिसमाप्त:

अथ चतुर्दशमे शतके अष्टम-उद्देशक: आरब्ध:

कप्पस्स केवतियं एवं चेव, लंतयस्स णं भंते ! महासुक्कस्स य कप्पस्स केवतियं एवं चेव, एवं महासुक्कस्स कप्पस्स सहस्सारस्स य, एवं सहस्सारस्स आणयपाणयकप्पाणं, एवं आणयपाणयाण य कप्पाणं आरणच्चुयाण य कप्पाणं, एवं आरणच्चुयाणं गेविज्जविमाणाण य, एवं गेविज्जविमाणाणं अणुत्तरविमाणाण य। अणुत्तरविमाणाणं भंते ! ईसिपब्भाराए य पुढवीए केवतिए पुच्छा, गोयमा ! दुवालसजोयणे अबाहाए अंतरे पण्णत्ते, ईसिपब्भाराए णं भंते ! पुढवीए अलोगस्स य केवतिए अबाहाए पुच्छा, गोयमा ! देसूणं जोयणं अबाहाए अंतरे पण्णत्ते (सूत्रं ५२७) ॥

'इमीसे ण'मित्यादि, 'अबाहाए अंतरे'त्ति बाधा–परस्परसंश्लेषतः पीडनं न बाधा अबाधा तया अबाधया यदन्तरं व्यवधानमित्यर्थः, इहान्तरशब्दो मध्यविशेषादिष्वर्थेषु वर्त्तमानो दृष्टस्ततस्तद्व्यवच्छेदेन व्यवधानार्थपरिग्रहार्थमबाधाग्रहणं, 'असंखेज्जाइं जोयणसहस्साइं'ति इह योजनं प्रायः प्रमाणाङ्गुलनिष्पन्नं ग्राह्यं, "नगपुढविविमाणाइं मिणसु पमाणंगुलेणं तु।" [नगपृथिवीविमानानि प्रमाणाङ्गुलेन मिनु ।] इत्यत्र नगादिग्रहणस्योपलक्षणत्वादन्यथाऽऽदित्यप्रकाशादेरपि प्रमाणयोजनाप्रमेयता स्यात्, तथा चाधोलोकग्रामेषु तत्प्रकाशाप्राप्तिः प्राप्तोत्यात्माङ्गुलस्यानियतत्वेनाव्यवहाराङ्गतया रविप्रकाशस्योच्छ्रययोजनप्रमेयत्वात्, तस्य चातिलघुत्वेन प्रमाणयोजनप्रमितक्षेत्राणामव्याप्तिरिति, यच्चेहेषत्प्राग्भारायाः पृथिव्या लोकान्तस्य चान्तरं तदुच्छ्रयाङ्गुलनिष्पन्नयोजनप्रमेयमित्यनुमीयते, यतस्तस्य योजनस्योपरितनक्रोशस्य षड्भागे सिद्धावगाहना धनुस्त्रिभागयुक्तत्रयस्त्रिंशदधिकधनुःशतत्रयमानाभिहिता, सा चोच्छ्रययोजनाश्रयणत एव युज्यत

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

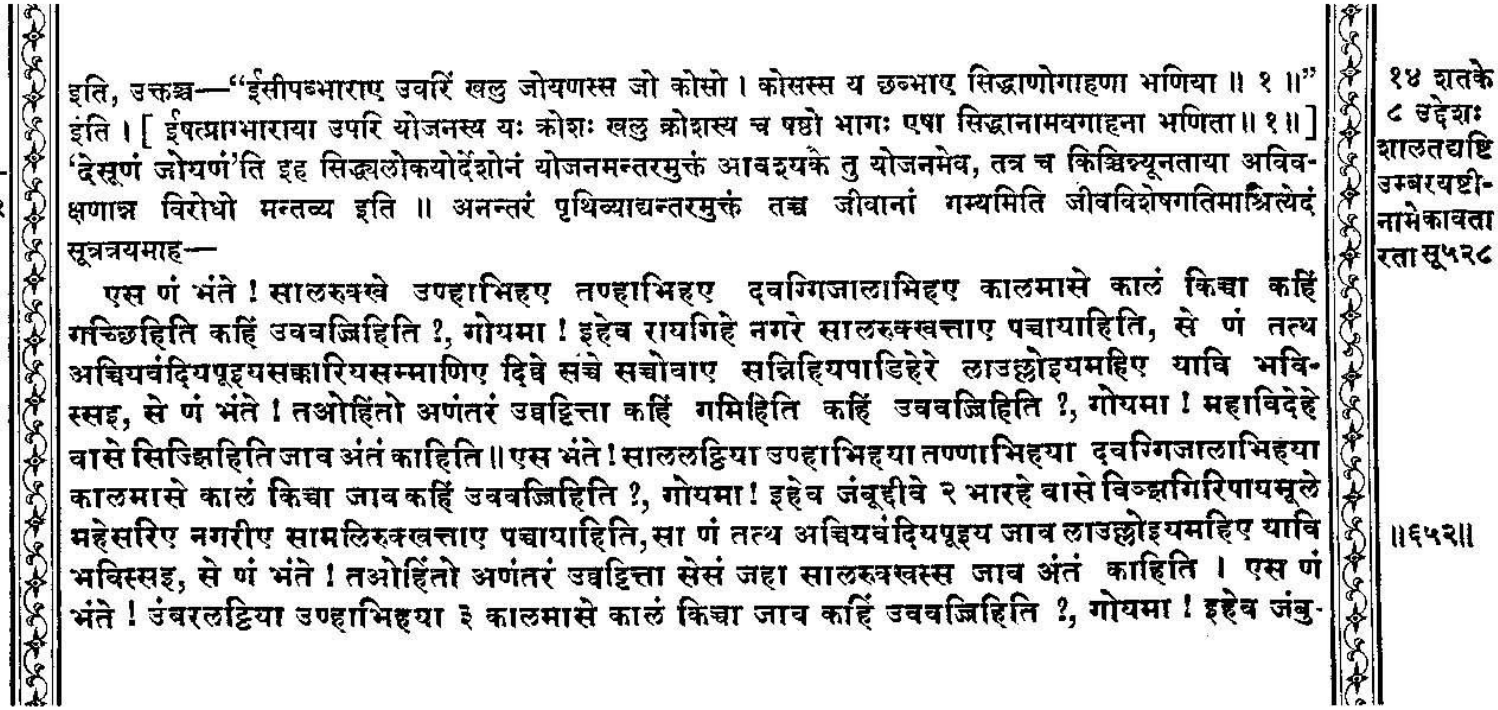

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥६५२॥

इति, उक्तञ्च—"ईसीपब्भाराए उवरिं खलु जोयणस्स जो कोसो । कोसस्स य छब्भाए सिद्धाणोगाहणा भणिया ॥ १ ॥" इति । [ईषत्प्राग्भाराया उपरि योजनस्य यः क्रोशः खलु क्रोशस्य च षष्ठो भागः एषा सिद्धानामवगाहना भणिता ॥ १ ॥] 'देसूणं जोयणं'ति इह सिद्धयलोकयोर्देशोनं योजनमन्तरमुक्तं आवश्यके तु योजनमेव, तत्र च किञ्चिन्यूनताया अविवक्षणान्न विरोधो मन्तव्य इति ॥ अनन्तरं पृथिव्याद्यन्तरमुक्तं तच्च जीवानां गम्यमिति जीवविशेषगतिमाश्रित्येदं सूत्रत्रयमाह—

एस णं भंते ! सालरुक्खे उण्हाभिहए तण्हाभिहए दवग्गिजालाभिहए कालमासे कालं किच्चा कहिं गच्छिहिति कहिं उववज्जिहिति ?, गोयमा ! इहेव रायगिहे नगरे सालरुक्खत्ताए पच्चायाहिति, से णं तत्थ अच्चियवंदियपूइयसक्कारियसम्माणिए दिव्वे सच्चे सच्चोवाए सन्निहियपाडिहेरे लाउल्लोइयमहिए यावि भविस्सइ, से णं भंते ! तओहिंतो अणंतरं उव्वट्टित्ता कहिं गमिहिति कहिं उववज्जिहिति ?, गोयमा ! महाविदेहे वासे सिज्झिहिति जाव अंतं काहिति ॥ एस भंते ! सालयट्ठिया उण्हाभिहया तण्हाभिहया दवग्गिजालाभिहया कालमासे कालं किच्चा जाव कहिं उववज्जिहिति ?, गोयमा ! इहेव जंबूदीवे २ भारहे वासे विंझगिरिपायमूले महेसरिए नगरीए सामलिरुक्खत्ताए पच्चायाहिति, सा णं तत्थ अच्चियवंदियपूइय जाव लाउल्लोइयमहिए यावि भविस्सइ, से णं भंते ! तओहिंतो अणंतरं उव्वट्टित्ता सेसं जहा सालरुक्खस्स जाव अंतं काहिति । एस णं भंते ! उंबरलट्ठिया उण्हाभिहया ३ कालमासे कालं किच्चा जाव कहिं उववज्जिहिति ?, गोयमा ! इहेव जंबु-

१४ शतके ८ उद्देशः शालतद्यष्टि उम्बरयष्टी-नामेकावक्तारता सू५२८

॥६५२॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

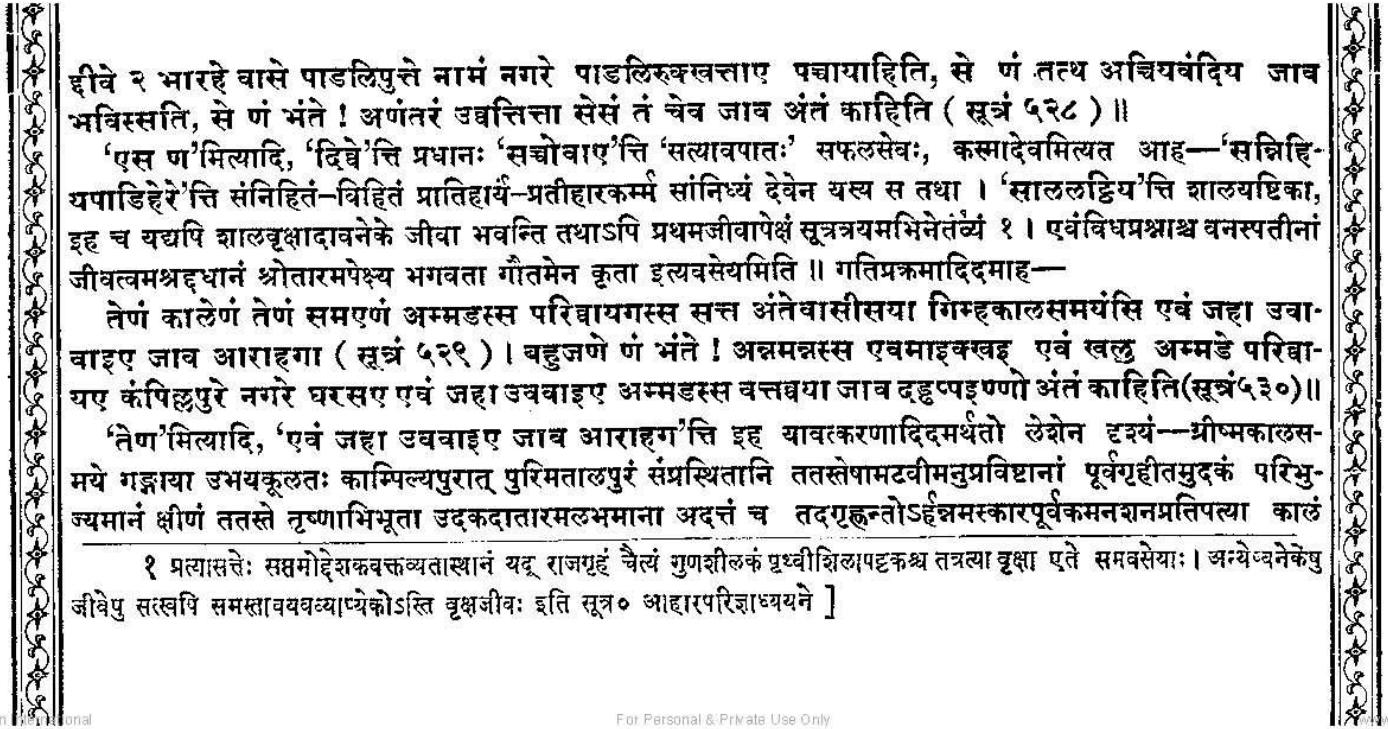

दीवे २ भारहे वासे पाडलिपुत्ते नामं नगरे पाडलिरुक्खत्ताए पच्चायाहिति, से णं तत्थ अच्चियवंदिय जाव भविस्सति, से णं भंते ! अणंतरं उव्वट्टित्ता सेसं तं चेव जाव अंतं काहिति (सूत्रं ५२८) ॥

'एस ण'मित्यादि, 'दिव्वे'त्ति प्रधानः 'सच्चोवाए'त्ति 'सत्यावपातः' सफलसेवः, कस्मादेवमित्यत आह—'सन्निहियपाडिहेरे'त्ति संनिहितं–विहितं प्रातिहार्यं–प्रतीहारकर्म्म सांनिध्यं देवेन यस्य स तथा । 'सालल्लइय'त्ति शालयष्टिका, इह च यद्यपि शालवृक्षादावनेके जीवा भवन्ति तथाऽपि प्रथमजीवापेक्षं सूत्रत्रयमभिनेतव्यं १ । एवंविधप्रश्नाश्च वनस्पतीनां जीवत्वमश्रद्दधानं श्रोतारमपेक्ष्य भगवता गौतमेन कृता इत्यवसेयमिति ॥ गतिप्रक्रमादिदमाह—

तेणं कालेणं तेणं समएणं अम्मडस्स परिव्वायगस्स सत्त अंतेवासीसया गिम्हकालसमयंसि एवं जहा उववाइए जाव आराहगा (सूत्रं ५२९) । बहुजणे णं भंते ! अन्नमन्नस्स एवमाइक्खइ एवं खलु अम्मडे परिव्वायए कंपिल्लपुरे नगरे घरसए एवं जहा उववाइए अम्मडस्स वत्तव्वया जाव दढप्पइण्णो अंतं काहिति(सूत्रं५३०)॥

'तेण'मित्यादि, 'एवं जहा उववाइए जाव आराहग'त्ति इह यावत्करणादिदमर्थतो लेशेन दृश्यं—ग्रीष्मकालसमये गङ्गाया उभयकूलतः काम्पिल्यपुरात् पुरिमतालपुरं संप्रस्थितानि ततस्तेषामटवीमनुप्रविष्टानां पूर्वगृहीतमुदकं परिभुज्यमानं क्षीणं ततस्ते तृष्णाभिभूता उदकदातारमलभमाना अदत्तं च तदगृह्णन्तोऽर्हन्नमस्कारपूर्वकमनशनप्रतिपत्त्या कालं

१ प्रत्यासत्तेः सप्तमोद्देशकवक्तव्यतास्थानं यद् राजगृहं चैत्यं गुणशीलकं पृथ्वीशिलापट्टकश्च तत्रत्या वृक्षा एते समवसेयाः । अन्येष्वनेकेषु जीवेषु सत्स्वपि समस्तावयवव्याप्त्येकोऽस्ति वृक्षजीवः इति सूत्र० आहारपरिज्ञाध्ययने]

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

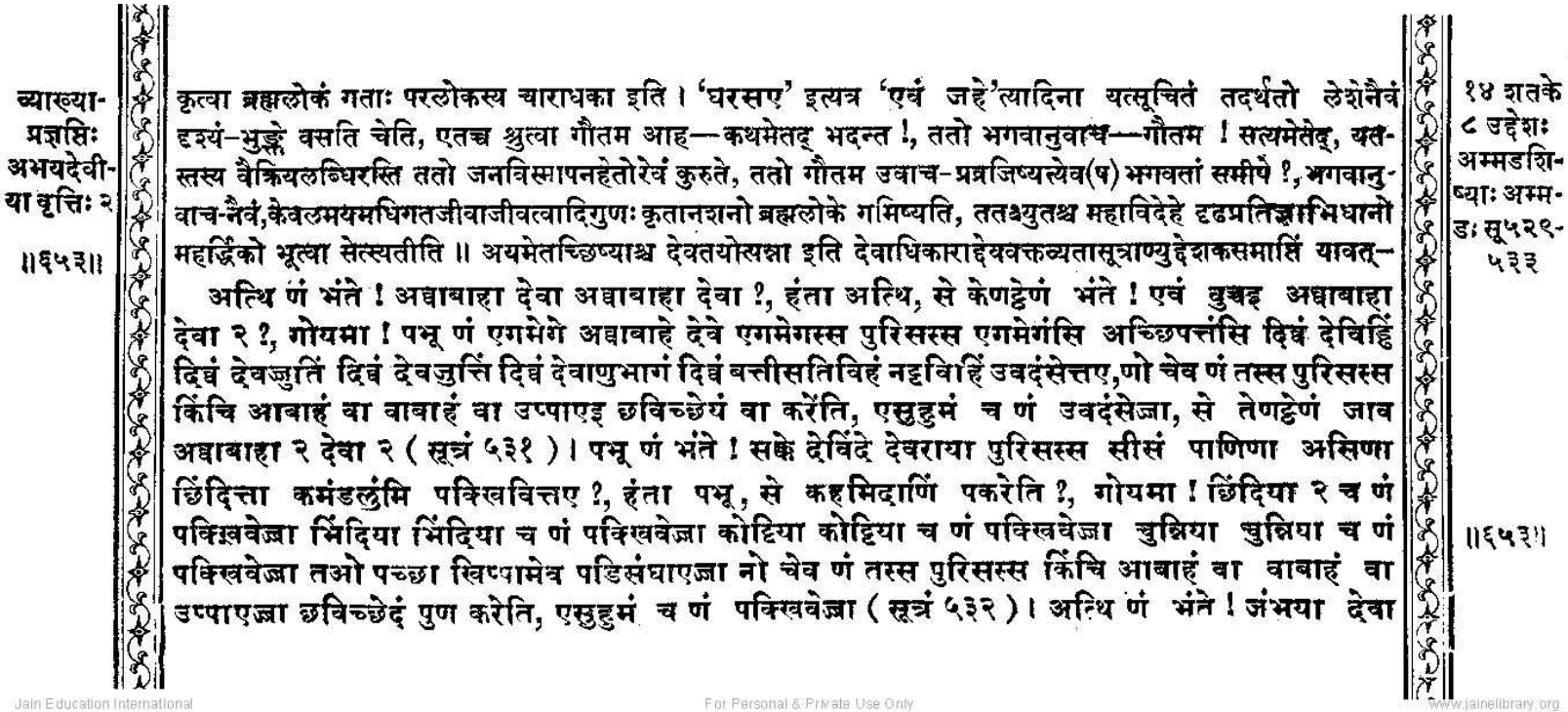

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥६५३॥

कृत्वा ब्रह्मलोकं गताः परलोकस्य चाराधका इति । 'घरसए' इत्यत्र 'एवं जहे'त्यादिना यत्सूचितं तदर्थतो लेशेनैवं दृश्यं–भुङ्क्ते वसति चेति, एतच्च श्रुत्वा गौतम आह—कथमेतद् भदन्त !, ततो भगवानुवाच—गौतम ! सत्यमेतद्, यत-स्तस्य वैक्रियलब्धिरस्ति ततो जनविस्मापनहेतोरेवं कुरुते, ततो गौतम उवाच-प्रव्रजिष्यत्येव(ष) भगवतां समीपे ?, भगवानु-वाच-नैवं,केवलमयमधिगतजीवाजीवत्वादिगुणः कृतानशनो ब्रह्मलोके गमिष्यति, ततश्च्युतश्च महाविदेहे दृढप्रतिज्ञाभिधानो महर्द्धिको भूत्वा सेत्स्यतीति ॥ अयमेतच्छिष्याश्च देवतयोत्पन्ना इति देवाधिकारादेववक्तव्यतासूत्राण्युद्देशकसमाप्तिं यावत्–

अत्थि णं भंते ! अव्वाबाहा देवा अव्वाबाहा देवा ?, हंता अत्थि, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ अव्वाबाहा देवा २ ?, गोयमा ! पभू णं एगमेगे अव्वाबाहे देवे एगमेगस्स पुरिसस्स एगमेगंसि अच्छिपत्तंसि दिव्वं देविड्ढिं दिव्वं देवज्जुतिं दिव्वं देवजुत्तिं दिव्वं देवाणुभागं दिव्वं बत्तीसतिविहं नट्टविहिं उवदंसेत्तए,णो चेव णं तस्स पुरिसस्स किंचि आबाहं वा वाबाहं वा उप्पाएइ छविच्छेयं वा करेंति, एसुहुमं च णं उवदंसेज्जा, से तेणट्ठेणं जाव अव्वाबाहा २ देवा २ (सूत्रं ५३१) । पभू णं भंते ! सक्के देविंदे देवराया पुरिसस्स सीसं पाणिणा असिणा छिंदित्ता कमंडलुंमि पक्खिवित्तए ?, हंता पभू, से कहमिदाणिं पकरेति ?, गोयमा ! छिंदिया २ च णं पक्खिवेज्जा भिंदिया भिंदिया च णं पक्खिवेज्जा कोट्टिया कोट्टिया च णं पक्खिवेज्जा चुन्निया चुन्निया च णं पक्खिवेज्जा तओ पच्छा खिप्पामेव पडिसंधाएज्जा नो चेव णं तस्स पुरिसस्स किंचि आबाहं वा वाबाहं वा उप्पाएज्जा छविच्छेदं पुण करेति, एसुहुमं च णं पक्खिवेज्जा (सूत्रं ५३२) । अत्थि णं भंते ! जंभया देवा

१४ शतके ८ उद्देशः अम्मडशि-ष्याः अम्म-डः सू५२९-५३३

॥६५३॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जंभया देवा ?, हंता अत्थि से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ जंभया देवा जंभया देवा ?, गोयमा ! जंभगा णं देवा निचं पमुइयपक्कीलिया कंदप्परतिमोहणसीला जन्नं ते देवे कुद्धे पासेज्जा से णं पुरिसे महंतं अयसं पाउणिज्जा जे णं ते देवे तुट्ठे पासेज्जा से णं महंतं जसं पाउणेज्जा, से तेणट्ठेणं गोयमा ! जंभगा देवा २ ॥ कतिविहा णं भंते ! जंभगा देवा पण्णत्ता ?, गोयमा ! दसविहा पण्णत्ता, तंजहा–अन्नजंभगा पाणजंभगा वत्थजंभगा लेणजंभगा सयणजंभगा पुप्फजंभगा फलजंभगा पुप्फफलजंभगा विज्जाजंभगा अविय्त्तजंभगा, जंभगा णं भंते ! देवा कहिं वसहिं उवेंति ?, गोयमा ! सवेसु चेव दीहवेयड्ढेसु चित्तविचित्तजमगपव्वएसु कंचणपव्वएसु य एत्थ णं जंभगा देवा वसहिं उवेंति । जंभगाणं भंते ! देवाणं केवतियं कालं ठिती पण्णत्ता ?, गोयमा ! एगं पलिओवमं ठिती पण्णत्ता । सेवं भंते ! सेवं भंतेत्ति जाव विहरति (सूत्रं ५३३) ॥ १४–८ ॥

तत्र च 'अव्वाबाह'त्ति व्याबाधन्ते–परं पीडयन्तीति व्याबाधास्तन्निषेधादव्याबाधाः, ते च लोकान्तिकदेवमध्यगता द्रष्टव्याः, यदाह—"सारस्सयमाइच्चा वण्ही वरुणा य गद्दतोया य । तुसिया अव्वाबाहा अग्गिच्चा चेव रिट्ठा य ॥ १ ॥" इति [सारस्वता आदित्या वह्नयो वरुणाश्च गर्दतोयाश्च तुषिता अव्याबाधा अग्न्यर्चाश्चैव रिष्टाश्च ॥] 'अच्छिपत्तंसि' अक्षिपत्रे–अक्षिपक्ष्मणि 'आबाहं व'त्ति ईषद्बाधां 'पबाहं व'त्ति प्रकृष्टबाधां 'बाबाहं'ति क्वचित् तत्र तु 'व्याबाधां' विशिष्टामाबाधां 'छविच्छेयं'ति शरीरच्छेदम् 'एसुहुमं च णं'ति 'इति सूक्ष्मम्' एवं सूक्ष्मं यथा भवत्येवमुपदर्शयेन्नाट्यविधिमिति प्रकृतं । 'सपाणिण'त्ति स्वकपाणिना 'से कहमियाणिं पकरेइ'त्ति यदि शक्रः शिरसः कमण्डल्वां प्रक्षेपणे प्रभुस्त-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

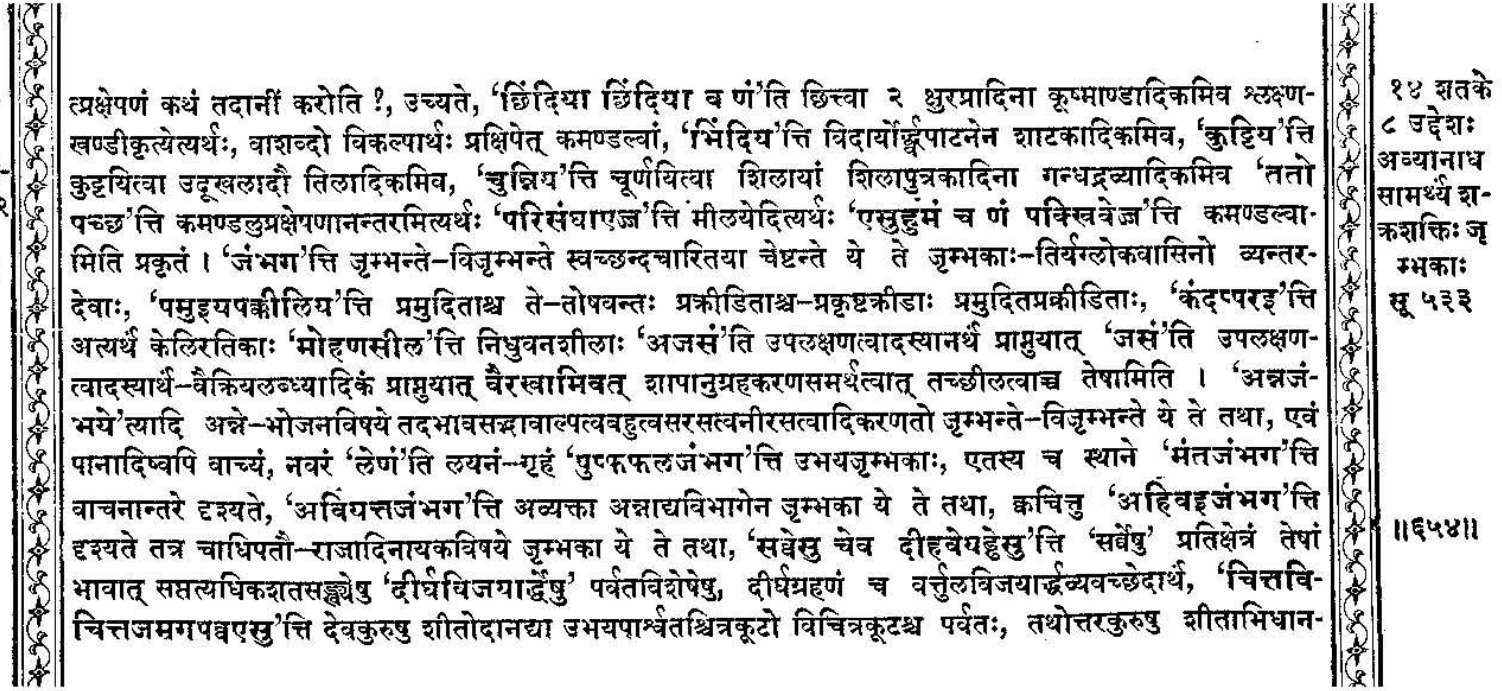

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥६५४॥

त्प्रक्षेपणं कथं तदानीं करोति ?, उच्यते, 'छिंदिया छिंदिया व णं'ति छित्त्वा २ क्षुरप्रादिना कूष्माण्डादिकमिव श्लक्ष्ण-खण्डीकृत्येत्यर्थः, वाशब्दो विकल्पार्थः प्रक्षिपेत् कमण्डल्वां, 'भिंदिय'त्ति विदार्योर्द्धपाटनेन शाटकादिकमिव, 'कुट्टिय'त्ति कुट्टयित्वा उदूखलादौ तिलादिकमिव, 'चुन्निय'त्ति चूर्णयित्वा शिलायां शिलापुत्रकादिना गन्धद्रव्यादिकमिव 'ततो पच्छ'त्ति कमण्डलुप्रक्षेपणानन्तरमित्यर्थः 'परिसंघाएज्ज'त्ति मीलयेदित्यर्थः 'एसुहुमं च णं पक्खिवेज्ज'त्ति कमण्डल्वा-मिति प्रकृतं । 'जंभग'त्ति जृम्भन्ते–विजृम्भन्ते स्वच्छन्दचारितया चेष्टन्ते ये ते जृम्भकाः–तिर्यग्लोकवासिनो व्यन्तर-देवाः, 'पमुइयपक्कीलिय'त्ति प्रमुदिताश्च ते–तोषवन्तः प्रक्रीडिताश्च–प्रकृष्टक्रीडाः प्रमुदितप्रक्रीडिताः, 'कंदप्परइ'त्ति अत्यर्थं केलिरतिकाः 'मोहणसील'त्ति निधुवनशीलाः 'अजसं'ति उपलक्षणत्वादस्यानर्थं प्रामुयात् 'जसं'ति उपलक्षण-त्वादस्यार्थं–वैक्रियलब्ध्यादिकं प्रामुयात् वैरस्वामिवत् शापानुग्रहकरणसमर्थत्वात् तच्छीलत्वाच्च तेषामिति । 'अन्नजं-भये'त्यादि अन्ने–भोजनविषये तदभावसद्भावाल्पत्वबहुत्वसरसत्वनीरसत्वादिकरणतो जृम्भन्ते–विजृम्भन्ते ये ते तथा, एवं पानादिष्वपि वाच्यं, नवरं 'लेणं'ति लयनं–गृहं 'पुप्फफलजंभग'त्ति उभयजृम्भकाः, एतस्य च स्थाने 'मंतजंभग'त्ति वाचनान्तरे दृश्यते, 'अविय्त्तजंभग'त्ति अव्यक्ता अन्नाद्यविभागेन जृम्भका ये ते तथा, क्वचित्तु 'अहिवइजंभग'त्ति दृश्यते तत्र चाधिपतौ–राजादिनायकविषये जृम्भका ये ते तथा, 'सवेसु चेव दीहवेयड्ढेसु'त्ति 'सर्वेषु' प्रतिक्षेत्रं तेषां भावात् सप्तत्यधिकशतसङ्ख्येषु 'दीर्घविजयार्द्धेषु' पर्वतविशेषेषु, दीर्घग्रहणं च वर्त्तुलविजयार्द्धव्यवच्छेदार्थं, 'चित्तवि-चित्तजमगपव्वएसु'त्ति देवकुरुषु शीतोदानद्या उभयपार्श्वतश्चित्रकूटो विचित्रकूटश्च पर्वतः, तथोत्तरकुरुषु शीताभिधान-

१४ शतके ८ उद्देशः अव्यानाध सामर्थ्य श-क्रशक्तिः जृम्भकाः सू ५३३

॥६५४॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

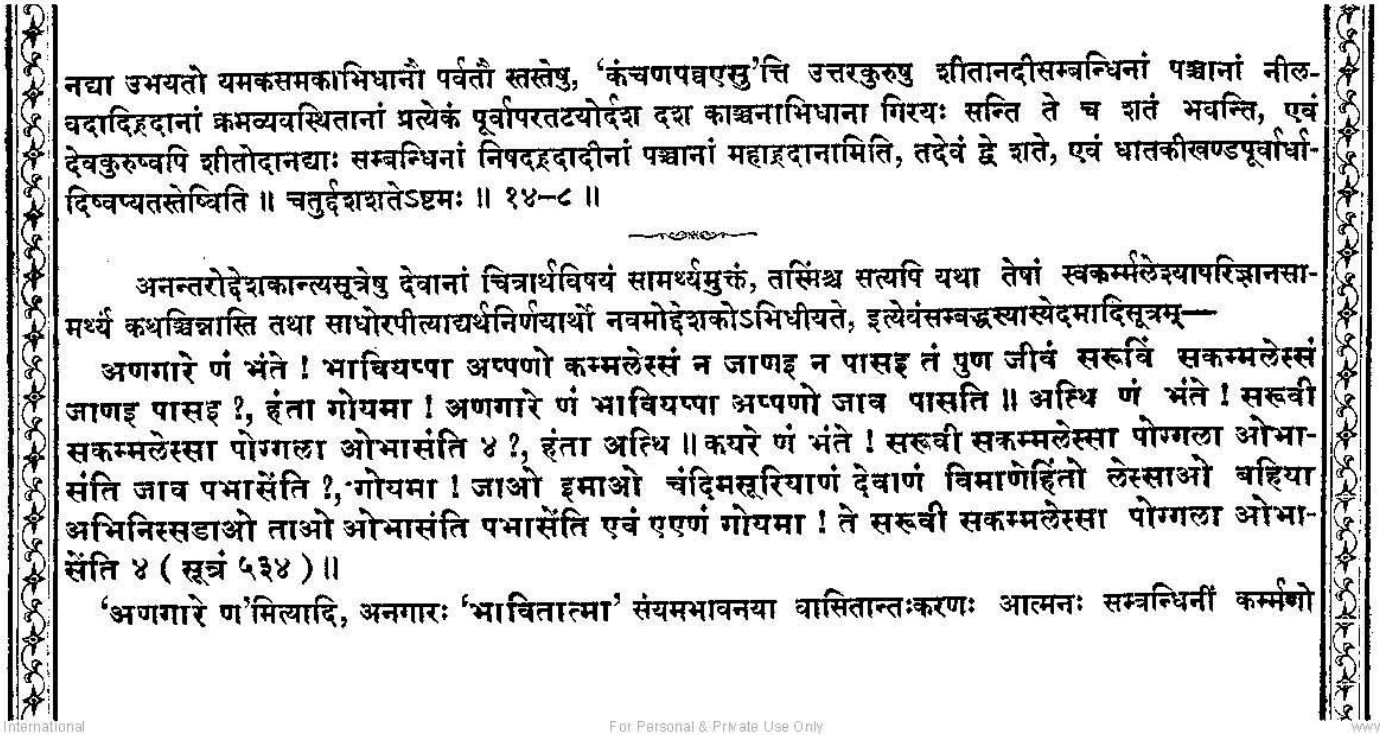

नद्या उभयतो यमकसमकाभिधानौ पर्वतौ स्तस्तेषु, 'कंचणपव्वएसु'त्ति उत्तरकुरुषु शीतानदीसम्बन्धिनां पञ्चानां नील-वदादिह्रदानां क्रमव्यवस्थितानां प्रत्येकं पूर्वापरतटयोर्दश दश काञ्चनाभिधाना गिरयः सन्ति ते च शतं भवन्ति, एवं देवकुरुष्वपि शीतोदानद्याः सम्बन्धिनां निषदह्रदादीनां पञ्चानां महाह्रदानामिति, तदेवं द्वे शते, एवं धातकीखण्डपूर्वार्धा-दिष्वप्यतस्तेष्विति ॥ चतुर्दशशतेऽष्टमः ॥ १४–८ ॥

अनन्तरोद्देशकान्त्यसूत्रेषु देवानां चित्रार्थविषयं सामर्थ्यमुक्तं, तस्मिंश्च सत्यपि यथा तेषां स्वकर्म्मलेश्यापरिज्ञानसा-मर्थ्यं कथञ्चिन्नास्ति तथा साधोरपीत्याद्यर्थनिर्णयार्थो नवमोद्देशकोऽभिधीयते, इत्येवंसम्बद्धस्यास्येदमादिसूत्रम्—

अणगारे णं भंते ! भावियप्पा अप्पणो कम्मलेस्सं न जाणइ न पासइ तं पुण जीवं सरूविं सकम्मलेस्सं जाणइ पासइ ?, हंता गोयमा ! अणगारे णं भावियप्पा अप्पणो जाव पासति ॥ अत्थि णं भंते ! सरूवी सकम्मलेस्सा पोग्गला ओभासंति ४ ?, हंता अत्थि ॥ कयरे णं भंते ! सरूवी सकम्मलेस्सा पोग्गला ओभा-संति जाव पभासेंति ?, गोयमा ! जाओ इमाओ चंदिमसूरियाणं देवाणं विमाणेहिंतो लेस्साओ बहिया अभिनिस्सडाओ ताओ ओभासंति पभासेंति एवं एएणं गोयमा ! ते सरूवी सकम्मलेस्सा पोग्गला ओभा-सेंति ४ (सूत्रं ५३४) ॥

'अणगारे ण'मित्यादि, अनगारः 'भावितात्मा' संयमभावनया वासितान्तःकरणः आत्मनः सम्बन्धिनीं कर्म्मणो

व्या० ११०

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र चतुर्दशमे शतके अष्टम-उद्देशक: परिसमाप्त:
अथ चतुर्दशमे शतके नवम-उद्देशक: आरब्ध:

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥६५५॥

योग्या लेश्या–कृष्णादिका कर्म्मणो वा लेश्या–'लिश श्लेषणे' इति वचनात् सम्बन्धः कर्म्मलेश्या तां न जानाति विशेषतो न पश्यति च सामान्यतः, कृष्णादिलेश्यायाः कर्मद्रव्यश्लेषणस्य चातिसूक्ष्मत्वेन छद्मस्थज्ञानागोचरत्वात्, 'तं पुण जीवं'ति यो जीवः कर्म्मलेश्यावांस्तं पुनः 'जीवम्' आत्मानं **'सरूविं'**ति सह रूपेण–रूपरूपवतोरभेदाच्छरीरेण वर्त्तते योऽसौ समासान्तविधेः सरूपी तं सरूपिणं सशरीरमित्यर्थः अत एव **'सकर्म्मलेश्यं'** कर्म्मलेश्यया सह वर्त्तमानं जानाति शरीरस्य चक्षुर्ग्राह्यत्वाज्जीवस्य च कथञ्चिच्छरीराव्यतिरेकादिति ॥ **'सरूविं सकम्मलेस्सं'**ति प्रागुक्तम्, अथ तदेवाधिकृत्य प्रश्नयन्नाह—**'अत्थि ण'**मित्यादि, **'सरूविं'**ति सह रूपेण–मूर्त्ततया ये ते **'सरूपिणः'** वर्णादिमन्तः **'सकम्मलेस्स'**त्ति पूर्ववत् **'पुद्गलाः'** स्कन्धरूपाः **'ओभासंति'**त्ति प्रकाशन्ते **'लेसाओ'**त्ति तेजांसि **'बहिया अभिनिस्सडाओ'**त्ति बहिस्तादभिनिःसृता–निर्गताः, इह च यद्यपि चन्द्रादिविमानपुद्गला एव पृथिवीकायिकत्वेन सचेतनत्वात्सकर्म्मलेश्यास्तथाऽपि तन्निर्गतप्रकाशपुद्गलानां तद्धेतुकत्वेनोपचारात्सकर्म्मलेश्यत्वमवगन्तव्यमिति ॥ पुद्गलाधिकारादिदमाह—

नेरइयाणं भंते ! किं अत्ता पोग्गला अणत्ता पोग्गला ?, गोयमा ! नो अत्ता पोग्गला अणत्ता पोग्गला, असुरकुमाराणं भंते ! किं अत्ता पोग्गला अणत्ता पोग्गला ?, गोयमा ! अत्ता पोग्गला णो अणत्ता पोग्गला, एवं जाव थणियकुमाराणं, पुढविकाइयाणं पुच्छा, गोयमा ! अत्तावि पोग्गला अणत्तावि पोग्गला, एवं जाव मणुस्साणं, वाणमंतरजोइसियवेमाणियाणं जहा असुरकुमाराणं, नेरइयाणं भंते ! किं इट्ठा पोग्गला अणिट्ठा पोग्गला ?, गोयमा ! नो इट्ठा पोग्गला अणिट्ठा पोग्गला जहा अत्ता भणिया एवं इट्ठावि

१४ शतके ९ उद्देशः कर्मलेश्या-दर्शनावभासः सू ५३४

॥६५५॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कंतावि पियावि मणुन्नावि भाणियव्वा एए पंच दंडगा ॥ (सूत्रं) देवे णं भंते ! महड्ढिए जाव महेसक्खे रूवसहस्सं विउव्वित्ता पभू भासासहस्सं भासित्तए ?, हंता पभू, सा णं भंते ! किं एगा भासा भासासहस्सं ?, गोयमा ! एगा णं सा भासा णो खलु तं भासासहस्सं (सूत्रं ५३५) ॥

'नेरइयाण'मित्यादि, 'अत्त'त्ति आ–अभिविधिना त्रायन्ते–दुःखात् संरक्षन्ति सुखं चोत्पादयन्तीति आत्राः आत्मा वा–एकान्तहिताः, अत एव रमणीया इति वृद्धैर्व्याख्यातं, एते च ये मनोज्ञाः प्राग् व्याख्याताास्ते दृश्याः, तथा 'इट्ठे'-त्यादि प्राग्वत् । पुद्गलाधिकारादेवेदमाह—'देवे ण'मित्यादि, 'एगा णं सा भासा भास'त्ति एकाऽसौ भाषा, जीवै-कत्वेनोपयोगैकत्वात्, एकस्य जीवस्यैकदा एक एवोपयोग इष्यते, ततश्च यदा सत्याद्यन्यतरस्यां भाषायां वर्त्तते तदा नान्यस्यामित्येकैव भाषेति ॥ पुद्गलाधिकारादेवेदमाह—

तेणं कालेणं २ भगवं गोयमे अचिरुग्गयं बालसूरियं जासुमणाकुसुमपुंजप्पकासं लोहितगं पासइ पासित्ता जायसड्ढे जाव समुप्पन्नकोउहल्ले जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ जाव नमंसित्ता जाव एवं वयासी–किमिदं भंते ! सूरिए किमिदं भंते ! सूरियस्स अट्ठे ?, गोयमा ! सुभे सूरिए सुभे सूरियस्स अट्ठे । किमिदं भंते ! सूरिए किमिदं भंते ! सूरियस्स पभाए एवं चेव, एवं छाया एवं लेस्सा (सूत्रं ५३६) ॥

'तेण'मित्यादि, 'अचिरोद्गतम्' उद्गतमात्रमत एव बालसूर्यं 'जासुमणाकुसुमप्पगासं'ति जासुमणा नाम वृक्षस्त-त्कुसुमप्रकाशमत एव लोहितकमिति 'किमिदं'ति किंस्वरूपमिदं सूर्यवस्तु, तथा किमिदं भदन्त ! सूर्यस्य–सूर्यशब्दस्यार्थः–

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

***अत्र मूल संपादने सूत्र-क्रमांकने स्खलना संभाव्यते {ऊपर पहली लाईनमे ॥ (सूत्रं) ऐसा लिखा है, लेकिन वहां क्रम नहीं लिखा है}

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [५३६]

दीप अनुक्रम [६३४]

अन्वर्थवस्तु ?, 'सुभे सूरिए'त्ति शुभस्वरूपं सूर्यवस्तु सूर्यविमानपृथिवीकायिकानामातपाभिधानपुण्यप्रकृत्युदयवर्त्तित्वात् लोकेऽपि प्रशस्ततया प्रतीतत्वात् ज्योतिष्केन्द्रत्वाच्च, तथा शुभः सूर्यशब्दार्थस्तथाहि–सूरेभ्यः–क्षमातपोदानसङ्क्रामादिवी-रेभ्यो हितः सूरेषु वा साधुः सूर्यः 'पभ'त्ति दीप्तिः छाया–शोभा प्रतिबिम्बं वा लेश्या–वर्णः ॥ लेश्याप्रक्रमादिदमाह—

जे इमे भंते ! अज्जत्ताए समणा निग्गंथा विहरंति एते णं कस्स तेयलेस्सं वीतीवयंति ?, गोयमा ! मास-परियाए समणे निग्गंथे वाणमंतराणं देवाणं तेयलेस्सं वीइवयंति दुमासपरियाए समणे निग्गंथे असुरिं-दवज्जियाणं भवणवासीणं देवाणं तेयलेस्सं वीयीवयंति एवं एएणं अभिलावेणं तिमासपरियाए समणे नि० असुरकुमाराणं देवाणं तेय० चउम्मासपरियाए सगहनक्खत्ततारारूवाणं जोतिसियाणं देवाणं तेय० पंच-मासपरियाए य सचंदिमसूरियाणं जोतिसिंदाणं जोतिसरायाणं तेय० छम्मासपरियाए समणे सोहम्मी-साणाणं देवाणं० सत्तमासपरियाए सणंकुमारमाहिंदाणं देवाणं० अट्ठमासपरियाए बंभलोगलंतगाणं देवाणं तेय० नवमासपरियाए समणे महासुक्कसहस्साराणं देवाणं तेय० दसमासपरियाए आणयपाणयआरणच्चु-याणं देवाणं० एक्कारसमासपरियाए गेवेज्जगाणं देवाणं० बारसमासपरियाए समणे निग्गंथे अणुत्तरोववाइयाणं देवाणं तेयलेस्सं वीयीवयंति, तेण परं सुक्के सुक्काभिजाए भवित्ता तओ पच्छा सिज्झति जाव अंतं करेति । सेवं भंते ! सेवं भंतेत्ति जाव विहरति (सूत्रं ५३७) ॥ १४–९ ॥

'जे इमे'इत्यादि, ये इमे प्रत्यक्षाः 'अज्जत्ताए'त्ति आर्यतया पापकर्म्मबहिर्भूततया अद्यतया वा–अधुनातनतया वर्त्तमा-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

नकालतयेत्यर्थः 'तेयलेस्सं'ति तेजोलेश्यां–सुखासिकां तेजोलेश्या हि प्रशस्तलेश्योपलक्षणं सा च सुखासिकाहेतुरिति कारणे कार्योपचारात्तेजोलेश्याशब्देन सुखासिका विवक्षितेति, 'वीइवयंति' व्यतिव्रजन्ति व्यतिक्रामन्ति 'असुरिंदवज्जियाणं'ति चमरबलवर्जितानां 'तेण परं'ति ततः संवत्सरात्परतः 'सुक्के'त्ति शुक्लो नामाभिन्नवृत्तोऽमत्सरी कृतज्ञः सदारम्भी हितानुबन्ध इति, निरतिचारचरण इत्यन्ये, 'सुक्काभिजाइ'त्ति शुक्लाभिजात्यः परमशुक्ल इत्यर्थः, अत एवोक्तम्—"आकिञ्चन्यं मुख्यं ब्रह्मापि परं सदागमविशुद्धम् । सर्वं शुक्लमिदं खलु नियमात्संवत्सरादूर्द्धम् ॥ १ ॥" एतच्च श्रमणविशेषमेवाश्रित्योच्यते न पुनः सर्व एवैवंविधो भवतीति ॥ चतुर्दशशते नवमः ॥ १४–९ ॥

अनन्तरं शुक्ल उक्तः, स च तत्त्वतः केवलीति केवलिप्रभृत्यर्थप्रतिबद्धो दशम उद्देशकः, तस्य चेदमादिसूत्रम्—

केवली णं भंते ! छउमत्थं जाणइ पासइ ?, हंता जाणइ पासइ, जहा णं भंते ! केवली छउमत्थं जाणइ पासइ तहा णं सिद्धेवि छउमत्थं जाणइ पासइ ?, हंता जाणइ पासइ, केवलीं णं भंते ! आहोहियं जाणइ पासइ ?, एवं चेव, एवं परमाहोहियं, एवं केवलिं एवं सिद्धं जाव जहा णं भंते ! केवली सिद्धं जाणइ पासइ तहा णं सिद्धेवि सिद्धं जाणइ पासइ ?, हंता जाणइ पासइ । केवली णं भंते ! भासेज्ज वा वागरेज्ज वा ?, हंता भासेज्ज वा वागरेज्ज वा, जहा णं भंते ! केवली भासेज्ज वा वागरेज्ज वा तहा णं सिद्धेवि भासेज्ज वा वागरेज्ज वा ?, णो तिणट्ठे समट्ठे, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ जहा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र चतुर्दशमे शतके नवम-उद्देशक: परिसमाप्त:
अथ चतुर्दशमे शतके दशम-उद्देशक: आरब्ध:

णं केवली णं भासेज्ज वा वागरेज्ज वा णो तहा णं सिद्धे भासेज्ज वा वागरेज्ज वा ?, गोयमा ! केवली णं सउट्ठाणे सकम्मे सबले सवीरिए सपुरिसक्कारपरक्कमे, सिद्धे णं अणुट्ठाणे जाव अपुरिसक्कारपरक्कमे, से तेणट्ठेणं जाव वागरेज्ज वा, केवली णं भंते ! उम्मिसेज्ज वा निमिसेज्ज वा ?, हंता उम्मिसेज्ज वा निम्मिसेज्ज वा एवं चेव, एवं आउट्टेज्ज वा पसारेज्ज वा, एवं ठाणं वा सेज्जं वा निसीहियं वा चेएज्जा, केवली णं भंते ! इमं रयणप्पभं पुढविं रयणप्पभापुढवीति जाणति पासति ?, हंता जाणइ पासइ, जहा णं भंते ! केवली इमं रयणप्पभं पुढविं रयणप्पभापुढवीति जाणइ पासइ तहा णं सिद्धेवि इमं रयणप्पभं पुढविं रयणप्पभपुढवीति जाणइ पासइ ?, हंता जाणइ पासइ, केवली णं भंते ! सक्करप्पभं पुढविं सक्करपभापुढवीति जाणइ पासइ ?, एवं चेव एवं जाव अहेसत्तमा, केवली णं भंते ! सोहम्मं कप्पं जाणइ पासइ ?, हंता जाणइ पासइ, एवं चेव, एवं ईसाणं एवं जाव अच्चुयं, केवली णं भंते ! गेवेज्जविमाणे गेवेज्जविमाणेत्ति जाणइ पासइ ?, एवं चेव, एवं अणुत्तरविमाणेवि, केवली णं भंते ! ईसिपब्भारं पुढविं ईसीपब्भारपुढवीति जाणइ पासइ ?, एवं चेव, केवली णं भंते ! परमाणुपोग्गलं परमाणुपोग्गलेत्ति जाणइ पासइ ?, एवं चेव, एवं दुपएसियं खंधं एवं जाव जहा णं भंते ! केवली अणंतपएसियं खंधं अणंतपएसिए खंधेत्ति जाणइ पासइ तहा णं सिद्धेवि अणंतपएसियं जाव पासइ ?, हंता जाणइ पासइ । सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति (सूत्रं ५३८) ॥ १४–१० ॥ चोद्दसमं सयं समत्तं ॥ १४ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

'केवली'त्यादि, इह केवलिशब्देन भवस्थकेवली गृह्यते उत्तरत्र सिद्धग्रहणादिति, 'आहोहियं'ति प्रतिनियतक्षेत्रावधिज्ञानं 'परमाहोहियं'ति परमावधिकं 'भासेज्ज व'त्ति भाषेतापृष्ट एव 'वागरेज्ज'त्ति प्रष्टः सन् व्याकुर्यादिति 'ठाणं'ति ऊर्द्ध्वस्थानं निषदनस्थानं त्वग्वर्त्तनस्थानं चेति 'सेज्जं'ति शय्यां–वसतिं 'निसीहियं'ति अल्पतरकालिकां वसतिं 'चेएज्ज'त्ति कुर्यादिति ॥ चतुर्दशशते दशमः ॥ १४–१० ॥ समाप्तं च वृत्तितश्चतुर्दशं शतम् ॥ १४ ॥

चतुर्दशस्येह शतस्य वृत्तिर्येषां प्रभावेण कृता मयैषा ।
जयन्तु ते पूज्यजना जनानां, कल्याणसंसिद्धिपरस्वभावाः ॥ १ ॥

॥ इति चन्द्रकुलनभोमृगाङ्कश्रीमदभयदेवसूरिवरविरचितविवरणयुतं चतुर्दशं शतं समाप्तम् ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	अत्र चतुर्दशमे शतके दशम-उद्देशक: परिसमाप्त: तत् परिसमाप्ते चतुर्दशमं शतकं अपि समाप्तं

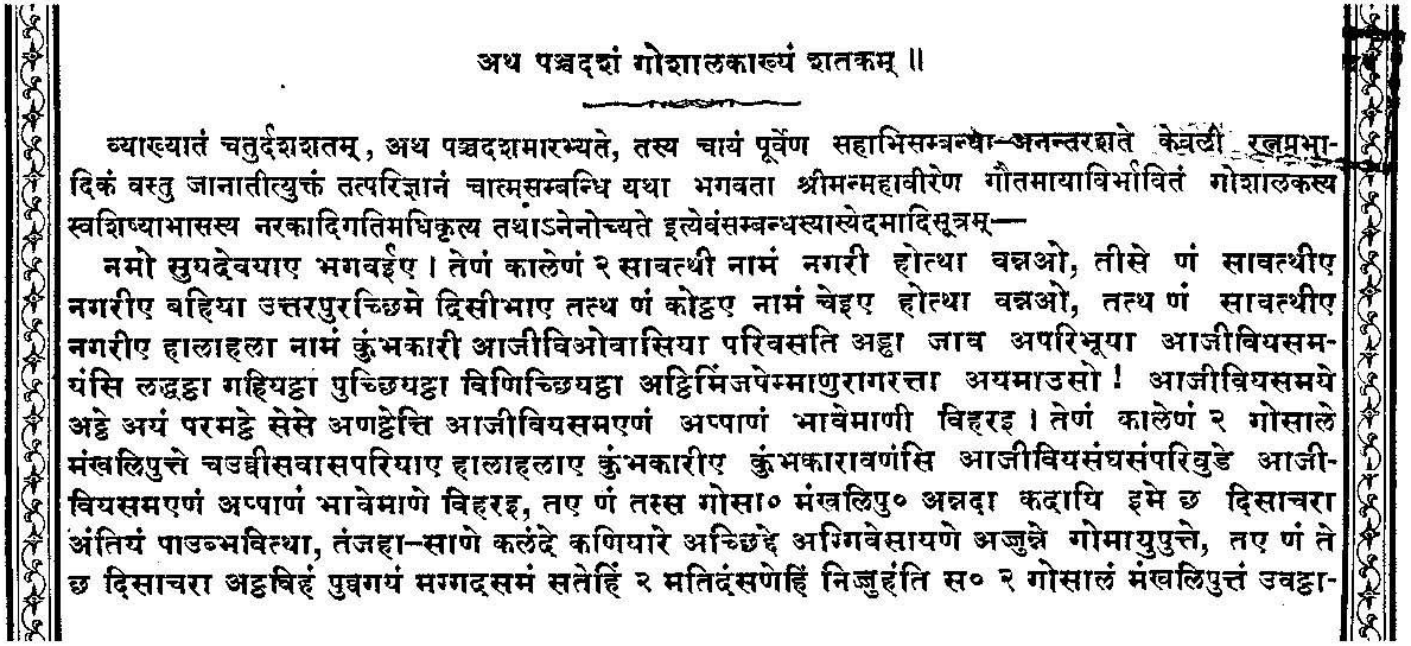

अथ पञ्चदशं गोशालकाख्यं शतकम् ॥

व्याख्यातं चतुर्दशशतम्, अथ पञ्चदशमारभ्यते, तस्य चायं पूर्वेण सहाभिसम्बन्धो–अनन्तरशते केवली रत्नप्रभादिकं वस्तु जानातीत्युक्तं तत्परिज्ञानं चात्मसम्बन्धि यथा भगवता श्रीमन्महावीरेण गौतमायाविर्भावितं गोशालकस्य स्वशिष्याभासस्य नरकादिगतिमधिकृत्य तथाऽनेनोच्यते इत्येवंसम्बन्धस्यास्येदमादिसूत्रम्—

नमो सुयदेवयाए भगवईए। तेणं कालेणं २ सावत्थी नामं नगरी होत्था वन्नओ, तीसे णं सावत्थीए नगरीए बहिया उत्तरपुरच्छिमे दिसीभाए तत्थ णं कोट्ठए नामं चेइए होत्था वन्नओ, तत्थ णं सावत्थीए नगरीए हालाहला नामं कुंभकारी आजीविओवासिया परिवसति अड्ढा जाव अपरिभूया आजीवियसमयंसि लद्धट्ठा गहियट्ठा पुच्छियट्ठा विणिच्छियट्ठा अट्ठिमिंजपेम्माणुरागरत्ता अयमाउसो! आजीवियसमये अट्ठे अयं परमट्ठे सेसे अणट्ठेत्ति आजीवियसमएणं अप्पाणं भावेमाणी विहरइ। तेणं कालेणं २ गोसाले मंखलिपुत्ते चउवीसवासपरियाए हालाहलाए कुंभकारीए कुंभकारावणंसि आजीवियसंघसंपरिवुडे आजीवियसमएणं अप्पाणं भावेमाणे विहरइ, तए णं तस्स गोसा० मंखलिपु० अन्नदा कदायि इमे छ दिसाचरा अंतियं पाउब्भवित्था, तंजहा–साणे कलंदे कणियारे अच्छिद्दे अग्गिवेसायणे अज्जुने गोमायुपुत्ते, तए णं ते छ दिसाचरा अट्ठविहं पुव्वगयं मग्गदसमं सतेहिं २ मतिदंसणेहिं निज्जुहंति स० २ गोसालं मंखलिपुत्तं उवट्ठा-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अथ पंचदशमं शतकं आरभ्यते

गोशालक-चरित्रं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥ ६५९ ॥

इंसु, तए णं से गोसाले मंखलिपुत्ते तेणं अट्ठंगस्स महानिमित्तस्स केणइ उल्लोयमेत्तेणं सव्वेसिं पाणाणं भू० जी० सत्ताणं इमाइं छ अणइक्कमणिज्जाइं वागरणाइं वागरेति, तं०–लाभं अलाभं सुहं दुक्खं जीवियं मरणं तहा। तए णं से गोसाले मंखलिपुत्ते तेणं अट्ठंगस्स महानिमित्तस्स केणइ उल्लोयमेत्तेणं सावत्थीए नगरीए अजिणे जिणप्पलावी अणरहा अरहप्पलावी अकेवली केवलिप्पलावी असवन्नू सवन्नुप्पलावी अजिणे जिणसद्दं पगासेमाणे विहरइ (सूत्रं ५३९)॥

'तेण'मित्यादि,'मंखलिपुत्ते'त्ति मङ्खल्यभिधानमङ्खस्य पुत्रः 'चउवीसवासपरियाए'त्ति चतुर्विंशतिवर्षप्रमाणप्रव्रज्या-पर्यायः'दिसाचर'त्ति दिशं–मेरां चरन्ति–यान्ति मन्यन्ते भगवतो वयं शिष्या इति दिक्चराः देशाटा वा, दिक्चरा भगवच्छिष्याः पार्श्वस्थीभूता इति टीकाकारः 'पासावच्चिज्ज'त्ति चूर्णिकारः 'अंतियं पाउब्भविज्ज'त्ति समीपमागताः 'अट्ठविहं पुव्वगयं मग्गदसमं'ति अष्टविधम्–अष्टप्रकारं निमित्तमिति शेषः, तच्चेदं–दिव्यं १ औत्पातं २ आन्तरिक्षं ३ भौमं ४ आङ्गं ५ स्वरं ६ लक्षणं ७ व्यञ्जनं ८ चेति, पूर्वगतं–पूर्वाभिधानश्रुतविशेषमध्यगतं, तथा मार्गौ–गीतमार्गनृत्य-मार्गलक्षणौ सम्भाव्येते 'दसम'त्ति अत्र नवमशब्दस्य लुप्तस्य दर्शनान्नवमदशमाविति दृश्यं, ततश्च मार्गौ नवमदशमौ यत्र तत्तथा, 'सएहिं' २ ति स्वकैः २ स्वकीयैः २ 'मइदंसणेहिं'ति मतेः बुद्धेर्मत्या वा दर्शनानि–प्रमेयस्य परिच्छेदनानि मति-दर्शनानि तैः 'निज्जूहंति'त्ति निर्यूथयन्ति पूर्वलक्षणश्रुतपर्याययूथान्निर्धारयन्ति उद्धरन्तीत्यर्थः 'उवट्ठाइंसु'त्ति उपस्थित-वन्तः आश्रितवन्त इत्यर्थः, 'अट्ठगस्स'त्ति अष्टभेदस्य 'केणइ'त्ति केनचित्–तथाविधजनाविदितस्वरूपेण 'उल्लोयमेत्ते

१५ गोशा-लकशते ष-ड्दिशाचर समागमः सू ५३९-

॥ ६५९ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गोशालक-चरित्रं

णं'ति उद्देशमात्रेण 'इमाइं छ अणइक्कमणिज्जाइं'ति इमानि षड् अनतिक्रमणीयानि–व्यभिचारयितुमशक्यानि 'वागरणाइं' ति पृष्टेन सता यानि व्याक्रियन्ते–अभिधीयन्ते तानि व्याकरणानि पुरुषार्थोपयोगित्वाच्चैतानि षडुक्तानि, अन्यथा नष्टमुष्टिचिन्तालूकाप्रभृतीन्यन्यान्यपि बहूनि निमित्तगोचरीभवन्तीति ॥ 'अजिणे जिणप्पलावि' त्ति अजिनः–अवीतरागः सन् जिनमात्मानं प्रकर्षेण लपतीत्येवंशीलो जिनप्रलापी, एवमन्यान्यपि पदानि वाच्यानि, नवरम् अर्हन्–पूजार्हः केवली–परिपूर्णज्ञानादिः, किमुक्तं भवति ?–'अजिणे' इत्यादि ।

तए णं सावत्थीए नगरीए सिंघाडगजाव पहेसु बहुजणो अन्नमन्नस्स एवमाइक्खइ जाव एवं परूवेति एवं खलु देवाणुप्पिया ! गोसाले मंखलिपुत्ते जिणे जिणप्पलावी जाव पकासेमाणे विहरति, से कहमेयं मन्ने एवं ?, तेणं कालेणं २ सामी समोसढे जाव परिसा पडिगया, तेणं कालेणं २ समणस्स भगवओ महावीरस्स जेट्ठे अंतेवासी इंदभूतीणामं अणगारे गोयमगोत्तेणं जाव छट्ठंछट्ठेणं एवं जहा वितियसए नियंठुद्देसए जाव अडमाणे बहुजणसद्दं निसामेति, बहुजणो अन्नमन्नस्स एवमाइक्खइ ४–एवं खलु देवाणुप्पिया ! गोसाले मंखलिपुत्ते जिणे जिणप्पलावी जाव पगासेमाणे विहरति, से कहमेयं मन्ने एवं ?, तए णं भगवं गोयमे बहुजणस्स अंतियं एयमट्ठं सोच्चा निसम्म जाव जायसड्ढे जाव भत्तपाणं पडिदंसेति जाव पज्जुवासमाणे एवं व०–एवं खलु अहं भंते ! तं चेव जाव जिणसद्दं पगासेमाणे विहरति से कहमेयं भंते ! एवं ?, तं इच्छामि णं भंते ! गोसालस्स मंखलिपुत्तस्स उट्ठाणपरियाणियं परिकहियं, गोयमादी समणे भगवं महावीरे

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [५४०]

दीप अनुक्रम [६३८]

भगवं गोयमं एवं वयासी–(जण्णं) से बहुजणे अन्नमन्नस्स एवमाइक्खइ ४–एवं खलु गोसाले मंखलिपुत्ते जिणे जिणप्पलावी जाव पगासेमाणे विहरइ तण्णं मिच्छा, अहं पुण गोयमा ! एवमाइक्खामि जाव परूवेमि–एवं खलु एयस्स गोसालस्स मंखलिपुत्तस्स मंखलिनामं मंखे पिता होत्था, तस्स णं मंखलिस्स मंखस्स भद्दानामं भारिया होत्था सुकुमाल जाव पडिरूवा, तए णं सा भद्दा भारिया अन्नदा कदायि गुव्विणी यावि होत्था, तेणं कालेणं २ सरवणे नामं सन्निवेसे होत्था रिद्धत्थिमिए जाव सन्निभप्पगासे पासादीए ४, तत्थ णं सरवणे सन्निवेसे गोबहुले नामं माहणे परिवसति अड्ढे जाव अपरिभूए रिउव्वेद जाव सुपरिनिट्ठिए यावि होत्था, तस्स णं गोबहुलस्स माहणस्स गोसाला यावि होत्था, तए णं से मंखलीमंखे नामं अन्नया कयाइ भद्दाए भारियाए गुव्विणीए सद्धिं चित्तफलगहत्थगए मंखत्तणेणं अप्पाणं भावेमाणे पुव्वाणुपुव्विं चरमाणे गामाणुगामं दूइज्जमाणे जेणेव सरवणे सन्निवेसे जेणेव गोबहुलस्स माहणस्स गोसाला तेणेव उवा० २ गोबहुलस्स माहणस्स गोसालाए एगदेसंसि भंडनिक्खेवं करेंति भंड० २ सरवणे सन्निवेसे उच्चनीयमज्झिमाइं कुलाइं घरसमुदाणस्स भिक्खायरियाए अडमाणे वसहीए सव्वओ समंता मग्गणगवेसणं करेंति वसहीए सव्वओ समंता मग्गणवेसणं करेमाणे अन्नत्थ वसहिं अलभमाणे तस्सेव गोबहुलस्स माहणस्स गोसालाए एगदेसंसि वासावासं उवागए, तए णं सा भद्दा भारिया नवण्हं मासाणं बहुपडिपुन्नाणं अद्धट्ठमाण राइंदियाणं वीतिक्कंताणं सुसुमालजाव पडिरूवगं दारगं पयाया, तए णं तस्स दारगस्स अम्मापियरो एक्का-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गोशालक-चरित्रं

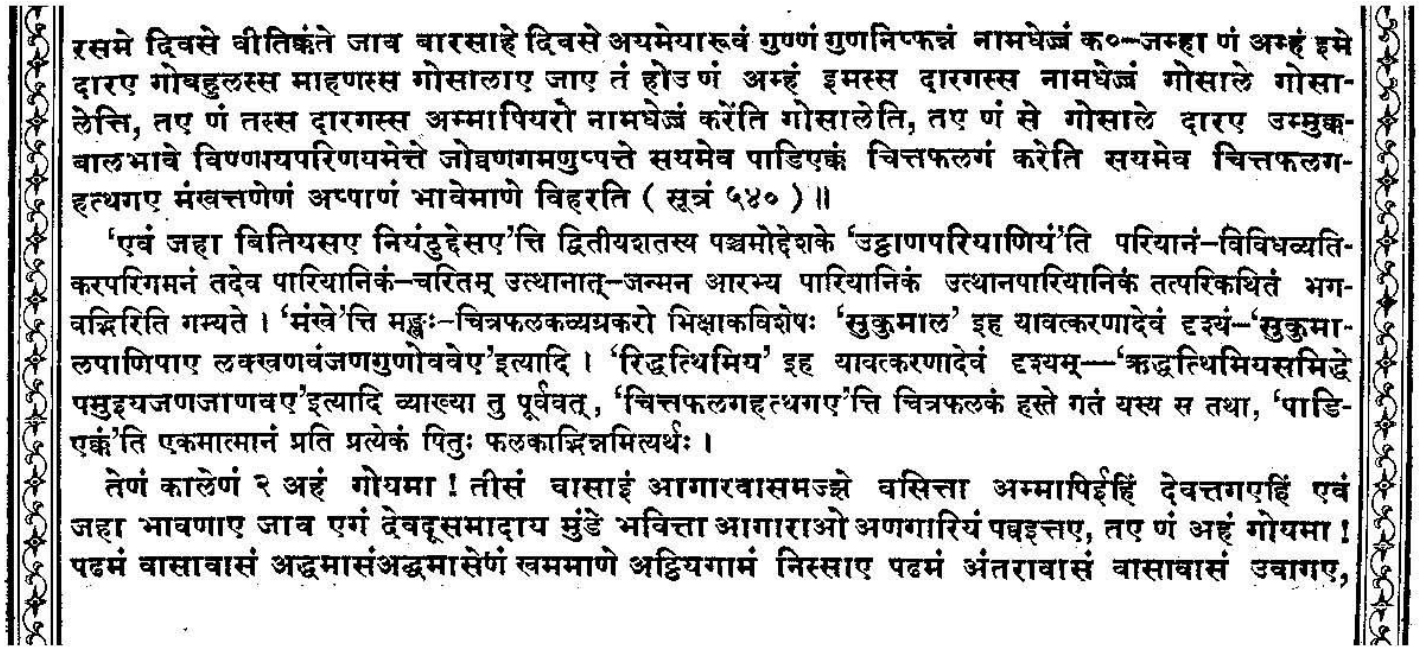

रसमे दिवसे वीतिक्कंते जाव बारसाहे दिवसे अयमेयारूवं गुण्णं गुणनिप्फन्नं नामधेज्जं क०–जम्हा णं अम्हं इमे दारए गोबहुलस्स माहणस्स गोसालाए जाए तं होउ णं अम्हं इमस्स दारगस्स नामधेज्जं गोसाले गोसालेत्ति, तए णं तस्स दारगस्स अम्मापियरो नामधेज्जं करेंति गोसालेति, तए णं से गोसाले दारए उम्मुक्कबालभावे विण्णायपरिणयमेत्ते जोव्वणगमणुप्पत्ते सयमेव पाडिएक्कं चित्तफलगं करेति सयमेव चित्तफलगहत्थगए मंखत्तणेणं अप्पाणं भावेमाणे विहरति (सूत्रं ५४०) ॥

'एवं जहा बितियसए नियंठुद्देसए'त्ति द्वितीयशतस्य पञ्चमोद्देशके 'उट्ठाणपरियाणियं'ति परियानं–विविधव्यतिकरपरिगमनं तदेव पारियानिकं–चरितम् उत्थानात्–जन्मन आरभ्य पारियानिकं उत्थानपारियानिकं तत्परिकथितं भगवद्भिरिति गम्यते । 'मंखे'त्ति मङ्खः–चित्रफलकव्यग्रकरो भिक्षाकविशेषः 'सुकुमाल' इह यावत्करणादेवं दृश्यं–'सुकुमालपाणिपाए लक्खणवंजणगुणोववेए'इत्यादि । 'रिद्धत्थिमिय' इह यावत्करणादेवं दृश्यम्—'ऋद्धत्थिमियसमिद्धे पमुइयजणजाणवए'इत्यादि व्याख्या तु पूर्ववत्, 'चित्तफलगहत्थगए'त्ति चित्रफलकं हस्ते गतं यस्य स तथा, 'पाडिएक्कं'ति एकमात्मानं प्रति प्रत्येकं पितुः फलकाद्भिन्नमित्यर्थः ।

तेणं कालेणं २ अहं गोयमा ! तीसं वासाइं आगारवासमज्झे वसित्ता अम्मापिईहिं देवत्तगएहिं एवं जहा भावणाए जाव एगं देवदूसमादाय मुंडे भवित्ता आगाराओ अणगारियं पव्वइत्तए, तए णं अहं गोयमा ! पढमं वासावासं अद्धमासंअद्धमासेणं खममाणे अट्ठियगामं निस्साए पढमं अंतरावासं वासावासं उवागए,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

दोच्चं वासं मासंमासेणं खममाणे पुव्वाणुपुव्विं चरमाणे गामाणुगामं दूइज्जमाणे जेणेव रायगिहे नगरे जेणेव नालिंदा बाहिरिया जेणेव तंतुवायसाला तेणेव उवागच्छामि ते० २ अहापडिरूवं उग्गहं ओगिण्हामि अहा० २ तंतुवायसालाए एगदेसंसि वासावासं उवागए, तए णं अहं गोयमा ! पढमं मासखमणं उवसंपज्जित्ता णं विहरामि। तए णं से गोसाले मंखलिपुत्ते चित्तफलगहत्थगए मंखत्तणेणं अप्पाणं भावेमाणे पुव्वाणुपुव्विं चरमाणे जाव दूइज्जमाणे जेणेव रायगिहे नगरे जेणेव नालिंदा बाहिरिया जेणेव तंतुवायसाला तेणेव उवागच्छइ ते० २ तंतुवायसालाए एगदेसंसि भंडनिक्खेवं करेति भं० २ रायगिहे नगरे उच्चनीय जाव अन्नत्थ कत्थवि वसहिं अलभमाणे तीसे य तंतुवायसालाए एगदेसंसि वासावासं उवागए जत्थेव णं अहं गोयमा !, (तए णं अहं गोयमा !) पढममासक्खमणपारणगंसि तंतुवायसालाओ पडिनिक्खमामि तंतु० २ नालंदाबाहिरियं मज्झंमज्झेणं जेणेव रायगिहे नगरे तेणेव उवा० २ रायगिहे नगरे उच्चनीय जाव अडमाणे विजयस्स गाहावइस्स गिहं अणुपविट्ठे, तए णं से विजए गाहावती ममं एज्जमाणं पासति २ हट्ठतुट्ठ० खिप्पामेव आसणाओ अब्भुट्ठेइ खि० २ पायपीढाओ पच्चोरुहइ २ पाउयाओ ओमुयइ पा० २ एगसाडियं उत्तरासंगं करेति अंजलिमउलियहत्थे ममं सत्तट्ठपयाइं अणुगच्छइ २ ममं तिक्खुत्तो आयाहिणपयाहिणं करेति २ ममं वंदति नमंसति २ ममं विउलेणं असणपाणखाइमसाइमेणं पडिलाभेस्सामित्तिकट्टु तुट्ठे पडिलाभेमाणेवि तुट्ठे पडिलाभितेवि तुट्ठे, तए णं तस्स विजयस्स गाहावइस्स तेणं दव्वसुद्धेणं दायगसुद्धेणं [तवस्सिविसुद्धेणं तिकरणसुद्धेणं पडि-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

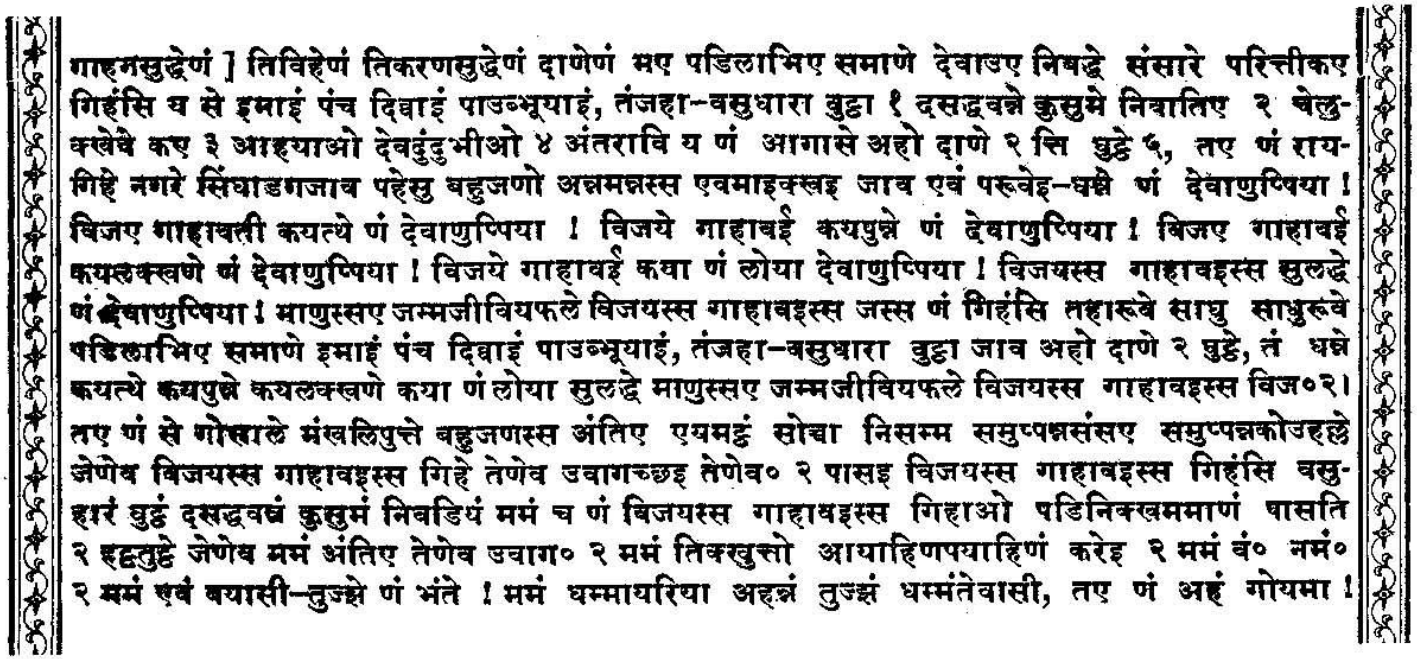

गाहमसुद्धेणं] तिविहेणं तिकरणसुद्धेणं दाणेणं मए पडिलाभिए समाणे देवाउए निबद्धे संसारे परित्तीकए गिहंसि य से इमाइं पंच दिव्वाइं पाउब्भूयाइं, तंजहा–वसुधारा वुट्ठा १ दसद्धवन्ने कुसुमे निवातिए २ चेलुक्खेवे कए ३ आहयाओ देवदुंदुभीओ ४ अंतरावि य णं आगासे अहो दाणे २ त्ति घुट्ठे ५, तए णं रायगिहे नगरे सिंघाडगजाव पहेसु बहुजणो अन्नमन्नस्स एवमाइक्खइ जाव एवं परूवेइ–धन्ने णं देवाणुप्पिया ! विजए गाहावती कयत्थे णं देवाणुप्पिया ! विजये गाहावई कयपुन्ने णं देवाणुप्पिया ! विजए गाहावई कयलक्खणे णं देवाणुप्पिया ! विजये गाहावई कया णं लोया देवाणुप्पिया ! विजयस्स गाहावइस्स सुलद्धे णं देवाणुप्पिया ! माणुस्सए जम्मजीवियफले विजयस्स गाहावइस्स जस्स णं गिहंसि तहारूवे साधु साधुरूवे पडिलाभिए समाणे इमाइं पंच दिव्वाइं पाउब्भूयाइं, तंजहा–वसुधारा वुट्ठा जाव अहो दाणे २ घुट्ठे, तं धन्ने कयत्थे कयपुन्ने कयलक्खणे कया णं लोया सुलद्धे माणुस्सए जम्मजीवियफले विजयस्स गाहावइस्स विज०२। तए णं से गोसाले मंखलिपुत्ते बहुजणस्स अंतिए एयमट्ठं सोच्चा निसम्म समुप्पन्नसंसए समुप्पन्नकोउहल्ले जेणेव विजयस्स गाहावइस्स गिहे तेणेव उवागच्छइ तेणेव० २ पासइ विजयस्स गाहावइस्स गिहंसि वसुहारं वुट्ठं दसद्धवन्नं कुसुमं निवडियं ममं च णं विजयस्स गाहावइस्स गिहाओ पडिनिक्खममाणं पासति २ हट्ठतुट्ठे जेणेव ममं अंतिए तेणेव उवाग० २ ममं तिक्खुत्तो आयाहिणपयाहिणं करेइ २ ममं वं० नमं० २ ममं एवं वयासी–तुज्झे णं भंते ! ममं धम्मायरिया अहन्नं तुज्झं धम्मंतेवासी, तए णं अहं गोयमा !

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥६६२॥

गोसालस्स मंखलिपुत्तस्स एयमट्ठं नो आढामि नो परिजाणामि तुसिणीए संचिट्ठामि, तए णं अहं गोयमा ! रायगिहाओ नगराओ पडिनिक्खमामि प० २ णालंदं बाहिरियं मज्झंमज्झेणं जेणेव तंतुवायसाला तेणेव उवा० २ दोचं मासखमणं उवसंपज्जित्ताणं विहरामि, तए णं अहं गोयमा ! दोचं मासक्खमणपारणगंसि तंतुवायसालाओ पडिनिक्खमामि तं० २ नालंदं बाहिरियं मज्झंमज्झेणं जेणेव रायगिहे नगरे जाव अड-माणे आणंदस्स गाहावइस्स गिहं अणुप्पविट्ठे, तए णं से आणंदे गाहावती ममं एज्जमाणं पासति एवं जहेव विजयस्स नवरं ममं विउलाए खज्जगविहीए पडिलाभेस्सामीति तुट्ठे सेसं तं चेव जाव तचं मास-क्खमणं उवसंपज्जित्ताणं विहरामि, तए णं अहं गोयमा ! तचमासक्खमणपारणगंसि तंतुवायसालाओ पडि-निक्खमामि तं० २ तहेव जाव अडमाणे सुणंदस्स गाहावइस्स गिहं अणुपविट्ठे, तए णं से सुणंदे गाहावती एवं जहेव विजयगाहावती नवरं ममं सव्वकामगुणिएणं भोयणेणं पडिलाभेति सेसं तं चेव जाव चउत्थं मासक्खमणं उवसंपज्जित्ताणं विहरामि, तीसे णं नालंदाए बाहिरियाए अदूरसामंते एत्थ णं कोल्लाए नामं सन्निवेसे होत्था सन्निवेसवन्नओ, तत्थ णं कोल्लाए संनिवेसे बहुले नामं माहणे परिवसइ अड्ढे जाव अपरिभूए रिउव्वेयजावसुपरि-निट्ठिए यावि होत्था,तए णं से बहुले माहणे कत्तियचाउम्मासियपाडिवगंसि विउलेणं महुघयसंजुत्तेणं परमण्णेणं माहणे आयामेत्था, तए णं अहं गोयमा ! चउत्थमासक्खमणपारणगंसि तंतुवायसालाओ पडिनिक्खमामि तं० २ णालंदं बाहिरियं मज्झंमज्झेणं निग्गच्छामि नि० २ जेणेव कोल्लाए संनिवेसे तेणेव उवागच्छामि २

१५ गोशा-लकशते श्रीवीरेण गोशाल-संगमः सू ५४१

॥६६२॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गोशालक-चरित्रं

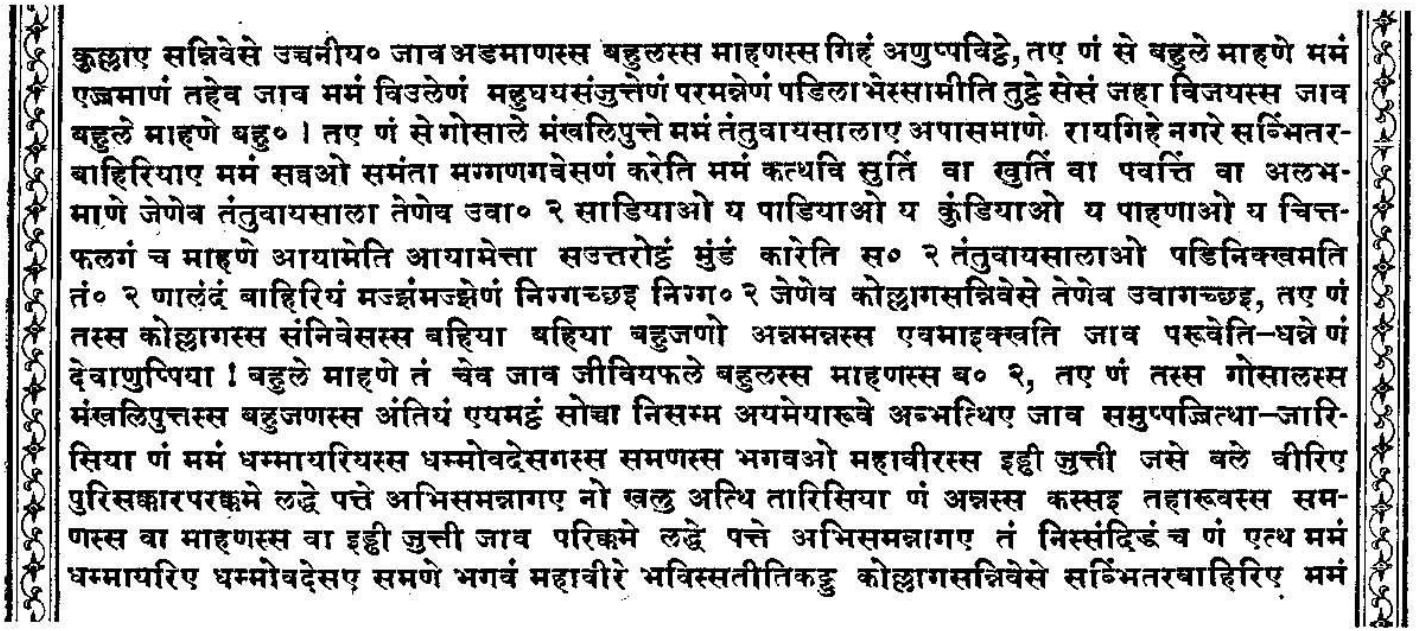

कुल्लाए सन्निवेसे उच्चनीय० जाव अडमाणस्स बहुलस्स माहणस्स गिहं अणुप्पविट्ठे, तए णं से बहुले माहणे ममं एज्जमाणं तहेव जाव ममं विउलेणं महुघयसंजुत्तेणं परमन्नेणं पडिला भेस्सामीति तुट्ठे सेसं जहा विजयस्स जाव बहुले माहणे बहु० । तए णं से गोसाले मंखलिपुत्ते ममं तंतुवायसालाए अपासमाणे रायगिहे नगरे सब्भिंतर-बाहिरियाए ममं सव्वओ समंता मग्गणगवेसणं करेति ममं कत्थवि सुतिं वा खुतिं वा पवत्तिं वा अलभ-माणे जेणेव तंतुवायसाला तेणेव उवा० २ साडियाओ य पाडियाओ य कुंडियाओ य पाहणाओ य चित्त-फलगं च माहणे आयामेति आयामेत्ता सउत्तरोट्ठं मुंडं कारेति स० २ तंतुवायसालाओ पडिनिक्खमति तं० २ णालंदं बाहिरियं मज्झंमज्झेणं निग्गच्छइ निग्ग० २ जेणेव कोल्लागसन्निवेसे तेणेव उवागच्छइ, तए णं तस्स कोल्लागस्स संनिवेसस्स बहिया बहिया बहुजणो अन्नमन्नस्स एवमाइक्खति जाव परूवेति–धन्ने णं देवाणुप्पिया ! बहुले माहणे तं चेव जाव जीवियफले बहुलस्स माहणस्स ब० २, तए णं तस्स गोसालस्स मंखलिपुत्तस्स बहुजणस्स अंतियं एयमट्ठं सोच्चा निसम्म अयमेयारूवे अब्भत्थिए जाव समुप्पज्जित्था–जारि-सिया णं ममं धम्मायरियस्स धम्मोवदेसगस्स समणस्स भगवओ महावीरस्स इड्ढी जुत्ती जसे बले वीरिए पुरिसक्कारपरक्कमे लद्धे पत्ते अभिसमन्नागए नो खलु अत्थि तारिसिया णं अन्नस्स कस्सइ तहारूवस्स सम-णस्स वा माहणस्स वा इड्ढी जुत्ती जाव परिक्कमे लद्धे पत्ते अभिसमन्नागए तं निस्संदिद्धं च णं एत्थ ममं धम्मायरिए धम्मोवदेसए समणे भगवं महावीरे भविस्सतीतिकट्टु कोल्लागसन्निवेसे सब्भिंतरबाहिरिए ममं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गोशालक-चरित्रं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [५४१]

दीप अनुक्रम [६३९]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥६६३॥

सव्वओ समंता मग्गणगवेसणं करेइ ममं सव्वओ जाव करेमाणे कोल्लागसंनिवेसस्स बहिया पणियभूमीए मए सद्धिं अभिसमन्नागए, तए णं से गोसाले मंखलिपुत्ते हट्ठतुट्ठे ममं तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं जाव नमंसित्ता एवं वयासी–तुज्झे णं भंते ! मम धम्मायरिया अहन्नं तुज्झं अंतेवासी, तए णं अहं गोयमा ! गोसालस्स मंखलिपुत्तस्स एयमट्ठं पडिसुणेमि, तए णं अहं गोयमा ! गोसालेणं मंखलिपुत्तेणं सद्धिं पणियभूमीए छव्वासाइं लाभं अलाभं सुखं दुक्खं सक्कारमसक्कारं पच्चणुब्भवमाणे अणिच्चजागरियं विहरित्था(सूत्रं५४१)॥

'आगारवासमज्झे वसित्त'त्ति अगारवासं–गृहवासमध्युष्य–आसेव्य 'एवं जहा भावणाए'त्ति आचारद्वितीयश्रुतस्कन्धस्य पञ्चदशेऽध्ययने, अनेन चेदं सूचितं—'समत्तपइन्ने नाहं समणो होहं अम्मापियरंमि जीवंते'त्ति समासाभिग्रह इत्यर्थः 'चिच्चा हिरन्नं चिच्चा सुवन्नं चिच्चा बल'मित्यादीनि, 'पढमं वासं'ति विभक्तिपरिणामात् प्रथम्यामतिपद्येः प्रथमे वर्षे 'निस्साए'त्ति निश्राय निश्रां कृत्वेत्यर्थः 'पढमं अंतरावासं'ति विभक्तिपरिणामादेष प्रथमेऽन्तरं–अवसरो वर्षस्य–वृष्टेर्यत्रासावन्तरवर्षः अथवाऽन्तरेऽपि–जिगमिषतक्षेत्रमप्राप्यापि यत्र सति साधुभिरवश्यमावासो विधीयते सोऽन्तरावासो–वर्षाकालस्तत्र 'वासावासं'ति वर्षासु वासः–चातुर्मासिकमवस्थानं वर्षावासस्तमुपागतः–उपाश्रितः।'दोच्चं वासं'ति द्वितीये वर्षे 'तंतुवायसाल'त्ति कुविन्दशाला 'अंजलिमउलियहत्थे'त्ति अञ्जलिना मुकुलितौ–मुकुलाकारौ कृतौ हस्तौ येन स तथा, 'दव्वसुद्धेणं'ति द्रव्यं–ओदनादिकं शुद्धं–उद्गमादिदोषरहितं यत्र दाने तत्तथा तेन 'दायगसुद्धेणं'ति दायकः शुद्धो यत्राशंसादिदोषरहितत्वात् तत्तथा तेन, एवमितरदपि, 'तिविहेणं'ति उक्तलक्षणेन त्रिविधेन, अथवा त्रिविधेन कृतकारिता-

॥६६३॥

१४ गोशालकशते श्रीवीरेण गोशालसंगमः सू ५४१

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गोशालक-चरित्रं

नुमतिमेदेन त्रिकरणशुद्धेन–मनोवाकायशुद्धेन 'वसुहारा वुट्ठ'त्ति वसुधारा द्रव्यरूपा धारा वृष्टा 'अहो दाणं'ति अहोशब्दो विस्मये 'कयत्थे णं'ति कृतार्थः–कृतस्वप्रयोजनः 'कयलक्खणे'त्ति कृतफललक्षण इत्यर्थः 'कया णं लोग'त्ति कृतौ शुभफलौ अवयवे समुदायोपचारात् लोकौ–इहलोकपरलोकौ 'जम्मजीवियफले'त्ति जन्मनो जीवितव्यस्य च यत्फलं तत्तथा 'तहारूवे साहु साहुरूवे'त्ति 'तथारूपे' तथाविधे अविज्ञातव्रतविशेष इत्यर्थः 'साधौ' श्रमणे 'साधुरूपे' साध्वाकारे, 'धम्मंतेवासि'त्ति शिल्पादिग्रहणार्थमपि शिष्यो भवतीत्यत उच्यते— धर्मान्तेवासी, 'खज्जगविहीए'त्ति खण्डखाद्यादिलक्षणभोजनप्रकारेण 'सव्वकामगुणिएणं'ति सर्वे कामगुणा–अभिलाषविषयभूता रसादयः सञ्जाता यत्र तत्सर्वकामगुणितं तेन 'परमन्नेणं'ति परमान्नेन–क्षीरेण्या 'आयामेत्थ'त्ति आचामितवान् तन्नोजनदानद्वारेणोच्छिष्टतासम्पादनेन तच्छुद्ध्यर्थमाचमनं कारितवान् भोजितवानिति तात्पर्यार्थः । 'सब्भिंतरबाहिरिए'त्ति सहाभ्यन्तरेण विभागेन बाह्येन च यत्तत्तथा तत्र 'मग्गणगवेसणं'ति अन्वयतो मार्गणं व्यतिरेकतो गवेषणं ततश्च समाहारद्वन्द्वः 'सुइं च'त्ति श्रूयत इति श्रुतिः–शब्दस्तां चक्षुषा किल दृश्यमानोऽर्थः शब्देन निश्चीयत इति श्रुतिग्रहणं 'सुई च'त्ति श्रवणं श्रुतिः–छीत्कृतं ताम्, एषाऽप्यदृश्यमनुष्यादिगमिका भवतीति गृहीता, 'पवत्तिं च'त्ति प्रवृत्तिं–वार्त्ता, 'साडियाओ'त्ति परिधानवस्त्राणि 'पाडियाओ'त्ति उत्तरीयवस्त्राणि, क्वचित् 'भंडियाओ'त्ति दृश्यते तत्र भण्डिका–रन्धनादिभाजनानि, 'माहणे आयामेति'त्ति शाटिकादीनर्थान् ब्राह्मणान् लम्भयति शाटिकादीन् ब्राह्मणेभ्यो ददातीत्यर्थः, 'सउत्तरोट्ठं'ति सह उत्तरौष्ठेन सोत्तरौष्ठं–सश्मश्रुकं यथा भवतीत्येवं 'मुंडं'ति मुण्डनं कारयति

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [५४१]

दीप अनुक्रम [६३९]

नापितेन 'पणियभूमीए'त्ति पणितभूमौ–भाण्डविश्रामस्थाने प्रणीतभूमौ वा–मनोज्ञभूमौ 'अभिसमन्नागए'त्ति मिलितः 'एयमट्ठं पडिसुणेमि'त्ति अभ्युपगच्छामि, यच्चैतस्यायोग्यस्याप्यभ्युपगमनं भगवतस्तदक्षीणरागतया परिचयेनेषत्स्नेहग-र्भानुकम्पासद्भावात् छद्मस्थतयाऽनागतदोषानवगमादवश्यंभावित्वाच्चैतस्यार्थस्येति भावनीयमिति । 'पणियभूमीए'त्ति पणितभूमेरारभ्य प्रणीतभूमौ वा–मनोज्ञभूमौ विहृतवानिति योगः,'अणिच्चजागरियं'ति अनित्यचिन्तां कुर्वन्निति वाक्यशेषः।

तए णं अहं गोयमा ! अन्नया कदाचि पढमसरदकालसमयंसि अप्पवुट्ठिकायंसि गोसालेणं मंखलिपुत्तेणं सद्धिं सिद्धत्थगामाओ नगराओ कुम्मारगामं नगरं संपट्ठीए विहाराए, तस्स णं सिद्धत्थस्स गामस्स नग-रस्स कुम्मारगामस्स नगरस्स य अंतरा एत्थ णं महं एगे तिलथंभए पत्तिए पुप्फिए हरियगरेरिज्जमाणे सिरीए अतीव २ उवसोभेमाणे २ चिट्ठइ, तए णं गोसाले मंखलिपुत्ते तं तिलथंभगं पासइ २ ममं वं० नमं०२ एवं वयासी–एस णं भंते ! तिलथंभए किं निप्फज्जिस्सइ नो निप्फज्जिस्सति ?, एए य सत्त तिल-पुप्फजीवा उदाइत्ता २ कहिं गच्छिहिंति कहिं उववज्जिहिंति ?, तए णं अहं गोयमा ! गोसालं मंखलिपुत्तं एवं वयासी–गोसाला ! एस णं तिलथंभए निप्फज्जिस्सइ नो न निप्फज्जिस्सइ, एए य सत्त तिलपुप्फजीवा उदाइत्ता २ एयस्स चेव तिलथंभगस्स एगाए तिलसंगुलियाए सत्त तिला पच्चायाइस्संति, तए णं से गोसाले मंखलिपुत्ते ममं एवं आइक्खमाणस्स एयमट्ठं नो सद्दहति नो पत्तियति नो रोएइ एयमट्ठं असद्दहमा० अप-त्तिय० अरोएमाणे ममं पणिहाए अयण्णं मिच्छावादी भवउत्तिकट्टु ममं अंतियाओ सणियं २ पच्चोसक्कइ

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गोशालक-चरित्रं

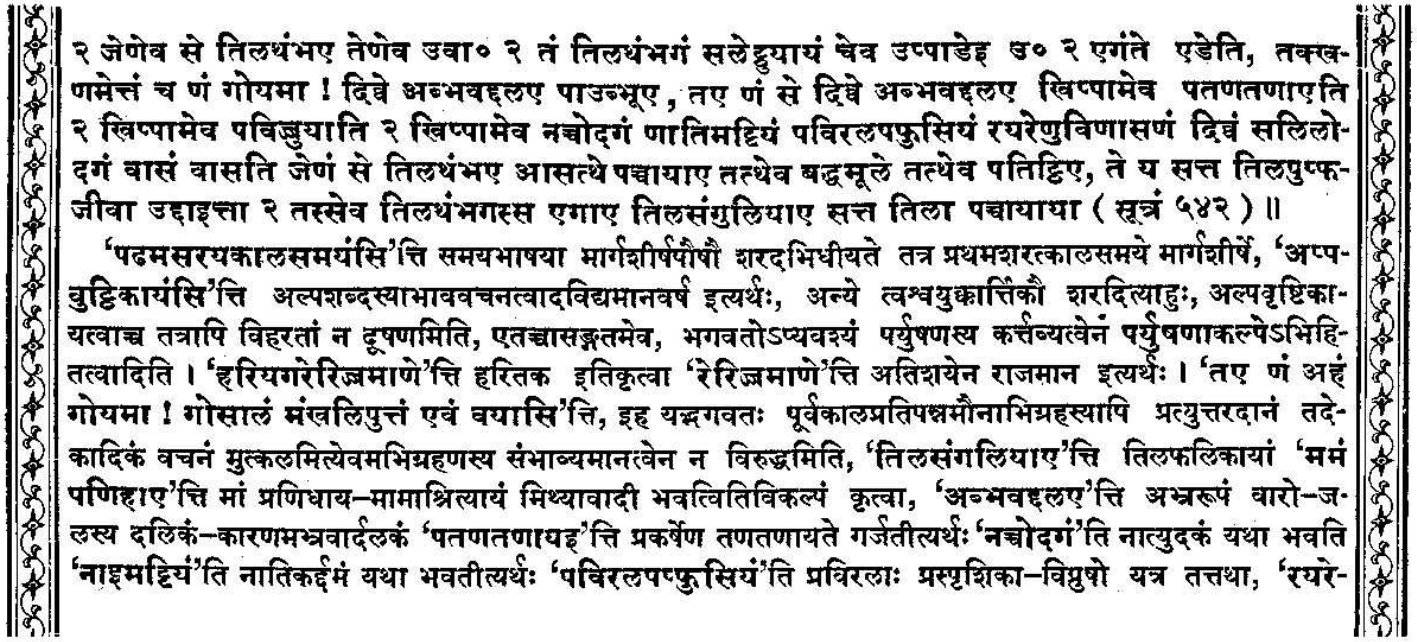

२ जेणेव से तिलथंभए तेणेव उवा० २ तं तिलथंभगं सलेट्ठुयायं चेव उप्पाडेइ उ० २ एगंते एडेति, तक्खणमेत्तं च णं गोयमा ! दिवे अब्भवद्दलए पाउब्भूए, तए णं से दिवे अब्भवद्दलए खिप्पामेव पतणतणाएति २ खिप्पामेव पविज्जुयाति २ खिप्पामेव नच्चोदगं णातिमट्टियं पविरलपफुसियं रयरेणुविणासणं दिवं सलिलोदगं वासं वासति जेणं से तिलथंभए आसत्थे पच्चायाए तत्थेव बद्धमूले तत्थेव पतिट्ठिए, ते य सत्त तिलपुप्फजीवा उद्दाइत्ता २ तस्सेव तिलथंभगस्स एगाए तिलसंगुलियाए सत्त तिला पच्चायाया (सूत्रं ५४२) ॥

'पढमसरयकालसमयंसि'त्ति समयभाषया मार्गशीर्षपौषौ शरदभिधीयते तत्र प्रथमशरत्कालसमये मार्गशीर्षे, 'अप्पवुट्ठिकायंसि'त्ति अल्पशब्दस्याभाववचनत्वादविद्यमानवर्षे इत्यर्थः, अन्ये त्वश्वयुक्कार्त्तिकौ शरदित्याहुः, अल्पवृष्टिकायत्वाच्च तत्रापि विहरतां न दूषणमिति, एतच्चासङ्गतमेव, भगवतोऽप्यवश्यं पर्युषणस्य कर्त्तव्यत्वेन पर्युषणाकल्पेऽभिहितत्वादिति । 'हरियगरेरिज्जमाणे'त्ति हरितक इतिकृत्वा 'रेरिज्जमाणे'त्ति अतिशयेन राजमान इत्यर्थः । 'तए णं अहं गोयमा ! गोसालं मंखलिपुत्तं एवं वयासि'त्ति, इह यद्भगवतः पूर्वकालप्रतिपन्नमौनाभिग्रहस्यापि प्रत्युत्तरदानं तदेकादिकं वचनं मुत्कलमित्येवमभिग्रहणस्य संभाव्यमानत्वेन न विरुद्धमिति, 'तिलसंगलियाए'त्ति तिलफलिकायां 'ममं पणिहाए'त्ति मां प्रणिधाय–मामाश्रित्यायं मिथ्यावादी भवत्वितिविकल्पं कृत्वा, 'अब्भवद्दलए'त्ति अभ्ररूपं वारो–जलस्य दलिकं–कारणमभ्रवार्दलकं 'पतणतणायइ'त्ति प्रकर्षेण तणतणायते गर्जतीत्यर्थः 'नच्चोदगं'ति नात्युदकं यथा भवति 'नाइमट्टियं'ति नातिकर्दमं यथा भवतीत्यर्थः 'पविरलपप्फुसियं'ति प्रविरलाः प्रस्पृशिका–विप्रुषो यत्र तत्तथा, 'रयरे-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	गोशालक-चरित्रं

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥६६५॥

णुविणासणं'ति रजो–वातोत्थापितं व्योमवर्त्ति रेणवश्च–भूमिस्थितपांशवस्तद्विनाशनं–तदुपशमकं, 'सलिलोदगवासं'ति सलिलाः–शीतादिमहानद्यस्तासामिव यदुदकं–रसादिगुणसाधर्म्यादिति तस्य यो वर्षः स सलिलोदकवर्षोऽतस्तं, 'बद्धमूले'त्ति बद्धमूलः सन् 'तत्थेव पइट्ठिए'त्ति यत्र पतितस्तत्रैव प्रतिष्ठितः

तए णं अहं गोयमा ! गोसालेणं मंखलिपुत्तेणं सद्धिं जेणेव कुंडग्गामे नगरे तेणेव उवा०, तए णं तस्स कुंडग्गामस्स नगरस्स बहिया वेसियायणे नामं बालतवस्सी छट्ठंछट्ठेणं अणिक्खित्तेणं तवोकम्मेणं उड्ढं बाहाओ पगिज्झिय २ सूराभिमुहे आयावणभूमीए आयावेमाणे विहरइ आइच्चतेयतविआओ य से छप्पईओ सव्वओ समंता अभिनिस्सवंति पाणभूयजीवसत्तदयट्ठयाए च णं पडियाओ २ तत्थेव २ भुज्जो २ पचोरुभेति, तए णं से गोसाले मंखलिपुत्ते वेसियायणं बालतवस्सिं पासति पा० २ ममं अंतियाओ सणियं २ पच्चोसक्कइ ममं० २ जेणेव वेसियायणे बालतवस्सी तेणेव उवा० २ वेसियायणं बालतवस्सिं एवं वयासी–किं भवं मुणी मुणिए उदाहु जूयासेज्जायरए ?, तए णं से वेसियायणे बालतवस्सी गोसालस्स मंखलिपुत्तस्स एयमट्ठं णो आढाति नो परियाणाति तुसिणीए संचिट्ठति, तए णं से गोसाले मंखलिपुत्ते वेसियायणं बालतवस्सिं दोच्चंपि तच्चंपि एवं वयासी–किं भवं मुणी मुणिए जाव सेज्जायरए, तए णं से वेसियायणे बालतवस्सी गोसालेणं मंखलिपुत्तेणं दोच्चंपि तच्चंपि एवं वुत्ते समाणे आसुरुत्ते जाव मिसिमिसेमाणे आयावणभूमीओ पच्चोरुभति आ० २ तेयासमुग्घाएणं समोहन्नइ तेयासमुग्घाएणं समोहन्नित्ता सत्तट्ठपयाइं पच्चोसक्कइ

१५ गोशालकशते वैश्यायनतेजोलेश्या सू ५४३

॥६६५॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गोशालक-चरित्रं

स० २ गोसालस्स मंखलिपुत्तस्स वहाए सरीरगंसि तेयं निसिरइ, तए णं अहं गोयमा ! गोसालस्स मंखलिपुत्तस्स अणुकंपणट्ठयाए वेसियायणस्स बालतवस्सिस्स तेयपडिसाहरणट्ठयाए एत्थ णं अंतरा अहं सीयलियं तेयलेस्सं निसिरामि जाए सा ममं सीयलियाए तेयलेस्साए वेसियायणस्स बालतवस्सिस्स सीओसिणा तेयलेस्सा पडिहया, तए णं से वेसियायणे बालतवस्सी ममं सीयलियाए तेयलेस्साए सीओसिणं तेयलेस्सं पडिहयं जाणित्ता गोसालस्स मंखलिपुत्तस्स सरीरगस्स किंचि आबाहं वा वाबाहं वा छविच्छेदं वा अकीरमाणं पासित्ता सीओसिणं तेयलेस्सं पडिसाहरइ सीओ० २ ममं एवं वयासी–से गयमेयं भगवं ! से गयमेयं भगवं !, तए णं गोसाले मंखलिपुत्ते ममं एवं वयासी–किण्हं भंते ! एस जूयासिज्जायरए तुज्झे एवं वयासी–से गयमेयं भगवं ! गयगयमेयं भगवं !, तए णं अहं गोयमा ! गोसालं मंखलिपुत्तं एवं वयासी–तुमं णं गोसाला ! वेसियाघरणं बालतवस्सिं पाससि पासित्ता ममं अंतियाओ तुसिणियं २ पच्चोसक्कसि जेणेव वेसियायणे बालतवस्सी तेणेव उवागच्छसि ते० २ वेसियायणं बालतवस्सिं एवं वयासी–किं भवं मुणी मुणिए उदाहु जूयासेज्जायरए ?, तए णं से वेसियायणे बालतवस्सी तव एयमट्ठं नो आढाति नो परिजाणाति तुसिणीए संचिट्ठइ, तए णं तुमं गोसाला वेसियायणं बालतवस्सिं दोच्चंपि तच्चंपि एवं वयासी–किं भवं मुणी मुणिए जाव सेज्जायरए, तए णं से वेसियायणे बालतवस्सी तुमं दोच्चंपि तच्चंपि एवं वुत्ते समाणे आसुरुत्ते जाव पच्चोसक्कति प० २ तव वहाए सरीरगंसि तेयलेस्सं निस्सरइ, तए णं अहं गोसाला ! तव

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गोशालक-चरित्रं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [५४३--५४६]

दीप अनुक्रम [६४१-६४४]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥६६६॥

अणुकंपणट्ठयाए वेसियायणस्स बालतवस्सिस्स सीयतेयलेस्सापडिसाहरणट्ठयाए एत्थ णं अंतरा सीयलिय-तेयलेस्सं निसिरामि जाव पडिहयं जाणित्ता तव य सरीरगस्स किंचि आबाहं वा वाबाहं वा छविच्छेदं वा अकीरमाणं पासेत्ता सीओसिणं तेयलेस्सं पडिसाहरति सी० २ ममं एवं वयासी–से गयमेयं भगवं गय-२ मेयं भगवं ?, तए णं से गोसाले मंखलिपुत्ते ममं अंतियाओ एयमट्ठं सोचा निसम्म भीए जाव संजाय-भये ममं वंदति नमंसति ममं २ एवं वयासी–कहन्नं भंते ! संखित्तविउलतेयलेस्से भवति ?, तए णं अहं गोयमा ! गोसालं मंखलिपुत्तं एवं वयासी–जेणं गोसाला एगाए सणहाए कुम्मासपिंडियाए एगेण य विय-डासएणं छट्ठंछट्ठेणं अनिक्खित्तेणं तवोकम्मेणं उड्ढं बाहाओ पगिज्झिय २ जाव विहरति से णं अंतो छण्हं मासाणं संखित्तविउलतेयलेस्से भवति, तए णं से गोसाले मंखलिपुत्ते ममं एयमट्ठं सम्मं विणएणं पडिसुणेति (सूत्रं ५४३)। तए णं अहं गोयमा ! अन्नदा कदाइ गोसालेणं मंखलिपुत्तेणं सद्धिं कुम्मगामाओ नगराओ सिद्धत्थग्गामं नगरं संपट्ठिए विहाराए जाहे य मो तं देसं हव्वमागया जत्थ णं से तिलथंभए, तए णं से गोसाले मंखलिपुत्ते एवं वयासी–तुब्भे णं भंते ! तदा ममं एवं आइक्खह जाव परूवेह–गोसाला ! एस णं तिलथंभए निप्फज्जिस्सइ तं चेव जाव पन्नाइस्संति तण्णं मिच्छा इमं च णं पच्चक्खमेव दीसइ एस णं से तिलथंभए णो निप्फन्ने अनिप्फन्नमेव ते य सत्त तिलपुप्फजीवा उदाइत्ता २ नो एयस्स चेव तिलथंभगस्स एगाए तिलसंगुलियाए सत्त तिला पच्चायाया, तए णं अहं गोयमा ! गोसालं मंखलिपुत्तं एवं वयासी–तुमं

१५ गोशा-लकशते षडुट्टपरि-हारः सू ५४४

॥६६६॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गोशालक-चरित्रं

णं गोसाला ! तदा ममं एवं आइक्खमाणस्स जाव परूवेमाणस्स एयमट्ठं नो सद्दहसि नो पत्तियसि नो रोयसि एयमट्ठं असद्दहमाणे अपत्तियमाणे अरोएमाणे ममं पणिहाए अयन्नं मिच्छावादी भवउत्तिकट्टु ममं अंतियाओ सणियं २ पच्चोसक्कसि प० २ जेणेव से तिलथंभए तेणेव उवा० २ जाव एगंतमंते एडेसि, तक्खणमेत्तं गोसाला ! दिव्वे अब्भवद्दलए पाउब्भूए, तए णं से दिव्वे अब्भवद्दलए खिप्पामेव तं चेव जाव तस्स चेव तिलथंभगस्स एगाए तिलसंगुलियाए सत्त तिला पच्चायाया, तं एस णं गोसाला ! से तिलथंभए निप्फन्ने णो अनिप्फन्नमेव, ते य सत्त तिलपुप्फजीवा उद्दाइत्ता २ एयस्स चेव तिलथंभयस्स एगाए तिलसंगुलियाए सत्त तिला पच्चायाया, एवं खलु गोसाला ! वणस्सइकाइया पउट्टपरिहारं परिहरंति, तए णं से गोसाले मंखलिपुत्ते ममं एवमाइक्खमाणस्स जाव परूवेमाणस्स एयमट्ठं नो सद्दहति ३ एयमट्ठं असद्दहमाणे जाव अरोएमाणे जेणेव से तिलथंभए तेणेव उवा० २ ताओ तिलथंभयाओ तं तिलसंगुलियं खुड्डति खुड्डित्ता करयलंसि सत्त तिले पप्फोडेइ,तए णं तस्स गोसालस्स मंखलिपुत्तस्स ते सत्त तिले गणमाणस्स अयमेयारूवे अब्भत्थिए जाव समुप्पज्जित्था–एवं खलु सव्वजीवावि पउट्टपरिहारं परिहरंति,एस णं गोयमा ! गोसालस्स मंखलिपुत्तस्स पउट्टे एस णं गोयमा ! गोसालस्स मंखलिपुत्तस्स ममं अंतियाओ आयाए अवक्कमणे पं० (सूत्रं ५४४) तए णं से गोसाले मंखलिपुत्ते एगाए सणहाए कुम्मासपिंडियाए य एगेण य वियडासएणं छट्ठंछट्ठेणं अनिक्खित्तेणं तवोकम्मेणं उड्ढं बाहाओ पगिज्झिय२ जाव विहरइ, तए णं से गोसाले मंखलिपुत्ते अंतो छण्हं मासाणं संखित्तविउलते-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [५४३--५४६]

दीप अनुक्रम [६४१-६४४]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥६६७॥

यलेसे जाए (सूत्रं ५४५) तए णं तस्स गोसालस्स मंखलिपुत्तस्स अन्नया कयावि इमे छद्दिसाचरा अंतिय पाउब्भवित्था तं–साणो तं चेव सवं जाव अजिणे जिणसद्दं पगासेमाणे विहरति, तं नो खलु गोयमा ! गोसाले मंखलिपुत्ते जिणे जिणप्पलावी जाव जिणसद्दं पगासेमाणे विहरइ, गोसाले णं मंखलिपुत्ते अजिणे जिणप्पलावी जाव पगासेमाणे विहरइ, तए णं सा महतिमहालया महच्चपरिसा जहा सिवे जाव पडिगया। तए णं सावत्थीए नगरीए सिंघाडगजाव बहुजणो अन्नमन्नस्स जाव परूवेइ–जन्नं देवाणुप्पिया ! गोसाले मंखलिपुत्ते जिणे जिणप्पलावी जाव विहरइ तं मिच्छा, समणे भगवं महावीरे एवं आइक्खइ जाव परूवेइ-एवं खलु तस्स गोसालस्स मंखलिपुत्तस्स मंखली नामं मंखपिता होत्था, तए णं तस्स मंखलिस्स एवं चेव तं सवं भाणियवं जाव अजिणे जिणसद्दं पगासेमाणे विहरइ, तं नो खलु गोसाले मंखलिपुत्ते जिणे जिणप्पलावी जाव विहरइ गोसाले मंखलिपुत्ते अजिणे जिणप्पलावी जाव विहरइ, समणे भगवं महावीरे जिणे जिणप्पलावी जाव जिणसद्दं पगासेमाणे विहरइ, तए णं से गोसाले मंखलिपुत्ते बहुजणस्स अंतियं एयमट्ठं सोच्चा निसम्म आसुरुत्ते जाव मिसिमिसेमाणे आयावणभूमीओ पच्चोरुहइ आयावणभूमीओ पच्चोरुहइत्ता सावत्थिं नगरिं मज्झंमज्झेणं जेणेव हालाहलाए कुंभकारीए कुंभकारावणे तेणेव उवागच्छइ तेणे० २ हालाहलाए कुंभकारीए कुंभकारावणंसि आजीवियसंघसंपरिवुडे महया अमरिसं वहमाणे एवं वावि विहरइ (सूत्रं ५४६)॥

'पाणभूयजीवसत्तदयट्ठयाए'त्ति प्राणादिषु समान्येन या दया सैवार्थः प्राणादिदयार्थस्तद्भावस्तत्ता तया, अथवा

१५ गोशालकशते पञ्चमपरिहारः तेजोलेश्या वीरो पर्यमर्षः सू ५४४-५४६

॥६६७॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गोशालक-चरित्रं

षट्पदिका एव प्राणानामुच्छ्वासादीनां भावात्प्राणाः भवनधर्म्मकत्वाद्भूताः उपयोगलक्षणत्वाज्जीवाः सत्त्वोपपेतत्वात्सत्त्वास्ततः कर्म्मधारयस्तदर्थतायै, चशब्दः पुनरर्थः, 'तत्थेव'त्ति शिरःप्रभृतिके, 'किं भवं मुणी मुणिए'त्ति किं भवान् 'मुनिः' तपस्वी जातः 'मुनिए'त्ति ज्ञाते तत्त्वे सति ज्ञात्वा वा तत्त्वम्, अथवा किं भवान् 'मुनी' तपस्विनी 'मुणिए'त्ति मुनिकः–तपस्वीति, अथवा किं भवान् 'मुनिः' यतिः उत 'मुणिकः' ग्रहगृहीतः 'उदाहु'त्ति उताहो इति विकल्पार्थो निपातः 'जूयासेज्जायरए'त्ति यूकानां स्थानदातेति, 'सत्तट्ठ पयाइं पच्चोसक्कइ'त्ति प्रयत्नविशेषार्थमुरभ्र इव प्रहारदानार्थमिति, 'सीउसिणं तेयलेस्सं'ति स्वां–स्वकीयामुष्णां तेजोलेश्यां 'से गयमेयं भगवं गयगयमेवं भगवं'ति अथ गतं–अवगतमेतन्मया हे भगवन्! यथा भगवतः प्रसादादयं न दग्धः, सम्भ्रमार्थत्वाच्च गतशब्दस्य पुनः पुनरुच्चारणम्, इह च यद्गोशालकस्य संरक्षणं भगवता कृतं तत्सरागत्वेन दयैकरसत्वाद्भगवतः, यच्च सुनक्षत्रसर्वानुभूतिमुनिपुङ्गवयोर्न करिष्यति तद्वीतरागत्वेन लब्ध्यनुपजीवकत्वादवश्यंभाविभावत्वाद्वेत्यवसेयमिति। 'संखित्तविउलतेयलेसे'त्ति सङ्क्षिप्ताऽप्रयोगकाले विपुला प्रयोगकाले तेजोलेश्या–लब्धिविशेषो यस्य स तथा, 'सनहाए'त्ति सनखया यस्यां पिण्डिकायां बध्यमानायामङ्गुलीनखा अङ्गुष्ठस्याधो लगन्ति सा सनखेत्युच्यते 'कुम्मासपिंडियाए'त्ति कुल्माषाः–अर्द्धस्विन्ना मुद्गादयो माषा इत्यन्ये 'वियडासएणं'ति विकटं–जलं तस्याशयः आश्रयो वा–स्थानं विकटाशयो विकटाश्रयो वा तेन, अमुं च प्रस्तावाच्चुलुकमाहुर्वृद्धाः, 'जाहे य मो'त्ति यदा च स्मो–भवामो वयं 'अनिप्फन्नमेव'त्ति मकारस्यागमिकत्वादनिष्पन्न एव। 'वणस्सइकाइयाओ पउट्टपरिहारं परिहरंति'त्ति परिवृत्य २–मृत्वा २ यस्तस्यैव वनस्पतिशरीरस्य परिहारः–परिभोगस्तत्रैवोत्पा-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥६६८॥

दोऽसौ परिवृत्यपरिहारस्तंपरिहरन्ति–कुर्वन्तीत्यर्थः, 'खुड्डुइ'त्ति त्रोटयति 'पउट्टे'त्ति परिवर्त्तः परिवर्त्तवाद इत्यर्थः 'आयाए अवक्कमणे'त्ति आत्मनाऽऽदाय चोपदेशम् 'अपक्कमणम्' अपसरणं 'जहा सिवे'त्ति शिवराजर्षिचरिते 'महया अमरिस'त्ति महान्तममर्षम् 'एवं वावि'त्ति एवं चेति प्रज्ञापकोपदर्श्यमानकोपचिह्नम्, अपीति समुच्चये ।

तेणं कालेणं २ समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतेवासी आणंदे नामं थेरे पगइभद्दए जाव विणीए छट्ठंछट्ठेणं अणिक्खित्तेणं तवोकम्मेणं संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरइ, तए णं से आणंदे थेरे छट्ठक्खमणपारणगंसि पढमाए पोरिसीए एवं जहा गोयमसामी तहेव आपुच्छइ तहेव जाव उच्चनीयमज्झिमजाव अडमाणे हालाहलाए कुंभकारीए कुंभकारावणस्स अदूरसामंते वीइवयइ, तए णं से गोसाले मंखलिपुत्ते आणंदं थेरं हालाहलाए कुंभकारीए कुंभकारावणस्स अदूरसामंतेणं वीइवयमाणं पासइ पा० २ एवं वयासी–एहि ताव आणंदा ! इओ एगं महं उवमियं निसामेहि, तए णं से आणंदे थेरे गोसालेणं मंखलिपुत्तेणं एवं वुत्ते समाणे जेणेव हालाहलाए कुंभकारीए कुंभकारावणे जेणेव गोसाले मंखलिपुत्ते तेणेव उवागच्छति, तए णं से गोसाले मंखलिपुत्ते आणंदं थेरं एवं वयासी–एवं खलु आणंदा ! इतो चिरातीयाए अद्धाए केइ उच्चावगा वणिया अत्थअत्थी अत्थलुद्धा अत्थगवेसी अत्थकंखिया अत्थपिवासा अत्थगवेसणयाए णाणाविहविउलपणियभंडमायाए सगडीसागडेणं सुबहुं भत्तपाणं पत्थयणं गहाय एगं महं अगामियं अणोहियं छिन्नावायं दीहमद्धं अडविं अणुप्पविट्ठा, तए णं तेसिं वणियाणं तीसे अकामियाए अणोहियाए छिन्नावायाए दीहमद्धाए

१५ गोशालकशते आनन्दाय गोशालोक्तो वणिग्दृष्टान्तःसू ५४७

॥६६८॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गोशालक-चरित्रं

अडवीए किंचि देसं अणुप्पत्ताणं समाणाणं से पुव्वगहिए उदए अणुपुव्वेणं परिभुंजेमाणे परि० २ खीणे, तए णं ते वणिया खीणोदगा समाणा तण्हाए परिब्भवमाणा अन्नमन्नं सद्दावेंति अन्न० २ एवं व०–एवं खलु देवाणुप्पिया ! अम्हं इमीसे अगामियाए जाव अडवीए किंचि देसं अणुप्पत्ताणं समाणाणं से पुव्वगहिए उदए अणुपुव्वेणं परिभुंजेमाणे परि० खीणे तं सेयं खलु देवाणुप्पिया ! अम्हं इमीसे अगामियाए जाव अडवीए उदगस्स सव्वओ समंता मग्गणगवेसणं करेत्तएत्तिकट्टु अन्नमन्नस्स अंतिए एयमट्ठं पडिसुणेंति अन्न० २ तीसे णं अगामियाए जाव अडवीए उदगस्स सव्वओ समंता मग्गणगवेसणं करेंति उदगस्स सव्वओ समंता मग्गणगवेसणं करेमाणा एगं महं वणसंडं आसादेंति किण्हं किण्होभासं जाव निकुरंबभूयं पासादीयं जाव पडिरूवं, तस्स णं वणसंडस्स बहुमज्झदेसभाए एत्थ णं महेगं वम्मीयं आसादेंति, तस्स णं वम्मियस्स चत्तारि वप्पुओ अब्भुग्गयाओ अभिनिसढाओ तिरियं सुसंपग्गहियाओ अहे पन्नगद्धरूवाओ पन्नगद्धसंठाणसंठियाओ पासादीयाओ जाव पडिरूवाओ, तए णं ते वाणिया हट्ठतुट्ठ० अन्नमन्नं सद्दावेंति अ० २ एवं वयासी–एवं खलु देवा० ! अम्हे इमीसे अगामियाए जाव सव्वओ समंता मग्गणगवेसणं करेमाणेहिं इमे वणसंडे आसादिए किण्हे किण्होभासे इमस्स णं वणसंडस्स बहुमज्झदेसभाए इमे वम्मीए आसादिए इमस्स णं वम्मीयस्स चत्तारि वप्पुओ अब्भुग्गयाओ जाव पडिरूवाओ तं सेयं खलु देवाणुप्पिया ! अम्हं इमस्स वम्मीयस्स पढमं वप्पिं भिन्दित्तए अवि याइं ओरालं उदगरयणं अस्सादेस्सामो, तए णं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

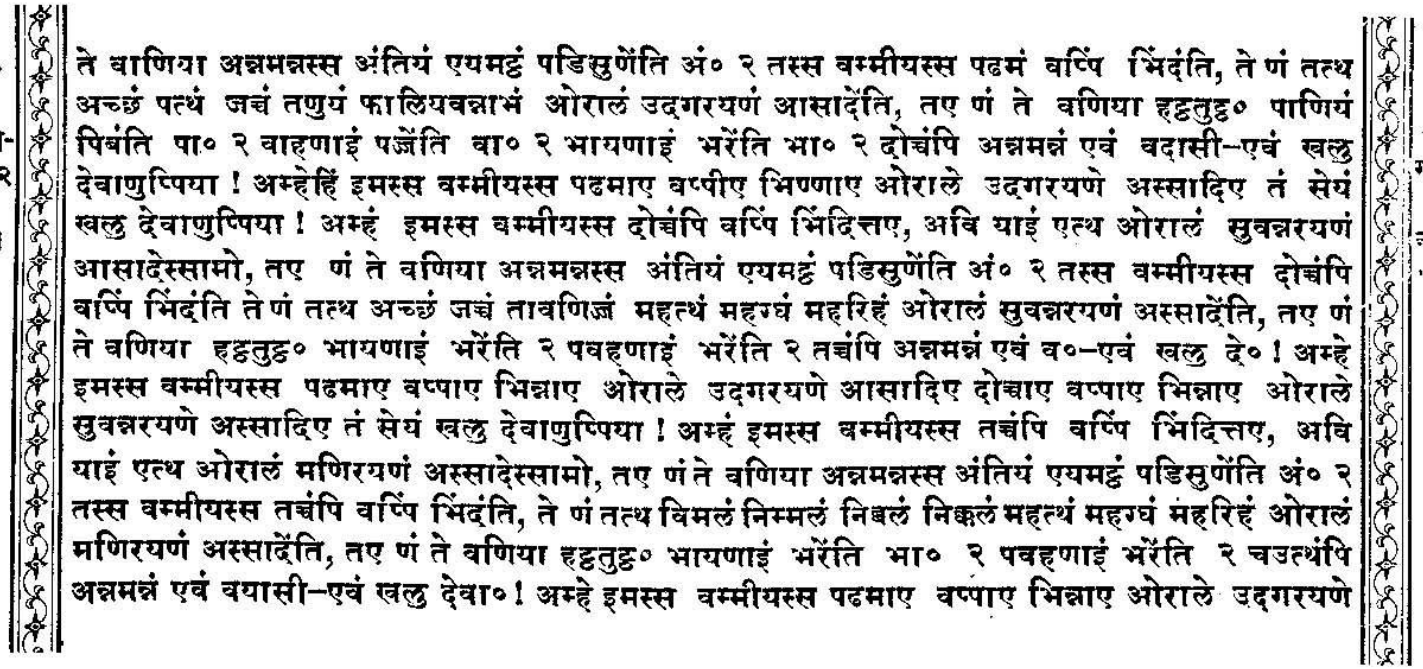

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥६६९॥

ते वाणिया अन्नमन्नस्स अंतियं एयमट्ठं पडिसुणेंति अं० २ तस्स वम्मीयस्स पढमं वप्पिं भिंदंति, ते णं तत्थ अच्छं पत्थं जच्चं तणुयं फालियवन्नाभं ओरालं उदगरयणं आसादेंति, तए णं ते वणिया हट्ठतुट्ठ० पाणियं पिबंति पा० २ वाहणाइं पज्जेंति वा० २ भायणाइं भरेंति भा० २ दोच्चंपि अन्नमन्नं एवं वदासी–एवं खलु देवाणुप्पिया ! अम्हेहिं इमस्स वम्मीयस्स पढमाए वप्पीए भिण्णाए ओराले उदगरयणे अस्सादिए तं सेयं खलु देवाणुप्पिया ! अम्हं इमस्स वम्मीयस्स दोच्चंपि वप्पिं भिंदित्तए, अवि याइं एत्थ ओरालं सुवन्नरयणं आसादेस्सामो, तए णं ते वणिया अन्नमन्नस्स अंतियं एयमट्ठं पडिसुणेंति अं० २ तस्स वम्मीयस्स दोच्चंपि वप्पिं भिंदंति ते णं तत्थ अच्छं जच्चं तावणिज्जं महत्थं महग्घं महरिहं ओरालं सुवन्नरयणं अस्सादेंति, तए णं ते वणिया हट्ठतुट्ठ० भायणाइं भरेंति २ पवहणाइं भरेंति २ तच्चंपि अन्नमन्नं एवं व०–एवं खलु दे० ! अम्हे इमस्स वम्मीयस्स पढमाए वप्पाए भिन्नाए ओराले उदगरयणे आसादिए दोच्चाए वप्पाए भिन्नाए ओराले सुवन्नरयणे अस्सादिए तं सेयं खलु देवाणुप्पिया ! अम्हं इमस्स वम्मीयस्स तच्चंपि वप्पिं भिंदित्तए, अवि याइं एत्थ ओरालं मणिरयणं अस्सादेस्सामो, तए णं ते वणिया अन्नमन्नस्स अंतियं एयमट्ठं पडिसुणेंति अं० २ तस्स वम्मीयस्स तच्चंपि वप्पिं भिंदंति, ते णं तत्थ विमलं निम्मलं निबलं निक्कलं महत्थं महग्घं महरिहं ओरालं मणिरयणं अस्सादेंति, तए णं ते वणिया हट्ठतुट्ठ० भायणाइं भरेंति भा० २ पवहणाइं भरेंति २ चउत्थंपि अन्नमन्नं एवं वयासी–एवं खलु देवा० ! अम्हे इमस्स वम्मीयस्स पढमाए वप्पाए भिन्नाए ओराले उदगरयणे

१४ गोशालकशते आनन्दाय गोशालोक्तो वणिग्दृष्टान्तः सू ५४७

॥६६९॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अस्सादिए दोच्चाए वप्पाए भिन्नाए ओराले सुवण्णरयणे अस्सादिए तच्चाए वप्पाए भिन्नाए ओराले मणि-
रयणे अस्सादिए तं सेयं खलु देवाणुप्पिया ! अम्हं इमस्स वम्मीयस्स चउत्थंपि वप्पिं भिंदित्तए अवि याइं
उत्तमं महग्घं महरिहं ओरालं वइररयणं अस्सादेस्सामो, तए णं तेसिं वणियाणं एगे वणिए हियकामए
सुहकामए पत्थकामए आणुकंपिए निस्सेसिए हियसुहनिस्सेसकामए ते वणिए एवं वयासी–एवं खलु देवा० !
अम्हे इमस्स वम्मीयस्स पढमाए वप्पाए भिन्नाए ओराले उदगरयणे जाव तच्चाए वप्पाए भिन्नाए ओराले
मणिरयणे अस्सादिए तं होउ अलाहि पज्जत्तं एसा चउत्थी वप्पा मा भिज्जउ, चउत्थी णे वप्पा सउवसग्गा यावि
होत्था, तए णं ते वणिया तस्स वणियस्स हियकामगस्स सुहकामजाव हियसुहनिस्सेसकामगस्स एवमाइ-
क्खमाणस्स जाव परूवेमाणस्स एयमट्ठं नो सद्दहंति जाव नो रोयंति, एयमट्ठं असद्दहमाणा जाव अरोए-
माणा तस्स वम्मीयस्स चउत्थंपि वप्पिं भिंदंति, ते णं तत्थ उग्गविसं चंडविसं घोरविसं महाविसं अतिकाय-
महाकायं मसिमूसाकालगयं नयणविसरोसपुन्नं अंजणपुंजनिगरप्पगासं रत्तच्छं जमलजुयलचंचलचलंतजीहं
धरणितलवेणियभूयं उक्कडफुडकुडिलजडुलकक्खडविकडफडाडोवकरणदच्छं लोहागरधम्ममाणधमधमेंतघोसं
अणागलियचंडतिव्वरोसं समुहिं तुरियं चवलं धमंतं दिट्ठीविसं सप्पं संघट्टेंति, तए णं से दिट्ठीविसे सप्पे तेहिं
वणिएहिं संघट्टिए समाणे आसुरुत्ते जाव मिसमिसेमाणे सणियं २ उट्ठेति २ सरसरसरस्स वम्मीयस्स सिह-
रतलं दुरूहेइ सि० २ आइचं णिज्झाति आ० २ ते वणिए अणिमिसाए दिट्ठीए सव्वओ समंता समभिलोएति,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	गोशालक-चरित्रं

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥६७०॥

तए णं ते वणिया तेणं दिट्ठीविसेणं सप्पेणं अणिमिसाए दिट्ठीए सव्वओ समंता समभिलोइया समाणा खिप्पामेव सभंडमत्तोवगरणया एगाहच्चं कूडाहच्चं भासरासी कया यावि होत्था, तत्थ णं जे से वणिए तेसिं वणियाणं हियकामए जाव हियसुहनिस्सेसकामए से णं अणुकंपयाए देवयाए सभंडमत्तोवगरणमायाए नियगं नगरं साहिए, एवामेव आणंदा ! तवंवि धम्मायरिएणं धम्मोवएसएणं समणेणं नायपुत्तेणं ओराले परियाए आसाइए ओराला कित्तिवन्नसद्दसिलोगा सदेवमणुयासुरे लोए पुव्वंति गुव्वंति थुव्वंति इति खलु समणे भगवं महावीरे इति० २, तं जदि मे से अज्जज्ज किंचिवि वदति तो णं तवेणं तेएणं एगाहच्चं कूडाहच्चं भासरासिं करेमि जहा वा वालेणं ते वणिया, तुमं च णं आणंदा ! सारक्खामि संगोवामि जहा वा से वणिए तेसिं वणियाणं हियकामए जाव निस्सेसकामए अणुकंपयाए देवयाए सभंडमत्तोव० जाव साहिए, तं गच्छ णं तुमं आणंदा ! तव धम्मायरियस्स धम्मोवएसगस्स समणस्स नायपुत्तस्स एयमट्ठं परिकहेहि । तए णं से आणंदे थेरे गोसालेणं मंखलिपुत्तेणं एवं वुत्ते समाणे भीए जाव संजायभए गोसालस्स मंखलिपुत्तस्स अंतियाओ हालाहलाए कुंभकारीए कुंभकारावणाओ पडिनिक्खमति २ सिग्घं तुरियं सावत्थिं नगरिं मज्झंमज्झेणं निग्गच्छइ नि० जेणेव कोट्ठए चेइए जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवा० २ समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं करेति २ वंदति नमं० २ एवं व०–एवं खलु अहं भंते ! छट्ठक्खमणपारणगंसि तुज्झेहिं अब्भणुन्नाए समाणे सावत्थीए नगरीए उच्चनीयजाव अडमाणे हालाहलाए कुंभकारीए जाव वीयी-

१५ गोशालकशते आनन्दाय गोशालोक्तो वणिग्दृष्टान्तः सू ५४७

॥६७०॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गोशालक-चरित्रं

वयामि, तए णं गोसाले मंखलिपुत्ते ममं हालाहलाए जाव पासित्ता एवं वयासी–एहि ताव आणंदा ! इओ एगं महं उवमियं निसामेहि, तए णं अहं गोसालेणं मंखलिपुत्तेणं एवं वुत्ते समाणे जेणेव हालाहलाए कुंभकारीए कुंभकारावणे जेणेव गोसाले मंखलिपुत्ते तेणेव उवागच्छामि, तए णं से गोसाले मंखलिपुत्ते ममं एवं वयासी–एवं खलु आणंदा ! इओ चिरातीयाए अद्धाए केइ उच्चावया वणिया एवं तं चेव जाव सव्वं निरवसेसं भाणियव्वं जाव नियगनगरं साहिए तं गच्छ णं तुमं आणंदा ! धम्मायरियस्स धम्मोव० जाव परिकहेहि (सूत्रं ५४७) तं पभू णं भंते ! गोसाले मंखलिपुत्ते तवेणं तेएणं एगाहच्चं कूडाहच्चं भासरासिं करेत्तए ? विसए णं भंते ! गोसालस्स मंखलिपुत्तस्स जाव करेत्तए ? समत्थे णं भंते ! गोसाले जाव करेत्तए ?, पभू णं आणंदा ! गोसाले मंखलिपुत्ते तवेणं जाव करेत्तए विसए णं आणंदा ! गोसाले जाव करेत्तए समत्थे णं आणंदा ! गोसाले जाव करे०, नो चेव णं अरिहंते भगवंते, परियावणियं पुण करेज्जा, जावतिएणं आणंदा ! गोसालस्स मंखलिपुत्तस्स तवतेए एत्तो अणंतगुणविसिट्ठयराए चेव तवतेए अणगाराणं भगवंताणं, खंतिखमा पुण अणगारा भगवंतो, जावइएणं आणंदा ! अणगाराणं भगवंताणं तवतेए एत्तो अणंतगुणविसिट्ठयराए चेव तवतेए थेराणं भगवंताणं खंतिखमा पुण थेरा भगवंतो, जावतिएणं आणंदा ! थेराणं भगवंताणं तवतेए एत्तो अणंतगुणविसिट्ठियतराए चेव तवतेए अरिहंताणं भगवंताणं, खंतिखमा पुण अरिहंता भग०, तं पभू णं आणंदा ! गोसाले मं० पुत्ते तवेणं तेएणं जाव करेत्तए विसए णं आणंदा ! जाव करे० समत्थे णं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गोशालक-चरित्रं

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥६७१॥

आणंदा ! जाव करे० नो चेव णं अरिहंते भगवंते, पारियावणियं पुण करेज्जा (सूत्रं५४८) तं गच्छ णं तुमं आणंदा ! गोयमाईणं समणाणं निग्गंथाणं एयमट्ठं परिकहेहि–मा णं अज्जो ! तुज्झं केइ गोसालं मंखलिपुत्तं धम्मियाए पडिचोयणाए पडिचोएउ धम्मियाए पडिसारणाए पडिसारेउ धम्मिएणं पडोयारेणं पडोयारेउ, गोसालेणं मंखलिपुत्ते समणेहिं निग्गं० मिच्छं विपडिवन्ने, तए णं से आणंदे थेरे समणेणं भ० महावीरेणं एवं वुत्ते स० समणं भ० म० वं० नमं० २ जेणेव गोयमादिसमणा निग्गंथा तेणेव उवाग० २ गोयमादि समणे निग्गंथे आमंतेति आ० २ एवं व०–एवं खलु अज्जो ! छट्ठक्खमणपारणगंसि समणेणं भगवया महावीरेणं अब्भणुन्नाए समाणे सावत्थीए नगरीए उच्चनीय तं चेव सव्वं जाव नायपुत्तस्स एयमट्ठं परिकहेहि, तं मा णं अज्जो ! तुज्झे केई गोसालं मंखलिपुत्तं धम्मियाए पडिचोयणाए पडिचोएउ जाव मिच्छं विपडिवन्ने (सूत्रं ५४९) ॥

'महं उवमियं'ति मम सम्बन्धि महद्वा विशिष्टं–औपम्यमुपमा दृष्टान्त इत्यर्थः 'चिरातीताए अद्धाए'त्ति चिरमतीते काले 'उच्चावय'त्ति उच्चावचा–उत्तमानुत्तमाः 'अत्थत्थि'त्ति द्रव्यप्रयोजनाः, कुत एवम् ? इत्याह—'अत्थलुद्ध'त्ति द्रव्यलालसाः अत एव 'अत्थगवेसिय'त्ति, अर्थगवेषिणोऽपि कुत इत्याह—'अत्थकंखिय'त्ति प्राप्तेऽप्यर्थेऽविच्छिन्नेच्छाः, 'अत्थपिवासिय'त्ति अप्राप्तार्थविषयसञ्जाततृष्णाः, यत एवमत एवाह—'अत्थगवेसणयाए'इत्यादि, 'पणियभंडे'त्ति पणितं–व्यवहारस्तदर्थं भाण्डं पणितं वा–क्रयाणकं तद्रूपं भाण्डं न तु भाजनमिति पणितभाण्डं 'सगडीसागडेणं'ति शकट्यो–गन्त्रिकाः शकटानां–गन्त्रीविशेषाणां समूहः शाकटं ततः समाहारद्वन्द्वोऽतस्तेन 'भत्तपाणपत्थयणं'ति भक्तपानरूपं पथ्य-

१५ गोशालकशतेवणिग्दृष्टान्तःसू ५४७ तेजः शक्तिः नोदनानिषेधः सू ५४८-५४९

॥६७१॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	गोशालक-चरित्रं

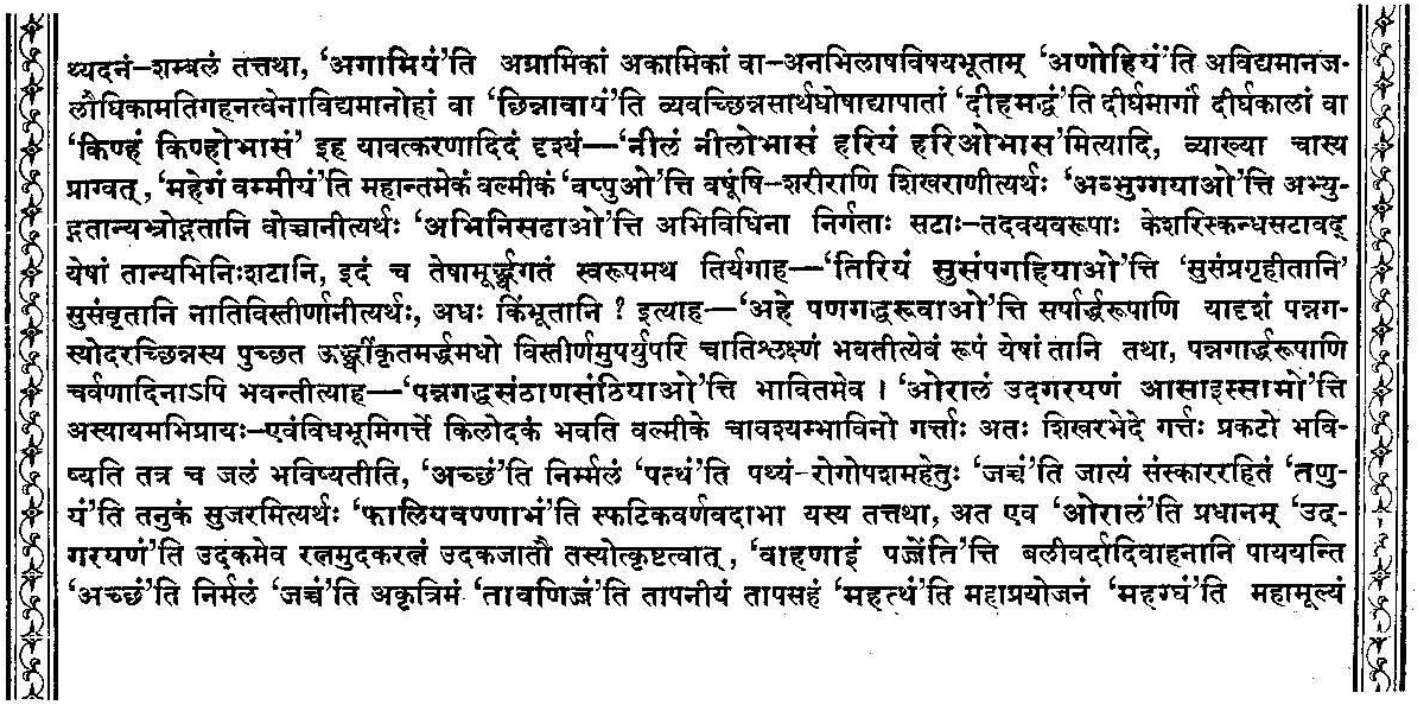

ध्यदनं–शम्बलं तत्तथा, 'अगामियं'ति अग्रामिकां अकामिकां वा–अनभिलाषविषयभूताम् 'अणोहियं'ति अविद्यमानज-
लौघिकामतिगहनत्वेनाविद्यमानोहां वा 'छिन्नावायं'ति व्यवच्छिन्नसार्थघोषाद्यापातां 'दीहमद्धं'ति दीर्घमार्गां दीर्घकालां वा
'किण्हं किण्होभासं' इह यावत्करणादिदं दृश्यं—'नीलं नीलोभासं हरियं हरिओभास'मित्यादि, व्याख्या चास्य
प्राग्वत्, 'महेगं वम्मीयं'ति महान्तमेकं वल्मीकं 'वप्पुओ'त्ति वपूंषि–शरीराणि शिखराणीत्यर्थः 'अब्भुग्गयाओ'त्ति अभ्यु-
द्गतान्यभ्रोद्गतानि वोच्चानीत्यर्थः 'अभिनिसढाओ'त्ति अभिविधिना निर्गताः सटाः–तदवयवरूपाः केशरिस्कन्धसटावद्
येषां तान्यभिनिःशटानि, इदं च तेषामूर्द्ध्वगतं स्वरूपमथ तिर्यगाह—'तिरियं सुसंपगहियाओ'त्ति 'सुसंप्रगृहीतानि'
सुसंवृतानि नातिविस्तीर्णानीत्यर्थः, अधः किंभूतानि ? इत्याह—'अहे पणगद्धरूवाओ'त्ति सर्पार्द्धरूपाणि यादृशं पन्नग-
स्योदरच्छिन्नस्य पुच्छत ऊर्द्ध्वीकृतमर्द्धमधो विस्तीर्णमुपर्युपरि चातिश्लक्ष्णं भवतीत्येवं रूपं येषां तानि तथा, पन्नगार्द्धरूपाणि
चर्वणादिनाऽपि भवन्तीत्याह—'पन्नगद्धसंठाणसंठियाओ'त्ति भावितमेव । 'ओरालं उदगरयणं आसाइस्सामो'त्ति
अस्यायमभिप्रायः–एवंविधभूमिगर्त्ते किलोदकं भवति वल्मीके चावश्यम्भाविनो गर्त्ताः अतः शिखरभेदे गर्त्तः प्रकटो भवि-
ष्यति तत्र च जलं भविष्यतीति, 'अच्छं'ति निर्म्मलं 'पत्थं'ति पथ्यं–रोगोपशमहेतुः 'जच्चं'ति जात्यं संस्काररहितं 'तणु-
यं'ति तनुकं सुजरमित्यर्थः 'फालियवण्णाभं'ति स्फटिकवर्णवदाभा यस्य तत्तथा, अत एव 'ओरालं'ति प्रधानम् 'उद-
गरयणं'ति उदकमेव रत्नमुदकरत्नं उदकजातौ तस्योत्कृष्टत्वात्, 'वाहणाइं पज्जेंति'त्ति बलीवर्दादिवाहनानि पाययन्ति
'अच्छं'ति निर्मलं 'जच्चं'ति अकृत्रिमं 'तावणिज्जं'ति तापनीयं तापसहं 'महत्थं'ति महाप्रयोजनं 'महग्घं'ति महामूल्यं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥६७२॥

'महरिहं'ति महतां योग्यं 'विमलं'ति विगतागन्तुकमलं 'निम्मलं'ति स्वाभाविकमलरहितं 'निप्पलं'ति निस्तलमतिबृ-त्तमित्यर्थः 'निक्कलं'ति निष्कलं त्रासादिरूपदोषरहितं 'वइररयणं'ति वज्राभिधानरत्नं, 'हियकामए'त्ति इह हितं–अपायाभावः 'सुहकामए'त्ति सुखं–आनन्दरूपं 'पत्थकामए'त्ति पथ्यमिव पथ्यं–आनन्दकारणं वस्तु 'आणुकंपिए'त्ति अनु-कम्पया चरतीत्यानुकम्पिकः 'निस्सेयसिए'त्ति निःश्रेयसं यन्मोक्षमिच्छतीति नैःश्रेयसिकः, अधिकृतवाणिजस्योक्तैरेव गुणैः कैश्चिद्युगपद्योगमाह–'हिए'त्यादि,'तं होउ अलाहि पज्जत्तं णे'त्ति तत्–तस्माद् भवतु अलं पर्याप्तमित्येते शब्दाः प्रतिषेधवाच-कत्वेनैकार्था आत्यन्तिकप्रतिषेधप्रतिपादनार्थमुक्ताः'णे'त्ति नः–अस्माकं 'सउवसग्गा यावि'त्ति इह चापीति सम्भावनार्थः,'उ-ग्गविसं'ति दुर्जरविषं 'चंडविसं'ति दष्टकनरकायस्य झगिति व्यापकविषं 'घोरविसं'ति परम्परया पुरुषसहस्रस्यापि हननसम-र्थविषं 'महाविसं'ति जम्बूद्वीपप्रमाणस्यापि देहस्य व्यापनसमर्थविषम् 'अइकायमहाकायं'ति कायान् शेषाहीनामतिक्रान्तो-ऽतिकायोऽस एव महाकायस्ततः कर्म्मधारयः, अथवाऽतिकायानां मध्ये महाकायोऽतिकायमहाकायोऽतस्तं, 'मसिमूसाकाल-ग'त्ति मषी–कज्जलं मूषा च–सुवर्णादितापनभाजनविशेषस्ते इव कालको यः स तथा तं 'नयणविसरोसपुन्नं'ति नय-नविषेण–दृष्टिविषेण रोषेण च पूर्णो यः स तथा तम् 'अंजणपुंजनिगरप्पगासं'ति अञ्जनपुञ्जानां निकरस्येव प्रकाशो–दीप्तिर्यस्य स तथा तं, पूर्वं कालवर्णत्वमुक्तमिह तु दीप्तिरिति न पुनरुक्ततेति, 'रत्तच्छं'ति रक्ताक्षं 'जमलजुयलचंचल-चलंतजीहं'ति जमलं–सहवर्त्ति युगलं–द्वयं चञ्चलं यथा भवत्येवं चलन्त्योः–अतिचपलयोर्जिह्वयोर्यस्य स तथा तं, प्राकृ-तत्वाच्चैवं समासः, 'धरणितलवेणिभूयं'ति धरणीतलस्य वेणीभूतो–वनिताशिरसः केशबन्धविशेष इव यः कृष्णत्वदी-

१५ गोशा-लकशते चणिग्दृष्टा-न्तादि

॥६७२॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	गोशालक-चरित्रं

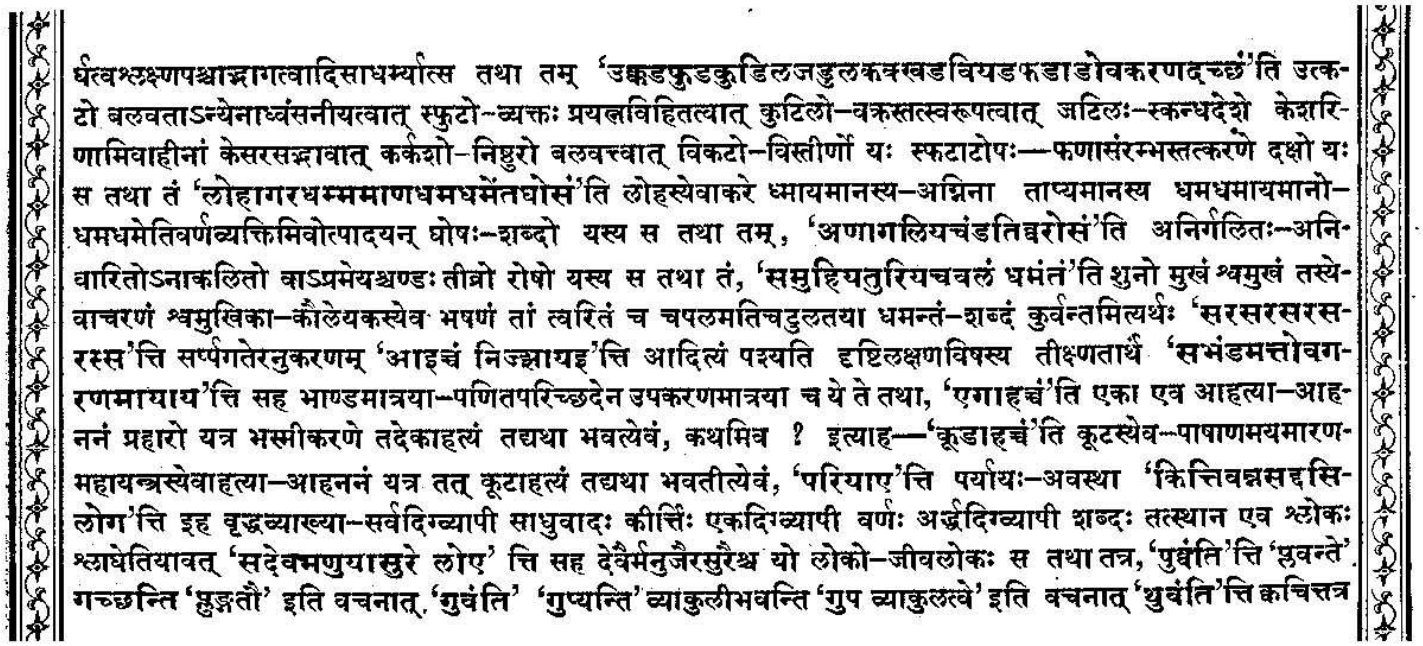

धर्त्वश्लक्ष्णपश्चाद्भागत्वादिसाधर्म्यात्स तथा तम् 'उक्कडफुडकुडिलजडुलकक्खडवियडफडाडोवकरणदच्छं'ति उत्कटो बलवताऽन्येनाध्वंसनीयत्वात् स्फुटो–व्यक्तः प्रयत्नविहितत्वात् कुटिलो–वक्रस्तत्स्वरूपत्वात् जटिलः–स्कन्धदेशे केशरिणामिवाहीनां केसरसद्भावात् कर्कशो–निष्ठुरो बलवत्त्वात् विकटो–विस्तीर्णो यः स्फटाटोपः—फणासंरम्भस्तत्करणे दक्षो यः स तथा तं 'लोहागरधम्ममाणधमधमेंतघोसं'ति लोहस्येवाकरे ध्मायमानस्य–अग्निना ताप्यमानस्य धमधमायमानो–धमधमेतिवर्णव्यक्तिमिवोत्पादयन् घोषः–शब्दो यस्य स तथा तम्, 'अणागलियचंडतिव्वरोसं'ति अनिर्गलितः–अनिवारितोऽनाकलितो वाऽप्रमेयश्चण्डः तीव्रो रोषो यस्य स तथा तं, 'समुहियतुरियचवलं धमंतं'ति शुनो मुखं श्वमुखं तस्येवाचरणं श्वमुखिका–कौलेयकस्येव भषणं तां त्वरितं च चपलमतिचटुलतया धमन्तं–शब्दं कुर्वन्तमित्यर्थः 'सरसरसरस्स'त्ति सर्प्पगतेरनुकरणम् 'आइच्चं निज्झायइ'त्ति आदित्यं पश्यति दृष्टिलक्षणविषस्य तीक्ष्णतार्थं 'सभंडमत्तोवगरणमायाय'त्ति सह भाण्डमात्रया–पणितपरिच्छदेन उपकरणमात्रया च ये ते तथा, 'एगाहच्चं'ति एका एव आहत्या–आहननं प्रहारो यत्र भस्मीकरणे तदेकाहत्यं तद्यथा भवत्येवं, कथमिव ? इत्याह—'कूडाहच्चं'ति कूटस्येव–पाषाणमयमारणमहायन्त्रस्येवाहत्या–आहननं यत्र तत् कूटाहत्यं तद्यथा भवतीत्येवं, 'परियाए'त्ति पर्यायः–अवस्था 'कित्तिवन्नसद्दसिलोग'त्ति इह वृद्धव्याख्या–सर्वदिग्व्यापी साधुवादः कीर्त्तिः एकदिग्व्यापी वर्णः अर्द्धदिग्व्यापी शब्दः तत्स्थान एव श्लोकः श्लाघेतियावत् 'सदेवमणुयासुरे लोए' त्ति सह देवैर्मनुजैरसुरैश्च यो लोको–जीवलोकः स तथा तत्र, 'पुवंति'त्ति 'प्लवन्ते' गच्छन्ति 'प्लुङ्गतौ' इति वचनात्, 'गुवंति' 'गुप्यन्ति' व्याकुलीभवन्ति 'गुप व्याकुलत्वे' इति वचनात् 'थुवंति'त्ति क्वचित्त्र

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥६७३॥

'स्तूयन्ते' अभिष्टूयन्ते–अभिनन्द्यन्ते, क्वचित् परिभमन्तीति दृश्यते, व्यक्तं चैतदिति, एतदेव दर्शयति—'इति खल्वि'-त्यादि, इतिशब्दः प्रख्यातगुणानुवादनार्थः, 'तं'ति तस्मादिति निगमनं, 'तवेणं तेएणं'ति तपोजन्यं तेजस्तप एव वा तेन 'तेजसा' तेजोलेश्यया 'जहा वा वालेणं'ति यथैव 'व्यालेन' भुजगेन 'सारक्खामि'त्ति संरक्षामि दाहभयात् 'संगो-वयामि'त्ति संगोपयामि क्षेमस्थानप्रापणेन ।

जावं च णं आणंदे थेरे गोयमाईणं समणाणं निग्गंथाणं एयमट्ठं परिकहेइ तावं च णं से गोसाले मंख० धु० हालाह० कुं० कुंभकारावणाओ पडिनि० पडिनि० आजीवियसंघसंपरिवुडे महया अमरिसं वहमाणे सिग्घं तुरियं जाव सावत्थिं नगरिं मज्झंमज्झेणं निग्ग० २ जेणेव कोट्ठए चेइए जेणेव समणे भ० महा० तेणेव उवा० ते० २ समणस्स भ० म० अदूरसामंते ठिचा समणं भ० महा० एवं वयासी–सुट्ठु णं आउसो ! कासवा ! ममं एवं वयासी साहू णं आउसो ! कासवा ! ममं एवं वयासी–गोसाले मंखलिपुत्ते ममं धम्मं-तेवासी गोसाले० २, जे णं से मंखलिपुत्ते तव धम्मंतेवासी से णं सुक्के सुक्काभिजाइए भवित्ता कालमासे कालं किच्चा अन्नयरेसु देवलोएसु देवत्ताए उववन्ने, अहन्नं उदाइनामं कुंडियायणीए अज्जुणस्स गोयमपुत्तस्स सरीरगं विप्पजहामि, अ० २ गोसालस्स मंखलिपुत्तस्स सरीरगं अणुप्पविसामि गो० २ इमं सत्तमं पउट्प-रिहारं परिहरामि, जेवि आइं आउसो ! कासवा ! अम्हं समयंसि केइ सिज्झिंसु वा सिज्झंति वा सिज्झि-स्संति वा सव्वे ते चउरासीतिं महाकप्पसयसहस्साइं सत्त दिवे सत्त संजूहे सत्त संनिगब्भे सत्त पउट्प-

१५ गोशा-लकशते परावृत्त-परिहारः सू ५५०

॥६७३॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गोशालक-चरित्रं

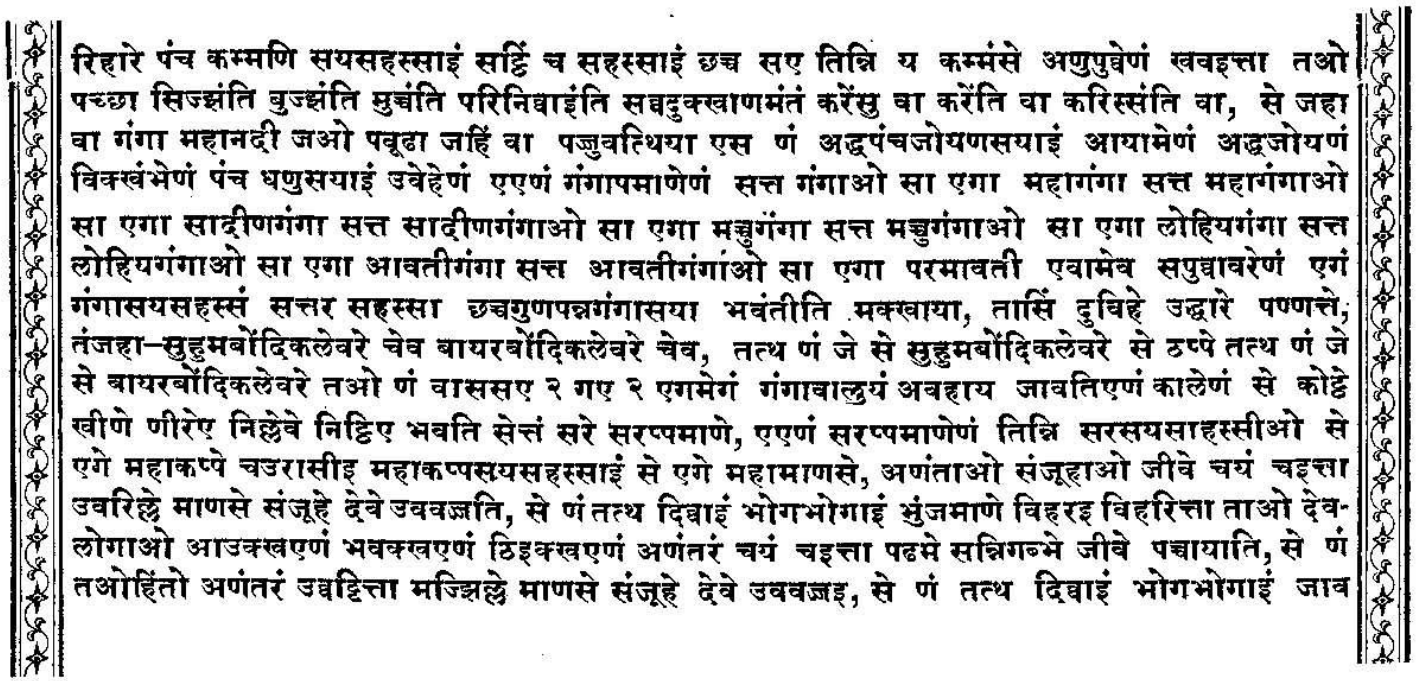

रिहारे पंच कम्मणि सयसहस्साइं सट्ठिं च सहस्साइं छच्च सए तिन्नि य कम्मंसे अणुपुव्वेणं खवइत्ता तओ पच्छा सिज्झंति बुज्झंति मुच्चंति परिनिव्वाइंति सव्वदुक्खाणमंतं करेंसु वा करेंति वा करिस्संति वा, से जहा वा गंगा महानदी जओ पवूढा जहिं वा पज्जुवत्थिया एस णं अद्धपंचजोयणसयाइं आयामेणं अद्धजोयणं विक्खंभेणं पंच धणुसयाइं उव्वेहेणं एएणं गंगापमाणेणं सत्त गंगाओ सा एगा महागंगा सत्त महागंगाओ सा एगा सादीणगंगा सत्त सादीणगंगाओ सा एगा मच्छुगंगा सत्त मच्छुगंगाओ सा एगा लोहियगंगा सत्त लोहियगंगाओ सा एगा आवतीगंगा सत्त आवतीगंगाओ सा एगा परमावती एवामेव सपुव्वावरेणं एगं गंगासयसहस्सं सत्तर सहस्सा छच्चगुणपन्नगंगासया भवंतीति मक्खाया, तासिं दुविहे उद्धारे पण्णत्ते, तंजहा–सुहुमबोंदिकलेवरे चेव बायरबोंदिकलेवरे चेव, तत्थ णं जे से सुहुमबोंदिकलेवरे से ठप्पे तत्थ णं जे से बायरबोंदिकलेवरे तओ णं वाससए २ गए २ एगमेगं गंगावालुयं अवहाय जावतिएणं कालेणं से कोट्ठे खीणे णीरेए निल्लेवे निट्ठिए भवति सेत्तं सरे सरप्पमाणे, एएणं सरप्पमाणेणं तिन्नि सरसयसाहस्सीओ से एगे महाकप्पे चउरासीइ महाकप्पसयसहस्साइं से एगे महामाणसे, अणंताओ संजूहाओ जीवे चयं चइत्ता उवरिल्ले माणसे संजूहे देवे उववज्जति, से णं तत्थ दिव्वाइं भोगभोगाइं भुंजमाणे विहरइ विहरित्ता ताओ देवलोगाओ आउक्खएणं भवक्खएणं ठिइक्खएणं अणंतरं चयं चइत्ता पढमे सन्निगब्भे जीवे पच्चायाति, से णं तओहिंतो अणंतरं उव्वट्टित्ता मज्झिल्ले माणसे संजूहे देवे उववज्जइ, से णं तत्थ दिव्वाइं भोगभोगाइं जाव

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विहरित्ता ताओ देवलोयाओ आउ० ३ जाव चइत्ता दोच्चे सन्निगब्भे जीवे पच्चायाति, से णं तओहिंतो अणंतरं उव्वट्टित्ता हेट्ठिल्ले माणसे संजूहे देवे उववज्जइ, से णं तत्थ दिवाइं जाव चइत्ता तच्चे सन्निगब्भे जीवे पच्चायाति, से णं तओहिंतो जाव उव्वट्टित्ता उवरिल्ले माणुसुत्तरे संजूहे देवे उववज्जिहिति, से णं तत्थ दिवाइं भोग जाव चइत्ता चउत्थे सन्निगब्भे जीवे पच्चायाति, से णं तओहिंतो अणंतरं उव्वट्टित्ता मज्झिल्ले माणुसुत्तरे संजूहे देवे उववज्जति, से णं तत्थ दिवाइं भोग जाव चइत्ता पंचमे सन्निगब्भे जीवे पच्चायाति, से णं तओहिंतो अणंतरं उव्वट्टित्ता हिट्ठिल्ले माणुसुत्तरे संजूहे देवे उववज्जति, से णं तत्थ दिवाइं भोग जाव चइत्ता छट्ठे सन्निगब्भे जीवे पच्चायाति, से णं तओहिंतो अणंतरं उववट्टित्ता बंभलोगे नामं से कप्पे पन्नत्ते पाईणपडीणायते उदीणदाहिणविच्छिन्ने जहा ठाणपदे जाव पंच वडेंसगा पं०, तंजहा–असोगवडेंसए जाव पडिरूवा, से णं तत्थ देवे उववज्जइ, से णं तत्थ दस सागरोवमाइं दिवाइं भोग जाव चइत्ता सत्तमे सन्निगब्भे जीवे पच्चायाति, से णं तत्थ नवण्हं मासाणं बहुपडिपुन्नाणं अद्धट्ठमाण जाव वीतिक्कंताणं सुकुमालगभद्दलए मिउकुंडलकुंचियकेसए मट्ठगंडतलकन्नपीढए देवकुमारसप्पभए दारए पयायति, से णं अहं कासवा !, तेणं अहं आउसो ! कासवा ! कोमारियपव्वज्जाए कोमारएणं बंभचेरवासेणं अविद्धकन्नए चेव संखाणं पडिलभामि सं० २ इमे सत्त पउट्टपरिहारे परिहरामि, तंजहा–एणेज्जगस्स मल्लरामस्स मल्लमंडियस्स रोहस्स भारद्दाइस्स अज्जुणगस्स गोयमपुत्तस्स गोसालस्स मंखलिपुत्तस्स, तत्थ णं जे से पढमे पउट्टपरिहारे से णं रायगिहस्स नग-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	गोशालक-चरित्रं

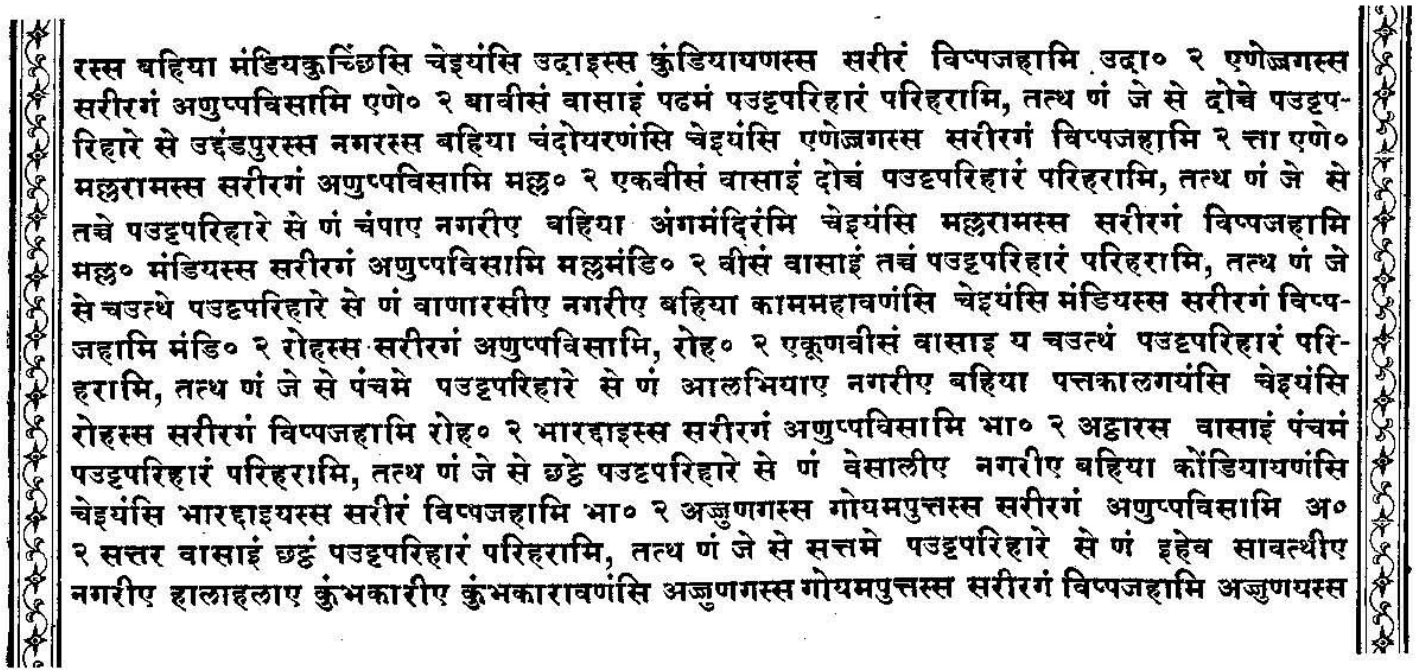

रस्स बहिया मंडियकुच्छिंसि चेइयंसि उदाइस्स कुंडियायणस्स सरीरं विप्पजहामि उदा० २ एणेज्जगस्स सरीरगं अणुप्पविसामि एणे० २ बावीसं वासाइं पढमं पउट्टपरिहारं परिहरामि, तत्थ णं जे से दोच्चे पउट्टपरिहारे से उद्दंडपुरस्स नगरस्स बहिया चंदोयरणंसि चेइयंसि एणेज्जगस्स सरीरगं विप्पजहामि २ त्ता एणे० मल्लरामस्स सरीरगं अणुप्पविसामि मल्ल० २ एकवीसं वासाइं दोच्चं पउट्टपरिहारं परिहरामि, तत्थ णं जे से तच्चे पउट्टपरिहारे से णं चंपाए नगरीए बहिया अंगमंदिरंमि चेइयंसि मल्लरामस्स सरीरगं विप्पजहामि मल्ल० मंडियस्स सरीरगं अणुप्पविसामि मल्लमंडि० २ वीसं वासाइं तच्चं पउट्टपरिहारं परिहरामि, तत्थ णं जे से चउत्थे पउट्टपरिहारे से णं वाणारसीए नगरीए बहिया काममहावणंसि चेइयंसि मंडियस्स सरीरगं विप्पजहामि मंडि० २ रोहस्स सरीरगं अणुप्पविसामि, रोह० २ एकूणवीसं वासाइ य चउत्थं पउट्टपरिहारं परिहरामि, तत्थ णं जे से पंचमे पउट्टपरिहारे से णं आलभियाए नगरीए बहिया पत्तकालगयंसि चेइयंसि रोहस्स सरीरगं विप्पजहामि रोह० २ भारद्दाइस्स सरीरगं अणुप्पविसामि भा० २ अट्ठारस वासाइं पंचमं पउट्टपरिहारं परिहरामि, तत्थ णं जे से छट्ठे पउट्टपरिहारे से णं वेसालीए नगरीए बहिया कोंडियायणंसि चेइयंसि भारद्दाइयस्स सरीरं विप्पजहामि भा० २ अज्जुणगस्स गोयमपुत्तस्स सरीरगं अणुप्पविसामि अ० २ सत्तर वासाइं छट्ठं पउट्टपरिहारं परिहरामि, तत्थ णं जे से सत्तमे पउट्टपरिहारे से णं इहेव सावत्थीए नगरीए हालाहलाए कुंभकारीए कुंभकारावणंसि अज्जुणगस्स गोयमपुत्तस्स सरीरगं विप्पजहामि अज्जुणयस्स

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	गोशालक-चरित्रं

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥६७५॥

२ गोसालस्स मंखलिपुत्तस्स सरीरगं अलं थिरं धुवं धारणिज्जं सीयसहं उण्हसहं खुहासहं विविहदंसमसग-परीसहोवसग्गसहं थिरसंघयणंतिकट्टु तं अणुप्पविसामि तं० २ तं से णं सोलस वासाइं इमं सत्तमं पउट्ट-परिहारं परिहरामि, एवामेव आउसो ! कासवा ! एगेणं तेत्तीसेणं वाससएणं सत्त पउट्टपरिहारा परिहरिया भवंतीति मक्खाया, तं सुट्ठु णं आउसो ! कासवा ! ममं एवं वयासी साधु णं आउसो ! कासवा ! ममं एवं वयासी– गोसाले मंखलिपुत्ते ममं धम्मंतेवासित्ति गोसाले० २ (सूत्रं ५५०) ॥

'पभु'त्ति प्रभविष्णुर्गोशालको भस्मराशिं कर्त्तुम् ? इत्येकः प्रश्नः, प्रभुत्वं च द्विधा–विषयमात्रापेक्षया तत्करणतश्चेति पुनः पृच्छति—'विसए ण'मित्यादि, अनेन च प्रथमो विकल्पः पृष्टः, 'समत्थे ण'मित्यादिना तु द्वितीय इति, 'पारितावणियं'ति पारितापनिकीं क्रियां पुनः कुर्यादिति । 'अणगाराणं'ति सामान्यसाधूनां 'खंतिक्खम'त्ति क्षान्त्या–क्रोधनिग्रहेण क्षमन्त इति क्षान्तिक्षमाः 'थेराणं'ति आचार्यादीनां वयःश्रुतपर्यायस्थविराणां । 'पडिचोयणाए'त्ति तन्मतप्रतिकूला चोदना–कर्त्तव्यप्रोत्साहना प्रतिचोदना तया 'पडिसाहरणाए'त्ति तन्मतप्रतिकूलतया विस्मृतार्थस्मारणा तया, किमुक्तं भवति ?–'धम्मिएण'मित्यादि, 'पडोयारेणं'ति प्रत्युपचारेण प्रत्युपकारेण वा 'पडोयारेउ'त्ति 'प्रत्युपचारयतु' प्रत्युपचारं करोतु एवं प्रत्युपकारयतु वा 'मिच्छं विपडिवन्ने'त्ति मिथ्यात्वं म्लैच्छ्यं वा–अनार्यत्वं विशेषतः प्रतिपन्न इत्यर्थः । 'सुट्ठु णं'ति उपालम्भवचनम् 'आउसो'त्ति हे आयुष्मन् !–चिरप्रशस्तजीवित ! 'कासव'त्ति काश्यपगोत्रीय ! 'सत्तमं पउट्टपरिहारं परिहरामि'त्ति सप्तमं शरीरान्तरप्रवेशं करोमीत्यर्थः, 'जेवि आइं'ति येऽपि च 'आइं'ति निपातः 'चउ-

१४ गोशालकशते परावृत्त-परिहारः सू ५५०

॥६७५॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

रासीइं महाकप्पसयसहस्साइं'इत्यादि गोशालकसिद्धान्तार्थः स्थाप्यो, वृद्धैरप्यनाख्यातत्वात्, आह च चूर्णिकारः— संदिद्धत्ताओ तस्स सिद्धंतस्स न लक्खिज्जइ'त्ति तथाऽपि शब्दानुसारेण किंञ्चिदुच्यते–चतुरशीतिमहाकल्पशतसहस्राणि क्षपयित्वेति योगः, तत्र कल्पाः–कालविशेषाः, ते च लोकप्रसिद्धा अपि भवन्तीति तद्व्यवच्छेदार्थमुक्तं महाकल्पा– वक्ष्यमाणस्वरूपास्तेषां यानि शतसहस्राणि–लक्षाणि तानि तथा, 'सत्त दिव्वे'त्ति सप्त 'दिव्यान्' देवभवान् 'सत्त संजूहे'त्ति सप्त संयूथान्–निकायविशेषान्, 'सत्त सन्निगब्भे'त्ति सञ्ज्ञिगर्भान्–मनुष्यगर्भवसतीः, एते च तन्मतेन मोक्षगामिनां सप्त- सान्तरा भवन्ति वक्ष्यति चैवैतान् स्वयमेवेति, 'सत्त पउट्टपरिहारे'त्ति सप्त शरीरान्तरप्रवेशान्, एते च सप्तमसञ्ज्ञिगर्भा- नन्तरं क्रमेणावसेयाः, तथा 'पंचे'त्यादाविदं संभाव्यते 'पंच कम्मणि सयसहस्साइं'ति कर्म्मणि–कर्मविषये कर्म्मणामि- त्यर्थः पञ्च शतसहस्राणि लक्षाणि 'तिन्नि य कम्मंसि'त्ति त्रींश्च कर्म्मभेदान् 'खवइत्त'त्ति 'क्षपयित्वा' अतिवाह्य । 'से जहे'त्यादिना महाकल्पप्रमाणमाह, तत्र 'से जहा व'त्ति महाकल्पप्रमाणवाक्योपन्यासार्थः 'जहिं वा पज्जुवत्थिय'त्ति यत्र गत्वा परि–सामस्त्येन उपस्थिता–उपरता समाप्ता इत्यर्थः 'एस णं अद्ध'त्ति एष गङ्गाया मार्गः 'एएणं गंगापमाणेणं'ति गङ्गायास्तन्मार्गस्य चाभेदाद्गङ्गाप्रमाणेनेत्युक्तम् 'एवामेव'त्ति उक्तेनैव क्रमेण 'सपुव्वावरेणं'ति सह पूर्वेण गङ्गादिना यद- परं महागङ्गादि तत् सपूर्वापरं तेन भावप्रत्ययलोपदर्शनात्सपूर्वापरतयेत्यर्थः । 'तासिं दुविहे'इत्यादि, तासां गङ्गादीनां गङ्गादिगतवालुकाकणादीनामित्यर्थः द्विविध उद्धारः उद्धरणीयद्वैविध्यात्, 'सुहुमबोंदिकलेवरे चेव'त्ति सूक्ष्मबोन्दीनि– सूक्ष्माकाराणि कलेवराणि–असङ्ख्यातखण्डीकृतवालुकाकणरूपाणि यत्रोद्धारे स तथा 'बायरबोंदिकलेवरे चेव'त्ति [ग्रन्था-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥६७६॥

ग्रम् १४०००] बादरबोन्दीनि–बादराकाराणि कलेवराणि–वालुकाकणरूपाणि यत्र तथा, 'ठप्पे'त्ति न व्याख्येयः इतरस्तु व्याख्येय इत्यर्थः 'अवहाय'त्ति अपहाय–त्यक्त्वा 'से कोट्ठे'त्ति स कोष्ठो–गङ्गासमुदायात्मकः 'खीणे'त्ति क्षीणः स चाव-शेषसद्भावेऽप्युच्यते यथा क्षीणधान्यं कोष्ठागारमत उच्यते 'नीरए'त्ति नीरजाः स च तद्भूमिगतरजसामप्यभावे उच्यते इत्याह—'निल्लेवे'त्ति निर्लेपः भूमिभित्त्यादिसंश्लिष्टसिकतालेपाभावात्, किमुक्तं भवति ?–'निष्ठितः' निरवयवीकृत इति 'सेत्तं सरे'त्ति अथ तत्तावत्कालखण्डं सरः–सरःसञ्ज्ञं भवति मानससञ्ज्ञं सर इत्यर्थः 'सरप्पमाणे'त्ति सर एवोक्तलक्षणं प्रमाणं–वक्ष्यमाणमहाकल्पादेर्मानं सरःप्रमाणं 'महामाणसे'त्ति मानसोत्तरं, यदुक्तं चतुरशीतिर्महाकल्पशतसहस्राणीति तत्प्ररूपितम्, अथ सप्तानां दिव्यादीनां प्ररूपणायाह—'अणंताओ संजूहाओ'त्ति अनन्तजीवसमुदायरूपान्निकायात् 'चयं चइत्त'त्ति च्यवं च्युत्वा–च्यवनं कृत्वा चयं वा–देहं 'चइत्त'त्ति त्यक्त्वा 'उवरिल्ले'त्ति उपरितनमध्यमाधस्तनानां मानसानां सद्भावात् तदन्यव्यवच्छेदायोपरितने इत्युक्तं 'माणसे'त्ति गङ्गादिप्ररूपणतः प्रागुक्तस्वरूपे सरसि सरःप्रमाणा-युष्कयुक्ते इत्यर्थः 'संजूहे'त्ति निकायविशेषे देवे 'उववज्जइ'त्ति प्रथमो दिव्यभवः सञ्ज्ञिगर्भसञ्ज्ञासूत्रोक्त एव, एवं त्रिषु मानसेषु संयूथेष्वाद्यसंयूथसहितेषु चत्वारि संयूथानि त्रयश्च देवभवाः, तथा 'मानसोत्तरे'त्ति महामानसे पूर्वोक्तमहाकल्प-प्रमितायुष्कवति, यच्च प्रागुक्तं चतुरशीतिं महाकल्पान् शतसहस्राणि क्षपयित्वेति तत्प्रथममहामानसापेक्षयेति द्रष्टव्यं, अन्यथा त्रिषु महामानसेषु बहुतराणि तानि स्युरिति, एतेषु चोपरिमादिभेदात्रिषु मानसोत्तरेषु त्रीण्येव संयूथानि त्रयश्च देवभवाः, आदितस्तु सप्त संयूथानि षट् च देवभवाः, सप्तमदेवभवस्तु ब्रह्मलोके, स च संयूथं न भवति, सूत्रे संयूथत्वेनानभिहित-

१५ गोशा-लकशते-परावृत्त-परिहारः सू ५५०

॥६७६॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	गोशालक-चरित्रं

त्वादिति, 'पाईणपडीणायए उदीणदाहिणविच्छिन्ने'त्ति इहायामविष्कम्भयोः स्थापनामात्रत्वमवगन्तव्यं तस्य प्रतिपूर्णचन्द्रसंस्थानसंस्थितत्वेन तयोस्तुल्यत्वादिति 'जहा ठाणपए'त्ति ब्रह्मलोकस्वरूपं तथा वाच्यं यथा 'स्थानपदे' प्रज्ञापनाद्वितीयप्रकरणे, तच्चैवं—'पडिपुन्नचंदसंठाणसंठिए अचिमाली भासरासिप्पभे'इत्यादि, 'असोगवडेंसए' इत्यत्र यावत्करणात् 'सत्तिवन्नवडेंसए चंपगवडेंसए चूयवडेंसए मज्झे य बंभलोयवडेंसए'इत्यादि दृश्यं, 'सुकुमालगभद्दलए'त्ति सुकुमारकश्चासौ भद्रश्च–भद्रमूर्त्तिरिति समासः, लकारककारौ तु स्वार्थिकाविति, 'मिउकुंडलकुंचियकेसए'त्ति मृदवः कुण्डलमिव–दर्भादिकुण्डलकमिव कुञ्चिताश्च केशा यस्य स तथा 'मट्ठगंडतलकण्णपीढए'त्ति मृष्टगण्डतले कर्णपीठके–कर्णाभरणविशेषौ यस्य स तथा, 'देवकुमारसप्पभए'त्ति देवकुमारवत्सप्रभः देवकुमारसमानप्रभो वा यः स तथा कशब्दः स्वार्थिक इति,'कोमारियाए पव्वज्जाए'त्ति कुमारस्येयं कौमारी सैव कौमारिकी तस्यां प्रव्रज्यायां विषयभूतायां सञ्ज्ञानं–बुद्धिं प्रतिलेभ इति योगः 'अविद्धकन्नए चेव'त्ति कुश्रुतिशलाकयाऽविद्धकर्णः–अव्युत्पन्नमतिरित्यर्थः । 'एणेज्जस्से'त्यादि, इहैणकादयः पञ्च नामतोऽभिहिताः द्वौ पुनरन्त्यौ पितृनामसहिताविति । 'अलं थिरं'ति अत्यर्थं स्थिरं विवक्षितकालं यावदवश्यंस्थायित्वात् 'धुवं'ति ध्रुवं तद्गुणानां ध्रुवत्वात् अत एव 'धारणिज्जं'ति धारयितुं योग्यम्, एतदेव भावयितुमाह–'सीए'इत्यादि, एवंभूतं च तत् कुतः ? इत्याह—'थिरसंघयणं'ति अविघटमानसंहननमित्यर्थः 'इतिकट्टु'त्ति 'इतिकृत्वा' इतिहेतोस्तदनुप्रविशामीति ।

तए णं समणे भगवं महावीरे गोसालं मंखलिपुत्तं एवं वयासी–गोसाला ! से जहानामए–तेणए सिया

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [५५१--५५६]

दीप अनुक्रम [६४९--६५४]

गामेल्लएहिं परब्भमाणे प० २ कत्थय गड्डं वा दरिं वा दुग्गं वा णिन्नं वा पव्वयं वा विसमं वा अणस्सादेमाणे एगेणं महं उन्नालोमेण वा सणलोमेण वा कप्पासपम्हेण वा तणसूएण वा अत्ताणं आवरेत्ताणं चिट्ठेज्जा से णं अणावरिए आवरियमिति अप्पाणं मन्नइ अप्पच्छण्णे य पच्छण्णमिति अप्पाणं मन्नति अणिलुक्के णिलुक्कमिति अप्पाणं मन्नति अपलाए पलायमिति अप्पाणं मन्नति एवामेव तुमंपि गोसाला ! अणन्ने संते अन्नमिति अप्पाणं उपलभसि तं मा एवं गोसाला ! नारिहसि गोसाला ! सच्चेव ते सा छाया नो अन्ना (सूत्रं ५५१) । तए णं से गोसाले मंखलिपुत्ते समणेणं भगवया महावीरेणं एवं वुत्ते समाणे आसुरुत्ते ५ समणं भगवं महावीरं उच्चावयाहिं आउसणाहिं आउसति उच्चा० २ उच्चावयाहिं उद्धंसणाहिं उद्धंसेति उद्धंसेत्ता उच्चावयाहिं निब्भंछणाहिं निब्भंछेति उ० २ उच्चावयाहिं निच्छोडणाहिं निच्छोडेति उ० २ एवं वयासी–नट्ठेसि कदाइ विणट्ठेसि कदाइ भट्ठोऽसि कयाइ नट्ठविणट्ठे भट्ठेसि कदायि अज्ज ! न भवसि नाहि ते ममाहिंतो सुहमत्थि (सूत्रं ५५२) । तेणं कालेणं २ समणस्स भगवओ म० अंतेवासी पाईणजाणवए सव्वाणुभूती णामं अणगारे पगइभद्दए जाव विणीए धम्मायरियाणुरागेणं एयमट्ठं असद्दहमाणे उट्ठाए उट्ठेति उ० २ जेणेव गोसाले मंखलिपुत्ते तेणेव उवा० २ गोसालं मंखलिपुत्तं एवं वयासी–जेवि ताव गोसाला ! तहारूवस्स समणस्स वा माहणस्स वा अंतियं एगमवि आयरियं धम्मियं सुवयणं निसामेति सेवि ताव वंदति नमंसति जाव कल्लाणं मंगलं देवयं चेइयं पज्जुवासइ किमंग पुण तुमं गोसाला ! भगवया चेव पव्वाविए भग-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गोशालक-चरित्रं

वया चेव मुंडाविए भगवया चेव सेहाविए भगवया चेव सिक्खाविए भगवया चेव बहुस्सुतीकए भगवओ चेव मिच्छं विप्पडिवन्ने, तं मा एवं गोसाला ! नारिहसि गोसाला ! सच्चेव ते सा छाया नो अन्ना, तए णं से गोसाले मंखलिपुत्ते सव्वाणुभूतिणामं अणगारेणं एवं वुत्ते समाणे आसुरुत्ते ५ सव्वाणुभूतिं अणगारं तवेणं तेएणं एगाहच्चं कूडाहच्चं जाव भासरासिं करेति, तए णं से गोसाले मंखलिपुत्ते सव्वाणुभूतिं अणगारं तवेणं तेएणं एगाहच्चं कूडाहच्चं जाव भासरासिं करेत्ता दोच्चंपि समणं भगवं महावीरं उच्चावयाहिं आउसणाहिं आउसइ जाव सुहं नत्थि । तेणं कालेणं २ समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतेवासी कोसलजाणवए सुणक्खत्ते णामं अणगारे पगइभद्दए विणीए धम्मायरियाणुरागेणं जहा सव्वाणुभूती तहेव जाव सच्चेव ते सा छाया नो अन्ना । तए णं से गोसाले मंखलिपुत्ते सुणक्खत्तेणं अणगारेणं एवं वुत्ते समाणे आसुरुत्ते ५ सुनक्खत्तं अणगारं तवेणं तेएणं परितावेइ, तए णं से सुनक्खत्ते अणगारे गोसालेणं मंखलिपुत्तेणं तवेणं तेएणं परिताविए समाणे जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ २ समणं भगवन्तं महावीरं तिक्खुत्तो २ वंदइ नमंसइ २ सयमेव पंच महव्वयाइं आरुभेति स० २ समणा य समणीओ य खामेइ सम० २ आलोइयपडिक्कंते समाहिपत्ते आणुपुव्वीए कालगए । तए णं से गोसाले मंखलिपुत्ते सुनक्खत्तं अणगारं तवेणं तेएणं परितावेत्ता तहंपि समणं भगवं महावीरं उच्चावयाहिं आउसणाहिं आउसति सव्वं तं चेव जाव सुहं नत्थि । तए णं समणे भगवं महावीरे गोसालं मंखलिपुत्तं एवं वयासी–जेवि ताव गोसाला ! तहारूवस्स समणस्स वा माहणस्स

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गोशालक-चरित्रं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [५५१--५५६]

दीप अनुक्रम [६४९--६५४]

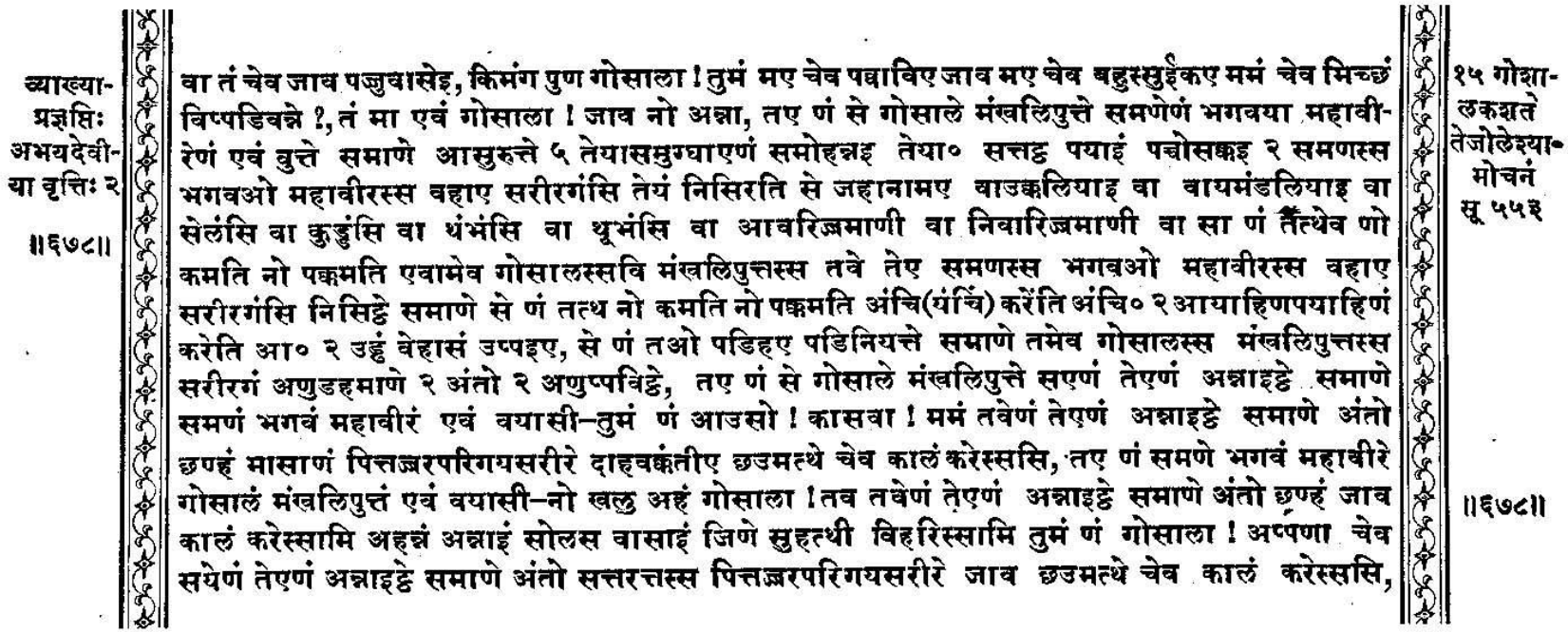

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥६७८॥

वा तं चेव जाव पज्जुवासेइ, किमंग पुण गोसाला ! तुमं मए चेव पव्वाविए जाव मए चेव बहुस्सुईकए ममं चेव मिच्छं विप्पडिवन्ने ?, तं मा एवं गोसाला ! जाव नो अन्ना, तए णं से गोसाले मंखलिपुत्ते समणेणं भगवया महावीरेणं एवं वुत्ते समाणे आसुरुत्ते ५ तेयासमुग्घाएणं समोहन्नइ तेया० सत्तट्ठ पयाइं पच्चोसक्कइ २ समणस्स भगवओ महावीरस्स वहाए सरीरगंसि तेयं निसिरति से जहानामए वाउक्कलियाइ वा वायमंडलियाइ वा सेलंसि वा कुड्डंसि वा थंभंसि वा थूभंसि वा आवरिज्जमाणी वा निवारिज्जमाणी वा सा णं तेत्थेव णो कमति नो पक्कमति एवामेव गोसालस्सवि मंखलिपुत्तस्स तवे तेए समणस्स भगवओ महावीरस्स वहाए सरीरगंसि निसिट्ठे समाणे से णं तत्थ नो कमति नो पक्कमति अंचि(यंचिं) करेंति अंचि० २ आयाहिणपयाहिणं करेंति आ० २ उड्ढं वेहासं उप्पइए, से णं तओ पडिहए पडिनियत्ते समाणे तमेव गोसालस्स मंखलिपुत्तस्स सरीरगं अणुडहमाणे २ अंतो २ अणुप्पविट्ठे, तए णं से गोसाले मंखलिपुत्ते सएणं तेएणं अन्नाइट्ठे समाणे समणं भगवं महावीरं एवं वयासी–तुमं णं आउसो ! कासवा ! ममं तवेणं तेएणं अन्नाइट्ठे समाणे अंतो छण्हं मासाणं पित्तज्जरपरिगयसरीरे दाहवक्कंतीए छउमत्थे चेव कालं करेस्ससि, तए णं समणे भगवं महावीरे गोसालं मंखलिपुत्तं एवं वयासी–नो खलु अहं गोसाला ! तव तवेणं तेएणं अन्नाइट्ठे समाणे अंतो छण्हं जाव कालं करेस्सामि अहन्नं अन्नाइं सोलस वासाइं जिणे सुहत्थी विहरिस्सामि तुमं णं गोसाला ! अप्पणा चेव सयेणं तेएणं अन्नाइट्ठे समाणे अंतो सत्तरत्तस्स पित्तज्जरपरिगयसरीरे जाव छउमत्थे चेव कालं करेस्ससि,

१५ गोशालकशते तेजोलेश्या-मोचनं सू ५५३

॥६७८॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गोशालक-चरित्रं

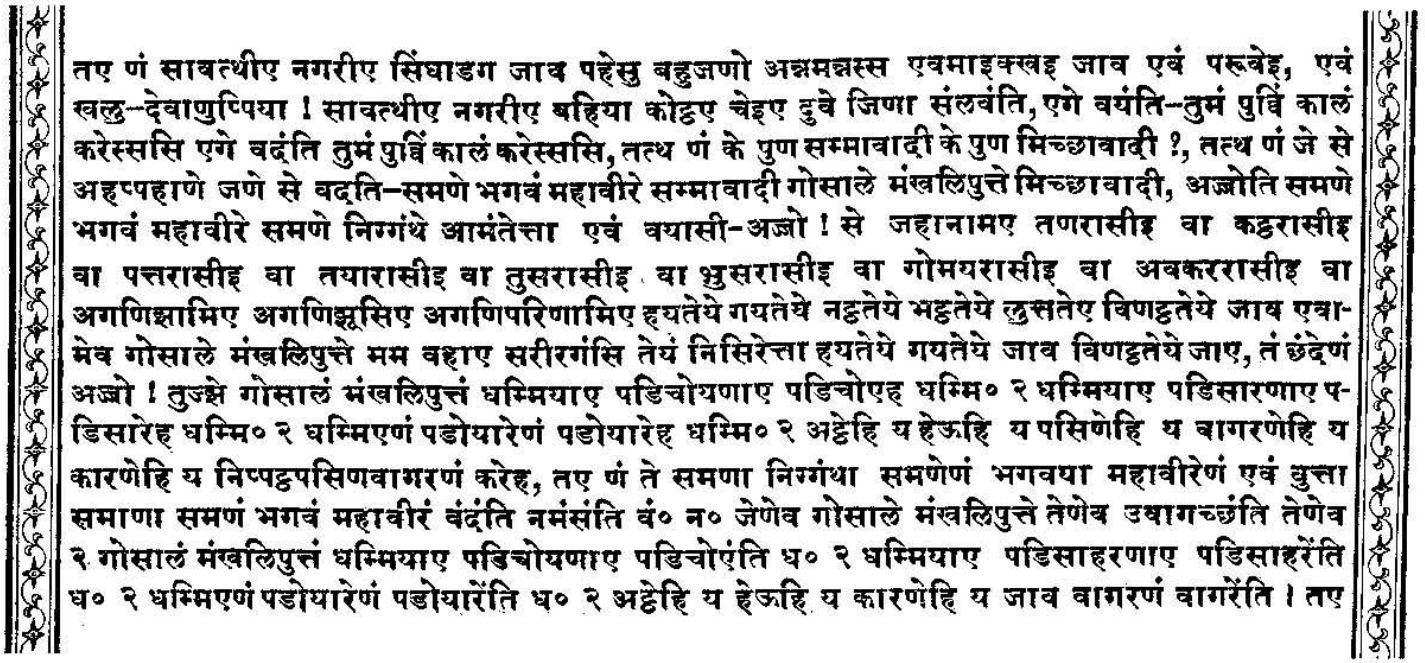

तए णं सावत्थीए नगरीए सिंघाडग जाव पहेसु बहुजणो अन्नमन्नस्स एवमाइक्खइ जाव एवं परूवेइ, एवं खलु–देवाणुप्पिया ! सावत्थीए नगरीए बहिया कोट्ठए चेइए दुवे जिणा संलवंति, एगे वयंति–तुमं पुर्वि कालं करेस्ससि एगे वदंति तुमं पुर्वि कालं करेस्ससि, तत्थ णं के पुण सम्मावादी के पुण मिच्छावादी ?, तत्थ णं जे से अहप्पहाणे जणे से वदति–समणे भगवं महावीरे सम्मावादी गोसाले मंखलिपुत्ते मिच्छावादी, अज्जोति समणे भगवं महावीरे समणे निग्गंथे आमंतेत्ता एवं वयासी–अज्जो ! से जहानामए तणरासीइ वा कट्ठरासीइ वा पत्तरासीइ वा तयारासीइ वा तुसरासीइ वा भुसरासीइ वा गोमयरासीइ वा अवकररासीइ वा अगणिझामिए अगणिझूसिए अगणिपरिणामिए हयतेये गयतेये नट्ठतेये भट्ठतेये लुत्ततेए विणट्ठतेये जाव एवामेव गोसाले मंखलिपुत्ते मम वहाए सरीरगंसि तेयं निसिरेत्ता हयतेये गयतेये जाव विणट्ठतेये जाए, तं छंदेणं अज्जो ! तुज्झे गोसालं मंखलिपुत्तं धम्मियाए पडिचोयणाए पडिचोएह धम्मि० २ धम्मियाए पडिसारणाए पडिसारेह धम्मि० २ धम्मिएणं पडोयारेणं पडोयारेह धम्मि० २ अट्ठेहि य हेऊहि य पसिणेहि य वागरणेहि य कारणेहि य निप्पट्ठपसिणवागरणं करेह, तए णं ते समणा निग्गंथा समणेणं भगवया महावीरेणं एवं वुत्ता समाणा समणं भगवं महावीरं वंदंति नमंसंति वं० न० जेणेव गोसाले मंखलिपुत्ते तेणेव उवागच्छंति तेणेव २ गोसालं मंखलिपुत्तं धम्मियाए पडिचोयणाए पडिचोएंति ध० २ धम्मियाए पडिसाहरणाए पडिसाहरेंति ध० २ धम्मिएणं पडोयारेणं पडोयारेंति ध० २ अट्ठेहि य हेऊहि य कारणेहि य जाव वागरणं वागरेंति । तए

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गोशालक-चरित्रं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [५५१--५५६]

दीप अनुक्रम [६४९--६५४]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥६७९॥

णं से गोसाले मंखलिपुत्ते समणेहिं निग्गंथेहिं धम्मियाए पडिचोयणाए पडिचोतिज्जमाणे जाव निप्पट्ठपसिण वागरणे कीरमाणे आसुरुत्ते जाव मिसिमिसेमाणे नो संचाएति समणाणं निग्गंथाणं सरीरगस्स किंचि आबाहं वा वाबाहं वा उप्पाएत्तए छविच्छेदं वा करेत्तए, तए णं ते आजीविया थेरा गोसालं मंखलिपुत्तं समणेहिं निग्गंथेहिं धम्मियाए पडिचोयणाए पडिचोएज्जमाणं धम्मियाए पडिसारणाए पडिसारिज्जमाणं धम्मिएणं पडोयारेण य पडोयारेज्जमाणं अट्ठेहि य हेऊहि य जाव कीरमाणं आसुरुत्तं जाव मिसिमिसेमाणं समणाणं निग्गंथाणं सरीरगस्स किंचि आबाहं वा वाबाहं वा छविच्छेदं वा अकरेमाणं पासंति पा० २ गोसालस्स मंखलिपुत्तस्स अंतियाओ आयाए अवक्कमंति आयाए अवक्कमित्ता २ जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छंति ते० समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आ० २ वंदंति नमं० २ समणं भगवं महावीरं उवसंप-ज्जित्ताणं विहरंति, अत्थेगइया आजीविया थेरा गोसालं चेव मंखलिपुत्तं उवसंपज्जित्ताणं विहरंति । तए णं से गोसाले मंखलिपुत्ते जस्सट्ठाए हव्वमागए तमट्ठं असाहेमाणे रुंदाइं पलोएमाणे दीहुण्हाइं नीसासमाणे दाढियाए लोमाए लुंचमाणे अवडुं कंडूयमाणे पुयलिं पप्फोडेमाणे हत्थे विणिद्धुणमाणे दोहिवि पाएहिं भूमिं कोट्टेमाणे हाहा अहो ! हओऽहमस्सीतिकट्टु समणस्स भ० महा० अंतियाओ कोट्ठयाओ चेइयाओ पडिनिक्खमति प० २ जेणेव सावत्थी नगरी जेणेव हालाहलाए कुंभकारीए कुंभकारावणे तेणेव उवाग-च्छइ ते० २ हालाहलाए कुंभकारीए कुंभकारावणंसि अंबकूणगहत्थगए मज्जपाणगं पियमाणे अभिक्खणं

१५ गोशा-लकशते तेजोलेश्या-मोचनं सू ५५३

॥६७९॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गोशालक-चरित्रं

गायमाणे अभिक्खणं नच्चमाणे अभिक्खणं हालाहलाए कुंभकारीए अंजलिकम्मं करेमाणे सीयलएणं मट्टियापाणएणं आयंचणिउदएणं गायाइं परिसिंचमाणे विहरति (सूत्रं५५३)। अज्जोति समणे भगवं महावीरे समणे निग्गंथे आमंतेत्ता एवं वयासी–जावतिएणं अज्जो! गोसालेणं मंखलिपुत्तेणं ममं वहाए सरीरगंसि तेये निसट्ठे से णं अलाहि पज्जत्ते सोलसण्हं जणवयाणं, तं०–अंगाणं वंगाणं मगहाणं मलयाणं मालवगाणं अत्थाणं वत्थाणं कोत्थाणं पाढाणं लाढाणं वज्जाणं मोलीणं कासीणं कोसलाणं अवाहाणं सुंभुत्तराणं घाताए वहाए उच्छादणयाए भासीकरणयाए, जंपिय अज्जो! गोसाले मंखलिपुत्ते हालाहलाए कुंभकारीए कुंभकारावणंसि अंबकूणगहत्थगए मज्जपाणं पियमाणे अभिक्खणं जाव अंजलिकम्मं करेमाणे विहरइ तस्सवि य णं वज्जस्स पच्छादणट्ठयाए इमाइं अट्ठ चरिमाइं पन्नवेति, तंजहा–चरिमे पाणे चरिमे गेये चरिमे नट्टे चरिमे अंजलिकम्मे चरिमे पोक्खलसंवट्टए महामेहे चरिमे सेयणए गंधहत्थी चरिमे महासिलाकंटए संगामे अहं च णं इमीसे ओसप्पिणीए चउवीसाए तित्थकराणं चरिमे तित्थकरे सिज्झिस्सं जाव अंतं करेस्संति, जंपि य अज्जो! गोसाले मंखलिपुत्ते सीयलएणं मट्टियापाणएणं आयंचणिउदएणं गायाइं परिसिंचमाणे विहरइ तस्सवि य णं वज्जस्स पच्छादणट्ठयाए इमाइं चत्तारि पाणगाइं पन्नवेति, से किं तं पाणए?, पाणए चउव्विहे पन्नत्ते, तंजहा–गोपुट्ठए हत्थमद्दियए आयवतत्तए सिलापब्भट्ठए, सेत्तं पाणए, से किं तं अपाणए?, अपाणए चउव्विहे पण्णत्ते, तंजहा–थालपाणए तयापाणए सिंबलिपाणए सुद्धपाणए, से किं तं थालपाणए?, २ जण्णं दाथा-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गोशालक-चरित्रं

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥६८०॥

लगं वा दावारगं वा दाकुंभगं वा दाकलसं वा सीयलगं उल्लगं हत्थेहिं परामुसइ न य पाणियं पियइ सेत्तं थालपाणए, से किं तं तयापाणए ?, २ जण्णं अंबं वा अंबाडगं वा जहा पओगपदे जाव बोरं वा तिंदुरुयं वा [तरुयं] वा तरुणगं वा आमगं वा आसगंसि आवीलेति वा पवीलेति वा न य पाणियं पियइ सेत्तं तया-पाणए, से किं तं सिंबलिपाणए ?, २ जण्णं कलसंगलियं वा मुग्गसिंगलियं वा माससंगलियं वा सिंबलि-संगलियं वा तरुणियं आमियं आसगंसि आवीलेति वा पवीलेति वा ण य पाणियं पियति सेत्तं सिंबलि-पाणए, से किं तं सुद्धपाणए ?, सु० जण्णं छम्मासे सुद्धखाइमं खाइति दो मासे पुढविसंथारोवगए य दो मासे कट्ठसंथारोवगए दो मासे दब्भसंथारोवगए, तस्स णं बहुपडिपुन्नाणं छण्हं मासाणं अंतिमराइए इमे दो देवा महड्ढिया जाव महेसक्खा अंतियं पाउब्भवंति, तं०–पुन्नभद्दे य माणिभद्दे य, तए णं ते देवा सीयलएहिं उल्लएहिं हत्थेहिं गायाइं परामुसंति जे णं ते देवे साइज्जति से णं आसीविसत्ताए कम्मं पकरेंति जे णं ते देवे नो साइज्जति तस्स णं संसि सरीरगंसि अगणिकाए संभवति, से णं सएणं तेएणं सरीरगं झामेति स० २ तओ पच्छा सिज्झति जाव अंतं करेंति, सेत्तं सुद्धपाणए । तत्थ णं सावत्थीए नयरीए अयंपुले णामं आजी-विओवासए परिवसइ अड्ढे जाव अपरिभूए जहा हालाहला जाव आजीवियसमएणं अप्पाणं भावेमाणे विहरति, तए णं तस्स अयंपुलस्स आजीविओवासगस्स अन्नया कदायि पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि कुडुंबजागरियं जाग-रमाणस्स अयमेयारूवे अब्भत्थिए जाव समुप्पज्जित्था–किंसंठिया हल्ला पण्णत्ता?,तए णं तस्स अयंपुलस्स आजी-

१५ गोशा-लकशते गोशालते-जोलेश्या-शक्तिः चर-माष्टकमयं-पुलागमश्च सू ५५४

॥६८०॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गोशालक-चरित्रं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [५५१--५५६]

दीप अनुक्रम [६४९--६५४]

ओवासगस्स दोच्चंपि अयमेयारूवे अब्भत्थिए जाव समुप्पज्जित्था–एवं खलु ममं धम्मायरिए धम्मोवदेसए गोसाले मंखलिपुत्ते उप्पन्ननाणदंसणधरे जाव सव्वन्नू सव्वदरिसी इहेव सावत्थीए नगरीए हालाहलाए कुंभकारीए कुंभकारावणंसि आजीवियसंघसंपरिवुडे आजीवियसमएणं अप्पाणं भावेमाणे विहरइ, तं सेयं खलु मे कल्लं जाव जलंते गोसालं मंखलिपुत्तं वंदित्ता जाव पज्जुवासेत्ता इमं एयारूवं वागरणं वागरित्तए-त्तिकट्टु एवं संपेहेति एवं० २ कल्लं जाव जलंते पहाए कयजाव अप्पमहग्घाभरणालंकियसरीरे साओ गिहाओ पडिनिक्खमति सा० २ पायविहारचारेणं सावत्थिं नगरिं मज्झंमज्झेणं जेणेव हालाहलाए कुंभकारीए कुंभकारावणे तेणेव उवाग० २ पासइ गोसालं मंखलिपुत्तं हालाहलाए कुंभकारीए कुंभकारावणंसि अंबकूणगहत्थगयं जाव अंजलिकम्मं करेमाणं सीयलयाएणं मट्टिया जाव गायाइं परिसिंचमाणं पासइ २ लज्जिए विलिए विड्डे सणियं २ पच्चोसक्कइ, तए णं ते आजीविया थेरा अयंपुलं आजीवियोवासगं लज्जियं जाव पच्चोसक्कमाणं पासइ पा० २ एवं वयासी–एहि ताव अयंपुला ! एत्तओ, तए णं से अयंपुले आजीवियोवासए आजीवियथेरेहिं एवं वुत्ते समाणे जेणेव आजीविया थेरा तेणेव उवागच्छइ तेणेव० २ आजीविए थेरे वंदति नमंसति २ नच्चासन्ने जाव पज्जुवासइ, अयंपुलाइ आजीविया थेरा अयंपुलं आजीवियोवासगं एवं व०–से नूणं ते अयंपुला ! पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि जाव किंसंठिया हल्ला पण्णत्ता ?, तए णं तव अयंपुला ! दोच्चंपि अयमेया० तं चेव सव्वं भाणियव्वं जाव सावत्थिं नगरिं मज्झंमज्झेणं जेणेव हालाहलाए कुंभकारीए कुंभकारा-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गोशालक-चरित्रं

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥६८१॥

वणे जेणेव इहं तेणेव हव्वमागए, से नूणं ते अयंपुला ! अट्ठे समट्ठे ?, हंता अत्थि, जंपि य अयंपुला ! तव धम्मायरिए धम्मोवदेसए गोसाले मंखलिपुत्ते हालाहलाए कुंभकारीए कुंभकारावणंसि अंबकूणगहत्थगए जाव अंजलिं करेमाणे विहरति तत्थवि णं भगवं इमाइं अट्ठ चरिमाइं पन्नवेति, तं०–चरिमे पाणे जाव अंतं करेस्सति, जेवि य अयंपुला ! तव धम्मायरिए धम्मोवदेसए गोसाले मंखलिपुत्ते सीयलयाए णं मट्टिया जाव विहरति तत्थवि णं भंते ! इमाइं चत्तारि पाणगाइं चत्तारि अपाणगाइं पन्नवेति, से किं तं पाणए ? २ जाव तओ पच्छा सिज्झति जाव अंतं करेति, तं गच्छ णं तुमं अयंपुला ! एस चेव तव धम्मायरिए धम्मोवदेसए गोसाले मंखलिपुत्ते इमं एयारूवं वागरणं वागरित्तएत्ति, तए णं से अयंपुले आजीवियोवासए आजीवियेहिं थेरेहिं एवं वुत्ते समाणे हट्ठतुट्ठे उट्ठाए उट्ठेति उ० २ जेणेव गोसाले मंखलिपुत्ते तेणेव पहारेत्थ गमणाए, तए णं ते आजीविया थेरा गोसालस्स मंखलिपुत्तस्स अंबकूणगपडावणट्ठयाए एगंतमंते संगारं कुवइ, तए णं से गोसाले मंखलिपुत्ते आजीवियाणं थेराणं संगारं पडिच्छइ सं० २ अंबकूणगं एगंतमंते एडेइ, तए णं से अयंपुले आजीवियोवासए जेणेव गोसाले मंखलिपुत्ते तेणेव उवाग० तेणेव० २ गोसालं मंखलिपुत्तं तिक्खुत्तो जाव पज्जुवासति, अयंपुलादी गोसाले मंखलिपुत्ते अयंपुलं आजीवियोवासगं एवं वयासी–से नूणं अयंपुला ! पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि जाव जेणेव ममं अंतियं तेणेव हव्वमागए, से नूणं अयंपुला ! अट्ठे समट्ठे ?, हंता अत्थि, तं नो खलु एस अंबकूणए अंबचोयए णं एसे, किंसंठिया हल्ला पन्नत्ता ?,

१४ गोशालकशते गोशालतेजोलेश्याशक्तिः चरमाष्टकमर्यं-पुलागमश्च सू ५५४

॥६८१॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गोशालक-चरित्रं

वंसीमूलसंठिया हल्ला पण्णत्ता, वीणं वाएहि रे वीरगा वी० २, तए णं से अयंपुले आजीवियोवासए गोसालेणं मंखलिपुत्तेणं इमं एयारूवं वागरणं वागरिए समाणे हट्ठतुट्ठे जाव हियए गोसालं मंखलिपुत्तं वं० न० २ पसिणाइं पु० प० २ अट्ठाइं परियादियइ अ० २ उट्ठाए उट्ठेति उ० २ गोसालं मंखलिपुत्तं वं० न० २ जाव पडिगए। तए णं से गोसाले मंखलिपुत्ते अप्पणो मरणं आभोएइ २ आजीविए थेरे सद्दावेइ आ० २ एवं वयासी–तुज्झे णं देवाणुप्पिया ! ममं कालगयं जाणेत्ता सुरभिणा गंधोदएणं पहाणेह सु० २ पम्हलसुकुमालाए गंधकासाईए गायाइं लूहेह गा० २ सरसेणं गोसीसचंदणेणं गायाइं अणुलिंपह स० २ महरिहं हंसलक्खणं पाडसाडगं नियंसेह मह० २ सव्वालंकारविभूसियं करेह स० २ पुरिससहस्सवाहिणिं सीयं दूरूहेह पुरि० २ सावत्थीए नयरीए सिंघाडगजावपहेसु महया महया सद्देणं उग्घोसेमाणा एवं वदह–एवं खलु देवाणुप्पिया ! गोसाले मंखलिपुत्ते जिणे जिणप्पलावी जाव जिणसद्दं पगासेमाणे विहरित्ता इमीसे ओसप्पिणीए चउवीसाए तित्थयराणं चरिमे तित्थयरे सिद्धे जाव सव्वदुक्खप्पहीणे इड्ढिसक्कारसमुदएणं मम सरीरगस्स णीहरणं करेह, तए णं ते आजीविया थेरा गोसालस्स मंखलिपुत्तस्स एयमट्ठं विणएणं पडिसुणेंति (सूत्रं५५४)। तए णं तस्स गोसालस्स मंखलिपुत्तस्स सत्तरत्तंसि परिणममाणंसि पडिलद्धसम्मत्तस्स अयमेयारूवे अब्भत्थिए जाव समुप्पज्जित्था–णो खलु अहं जिणे जिणप्पलावी जाव जिणसद्दं पगासेमाणं विहरति, अहं णं गोसाले चेव मंखलिपुत्ते समणघायए समणमारए समणपडिणीए आयरियउवज्झायाणं अयसकारए अवन्नका-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गोशालक-चरित्रं

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥६८२॥

रए अकित्तिकारए बहूहिं असब्भावुब्भावणाहिं मिच्छत्ताभिनिवेसेहि य अप्पाणं वा परं वा तदुभयं वा वुग्गाहेमाणे वुप्पाएमाणे विहरित्ता सएणं तेएणं अन्नाइट्ठे समाणे अंतो सत्तरत्तस्स पित्तज्जरपरिगयसरीरे दाहवक्कंतीए छउमत्थे चेव कालं करेस्सं, समणे भगवं महावीरे जिणे जिणप्पलावी जाव जिणसद्दं पगासेमाणे विहरइ, एवं संपेहेति एवं संपेहित्ता आजीविए थेरे सद्दावेइ आ० २ उच्चावयसवहसाविए करेति उच्चा० २ एवं वयासी–नो खलु अहं जिणे जिणप्पलावी जाव पकासेमाणे विहरइ, अहन्नं गोसाले मंखलिपुत्ते समणघायए जाव छउमत्थे चेव कालं करेस्सं, समणे भगवं महावीरे जिणे जिणप्पलावी जाव जिणसद्दं पगासेमाणे विहरइ, तं तुज्झे णं देवाणुप्पिया ! ममं कालगयं जाणेत्ता वामे पाए सुंबेणं बंधह बा० २ तिक्खुत्तो मुहे उद्धहह ति० २ सावत्थीए नगरीए सिंघाडगजाव पहेसु आकड्ढविकड्ढिं करेमाणा महया २ सद्देणं उग्घोसेमाणा उ० एवं वदह–नो खलु देवाणुप्पिया ! गोसाले मंखलिपुत्ते जिणे जिणप्पलावी जाव विहरिए, एस णं गोसाले चेव मंखलिपुत्ते समणघायए जाव छउमत्थे चेव कालगए, समणे भगवं महावीरे जिणे जिणप्पलावी जाव विहरइ महया अणिड्ढीअसक्कारसमुदएणं ममं सरीरगस्स नीहरणं करेज्जाह, एवं वदित्ता कालगए (सूत्रं५५५) । तए णं आजीविया थेरा गोसालं मंखलिपुत्तं कालगयं जाणित्ता हालाहलाए कुंभकारीए कुंभकारावणस्स दुवाराइं पिहेंति दु० २ हालाहलाए कुंभकारीए कुंभकारावणस्स बहुमज्झदेसभाए सावत्थिं नगरिं आलिहंति सा० २ गोसालस्स मंखलिपुत्तस्स सरीरगं वामे पादे सुंबेणं बंधंति बा० २ तिक्खुत्तो

१५ गोशालकशतेसम्यक्त्वोत्पादः सू ५५५ तदुपासककृत नीहरणं सू ५५६

॥६८२॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गोशालक-चरित्रं

मुहे उद्धुट्ठंति २ सावत्थीए नगरीए सिंघाडगजाव पहेसु आकड्ढिविकड्ढिं करेमाणा पीयं २ सद्देणं उग्घोसेमाणा उ० २ एवं वयासी–नो खलु देवाणुप्पिया ! गोसाले मंखलिपुत्ते जिणे जिणप्पलावी जाव विहरइ एस णं चेव गोसा० मंखलिपु० समणघायए जाव छउमत्थे चेव कालगए सम० भ० महा० जिणे जिणप्प० जाव विहरइ सवहपडिमोक्खणगं करेंति स० २ दोच्चंपि पूयासक्कारथिरीकरणट्ठयाए गोसालस्स मंखलिपु० वामाओ पादाओ सुंबं मुयंति सु० २ हालाहला० कुं० कुं० दुवारवयणाइं अवगुणंति अ० २ गोसालस्स मंखलिपुत्तस्स सरीरगं सुरभिणा गंधोदएणं ण्हाणेंति तं चेव जाव महया इड्ढिसक्कारसमुदएणं गोसालस्स मंखलिपुत्तस्स सरीरस्स नीहरणं करेंति (सूत्रं ५५६) ॥

'गड्डं व'त्ति गर्त्तः श्वभ्रं 'दरिं'ति शृगालादिकृतभूविवरविशेषं 'दुग्गं'ति दुःखगम्यं वनगहनादि 'निन्नं'ति निम्नं शुष्कसरःप्रभृति 'पवयं व'त्ति प्रतीतं 'विसमं'ति गर्त्तपाषाणादिव्याकुलम् 'एगेण महं'ति एकेन महता 'तणसूएण व'त्ति 'तृणसूकेन' तृणाग्रेण 'अणावरिए'त्ति अनावृतोऽसावावरणस्याल्पत्वात् 'उवलभसि'त्ति उपलम्भयसि दर्शयसीत्यर्थः 'तं मा एवं गोसाल'त्ति इह कुर्विति शेषः 'नारिहसि गोसाल'त्ति इह चैवं कर्त्तुमिति शेषः, 'सचेव ते सा छाय'त्ति सैव ते छाया अन्यथा दर्शयितुमिष्टा छाया–प्रकृतिः । 'उच्चावयाहिं'ति असमञ्जसाभिः 'आउसणाहिं'ति मृतोऽसि त्वमित्यादिभिर्वचनैः 'आक्रोशयति' शपति 'उद्धंसणाहिं'ति दुष्कुलीनेत्यादिभिः कुलाद्यभिमानपातनार्थैर्वचनैः 'उद्धंसेइ'त्ति कुलाद्यभिमानादधः पातयतीव 'निब्भंछणाहिं'ति न त्वया मम प्रयोजनमित्यादिभिः परुषवचनैः 'निब्भं-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥६८३॥

च्छेइ'त्ति नितरां दुष्टमभिधत्ते 'निच्छोडणाहिं'ति त्यजास्मदीयांस्तीर्थकरालङ्कारानित्यादिभिः 'निच्छोडेइ'त्ति प्राप्तमर्थं त्याजयतीति 'नट्ठेसि कयाइ'त्ति नष्टः स्वाचारनाशात् 'असि' भवसि त्वं 'कयाइ'त्ति कदाचिदिति वितर्कार्थः अहमेवं मन्ये यदुत नष्टस्त्वमसीति 'विणट्ठेसि'त्ति मृतोऽसि 'भट्ठोसि'त्ति भ्रष्टोऽसि–सम्पदः व्यपेतोऽसि त्वं धर्मत्रयस्य यौग-पद्येन योगात् नष्टविनष्टभ्रष्टोऽसीति 'नाहि ते'त्ति नैव ते । 'पाईणजाणवए'त्ति प्राचीनजानपदः प्राच्य इत्यर्थः 'पव्वा-विए'त्ति शिष्यत्वेनाभ्युपगतः 'अब्भुवगमो पवज्ज'त्ति वचनात्, 'मुंडाविए'त्ति मुण्डितस्य तस्य शिष्यत्वेनानुमननात् 'सेहाविए'त्ति व्रतित्वेन सेधितः व्रतिसमाचारसेवायां तस्य भगवतो हेतुभूतत्वात् 'सिक्खाविए'त्ति शिक्षितस्तेजो-लेश्याद्युपदेशदानतः 'बहुस्सुईकए'त्ति नियतिवादादिप्रतिपत्तिहेतुभूतत्वात् 'कोसलजाणवए'त्ति अयोध्यादेशोत्पन्नः । 'वाउक्कलियाइ व'त्ति वातोत्कलिका स्थित्वा २ यो वातो वाति सा वातोत्कलिका 'वायमंडलियाइ व'त्ति मण्डलिकाभिर्यो वाति 'सेलंसि वा' इत्यादौ तृतीयार्थे सप्तमी 'आवरिज्जमाणि'त्ति स्खल्यमाना 'निवारिज्जमाणि'त्ति निवर्त्यमाना 'नो कमइ'त्ति न क्रमते' न प्रभवति 'नो पक्कमइ'त्ति न प्रकर्षेण क्रमते 'अंचितांचिं'ति अञ्चिते–सकृद्नते अञ्चितेन वा–स-कृद्नतेन देशेनाञ्चिः–पुनर्गमनमञ्चिताञ्चिः, अथवाऽऽङ्या–गमनेन सह आञ्चिः–आगमनमङ्याञ्चिर्गमागम इत्यर्थः तां करोति 'अन्नाइट्ठे'त्ति 'अन्वाविष्टः' अभिव्याप्तः 'सुहत्थि'त्ति सुहस्तीव सुहस्ती 'अहप्पहाणे जणे'त्ति यथाप्रधानो जनो यो यः प्रधान इत्यर्थः, 'अगणिझामिए'त्ति अग्निना ध्मातो–दग्धो ध्यामितो वा ईषद्दग्धः 'अगणिझूसिए'त्ति अग्निना सेवितः क्षपितो वा 'अगणिपरिणमिए'त्ति अग्निना परिणामितः–पूर्वस्वभावत्याजनेनात्मभावं नीतः, ततश्च हततेजा धूल्या-

१५ गोशा-लकशतं

॥६८३॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	गोशालक-चरित्रं

दिना गततेजाः क्वचित् स्वत एव नष्टतेजाः क्वचिदव्यक्तीभूततेजाः भ्रष्टतेजाः क्वचित्स्वरूपभ्रष्टतेजा–ध्यामतेजा इत्यर्थः लुप्ततेजाः क्वचित् अर्द्धीभूततेजाः 'लुप्लृ च्छेदने छिदिर् द्वैधीभावे' इतिवचनात्, किमुक्तं भवति ?–'विनष्टतेजा' निःसत्ताकीभूततेजाः, एकार्था वैते शब्दाः,'छंदेणं'ति स्वाभिप्रायेण यथेष्टमित्यर्थः 'निप्पट्ठपसिणवागरणं'ति निर्गतानि स्पष्टानि प्रश्नव्याकरणानि यस्य स तथा तम् । 'रुंदाइं पलोएमाणे'त्ति दीर्घा दृष्टीर्दिक्षु प्रक्षिपन्नित्यर्थः, मानधनानां हृतमानानां लक्षणमिदं, 'दीहुण्हाइं नीसासमाणे'त्ति निःश्वासानिति गम्यते 'दाढियाए लोमाइं'ति उत्तरौष्ठस्य रोमाणि 'अवडुं'ति कृकाटिकां 'पुयलिं पप्फोडेमाणे'त्ति 'पुततटीं' पुतप्रदेशं प्रस्फोटयन् 'विणिद्धुणमाणे'त्ति विनिर्धुन्वन् 'हाहा अहो हओऽहमस्सीतिकट्टु'त्ति हा हा अहो हतोऽहमस्मीति कृत्वा–इति भणित्वेत्यर्थः 'अंबकूणगहत्थगए'त्ति आम्रफलहस्तगतः स्वकीयतपस्तेजोजनितदाहोपशमनार्थमाम्रास्थिकं चूषन्निति भावः, गानादयस्तु मद्यपानकृता विकाराः समवसेयाः, 'मट्टियापाणएणं'ति मृत्तिकामिश्रितजलेन, मृत्तिकाजलं सामान्यमप्यस्त्यत आह—'आयंचणिओदएणं'ति इह टीकाव्याख्या–आतन्यनिकोदकं कुम्भकारस्य यद्भाजने स्थितं तेमनाय मृन्मिश्रं जलं तेन । 'अलाहि पज्जत्ते'त्ति 'अलम्' अत्यर्थं 'पर्याप्तः' शक्तो घातायेति योगः घातायेति हननाय तदाश्रितत्रसापेक्षया 'वहाए'त्ति वधाय एतच्च तदाश्रितस्थावरापेक्षया 'उच्छायणयाए'त्ति उच्छादनतायै सचेतनाचेतनतद्गतवस्तूच्छादनायेति, एतच्च प्रकारान्तरेणापि भवतीत्यग्निपरिणामोपदर्शनायाह—'भासीकरणयाए'त्ति । 'वज्जस्स'त्ति वर्जस्य–अवद्यस्य वज्रस्य वा मद्यपानादिपापस्येत्यर्थः 'चरमे'त्ति न पुनरिदं भविष्यतीतिकृत्वा चरमं, तत्र पानकादीनि चत्वारि स्वगतानि, चरमता चैषां स्वस्य निर्वाणगमनेन

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पुनरकरणात्, एतानि च किल निर्वाणकाले जिनस्यावश्यम्भावीनीति नास्त्येतेषु दोष इत्यस्य तथा नाहमेतानि दाहोपशमायोपसेवामीत्यस्य चार्थस्य प्रकाशनार्थत्वादवद्यप्रच्छादनार्थानि भवन्ति, पुष्कलसंवर्त्तकादीनि तु त्रीणि बाह्यानि प्रकृतानुपयोगेऽपि चरमसामान्याज्जनचित्तरञ्जनाय चरमाण्युक्तानि, जनेन हि तेषां सातिशयत्वाच्चरमता श्रद्धीयते ततस्तैः सहोक्तानाम्बकूणकपानकादीनामपि सा सुश्रद्धेया भवत्विति बुद्धेयेति, 'पाणगाइं'ति जलविशेषा व्रतियोग्याः 'अपाणगाइं'त्ति पानकसदृशानि शीतलत्वेन दाहोपशमहेतवः 'गोपुट्ठए'त्ति' गोपृष्ठाद्यत्पतितं 'हत्थमद्दियं'ति हस्तेन मर्दितं–मृदितं मलितमित्यर्थः यथैतदेवातन्यनिकोदकं 'थालपाणए'त्ति स्थालं–त्रटं तत्पानकमिव दाहोपशमहेतुत्वात् स्थालपानकम्, उपलक्षणत्वादस्य भाजनान्तरग्रहोऽपि दृश्यः, एवमन्यान्यपि नवरं त्वक्–छल्ली सीम्बली–कलायादिफलिका, 'सुद्धपाणए'त्ति देवहस्तस्पर्श इति, 'दाथालय'त्ति उदकार्द्रं स्थालकं 'दावारगं'ति उदकवारकं 'दाकुंभग'त्ति इह कुम्भो महान् 'दाकलसं'ति कलशस्तु लघुतरः 'जहा पओगपए'त्ति प्रज्ञापनायां षोडशपदे, तत्र चेदमेवमभिधीयते—'भद्दं वा फणसं वा दालिमं वा'इत्यादि 'तरुणगं'ति अभिनवम् 'आमगं'ति अपक्वम् 'आसगंसि'त्ति मुखे 'आपीडयेत्' ईषत् प्रपीडयेत् प्रक्षिपेत इह यदिति शेषः 'कल'त्ति कलायो–धान्यविशेषः 'सिंबलि'त्ति वृक्षविशेषः 'पुढविसंथारोवगए' इत्यत्र वर्त्तत इति शेषो दृश्यः 'जे णं ते देवे साइज्जइ'त्ति यस्तौ देवौ 'स्वदते' अनुमन्यते 'संसि'त्ति स्वके स्वकीये इत्यर्थः। 'हल्ल'त्ति गोवालिकातृणसमानाकारः कीटकविशेषः 'जाव सव्वन्नू' इति इह यावत्करणादिदं दृश्यं—'जिणे अरहा केवली'ति, 'वागरणं'ति प्रश्नः 'वागरित्तए'त्ति प्रष्टुं 'विलिए'त्ति 'व्यलीकितः' सञ्जातव्यलीकः 'विड्डे'त्ति व्रीडाऽस्यास्तीति व्रीडः–

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गोशालक-चरित्रं

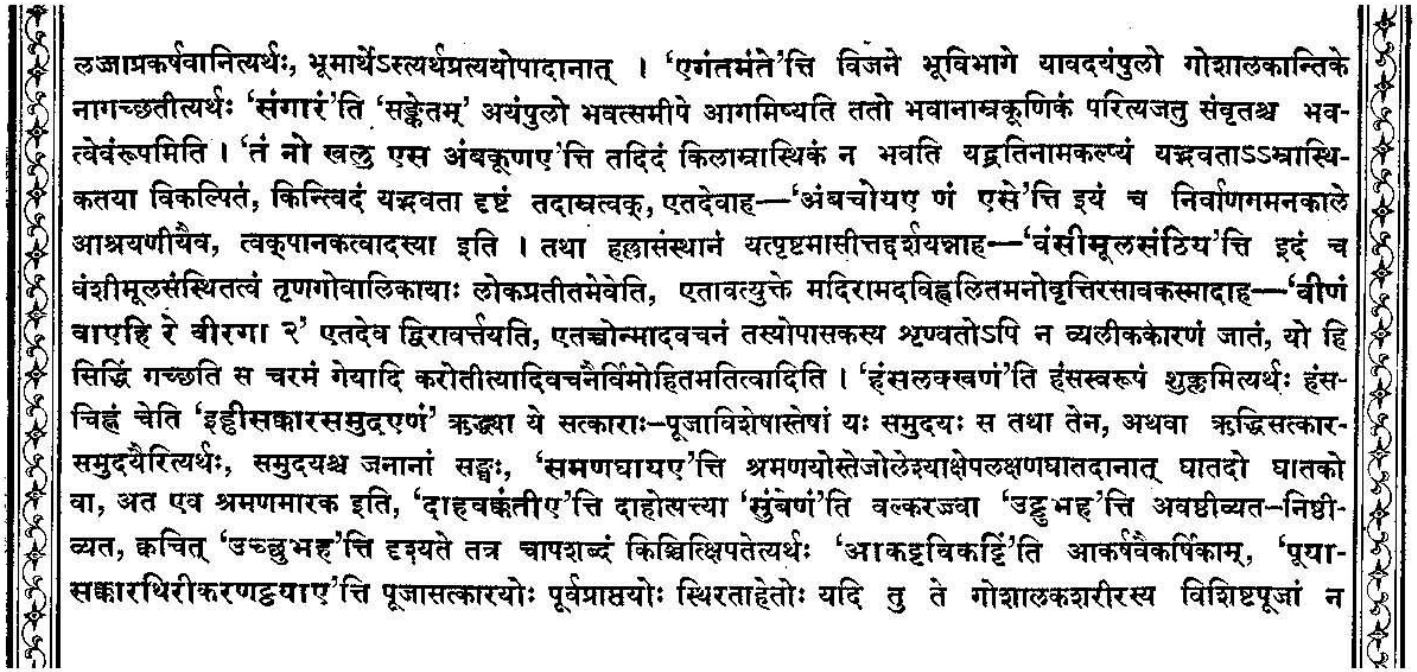

लज्जाप्रकर्षवानित्यर्थः, भूमार्थेऽस्त्यर्थप्रत्ययोपादानात् । 'एगंतमंते'त्ति विजने भूविभागे यावदयंपुत्रो गोशालकान्तिके नागच्छतीत्यर्थः 'संगारं'ति 'सङ्केतम्' अयंपुत्रो भवत्समीपे आगमिष्यति ततो भवानाम्रकूणिकं परित्यजतु संवृतश्च भवत्वेवंरूपमिति । 'तं नो खलु एस अंबकूणए'त्ति तदिदं किलाम्रास्थिकं न भवति यद्भूतिनामकल्प्यं यद्भवताऽऽम्रास्थिकतया विकल्पितं, किन्त्विदं यद्भवता दृष्टं तदाम्रत्वक्, एतदेवाह—'अंबचोयए णं एसे'त्ति इयं च निर्वाणगमनकाले आश्रयणीयैव, त्वक्पानकत्वादस्या इति । तथा हल्लासंस्थानं यत्पृष्टमासीत्तद्दर्शयन्नाह—'वंसीमूलसंठिय'त्ति इदं च वंशीमूलसंस्थितत्वं तृणगोवालिकायाः लोकप्रतीतमेवेति, एतावत्युक्ते मदिरामदविह्वलितमनोवृत्तिरसावकस्मादाह—'वीणं वाएहि रे वीरगा २' एतदेव द्विरावर्त्तयति, एतच्चोन्मादवचनं तस्योपासकस्य शृण्वतोऽपि न व्यलीककारणं जातं, यो हि सिद्धिं गच्छति स चरमं गेयादि करोतीत्यादिवचनैर्विमोहितमतित्वादिति । 'हंसलक्खणं'ति हंसस्वरूपं शुक्लमित्यर्थः हंसचिह्नं चेति 'इड्ढीसक्कारसमुदएणं' ऋद्ध्या ये सत्काराः—पूजाविशेषास्तेषां यः समुदयः स तथा तेन, अथवा ऋद्धिसत्कारसमुदयैरित्यर्थः, समुदयश्च जनानां सङ्घः, 'समणघायए'त्ति श्रमणयोस्तेजोलेश्याक्षेपलक्षणघातदानात् घातदो घातको वा, अत एव श्रमणमारक इति, 'दाहवक्कंतीए'त्ति दाहोत्पत्त्या 'सुंबेणं'ति वल्करज्ज्वा 'उट्ठुभइ'त्ति अवष्टीव्यत—निष्ठीव्यत, क्वचित् 'उच्छुभइ'त्ति दृश्यते तत्र चापशब्दं किञ्चिल्लिक्षिपतेत्यर्थः 'आकड्ढविकड्ढि'ति आकर्षवैकर्षिकाम्, 'पूयासक्कारथिरीकरणट्ठयाए'त्ति पूजासत्कारयोः पूर्वप्राप्तयोः स्थिरताहेतोः यदि तु ते गोशालकशरीरस्य विशिष्टपूजां न

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥६८५॥

कुर्वन्ति तदा लोको जानाति नायं जिनो बभूव न चैते जिनशिष्या इत्येवमस्थिरौ पूजासत्कारौ स्यातामिति तयोः स्थिरीकरणार्थम् 'अवगुणंति'त्ति अपावृण्वन्ति ।

तए णं समं० भ० म० अन्नया कदायि सावत्थीओ नगरीओ कोट्ठयाओ चेइयाओ पडिनिक्खमति पडि० २ बहिया जणवयविहारं विहरइ । तेणं कालेणं २ मेंढियगामे नामं नगरे होत्था वन्नओ, तस्स णं मेंढियगामस्स नगरस्स बहिया उत्तरपुरच्छिमे दिसीभाए एत्थ णं सालकोट्ठए नामं चेइए होत्था वन्नओ जाव पुढविसिलापट्टओ, तस्स णं सालकोट्ठगस्स णं चेइयस्स अदूरसामंते एत्थ णं महेगे मालुयाकच्छए यावि होत्था किण्हे किण्होभासे जाव निकुरंबभूए पत्तिए पुप्फिए फलिए हरियगरेरिज्जमाणे सिरीए अतीव २ उवसोभेमाणे चिट्ठति, तत्थ णं मेंढियगामे नगरे रेवती नामं गाहावइणी परिवसति अड्ढा जाव अपरिभूया, तए णं समणे भगवं महावीरे अन्नया कदायि पुव्वाणुपुव्विं चरमाणे जाव जेणेव मेंढियगामे नगरे जेणेव साण(ल)कोट्ठे चेइए जाव परिसा पडिगया । तए णं समणस्स भगवओ महावीरस्स सरीरगंसि विपुले रोगायंके पाउब्भूए उज्जले जाव दुरहियासे पित्तज्जरपरिगयसरीरे दाहवक्कंतीए यावि विहरति, अवियाइं लोहियवच्चाइंपि पकरेइ, चाउव्वन्नं वागरेति–एवं खलु समणे भ० महा० गोसालस्स मंखलिपुत्तस्स तवेणं तेएणं अन्नाइट्ठे समाणे अंतो छण्हं मासाणं पित्तज्जरपरिगयसरीरे दाहवक्कंतीए छउमत्थे चेव कालं करेस्सति । तेणं कालेणं २ समणस्स भग० महा० अंतेवासी सीहे नामं अणगारे पगइभद्दए जाव विणीए मालुयाकच्छगस्स अदूरसामंते छट्ठंछ-

१५ गोशालकशते सिंहस्यानीतौषधादाहशमः सू ५५७

॥६८५॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

ट्ठेणं अनिक्खित्तेणं २ तवोकम्मेणं उड्ढंबाहा जाव विहरति, तए णं तस्स सीहस्स अणगारस्स झाणंतरियाए वट्ट-
माणस्स अयमेयारूवे जाव समुप्पज्जित्था–एवं खलु ममं धम्मायरियस्स धम्मोवदेसगस्स समणस्स भगवओ
महावीरस्स सरीरगंसि विउले रोगायंके पाउब्भूए उज्जले जाव छउमत्थे चेव कालं करिस्सति, वदिस्संति
य णं अन्नतित्थिया छउमत्थे चेव कालगए, इमेणं एयारूवेणं महया मणोमाणसिएणं दुक्खेणं अभिभूए
समाणे आयावणभूमीओ पच्चोरुभइ आया० २ जेणेव मालुयाकच्छए तेणेव उवा० २ मालुयाकच्छगं अंतो
२ अणुपविसइ मालुया० २ महया २ सद्देणं कुहुकुहुस्स परुन्ने। अज्जोत्ति समणे भगवं महावीरे समणे
निग्गंथे आमंतेति आ० २ एवं वयासी–एवं खलु अज्जो! ममं अंतेवासी सीहे नामं अणगारे पगइभद्दए
तं चेव सव्वं भाणियव्वं जाव परुन्ने, तं गच्छह णं अज्जो! तुज्झे सीहं अणगारं सद्दह, तए णं ते समणा नि-
ग्गंथा समणेणं भगवया महावीरेणं एवं वुत्ता समणा समणं भगवं महावीरं वं० न० २ समणस्स भग०
म० अंतियाओ साण(ल)कोट्ठयाओ चेइयाओ पडिनिक्खमंति सा० २ जेणेव मालुयाकच्छए जेणेव सीहे अण-
गारे तेणेव उवागच्छन्ति २ सीहं अणगारं एवं वयासी–सीहा! धम्मायरिया सद्दावेंति, तए णं से सीहे अण-
गारे समणेहिं निग्गंथेहिं सद्धिं मालुयाकच्छगाओ पडिनिक्खमति प० २ जेणेव साण(ल)कोट्ठए चेइए जेणेव
समणे भगवं महावीरे तेणेव उवा० २ समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आ० २ जाव पज्जुवासति, सीहादि
समणे भगवं महावीरे सीहं अणगारं एवं वयासी–से नूणं ते सीहा! झाणंतरियाए वट्टमाणस्स अयमेया-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	गोशालक-चरित्रं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [५५७--५५९]

दीप अनुक्रम [६५५--६५७]

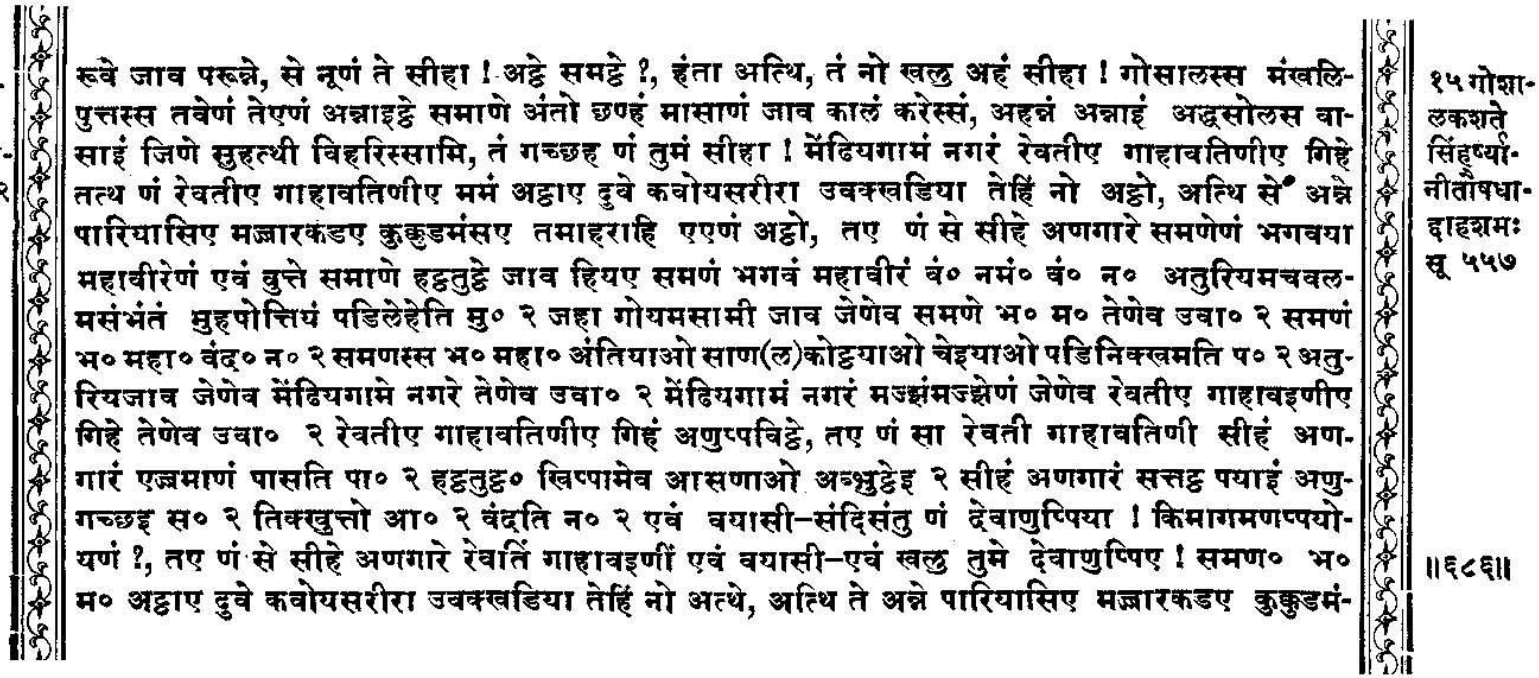

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥६८६॥

रूवे जाव परूवे, से नूणं ते सीहा ! अट्ठे समट्ठे ?, हंता अत्थि, तं नो खलु अहं सीहा ! गोसालस्स मंखलि-पुत्तस्स तवेणं तेएणं अन्नाइट्ठे समाणे अंतो छण्हं मासाणं जाव कालं करेस्सं, अहन्नं अन्नाइं अद्धसोलस वा-साइं जिणे सुहत्थी विहरिस्सामि, तं गच्छह णं तुमं सीहा ! मेंढियगामं नगरं रेवतीए गाहावतिणीए गिहे तत्थ णं रेवतीए गाहावतिणीए ममं अट्ठाए दुवे कवोयसरीरा उवक्खडिया तेहिं नो अट्ठो, अत्थि से अन्ने पारियासिए मज्जारकडए कुक्कुडमंसए तमाहराहि एएणं अट्ठो, तए णं से सीहे अणगारे समणेणं भगवया महावीरेणं एवं वुत्ते समाणे हट्ठतुट्ठे जाव हियए समणं भगवं महावीरं वं० नमं० वं० न० अतुरियमचवल-मसंभंतं मुहपोत्तियं पडिलेहेति मु० २ जहा गोयमसामी जाव जेणेव समणे भ० म० तेणेव उवा० २ समणं भ० महा० वंद० न० २ समणस्स भ० महा० अंतियाओ साण(ल)कोट्ठयाओ चेइयाओ पडिनिक्खमति प० २ अतु-रियजाव जेणेव मेंढियगामे नगरे तेणेव उवा० २ मेंढियगामं नगरं मज्झंमज्झेणं जेणेव रेवतीए गाहावइणीए गिहे तेणेव उवा० २ रेवतीए गाहावतिणीए गिहं अणुप्पविट्ठे, तए णं सा रेवती गाहावतिणी सीहं अण-गारं एज्जमाणं पासति पा० २ हट्ठतुट्ठ० खिप्पामेव आसणाओ अब्भुट्ठेइ २ सीहं अणगारं सत्तट्ठ पयाइं अणु-गच्छइ स० २ तिक्खुत्तो आ० २ वंदति न० २ एवं वयासी–संदिसंतु णं देवाणुप्पिया ! किमागमणप्पयो-यणं ?, तए णं से सीहे अणगारे रेवतिं गाहावइणीं एवं वयासी–एवं खलु तुमे देवाणुप्पिए ! समण० भ० म० अट्ठाए दुवे कवोयसरीरा उवक्खडिया तेहिं नो अत्थे, अत्थि ते अन्ने पारियासिए मज्जारकडए कुक्कुडमं-

१५ गोशालकशते सिंहस्यौषधादाहशमः सू ५५७

॥६८६॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गोशालक-चरित्रं

सए एयमाहराहि, तेणं अट्ठो, तए णं सा रेवती गाहावइणी सीहं अणगारं एवं वयासी–केस णं सीहा ! से णाणी वा तवस्सी वा जे णं तव एस अट्ठे मम ताव रहस्सकडे हव्वमक्खाए जओ णं तुमं जाणासि ? एवं जहा खंदए जाव जओ णं अहं जाणामि, तए णं सा रेवती गाहावतिणी सीहस्स अणगारस्स अंतियं एयमट्ठं सोचा निसम्म हट्ठतुट्ठा जेणेव भत्तघरे तेणेव उवा० २ पत्तगं मोएति पत्तगं मोएत्ता जेणेव सीहे अणगारे तेणेव उवा० २ सीहस्स अणगारस्स पडिग्गहगंसि तं सव्वं संमं निस्सिरति, तए णं तीए रेवतीए गाहावतिणीए तेणं दव्वसुद्धेणं जाव दाणेणं सीहे अणगारे पडिलाभिए समाणे देवाउए निबद्धे जहा विजयस्स जाव जम्मजीवियफले रेवतीए गाहावतिणीए रेवती० २, तए णं से सीहे अणगारे रेवतीए गाहावतिणीए गिहाओ पडिनिक्खमति० २ मेंढियगामं नगरं मज्झंमज्झेणं निग्गच्छति निग्गच्छइत्ता जहा गोयमसामी जाव भत्तपाणं पडिदंसेति २ समणस्स भगवओ महावीरस्स पाणिंसि तं सव्वं संमं निस्सिरति, तए णं समणे भगवं महावीरे अमुच्छिए जाव अणज्झोववन्ने बिलमिव पन्नगभूएणं अप्पाणेणं तमाहारं सरीरकोट्ठगंसि पक्खिवति, तए णं समणस्स भगओ महावीरस्स तमाहारं आहारियस्स समाणस्स से विपुले रोगायंके खिप्पामेव उवसमं पत्ते हट्ठे जाए आरोगे बलियसरीरे तुट्ठा समणा तुट्ठाओ समणीओ तुट्ठा सावया तुट्ठाओ साचियाओ तुट्ठा देवा तुट्ठाओ देवीओ सदेवमणुयासुरे लोए तुट्ठे हट्ठे जाए समणे भगवं महावीरे हट्ठ० २।(सूत्र ५५७) भंतेत्ति भगवं गोयमे समणं भगवं महावीरं वंदति नमं० २ एवं वयासी–एवं खलु देवाणुप्पियाणं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥६८७॥

अंतेवासी पाईणजाणवए सव्वाणुभूतीनामं अणगारे पगतिभद्दए जाव विणीए, से णं भंते ! तदा गोसालेणं मंखलिपुत्तेणं तवेणं तेएणं भासरासीकए समाणे कहिं कहिं उववन्ने ?, एवं खलु गोयमा ! ममं अंतेवासी पाईणजाणवए सव्वाणुभूतीनामं अणगारे पगइभद्दए जाव विणीए, से णं तदा गोसालेणं मंखलिपुत्तेणं तवेणं भासरासीकए समाणे उड्ढं चंदिमसूरिय जाव बंभलंतकमहासुक्के कप्पे वीइवइत्ता सहस्सारे कप्पे देवत्ताए उववन्ने, तत्थ णं अत्थेगतियाणं देवाणं अट्ठारस सागरोवमाइं ठिती पन्नत्ता तत्थ णं सव्वाणुभूतिस्सवि देवस्स अट्ठारस सागरोवमाइं ठिती पन्नत्ता, से णं सव्वाणुभूती देवे ताओ देवलोगाओ आउक्खएणं भवक्खएणं ठिइक्खएणं जाव महाविदेहे वासे सिज्झिहिति जाव अंतं करेहिति । एवं खलु देवाणुप्पियाणं अंतेवासी कोसलजाणवए सुनक्खत्ते नामं अणगारे पगइभद्दए जाव विणीए, से णं भंते ! तदा णं गोसालेणं मंखलिपुत्तेणं तवेणं परितावित्रए समाणे कालमासे कालं किच्चा कहिं गए कहिं उववन्ने ?, एवं खलु गोयमा ! ममं अंतेवासी सुनक्खत्ते नामं अणगारे पगइभद्दए जाव विणीए, से णं तदा गोसालेणं मंखलिपुत्तेणं तवेणं तेएणं परितावित्रए समाणे जेणेव ममं अंतिए तेणेव उवाग० २ वंदति नमं० २ सयमेव पंच महव्वयाइं आरुभेति सयमेव पंच महव्वयाइं० समणा य समणीओ य खामेति २ आलोइयपडिक्कंते समाहिपत्ते कालमासे कालं किच्चा उड्ढं चंदिमसूरियजाव आणयपाणयारणकप्पे वीईवइत्ता अच्चुए कप्पे देवत्ताए उववन्ने, तत्थ णं अत्थेगतियाणं देवाणं बावीसं सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता, तत्थ णं सुनक्खत्तस्सवि देवस्स बावीसं

१५ गोशालकशते सर्वानुभूतिसुनक्षत्रसाधुगतिः सू ५५८

॥६८७॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गोशालक-चरित्रं

सागरोवमाइं सेसं जहा सव्वाणुभूतिस्स जाव अंतं काहिति (सूत्रं ५५८) । एवं खलु देवाणुप्पियाणं अंतेवासी कुसिस्से गोसाले नामं मंखलिपुत्ते से णं भंते ! गोसाले मंखलिपुत्ते कालमासे कालं किच्चा कहिं ग० कहिं उव० ?, एवं खलु गोयमा ! ममं अंतेवासी कुसिस्से गोसाले नामं मंखलिपुत्ते समणघायए जाव छउमत्थे चेव कालमासे कालं किच्चा उड्ढं चंदिम जाव अच्चुए कप्पे दे० उव०, तत्थ णं अत्थेग० देवाणं बावीसं सा० ठिती प० तत्थ णं गोसालस्सवि देवस्स बावीसं सा० ठिती प० । से णं भंते ! गोसाले देवे ताओ देव० आउक्ख० ३ जाव कहिं उववज्जिहिति ?, गोयमा ! इहेव जंबू० २ भारहे वासे विंझगिरिपायमूले पंडेसु जणवएसु सयदुवारे नगरे संमुतिस्स रन्नो भद्दाए भारियाए कुच्छिंसि पुत्तत्ताए पच्चायाहिति, से णं तत्थ नवण्हं मा० बहुप० जाव वीतिक्कंताणं जाव सुरूवे दारए पयाहिति, जं रयणिं च णं से दारए जाइहिति तं रयणिं च णं सयदुवारे नगरे सब्भिंतरबाहिरिए भारग्गसो य कुंभग्गसो य पउमवासे य रयणवासे य वासे वासिहिति, तए णं तस्स दारगस्स अम्मापियरो एक्कारसमे दिवसे वीतिक्कंते जाव संपत्ते बारसाहदिवसे अयमेयारूवं गोण्णं गुणनिप्फन्नं नामधेज्जं काहिंति–जम्हा णं अम्हं इमंसि दारगंसि जायंसि समाणंसि सयदुवारे नगरे सब्भिंतरबाहिरिए जाव रयणवासे वुट्ठे तं होउ णं अम्हं इमस्स दारगस्स नामधेज्जं महापउमे महा० तए णं तस्स दारगस्स अम्मापियरो नामधेज्जं करेहिंति महापउमोत्ति, तए णं तं महापउमं दारगं अम्मापियरो सातिरेगट्ठवासजायगं जाणित्ता सोभणंसि तिहिकरणदिवसनक्खत्तमुहुत्तंसि महया २ राया-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गोशालक-चरित्रं

भिसेगेणं अभिसिंचेहिंति, से णं तत्थ राया भविस्सति महया हिमवंतमहंतवन्नओ जाव विहरिस्सइ, तए णं तस्स महापउमस्स रन्नो अन्नदा कदायि दो देवा महड्ढिया जाव महेसक्खा सेणाकम्मं काहिंति, तं०–पुन्नभद्दे य माणिभद्दे य, तए णं सयदुवारे नगरे बहवे राईसरतलवरजाव महेसक्खा सेणाकम्मं जाव सत्थवाहप्पभिईओ अन्नमन्नं सद्दावेहिंति अ० एवं वदेहिंति–जम्हा णं देवाणुप्पिया! अम्हं महापउमस्स रन्नो दो देवा महड्ढिया जाव सेणाकम्मं करेंति तं०–पुन्नभद्दे य माणिभद्दे य, तं होउ णं देवाणुप्पिया! अम्हं महापउमस्स रन्नो दोच्चंपि नामधेज्जे देवसेणे दे० २, तए णं तस्स महापउमस्स रन्नो दोच्चेऽवि नामधेज्जे भविस्सति देवसेणेति २, तए णं तस्स देवसेणस्स रन्नो अन्नया कयाइ सेते संखतलविमलसन्निगासे चउदंते हत्थिरयणे समुप्पज्जिस्सइ, तए णं से देवसेणे राया तं सेयं संखतलविमलसन्निगासं चउदंतं हत्थिरयणं दूरूढे समाणे सयदुवारं नगरं मज्झंमज्झेणं अभिक्खणं २ अतिजाहिति निज्जाहिति य, तए णं सयदुवारे नगरे बहवे राईसरजाव पभिईओ अन्नमन्नं सद्दावेंति अ० २ वदेहिंति–जम्हा णं देवाणुप्पिया! अम्हं देवसेणस्स रन्नो सेते संखतलसन्निकासे चउदंते हत्थिरयणे समुप्पन्ने, तं होउ णं देवाणुप्पिया! अम्हं देवसेणस्स रन्नो तच्चेवि नामधेज्जे विमलवाहणे वि० २, तए णं तस्स देवसेणस्स रन्नो तच्चेवि नामधेज्जे विमलवाहणेत्ति। तए णं से विमलवाहणे राया अन्नया कदायि समणेहिं निग्गंथेहिं मिच्छं विप्पडिवज्जिहिति अप्पेगतिए आउसेहिति अप्पेगतिए अवहसिहिति अप्पेगतिए निच्छोडेहिति अप्पेगतिए निब्भत्थेहिति अप्पेगतिए बंधेहिति अप्पेगतिए णिरुंभेहिति

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गोशालक-चरित्रं

अप्पेगतियाणं छविच्छेदं करेहिति अप्पेगतिए पमारेहिइ अप्पेगतियाणं उद्दवेहिति अप्पेगतियाणं वत्थं पाड-
ग्गहं कंबलं पायपुंछणं आच्छिंदिहिति विच्छिंदिहिति भिंदिहिति अवहरिहिति अप्पेगतियाणं भत्तपाणं
वोच्छिंदिहिति अप्पेगतिए णिन्नगरे करेहिति अप्पेगतिए निव्विसए करेहिति, तए णं सयदुवारे नगरे बहवे
राईसरजाव वदिहिंति–एवं खलु देवाणु० विमलवाहणे राया समणेहिं निग्गंथेहिं मिच्छं विप्पडिवन्ने अप्पे-
गतिए आउस्सति जाव निव्विसए करेति, तं नो खलु देवाणुप्पिया ! एयं अम्हं सेयं नो खलु एयं विमलवा-
हणस्स रन्नो सेयं नो खलु एयं रज्जस्स वा रट्ठस्स वा बलस्स वा वाहणस्स वा पुरस्स वा अंतेउरस्स वा जण-
वयस्स वा सेयं जण्णं विमलवाहणे राया समणेहिं निग्गंथेहिं मिच्छं विप्पडिवन्ने, तं सेयं खलु देवाणुप्पिया !
अम्हं विमलवाहणं रायं एयमट्ठं विन्नवित्तएत्तिकट्टु अन्नमन्नस्स अंतियं एयमट्ठं पडिसुणेंति अं० २ जेणेव
विमलवाहणे राया तेणेव उ० २ करयलपरिग्गहियं विमलवाहणं रायं जएणं विजएणं वद्धावेंति ज० २ एवं
व०–एवं खलु देवाणु० समणेहिं निग्गंथेहिं मिच्छं विप्पडिवन्ना अप्पेगतिए आउस्संति जाव अप्पेगतिए
निव्विसए करेंति, तं नो खलु एयं देवाणुप्पियाणं सेयं नो खलु एयं अम्हं सेयं नो खलु एयं रज्जस्स वा जाव
जणवयस्स वा सेयं जं णं देवाणुप्पिया ! समणेहिं निग्गंथेहिं मिच्छं विप्पडिवन्ना तं विरमंतु णं देवाणुप्पिया !
एअस्स अट्ठस्स अकरणयाए, तए णं से विमलवाहणे राया तेहिं बहूहिं राईसरजाव सत्थवाहप्पभिईहिं
एयमट्ठं विन्नत्ते समाणे नो धम्मोत्ति नो तवोत्ति मिच्छा विणएणं एयमट्ठं पडिसुणेहिति, तस्स णं सयदुवा-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [५५७--५५९]

दीप अनुक्रम [६५५--६५७]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥६८९॥

रस्स नगरस्स बहिया उत्तरपुरच्छिमे दिसीभागे एत्थ णं सुभूमिभागे नामं उज्जाणे भविस्सइ सव्वोउय वन्नओ। तेणं कालेणं तेणं समएणं विमलस्स अरहओ पउप्पए सुमंगले नामं अणगारे जाइसंपन्ने जहा धम्मघोसस्स वन्नओ जाव संखित्तविउलतेयलेस्से तिन्नाणोवगए सुभूमिभागस्स उज्जाणस्स अदूरसामंते छट्ठं-छट्ठेणं अणि० जाव आयावेमाणे विहरिस्सति। तए णं से विमलवाहणे राया अन्नया कदायि रहचरियं काउं निज्जाहिति, तए णं से विमलवाहणे राया सुभूमिभागस्स उज्जाणस्स अदूरसामंते रहचरियं करेमाणे सुमंगलं अणगारं छट्ठंछट्ठेणं जाव आयावेमाणं पासिहिति पा० २ आसुरुत्ते जाव मिसिमिसेमाणे सुमंगलं अणगारं रहसिरेणं [ग्रन्थाग्रम् १००००] णोल्लावेहिति, तए णं से सुमंगले अणगारे विमलवाहणेणं रन्ना रहसिरेणं नोल्लाविए समाणे सणियं २ उट्ठेहिति उ० २ दोचंपि उड्ढं बाहाओ पगिज्झिय जाव आयावेमाणे विहरिस्सति, तए णं से विमलवाहणे राया सुमंगलं अणगारं दोचंपि रहसिरेणं णोल्लावेहिति, तए णं से सुमंगले अणगारे विमलवाहणेणं रन्ना दोचंपि रहसिरेणं णोल्लाविए समाणे सणियं २ उट्ठेहिति उ० २ ओहिं पउंजति २ त्ता विमलवाहणस्स रण्णो तीतद्धं ओहिणा आभोएहिति २ त्ता विमलवाहणं रायं एवं वइहिति–नो खलु तुमं विमलवाहणे राया नो खलु तुमं देवसेणे राया नो खलु तुमं महापउमे राया, तुमण्णं इओ तच्चे भवग्गहणे गोसाले नामं मंखलिपुत्ते होत्था समणघायए जाव छउमत्थे चेव कालगए, तं जति ते तदा सव्वाणुभूतिणा अणगारेणं पभुणावि होऊणं सम्मं सहियं खमियं तितिक्खयं अहियासियं

१५ गोशालकशते गोशालक-गतिर्विमल-वाहनभव-श्च सू ५५९

॥६८९॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गोशालक-चरित्रं

जइ ते तदा सुनक्खत्तेणं अण० जाव अहियासियं, जइ ते तदा समणेणं भगवया महावीरेणं पभुणावि जाव अहियासियं, तं नो खलु ते अहं तहा सम्मं सहिस्सं जाव अहियासिस्सं, अहं ते नवरं सहयं सरहं ससारहियं तवेणं तेएणं एगाहच्चं कूडाहच्चं भासरासिं करेज्जामि, तए णं से विमलवाहणे राया सुमंगलेणं अणगारेणं एवं वुत्ते समाणे आसुरुत्ते जाव मिसिमिसेमाणे सुमंगलं अणगारं तच्चंपि रहसिरेणं णोल्लावेहिति, तए णं से सुमंगले अणगारे विमलवाहणेणं रण्णा तच्चंपि रहसिरेणं नोल्लाविए समाणे आसुरुत्ते जाव मिसिमिसेमाणे आयावणभूमीओ पच्चोरुभइ आ० २ तेयासमुग्घाएणं समोहनिहिति तेया० २ सत्तट्ठ पयाइं पच्चोसक्किहिति सत्तट्ठ० २ विमलवाहणं रायं सहयं सरहं ससारहियं तवेणं तेएणं जाव भासरासिं करेहिति। सुमंगले णं भंते ! अणगारे विमलवाहणं रायं सहयं जाव भासरासिं करेत्ता कहिं गच्छिहिति कहिं उववज्जिहिति ?, गोयमा ! सुमंगले अणगारे णं विमलवाहणं रायं सहयं जाव भासरासिं करेत्ता बहूहिं चउत्थ छट्ठट्ठमदसमदुवालसजाववित्तेहिं तवोकम्मेहिं अप्पाणं भावेमाणे बहूइं वासाइं सामन्नपरियागं पाउणेहि २त्ता मासियाए संलेहणाए सट्ठिं भत्ताए अणसणाए जाव छेदेत्ता आलोइयपडिक्कंते समाहिपत्ते उड्ढं चंदिमजाव गेविज्जविमाणावाससयं वीयीवइत्ता सवट्ठसिद्धे महाविमाणे देवत्ताए उववज्जिहिति, तत्थ णं देवाणं अजहन्नमणुक्कोसेणं तेत्तीसं सागरोवमाइं ठिती प०, तत्थ णं सुमंगलस्सवि देवस्स अजहन्नमणुक्कोसेणं तेत्तीसं सागरो-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गोशालक-चरित्रं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [५५७--५५९]

दीप अनुक्रम [६५५--६५७]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥६९०॥

वमाइं ठिती पन्नत्ता । से णं भंते ! सुमंगले देवे ताओ देवलोगाओ जाव महाविदेहे वासे सिज्झिहिति जाव अंतं करेति (सूत्रं ५५९) ।

'साण(ल)कोट्ठए नामं चेईए होत्था वन्नओ'त्ति तद्वर्णको वाच्यः स च 'चिराईए'इत्यादि 'जाव पुढविसिलापट्टओ'त्ति पृथिवीशिलापट्टकवर्णकं यावत् स च—'तस्स णं असोगवरपायवस्स हेट्ठा ईसिखंधीसमल्लीणे'इत्यादि 'मालुयाकच्छए'त्ति मालुका नाम एकास्थिका वृक्षविशेषास्तेषां यत्कक्षं–गहनं तत्तथा । 'विउले'त्ति शरीरव्यापकत्वात् 'रोगायंके'त्ति रोगः–पीडाकारी स चासावातङ्कश्च–व्याधिरिति रोगातङ्कः 'उज्जले'त्ति उज्ज्वलः पीडापोहलक्षणविपक्षलेशेनाप्यकलङ्कितः, यावत्करणादिदं दृश्यं—'तिउले' त्रीन्–मनोवाक्कायलक्षणानर्थांस्तुलयति–जयतीति त्रितुलः 'पगाढे' प्रकर्षवान् 'कक्कसे' कर्कशद्रव्यमिवानिष्ट इत्यर्थः 'कडुए' तथैव 'चंडे' रौद्रः 'तिव्वे' सामान्यस्य झगितिमरणहेतुः 'दुक्खे'त्ति दुःखो दुःखहेतुत्वात् 'दुग्गे'त्ति क्वचित् तत्र च दुर्गमिवानभिभवनीयत्वात्, किमुक्तं भवति ?–'दुरहियासे'त्ति दुरधिसह्यः सोढुमशक्य इत्यर्थः 'दाहवक्कंतीए'त्ति दाहो व्युत्क्रान्तः–उत्पन्नो यस्य स स्वार्थिककप्रत्यये दाहव्युत्क्रान्तिकः 'अविया इं'ति अपिचेत्यस्युच्चये 'आइं'ति वाक्यालङ्कारे 'लोहियवच्चाइंपि'त्ति लोहितवर्चांस्यपि–रुधिरात्मकपुरीषाण्यपि करोति किमन्येन पीडावर्णनेनेति भावः, तानि हि किलात्यन्तवेदनोत्पादके रोगे सति भवन्ति, 'चाउवण्णं'ति चातुर्वर्ण्य–ब्राह्मणादिलोकः, 'झाणंतरियाए'त्ति एकस्य ध्यानस्य समाप्तिरन्यस्यानारम्भ इत्येषा ध्यानान्तरिका तस्यां 'मणोमाणसिएणं'ति मनस्येव न बहिर्वचनादिभिरप्रकाशितत्वात् यन्मानसिकं दुःखं तन्मनोमानसिकं तेन 'दुवे कवोया'इत्यादेः श्रूय-

१५ गोशालकशतम्

॥६९०॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	गोशालक-चरित्रं

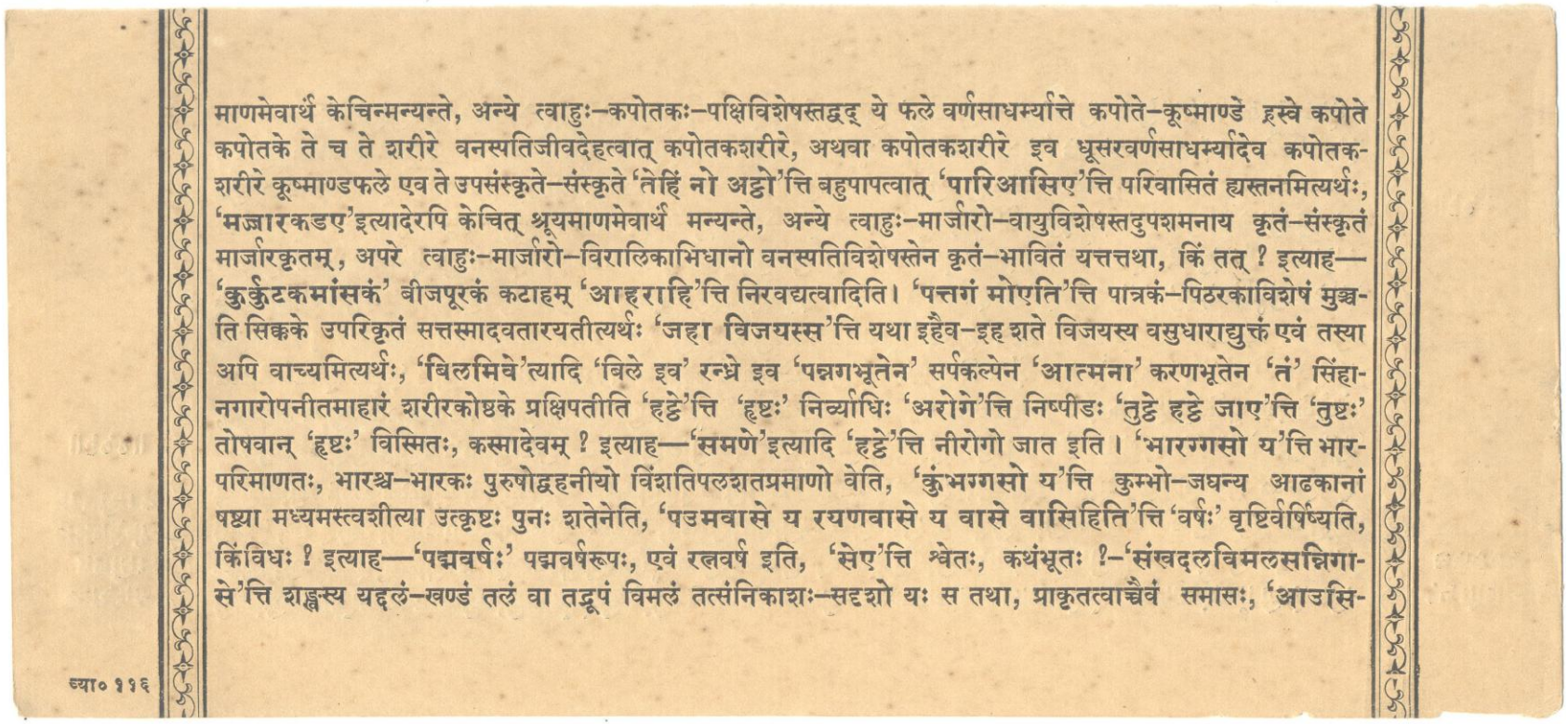

माणमेवार्थं केचिन्मन्यन्ते, अन्ये त्वाहुः–कपोतकः–पक्षिविशेषस्तद्वद् ये फले वर्णसाधर्म्यात्ते कपोते–कूष्माण्डे ह्रस्वे कपोते कपोतके ते च ते शरीरे वनस्पतिजीवदेहत्वात् कपोतकशरीरे, अथवा कपोतकशरीरे इव धूसरवर्णसाधर्म्यादेव कपोतकशरीरे कूष्माण्डफले एव ते उपसंस्कृते–संस्कृते 'तेहिं नो अट्ठो'त्ति बहुपापत्वात् 'पारिआसिए'त्ति परिवासितं ह्यस्तनमित्यर्थः, 'मज्जारकडए'इत्यादेरपि केचित् श्रूयमाणमेवार्थं मन्यन्ते, अन्ये त्वाहुः–मार्जारो–वायुविशेषस्तदुपशमनाय कृतं–संस्कृतं मार्जारकृतम्, अपरे त्वाहुः–मार्जारो–विरालिकाभिधानो वनस्पतिविशेषस्तेन कृतं–भावितं यत्तत्तथा, किं तत् ? इत्याह—'कुक्कुटकमांसकं' बीजपूरकं कटाहम् 'आहराहि'त्ति निरवद्यत्वादिति। 'पत्तगं मोएति'त्ति पात्रकं–पिठरकाविशेषं मुञ्चति सिक्के उपरिकृतं सत्तस्मादवतारयतीत्यर्थः 'जहा विजयस्स'त्ति यथा इहैव–इह शते विजयस्य वसुधाराद्युक्तं एवं तस्या अपि वाच्यमित्यर्थः, 'बिलमिवे'त्यादि 'बिले इव' रन्ध्रे इव 'पन्नगभूतेन' सर्पकल्पेन 'आत्मना' करणभूतेन 'तं' सिंहानगारोपनीतमाहारं शरीरकोष्ठके प्रक्षिपतीति 'हट्ठे'त्ति 'हृष्टः' निर्व्याधिः 'अरोगे'त्ति निष्पीडः 'तुट्ठे हट्ठे जाए'त्ति 'तुष्टः' तोषवान् 'हृष्टः' विस्मितः, कस्मादेवम् ? इत्याह—'समणे'इत्यादि 'हट्ठे'त्ति नीरोगो जात इति। 'भारग्गसो य'त्ति भारपरिमाणतः, भारश्च–भारकः पुरुषोद्वहनीयो विंशतिपलशतप्रमाणो वेति, 'कुंभग्गसो य'त्ति कुम्भो–जघन्य आढकानां षष्ट्या मध्यमस्त्वशीत्या उत्कृष्टः पुनः शतेनेति, 'पउमवासे य रयणवासे य वासे वासिहिति'त्ति 'वर्षः' वृष्टिर्वर्षिष्यति, किंविधः ? इत्याह—'पद्मवर्षः' पद्मवर्षरूपः, एवं रत्नवर्ष इति, 'सेए'त्ति श्वेतः, कथंभूतः ?–'संखदलविमलसन्निगासे'त्ति शङ्खस्य यद्दलं–खण्डं तलं वा तद्रूपं विमलं तत्संनिकाशः–सदृशो यः स तथा, प्राकृतत्वाच्चैवं समासः, 'आउसि-

व्या० ११६

	गोशालक-चरित्रं

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥६९१॥

हिइ'त्ति आक्रोशान् दास्यति 'निच्छोडेहिइ'त्ति पुरुषान्तरसम्बन्धितहस्ताद्यवयवाः कारणतो ये श्रमणास्तांस्ततो वियोजयिष्यति 'निब्भत्थेहिइ'त्ति आक्रोशव्यतिरिक्तदुर्वचनानि दास्यति 'पमारेहिइ'त्ति प्रमारं–मरणक्रियाप्रारम्भं करिष्यति प्रमारयिष्यति 'उद्दवेहिइ'त्ति अपद्रावयिष्यति, अथवा 'पमारिहिइ'त्ति मारयिष्यति 'उद्दवेहिइ'त्ति उपद्रवान् करिष्यति 'आच्छिंदिहिइ'त्ति ईषत् छेत्स्यति 'विच्छिंदेहिइ'त्ति विशेषेण विविधतया वा छेत्स्यति 'भिंदिहिइ'त्ति स्फोटयिष्यति पात्रापेक्षमेतत् 'अवहरिहिइ'त्ति अपहरिष्यति–उद्दालयिष्यति 'निन्नगरे करेहिति'त्ति 'निर्नगरान्' नगरनिष्क्रान्तान् करिष्यति, 'रज्जस्स व'त्ति राज्यस्य वा, राज्यं च राजादिपदार्थसमुदायः, आह च—"स्वाम्यमात्यश्च राष्ट्रं च, कोशो दुर्गं बलं सुहृत् । सप्ताङ्गमुच्यते राज्यं, बुद्धिसत्त्वसमाश्रयम् ॥ १ ॥" राष्ट्रादयस्तु तद्विशेषाः, किन्तु राष्ट्रं–जनपदैकदेशः, 'विरमंतु णं देवाणुप्पिया ! एअस्स अट्ठस्स अकरणयाए'त्ति विरमणं किल वचनाद्यपेक्षयाऽपि स्यादत उच्यते–अकरणतया–करणनिषेधरूपतया । 'विमलस्स'त्ति विमलजिनः किलोत्सर्पिण्यामेकविंशतितमः समवाये दृश्यते स चावसर्पिणीचतुर्थजिनस्थाने प्राप्नोति तस्माच्चार्वाचीनजिनान्तरेषु बहवः सागरोपमकोट्योऽतिक्रान्ता लभ्यन्ते, अयं च महापद्मो द्वाविंशतेः सागरोपमाणामन्ते भविष्यती दुःखगममिदं, अथवा यो द्वाविंशतेः सागरोपमाणामन्ते तीर्थकृदुत्सर्पिण्यां भविष्यति तस्यापि विमल इति नाम संभाव्यते, अनेकाभिधानाभिधेयत्वान्महापुरुषाणामिति, 'पउप्पए'त्ति शिष्यसन्तानः, 'जहा धम्मघोसस्स वन्नओ'त्ति यथा धर्मघोषस्य–एकादशशतैकादशोद्देशकाभिहितस्य वर्णकस्तथाऽस्य वाच्यः, स च 'जाइसंपन्ने कुलसंपन्ने बलसंपन्ने'इत्यादिरिति 'रहचरियं'ति रथचर्या 'नोल्लावेहिइ'त्ति नोदयिष्यति–प्रेरयिष्यति सहितमित्यादय एकार्थाः ।

१५ गोशालकशतम् ॥६९१॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विमलवाहणे णं भंते ! राया सुमंगलेणं अणगारेणं सहए जाव भासरासीकए समाणे कहिं गच्छिहिति कहिं उववज्जिहिति ?, गोयमा ! विमलवाहणे णं राया सुमंगलेणं अणगारेणं सहये जाव भासरासीकए समाणे अहेसत्तमाए पुढवीए उक्कोसकालट्ठिइयंसि नरयंसि नेरइयत्ताए उववज्जिहिति, से णं ततो अणंतरं उव्वट्टित्ता मच्छेसु उववज्जिहिति, से णं तत्थ सत्थवज्झे दाहवक्कंतीए कालमासे कालं किच्चा दोच्चंपि अहे सत्तमाए पुढवीए उक्कोसकालट्ठितीयंसि नरगंसि नेरइयत्ताए उववज्जिहिति, से णं तओऽणंतरं उव्वट्टित्ता दोच्चंपि मच्छेसु उववज्जिहिति, तत्थवि णं सत्थवज्झे जाव किच्चा छट्ठीए तमाए पुढवीए उक्कोसकालट्ठिइयंसि नरगंसि नेरइयत्ताए उववज्जिहिति, से णं तओहिंतो जाव उव्वट्टित्ता इत्थियासु उववज्जिहिति, तत्थवि णं सत्थवज्झे दाह जाव दोच्चंपि छट्ठीए तमाए पुढवीए उक्कोसकालजाव उव्वट्टित्ता दोच्चंपि इत्थियासु उवव०, तत्थवि णं सत्थवज्झे जाव किच्चा पंचमाए धूमप्पभाए पुढवीए उक्कोसकालजाव उव्वट्टित्ता उरएसु उववज्जिहिति, तत्थवि णं सत्थवज्झे जाव किच्चा दोच्चंपि पंचमाए जाव उव्वट्टित्ता दोच्चंपि उरएसु उववज्जिहिति, जाव किच्चा चउत्थीए पंकप्पभाए पुढवीए उक्कोसकालट्ठितीयंसि जाव उव्वट्टित्ता सीहेसु उववज्जिहिति तत्थवि णं सत्थवज्झे तहेव जाव किच्चा दोच्चंपि चउत्थीए पंकजाव उव्वट्टित्ता दोच्चंपि सीहेसु उवव० जाव किच्चा तच्चाए वालुयप्पभाए उक्कोसकालजाव उव्वट्टित्ता पक्खीसु उवव० तत्थवि णं सत्थवज्झे जाव किच्चा दोच्चंपि तच्चाए वालुयजाव उव्वट्टित्ता दोच्चंपि पक्खीसु उवव० जाव किच्चा दोच्चाए सक्करप्पभाए जाव उव्वट्टित्ता सिरीसवेसु उवव० तत्थवि

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गोशालक-चरित्रं

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [५५९R]

दीप अनुक्रम [६५८]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥६९२॥

णं सत्थ० जाव किच्चा दोच्चंपि दोच्चाए सक्करप्पभाए जाव उव्वट्टित्ता दोच्चंपि सिरीसवेसु उवव० जाव किच्चा इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए उक्कोसकालट्ठितीयंसि नरगंसि नेरइयत्ताए उववज्जिहिति, जाव उव्वट्टित्ता सण्णीसु उवव० तत्थवि णं सत्थवज्झे जाव किच्चा असन्नीसु उववज्जिहिति, तत्थवि णं सत्थवज्झे जाव किच्चा दोच्चंपि इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए पलिओवमस्स असंखेज्जइभागट्ठितीयंसि णरगंसि नेरइयत्ताए उववज्जिहिति, से णं तओ जाव उव्वट्टित्ता जाइं इमाइं खहयरविहाणाइं भवंति, तं०–चम्मपक्खीणं लोमपक्खीणं समुग्गपक्खीणं वियपक्खीणं तेसु अणेगसयसहस्सखुत्तो उद्दाइत्ता २ तत्थेव २ भुज्जो २ पच्चायाहिति, सव्वत्थवि णं सत्थवज्झे दाहवक्कंतीए कालमासे कालं किच्चा जाइं इमाइं भुयपरिसप्पविहाणाइं भवंति, तंजहा–गोहाणं नउलाणं जहा पन्नवणापए जाव जाहगाणं, तेसु अणेगसयसहस्सखुत्तो सेसं जहा खहचराणं जाव किच्चा जाइं इमाइं उरपरिसप्पविहाणाइं भवंति, तं०–अहीणं अयगराणं आसालियाणं महोरगाणं, तेसु अणेगसयसह० जाव किच्चा जाइं इमाइं चउप्पदविहाणाइं भवंति, तं०–एगखुराणं दुखुराणं गंडीपदाणं सणहपदाणं, तेसु अणेगसयसहस्स जाव किच्चा जाइं इमाइं जलयरविहाणाइं भवंति तं०–मच्छाणं कच्छभाणं जाव सुसुमाराणं, तेसु अणेगसयसह० जाव किच्चा जाइं इमाइं चउरिंदियविहाणाइं भवंति, तं०–अंधियाणं पोत्तियाणं जहा पन्नवणापदे जाव गोमयकीडाणं, तेसु अणेगसयसह जाव किच्चा जाइं इमाइं तेइंदियविहाणाइं भवंति, तं०–उवचियाणं जाव हत्थिसोंडाणं तेसु अणेगजाव किच्चा जाइं इमाइं बेइंदियवि-

१५ गोशालकशतं गोशालकस्य संसारे भ्रमणं सू ५५९

॥६९२॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गोशालक-चरित्रं

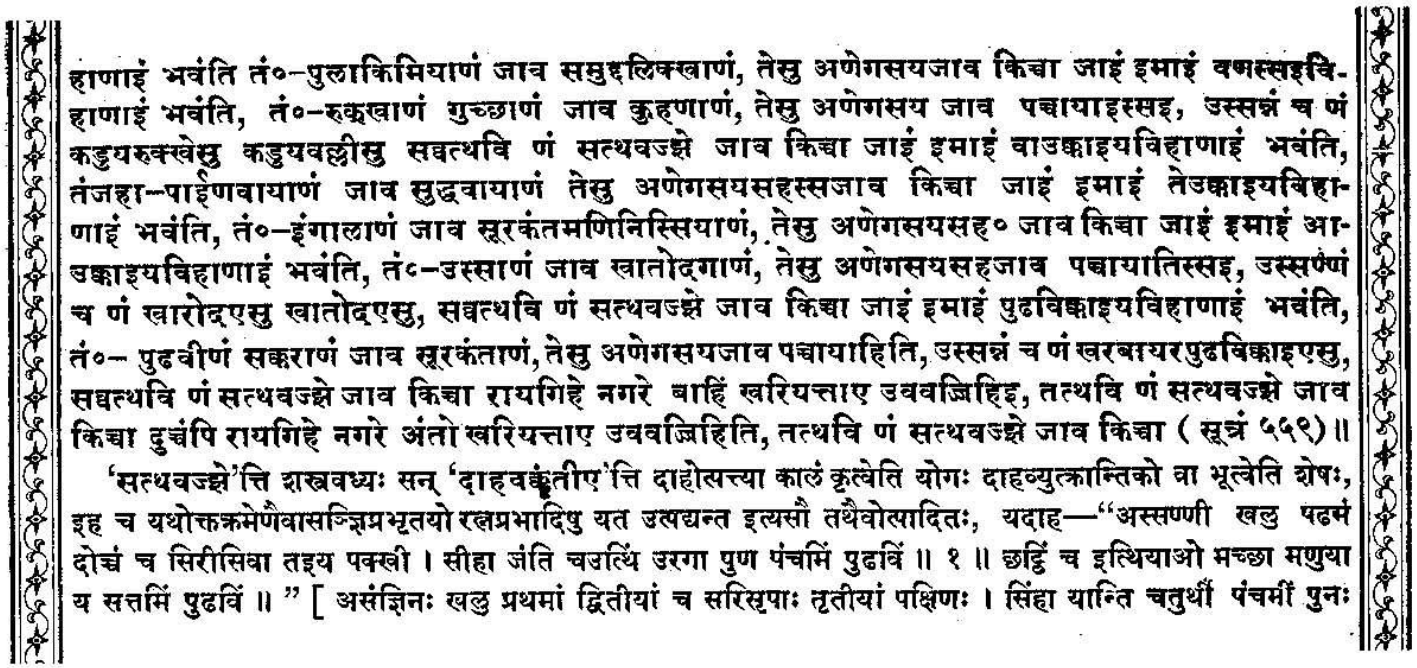

हाणाइं भवंति तं०–पुलाकिमियाणं जाव समुद्दलिक्खाणं, तेसु अणेगसयजाव किच्चा जाइं इमाइं वणस्सइवि-
हाणाइं भवंति, तं०–रुक्खाणं गुच्छाणं जाव कुहणाणं, तेसु अणेगसय जाव पचायाइस्सइ, उस्सन्नं च णं
कडुयरुक्खेसु कडुयवल्लीसु सवत्थवि णं सत्थवज्झे जाव किच्चा जाइं इमाइं वाउक्काइयविहाणाइं भवंति,
तंजहा–पाईणवायाणं जाव सुद्धवायाणं तेसु अणेगसयसहस्सजाव किच्चा जाइं इमाइं तेउक्काइयविहा-
णाइं भवंति, तं०–इंगालाणं जाव सूरकंतमणिनिस्सियाणं, तेसु अणेगसयसह० जाव किच्चा जाइं इमाइं आ-
उक्काइयविहाणाइं भवंति, तं०–उस्साणं जाव खातोदगाणं, तेसु अणेगसयसहजाव पचायातिस्सइ, उस्सण्णं
च णं खारोदएसु खातोदएसु, सवत्थवि णं सत्थवज्झे जाव किच्चा जाइं इमाइं पुढविक्काइयविहाणाइं भवंति,
तं०– पुढवीणं सक्कराणं जाव सूरकंताणं, तेसु अणेगसयजाव पचायाहिति, उस्सन्नं च णं खरबायरपुढविक्काइएसु,
सवत्थवि णं सत्थवज्झे जाव किच्चा रायगिहे नगरे बाहिं खरियत्ताए उववज्जिहिइ, तत्थवि णं सत्थवज्झे जाव
किच्चा दुच्चंपि रायगिहे नगरे अंतो खरियत्ताए उववज्जिहिति, तत्थवि णं सत्थवज्झे जाव किच्चा (सूत्रं ५५९) ॥

'सत्थवज्झे'त्ति शस्त्रवध्यः सन् 'दाहवक्कंतीए'त्ति दाहोत्पत्त्या कालं कृत्वेति योगः दाहव्युत्क्रान्तिको वा भूत्वेति शेषः,
इह च यथोक्तक्रमेणैवासन्निप्रभृतयो रत्नप्रभादिषु यत उत्पद्यन्त इत्यसौ तथैवोत्पादितः, यदाह—"अस्सण्णी खलु पढमं
दोच्चं च सिरीसिवा तइय पक्खी । सीहा जंति चउत्थिं उरगा पुण पंचमिं पुढविं ॥ १ ॥ छट्ठिं च इत्थियाओ मच्छा मणुया
य सत्तमिं पुढविं ॥ " [असंज्ञिनः खलु प्रथमां द्वितीयां च सरिसृपाः तृतीयां पक्षिणः । सिंहा यान्ति चतुर्थीं पंचमीं पुनः

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥६९३॥

पृथ्वीमुरगाः ॥१॥ षष्टीं च स्त्रियो मत्स्या मनुष्याश्च सप्तमीं पृथ्वीम् ॥] इति, 'खहचरविहाणाइं'ति इह विधानानि–भेदाः 'चम्मपक्खीणं'ति वल्गुलीप्रभृतीनां 'लोमपक्खीणं'ति हंसप्रभृतीनां 'समुग्गपक्खीणं'ति समुद्गकाकारपक्षवतां मनुष्यक्षेत्रबहिर्वर्त्तिनां 'वियपक्खीणं'ति विस्तारितपक्षवतां समयक्षेत्रबहिर्वर्त्तिनामेवेति 'अणेगसयसहस्सखुत्तो'इत्यादि तु यदुक्तं तत्सान्तरमवसेयं, निरन्तरस्य पञ्चेन्द्रियत्वलाभस्योत्कर्षतोऽप्यष्टभवप्रमाणस्यैव भावात्, यदाह—'पंचिंदियतिरिय-नरा सत्तट्ठभवा भवग्गहेण" [पञ्चेन्द्रियस्तिर्यग्नराः सप्ताष्टभवाः भवग्रहणैः] त्ति 'जहा पन्नवणापए'त्ति प्रज्ञापनायाः प्रथमपदे, तत्र चैवमिदं—'सरडाणं सल्लाण'मित्यादि । 'एगखुराणं'ति अश्वादीनां 'दुखुराणं'ति गवादीनां 'गंडीपयाणं'ति हस्त्यादीनां 'सणहप्पयाणं'ति सनखपदानां सिंहादिनखराणां 'कच्छभाणं'ति इह यावत्करणादिदं दृश्यं—'गाहाणं मगराणं पोत्तियाणं'इत्यत्र 'जहा पन्नवणापए'त्ति अनेन यत्सूचितं तदिदं—'मच्छियाणं गमसियाण'मित्यादि, 'उचचियाणं' इह यावत्करणादिदं दृश्यं—'रोहिणियाणं कुंथूणं पिविलियाण'मित्यादि, 'पुलाकिमियाण'मित्यत्र यावत्करणादिदं दृश्यं—'कुच्छिकिमियाणं गंडूलगाणं गोलोमाण'मित्यादि, 'रुक्खाणं'ति वृक्षाणामेकास्थिकबहुबीजकभेदेन द्विविधानां, तत्रैकास्थिकाः निम्बाम्रादयः बहुबीजा–अस्थिकतिन्दुकादयः, 'गुच्छाणं'ति वृन्ताकीप्रभृतीनां यावत्करणादिदं दृश्यं—'गुम्माणं लयाणं वल्लीणं पव्वगाणं तणाणं वलयाणं हरियाणं ओसहीणं जलरुहाणं'ति तत्र 'गुल्मानां' नवमालिकाप्रभृतीनां 'लतानां' पद्मलतादीनां 'वल्लीनां' पुष्पफलीप्रभृतीनां 'पर्वकाणाम्' इक्षुप्रभृतीनां 'तृणानां' दर्भकुशादीनां 'वलयानां' तालतमालादीनां 'हरितानाम्' अध्यारोहकतन्दुलीयकादीनाम् 'औषधीनां' शालिगोधूमप्रभृतीनां

१५ गोशालकशतं गोशालकस्य संसारे भ्रमणं सू ५५९

॥६९३॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गोशालक-चरित्रं

'जलरुहाणां' कुमुदादीनां 'कुहणाणं'ति कुहुणानाम् आयुकायप्रभृतिभूमीस्फोटानाम् 'उस्सन्नं च णं'ति बाहुल्येन पुनः, 'पाईणवायाणं'ति पूर्ववातानां यावत्करणादेवं दृश्यं—'पडीणवायाणं दाहिणवायाण'मित्यादि, 'सुद्धवायाणं'ति मन्दस्तिमितवायूनाम्, 'इंगालाणं' इह यावत्करणादेवं दृश्यं—'जालाणं मुम्मुराणं अच्चीण'मित्यादि, तत्र च 'ज्वालानाम्' अनलसम्बद्धस्वरूपाणां 'मुर्म्मुराणां' फुम्फुकादौ मसृणाग्निरूपाणाम् 'अर्चिषाम्' अनलाप्रतिबद्धज्वालानामिति। 'ओसाणं'ति रात्रिजलानाम्, इह यावत्करणादिदं दृश्यं—'हिमाणं महियाणं'ति, 'खाओदयाणं'ति खातायां—भूमौ यान्युदकानि तानि खातोदकानि, 'पुढवीण'ति मृत्तिकानां 'सक्कराणं'ति शर्करिकाणां यावत्करणादिदं दृश्यं—'वालुयाणं उवलाणं'ति, 'सूरकंताणं'ति मणिविशेषाणां, 'बाहिं खरियत्ताए'त्ति नगरबहिर्वर्त्तिवेश्यात्वेन प्रान्तजवेश्यात्वेनेत्यन्ये, 'अंतोखरियत्ताए'त्ति नगराभ्यन्तरवेश्यात्वेन विशिष्टवेश्यात्वेनेत्यन्ये।

इहेव जंबुद्दीवे दीवे भारहे वासे विंझगिरिपायमूले बेभेले सन्निवेसे माहणकुलंसि दारियत्ताए पच्चायाहिति। तए णं तं दारियं अम्मापियरो उम्मुक्कबालभावं जोव्वणगमणुप्पत्तं पडिरूवएणं सुक्केणं पडिरूविएणं विणएणं पडिरूवियस्स भत्तारस्स भारियत्ताए दलइस्सति, सा णं तस्स भारिया भविस्सति इट्ठा कंता जाव अणुमया भंडकरंडगसमाणा तेल्लकेला इव सुसंगोविया चेलपेडा इव सुसंपरिग्गहिया रयणकरंडओविव सुसारक्खिया सुसंगोविया मा णं सीयं मा णं उण्हं जाव परिस्सहोवसग्गा फुसंतु। तए णं सा दारिया अन्नदा कदायि गुव्विणी ससुरकुलाओ कुलघरं निज्जमाणी अंतरा दवग्गिजालाभिहया कालमासे कालं किच्चा दाहिणिल्लेसु

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [५६०]

दीप अनुक्रम [६५९]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥६९४॥

अग्गिकुमारेसु देवेसु देवत्ताए उववज्जिहिति, से णं ततोहिंतो अणंतरं उव्वट्टित्ता माणुस्सं विग्गहं लभिहिति माणुस्सं २ केवलं बोहिं बुज्झिहिति के० २ मुंडे भवित्ता आगाराओ अणगारियं पव्वहिति, तत्थविय णं विराहियसामन्ने कालमासे कालं किच्चा दाहिणिल्लेसु असुरकुमारेसु देवेसु देवत्ताए उववज्जिहिति, से णं तओहिंतो जाव उव्वट्टित्ता माणुसं विग्गहं तं चेव जाव तत्थवि णं विराहियसामन्ने कालमासे जाव किच्चा दाहिणिल्लेसु नागकुमारेसु देवेसु देवत्ताए उववज्जिहिति, से णं तओहिंतो अणंतरं एवं एएणं अभिलावेणं दाहिणिल्लेसु सुवन्नकुमारेसु एवं विज्जुकुमारेसु एवं अग्गिकुमारवज्जं जाव दाहिणिल्लेसु थणियकुमारेसु से णं तओ जाव उव्वट्टित्ता माणुस्सं विग्गहं लभिहिति जाव विराहियसामन्ने जोइसिएसु देवेसु उववज्जिहिति, से णं तओ अणंतरं चयं चइत्ता माणुस्सं विग्गहं लभिहिति जाव अविराहियसामन्ने कालमासे कालं किच्चा सोहम्मे कप्पे देवत्ताए उववज्जिहिति, से णं तओहिंतो अणंतरं चयं चइत्ता माणुस्सं विग्गहं लभिहिति केवलं बोहिं बुज्झिहिति, तत्थवि णं अविराहियसामन्ने कालमासे कालं किच्चा ईसाणे कप्पे देवत्ताए उववज्जिहिति, से णं तओ चइत्ता माणुस्सं विग्गहं लभिहिति, तत्थवि णं अविराहियसामन्ने कालमासे कालं किच्चा सणंकुमारे कप्पे देवत्ताए उववज्जिहिति, से णं तओहिंतो एवं जहा सणंकुमारे तहा बंभलोए महासुक्के आणए आरणे, से णं तओ जाव अविराहियसामन्ने कालमासे कालं किच्चा सव्वट्ठसिद्धे महाविमाणे देवत्ताए उववज्जिहिति, से णं तओहिंतो अणंतरं चयं चइत्ता महाविदेहे वासे जाइं इमाइं कुलाइं भवंति–अड्ढाइं जाव अपरिभूयाइं,

१५ गोशालकशते दारिकासम्यक्त्वचरणयुताभवा दृढप्रतिज्ञभवश्च सू ५६०

॥६९४॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गोशालक-चरित्रं

तहप्पगारेसु कुलेसु पुत्तत्ताए पच्चायाहिति, एवं जहा उववाइए दढप्पइन्नवत्तव्वया सच्चेव वत्तव्वया निरवसेसा भाणियव्वा जाव केवलवरनाणदंसणे समुप्पज्जिहिति, तए णं से दढप्पइन्ने केवली अप्पणो तीअद्धं आभोएहीइ अप्प० २ समणे निग्गंथे सद्दावेहिति सम० २ एवं वदिहीइ–एवं खलु अहं अज्जो! इओ चिरातीयाए अद्धाए गोसाले नामं मंखलिपुत्ते होत्था समणघायए जाव छउमत्थे चेव कालगए तम्मूलगं च णं अहं अज्जो! अणादीयं अणवदग्गं दीहमद्धं चाउरंतसंसारकंतारं अणुपरियट्टिए, तं मा णं अज्जो! तुज्झं केयि भवतु आयरियपडिणीयए उवज्झायपडिणीए आयरियउवज्झायाणं अयसकारए अवन्नकारए अकित्तिकारए, मा णं सेऽवि एवं चेव अणादीयं अणवदग्गं जाव संसारकंतारं अणुपरियट्टिहिति जहा णं अहं। तए णं ते समणा निग्गंथा दढप्पइन्नस्स केवलिस्स अंतियं एयम० सो० निसम्म भीया तत्था तसिया संसारभउव्विग्गा दढप्पइन्नं केवलिं वंदिहिंति नमं० २ तस्स ठाणस्स आलोइएहिंति निंदिहिंति जाव पडिवज्जिहिंति, तए णं से दढप्पइन्ने केवली बहूइं वासाइं केवलपरियागं पाउणिहिति बहूहिं २ अप्पणो आउसेसं जाणेत्ता भत्तं पच्चक्खाहिति एवं जहा उववाइए जाव सव्वदुक्खाणमंतं काहिति। सेवं भंते! २ त्ति जाव विहरइ (सूत्रं ५६०)॥ तेयनिसग्गो सम्मत्तो॥ समत्तं च पन्नरसमं सयं एक्कसरयं॥ १५–१॥

'पडिरूविएणं सुक्केणं'ति 'प्रतिरूपकेन' उचितेन शुल्केन–दानेन 'भंडकरंडगसमाणे'ति आभरणभाजनतुल्या आदे-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	गोशालक-चरित्रं

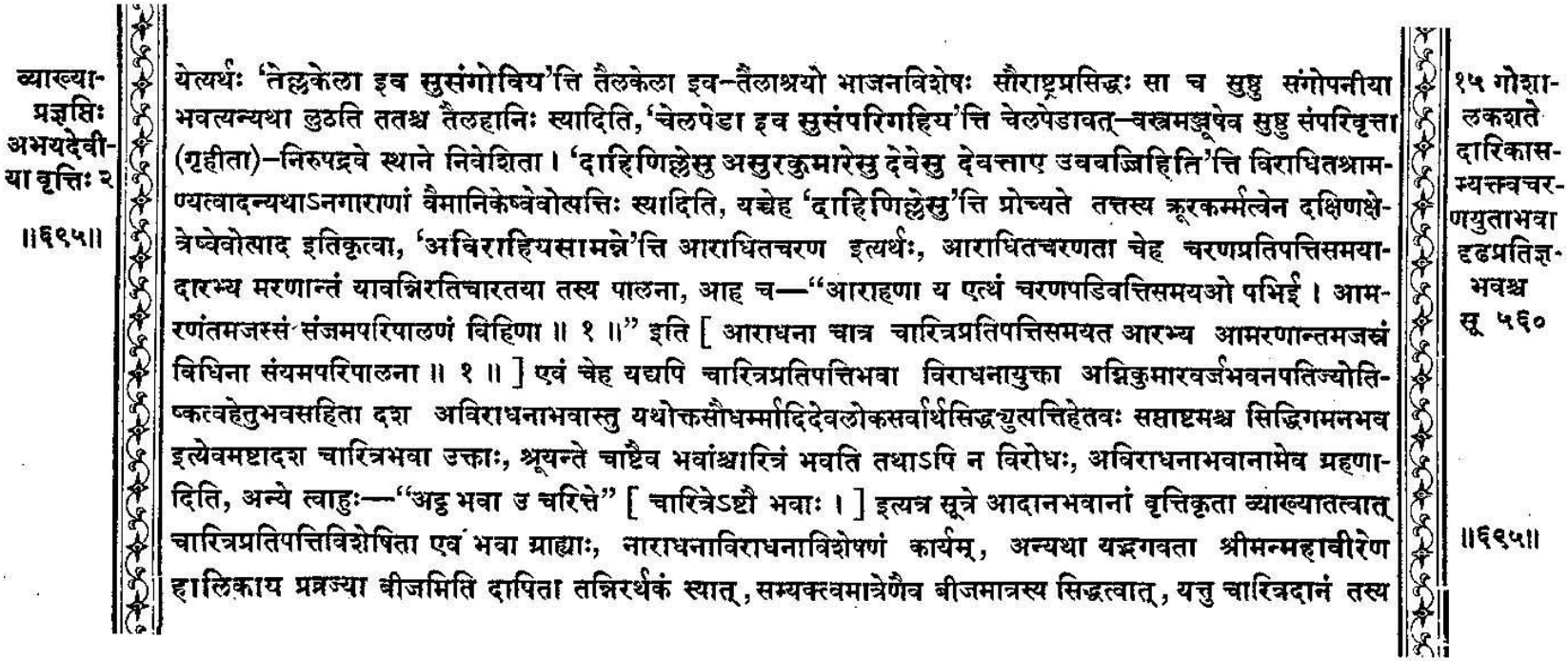

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥६९५॥

येत्यर्थः 'तेल्लकेला इव सुसंगोविय'त्ति तैलकेला इव–तैलाश्रयो भाजनविशेषः सौराष्ट्रप्रसिद्धः सा च सुष्ठु संगोपनीया भवत्यन्यथा लुठति ततश्च तैलहानिः स्यादिति, 'चेलपेडा इव सुसंपरिगहिय'त्ति चेलपेडावत्–वस्त्रमञ्जूषेव सुष्ठु संपरिवृत्ता (गृहीता)–निरुपद्रवे स्थाने निवेशिता। 'दाहिणिल्लेसु असुरकुमारेसु देवेसु देवत्ताए उववज्जिहिति'त्ति विराधितश्रामण्यत्वादन्यथाऽनगाराणां वैमानिकेष्वेवोत्पत्तिः स्यादिति, यच्चेह 'दाहिणिल्लेसु'त्ति प्रोच्यते तत्तस्य क्रूरकर्म्मत्वेन दक्षिणक्षेत्रेष्वेवोत्पाद इतिकृत्वा, 'अविराहियसामन्ने'त्ति आराधितचरण इत्यर्थः, आराधितचरणता चेह चरणप्रतिपत्तिसमयादारभ्य मरणान्तं यावन्निरतिचारतया तस्य पालना, आह च—"आराहणा य एत्थं चरणपडिवत्तिसमयओ पभिई। आमरणंतमजस्सं संजमपरिपालणं विहिणा ॥ १ ॥" इति [आराधना चात्र चारित्रप्रतिपत्तिसमयत आरभ्य आमरणान्तमजस्रं विधिना संयमपरिपालना ॥ १ ॥] एवं चेह यद्यपि चारित्रप्रतिपत्तिभवा विराधनायुक्ता अग्निकुमारवर्जभवनपतिज्योतिष्कत्वहेतुभवसहिता दश अविराधनाभवास्तु यथोक्तसौधर्म्मादिदेवलोकसर्वार्थसिद्ध्युत्पत्तिहेतवः सप्ताष्टमश्च सिद्धिगमनभव इत्येवमष्टादश चारित्रभवा उक्ताः, श्रूयन्ते चाष्टैव भवांश्चारित्रं भवति तथाऽपि न विरोधः, अविराधनाभवानामेव ग्रहणादिति, अन्ये त्वाहुः—"अट्ठ भवा उ चरित्ते" [चारित्रेऽष्टौ भवाः।] इत्यत्र सूत्रे आदानभवानां वृत्तिकृता व्याख्यातत्वात् चारित्रप्रतिपत्तिविशेषिता एवं भवा ग्राह्याः, नाराधनाविराधनाविशेषणं कार्यम्, अन्यथा यद्भगवता श्रीमन्महावीरेण हालिकाय प्रव्रज्या बीजमिति दापिता तन्निरर्थकं स्यात्, सम्यक्त्वमात्रेणैव बीजमात्रस्य सिद्धत्वात्, यत्तु चारित्रदानं तस्य

१५ गोशालकशते दारिकासम्यक्त्वचरणयुताभवा दृढप्रतिज्ञभवश्च सू ५६०

॥६९५॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

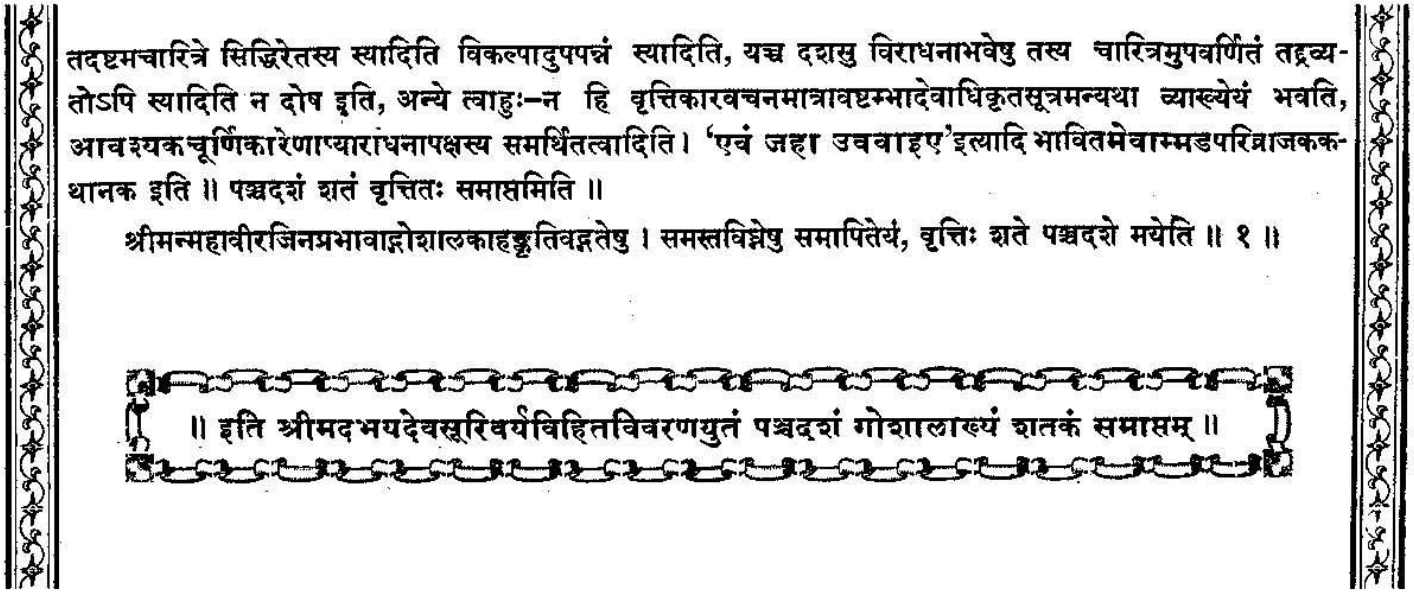

तदष्टमचारित्रे सिद्धिरेतस्य स्यादिति विकल्पादुपपन्नं स्यादिति, यच्च दशसु विराधनाभवेषु तस्य चारित्रमुपवर्णितं तद्द्रव्यतोऽपि स्यादिति न दोष इति, अन्ये त्वाहुः–न हि वृत्तिकारवचनमात्रावष्टम्भादेवाधिकृतसूत्रमन्यथा व्याख्येयं भवति, आवश्यकचूर्णिकारेणाप्याराधनापक्षस्य समर्थितत्वादिति। 'एवं जहा उववाइए'इत्यादि भावितमेवाम्मडपरिव्राजकक-थानक इति ॥ पञ्चदशं शतं वृत्तितः समाप्तमिति ॥

श्रीमन्महावीरजिनप्रभावाद्गोशालकाहङ्कृतिवह्नतेषु । समस्तविघ्नेषु समापितेयं, वृत्तिः शते पञ्चदशे मयेति ॥ १ ॥

॥ इति श्रीमदभयदेवसूरिवर्यविहितविवरणयुतं पञ्चदशं गोशालाख्यं शतकं समाप्तम् ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अथ पंचदशमं शतकं परिसमाप्तं

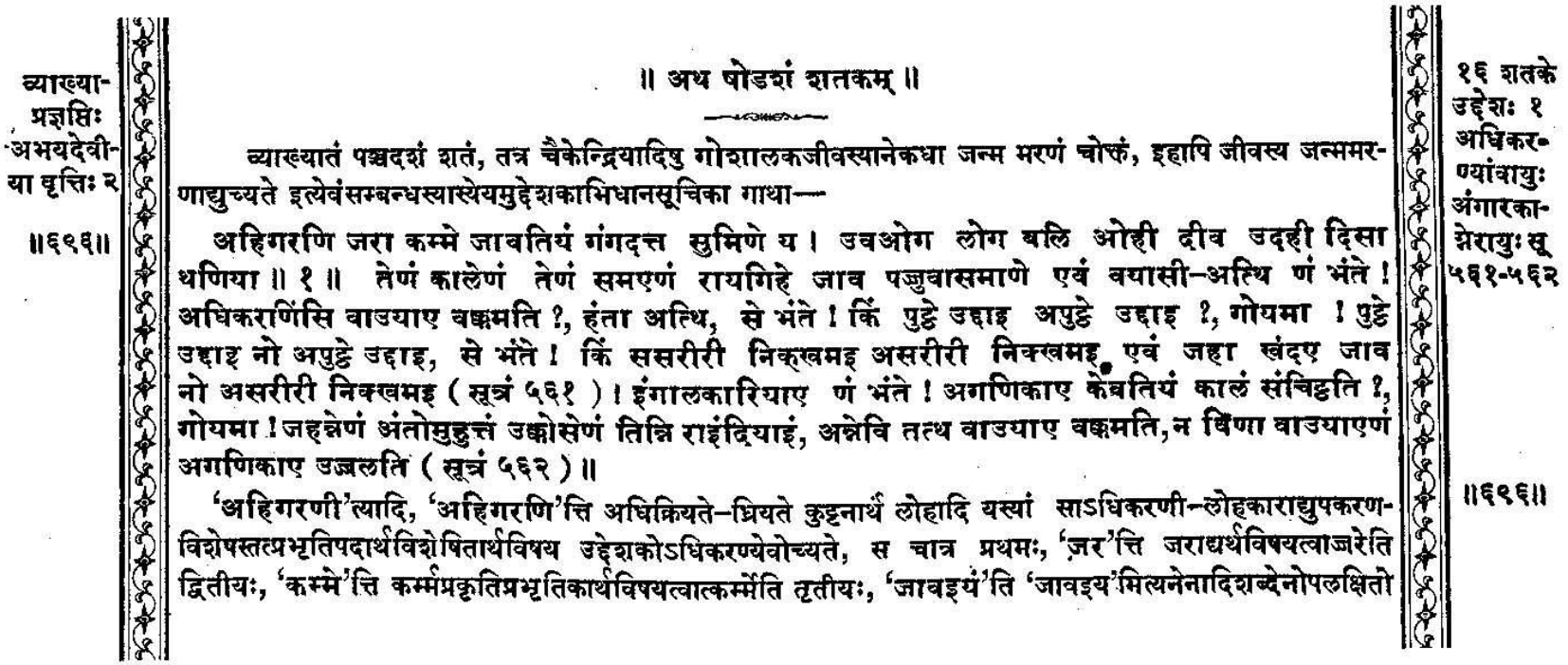

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥६९६॥

॥ अथ षोडशं शतकम् ॥

व्याख्यातं पञ्चदशं शतं, तत्र चैकेन्द्रियादिषु गोशालकजीवस्यानेकधा जन्म मरणं चोक्तं, इहापि जीवस्य जन्ममरणाद्युच्यते इत्येवंसम्बन्धस्यास्येयमुद्देशकाभिधानसूचिका गाथा—

अहिगरणि जरा कम्मे जावतियं गंगदत्त सुमिणे य । उवओग लोग बलि ओही दीव उदही दिसा थणिया ॥ १ ॥ तेणं कालेणं तेणं समएणं रायगिहे जाव पज्जुवासमाणे एवं वयासी–अत्थि णं भंते ! अधिकरणिंसि वाउयाए वक्कमति ?, हंता अत्थि, से भंते ! किं पुट्ठे उद्दाइ अपुट्ठे उद्दाइ ?, गोयमा ! पुट्ठे उद्दाइ नो अपुट्ठे उद्दाइ, से भंते ! किं ससरीरी निक्खमइ असरीरी निक्खमइ, एवं जहा खंदए जाव नो असरीरी निक्खमइ (सूत्रं ५६१) । इंगालकारियाए णं भंते ! अगणिकाए केवतियं कालं संचिट्ठति ?, गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं तिन्नि राइंदियाइं, अन्नेवि तत्थ वाउयाए वक्कमति, न विणा वाउयाएणं अगणिकाए उज्जलति (सूत्रं ५६२) ॥

'अहिगरणी'त्यादि, 'अहिगरणि'त्ति अधिक्रियते–ध्रियते कुट्टनार्थं लोहादि यस्यां साऽधिकरणी–लोहकाराद्युपकरणविशेषस्तत्प्रभृतिपदार्थविशेषितार्थविषय उद्देशकोऽधिकरण्येवोच्यते, स चात्र प्रथमः, 'जर'त्ति जराद्यर्थविषयत्वाज्जरेति द्वितीयः, 'कम्मे'त्ति कर्म्मप्रकृतिप्रभृतिकार्थविषयत्वात्कर्म्मेति तृतीयः, 'जावइयं'ति 'जावइय'मित्यनेनादिशब्देनोपलक्षितो

१६ शतके उद्देशः १ अधिकरण्यांवायुः अंगारकाङ्गेरायुः सू ५६१-५६२

॥६९६॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अथ षोडशमं शतकं आरभ्यते

अत्र षोडशमे शतके प्रथम-उद्देशक: आरब्ध:

जावइयमिति चतुर्थः, 'गंगदत्त'त्ति गङ्गदत्तदेववक्तव्यताप्रतिबद्धत्वाद् गङ्गदत्त एव पञ्चमः, 'सुमिणे य'त्ति स्वप्नविषयत्वात्स्वप्न इति षष्ठः, 'उवओग'त्ति उपयोगार्थप्रतिपादकत्वादुपयोग एव सप्तमः, 'लोग'त्ति लोकस्वरूपाभिधायकत्वाल्लोक एवाष्टमः, 'बलि'त्ति बलिसम्बन्धिपदार्थाभिधायिकत्वाद्बलिरेव नवमः, 'ओहि'त्ति अवधिज्ञानप्ररूपणार्थत्वादवधिरेव दशमः, 'दीव'त्ति द्वीपकुमारवक्तव्यतार्थो द्वीप एवैकादशः 'उदहि'त्ति उदधिकुमारविषयत्वादुदधिरेव द्वादश 'दिसि'त्ति दिक्कुमारविषयत्वाद्दिगेव त्रयोदशः, 'थणिए'त्ति स्तनितकुमारविषयत्वात्स्तनित एव चतुर्दश इति ॥ तत्राधिकरणीत्युद्देशकार्थप्रस्तावनार्थमाह—'तेण'मित्यादि, 'अत्थि'त्ति अस्त्ययं पक्षः 'अहिगरणिंसि'त्ति अधिकरण्यां 'वाउयाए'त्ति वायुकायः 'वक्कमइ'त्ति व्युत्क्रामति अयोघनाभिघातेनोत्पद्यते, अयं चाक्रान्तसम्भवत्वेनादावचेतनतयोत्पन्नोऽपि पश्चात्सचेतनीभवतीति सम्भाव्यत इति ॥ उत्पन्नश्च सन् म्रियत इति प्रश्नयन्नाह—'से भंते'इत्यादि, 'पुट्ठे'त्ति स्पृष्टः स्वकायशस्त्रादिना सशरीरश्च कडेवराच्निष्क्रामति कार्म्मणाद्यपेक्षया औदारिकाद्यपेक्षया त्वशरीरीति ॥ अग्निसहचरत्वाद्वायोर्वायुसूत्रानन्तरमग्निसूत्रमाह—'इंगाले'त्यादि, 'इंगालकारियाए'त्ति अङ्गारान् करोतीति अङ्गारकारिका–अग्निशकटिका तस्यां, न केवलं तस्यामग्निकायो भवति 'अन्नेऽविऽत्थ'त्ति अन्योऽप्यत्र वायुकायो व्युत्क्रामति, यत्राग्निस्तत्र वायुरितिकृत्वा, कस्मादेवमित्याह—'न विणे'त्यादि । अग्न्यधिकारादेवाग्नितप्तलोहमधिकृत्याह—

'पुरिसे णं भंते ! अयं अयकोट्ठंसि अयोमएणं संडासएणं उविहमाणे वा पविहमाणे वा कतिकिरिए ?, गोयमा ! जावं च णं से पुरिसे अयं अयकोट्ठंसि अयोमएणं संडासएणं उविहिति वा पविहिति वा तावं-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥६९७॥

च णं से पुरिसे कातियाए जाव पाणाइवायकिरियाए पंचहिं किरियाहिं पुट्ठे, जेसिंपिय णं जीवाणं सरीरेहिंतो अए निव्वत्तिए अयकोट्ठे निव्वत्तिए संडासए निव्वत्तिए इंगाला निव्वत्तिया इंगालकड्ढिणि निव्वत्तिया भत्था निव्वत्तिया तेवि णं जीवा काइयाए जाव पंचहिं किरियाहिं पुट्ठा। पुरिसे णं भंते ! अयं अयकोट्ठाओ अयोमएणं संडासएणं गहाय अहिकरणिंसि उक्खिवमाणे वा निक्खिवमाणे वा कतिकिरिए ?, गोयमा ! जावं च णं से पुरिसे अयं अयकोट्ठाओ जाव निक्खिवइ वा० तावं च णं से पुरिसे काइयाए जाव पाणाइवायकिरियाए पंचहिं किरियाहिं पुट्ठे, जेसिंपि णं जीवा णं सरीरेहिंतो अयो निव्वत्तिए संडासए निव्वत्तिए चम्मेट्ठे निव्वत्तिए मुट्ठिए निव्वत्तिए अधिकरणि० अधिकरणिखोडी णि० उदगदोणी णि० अधिकरणसाला निव्वत्तिया तेवि णं जीवा काइयाए जाव पंचहिं किरियाहिं पुट्ठा (सूत्रं ५६३) ॥

'पुरिसे णं भंते !'इत्यादि, 'अयं'ति लोहम् 'अयकोट्ठंसि'त्ति लोहप्रतापनार्थे कुशूले 'उव्विहमाणे व'त्ति उत्क्षिपन् वा 'पविहमाणे व'त्ति प्रक्षिपन् वा 'इंगालकड्ढिणि'त्ति ईषद्वङ्काग्रा लोहमययष्टिः 'भत्थ'त्ति ध्मानखल्ला, इह चायःप्रभृतिपदार्थनिर्वर्त्तकजीवानां पञ्चक्रियत्वमविरतिभावेनावसेयमिति। 'चम्मेट्ठे'त्ति लोहमयः प्रतलायतो लोहादिकुट्टनप्रयोजनो लोहकाराद्युपकरणविशेषः, 'मुट्ठिए'त्ति लघुतरो घनः 'अहिगरणिखोडि'त्ति यत्र काष्ठेऽधिकरणी निवेश्यते 'उदगदोणि'त्ति जलभाजनं यत्र तप्तं लोहं शीतलीकरणाय क्षिप्यते 'अहिगरणसाल'त्ति लोहपरिकर्मगृहम् ॥ प्राक्रियाः प्ररूपितास्तासु चाधिकरणिकी, सा चाधिकरणिनोऽधिकरणे सति भवतीत्यतस्तद्वयनिरूपणायाह—

१६ शतके उद्देशः १ अयःकर्मणि क्रियाः सू ५६३

॥६९७॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जीवे णं भंते ! किं अधिकरणी अधिकरणं ?, गोयमा ! जीवे अधिकरणीवि अधिकरणंपि, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुचइ जीवे अधिकरणीवि अधिकरणंपि ?, गोयमा ! अविरतिं पडुच्च से तेणट्ठेणं जाव अहिकरणंपि ॥ नेरइए णं भंते ! किं अधिकरणी अधिकरणं ?, गोयमा ! अधिकरणीवि अधिकरणंपि एवं जहेव जीवे तहेव नेरइएवि, एवं निरंतरं जाव वेमाणिए ॥ जीवे णं भंते ! किं साहिकरणी निरहिकरणी ?, गोयमा ! साहिकरणी नो निरहिकरणी, से केणट्ठेणं पुच्छा, गोयमा ! अविरतिं पडुच्च, से तेणट्ठेणं जाव नो निरहिकरणी एवं जाव वेमाणिए ॥ जीवे णं भंते ! किं आयाहिकरणी पराहिकरणी तदुभयाहिकरणी, गोयमा ! आयाहिकरणीवि पराहिकरणीवि तदुभयाहिकरणीवि, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुचइ जाव तदुभयाहिकरणीवि ?, गोयमा ! अविरतिं पडुच्च, से तेणट्ठेणं जाव तदुभयाहिकरणीवि, एवं जाव वेमाणिए ॥ जीवाणं भंते ! अधिकरणे किं आयप्पओगनिवत्तिए परप्पयोगनिवत्तिए तदुभयप्पयोगनिवत्तिए ?, गोयमा ! आयप्पयोगनिवत्तिएवि परप्पयोगनिवत्तिएवि तदुभयप्पयोगनिवत्तिएवि, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुचइ ?, गोयमा ! अविरतिं पडुच्च, से तेणट्ठेणं जाव तदुभयप्पयोगनिवत्तिएवि, एवं जाव वेमाणियाणं (सूत्रं ५६४) ॥ कइ णं भंते ! सरीरगा पण्णत्ता ?, गोयमा ! पंच सरीरा पण्णत्ता, तंजहा–ओरालिए जाव कम्मए । कति णं भंते ! इंदिया पण्णत्ता ?, गोयमा ! पंच इंदिया पण्णत्ता, तंजहा–सोइंदिए जाव फासिंदिए, कतिविहे णं भंते ! जोए पण्णत्ते ?, गोयमा ! तिविहे जोए पण्णत्ते, तंजहा–मणजोए वइजोए कायजोए ॥ जीवे णं भंते ! ओरालियसरीरं निवत्तेमाणे किं अधिकरणी

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अधिकरणं ?, गोयमा ! अधिकरणीवि अधिकरणंपि, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ अधिकरणीवि अधिकरणंपि ?, गोयमा ! अविरतिं पडुच्च, से तेणट्ठेणं जाव अधिकरणंपि, पुढविकाइए णं भंते ! ओरालियसरीरं निवत्तेमाणे किं अधिकरणी अधिकरणं ?, एवं चेव, एवं जाव माणुस्से । एवं वेउव्वियसरीरंपि, नवरं जस्स अत्थि । जीवे णं भंते ! आहारगसरीरं निवत्तेमाणे किं अधिकरणी ? पुच्छा, गोयमा ! अधिकरणीवि अधिकरणंपि, से केणट्ठेणं जाव अधिकरणंपि ?, गोयमा ! पमायं पडुच्च, से तेणट्ठेणं जाव अधिकरणंपि, एवं मणुस्सेवि, तेयासरीरं जहा ओरालियं, नवरं सव्वजीवाणं भाणियव्वं, एवं कम्मगसरीरंपि । जीवे णं भंते ! सोइंदियं निवत्तेमाणे किं अधिकरणी अधिकरणं ?, एवं जहेव ओरालियसरीरं तहेव सोइंदियंपि भाणियव्वं, नवरं जस्स अत्थि सोइंदियं, एवं चक्खिंदियघाणिंदियजिब्भिंदियफासिंदियाणवि, नवरं जाणियव्वं जस्स जं अत्थि । जीवे णं भंते ! मणजोगं निवत्तमाणे किं अधिकरणी अधिकरणं, एवं जहेव सोइंदियं तहेव निरवसेसं, वइजोगो एवं चेव, नवरं एगिंदियवज्जाणं, एवं कायजोगोवि, नवरं सव्वजीवाणं जाव वेमाणिए । सेवं भंते ! २ त्ति (सूत्रं ५६५) ॥ १६–१ ॥

'जीवे ण'मित्यादि, 'अहिगरणीवि'त्ति अधिकरणं–दुर्गतिनिमित्तं वस्तु तच्च विवक्षया शरीरमिन्द्रियाणि च तथा वाह्यो हलगञ्ज्यादिपरिग्रहस्तदस्यास्तीत्यधिकरणी जीवः 'अहिकरणंपि'त्ति शरीराद्यधिकरणेभ्यः कथञ्चिदव्यतिरिक्तत्वाद-धिकरणं जीवः, एतच्च द्वयं जीवस्याविरतिं प्रतीत्योच्यते तेन यो विरतिमान् असौ शरीरादिभावेऽपि नाधिकरणी नाप्य-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

धिकरणमविरतियुक्तस्यैव शरीरादेरधिकरणत्वादिति ॥ एतदेव चतुर्विंशतिदण्डके दर्शयति—'नेरइए'इत्यादि, अधिकरणी जीव इति प्रागुक्तं, स च दूरवर्त्तिनाऽप्यधिकरणेन स्याद् यथा गोमान् इत्यतः पृच्छति—'जीवे ण'मित्यादि, 'साहिगरणि'त्ति सह–सहभाविनाऽधिकरणेन–शरीरादिना वर्त्तत इति समासान्तेन्विधिः साधिकरणी, संसारिजीवस्य शरीरेन्द्रियरूपाधिकरणस्य सर्वदैव सहचारित्वात् साधिकरणत्वमुपदिश्यते, शस्त्राद्यधिकरणापेक्षया तु स्वस्वामिभावस्य तदविरतिरूपस्य सहवर्त्तित्वाज्जीवः साधिकरणीत्युच्यते, अत एव वक्ष्यति—'अविरइं पडुच्च'त्ति, अत एव संयतानां शरीरादिसद्भावेऽप्यविरतेरभावान्न साधिकरणित्वं, 'निरहिगरणि'त्ति निर्गतमधिकरणमस्मादिति निरधिकरणी समासान्तविधेः अधिकरणदूरवर्त्तीत्यर्थः, स च न भवति, अविरतेरधिकरणभूताया अदूरवर्त्तित्वादिति, अथवा सहाधिकरणिभिः–पुत्रमित्रादिभिर्वर्त्तत इति साधिकरणी, कस्यापि जीवस्य पुत्रादीनामभावेऽपि तद्विषयविरतेरभावात्साधिकरणित्वमवसेयमत एव नो निरधिकरणीत्यपि मन्तव्यमिति ॥ अधिकरणाधिकारादेवेदमाह—'जीवे ण'मित्यादि, 'आयाहिगरणि'त्ति अधिकरणीकृष्यादिमान् आत्मनाऽधिकरणी आत्माधिकरणी, ननु यस्य कृष्यादि नास्ति स कथमधिकरणीति ?, अत्रोच्यते, अविरत्यपेक्षयेति, अत एवाविरतिं प्रतीत्येति वक्ष्यति, 'पराहिगरणि'त्ति परतः–परेषामधिकरणे प्रवर्त्तनेनाधिकरणी पराधिकरणी, 'तदुभयाहिगरणि'त्ति तयोः–आत्मपरयोरुभयं तदुभयं ततोऽधिकरणी यः स तथेति ॥ अथाधिकरणस्यैव हेतुप्ररूपणार्थमाह—'जीवाण'मित्यादि, 'आयप्पओगनिव्वत्तिए'त्ति आत्मनः प्रयोगेण–मनःप्रभृतिव्यापारेण निर्वर्त्तितं–निष्पादितं यत्तत्तथा, एवमन्यदपि द्वयम् ॥ ननु यस्य वचनादि परप्रवर्त्तनं वस्तु नास्ति तस्य कथं परप्रयोगनिर्वर्त्तितादि भवि-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥६९९॥

ष्यतीत्याशङ्कामुपदर्श्य परिहरन्नाह—'से केण'मित्यादि, अविरत्यपेक्षया त्रिविधमप्यस्तीति भावनीयमिति ॥ अथ शरीराणामिन्द्रियाणां योगानां च निर्वर्त्तनायां जीवादेरधिकरणित्वादि प्ररूपयन्निदमाह—'कति णं भंते !'इत्यादि, 'अहिगरणीवि अहिगरणंपि'त्ति पूर्ववत् 'एवं चेव'त्ति अनेन जीवसूत्राभिलापः पृथिवीकायिकसूत्रे समस्तो वाच्य इति दर्शितम्, 'एवं वेउव्वि'इत्यादि व्यक्तं, नवरं 'जस्स अत्थि'त्ति इह तस्य जीवपदस्य वाच्यमिति शेषः, तत्र नारकदेवानां वायोः पञ्चेन्द्रियतिर्यङ्मनुष्याणां च तदस्तीति ज्ञेयं, 'पमायं पडुच्च'त्ति इहाहारकशरीरं संयमवतामेव भवति तत्र चाविरतेरभावेऽपि प्रमादादधिकरणित्वमवसेयं, दण्डकचिन्तायां चाहारकं मनुष्यस्यैव भवतीत्यत उक्तम्—'एवं मणुस्सेवि'त्ति, 'नवरं जस्स अत्थि सोइंदियं'ति तस्य वाच्यमिति शेषः, तच्चैकेन्द्रियविकलेन्द्रियवर्जानामन्येषां स्यादिति ॥ षोडशशते प्रथमः॥१६–१॥

१६ शतके उद्देशः १ जराशोकौ सू ५६६

प्रथमोद्देशके जीवानामधिकरणमुक्तं, द्वितीये तु तेषामेव जराशोकादिको धर्म उच्यते इत्येवंसम्बन्धस्यास्येदमादिसूत्रम्–

रायगिहे जाव एवं वयासी–जीवाणं भंते ! किं जरा सोगे ?, गोयमा ! जीवाणं जरावि सोगेवि, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वु० जाव सोगेवि ?, गोयमा ! जे णं जीवा सारीरं वेदणं वेदेंति तेसि णं जीवाणं जरा जे णं जीवा माणसं वेदणं वेदेंति तेसि णं जीवाणं सोगे से तेणट्ठेणं जाव सोगेवि, एवं नेरइयाणवि, एवं जाव थणियकुमाराणं, पुढविकाइयाणं भंते ! किं जरा सोगे ?, गोयमा ! पुढविकाइयाणं जरा नो सोगे, से केणट्ठेणं जाव नो सोगे ?, गोयमा ! पुढविकाइयाणं सारीरं वेदणं वेदेंति नो माणसं वेदणं वेदेंति से तेणट्ठेणं

॥६९९॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र षोडशमे शतके प्रथम-उद्देशक: परिसमाप्त:

अत्र षोडशमे शतके द्वितीय-उद्देशक: आरब्ध:

जाव नो सोगे, एवं जाव चउरिंदियाणं, सेसाणं जहा जीवाणं जाव वेमाणियाणं, सेवं भंते ! २ त्ति जाव पज्जुवासति (सूत्रं ५६६) ॥

'रायगिहे'इत्यादि, 'जर'त्ति 'जृ वयोहानौ' इति वचनात् जरणं जरा–वयोहानिः शारीरदुःखरूपा चेयमतो यदन्यदपि शारीरं दुःखं तदनयोपलक्षितं, ततश्च जीवानां किं जरा भवति ?, 'सोगे'त्ति शोचनं शोको–दैन्यम्, उपलक्षणत्वादेव चास्य सकलमानसदुःखपरिग्रहस्ततश्च उत शोको भवतीति, चतुर्विंशतिदण्डके च येषां शरीरं तेषां जरा येषां तु मनोऽप्यस्ति तेषामुभयमिति ॥ अनन्तरं वैमानिकानां जराशोका उक्तौ अथ तेषामेव विशेषस्य शक्रस्य वक्तव्यतामभिधातुकाम आह–

तेणं कालेणं २ सक्के देविंदे देवराया वज्जपाणी पुरंदरे जाव भुंजमाणे विहरइ, इमं च णं केवलकप्पं जंबुद्दीवं २ विपुलेणं ओहिणा आभोएमाणे २ पासति समणं भगवं महावीरं जंबुद्दीवे २ एवं जहा ईसाणे तहयसए तहेव सक्कोवि नवरं आभिओगे ण सद्दावेति हरी पायत्ताणियाहिवई सुघोसा घंटा पालओ विमाणकारी पालगं विमाणं उत्तरिल्ले निज्जाणमग्गे दाहिणपुरच्छिमिल्ले रतिकरपव्वए सेसं तं चेव जाव नामगं सावेत्ता पज्जुवासति धम्मकहा जाव परिसा पडिगया, तए णं से सक्के देविंदे देवराया समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियं धम्मं सोचा निसम्म हट्ठतुट्ठ० समणं भगवं महावीरं वंदति नमंसति २ एवं वयासी–कतिविहे णं भंते ! उग्गहे पन्नत्ते ?, सक्का ! पंचविहे उग्गहे पण्णत्ते, तंजहा–देविंदोग्गहे रायोग्गहे गाहावइउग्गहे सागारियउग्गहे साहम्मियउग्गहे ॥ जे इमे भंते ! अज्जत्ताए समणा निग्गंथा विहरंति एएसि णं अहं उग्गहं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [५६६]

दीप अनुक्रम [६६६]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥७००॥

अणुजाणामीतिकट्टु समणं भगवं महावीरं वंदति नमंसति २ तमेव दिव्वं जाणविमाणं दुरूहति २ जामेव दिसं पाउब्भूए तामेव दिसं पडिगए। भंतेत्ति भगवं गोयमे समणं भगवं महा० वंदति न० २ एवं वयासी–जं णं भंते ! सक्के देविंदे देवराया तुज्झे णं एवं वदइ सच्चे णं एसमट्ठे ?, हंता सच्चे (सूत्रं ५६७) ॥

'तेणं कालेण'मित्यादि, 'एवं जहा ईसाणो तहयसए तहा सक्कोवि' त्ति यथेशानस्तृतीयशते प्रथमोद्देशके राजप्रश्नीयातिदेशेनाभिहितस्तथा शक्रोऽपीह वाच्यः, सर्वथा साम्यपरिहारार्थं त्वाह—'नवरमाभिओगे ण सद्दावइ'इत्यादि तत्र किलेशानो महावीरमवधिनाऽवलोक्याभियोगिकान् देवान् शब्दयामास शक्रस्तु नैवं, तथा तत्र लघुपराक्रमः पदात्यनीकाधिपतिर्नन्दिघोषाघण्टाताडनाय नियुक्त उक्तः इह तु सुघोषाघण्टाताडनाय हरिणैगमेषी नियुक्त इति वाच्यं, तथा तत्र पुष्पको विमानकारी उक्त इह तु पालकोऽसौ वाच्यः, तथा तत्र पुष्पकं विमानमुक्तमिह तु पालकं वाच्यं, तथा तत्र दक्षिणो निर्याणमार्ग उक्त इह तूत्तरो वाच्यः, तथा तत्र नन्दीश्वरद्वीपे उत्तरपूर्वो रतिकरपर्वत ईशानेन्द्रस्यावतारायोक्त इह तु पूर्वदक्षिणोऽसौ वाच्यः 'नामगं सावेत्त'त्ति स्वकीयं नाम श्रावयित्वा यदुताहं भदन्त ! शक्रो देवराजो भवन्तं वन्दे नमस्यामि चेत्येवम्, 'उग्गहे'त्ति अवगृह्यते–स्वामिना स्वीक्रियते यः सोऽवग्रहः 'देविंदोग्गहे य'त्ति देवेन्द्रः–शक्र ईशानो वा तस्यावग्रहो–दक्षिणं लोकार्द्धमुत्तरं वेति देवेन्द्रावग्रहः 'राओग्गहे'त्ति राजा–चक्रवर्त्ती तस्यावग्रहः–षट्खण्डभरतादिक्षेत्रं राजावग्रहः 'गाहावईउग्गहे'त्ति गृहपतिः–माण्डलिको राजा तस्यावग्रहः–स्वकीयं मण्डलमिति गृहपत्यवग्रहः 'सागारियउग्गहे'त्ति सहागारेण–गेहेन वर्त्तत इति सागारः स एव सागारिकस्तस्यावग्रहो–गृहमेवेति सागारिकाव-

१६ शतके उद्देशः २ इन्द्रदत्तोऽवग्रहः सू ५६७

॥७००॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पञ्च-प्रकारस्य अवग्रहा:

ग्रहः 'साहम्मियउग्गहे'त्ति समानेन धर्म्मेण चरन्तीति साधर्म्मिकाः साध्वपेक्षया साधव एव तेषामवग्रहः–तदाभाव्यं पञ्चक्रोशपरिमाणं क्षेत्रमृतुबद्धे मासमेकं वर्षासु चतुरो मासान् यावदिति साधर्म्मिकावग्रहः। एवमुपश्रुत्येन्द्रो यदाचख्यौ तदाह—'जे इमे'इत्यादि, 'एवं वयइ'त्ति एवं पूर्वोक्तम् 'अहं उग्गहं अणुजाणामि' इत्येवंरूपं 'वदति' अभिधत्ते सत्य एषोऽर्थ इति ॥ अथ भवत्वयमर्थः सत्यस्तथाऽप्ययं स्वरूपेण सम्यग्वादी उत न ? इत्याशङ्क्याह—

सक्के णं भंते ! देविंदे देवराया किं सम्मावादी मिच्छावादी ?, गोयमा ! सम्मावादी नो मिच्छावादी ॥ सक्के णं भंते ! देविंदे देवराया किं सच्चं भासं भासति मोसं भासं भासति सच्चामोसं भासं भासति असच्चामोसं भासं भासति ?, गोयमा ! सच्चंपि भासं भासति जाव असच्चामोसंपि भासं भासति ॥ सक्के णं भंते ! देविंदे देवराया किं सावज्जं भासं भासति अणवज्जं भासं भासति ?, गोयमा ! सावज्जंपि भासं भासति अणवज्जंपि भासं भासति, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ–सावज्जंपि जाव अणवज्जंपि भासं भासति ?, गोयमा ! जाहे णं सक्के देविंदे देवराया सुहुमकायं अणिजूहित्ताणं भासं भासति ताहे णं सक्के देविंदे देवराया सावज्जं भासं भासति जाहे णं सक्के देविंदे देवराया सुहुमकायं निजूहित्ता णं भासं भासति ताहे णं सक्के देविंदे देवराया अणवज्जं भासं भासति, से तेणट्ठेणं जाव भासति, सक्के णं भंते ! देविंदे देवराया किं भवसिद्धीए अभवसि० सम्मदिट्ठीए एवं जहा मोउद्देसए सणंकुमारो जाव नो अचरिमे ॥(सूत्रं ५६८) ॥

'सक्के ण'मित्यादि, सम्यग् वदितुं शीलं–स्वभावो यस्य स सम्यग्वादी प्रायेणासौ सम्यगेव वदतीति । सम्यग्वादशी-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पञ्च-प्रकारस्य अवग्रहा:

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [५६८]

दीप अनुक्रम [६६८]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥७०१॥

लत्वेऽपि प्रमादादिना किमसौ चतुर्विधां भाषां भाषते न वा ? इति प्रश्नयन्नाह—'सक्के ण'मित्यादि, सत्याऽपि भाषा कथञ्चिद्भाष्यमाणा सावद्या संभवतीति पुनः पृच्छति—'सक्के ण'मित्यादि, 'सावज्जं'ति सहावद्येन–गर्हितकर्म्मणेति सावद्या तां 'जाहे णं'ति यदा 'सुहुमकायं'ति सूक्ष्मकायं हस्तादिकं वस्त्विति वृद्धाः, अन्ये त्वाहुः—'सुहुमकायं'ति वस्त्रम् 'अनिज्जूहित्त'ति 'अपोह्य' अदत्त्वा, हस्ताद्यावृतमुखस्य हि भाषमाणस्य जीवसंरक्षणतोऽनवद्या भाषा भवति अन्या तु सावद्येति ॥ शक्रमेवाधिकृत्याह—'सक्के ण'मित्यादि, 'मोउद्देसए'त्ति तृतीयशते प्रथमोद्देशके ॥

जीवाणं भंते ! किं चेयकडा कम्मा कज्जंति अचेयकडा कम्मा कज्जंति ?, गोयमा ! जीवाणं चेयकडा कम्मा कज्जंति नो अचेयकडा कम्मा कज्जंति, से केण० भंते ! एवं वुच्चइ जाव कज्जंति ?, गोयमा ! जीवाणं आहारोवचिया पोग्गला बोंदिचिया पोग्गला कलेवरचिया पोग्गला तहा २ णं ते पोग्गला परिणमंति नत्थि अचेयकडा कम्मा समणाउसो !, दुट्ठाणेसु दुसेज्जासु दुन्निसीहियासु तहा २ णं ते पोग्गला परिणमंति नत्थि अचेयकडा कम्मा समणाउसो !, आयंके से वहाए होति संकप्पे से वहाए होति मरणंते से वहाए होति तहा २ णं ते पोग्गला परिणमंति नत्थि अचेयकडा कम्मा समणाउसो !, से तेणट्ठेणं जाव कम्मा कज्जंति, एवं नेरतियाणवि एवं जाव वेमाणियाणं। सेवं भंते ! सेवं भंते ! जाव विहरति (सूत्रं५६९)॥१६–२॥

अनन्तरं शक्रस्वरूपमुक्तं, तच्च कर्म्मतो भवतीति सम्बन्धेन कर्म्मस्वरूपप्ररूपणायाह–'जीवाण'मित्यादि, 'चेयकड-कम्म'त्ति चेतः–चैतन्यं जीवस्वरूपभूता चेतनेत्यर्थः तेन कृतानि–बद्धानि चेतःकृतानि कर्म्माणि 'कज्जंति'त्ति भव

१६ शतके उद्देशः २ इन्द्रस्य सम्यग्वादित्वादि चेतोऽचेतःकृतानि कर्माणि सू ५६९

॥७०१॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

न्ति, कथम् ? इति चेदुच्यते—'जीवाणं'ति जीवानामेव नाजीवानाम् 'आहारोवचिया पोग्गल'त्ति आहाररूपतयोपचिताः–सञ्चिता ये पुद्गलाः 'बोंदिचिया पोग्गल'त्ति इह बोन्दिः–अव्यक्तावयवं शरीरं ततो बोन्दितया चिता ये पुद्गलाः, तथा 'कडेवरचिय'त्ति कडेवरतया चिता ये पुद्गलाः 'तहा तहा ते पुग्गला परिणमंति'त्ति तेन तेन प्रकारेण आहारादितयेत्यर्थः ते पुद्गलाः परिणमन्ति, एवं च कर्मपुद्गला अपि जीवानामेव तथा २ परिणमन्तीतिकृत्वा चैतन्यकृतानि कर्माणि, अतो निगम्यते–'नत्थि अचेयकडा कम्म'त्ति न भवन्ति 'अचेतःकृतानि' अचैतन्यकृतानि कर्म्माणि हे श्रमण ! हे आयुष्मन् ! इति, अथवा 'चेयकडा कम्मा कज्जंति'त्ति चेयं–चयनं चय इत्यर्थः भावे यप्रत्ययविधानात् तत्कृतानि सञ्चयकृतानि पुद्गलसञ्चयरूपाणि कर्माणि भवन्ति, कथम् ?, 'आहारोवचिया पोग्गला' इत्यादि, आहाररूपा उपचिताः सन्तः पुद्गला भवन्ति, तथा बोन्दिरूपाश्चिताः सन्तः पुद्गला भवन्ति, तथा कडेवररूपाश्चिताः सन्तः पुद्गला भवन्ति, किं बहुना ?, तथोच्छ्वासादिरूपतया ते पुद्गलाः परिणमन्ति चयादेवेति शेषः, एवं च न सन्ति 'अचेयकृतानि' असञ्चयकृतानि कर्म्माणि आहारबोन्दिकडेवरपुद्गलवदिति । तथा 'दुट्ठाणेसु'त्ति शीतातपदंशमशकादियुक्तेषु–कायोत्सर्गासनाद्याश्रयेषु 'दुसेज्जासु'त्ति दुःखोत्पादकवसतिषु 'दुन्निसीहियासु'त्ति दुःखहेतुस्वाध्यायभूमिषु 'तथा २' तेन २ प्रकारेण बहुविधासातोत्पादकतया 'ते पोग्गल'त्ति ते कार्म्मणपुद्गलाः परिणमन्ति, ततश्च जीवानामेवासातसम्भवात्तैरेवासातहेतुभूतकर्माणि कृतानि अन्यथाऽकृताभ्यागमदोषप्रसङ्गः, जीवकृतत्वे च तेषां चेतःकृतत्वं सिद्धमतो निगम्यते 'नत्थि अचेयकडा कम्म'त्ति, चेयव्याख्यानं त्वेवं नीयते–यतो दुःस्थानादिष्वसातहेतुतया

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

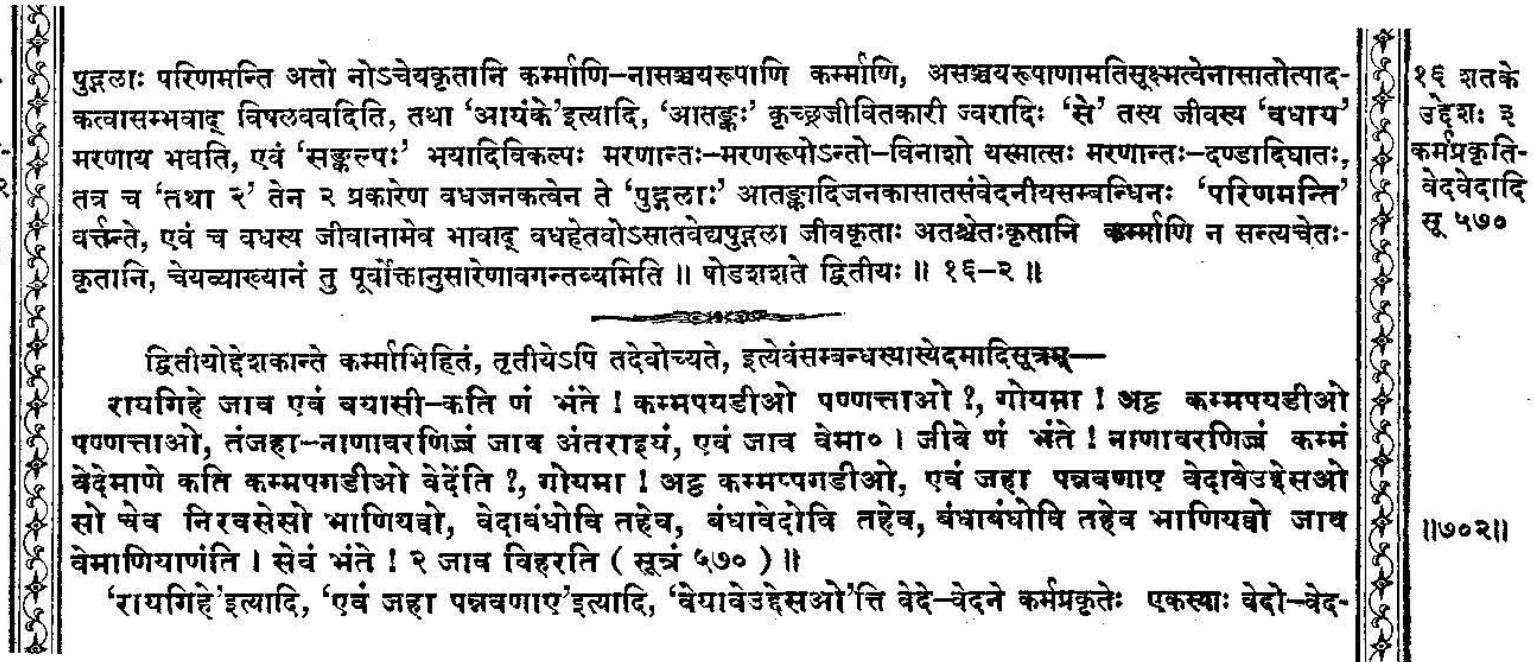

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥७०२॥

पुद्गलाः परिणमन्ति अतो नोऽचेयकृतानि कर्म्माणि–नासञ्चयरूपाणि कर्म्माणि, असञ्चयरूपाणामतिसूक्ष्मत्वेनासातोत्पाद-कत्वासम्भवाद् विफलवदिति, तथा 'आयंके'इत्यादि, 'आतङ्कः' कृच्छ्रजीवितकारी ज्वरादिः 'से' तस्य जीवस्य 'वधाय' मरणाय भवति, एवं 'सङ्कल्पः' भयादिविकल्पः मरणान्तः–मरणरूपोऽन्तो–विनाशो यस्मात्सः मरणान्तः–दण्डादिघातः, तत्र च 'तथा २' तेन २ प्रकारेण वधजनकत्वेन ते 'पुद्गलाः' आतङ्कादिजनकासातसंवेदनीयसम्बन्धिनः 'परिणमन्ति' वर्त्तन्ते, एवं च वधस्य जीवानामेव भावाद् वधहेतवोऽसातवेद्यपुद्गला जीवकृताः अतश्चेतःकृतानि कर्म्माणि न सन्त्यचेतः-कृतानि, चेयव्याख्यानं तु पूर्वोक्तानुसारेणावगन्तव्यमिति ॥ षोडशशते द्वितीयः ॥ १६–२ ॥

१६ शतके उद्देशः ३ कर्मप्रकृति-वेदवेदादि सू ५७०

द्वितीयोद्देशकान्ते कर्म्माभिहितं, तृतीयेऽपि तदेवोच्यते, इत्येवंसम्बन्धस्यास्येदमादिसूत्रम्—

रायगिहे जाव एवं वयासी–कति णं भंते ! कम्मपयडीओ पण्णत्ताओ ?, गोयमा ! अट्ठ कम्मपयडीओ पण्णत्ताओ, तंजहा–नाणावरणिज्जं जाव अंतराइयं, एवं जाव वेमा० । जीवे णं भंते ! नाणावरणिज्जं कम्मं वेदेमाणे कति कम्मपगडीओ वेदेंति ?, गोयमा ! अट्ठ कम्मप्पगडीओ, एवं जहा पन्नवणाए वेदावेउद्देसओ सो चेव निरवसेसो भाणियव्वो, वेदाबंधोवि तहेव, बंधावेदोवि तहेव, बंधाबंधोवि तहेव भाणियव्वो जाव वेमाणियाणंति । सेवं भंते ! २ जाव विहरति (सूत्रं ५७०) ॥

'रायगिहे'इत्यादि, 'एवं जहा पन्नवणाए'इत्यादि, 'वेयावेउद्देसओ'त्ति वेदे–वेदने कर्मप्रकृतेः एकस्याः वेदो–वेद-

॥७०२॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	अत्र षोडशमे शतके द्वितीय-उद्देशक: परिसमाप्त: अत्र षोडशमे शतके तृतीय-उद्देशक: आरब्ध: कर्म-प्रकृत्ति-वेदनं

प्रत सूत्रांक [५७०]

दीप अनुक्रम [६७०]

नमन्यासां प्रकृतीनां यत्रोद्देशकेऽभिधीयते स वेदावेदः स एवोद्देशकः–प्रज्ञापनायाः सप्तविंशतितमं पदं वेदावेदोद्देशकः, दीर्घता चेह सञ्ज्ञात्वात्, स चैवमर्थतः—गौतम ! अष्ट कर्म्मप्रकृतीर्वेदयति सप्त वा मोहस्य क्षये उपशमे वा (शेषघाति-क्षये चतस्रो वा), एवं मनुष्योऽपि, नारकादिस्तु वैमानिकान्तोऽष्टावेवेत्येवमादिरिति । 'वेदाबंधोवि तहेव'त्ति एकस्याः कर्म्मप्रकृतेर्वेदे–वेदने अन्यासां कियतीनां बन्धो भवतीति प्रतिपाद्यते यत्रासौ वेदाबन्ध उच्यते, सोऽपि तथैव प्रज्ञापना-यामिवेत्यर्थः, स च प्रज्ञापनायां षड्विंशतितमपदरूपः, एवं चासौ— कइ णं भंते ! कम्मप्पगडीओ पण्णत्ताओ ?, गोयमा ! अट्ठ कम्मपगडीओ पण्णत्ताओ, तंजहा –णाणावरणं जाव अंतराइयं, एवं नेरइयाणं जाव वेमाणियाणं । जीवे णं भंते ! णाणावरणिज्जं कम्मं वेदेमाणे कइ कम्मपगडीओ बंधइ ?, गोयमा ! सत्तविहबंधए वा अट्ठविहबंधए वा छव्विहबंधए वा एगविहबंधए वा' इत्यादि, तत्राष्टविधबन्धकः प्रतीतः, सप्तविधबन्धकस्त्वायुर्बन्धकालादन्यत्र, षड्विधबन्धक आयुर्मोहव-र्जानां सूक्ष्मसम्परायः, एकविधबन्धको वेदनीयापेक्षयोपशान्तमोहादिः, 'बंधावेदोवि तहेव'त्ति एकस्याः कर्म्मप्रकृतेर्बन्धे सत्य-न्यासां कियतीनां वेदो भवति ? इत्येवमर्थो बन्धावेद उद्देशक उच्यते, सोऽपि तथैव–प्रज्ञापनायामिवेत्यर्थः, स च प्रज्ञापनायां पञ्चविंशतितमपदरूपः, एवं चासौ—'कइ णं भंते !' इत्यादि प्रागिव, विशेषस्त्वयं—'जीवे णं भंते ! णाणावरणिज्जं कम्मं बंधेमाणे कइ कम्मपगडीओ वेएइ ?, गोयमा ! नियमा अट्ठ कम्मप्पगडीओ वेएइ' इत्यादि, 'बंधाबंधो'त्ति एकस्या बन्धेऽन्यासां कियतीनां बन्धः ? इति यत्रोच्यतेऽसौ बन्धाबन्ध इत्युच्यते, स च प्रज्ञापनायां चतुर्विंशतितमं पदं, स चैवं–'कइ ण'मित्यादि तथैव, विशेषः पुनरयं—'जीवे णं भंते ! णाणावरणिज्जं कम्मं बंधेमाणे कइ कम्मप्पगडीओ

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कर्म-प्रकृत्ति-वेदनं

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥७०३॥

बंधइ ?, गोयमा ! सत्तविहबंधए वा अट्ठविहबंधए वा छव्विहबंधए वा' इत्यादि, इह सङ्ग्रहगाथा क्वचिद् दृश्यते—"वेयावेओ पढमो १ वेयाबंधो य बीयओ होइ २। बंधावेओ तइओ ३ चउत्थओ बंधबंधो उ ४ ॥ १ ॥" इति ॥ अनन्तरं बन्धक्रिया उक्तेति क्रियाविशेषाभिधानाय प्रस्तावनापूर्वकमिदमाह—

तए णं समणे भगवं महावीरे अन्नदा कदाधि रायगिहाओ नगराओ गुणसिलाओ चेइयाओ पडिनिक्खमति २ बहिया जणवयविहारं विहरति, तेणं कालेणं तेणं समएणं उल्लुयतीरे नामं नगरे होत्था वन्नओ, तस्स णं उल्लुयतीरस्स नगरस्स बहिया उत्तरपुरच्छिमे दिसिभाए एत्थ णं एगजंबूए नामं चेइए होत्था वन्नओ, तए णं समणे भगवं महावीरे अन्नदा कदायि पुव्वाणुपुव्विं चरमाणे जाव एगजंबूए समोसढे जाव परिसा पडिगया, भंतेत्ति भगवं गोयमे समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी-अणगारस्स णं भंते ! भावियप्पणो छट्ठंछट्ठेणं अणिक्खित्तेणं जाव आयावेमाणस्स तस्स णं पुरच्छिमेणं अवड्ढं दिवसं नो कप्पति हत्थं वा पादं वा बाहं वा ऊरुं वा आउट्टावेत्तए वा पसारेत्तए वा, पच्चच्छिमेणं से अवड्ढं दिवसं कप्पति हत्थं वा पादं वा जाव ऊरुं वा आउंटावेत्तए वा पसारेत्तए वा, तस्स णं अंसियाओ लंबंति तं च वेज्जे अदक्खु ईसिं पाडेति ईसिं २ अंसियाओ छिंदेज्जा से नूणं भंते ! जे छिंदति तस्स किरिया कज्जति जस्स छिज्जति नो तस्स किरिया कज्जइ णण्णत्थेगेणं धम्मंतराइएणं ?, हंता गोयमा ! जे छिंदति जाव धम्मंतराएणं। सेवं भंते ! सेवं भंतेति ॥ (सूत्रं ५७१) ॥ १६–३ ॥

१६ शतके उद्देशः ३ अशञ्छेदे क्रिया सू ५७१

॥७०३॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कर्म-प्रकृत्ति-वेदनं

'तए ण'मित्यादि ॥ 'पुरच्छिमेणं'ति पूर्वभागे–पूर्वाह्णे इत्यर्थः 'अवड्ढं'ति अपगतार्द्धमर्द्धदिवसं यावत् न कल्पते हस्ताद्याकुण्टयितुं कायोत्सर्गव्यवस्थितत्वात् 'पच्चच्छिमेणं'ति पश्चिमभागे 'अवड्ढं दिवसं'ति दिनार्द्धं यावत् कल्पते हस्ताद्याकुण्टयितुं कायोत्सर्गाभावात्, एतच्च चूर्ण्यनुसारितया व्याख्यातं, 'तस्स य'त्ति तस्य पुनः साधोरेवं कायोत्सर्गाभिग्रहवतः 'अंसियाओ'त्ति अर्शांसि तानि च नासिकासत्कानीति चूर्णिकारः, 'तं च'त्ति तं चानगारं कृतकायोत्सर्गं लम्बमानार्शसम् 'अदक्खु'त्ति अद्राक्षीत्, ततश्चार्शसां छेदार्थं 'ईसिं पाडेइ'त्ति तमनगारं भूम्यां पातयति, नापातितस्यार्शश्छेदः कर्त्तुं शक्यत इति, 'तस्स'त्ति वैद्यस्य 'किया' व्यापाररूपा सा च शुभा धर्मबुद्ध्या छिन्दानस्य लोभादिना त्वशुभा 'क्रियते' भवति 'जस्स छिज्जइ'त्ति यस्य साधोरर्शांसि छिद्यन्ते नो तस्य क्रिया भवति निर्व्यापारत्वात्, किं सर्वथा क्रियाया अभावः ?, नैवमत आह—'नन्नत्थे'त्यादि, नेति योऽयं निषेधः सोऽन्यत्रैकस्माद्धर्म्मान्तरायाद्, धर्म्मान्तरायलक्षणक्रिया तस्यापि भवतीति भावः, धर्मान्तरायश्च शुभध्यानविच्छेददर्शश्छेदानुमोदनाद्वेति ॥ षोडशशते तृतीयः ॥ १६–३ ॥

अनन्तरोद्देशकेऽनगारवक्तव्यतोक्ता, चतुर्थेऽप्यसावेवोच्यते इत्येवंसम्बद्धस्यास्येदमादिसूत्रम्—

रायगिहे जाव एवं वयासी–जावतियन्नं भंते ! अन्नइलायए समणे निग्गंथे कम्मं निज्जरेति एवतियं कम्मं नरएसु नेरतियाणं वासेण वा वासेहिं वा वाससएहिं वा खवति ?, णो तिणट्ठे समट्ठे, जावतियण्णं भंते ! चउत्थभत्तिए समणे निग्गंथे कम्मं निज्जरेति एवतियं कम्मं नरएसु नेरइया वाससएणं वा वाससएहिं वा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र षोडशमे शतके तृतीय-उद्देशक: परिसमाप्त:
अत्र षोडशमे शतके चतुर्थ-उद्देशक: आरब्ध:

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [५७२]

दीप अनुक्रम [६७२]

वाससहस्सेहिं वा वाससयसहस्सेहिं (ण) वा खवियंति ?, णो तिणट्ठे समट्ठे, जावतियन्नं भंते ! छट्ठभत्तिए समणे निग्गंथे कम्मं निज्जरेति एवतियं कम्मं नरएसु नेरइया वाससहस्सेण वा वाससहस्सेहिं वा वाससयसहस्सेण (हिं) वा खवयंति ?, णो तिणट्ठे समट्ठे, जावतियन्नं भंते ! अट्ठमभत्तिए समणे निग्गंथे कम्मं निज्जरेति एवतियं कम्मं नरएसु नेरतिया वाससयसहस्सेण वा वाससयसहस्सेहिं वा वासकोडीए वा खवयंति ?, नो तिणट्ठे समट्ठे, जावतियन्नं भंते ! दसमभत्तिए समणे निग्गंथे कम्मं निज्जरेति एवतियं कम्मं नरएसु नेरतिया वास-कोडीए वा वासकोडीहिं वा वासकोडाकोडीए वा खवयंति ?, नो तिणट्ठे समट्ठे, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुचइ जावतियं अन्नइलातए समणे निग्गंथे कम्मं निज्जरेति एवतियं कम्मं नरएसु नेरतिया वासेण वा वासेहिं वा वाससएण वा (जाव) वास(सय)सहस्सेण वा नो खवयंति जावतियं चउत्थभत्तिए, एवं तं चेव पुव्वभणियं उच्चारे-यव्वं जाव वासकोडाकोडीए वा नो खवयंति ?, गोयमा ! से जहानामए–केइ पुरिसे जुन्ने जराजज्जरियदेहे सिढि-लतयावलितरंगसंपिणद्धगत्ते पविरलपरिसडियदंतसेढी उण्हाभिहए तण्हाभिहए आउरे झुंझिए पिवासिए दुब्बले किलंते एगं महं कोसंबगंडियं सुक्कं जडिलं गंठिलं चिक्कणं वाइद्धं अपत्तियं मुंडेण्ण परसुणा अवक्कमेज्जा, तए णं से पुरिसे महंताइं २ सद्दाइं करेइ नो महंताइं २ दलाइं अवदालेइ, एवामेव गोयमा ! नेरइयाणं पावाइं कम्माइं गाढीकयाइं चिक्कणीकयाइं एवं जहा छट्ठसए जाव नो महापज्जवसाणा भवंति, से जहानामए–केई पुरिसे अहिकरणिं आउडेमाणे महया जाव नो महापज्जवसाणा भवंति, से जहानामए–केई पुरिसे

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [५७२]

दीप अनुक्रम [६७२]

तरुणे बलवं जाव मेहावी निउणसिप्पोवगए एगं महं सामलिगंडियं उल्लं अजडिलं अगंठिल्लं अचिक्कणं अवाइद्धं सपत्तियं तिक्खेण परसुणा अक्कमेज्जा, तए णं से णं पुरिसे नो महंताइं २ सद्दाइं करेति महंताइं २ दलाइं अवदालेति, एवामेव गोयमा ! समणाणं निग्गंथाणं अहाबादराइं कम्माइं सिढिलीकयाइं णिट्ठियाइं कयाइं जाव खिप्पामेव परिविद्धत्थाइं भवंति जावतियं तावतियं जाव महापज्जवसाणा भवंति, से जहा वा केइ पुरिसे सुक्कतणहत्थगं जायतेयंसि पक्खिवेज्जा एवं जहा छट्ठसए तहा अयोकवल्लेवि जाव महाप० भवंति, से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुचइ जावतियं अन्नइलायए समणे निग्गंथे कम्मं नि०तं चेव जाव वासकोडाकोडीए वा नो खवयंति ॥ सेवं भंते ! सेवं भंते ! जाव विहरइ ॥ (सूत्रं ५७२) ॥ १६–४ ॥

'रायगिहे' इत्यादि, 'अन्नगिलायते' त्ति अन्नं विना ग्लायति–ग्लानो भवतीत्यन्नग्लायकः प्रत्यग्रकूरादिनिष्पत्तिं यावद् बुभुक्षातुरतया प्रतीक्षितुमशक्नुवन् यः पर्युषितकूरादि प्रातरेव भुङ्क्ते कूरगडुकप्राय इत्यर्थः, चूर्णिकारेण तु निःस्पृहत्त्वात् 'सीयकूरभोई अंतपंताहारो' त्ति व्याख्यातं, अथ कथमिदं प्रत्याय्यं यदुत नारको महाकष्टापन्नो महताऽपि कालेन तावत्कर्म्म न क्षपयति यावत्साधुरल्पकष्टापन्नोऽल्पकालेनेति ?, उच्यते, दृष्टान्ततः, स चायं—'से जहानामए केइ पुरिसे' त्ति यथेति दृष्टान्ते नाम–सम्भावने ए इत्यलङ्कारे 'से' त्ति स कश्चित्पुरुषः 'जुन्ने' त्ति जीर्णः–हानिगतदेहः, स च कारणवशादवृद्धभावेऽपि स्यादत आह–'जराजज्जरियदेहे' त्ति व्यक्तं, अत एव 'सिढिल(त्त)वलितरंगसंपिणद्धगत्ते' त्ति शिथिलतया त्वक्चावलीतरङ्गैश्च संपिनद्धं–परिगतं गात्रं–देहो यस्य स तथा 'पविरलपरिसडियदंतसेढि' त्ति प्रविरलाः–केचित् क्वचिच्च

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

परिशटिता दंता यस्यां सा तथाविधा श्रेणिर्दन्तानामेव यस्य स तथा 'आउरे'त्ति आतुरः–दुःस्थः 'झुंझिए'त्ति बुभुक्षितः झुरित इति टीकाकारः 'दुब्बले'त्ति बलहीनः 'किलंते'त्ति मनःक्लमं गतः,एवंरूपो हि पुरुषश्छेदनेऽसमर्थो भवतीत्येवं विशेषितः, 'कोसंबगंडियं'ति 'कोसंब'त्ति वृक्षविशेषस्तस्य गण्डिका–खण्डविशेषस्तां 'जडिलं'ति जटावतीं वलितोद्वलितामिति वृद्धाः 'गंठिल्लं'ति ग्रन्थिमतीं 'चिक्कणं'ति श्लक्ष्णस्कन्धनिष्पन्नां 'वाइद्ध'न्ति व्यादिग्धां–विशिष्टद्रव्योपदिग्धां वक्रामिति वृद्धाः 'अपत्तियं'ति अपात्रिकाम्–अविद्यमानाधाराम्, एवम्भूता च गण्डिका दुश्छेद्या भवतीत्येवं विशेषिता, तथा परशुरपि मुण्डः–अच्छेदको भवतीति मुण्ड इति विशेषितः, शेषं तूद्देशकान्तं यावत् षष्ठशतवद्व्याख्येयमिति ॥ षोडशशते चतुर्थः ॥ १६–४ ॥

चतुर्थोद्देशके नारकाणां कर्म्मनिर्ज्जरणशक्तिस्वरूपमुक्तं, पञ्चमे तु देवस्यागमनादिशक्तिस्वरूपमुच्यते इत्येवंसम्बद्धस्यास्येदमादिसूत्रम्—

तेणं कालेणं तेणं समएणं उल्लुयतीरे नामं नगरे होत्था वन्नओ, एगजंबूए चेइए वन्नओ, तेणं कालेणं तेणं समएणं सामी समोसढे जाव परिसा पज्जुवासति, तेणं कालेणं २ सक्के देविंदे देवराया वज्जपाणी एवं जहेव बितियउद्देसए तहेव दिव्वेणं जाणविमाणेणं आगओ जाव जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ २ जाव नमंसित्ता एवं वयासी—देवे णं भंते ! महड्ढिए जाव महेसक्खे बाहिरए पोग्गले अपरियाइत्ता पभू

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र षोडशमे शतके चतुर्थ-उद्देशक: परिसमाप्त:

अत्र षोडशमे शतके पंचम-उद्देशक: आरब्ध:

आगमित्तए ?, नो तिणट्ठे समट्ठे, देवे णं भंते ! महड्ढिए जाव महेसक्खे बाहिरए पोग्गले परियाइत्ता पभू आगमित्तए ?, हंता पभू, देवे णं भंते ! महड्ढिए एवं एएणं अभिलावेणं गमित्तए २ एवं भासित्तए वा वागरित्तए वा ३ उम्मिसावेत्तए वा निमिसावेत्तए वा ४ आउट्टावेत्तए वा पसारेत्तए वा ५ ठाणं वा सेज्जं वा निसीहियं वा चेइत्तए वा ६ एवं विउव्वित्तए वा ७ एवं परियारावेत्तए वा ८ जाव हंता पभू, इमाइं अट्ठ उक्खित्तपसिणवागरणाइं पुच्छइ, इमाइं २ संभंतियवंदणएणं वंदति संभंतिय० २ तमेव दिवं जाणविमाणं दुरूहति २ जामेव दिसं पाउब्भूए तामेव दिसं पडिगए (सूत्रं ५७३) ॥ भंतेत्ति भगवं गोयमे समणं भगवं महावीरं वंदति नमंसति २ एवं वयासी–अन्नदा णं भंते ! सक्के देविंदे देवराया देवाणुप्पियं वंदति नमंसति सक्कारेति जाव पज्जुवासति, किण्हं भंते ! अज्ज सक्के देविंदे देवराया देवाणुप्पियं अट्ठ उक्खित्तपसिणवागरणाइं पुच्छइ२ संभंतियवंदणएणं वंदति णमंसति२ जाव पडिगए?,गोयमादि समणे भगवं म०भगवं गोयमं एवं वयासी–एवं खलु गोयमा ! तेणं कालेणं२ महासुक्के कप्पे महासामाणे विमाणे दो देवा महड्ढिया जाव महेसक्खा एगविमाणंसि देवत्ताए उववन्ना, तं०–मायिमिच्छदिट्ठिउववन्नए य अमायिसम्मदिट्ठिउववन्नए य, तए णं से मायिमिच्छादिट्ठिउववन्नए देवे तं अमायिसम्मदिट्ठिउववन्नगं देवं एवं वयासी–परिणममाणा पोग्गला नो परिणया अपरिणया परिणमंतीति पोग्गला नो परिणया अपरिणया,तए णं से अमायिसम्मदिट्ठीउववन्नए देवे तं मायिमिच्छदिट्ठीउववन्नगं देवं एवं वयासी—परिणममाणा पोग्गला परिणया नो अपरिणया परिणमंतीति

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

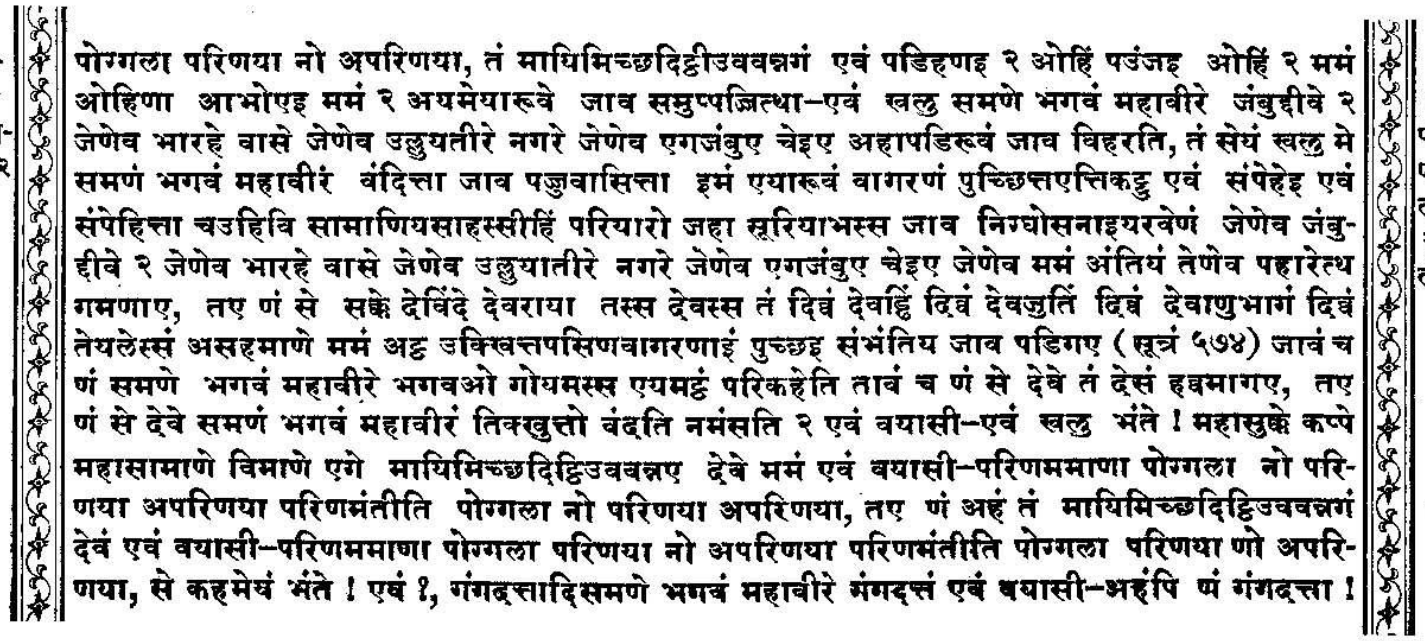

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥७०६॥

पोग्गला परिणया नो अपरिणया, तं मायिमिच्छदिट्ठीउववन्नगं एवं पडिहणइ २ ओहिं पउंजइ ओहिं २ ममं ओहिणा आभोएइ ममं २ अयमेयारूवे जाव समुप्पज्जित्था–एवं खलु समणे भगवं महावीरे जंबुद्दीवे २ जेणेव भारहे वासे जेणेव उल्लुयतीरे नगरे जेणेव एगजंबुए चेइए अहापडिरूवं जाव विहरति, तं सेयं खलु मे समणं भगवं महावीरं वंदित्ता जाव पज्जुवासित्ता इमं एयारूवं वागरणं पुच्छित्तएत्तिकट्टु एवं संपेहेइ एवं संपेहित्ता चउहिवि सामाणियसाहस्सीहिं परियारो जहा सूरियाभस्स जाव निग्घोसनाइयरवेणं जेणेव जंबुद्दीवे २ जेणेव भारहे वासे जेणेव उल्लुयातीरे नगरे जेणेव एगजंबुए चेइए जेणेव ममं अंतियं तेणेव पहारेत्थ गमणाए, तए णं से सक्के देविंदे देवराया तस्स देवस्स तं दिव्वं देविड्ढिं दिव्वं देवजुतिं दिव्वं देवाणुभागं दिव्वं तेयलेस्सं असहमाणे ममं अट्ठ उक्खित्तपसिणवागरणाइं पुच्छइ संभंतिय जाव पडिगए (सूत्रं ५७४) जावं च णं समणे भगवं महावीरे भगवओ गोयमस्स एयमट्ठं परिकहेति तावं च णं से देवे तं देसं हव्वमागए, तए णं से देवे समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो वंदति नमंसति २ एवं वयासी–एवं खलु भंते ! महासुक्के कप्पे महासामाणे विमाणे एगे मायिमिच्छदिट्ठिउववन्नए देवे ममं एवं वयासी–परिणममाणा पोग्गला नो परिणया अपरिणया परिणमंतीति पोग्गला नो परिणया अपरिणया, तए णं अहं तं मायिमिच्छदिट्ठिउववन्नगं देवं एवं वयासी–परिणममाणा पोग्गला परिणया नो अपरिणया परिणमंतीति पोग्गला परिणया णो अपरिणया, से कहमेयं भंते ! एवं ?, गंगदत्तादिसमणे भगवं महावीरे गंगदत्तं एवं वयासी–अहंपि णं गंगदत्ता !

१६ शतके उद्देशः ५ परिणममाणाः परिणताः सू५७४ गङ्गदत्तकृतंवन्दनादि सू ५७५

॥७०६॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

एवमाइक्खामि ४ परिणममाणा पोग्गला जाव नो अपरिणया सच्चमेसे अट्ठे,तए णं से गंगदत्ते देवे समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियं एयमट्ठं सोच्चा निसम्म हट्ठतुट्ठे समणं भगवं महावीरं वंदति नमं० २ नच्चासन्ने जाव पज्जुवासति, तए णं समणे भ०महावीरे गंगदत्तस्स देवस्स तीसे य जाव धम्मं परिकहेइ जाव आराहए भवति, तए णं से गंगदत्ते देवे समणस्स भगवओ० अंतिए धम्मं सोच्चा निसम्म हट्ठतुट्ठे उट्ठाए उट्ठेति उ० २ समणं भगवं महावीरं वंदति नमंसति २ एवं वयासी–अहण्हं भंते! गंगदत्ते देवे किं भवसिद्धिए अभवसिद्धिए ? एवं जहा सूरियाभो जाव बत्तीसतिविहं नट्टविहं उवदंसेति उव० २ जाव तामेव दिसं पडिगए (सूत्रं ५७५) ॥

'तेण'मित्यादि, इह सर्वोऽपि संसारी बाह्यान् पुद्गलाननुपादाय न काञ्चित् क्रियां करोतीति सिद्धमेव, किन्तु देवः किल महर्द्धिकः, महर्द्धिकत्वादेव च गमनादिक्रियां मा कदाचित् करिष्यतीति सम्भावनायां शक्रः प्रश्नं चकार—'देवे णं भंते!' इत्यादि, 'भासित्तए वा वागरित्तए व'त्ति भाषितुं–वक्तुं व्याकर्तुम्–उत्तरं दातुमित्यनयोर्विशेषः, प्रश्नश्चायं तृतीयः, उन्मेषादिश्चतुर्थः, आकुण्टनादिः पञ्चमः, स्थानादिः षष्ठः, विकुर्वितुमिति सप्तमः, परिचारयितुमष्टमः ८ 'उक्खित्तपसिण-वागरणाइं'ति उत्क्षिप्तानीवोत्क्षिप्तानि–अविस्तारितस्वरूपाणि प्रच्छनीयत्वात्प्रश्नाः व्याक्रियमाणत्वाच्च व्याकरणानि यानि तानि तथा 'संभंतियवंदणएणं'ति सम्भ्रान्तिः–सम्भ्रमः औत्सुक्यं तया निर्वृत्तं साम्भ्रान्तिकं यद्वन्दनं तत्तथा तेन। 'परिणममाणा पोग्गला नो परिणय'त्ति वर्त्तमनातीतकालयोर्विरोधादत एवाह—'अपरिणय'त्ति, इहैवोत्पत्तिमाह

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [५७३--५७५]

दीप अनुक्रम [६७३--६७५]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥७०७॥

परिणमन्तीति कृत्वा नो परिणतास्ते व्यपदिश्यन्त इति मिथ्यादृष्टिवचनं, सम्यग्दृष्टिः पुनराह—'परिणममाणा पोग्गला-परिणया नो अपरिणय'त्ति, कुतः ? इत्याह–परिणमन्तीतिकृत्वा पुद्गलाः परिणता नो अपरिणताः, परिणमन्तीति हि यदु-च्यते तत्परिणामसद्भावे नान्यथाऽतिप्रसङ्गात्, परिणामसद्भावे तु परिणमन्तीति व्यपदेशे परिणतत्वमवश्यंभावि, यदि हि परिणामे सत्यपि परिणतत्वं न स्यात्तदा सर्वदा तदभावप्रसङ्ग इति। 'परिवारो जहा सूरियाभस्से'त्यनेनेदं सूचितं–'तिहिं परिसाहिं सत्तहिं अणिएहिं सत्तहिं अणियाहिवईहिं सोलसहिं आयरक्खदेवसाहस्सीहिं अन्नेहि य बहूहिं महासामाण-विमाणवासीहिं वेमाणिएहिं देवेहिं सद्धिं संपरिवुडे' इत्यादि।

भंतेत्ति भगवं गोयमे समणं भगवं महावीरं जाव एवं वयासी–गंगदत्तस्स णं भंते ! देवस्स सा दिव्वा देवड्ढी दिव्वा देवजुती जाव अणुप्पविट्ठा ?, गोयमा ! सरीरं गया सरीरं अणुप्पविट्ठा कूडागारसालादिट्ठंतो जाव सरीरं अणुप्पविट्ठा। अहो णं भंते ! गंगदत्ते देवे महड्ढिए जाव महेसक्खे ?, गंगदत्तेणं भंते ! देवेणं सा दिव्वा देवड्ढी दिव्वा देवजुत्ती किण्णा लद्धा जाव गंगदत्तेणं देवेणं सा दिव्वा देवड्ढी जाव अभिसमन्नागया ?, गोयमादी समणे भगवं महावीरे भगवं गोयमं एवं वयासी–एवं खलु गोयमा ! तेणं कालेणं २ इहेव जंबु-द्दीवे २ भारहे वासे हत्थिणापुरे नामं नगरे होत्था वन्नओ, सहसंबवणे उज्जाणे वन्नओ, तत्थ णं हत्थिणापुरे नगरे गंगदत्ते नामं गाहावती परिवसति अड्ढे जाव अपरिभूए, तेणं कालेणं २ मुणिसुव्वए अरहा आदिगरे जाव सव्वण्णू सव्वदरिसी आगासगएणं चक्कणं जाव पकहिज्जमाणेणं प० सीसगणसंपरिवुडे पुव्वाणुपुव्विं

१६ शतके उद्देशः ५ गङ्गदत्तपूर्वभवादि सू ५७६

॥७०७॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गंगदत्त-अनगारस्य कथा

प्रत सूत्रांक [५७६] दीप अनुक्रम [६७६]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति: 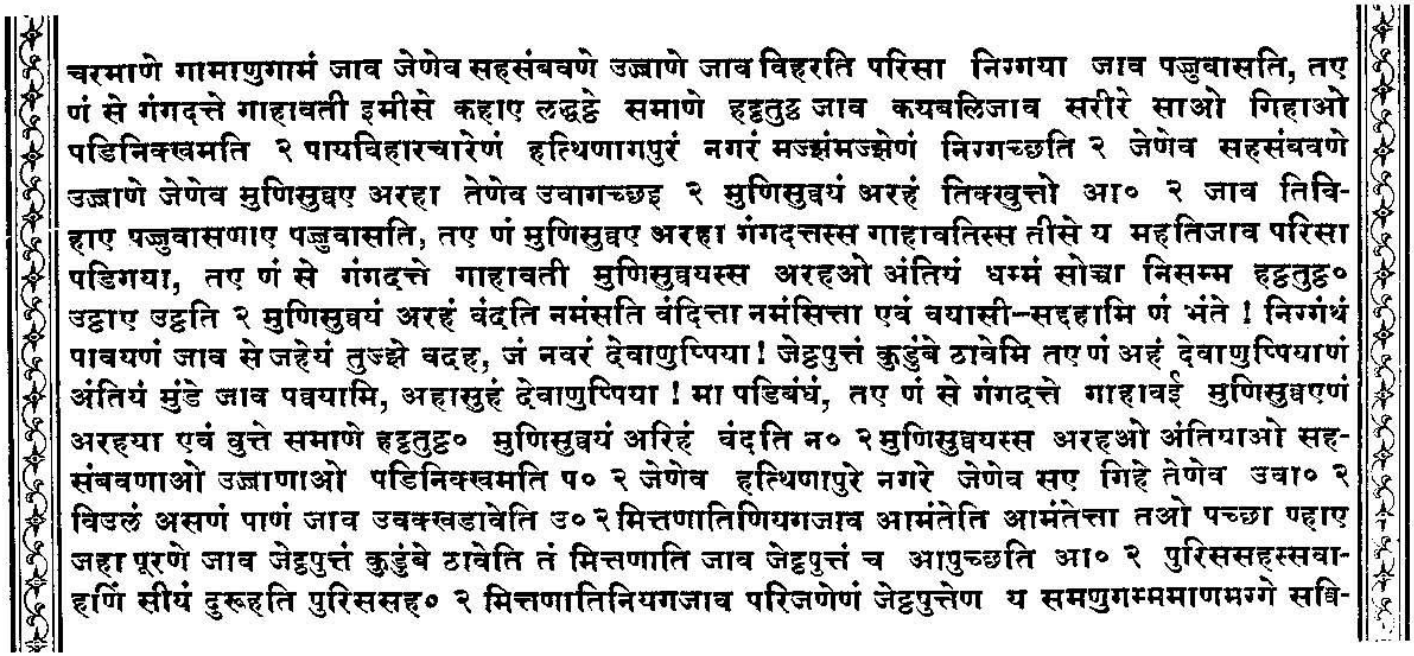 चरमाणे गामाणुगामं जाव जेणेव सहसंबवणे उज्जाणे जाव विहरति परिसा निग्गया जाव पज्जुवासति, तए णं से गंगदत्ते गाहावती इमीसे कहाए लद्धट्ठे समाणे हट्ठतुट्ठ जाव कयबलिजाव सरीरे साओ गिहाओ पडिनिक्खमति २ पायविहारचारेणं हत्थिणागपुरं नगरं मज्झंमज्झेणं निग्गच्छति २ जेणेव सहसंबवणे उज्जाणे जेणेव मुणिसुव्वए अरहा तेणेव उवागच्छइ २ मुणिसुव्वयं अरहं तिक्खुत्तो आ० २ जाव तिविहाए पज्जुवासणाए पज्जुवासति, तए णं मुणिसुव्वए अरहा गंगदत्तस्स गाहावतिस्स तीसे य महतिजाव परिसा पडिगया, तए णं से गंगदत्ते गाहावती मुणिसुव्वयस्स अरहओ अंतियं धम्मं सोच्चा निसम्म हट्ठतुट्ठ० उट्ठाए उट्ठति २ मुणिसुव्वयं अरहं वंदति नमंसति वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी–सद्दहामि णं भंते ! निग्गंथं पावयणं जाव से जहेयं तुज्झे वदह, जं नवरं देवाणुप्पिया! जेट्ठपुत्तं कुडुंबे ठावेमि तए णं अहं देवाणुप्पियाणं अंतियं मुंडे जाव पव्वयामि, अहासुहं देवाणुप्पिया ! मा पडिबंधं, तए णं से गंगदत्ते गाहावई मुणिसुव्वएणं अरहया एवं वुत्ते समाणे हट्ठतुट्ठ० मुणिसुव्वयं अरिहं वंदति न० २ मुणिसुव्वयस्स अरहओ अंतियाओ सहसंबवणाओ उज्जाणाओ पडिनिक्खमति प० २ जेणेव हत्थिणापुरे नगरे जेणेव सए गिहे तेणेव उवा० २ विउलं असणं पाणं जाव उवक्खडावेति उ० २ मित्तणातिनियगजाव आमंतेति आमंतेत्ता तओ पच्छा ण्हाए जहा पूरणे जाव जेट्ठपुत्तं कुडुंबे ठावेति तं मित्तणाति जाव जेट्ठपुत्तं च आपुच्छति आ० २ पुरिससहस्सवाहिणिं सीयं दुरूहति पुरिससह० २ मित्तणातिनियगजाव परिजणेणं जेट्ठपुत्तेण य समणुगम्ममाणमग्गे सवि- Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org
	गंगदत्त-अनगारस्य कथा

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [५७६]

दीप अनुक्रम [६७६]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥७०८॥

ड्डीए जावणादितरवेणं हत्थिणागपुरं मज्झंमज्झेणं निग्गच्छइ नि० २ जेणेव सहसंबवणे उज्जाणे तेणेव उवा० २ छत्तादिते तित्थगरातिसए पासति एवं जहा उदायणो जाव सयमेव आभरणं मुयइ स० २ सयमेव पंचमुट्ठियं लोयं करेति स० २ जेणेव मुणिसुव्वए अरहा एवं जहेव उदायणो तहेव पव्वइए, तहेव एक्कारस अंगाइं अहिज्जइ जाव मासियाए संलेहणाए सट्ठिं भत्ताइं अणसणाए जाव छेदेति सट्ठिं भत्ताइं० २ आलोइयपडिक्कंते समाहिपत्ते कालमासे कालं किच्चा महासुक्के कप्पे महासामाणे विमाणे उववायसभाए देवसयणिज्जंसि जाव गंगदत्तदेवत्ताए उववन्ने, तए णं से गंगदत्ते देवे अहुणोववन्नमेत्तए समाणे पंचविहाए पज्जत्तीए पज्जत्तिभावं गच्छति, तंजहा–आहारपज्जत्तीए जाव भासामणपज्जत्तीए, एवं खलु गोयमा ! गंगदत्तेणं देवेणं सा दिव्वा देवड्ढी जाव अभिसम०। गंगदत्तस्स णं भंते ! केवतियं कालं ठिती पन्नत्ता ?, गोयमा ! सत्तरससागरोवमाइं ठिती, गंगदत्ते णं भंते ! देवे ताओ देवलोगाओ आउक्खएणं जाव महावि० वासे सिज्झिहिति जाव अंतं काहिति ॥ सेवं भंते ! २ त्ति ॥ (सूत्रं ५७६) ॥ १६–५ ॥

'दिवं तेयलेस्सं असहमाणे'त्ति इह किल शक्रः पूर्वभवे कार्त्तिकाभिधानोऽभिनवश्रेष्ठी बभूव गङ्गदत्तस्तु जीर्णः श्रेष्ठीति, तयोश्च प्रायो मत्सरो भवतीत्यसावसहनकारणं संभाव्यत इति, 'एवं जहा सूरियाभो'त्ति अनेनेदं सूचितं– 'सम्मादिट्ठी मिच्छादिट्ठी परित्तसंसारिए अणंतसंसारिए सुलभबोहिए दुल्लभबोहिए आराहए विराहए चरिमे अचरिमे' इत्यादीति ॥ षोडशशतस्य पञ्चमोद्देशः परिपूर्णतां प्राप्तः ॥ १६–५ ॥

१६ शतके उद्देशः ५ गङ्गदत्तपूर्वभवादि सू ५७६

॥७०८॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र षोडशमे शतके पंचम-उद्देशक: परिसमाप्त:

गंगदत्त-अनगारस्य कथा

पञ्चमोद्देशके गङ्गदत्तस्य सिद्धिरुक्ता, सा च भव्यानां केषाञ्चित् स्वप्नेनापि सूचिता भवतीति स्वप्नस्वरूपं षष्ठेनोच्यते इत्येवंसम्बन्धस्यास्येदमादिसूत्रम्—

कतिविहे णं भंते ! सुविणदंसणे पण्णत्ते ?, गोयमा ! पंचविहे सुविणदंसणे पण्णत्ते, तंजहा–अहातच्चे पयाणे चिंतासुविणे तविवरीए अवत्तदंसणे ॥ सुत्ते णं भंते ! सुविणं पासति जागरे सुविणं पासति सुत्त-जागरे सुविणं पासति ?, गोयमा ! नो सुत्ते सुविणं पासइ नो जागरे सुविणं पासइ सुत्तजागरे सुविणं पासइ ॥ जीवा णं भंते ! किं सुत्ता जागरा सुत्तजागरा ?, गोयमा ! जीवा सुत्तावि जागरावि सुत्तजाग-रावि, नेरइया णं भंते ! किं सुत्ता० ? पुच्छा, गोयमा ! नेरइया सुत्ता नो जागरा नो सुत्तजागरा, एवं जाव चउरिंदिया, पंचिंदियतिरिक्खजोणिया णं भंते ! किं सुत्ता० पुच्छा, गोयमा ! सुत्ता नो जागरा सुत्तजाग-रावि, मणुस्सा जहा जीवा, वाणमंतरजोइसियवेमाणिया जहा नेरइया ॥ (सूत्रं ५७७) ॥ संवुडे णं भंते ! सुविणं पासइ असंवुडे सुविणं पासइ संवुडासंवुडे सुविणं पासइ ?, गोयमा ! संवुडेवि सुविणं पासइ असं-वुडेवि सुविणं पासइ संवुडासंवुडेवि सुविणं पासइ, संवुडे सुविणं पासति अहातच्चं पासति, असंवुडे सुविणं पासति तहावि तं होज्जा अन्नहा वा तं होज्जा, संवुडासंवुडे सुविणं पासति एवं चेव ॥ जीवा णं भंते ! किं संवुडा असंवुडा संवुडासंवुडा ?, गोयमा ! जीवा संवुडावि असंवुडावि संवुडासंवुडावि, एवं जहेव सुत्ताणं दंडओ तहेव भाणियव्वो ॥ कति णं भंते ! सुविणा पण्णत्ता ?, गोयमा ! बायालीसं सुविणा पन्नत्ता, कइ णं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र षोडशमे शतके षष्ठं-उद्देशक: आरब्ध:

स्वप्न-दर्शन, स्वप्नद्रष्टा, स्वप्नस्य प्रकारा:, भगवता द्रष्टा दश-स्वप्ना: एवं तस्य फलं

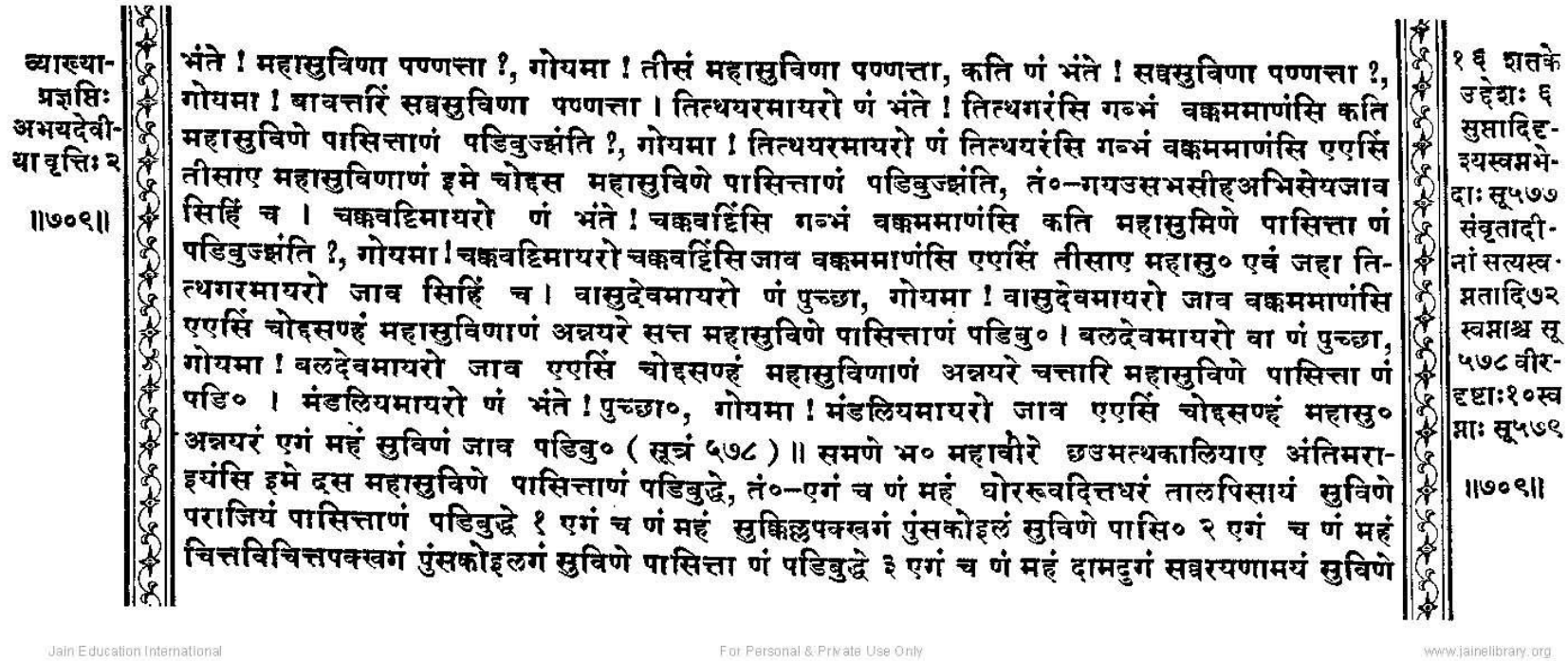

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥७०९॥

भंते ! महासुविणा पण्णत्ता ?, गोयमा ! तीसं महासुविणा पण्णत्ता, कति णं भंते ! सव्वसुविणा पण्णत्ता ?, गोयमा ! बावत्तरिं सव्वसुविणा पण्णत्ता । तित्थयरमायरो णं भंते ! तित्थगरंसि गब्भं वक्कममाणंसि कति महासुविणे पासित्ताणं पडिबुज्झंति ?, गोयमा ! तित्थयरमायरो णं तित्थयरंसि गब्भं वक्कममाणंसि एएसिं तीसाए महासुविणाणं इमे चोद्दस महासुविणे पासित्ताणं पडिबुज्झंति, तं०–गयउसभसीहअभिसेयजाव सिहिं च । चक्कवट्टिमायरो णं भंते ! चक्कवट्टिंसि गब्भं वक्कममाणंसि कति महासुमिणे पासित्ता णं पडिबुज्झंति ?, गोयमा ! चक्कवट्टिमायरो चक्कवट्टिंसि जाव वक्कममाणंसि एएसिं तीसाए महासु० एवं जहा तित्थगरमायरो जाव सिहिं च । वासुदेवमायरो णं पुच्छा, गोयमा ! वासुदेवमायरो जाव वक्कममाणंसि एएसिं चोद्दसण्हं महासुविणाणं अन्नयरे सत्त महासुविणे पासित्ताणं पडिबु० । बलदेवमायरो वा णं पुच्छा, गोयमा ! बलदेवमायरो जाव एएसिं चोद्दसण्हं महासुविणाणं अन्नयरे चत्तारि महासुविणे पासित्ता णं पडि० । मंडलियमायरो णं भंते ! पुच्छा०, गोयमा ! मंडलियमायरो जाव एएसिं चोद्दसण्हं महासु० अन्नयरं एगं महं सुविणं जाव पडिबु० (सूत्रं ५७८) ॥ समणे भ० महावीरे छउमत्थकालियाए अंतिमराइयंसि इमे दस महासुविणे पासित्ताणं पडिबुद्धे, तं०–एगं च णं महं घोररूवदित्तधरं तालपिसायं सुविणे पराजियं पासित्ताणं पडिबुद्धे १ एगं च णं महं सुक्किल्लपक्खगं पुंसकोइलं सुविणे पासि० २ एगं च णं महं चित्तविचित्तपक्खगं पुंसकोइलगं सुविणे पासित्ता णं पडिबुद्धे ३ एगं च णं महं दामदुगं सव्वरयणामयं सुविणे

१६ शतके उद्देशः ६ सुमादिद्रव्यस्वप्नभेदाः सू५७७ संवृतादीनां सत्यस्वप्नतादि७२ स्वप्नाश्च सू ५७८ वीरदृष्टाः१०स्वप्नाः सू५७९

॥७०९॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	स्वप्न-दर्शन, स्वप्नद्रष्टा, स्वप्नस्य प्रकाराः, भगवता द्रष्टा दश-स्वप्नाः एवं तस्य फलं

प्रत सूत्रांक [५७७-५७९]

दीप अनुक्रम [६७७--६७९]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

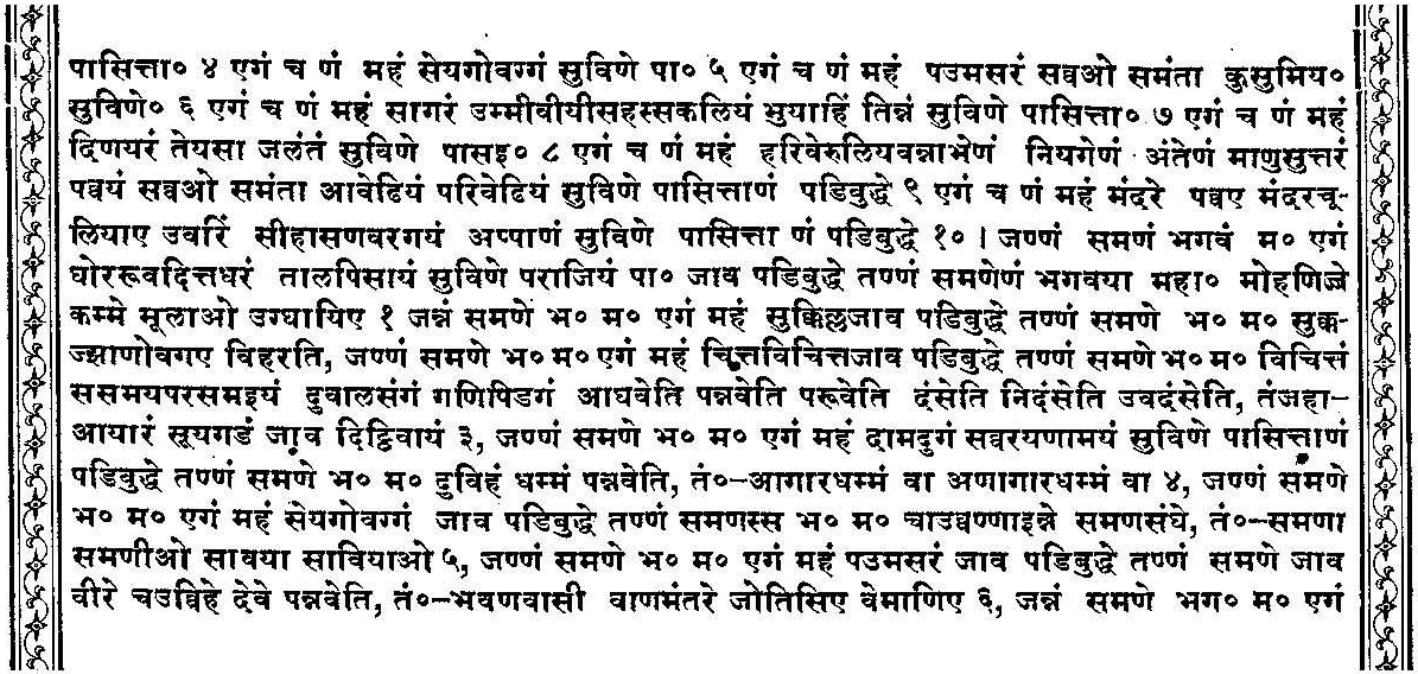

पासित्ता० ४ एगं च णं महं सेयगोवग्गं सुविणे पा० ५ एगं च णं महं पउमसरं सव्वओ समंता कुसुमिय० सुविणे० ६ एगं च णं महं सागरं उम्मीवीयीसहस्सकलियं भुयाहिं तिन्नं सुविणे पासित्ता० ७ एगं च णं महं दिणयरं तेयसा जलंतं सुविणे पासइ० ८ एगं च णं महं हरिवेरुलियवन्नाभेणं नियगेणं अंतेणं माणुसुत्तरं पवयं सव्वओ समंता आवेढियं परिवेढियं सुविणे पासित्ताणं पडिबुद्धे ९ एगं च णं महं मंदरे पव्वए मंदरचूलियाए उवरिं सीहासणवरगयं अप्पाणं सुविणे पासित्ता णं पडिबुद्धे १० । जण्णं समणं भगवं म० एगं घोररूवदित्तधरं तालपिसायं सुविणे पराजियं पा० जाव पडिबुद्धे तण्णं समणेणं भगवया महा० मोहणिज्जे कम्मे मूलाओ उग्घायिए १ जन्नं समणे भ० म० एगं महं सुक्किलजाव पडिबुद्धे तण्णं समणे भ० म० सुक्कज्झाणोवगए विहरति, जण्णं समणे भ० म० एगं महं चित्तविचित्तजाव पडिबुद्धे तण्णं समणे भ० म० विचित्तं ससमयपरसमइयं दुवालसंगं गणिपिडगं आघवेति पन्नवेति परूवेति दंसेति निदंसेति उवदंसेति, तंजहा–आयारं सूयगडं जाव दिट्ठिवायं ३, जण्णं समणे भ० म० एगं महं दामदुगं सव्वरयणामयं सुविणे पासित्ताणं पडिबुद्धे तण्णं समणे भ० म० दुविहं धम्मं पन्नवेति, तं०–आगारधम्मं वा अणागारधम्मं वा ४, जण्णं समणे भ० म० एगं महं सेयगोवग्गं जाव पडिबुद्धे तण्णं समणस्स भ० म० चाउव्वण्णाइन्ने समणसंघे, तं०–समणा समणीओ सावया साचियाओ ५, जण्णं समणे भ० म० एगं महं पउमसरं जाव पडिबुद्धे तण्णं समणे जाव वीरे चउव्विहे देवे पन्नवेति, तं०–भवणवासी वाणमंतरे जोतिसिए वेमाणिए ६, जन्नं समणे भग० म० एगं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

स्वप्न-दर्शन, स्वप्नद्रष्टा, स्वप्नस्य प्रकारा:, भगवता द्रष्टा दश-स्वप्ना: एवं तस्य फलं

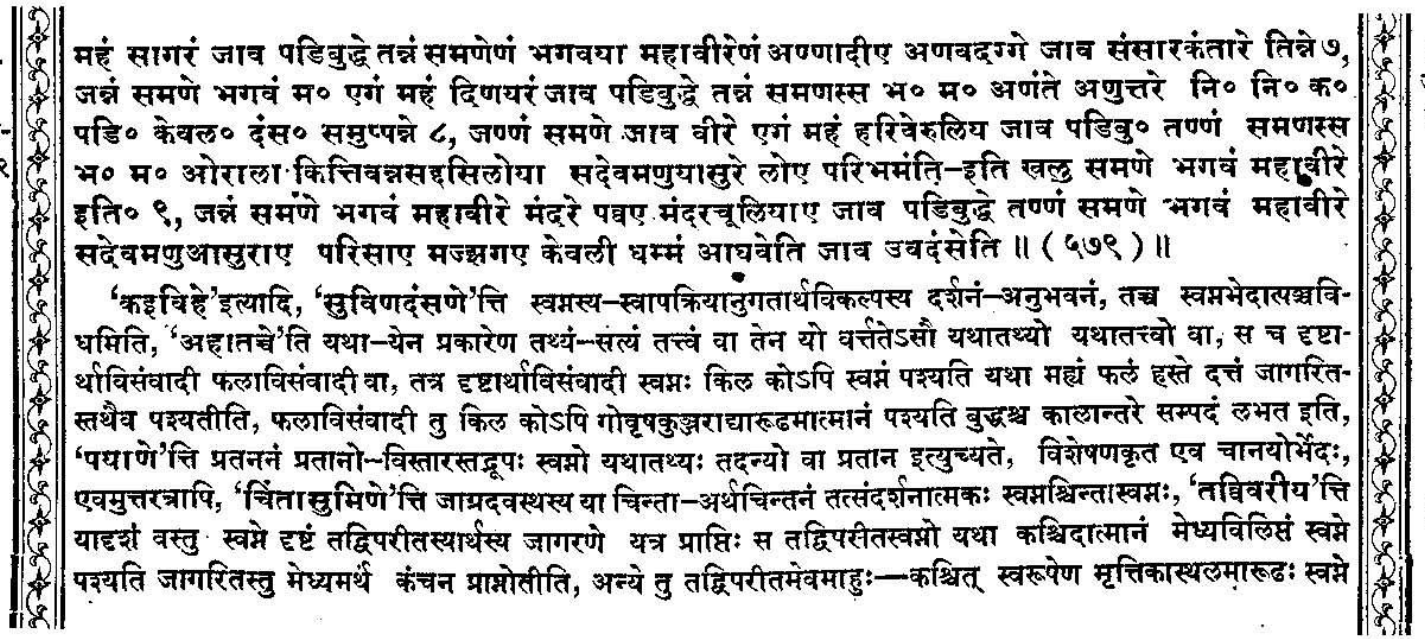

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥७१०॥

महं सागरं जाव पडिबुद्धे तन्नं समणेणं भगवया महावीरेणं अण्णादीए अणवदग्गे जाव संसारकंतारे तिन्ने ७, जन्नं समणे भगवं म० एगं महं दिणयरं जाव पडिबुद्धे तन्नं समणस्स भ० म० अणंते अणुत्तरे नि० नि० क० पडि० केवल० दंस० समुप्पन्ने ८, जण्णं समणे जाव वीरे एगं महं हरिवेरुलिय जाव पडिबु० तण्णं समणस्स भ० म० ओराला कित्तिवन्नसद्दसिलोया सदेवमणुयासुरे लोए परिभमंति–इति खलु समणे भगवं महावीरे इति० ९, जन्नं समणे भगवं महावीरे मंदरे पव्वए मंदरचूलियाए जाव पडिबुद्धे तण्णं समणे भगवं महावीरे सदेवमणुआसुराए परिसाए मज्झगए केवली धम्मं आघवेति जाव उवदंसेति ॥ (५७९) ॥

'कइविहे' इत्यादि, 'सुविणदंसणे' त्ति स्वप्नस्य–स्वापक्रियानुगतार्थविकल्पस्य दर्शनं–अनुभवनं, तच्च स्वप्नभेदात्सञ्चविधमिति, 'अहातच्चे' ति यथा–येन प्रकारेण तथ्यं–सत्यं तत्त्वं वा तेन यो वर्त्ततेऽसौ यथातथ्यो यथातत्त्वो वा, स च दृष्टार्थाविसंवादी फलाविसंवादी वा, तत्र दृष्टार्थाविसंवादी स्वप्नः किल कोऽपि स्वप्नं पश्यति यथा मह्यं फलं हस्ते दत्तं जागरितस्तथैव पश्यतीति, फलाविसंवादी तु किल कोऽपि गोवृषकुञ्जराद्यारूढमात्मानं पश्यति बुद्धश्च कालान्तरे सम्पदं लभत इति, 'पयाणे' त्ति प्रतननं प्रतानो–विस्तारस्तद्रूपः स्वप्नो यथातथ्यः तदन्यो वा प्रतान इत्युच्यते, विशेषणकृत एव चानयोर्भेदः, एवमुत्तरत्रापि, 'चिंतासुमिणे' त्ति जाग्रदवस्थस्य या चिन्ता–अर्थचिन्तनं तत्संदर्शनात्मकः स्वप्नश्चिन्तास्वप्नः, 'तविवरीय' त्ति यादृशं वस्तु स्वप्ने दृष्टं तद्विपरीतस्यार्थस्य जागरणे यत्र प्राप्तिः स तद्विपरीतस्वप्नो यथा कश्चिदात्मानं मेध्यविलिप्तं स्वप्ने पश्यति जागरितस्तु मेध्यमर्थं कंचन प्राप्नोतीति, अन्ये तु तद्विपरीतमेवमाहुः—कश्चित् स्वरूपेण मृत्तिकास्थलमारूढः स्वप्ने

१६ शतके उद्देशः ६ स्वप्नाधिकारः

॥७१०॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	स्वप्न-दर्शन, स्वप्नद्रष्टा, स्वप्नस्य प्रकारा:, भगवता द्रष्टा दश-स्वप्ना: एवं तस्य फलं

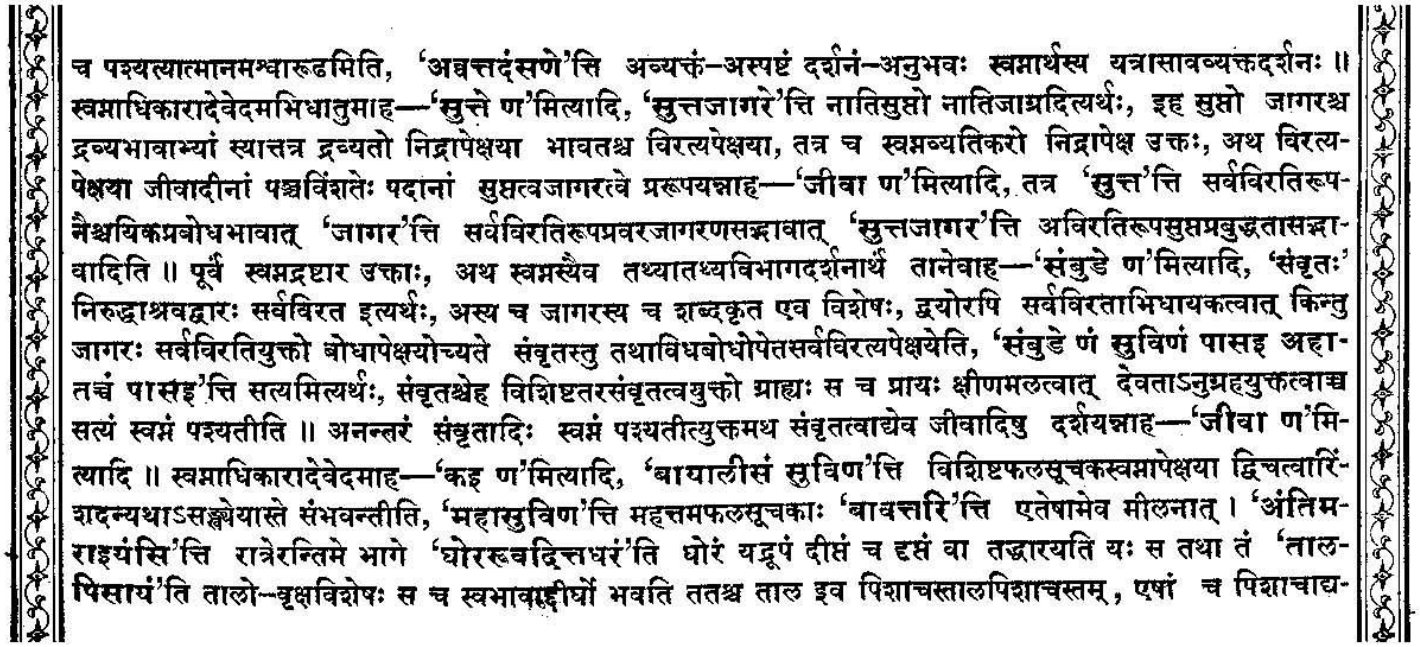

च पश्यत्यात्मानमश्वारूढमिति, 'अव्वत्तदंसणे'त्ति अव्यक्तं–अस्पष्टं दर्शनं–अनुभवः स्वप्नार्थस्य यत्रासावव्यक्तदर्शनः ॥ स्वप्नाधिकारादेवेदमभिधातुमाह—'सुत्ते ण'मित्यादि, 'सुत्तजागरे'त्ति नातिसुप्तो नातिजाग्रदित्यर्थः, इह सुप्तो जागरश्च द्रव्यभावाभ्यां स्यात्तत्र द्रव्यतो निद्रापेक्षया भावतश्च विरत्यपेक्षया, तत्र च स्वप्नव्यतिकरो निद्रापेक्ष उक्तः, अथ विरत्यपेक्षया जीवादीनां पञ्चविंशतेः पदानां सुप्तत्वजागरत्वे प्ररूपयन्नाह—'जीवा ण'मित्यादि, तत्र 'सुत्त'त्ति सर्वविरतिरूपनैश्चयिकप्रबोधभावात् 'जागर'त्ति सर्वविरतिरूपप्रवरजागरणसद्भावात् 'सुत्तजागर'त्ति अविरतिरूपसुप्तप्रबुद्धतासद्भावादिति ॥ पूर्वं स्वप्नद्रष्टार उक्ताः, अथ स्वप्नस्यैव तथ्यातथ्यविभागदर्शनार्थं तानेवाह—'संबुडे ण'मित्यादि, 'संवृतः' निरुद्धाश्रवद्वारः सर्वविरत इत्यर्थः, अस्य च जागरस्य च शब्दकृत एव विशेषः, द्वयोरपि सर्वविरताभिधायकत्वात् किन्तु जागरः सर्वविरतियुक्तो बोधापेक्षयोच्यते संवृतस्तु तथाविधबोधोपेतसर्वविरत्यपेक्षयेति, 'संबुडे णं सुविणं पासइ अहातच्चं पासइ'त्ति सत्यमित्यर्थः, संवृतश्चेह विशिष्टतरसंवृतत्वयुक्तो ग्राह्यः स च प्रायः क्षीणमलत्वात् देवताऽनुग्रहयुक्तत्वाच्च सत्यं स्वप्नं पश्यतीति ॥ अनन्तरं संवृतादिः स्वप्नं पश्यतीत्युक्तमथ संवृतत्वाद्येव जीवादिषु दर्शयन्नाह—'जीवा ण'मित्यादि ॥ स्वप्नाधिकारादेवेदमाह—'कइ ण'मित्यादि, 'बायालीसं सुविण'त्ति विशिष्टफलसूचकस्वप्नापेक्षया द्विचत्वारिंशदन्यथाऽसङ्ख्येयास्ते संभवन्तीति, 'महासुविण'त्ति महत्तमफलसूचकाः 'बावत्तरि'त्ति एतेषामेव मीलनात् । 'अंतिमराइयंसि'त्ति रात्रेरन्तिमे भागे 'घोररूवदित्तधरं'ति घोरं यद्रूपं दीप्तं च दृप्तं वा तद्धारयति यः स तथा तं 'तालपिसायं'ति तालो–वृक्षविशेषः स च स्वभावाद्दीर्घो भवति ततश्च ताल इव पिशाचस्तालपिशाचस्तम्, एषां च पिशाचाद्य-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

स्वप्न-दर्शन, स्वप्नद्रष्टा, स्वप्नस्य प्रकाराः, भगवता द्रष्टा दश-स्वप्नाः एवं तस्य फलं

थानां मोहनीयादिभिः स्वप्नफलविषयभूतैः सह साधर्म्यं स्वयमभ्यूह्यं, 'पुंसकोइलगं'ति पुंस्कोकिलं–कोकिलपुरुषमित्यर्थः, 'दामदुगं'ति मालाद्वयम् 'उम्मीवीइसहस्सकलियं'ति इहोर्म्मयो–महाकल्लोलाः वीचयस्तु ह्रस्वाः, अथवोर्म्मीणां वीचयो-विविक्तव्यानि तत्सहस्रकलितं, 'हरिवेरुलियवण्णाभेणं'ति हरिच्च–तन्नीलं वैडूर्यवर्णाभं चेति समासस्तेन 'आवेढियं'ति अभिविधिना वेष्टितं सर्वत इत्यर्थः 'परिवेढियं'ति पुनः पुनरित्यर्थः 'उवरि'त्ति उपरि 'गणिपिडगं'ति गणीनां–अर्थपरि-च्छेदानां पिटकमिव पिटकं–आश्रयो गणिपिटकं गणिनो वा–आचार्यस्य पिटकमिव–सर्वस्वभाजनमिव गणिपिटकम् 'आघ-वेइ'त्ति आख्यापयति सामान्यविशेषरूपतः 'पन्नवेति'त्ति सामान्यतः 'परूवेइ'त्ति प्रतिसूत्रमर्थकथनेन 'दंसेइ'त्ति तद्-भिधेयप्रत्युपेक्षणादिक्रियादर्शनेन 'निदंसेइ'त्ति कथञ्चिदगृह्णतोऽनुकम्पया निश्चयेन पुनः पुनर्दर्शयति 'उवदंसेइ'त्ति सकलनययुक्तिभिरिति, 'चाउव्वण्णाइण्णे'त्ति चातुर्वर्णश्चासावाकीर्णश्च ज्ञानादिगुणैरिति चातुर्वर्णाकीर्णः 'चउविहे देवे पन्नवेइ'त्ति प्रज्ञापयति–प्रतिबोधयति शिष्यीकरोतीत्यर्थः, 'अणंते'ति विषयानन्तत्वात् 'अणुत्तरे'त्ति सर्वप्रधानत्वात्, यावत्करणादिदं दृश्यं—'निव्वाघाए'कटकुड्यादिनाऽप्रतिहतत्वात् 'निरावरणे' क्षायिकत्वात् 'कसिणे' सकलार्थग्राहक-त्वात् 'पडिपुन्ने' अंशेनापि स्वकीयेनान्यूनत्वादिति ।

इत्थी वा पुरिसे वा सुविणंते एगं महं हयपंतिं वा गयपंतिं वा जाव वसभपंतिं वा पासमाणे पासति दुरूहमाणे दुरूहति दुरूढमिति अप्पाणं मन्नति तक्खणामेव बुज्झति तेणेव भवग्गहणेणं सिज्झति जाव अंतं करेति । इत्थी वा पुरिसे वा सुविणंते एगं महं दामिणिं पाईणपडिणायतं दुहओ समुद्दे पुट्ठं पासमाणे

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

स्वप्न-दर्शन, स्वप्नद्रष्टा, स्वप्नस्य प्रकाराः, भगवता द्रष्टा दश-स्वप्नाः एवं तस्य फलं

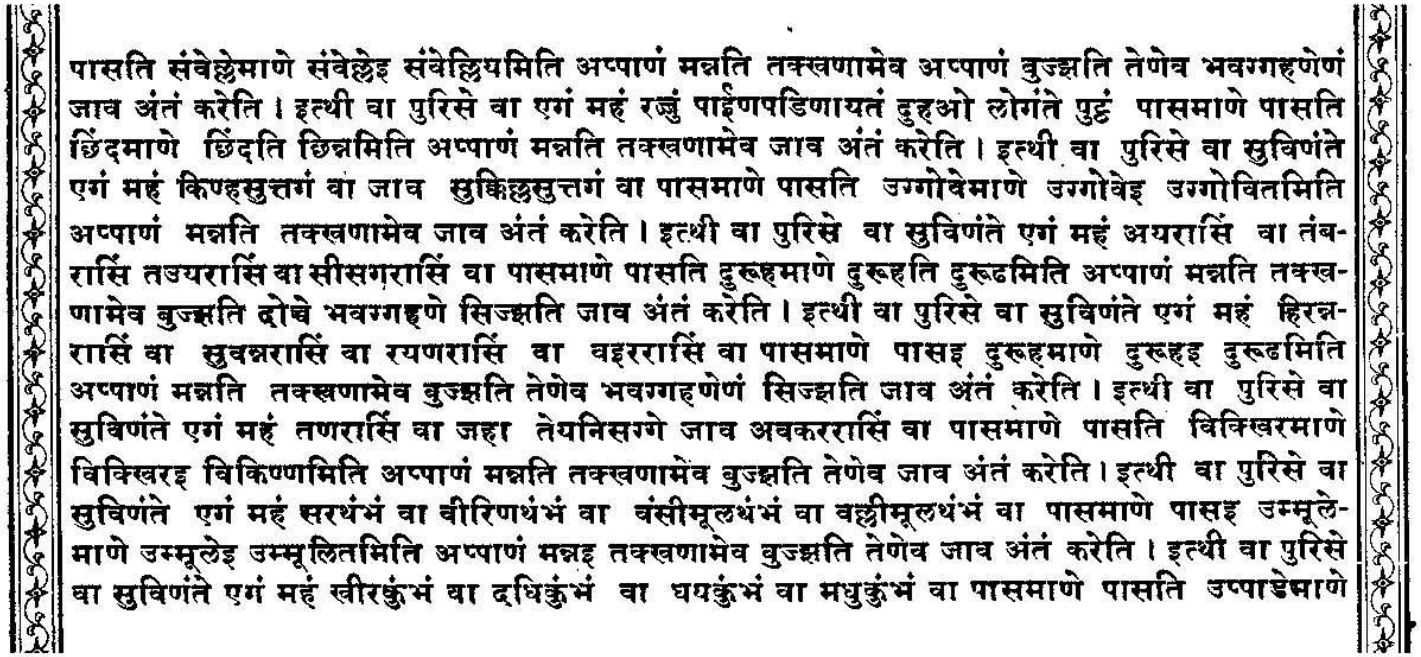

पासति संवेल्लेमाणे संवेल्लेइ संवेल्लियमिति अप्पाणं मन्नति तक्खणामेव अप्पाणं बुज्झति तेणेव भवग्गहणेणं जाव अंतं करेति। इत्थी वा पुरिसे वा एगं महं रज्जुं पाईणपडिणायतं दुहओ लोगंते पुट्ठं पासमाणे पासति छिंदमाणे छिंदति छिन्नमिति अप्पाणं मन्नति तक्खणामेव जाव अंतं करेति। इत्थी वा पुरिसे वा सुविणंते एगं महं किण्हसुत्तगं वा जाव सुक्किल्लसुत्तगं वा पासमाणे पासति उग्गोवेमाणे उग्गोवेइ उग्गोवितमिति अप्पाणं मन्नति तक्खणामेव जाव अंतं करेति। इत्थी वा पुरिसे वा सुविणंते एगं महं अयरासिं वा तंबरासिं तउयरासिं वा सीसगरासिं वा पासमाणे पासति दुरूहमाणे दुरूहति दुरूढमिति अप्पाणं मन्नति तक्खणामेव बुज्झति दोच्चे भवग्गहणे सिज्झति जाव अंतं करेति। इत्थी वा पुरिसे वा सुविणंते एगं महं हिरन्नरासिं वा सुवन्नरासिं वा रयणरासिं वा वइररासिं वा पासमाणे पासइ दुरूहमाणे दुरूहइ दुरूढमिति अप्पाणं मन्नति तक्खणामेव बुज्झति तेणेव भवग्गहणेणं सिज्झति जाव अंतं करेति। इत्थी वा पुरिसे वा सुविणंते एगं महं तणरासिं वा जहा तेयनिसग्गे जाव अवकररासिं वा पासमाणे पासति विक्खिरमाणे विक्खिरइ विकिण्णमिति अप्पाणं मन्नति तक्खणामेव बुज्झति तेणेव जाव अंतं करेति। इत्थी वा पुरिसे वा सुविणंते एगं महं सरथंभं वा वीरिणथंभं वा वंसीमूलथंभं वा वल्लीमूलथंभं वा पासमाणे पासइ उम्मूलेमाणे उम्मूलेइ उम्मूलितमिति अप्पाणं मन्नइ तक्खणामेव बुज्झति तेणेव जाव अंतं करेति। इत्थी वा पुरिसे वा सुविणंते एगं महं खीरकुंभं वा दधिकुंभं वा घयकुंभं वा मधुकुंभं वा पासमाणे पासति उप्पाडेमाणे

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	स्वप्न-दर्शन, स्वप्नद्रष्टा, स्वप्नस्य प्रकाराः, भगवता द्रष्टा दश-स्वप्नाः एवं तस्य फलं

प्रत सूत्रांक [५८०]

दीप अनुक्रम [६८०]

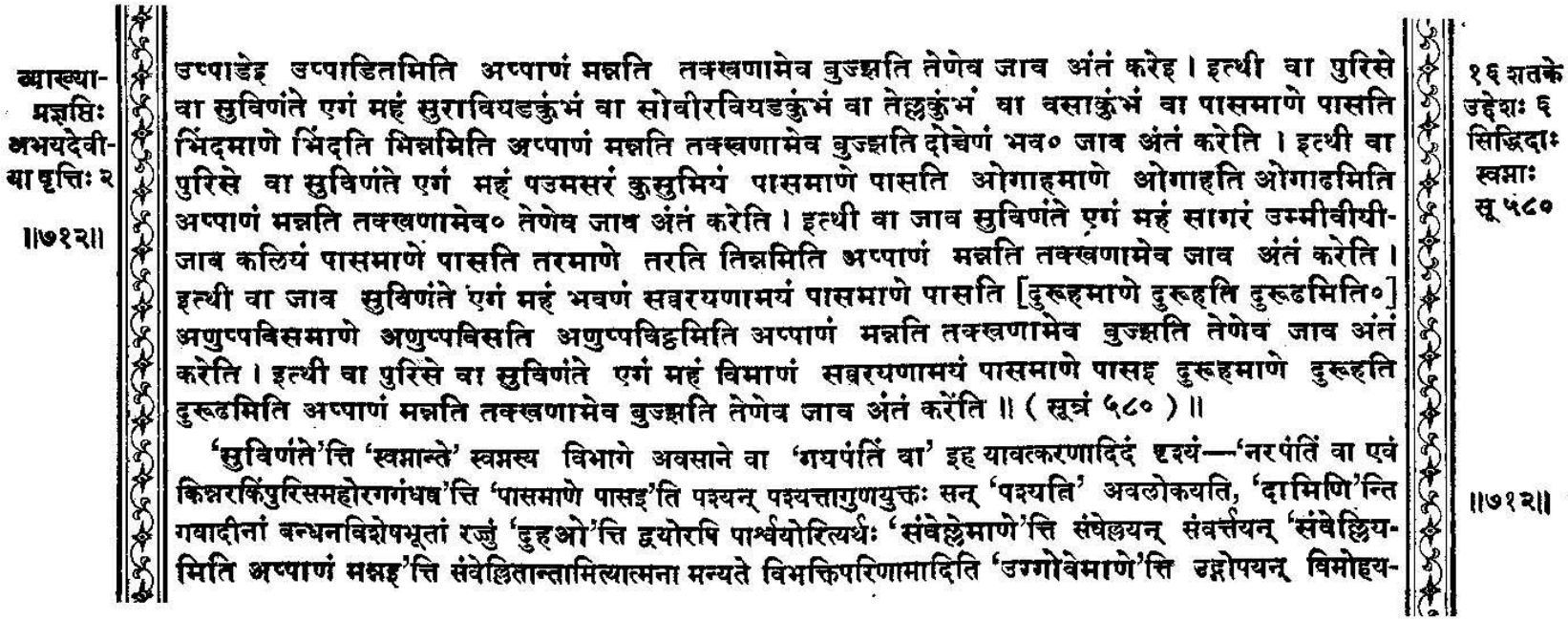

व्याख्या-मज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥७१२॥

उप्पाडेइ उप्पाडितमिति अप्पाणं मन्नति तक्खणामेव बुज्झति तेणेव जाव अंतं करेइ । इत्थी वा पुरिसे वा सुविणंते एगं महं सुराविय्डकुंभं वा सोवीरविय्डकुंभं वा तेल्लकुंभं वा वसाकुंभं वा पासमाणे पासति भिंदमाणे भिंदति भिन्नमिति अप्पाणं मन्नति तक्खणामेव बुज्झति दोच्चेणं भव० जाव अंतं करेति । इत्थी वा पुरिसे वा सुविणंते एगं महं पउमसरं कुसुमियं पासमाणे पासति ओगाहमाणे ओगाहति ओगाढमिति अप्पाणं मन्नति तक्खणामेव० तेणेव जाव अंतं करेति । इत्थी वा जाव सुविणंते एगं महं सागरं उम्मीवीयी-जाव कलियं पासमाणे पासति तरमाणे तरति तिन्नमिति अप्पाणं मन्नति तक्खणामेव जाव अंतं करेति । इत्थी वा जाव सुविणंते एगं महं भवणं सव्वरयणामयं पासमाणे पासति [दुरूहमाणे दुरूहति दुरूढमिति०] अणुप्पविसमाणे अणुप्पविसति अणुप्पविट्ठमिति अप्पाणं मन्नति तक्खणामेव बुज्झति तेणेव जाव अंतं करेति । इत्थी वा पुरिसे वा सुविणंते एगं महं विमाणं सव्वरयणामयं पासमाणे पासइ दुरूहमाणे दुरूहति दुरूढमिति अप्पाणं मन्नति तक्खणामेव बुज्झति तेणेव जाव अंतं करेंति ॥ (सूत्रं ५८०) ॥

'सुविणंते'त्ति 'स्वप्नान्ते' स्वप्नस्य विभागे अवसाने वा 'गयपंतिं वा' इह यावत्करणादिदं दृश्यं—'नरपंतिं वा एवं किन्नरकिंपुरिसमहोरगगंधव्व'त्ति 'पासमाणे पासइ'ति पश्यन् पश्यत्तागुणयुक्तः सन् 'पश्यति' अवलोकयति, 'दामिणि'न्ति गवादीनां बन्धनविशेषभूतां रज्जुं 'दुहओ'त्ति द्वयोरपि पार्श्वयोरित्यर्थः 'संवेल्लेमाणे'त्ति संवेल्लयन् संवर्त्तयन् 'संवेल्लिय-मिति अप्पाणं मन्नइ'त्ति संवेल्लितान्तामित्यात्मना मन्यते विभक्तिपरिणामादिति 'उग्गोवेमाणे'त्ति उद्गोपयन् विमोहय-

१६ शतके उद्देशः ६ सिद्धिदाः स्वप्नाः सू ५८० ॥७१२॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

स्वप्न-दर्शन, स्वप्नद्रष्टा, स्वप्नस्य प्रकारा:, भगवता द्रष्टा दश-स्वप्ना: एवं तस्य फलं

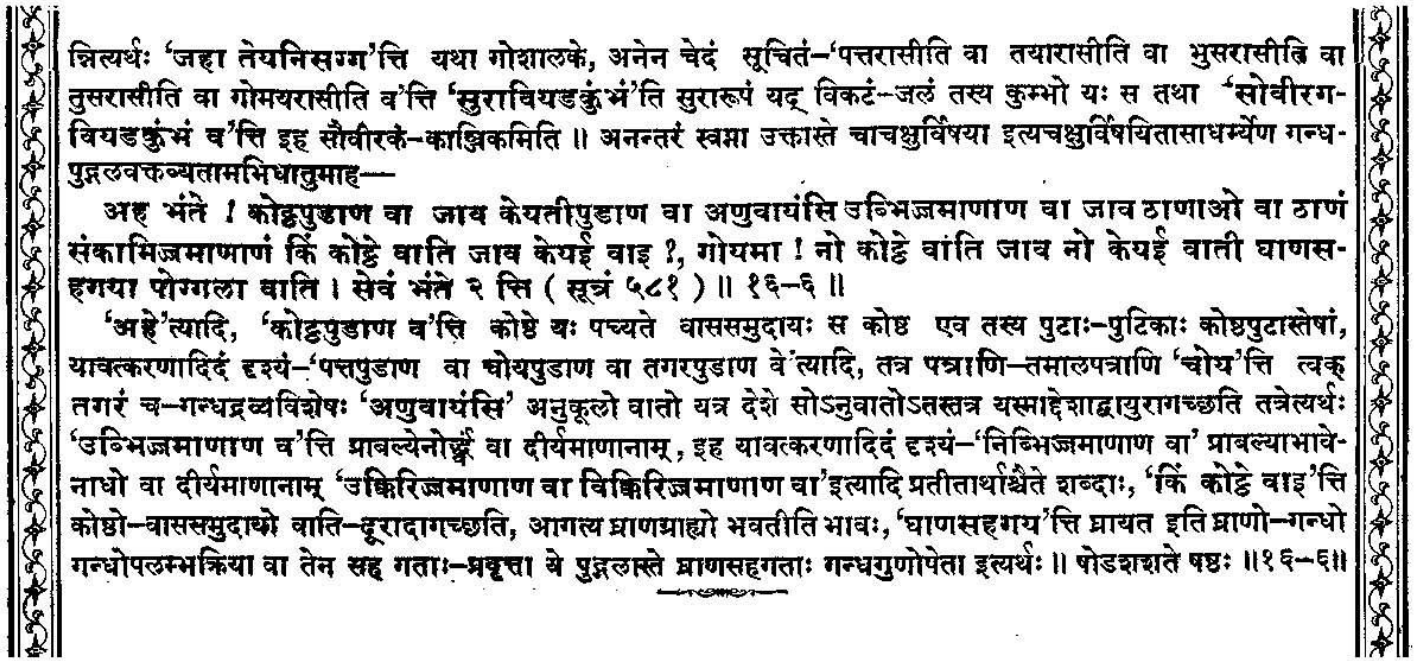

न्नित्यर्थः 'जहा तेयनिसग्ग'त्ति यथा गोशालके, अनेन चेदं सूचितं–'पत्तरासीति वा तयारासीति वा भुसरासीति वा तुसरासीति वा गोमयरासीति व'त्ति 'सुरावियडकुंभं'ति सुरारूपं यद् विकटं–जलं तस्य कुम्भो यः स तथा 'सोवीरगवियडकुंभं व'त्ति इह सौवीरकं–काञ्जिकमिति ॥ अनन्तरं स्वप्ना उक्तास्ते चाचक्षुर्विषया इत्यचक्षुर्विषयितासाधर्म्येण गन्धपुद्गलवक्तव्यतामभिधातुमाह—

अह भंते ! कोट्ठपुडाण वा जाव केयतीपुडाण वा अणुवायंसि उब्भिज्जमाणाण वा जाव ठाणाओ वा ठाणं संकामिज्जमाणाणं किं कोट्ठे वाति जाव केयई वाइ ?, गोयमा ! नो कोट्ठे वांति जाव नो केयई वाती घाणसहगया पोग्गला वाति । सेवं भंते २ त्ति (सूत्रं ५८१) ॥ १६–६ ॥

'अहे'त्यादि, 'कोट्ठपुडाण व'त्ति कोष्ठे यः पच्यते वाससमुदायः स कोष्ठ एव तस्य पुटाः–पुटिकाः कोष्ठपुटास्तेषां, यावत्करणादिदं दृश्यं–'पत्तपुडाण वा चोयपुडाण वा तगरपुडाण वे'त्यादि, तत्र पत्राणि–तमालपत्राणि 'चोय'त्ति त्वक् तगरं च–गन्धद्रव्यविशेषः 'अणुवायंसि' अनुकूलो वातो यत्र देशे सोऽनुवातोऽतस्तत्र यस्माद्देशाद्वायुरागच्छति तत्रेत्यर्थः 'उब्भिज्जमाणाण व'त्ति प्राबल्येनोर्द्ध वा दीर्यमाणानाम्, इह यावत्करणादिदं दृश्यं–'निब्भिज्जमाणाण वा' प्राबल्याभावेनाधो वा दीर्यमाणानाम् 'उक्किरिज्जमाणाण वा विक्किरिज्जमाणाण वा'इत्यादि प्रतीतार्थाश्चैते शब्दाः, 'किं कोट्ठे वाइ'त्ति कोष्ठो–वाससमुदायो वाति–दूरादागच्छति, आगत्य घ्राणग्राह्यो भवतीति भावः, 'घाणसहगय'त्ति घ्रायत इति घ्राणो–गन्धो गन्धोपलम्भक्रिया वा तेन सह गताः–प्रवृत्ता ये पुद्गलास्ते घ्राणसहगताः गन्धगुणोपेता इत्यर्थः ॥ षोडशशते षष्ठः ॥१६–६॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र षोडशमे शतके षष्ठं-उद्देशक: परिसमाप्त:

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [५८२]

दीप अनुक्रम [६८२]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥७१३॥

षष्ठोद्देशकान्ते गन्धपुद्गला वान्तीत्युक्तं, ते चोपयोगेनावसीयन्त इत्युपयोगस्तद्विशेषभूता पश्यत्ता च सप्तमे प्ररूप्यते इत्येवंसम्बद्धस्यास्येदमादिसूत्रम्—

कतिविहे णं भंते ! उवओगे पन्नत्ते ?, गोयमा ! दुविहे उवओगे पन्नत्ते एवं जहा उवयोगपदं पन्नवणाए तहेव निरवसेसं भाणियव्वं, पासणयापदंच निरवसेसं नेयव्वं। सेवं भंते ! सेवं भंतेत्ति ॥ (सूत्रं ५८२) ॥ १६–७ ॥

'कइविहे ण'मित्यादि, 'एवं जहे'त्यादि, उपयोगपदं प्रज्ञापनायामेकोनत्रिंशत्तमं, तच्चैवं–'तंजहा–सागारोवओगे य अणागारोवओगे य । सागारोवओगे णं भंते ! कतिविहे पण्णत्ते ?, गोयमा ! अट्ठविहे पण्णत्ते, तंजहा–आभिणिबोहियणाणसागारोवओगे सुयणाणसागारोवओगे एवं ओहिणाण० मणपज्जवनाण० केवलनाण० मतिअन्नाणसागारोवओगे सुयअन्नाणसागारोवओगे विभंगनाणसागारोवओगे । अणागारोवओगे णं भंते ! कतिविहे पण्णत्ते ?, गोयमा ! चउविहे पण्णत्ते, तंजहा–चक्खुदंसणअणागारोवओगे अचक्खुदंसणअणागारोवओगे ओहिदंसणअणागारोवओगे केवलदंसणअणागारोवओगे'इत्यादि, एतच्च व्यक्तमेव, 'पासणयापयं च णेयव्वं'ति पश्यत्तापदमिह स्थानेऽध्येतव्यमित्यर्थः, तच्च प्रज्ञापनायां त्रिंशत्तमं, तच्चैवं—'कतिविहा णं भंते ! पासणया पण्णत्ता ?, गोयमा ! दुविहा पासणया पण्णत्ता, तंजहा–सागारपासणया अणागारपासणया, सागारपासणया णं भंते ! कतिविहा पण्णत्ता ?, गोयमा ! छविहा प०, तं०–सुयणाणसागारपासणया एवं ओहिनाण० मणनाण० केवलनाण० सुयअन्नाण० विभंगनाणसागारपासणया, अणागारपासणया णं भंते ! कतिविहा प० ?, गोयमा ! तिविहा पण्णत्ता, तंजहा–चक्खुदंसणअणागारपासणया ओहिदंसणअणागारपासणया केवलदं-

१६ शतके उद्देशः ६ घ्राणसहगतपुद्गलवातं सू ५८१ उद्देशः ७ उपयोग-पश्यत्ते सू ५८२

॥७१३॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र षोडशमे शतके सप्तम-उद्देशक: आरब्ध:

सणअणागारपासणया'इत्यादि, अस्य चायमर्थः–'पासणय'त्ति पश्यतो भावः पश्यत्ता–बोधपरिणामविशेषः, ननु पश्यत्तो-पयोगयोस्तुल्ये साकारानाकारभेदत्वे कः प्रतिविशेषः ?, उच्यते, यत्र त्रैकालिकोऽवबोधोऽस्ति तत्र पश्यत्ता यत्र पुनर्वर्त्त-मानकालस्त्रैकालिकश्च तत्रोपयोग इत्ययं विशेषः, अत एव मतिज्ञानं मत्यज्ञानं च साकारपश्यत्तायां नोक्तं, तस्योत्पन्नावि-नष्टार्थग्राहकत्वेन साम्प्रतकालविषयत्वात्, अथ कस्मादनाकारपश्यत्तायां चक्षुर्दर्शनमधीतं न शेषेन्द्रियदर्शनं, उच्यते, पश्यत्ता प्रकृष्टमीक्षणमुच्यते 'दृशिर् प्रेक्षणे' इति वचनात्, प्रेक्षणं च चक्षुर्दर्शनस्यैवास्ति न शेषाणां, चक्षुरिन्द्रियोपयोगस्य शेषेन्द्रियोपयोगापेक्षयाऽल्पकालत्वात्, यत्र चोपयोगोऽल्पकालस्तत्रेक्षणस्य प्रकर्षो झटित्यर्थपरिच्छेदात्, तदेवं चक्षुर्दर्शन-स्यैव पश्यत्ता नेतरस्येति, अयं चार्थः प्रज्ञापनातो विशेषेणावगम्य इति ॥ षोडशशते सप्तमः ॥ १६–७ ॥

सप्तमे उपयोग उक्तः, स च लोकविषयोऽपीतिसम्बन्धादष्टमे लोकोऽभिधीयते, तस्य चेदमादिसूत्रम्—

किंमहालए णं भंते ! लोए पन्नत्ते ?, गोयमा ! महतिमहालए जहा बारसमसए तहेव जाव असंखेज्जाओ जोयणकोडाकोडीओ परिक्खेवेणं, लोयस्स णं भंते ! पुरच्छिमिल्ले चरिमंते किं जीवा जीवदेसा जीवपएसा अजीवा अजीवदेसा अजीवपएसा ?, गोयमा ! नो जीवा जीवदेसावि जीवपएसावि अजीवावि अजीवदे-सावि अजीवपएसावि ॥ जे जीवदेसा ते नियमं एगिंदियदेसा य अहवा एगिंदियदेसा य बेइंदियस्स य देसे एवं जहा दसमसए अग्गेयीदिसा तहेव नवरं देसेसु अणिंदियाणं आइल्लविरहिओ। जे अरूवी अजीवा ते

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	अत्र षोडशमे शतके सप्तम-उद्देशक: परिसमाप्त: अत्र षोडशमे शतके अष्टम-उद्देशक: आरब्ध:

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥७१४॥

छविहा, अद्धासमयो नत्थि, सेसं तं चेव सव्वं निरवसेसं। लोगस्स णं भंते! दाहिणिल्ले चरिमंते किं जीवा० ?, एवं चेव, एवं पच्चच्छिमिल्लेवि, उत्तरिल्लेवि, लोगस्स णं भंते! उवरिल्ले चरिमंते किं जीवा० ? पुच्छा, गोयमा ! नो जीवा जीवदेसावि जाव अजीवपएसावि। जे जीवदेसा ते नियमं एगिंदियदेसा य अणिंदियदेसा य अहवा एगिंदियदेसा य अणिंदिय० बेंदियस्स य देसे, अहवा एगिंदियदेसा य अणिंदियदेसा य बेंदियाण य देसा, एवं मज्झिल्लविरहिओ जाव पंचिंदि०, जे जीवप्पएसा ते नियमं एगिंदियप्पएसा य अणिंदियप्पएसा य अहवा एगिंदियप्पएसा य अणिंदियप्पएसा य बेंदियस्सप्पदेसा य अहवा एगिंदियपएसा य अणिंदियप्पएसा य बेइंदियाण य पएसा, एवं आदिल्लविरहिओ जाव पंचिंदियाणं, अजीवा जहा दसमसए तमाए तहेव निरवसेसं॥ लोगस्स णं भंते! हेट्ठिल्ले चरिमंते किं जीवा० पुच्छा ?, गोयमा ! नो जीवा जीवदेसावि जाव अजीवप्पएसावि, जे जीवदेसा ते नियमं एगिंदियदेसा अहवा एगिंदियदेसा य बेइंदियस्स देसे अहवा एगिंदियदेसा य बेंदियाण य देसा एवं मज्झिल्लविरहिओ जाव अणिंदियाणं पदेसा आइल्लविरहिया सबेसिं जहा पुरच्छिमिल्ले चरिमंते तहेव, अजीवा जहेव उवरिल्ले चरिमंते तहेव॥ इमीसे णं भंते! रयणप्पभाए पुढवीए पुरच्छिमिल्ले चरिमंते किं जीवा० ? पुच्छा, गोयमा ! नो जीवा एवं जहेव लोगस्स तहेव चत्तारिवि चरिमंता जाव उत्तरिल्ले, उवरिल्ले तहेव जहा दसमसए विमला दिसा तहेव निरवसेसं, हेट्ठिल्ले चरिमंते तहेव नवरं देसे पंचिंदिएसु तियभंगोत्ति सेसं तं चेव, एवं जहा रयणप्पभाए चत्तारि चरमंता भणिया एवं सक्करप्पभाएवि उवरि-

१६ शतके उद्देशः ८ लोकमहत्ता चरमान्ता-दौ जीवजी वदेशादि सू ५८३

॥७१४॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

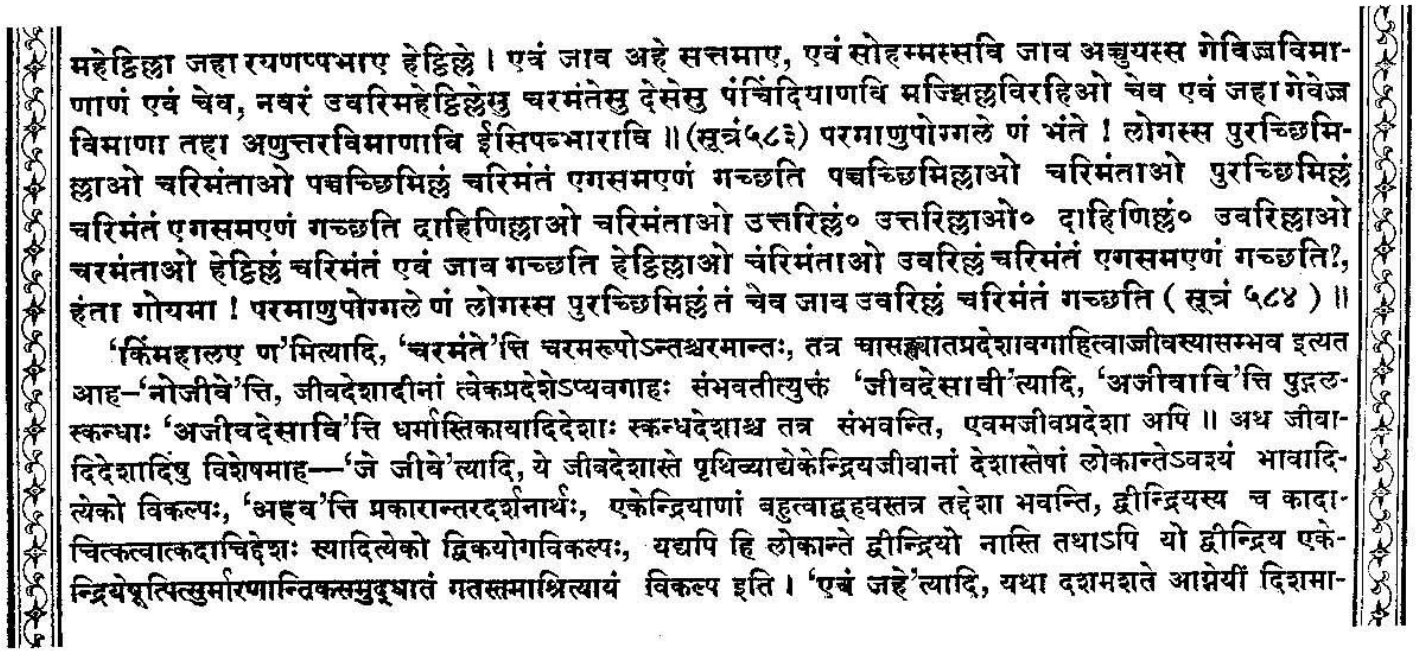

महेट्ठिल्ला जहा रयणप्पभाए हेट्ठिल्ले। एवं जाव अहे सत्तमाए, एवं सोहम्मस्सवि जाव अच्चुयस्स गेविज्जविमाणाणं एवं चेव, नवरं उवरिमहेट्ठिल्लेसु चरमंतेसु देसेसु पंचिंदियाणवि मज्झिल्लविरहिओ चेव एवं जहा गेवेज्ज विमाणा तहा अणुत्तरविमाणावि ईसिपब्भारावि ॥ (सूत्रं५८३) परमाणुपोग्गले णं भंते ! लोगस्स पुरच्छिमिल्लाओ चरिमंताओ पच्चच्छिमिल्लं चरिमंतं एगसमएणं गच्छति पच्चच्छिमिल्लाओ चरिमंताओ पुरच्छिमिल्लं चरिमंतं एगसमएणं गच्छति दाहिणिल्लाओ चरिमंताओ उत्तरिल्लं० उत्तरिल्लाओ० दाहिणिल्लं० उवरिल्लाओ चरमंताओ हेट्ठिल्लं चरिमंतं एवं जाव गच्छति हेट्ठिल्लाओ चरिमंताओ उवरिल्लं चरिमंतं एगसमएणं गच्छति?, हंता गोयमा ! परमाणुपोग्गले णं लोगस्स पुरच्छिमिल्लं तं चेव जाव उवरिल्लं चरिमंतं गच्छति (सूत्रं ५८४) ॥

'किंमहालए ण'मित्यादि, 'चरमंते'त्ति चरमरूपोऽन्तश्चरमान्तः, तत्र चासङ्ख्यातप्रदेशावगाहित्वाज्जीवस्यासम्भव इत्यत आह–'नोजीवे'त्ति, जीवदेशादीनां त्वेकप्रदेशेऽप्यवगाहः संभवतीत्युक्तं 'जीवदेसावी'त्यादि, 'अजीवावि'त्ति पुद्गलस्कन्धाः 'अजीवदेसावि'त्ति धर्मास्तिकायादिदेशाः स्कन्धदेशाश्च तत्र संभवन्ति, एवमजीवप्रदेशा अपि ॥ अथ जीवादिदेशादिषु विशेषमाह—'जे जीवे'त्यादि, ये जीवदेशास्ते पृथिव्याद्येकेन्द्रियजीवानां देशास्तेषां लोकान्तेऽवश्यं भावादित्येको विकल्पः, 'अहव'त्ति प्रकारान्तरदर्शनार्थः, एकेन्द्रियाणां बहुत्वाद्बहवस्तत्र तद्देशा भवन्ति, द्वीन्द्रियस्य च कादाचित्कत्वात्कदाचिद्देशः स्यादित्येको द्विकयोगविकल्पः, यद्यपि हि लोकान्ते द्वीन्द्रियो नास्ति तथाऽपि यो द्वीन्द्रिय एकेन्द्रियेषूत्पित्सुर्मारणान्तिकसमुद्घातं गतस्तमाश्रित्यायं विकल्प इति। 'एवं जहे'त्यादि, यथा दशमशते आग्नेयीं दिशमा-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥७१५॥

श्रित्योक्तं तथेह पूर्वचरमान्तमाश्रित्य वाच्यं, तच्चेदम्–'अहवा एगिंदियदेसा य बेइंदियस्स य देसा अहवा एगिंदियदेसा य बेइंदियाण य देसा अहवा एगिंदियदेसा य तेइंदियस्स य देसे' इत्यादि, यः पुनरिह विशेषस्तद्दर्शनायाह–'नवरं अणिंदियाण'मित्यादि, अनिन्द्रियसम्बन्धिनि देशविषये भङ्गकत्रये 'अहवा एगिंदियदेसा य अणिंदियस्स देसे' इत्येवं-रूपः प्रथमभङ्गको दशमशते आग्नेयीप्रकरणेऽभिहितोऽपीह न वाच्यो, यतः केवलिसमुद्घाते कपाटाद्यवस्थायां लोकस्य पूर्वचरमान्ते प्रदेशवृद्धिहानिकृतलोकदन्तकसद्भावेनानिन्द्रियस्य बहूनां देशानां सम्भवो न त्वेकस्येति, तथाऽऽग्नेय्यां दश-विधेष्वरूपिद्रव्येषु धर्म्माधर्म्माकाशास्तिकायद्रव्याणां तस्यामभावात्सप्तविधा अरूपिण उक्ताः लोकस्य पूर्वचरमान्तेष्वद्धा-समयस्याप्यभावात् षड्विधास्ते वाच्याः, अद्धासमयस्य तु तत्राभावः समयक्षेत्र एव तद्भावात्, अत एवाह–'जे अरूवी अजीवा ते छव्विहा अद्धासमयो नत्थि'त्ति, 'उवरिल्ले चरिमंते'त्ति, अनेन सिद्धोपलक्षित उपरितनचरिमान्तो विवक्षितस्तत्र चैकेन्द्रियदेशा अनिन्द्रियदेशाश्च सन्तीतिकृत्वाऽऽह—'जे जीवे'त्यादि, इहायमेको द्विकसंयोगः, त्रिकसंयोगेषु च द्वौ द्वौ कार्यौ, तेषु हि मध्यमभङ्गः 'अहवा एगिंदियदेसा य अणिंदियदेसा य बेइंदियस्स य देसा' इत्येवंरूपो नास्ति, द्वीन्द्रियस्य च देशा इत्यस्यासम्भवाद्, यतो द्वीन्द्रियस्योपरितनचरिमान्ते मारणान्तिकसमुद्घातेन गतस्यापि देश एव तत्र संभवति न पुनः प्रदेशवृद्धिहानिकृतलोकदन्तकवशादनेकप्रतरात्मकपूर्वचरमान्तवद्देशाः, उपरितनचरिमान्तस्यैकप्रतररूपतया लोक-दन्तकाभावेन देशानेकत्वाहेतुत्वादिति, अत एवाह–'एवं मज्झिल्लविरहिओ'त्ति त्रिकभङ्गक इति प्रक्रमः, उपरितनचरिमा-न्तापेक्षया जीवप्रदेशप्ररूपणायामेवं 'आइल्लविरहिओ'त्ति यदुक्तं तस्यायमर्थः–इह पूर्वोक्ते भङ्गकत्रये प्रदेशापेक्षया 'अहवा

१६ शतके उद्देशः ८ लोकमहत्ता चरमान्ता-दौ जीवजी वदेशादि सू ५८३

॥७१५॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	***अत्र मूल-संपादने एका स्खलना दृश्यते–सूत्रक्रमांकने सू.५८३-५८४ स्थाने सू.५८३ मुद्रितं

एगिंदियपएसा य अणिंदियप्पएसा य बेइंदियस्सप्पएसे' इत्ययं प्रथमभङ्गको न वाच्यो,द्वीन्द्रियस्य च प्रदेश इत्यस्यासम्भवात्, तदसम्भवश्च लोकव्यापकावस्थानिन्द्रियवर्ज्जजीवानां यत्रैकप्रदेशस्तत्रासङ्ख्यातानामेव तेषां भावादिति, 'अजीवा जहा दसमसए तमाए'त्ति अजीवानाश्रित्य यथा दशमशते 'तमाए'त्ति तमाभिधानां दिशमाश्रित्य सूत्रमधीतं तथेहोपरितनचरमान्तमाश्रित्य वाच्यं, तच्चैवं–जे अजीवा ते दुविहा पण्णत्ता, तंजहा–रूवीअजीवा य अरूविअजीवा य, जे रूविअजीवा ते चउविहा पण्णत्ता, तंजहा–खंधा ४, जे अरूविअजीवा ते छविहा पण्णत्ता, तंजहा–नो धम्मत्थिकाए धम्मत्थिकायस्स देसे धम्मत्थिकायस्सप्पएसा' एवमधर्म्माकाशास्तिकाययोरपीति ॥ 'लोगस्स णं भंते ! हिट्ठिल्ले'इत्यादि, इह पूर्वचरमान्तवद्भङ्गाः कार्याः, नवरं तदीयस्य भङ्गकत्रयस्य मध्यात् 'अहवा एगिंदियदेसा य बेइंदियस्स य देसा' इत्येवंरूपो मध्यमभङ्गकोऽत्र वर्जनीयः, उपरितनचरिमान्तप्रकरणोक्तयुक्तेस्तस्यासम्भवाद्, अत एवाह–'एवं मज्झिल्लविरहिओ'त्ति, देशभङ्गका दर्शिताः अथ प्रदेशभङ्गकदर्शनायाह–'पएसा आइल्लविरहिया सव्वेसिं जहा पुरच्छिमिल्ले चरिमंते'त्ति, प्रदेशचिन्तायामाद्यभङ्गकरहिताः प्रदेशा वाच्या इत्यर्थः आद्यश्च भङ्गक एकवचनान्तप्रदेशशब्दोपेतः स च प्रदेशानामधश्चरमान्तेऽपि बहुत्वान्न संभवति संभवति च 'अहवा एगिंदियपएसा य बेइंदियस्स पएसा अहवा एगिंदियप्पएसा य बेइंदियाण य पएसा'इत्येतद्वयं, 'सव्वेसिं'ति द्वीन्द्रियादीनामनिन्द्रियान्तानाम् 'अजीवे'त्यादि व्यक्तमेव ॥ चरमान्ताधिकारादेवेदमाह–– 'इमीसे णं'मित्यादि ॥ 'उवरिल्ले जहा दसमसए विमला दिसा तहेव निरवसेसं'ति दशमशते यथा विमला दिगुक्ता तथैव रत्नप्रभोपरितनचरमान्तो वाच्यो निरवशेषं यथा भवतीति, स चैवम्–'इमीसे णं भंते ! रयणप्पभाए पुढवीए उवरिल्ले

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

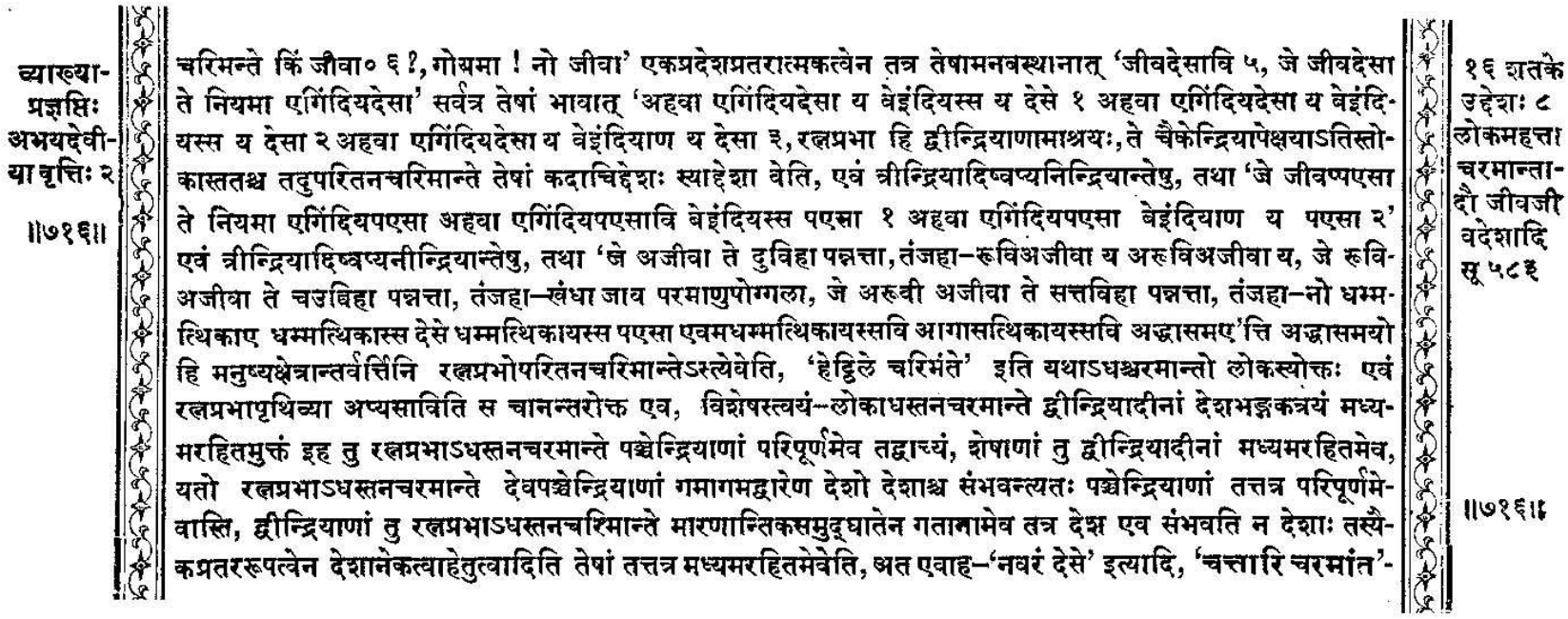

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥७१६॥

चरिमन्ते किं जीवा० ६ ?, गोयमा ! नो जीवा' एकप्रदेशप्रतरात्मकत्वेन तत्र तेषामनवस्थानात् 'जीवदेसावि ५, जे जीवदेसा ते नियमा एगिंदियदेसा' सर्वत्र तेषां भावात् 'अहवा एगिंदियदेसा य बेइंदियस्स य देसे १ अहवा एगिंदियदेसा य बेइंदियस्स य देसा २ अहवा एगिंदियदेसा य बेइंदियाण य देसा ३, रत्नप्रभा हि द्वीन्द्रियाणामाश्रयः, ते चैकेन्द्रियापेक्षयाऽतिस्तोकास्ततश्च तदुपरितनचरिमान्ते तेषां कदाचिद्देशः स्याद्देशा वेति, एवं त्रीन्द्रियादिष्वप्यनिन्द्रियान्तेषु, तथा 'जे जीवप्पएसा ते नियमा एगिंदियपएसा अहवा एगिंदियपएसावि बेइंदियस्स पएसा १ अहवा एगिंदियपएसा बेइंदियाण य पएसा २' एवं त्रीन्द्रियादिष्वप्यनीन्द्रियान्तेषु, तथा 'जे अजीवा ते दुविहा पन्नत्ता, तंजहा–रूविअजीवा य अरूविअजीवा य, जे रूविअजीवा ते चउव्विहा पन्नत्ता, तंजहा–खंधा जाव परमाणुपोग्गला, जे अरूवी अजीवा ते सत्तविहा पन्नत्ता, तंजहा–नो धम्मत्थिकाए धम्मत्थिकास्स देसे धम्मत्थिकायस्स पएसा एवमधम्मत्थिकायस्सवि आगासत्थिकायस्सवि अद्धासमए'त्ति अद्धासमयो हि मनुष्यक्षेत्रान्तर्वर्त्तीनि रत्नप्रभोपरितनचरिमान्तेऽस्त्येवेति, 'हेट्ठिले चरिमंते' इति यथाऽधश्चरमान्तो लोकस्योक्तः एवं रत्नप्रभापृथिव्या अप्यसाविति स चानन्तरोक्त एव, विशेषस्त्वयं–लोकाधस्तनचरमान्ते द्वीन्द्रियादीनां देशभङ्गकत्रयं मध्यमरहितमुक्तं इह तु रत्नप्रभाऽधस्तनचरमान्ते पञ्चेन्द्रियाणां परिपूर्णमेव तद्वाच्यं, शेषाणां तु द्वीन्द्रियादीनां मध्यमरहितमेव, यतो रत्नप्रभाऽधस्तनचरमान्ते देवपञ्चेन्द्रियाणां गमागमद्वारेण देशो देशाश्च संभवन्त्यतः पञ्चेन्द्रियाणां तत्तत्र परिपूर्णमेवास्ति, द्वीन्द्रियाणां तु रत्नप्रभाऽधस्तनचरिमान्ते मारणान्तिकसमुद्घातेन गतानामेव तत्र देश एव संभवति न देशाः तस्यैकप्रतररूपत्वेन देशानेकत्वाहेतुत्वादिति तेषां तत्तत्र मध्यमरहितमेवेति, अत एवाह–'नवरं देसे' इत्यादि, 'चत्तारि चरमंत'-

१६ शतके उद्देशः ८ लोकमहत्ता चरमान्ता-दौ जीवजी वदेशादि सू ५८३

॥७१६॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

***अत्र मूल-संपादने एका स्खलना दृश्यते–सूत्रक्रमांकने सू.५८३-५८४ स्थाने सू.५८३ मुद्रितं

त्ति पूर्वपश्चिमदक्षिणोत्तररूपाः 'उवरिमहेट्ठिल्ला जहा रयणप्पभाए हेट्ठिल्ले'त्ति शर्कराप्रभाया उपरितनाधस्तनचरमान्तौ रत्नप्रभाया उपरितनाधस्तनचरमान्तवद्वाच्यौ, द्वीन्द्रियादिषु पूर्वोक्तयुक्तेर्मध्यमभङ्गरहितं पञ्चेन्द्रियेषु तु परिपूर्णं देशभङ्गकत्रयं, प्रदेशचिन्तायां तु द्वीन्द्रियादिषु सर्वेष्वाद्यभङ्गकरहितत्वेन शेषभङ्गकद्वयं, अजीवचिन्तायां तु रूपिणां चतुष्कमरूपिणां त्वद्धासमयस्य तत्राभावेन षट्कं वाच्यमिति भावः । अथ शर्कराप्रभातिदेशेन शेषपृथिवीनां सौधर्मादिदेवलोकानां ग्रैवेयकविमानानां च प्रस्तुतवक्तव्यतामाह—'एवं जाव अहेसत्तमाए' इत्यादि, ग्रैवेयकविमानेषु तु यो विशेषस्तं दर्शयितुमाह–'नवर'मित्यादि, अच्युतान्तदेवलोकेषु हि देवपञ्चेन्द्रियाणां गमागमसद्भावात् उपरितनाधस्तनचरमान्तयोः पञ्चेन्द्रियेषु देशानाश्रित्य भङ्गकत्रयं संभवति, ग्रैवेयकेषु विमानेषु तु देवपञ्चेन्द्रियगमागमाभावाद् द्वीन्द्रियादिष्विव पञ्चेन्द्रियेष्वपि मध्यमभङ्गकरहितं शेषभङ्गकद्वयं तयोर्भवतीति ॥ चरमाधिकारादेवेदमपरमाह—'परमाणु'इत्यादि, इदं च गमनसामर्थ्यं परमाणोस्तथास्वभावत्वादिति मन्तव्यमिति ॥ अनन्तरं परमाणोः क्रियाविशेष उक्त इति क्रियाधिकारादिदमाह—

पुरिसे णं भंते ! वासं वासति नो वासतीति हत्थं वा पायं वा बाहुं वा ऊरुं वा आउट्टावेमाणे वा पसारेमाणे वा कतिकिरिए ?, गोयमा ! जावं च णं से पुरिसे वासं वासति वासं नो वासतीति हत्थं वा जाव ऊरुं वा आउट्टावेति वा पसारेति वा तावं च णं से पुरिसे काइयाए जाव पंचहिं किरियाहिं पुट्ठे ॥ (सूत्रं ५८५) ॥

'पुरिसे ण'मित्यादि, 'वासं वासइ' वर्षो–मेघो वर्षति नो वा वर्षो वर्षतीति ज्ञापनार्थमिति शेषः, अचक्षुरालोके

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥७१७॥

हि वृष्टिराकाशे हस्तादिप्रसारणादेव गम्यते इतिकृत्वा हस्तादिकं आकुण्टयेद्वा प्रसारयेद्वाऽऽदित एवेति ॥ आकुण्टना-दिप्रस्तावादिदमाह—

देवे णं भंते ! महड्ढिए जाव महेसक्खे लोगंते ठिच्चा पभू अलोगंसि हत्थं वा जाव ऊरुं वा आउंटावेत्तए वा पसारेत्तए वा ?, णो तिणट्ठे समट्ठे, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ देवे णं महड्ढीए जाव लोगंते ठिच्चा णो पभू अलोगंसि हत्थं वा जाव पसारेत्तए वा ?, जीवाणं आहारोवचिया पोग्गला बोंदिचिया पोग्गला कलेवरचिया पोग्गला पोग्गलामेव पप्प जीवाण य अजीवाण य गतिपरियाए आहिज्जइ, अलोए णं नेवत्थि जीवा नेवत्थि पोग्गला से तेणट्ठे णं जाव पसारेत्तए वा ॥ सेवं भंते ! २ त्ति ॥ (सूत्रं ५८६) ॥ १६–८ ॥

'देवे ण'मित्यादि, 'जीवाणं आहारोवचिया पोग्गल'त्ति जीवानां जीवानुगता इत्यर्थः आहारोपचिता–आहाररूप-तयोपचिताः 'बोंदिचिया पोग्गल'त्ति अव्यक्तावयवशरीररूपतया चिताः 'कडेवरचिया पोग्गल'त्ति शरीररूपतया चिताः, उपलक्षणत्वाच्चास्य उच्छ्वासचिताः पुद्गला इत्याद्यपि द्रष्टव्यं, अनेन चेदमुक्तं–जीवानुगामिस्वभावाः पुद्गला भवन्ति, ततश्च यत्रैव क्षेत्रे जीवास्तत्रैव पुद्गलानां गतिः स्यात्, तथा 'पुग्गलामेव पप्प'त्ति पुद्गलानेव 'प्राप्य' आश्रित्य जीवानां च 'अजीवाण य' पुद्गलानां च गतिपर्यायो–गतिधर्मः 'आहिज्जइ'त्ति आख्यायते, इदमुक्तं भवति–यत्र क्षेत्रे पुद्गलास्तत्रैव जीवानां पुद्गलानां च गतिर्भवति, एवं चालोके नैव सन्ति जीवा नैव च सन्ति पुद्गला इति तत्र जीवपुद्गलानां गतिर्नास्ति, तदभावाच्चालोके देवो हस्ताद्याकुण्टयितुं प्रसारयितुं वा न प्रभुरिति ॥ षोडशशतेऽष्टमः ॥ १६–८ ॥

१६ शतके उद्देशः ८ वृष्टौहस्ता-द्याकुञ्चना-दौक्रियाः सू ५८५ अलोकेऽना-कुञ्चलादि सू ५८६

॥७१७॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र षोडशमे शतके अष्टम-उद्देशक: परिसमाप्त:

अष्टमोद्देशके देववक्तव्यतोक्ता, नवमे तु बलेर्देवविशेषस्य सोच्यते इत्येवंसम्बन्धस्यास्येदमादिसूत्रम्—

कहिन्नं भंते ! बलिस्स वइरोयणिंदस्स वइरोयणरन्नो सभा सुहम्मा पन्नत्ता ?, गोयमा ! जंबुद्दीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स उत्तरेणं तिरियमसंखेज्जे जहेव चमरस्स जाव बायालीसं जोयणसहस्साइं ओगाहित्ता एत्थ णं बलिस्स वइरोयणिंदस्स वइ० २ रुयगिंदे नामं उप्पायपव्वए पन्नत्ते सत्तरस एक्कवीसे जोयणसए एवं पमाणं जहेव तिगिच्छिकूडस्स पासायवडेंसगस्सवि तं चेव पमाणं सीहासणं सपरिवारं बलिस्स परियारेणं अट्ठो तहेव नवरं रुयगिंदप्पभाइं ३ सेसं तं चेव जाव बलिचंचाए रायहाणीए अन्नेसिं च जाव रुयगिंदस्स णं उप्पायपव्वयस्स उत्तरेणं छक्कोडिसए तहेव जाव चत्तालीसं जोयणसहस्साइं ओगाहित्ता एत्थ णं बलिस्स वइरोयणिंदस्स वइरोयणरन्नो बलिचंचा नामं रायहाणी पन्नत्ता एगं जोयणसयसहस्सं पमाणं तहेव जाव बलिपेढस्स उववाओ जाव आयरक्खा सव्वं तहेव निरवसेसं नवरं सातिरेगं सागरोवमं ठिती पन्नत्ता सेसं तं चेव जाव बली वइरोयणिंदे बली २ ॥ सेवं भंते २ जाव विहरति ॥ (सूत्रं ५८७) ॥ १६–९ ॥

'कहि ण'मित्यादि, 'जहेव चमरस्स'त्ति यथा चमरस्य द्वितीयशताष्टमोद्देशकाभिहितस्य सुधर्म्मसभास्वरूपाभिधायकं सूत्रं तथा बलेरपि वाच्यं, तच्च तत एवावसेयम्, 'एवं पमाणं जहेव तिगिच्छिकूडस्स'त्ति यथा चमरसत्कस्य द्वितीय-शताष्टमोद्देशकाभिहितस्यैव तिगिच्छिकूटाभिधानस्योत्पातपर्वतस्य प्रमाणमभिहितं तथाऽस्यापि रुचकेन्द्रस्य वाच्यं, एतदपि तत एवावसेयं, 'पासायवडेंसगस्सवि तं चेव पमाणं'ति यत्प्रमाणं चमरसम्बन्धिनस्तिगिच्छिकूटाभिधानोत्पातपर्वतो-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र षोडशमे शतके नवम-उद्देशक: आरब्ध:

बले: वक्तव्यता

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥७१८॥

परिवर्त्तिनः प्रासादावतंसकस्य तदेव बलिसत्कस्यापि रुचकेन्द्राभिधानोत्पातपर्वतोपरिवर्त्तिनस्तस्य, तदपि द्वितीयशतादेवा-वसेयं, 'सिंहासणं सपरिवारं बलिस्स परिवारेणं'ति प्रासादावतंसकमध्यभागे सिंहासनं बलिसत्कं बलिसत्कपरिवार-सिंहासनोपेतं वाच्यमित्यर्थः तदपि द्वितीयशताष्टमोद्देशकविवरणोक्तचमरसिंहासनन्यायेन वाच्यं, केवलं तत्र चमरस्य सामानिकासनानां चतुःषष्टिः सहस्राणि आत्मरक्षासनानां तु तान्येव चतुर्गुणान्युक्तानि बलेस्तु सामानिकासनानां षष्टिः सहस्राणि आत्मरक्षासनानां तु तान्येव चतुर्गुणानीत्येतावान् विशेषः, "अट्ठो तहेव नवरं रुयगिंदप्पभाइं'ति यथा तिगिच्छिकूटस्य नामान्वर्थाभिधायकं वाक्यं तथाऽस्यापि वाच्यं, केवलं तिगिच्छिकूटान्वर्थप्रश्नस्योत्तरे यस्मात्तिगिच्छिप्रभा-प्युत्पलादीनि तत्र सन्ति तेन तिगिच्छिकूट इत्युच्यत इत्युक्तं इह तु रुचकेन्द्रप्रभाणि तानि सन्तीति वाच्यं, रुचकेन्द्रस्तु रत्नविशेष इति, तत्पुनरर्थतः सूत्रमेवमध्येयं–'से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ रुयगिंदे २ उप्पायपव्वए ?, गोयमा ! रुयगिंदे णं बहूणि उप्पलाणि पउमाइं कुमुयाइं जाव रुयगिंदवण्णाइं रुयगिंदलेसाइं रुयगिंदप्पभाइं, से तेणट्ठेणं रुयगिंदे २ उप्पायप-व्वए'त्ति 'तहेव जाव'त्ति यथा चमरचञ्चाव्यतिकरे सूत्रमुक्तमिहापि तथैव वाच्यं, तच्चेदं–'पणपन्नं कोडीओ पन्नासं च सयसहस्साइं पन्नासं च सहस्साइं वीइवइत्ता इमं च रयणप्पभं पुढविं'ति 'पमाणं तहेव'त्ति यथा चमरचञ्चायाः, तच्चेदम्– 'एगं जोयणसयसहस्सं आयामविक्खंभेणं तिन्नि जोयणसयसहस्साइं सोलस य सहस्साइं दोन्नि य सत्तावीसे जोयणसए तिन्नि य कोसे अट्ठावीसं च धणुसयं तेरस य अंगुलाइं अद्धंगुलयं च किंचिविसेसाहियं परिक्खेवेणं पण्णत्तं' 'जाव बलिपेढस्स'त्ति नगरीप्रमाणाभिधानानन्तरं प्राकारतद्द्वारोपकारिकालयनप्रासादावतंसकसुधर्मसभाचैत्यभवनोपपातसभा-

१६ शतके उद्देशः ९ बलेर्वक्तव्य ता सू ५८७

॥७१८॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

बले: वक्तव्यता

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [५८७, ५८८]

दीप अनुक्रम [६८७, ६८८]

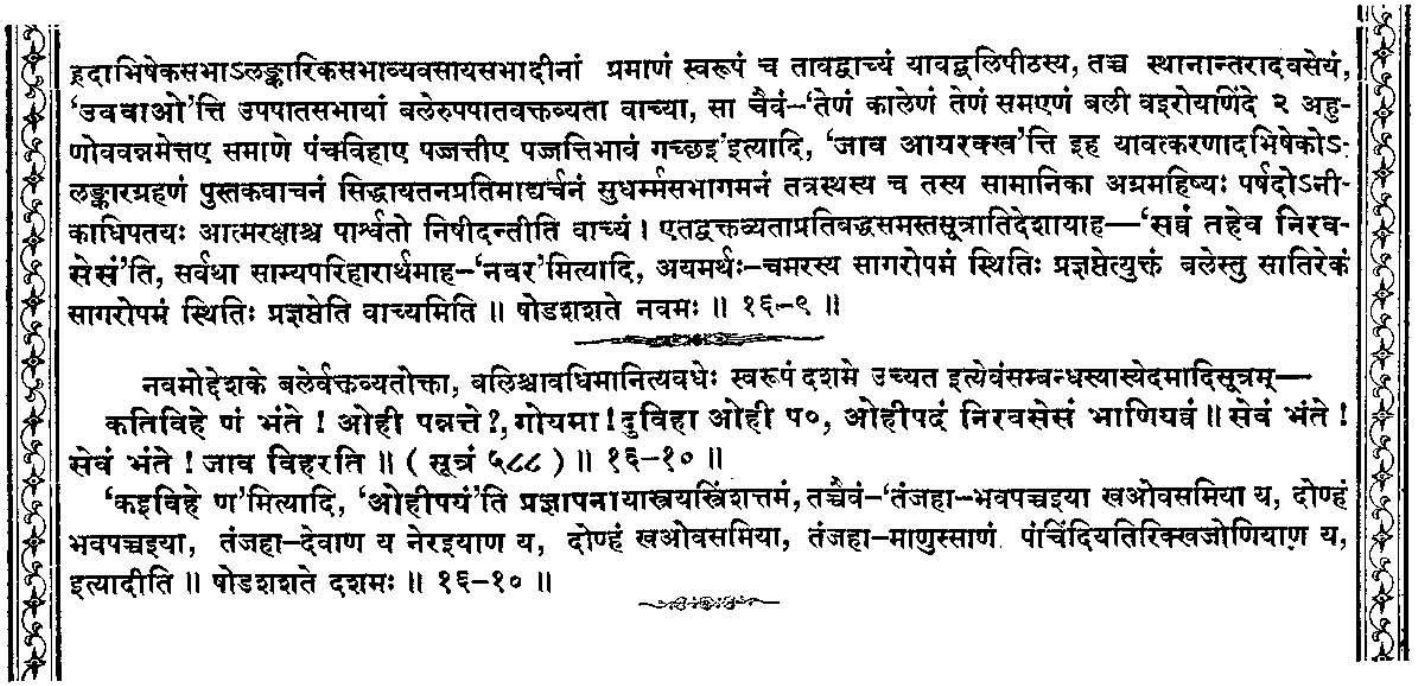

हृदाभिषेकसभाऽलङ्कारिकसभाव्यवसायसभादीनां प्रमाणं स्वरूपं च तावद्वाच्यं यावद्बलिपीठस्य, तच्च स्थानान्तरादवसेयं, 'उववाओ'त्ति उपपातसभायां बलेरुपपातवक्तव्यता वाच्या, सा चैवं–'तेणं कालेणं तेणं समएणं बली वइरोयणिंदे २ अहुणोववन्नमेत्तए समाणे पंचविहाए पज्जत्तीए पज्जत्तिभावं गच्छइ'इत्यादि, 'जाव आयरक्ख'त्ति इह यावत्करणादभिषेकोऽलङ्कारग्रहणं पुस्तकवाचनं सिद्धायतनप्रतिमाद्यर्चनं सुधर्म्मसभागमनं तत्रस्थस्य च तस्य सामानिका अग्रमहिष्यः पर्षदोऽनीकाधिपतयः आत्मरक्षाश्च पार्श्वतो निषीदन्तीति वाच्यं। एतद्वक्तव्यताप्रतिबद्धसमस्तसूत्रातिदेशायाह—'सव्वं तहेव निरवसेसं'ति, सर्वथा साम्यपरिहारार्थमाह–'नवर'मित्यादि, अयमर्थः–चमरस्य सागरोपमं स्थितिः प्रज्ञप्तेत्युक्तं बलेस्तु सातिरेकं सागरोपमं स्थितिः प्रज्ञप्तेति वाच्यमिति ॥ षोडशशते नवमः ॥ १६–९ ॥

नवमोद्देशके बलेर्वक्तव्यतोक्ता, बलिश्चावधिमानित्यवधेः स्वरूपं दशमे उच्यत इत्येवंसम्बन्धस्यास्येदमादिसूत्रम्—

कतिविहे णं भंते ! ओही पन्नत्ते ?, गोयमा ! दुविहा ओही प०, ओहीपदं निरवसेसं भाणियव्वं ॥ सेवं भंते ! सेवं भंते ! जाव विहरति ॥ (सूत्रं ५८८) ॥ १६–१० ॥

'कइविहे ण'मित्यादि, 'ओहीपयं'ति प्रज्ञापनायास्त्रयस्त्रिंशत्तमं, तच्चैवं–'तंजहा–भवपच्चइया खओवसमिया य, दोण्हं भवपच्चइया, तंजहा–देवाण य नेरइयाण य, दोण्हं खओवसमिया, तंजहा–मणुस्साणं पंचिंदियतिरिक्खजोणियाण य, इत्यादीति ॥ षोडशशते दशमः ॥ १६–१० ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र षोडशमे शतके नवम-उद्देशक: परिसमाप्त:

अत्र षोडशमे शतके दशम-उद्देशक: आरब्ध: एवं परिसमाप्तं

दशमेऽवधिरुक्तः, एकादशे त्ववधिमद्विशेष उच्यते इत्येवंसम्बन्धस्यास्येदमादिसूत्रम्—

दीवकुमारा णं भंते ! सव्वे समाहारा सव्वे समुस्सासनिस्सासा ?, णो तिणट्ठे समट्ठे, एवं जहा पढमसए बितियउद्देसए दीवकुमाराणं वत्तव्वया तहेव जाव समाउया समुस्सासनिस्सासा । दीवकुमाराणं भंते ! कति लेस्साओ पन्नत्ताओ ?, गोयमा ! चत्तारि लेस्साओ पन्नत्ताओ, तंजहा–कण्हलेस्सा जाव तेउलेस्सा । एएसि णं भंते ! दीवकुमाराणं कण्हलेस्साणं जाव तेउलेस्साण य कयरे २ हिंतो जाव विसेसाहिया वा ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा दीवकुमारा तेउलेस्सा काउलेस्सा असंखेज्जगुणा नीललेस्सा विसेसाहिया कण्हलेस्सा विसेसाहिया । एएसि णं भंते ! दीवकुमाराणं कण्हलेसाणं जाव तेऊलेस्साण य कयरे २ हिंतो अप्पड्ढिया वा महड्ढिया वा ?, गोयमा ! कण्हलेस्साहिंतो नीललेस्सा महड्ढिया जाव सव्वमहड्ढीया तेउलेस्सा । सेवं भंते ! सेवं भंते ! जाव विहरति ॥ उदहिकुमारा णं भंते ! सव्वे समाहारा० एवं चेव, सेवं० ॥ १६–१२ ॥ एवं दिसाकुमारावि ॥ १६–१३ ॥ एवं थणियकुमाराऽवि, सेवं भंते सेवं भंते ! जाव विहरइ ॥ १६–१४ ॥ सोलसमं सयं समत्तं ॥ (सूत्रं ५८९) ॥ १६–१४ ॥

'दीवे'त्यादि ॥ एवमन्यदप्युद्देशकत्रयं पाठयितव्यमिति ॥ षोडशशतं वृत्तितः परिसमाप्तमिति ॥

सम्यक्श्रुताचारविवर्जितोऽप्यहं, यदप्रकोपात्कृतवान् विचारणाम् ।
अविघ्नमेतां प्रति षोडशं शतं, वाग्देवता सा भवताद्वरप्रदा ॥ १ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र षोडशमे शतके एकादशात् चतुर्दश: पर्यन्ता उद्देशका: परिसमाप्ता:

तत् परिसमाप्ते षोडशकं उद्देशक: अपि परिसमाप्त:

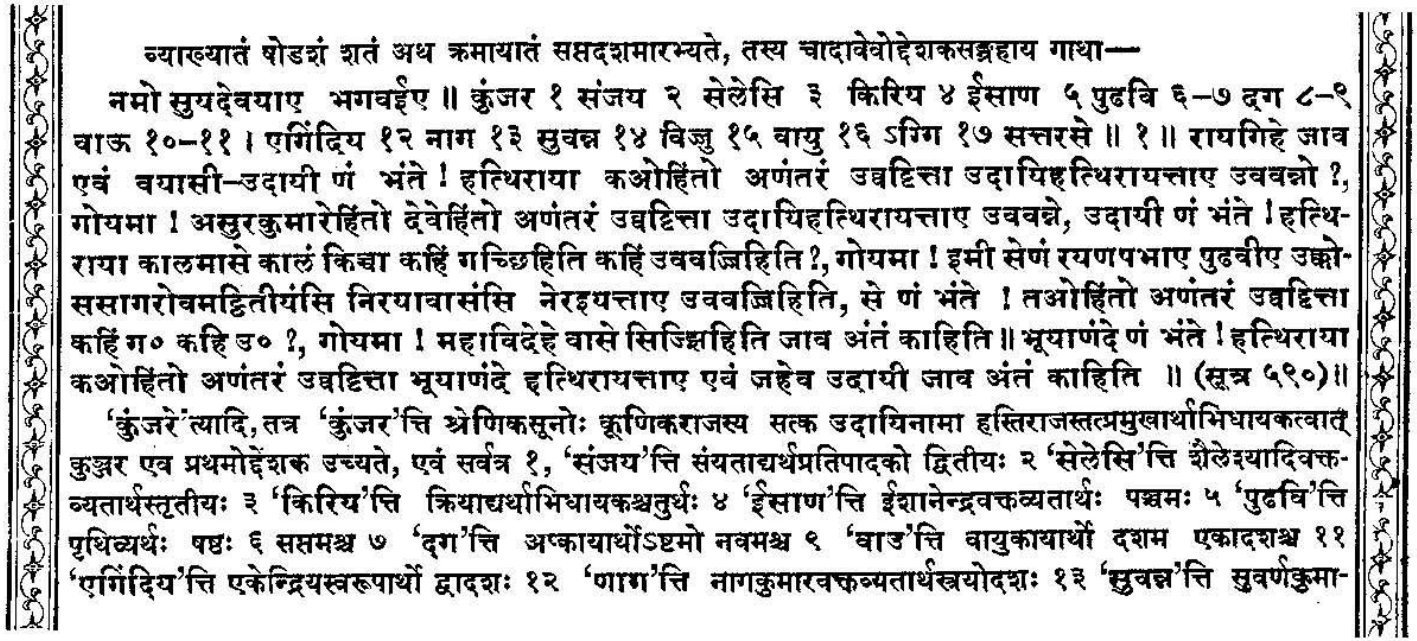

व्याख्यातं षोडशं शतं अथ क्रमायातं सप्तदशमारभ्यते, तस्य चादावेवोद्देशकसङ्ग्रहाय गाथा—

नमो सुयदेवयाए भगवईए ॥ कुंजर १ संजय २ सेलेसि ३ किरिय ४ ईसाण ५ पुढवि ६–७ दग ८–९ वाऊ १०–११ । एगिंदिय १२ नाग १३ सुवन्न १४ विज्जु १५ वायु १६ ऽग्गि १७ सत्तरसे ॥ १ ॥ रायगिहे जाव एवं वयासी–उदायी णं भंते ! हत्थिराया कओहिंतो अणंतरं उव्वट्टित्ता उदायिहत्थिरायत्ताए उववन्नो ?, गोयमा ! असुरकुमारेहिंतो देवेहिंतो अणंतरं उव्वट्टित्ता उदायिहत्थिरायत्ताए उववन्ने, उदायी णं भंते ! हत्थिराया कालमासे कालं किच्चा कहिं गच्छिहिति कहिं उववज्जिहिति ?, गोयमा ! इमी सेणं रयणपभाए पुढवीए उक्कोससागरोवमट्ठितीयंसि निरयावासंसि नेरइयत्ताए उववज्जिहिति, से णं भंते ! तओहिंतो अणंतरं उव्वट्टित्ता कहिं ग० कहि उ० ?, गोयमा ! महाविदेहे वासे सिज्झिहिति जाव अंतं काहिति ॥ भूयाणंदे णं भंते ! हत्थिराया कओहिंतो अणंतरं उव्वट्टित्ता भूयाणंदे हत्थिरायत्ताए एवं जहेव उदायी जाव अंतं काहिति ॥ (सूत्र ५९०)॥

'कुंजरे'त्यादि, तत्र 'कुंजर'त्ति श्रेणिकसूनोः कूणिकराजस्य सत्क उदायिनामा हस्तिराजस्तत्प्रमुखार्थाभिधायकत्वात् कुञ्जर एव प्रथमोद्देशक उच्यते, एवं सर्वत्र १, 'संजय'त्ति संयताद्यर्थप्रतिपादको द्वितीयः २ 'सेलेसि'त्ति शैलेश्यादिवक्तव्यतार्थस्तृतीयः ३ 'किरिय'त्ति क्रियाद्यर्थाभिधायकश्चतुर्थः ४ 'ईसाण'त्ति ईशानेन्द्रवक्तव्यतार्थः पञ्चमः ५ 'पुढवि'त्ति पृथिव्यर्थः षष्ठः ६ सप्तमश्च ७ 'दग'त्ति अप्कायार्थोऽष्टमो नवमश्च ९ 'वाउ'त्ति वायुकायार्थो दशम एकादशश्च ११ 'एगिंदिय'त्ति एकेन्द्रियस्वरूपार्थो द्वादशः १२ 'णाग'त्ति नागकुमारवक्तव्यतार्थस्त्रयोदशः १३ 'सुवन्न'त्ति सुवर्णकुमा-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [५९०]

दीप अनुक्रम [६९३--६९५]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥७२०॥

रार्थानुगतश्चतुर्दशः १४ 'विज्जु'त्ति विद्युत्कुमाराभिधायकः पञ्चदशः १५ 'वाउ'त्ति वायुकुमारवक्तव्यतार्थः षोडश १६ 'अग्गि'त्ति अग्निकुमारवक्तव्यतार्थः सप्तदशः १७ 'सत्तरसे'त्ति सप्तदशशते एते उद्देशका भवन्ति । तत्र प्रथमोद्देशकार्थ-प्रतिपादनार्थमाह—'रायगिहे'इत्यादि ॥ 'भूयाणंदे'त्ति भूतानन्दाभिधानः कूणिककराजस्य प्रधानहस्ती ॥ अनन्तरं भूतानन्दस्योद्वर्त्तनादिका क्रियोक्तेति क्रियाऽधिकारादेवेदमाह—

पुरिसे णं भंते ! तालमारुहइ ता० २ तालाओ तालफलं पचालेमाणे वा पवाडेमाणे वा कतिकिरिए ?, गोयमा ! जावंच णं से पुरिसे तालमारुहइ तालमा० २ तालाओ तालफलं पयालेइ वा पवाडेइ वा तावं च णं से पुरिसे काइयाए जाव पंचहिं किरियाहिं पुट्ठे, जेसिंपिय णं जीवाणं सरीरेहिंतो तले निव्वत्तिए तलफले निव्व-त्तिए तेऽवि णं जीवा काइयाए जाव पंचहिं किरियाहिं पुट्ठा ॥ अहे णं भंते ! से तालप्फले अप्पणो गरुयत्ताए जाव पचोवयमाणे जाइं तत्थ पाणाइं जाव जीवियाओ ववरोवेति तए णं भंते ! से पुरिसे कतिकिरिए ?, गोयमा ! जावं च णं से पुरिसे तलप्फले अप्पणो गरुयत्ताए जाव जीवियाओ ववरोवेति तावं च णं से पुरिसे काइयाए जाव चउहिं किरियाहिं पुट्ठे, जेसिंपि णं जीवाणं सरीरेहिंतो तले निव्वत्तिए तेवि णं जीवा काइ-याए जाव चउहिं किरियाहिं पुट्ठा, जेसिंपि णं जीवाणं सरीरेहिंतो तालप्फले निव्वत्तिए तेवि णं जीवा काइयाए जाव पंचहिं किरियाहिं पुट्ठा, जेविय से जीवा अहे वीससाए पचोवयमाणस्स उवग्गहे वट्टंति तेऽविय णं जीवा काइयाए जाव पंचहिं किरियाहिं पुट्ठा ॥ पुरिसे णं भंते ! रुक्खस्स मूलं पचालेमाणे वा पवाडेमाणे वा कति

१७ शतके उद्देशः १ उदायिभू-तानन्दौ सू ५९० तालादिप्र-चालनादौ क्रियाः सू ५९१

॥७२०॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

किरिए ?, गोयमा ! जावं च णं से पुरिसे रुक्खस्स मूलं पचालेमाणे वा पवाडेमाणे वा तावं च णं से पुरिसे काइयाए जाव पंचहिं किरियाहिं पुट्ठे, जेसिंपिय णं जीवाणं सरीरेहिंतो मूले निव्वत्तिए जाव बीए निव्वत्तिए तेविय णं जीवा काइयाए जाव पंचहिं किरियाहिं पुट्ठा, अहे णं भंते ! से मूले अप्पणो गरुयत्ताए जाव जीवियाओ ववरोवेइ तओ णं भंते ! से पुरिसे कतिकिरिए ?, गोयमा ! जावं च णं से मूले अप्पणो जाव ववरोवेइ तावं च णं से पुरिसे काइयाए जाव चउहिं किरियाहिं पुट्ठे, जेसिंपिय णं जीवाणं सरीरेहिंतो कंदे निव्वत्तिए जाव बीए निव्वत्तिए तेवि णं जीवा काइयाए जाव चउहिं पुट्ठा, जेसिंपिय णं जीवाणं सरीरेहिंतो मूले निव्वत्तिए तेवि णं जीवा काइयाए जाव पंचहिं किरियाहिं पुट्ठा, जेविय णं से जीवा अहे वीससाए पच्चोवयमाणस्स उवग्गहे वट्टंति तेवि णं जीवा काइयाए जाव पंचहिं किरियाहिं पुट्ठा ॥ पुरिसे णं भंते ! रुक्खस्स कंदं पचालेइ०, गो० ! तावं च णं से पुरिसे जाव पंचहिं किरियाहिं पुट्ठे, जेसिंपि णं जीवाणं सरीरेहिंतो मूले निव्वत्तिए जाव बीए निव्वत्तिए तेवि णं जीवा जाव पंचहिं किरियाहिं पुट्ठा, अहे णं भंते ! से कंदे अप्पणो जाव चउहिं पुट्ठे, जेसिंपि णं जीवाणं सरीरेहिंतो मूले निव्वत्तिए खंधे नि० जाव चउहिं पुट्ठा, जेसिंपि णं जीवाणं सरीरेहिंतो कंदे निव्वत्तिए तेवि य णं जीवा जाव पंचहिं पुट्ठा, जेवि य से जीवा अहे वीससाए पच्चोवयमाणस्स जाव पंचहिं पुट्ठा जहा खंधो एवं जाव बीयं (सूत्रं ५९१) ॥

'पुरिसे ण'मित्यादि, 'तालं'ति तालवृक्षं 'पचालेमाणे व'त्ति प्रचलयन् वा 'पवाडेमाणे व'त्ति अधःप्रपातयन् वा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [५९१]

दीप अनुक्रम [६९६]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥७२१॥

'पंचहिं किरियाहिं पुट्ठे'त्ति तालफलानां तालफलाश्रितजीवानां च पुरुषः प्राणातिपातक्रियाकारी, यश्च प्राणातिपातक्रियाकारकोऽसावाद्यानामपीतिकृत्वा पञ्चभिः क्रियाभिः स्पृष्ट इत्युक्तं १, येऽपि च तालफलनिर्वर्त्तकजीवास्तेऽपि च पञ्चक्रियास्तदन्यजीवान् सङ्घट्टनादिभिरपद्रावयन्तीतिकृत्वा २, 'अहे ण'मित्यादि, अथ पुरुषकृततालफलप्रचलनादेरनन्तरं तत्तालफलमात्मनो गुरुकतया यावत्करणात् सम्भारिकतया गुरुकसम्भारिकतयेति दृश्यं 'पचोवयमाणे'त्ति प्रत्यवपतत् यांस्तत्राकाशादौ प्राणादीन् जीविताद् व्यपरोपयति 'तओ णं'ति तेभ्यः सकाशात् कतिक्रियोऽसौ पुरुषः ?, उच्यते, चतुष्क्रियो, वधनिमित्तभावस्याल्पत्वेन तासां चतसृणामेव विवक्षणात्, तदल्पत्वं च यथा पुरुषस्य तालफलप्रचलनादौ साक्षाद्वधनिमित्तभावोऽस्ति न तथा तालफलव्यापादितजीवेष्विति कृत्वा ३, एवं तालनिर्वर्त्तकजीवा अपि ४, फलनिर्वर्त्तकास्तु पञ्चक्रिया एव, साक्षात्तेषां वधनिमित्तत्वात् ५, ये चाधोनिपततस्तालफलस्योपग्रहे–उपकारे वर्त्तन्ते जीवास्तेऽपि पञ्चक्रियाः, वधे तेषां निमित्तभावस्य बहुतरत्वात् ६, एतेषां च सूत्राणां विशेषतो व्याख्यानं पञ्चमशतोक्तकाण्डक्षेपुरुषसूत्रादवसेयम्, एतानि च फलद्वारेण षट् क्रियास्थानान्युक्तानि, मूलादिष्वपि षडेव भावनीयानि, 'एवं जाव बीयं'ति अनेन कन्दसूत्राणीव स्कन्धत्वक्शालप्रवालपत्रपुष्पफलबीजसूत्राण्यध्येयानीति सूचितम् ॥ क्रियाधिकारादेव शरीरेन्द्रिययोगेषु क्रियाप्ररूपणार्थमिदमाह—

कति णं भंते !•सरीरगा पण्णत्ता ?, गोयमा ! पंच सरीरगा पन्नत्ता, तंजहा–ओरालियजावकम्मए । कति णं भंते ! इंदिया पं० ?, गोयमा ! पंच इंदिया पं०, तं०–सोइंदिए जाव फासिंदिए । कतिविहे णं भंते ! जोए

१७ शतके उद्देशः १ उदायिभूतानन्दौ सू ५२० तालादिप्रचालनादौ क्रियाः सू ५९१

॥७२१॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

शरीरं-इन्द्रियं-योगं आदि एवं तस्य भेदा:

प० ?, गोयमा ! तिविहे जोए प०, तं०–मणजोए वयजोए कायजोए । जीवे णं भंते ! ओरालियसरीरं निव-त्तेमाणे कतिकिरिए ?, गोयमा ! सिय तिकिरिए सिय चउकिरिए सिय पंचकिरिए, एवं पुढविक्काइएवि एवं जाव मणुस्से । जीवा णं भंते ! ओरालियसरीरं निवत्तेमाणा कतिकिरिया ?, गोयमा ! तिकिरियावि चउकिरियावि पंचकिरियावि, एवं पुढविकाइया एवं जाव मणुस्सा, एवं वेउव्वियसरीरेणवि दो दंडगा नवरं जस्स अत्थि वेउव्वियं एवं जाव कम्मगसरीरं, एवं सोइंदियं जाव फासिंदियं, एवं मणजोगं वयजोगं कायजोगं जस्स जं अत्थि तं भाणियव्वं, एए एगत्तपुहुत्तेणं छव्वीसं दंडगा (सूत्रं ५९२) ॥

'कति णं भंते !' इत्यादि, तत्र 'जीवे णं भंते !' इत्यादौ 'सिय तिकिरिए सिय चउकिरिए सिय पंचकिरिए'त्ति यदा औदारिकशरीरं परपरितापाद्यभावेन निर्वर्त्तयति तदा त्रिक्रियः यदा तु परपरितापं कुर्वंस्तन्निर्वर्त्तयति तदा चतुष्क्रियः, यदा तु परमतिपातयंस्तन्निर्वर्त्तयति तदा पञ्चक्रिय इति । पृथक्त्वदण्डके स्याच्छब्दप्रयोगो नास्ति, एकदाऽपि सर्वविकल्पस-म्भवादिति । 'छव्वीसं दंडग'त्ति पञ्चशरीराणीन्द्रियाणि च त्रयश्च योगाः एते च मीलिताश्चतुर्दश, एते चैकत्वपृथ-क्त्वाभ्यां गुणिताः षड्विंशतिरिति ॥ अनन्तरं क्रिया उक्तास्ताश्च जीवधर्म्मा इति जीवधर्म्माधिकाराज्जीवधर्म्मरूपान् भावानभिधातुमाह—

कतिविहे णं भंते ! भावे पण्णत्ते ?, गोयमा ! छविहे भावे प०, तं०–उदइए उवसमिए जाव सन्निवाइए, से किं तं उदइए ?, उदइए भावे दुविहे पण्णत्ते, तंजहा–उदइए उदयनिप्पन्ने य, एवं एएणं अभिलावेणं जहा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [५९३]

दीप अनुक्रम [६९८]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥७२२॥

अणुओगदारे छन्नामं तहेव निरवसेसं भाणियव्वं जाव से तं सन्निवाइए भावे ॥ सेवं भंते ! सेवं भंतेत्ति (सूत्रं ५९३) ॥ १७–१ ॥

'कतिविहे णं भंते ! भावे'इत्यादि, औदयिकादीनां च स्वरूपं प्राग् व्याख्यातमेव, 'एवं एएणं अभिलावेणं जहा अणुओगदारे'इत्यादि, अनेन चेदं सूचितं—'से किं तं उदइए ?, २ अट्ठ कम्मपगडीणं उदएणं, से तं उदइए'इत्यादीति ॥ सप्तदशशते प्रथमः ॥ १७–१ ॥

प्रथमोद्देशकान्ते भावा उक्तास्तद्वन्तश्च संयतादयो भवन्तीति द्वितीये ते उच्यन्त इत्येवंसम्बद्धस्यास्येदमादिसूत्रम्—

से नूणं भंते ! संयतविरतपडिहयपच्चक्खायपावकम्मे धम्मे ठिए अस्संजयअविरयअपडिहयपच्चक्खायपावकम्मे अधम्मे ठिते संजयासंजए धम्माधम्मे ठिते ?, हंता गोयमा ! संजयविरयजाव धम्माधम्मे ठिए, एएसि णं भंते ! धम्मंसि वा अहम्मंसि वा धम्माधम्मंसि वा चक्किया केइ आसइत्तए वा जाव तुयट्टित्तए वा ?, गोयमा ! णो तिणट्ठे समट्ठे, से केणं खाइ अट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ जाव धम्माधम्मे ठिते ?, गोयमा ! संजयविरयजाव पावकम्मे धम्मे ठिते धम्मं चेव उवसंपज्जित्ताणं विहरति, असंयतजाव पावकम्मे अधम्मे ठिए अधम्मं चेव उवसंपज्जित्ताणं विहरइ, संजयासंजए धम्माधम्मे ठिते धम्माधम्मं उवसंपज्जित्ताणं विहरति, से तेणट्ठेणं जाव ठिए ॥ जीवा णं भंते ! किं धम्मे ठिया अधम्मे ठिया धम्माधम्मे ठिया ?, गोयमा ! जीवा

१७ शतके उद्देशः १ शरीरादिभ्यः क्रियाः भावाः उ.२ धर्माधर्मस्थितता सू ५९२-५९४

॥७२२॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र सप्तदशमे शतके प्रथम-उद्देशक: परिसमाप्त:

अत्र सप्तदशमे शतके द्वितीय-उद्देशक: आरब्ध:

धम्मेवि ठिता अधम्मेवि ठिता धम्माधम्मेवि ठिता, नेरइ० पु० ?, गोयमा ! णेरइया णो धम्मे ठिता अधम्मे ठिता णो धम्माधम्मे ठिता, एवं जाव चउरिंदियाणं, पंचिंदियतिरिक्खजो० पुच्छा, गोयमा ! पंचिंदियतिरिक्ख जोणि० नो धम्मे ठिया अधम्मे ठिया धम्माधम्मेवि ठिया, मणुस्सा जहा जीवा, वाणमंतरजोइ० वेमाणि० जहा नेर० (सूत्रं ५९४) ॥

'से नूणं भंते !'इत्यादि, 'धम्मे'त्ति संयमे 'चक्किया केइ आसइत्तए व'त्ति धर्म्मादौ शक्नुयात् कश्चिदासयितुं ?, नायमर्थः समर्थो, धर्मादेरमूर्त्तत्वात् मूर्त्ते एव चासनादिकरणस्य शक्यत्वादिति ॥ अथ धर्म्मस्थितत्वादिकं दण्डके निरूपयन्नाह—'जीवा ण'मित्यादि व्यक्तं, संयतादयः प्रागुपदर्शितास्ते च पण्डितादयो व्यपदिश्यन्ते, अत्र चार्थेऽन्ययूथिकमतमुपदर्शयन्नाह—

अन्नउत्थिया णं भंते ! एवमाइक्खंति जाव परूवेंति–एवं खलु समणा पंडिया समणोवासया बालपंडिया जस्स णं एगपाणाएवि दंडे अणिक्खित्ते से णं एगंतबालेत्ति वत्तव्वं सिया, से कहमेयं भंते ! एवं ?, गोयमा ! जण्णं ते अन्नउत्थिया एवमाइक्खंति जाव वत्तव्वं सिया, जे ते एवमाहंसु मिच्छं ते एवमा०, अहं पुण गोयमा ! एवमाइक्खामि जाव परूवेमि एवं खलु समणा पंडिया समणोवासगा बालपंडिया जस्स णं एगपाणाएवि दंडे निक्खित्ते से णं नो एगंतबालेति वत्तव्वं सिया ॥ जीवा णं भंते ! किं बाला पंडिया बालपंडिया ?, गोयमा ! जीवा बालावि पंडियावि बालपंडियावि, नेरइयाणं पुच्छा, गोयमा ! नेरइया बाला नो पंडिया

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

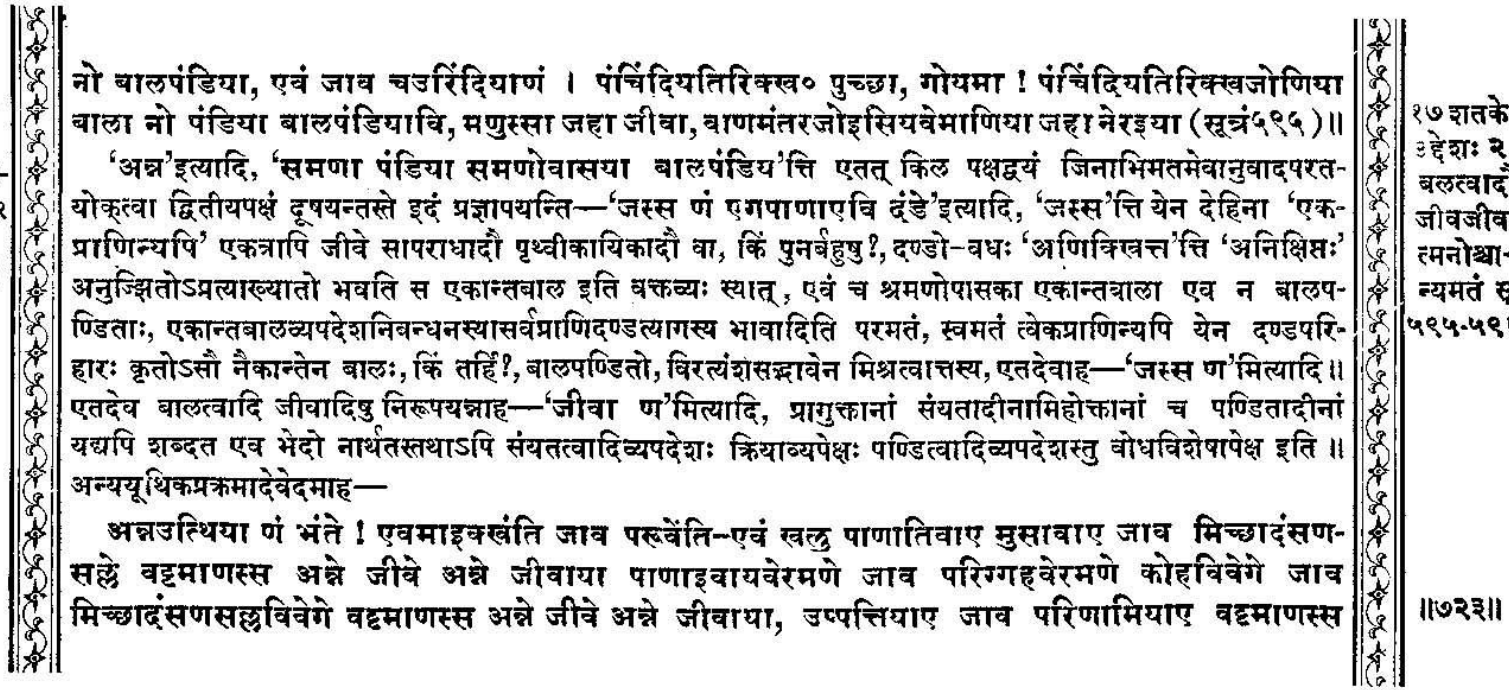

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥७२३॥

नो बालपंडिया, एवं जाव चउरिंदियाणं । पंचिंदियतिरिक्ख० पुच्छा, गोयमा ! पंचिंदियतिरिक्खजोणिया बाला नो पंडिया बालपंडियावि, मणुस्सा जहा जीवा, वाणमंतरजोइसियवेमाणिया जहा नेरइया (सूत्रं५९५)॥

'अन्न'इत्यादि, 'समणा पंडिया समणोवासया बालपंडिय'त्ति एतत् किल पक्षद्वयं जिनाभिमतमेवानुवादपरतयोक्त्वा द्वितीयपक्षं दूषयन्तस्ते इदं प्रज्ञापयन्ति—'जस्स णं एगपाणाएवि दंडे'इत्यादि, 'जस्स'त्ति येन देहिना 'एकप्राणिन्यपि' एकत्रापि जीवे सापराधादौ पृथ्वीकायिकादौ वा, किं पुनर्बहुषु?, दण्डो–वधः 'अणिक्खित्त'त्ति 'अनिक्षिप्तः' अनुज्झितोऽप्रत्याख्यातो भवति स एकान्तबाल इति वक्तव्यः स्यात्, एवं च श्रमणोपासका एकान्तबाला एव न बालपण्डिताः, एकान्तबालव्यपदेशनिबन्धनस्यासर्वप्राणिदण्डत्यागस्य भावादिति परमतं, स्वमतं त्वेकप्राणिन्यपि येन दण्डपरिहारः कृतोऽसौ नैकान्तेन बालः, किं तर्हि?, बालपण्डितो, विरत्यंशसद्भावेन मिश्रत्वात्तस्य, एतदेवाह—'जस्स ण'मित्यादि॥ एतदेव बालत्वादि जीवादिषु निरूपयन्नाह—'जीवा ण'मित्यादि, प्रागुक्तानां संयतादीनामिहोक्तानां च पण्डितादीनां यद्यपि शब्दत एव भेदो नार्थतस्तथाऽपि संयतत्वादिव्यपदेशः क्रियाव्यपेक्षः पण्डित्वादिव्यपदेशस्तु बोधविशेषापेक्ष इति ॥ अन्ययूथिकप्रक्रमादेवेदमाह—

अन्नउत्थिया णं भंते ! एवमाइक्खंति जाव परूवेंति–एवं खलु पाणातिवाए मुसावाए जाव मिच्छादंसणसल्ले वट्टमाणस्स अन्ने जीवे अन्ने जीवाया पाणाइवायवेरमणे जाव परिग्गहवेरमणे कोहविवेगे जाव मिच्छादंसणसल्लविवेगे वट्टमाणस्स अन्ने जीवे अन्ने जीवाया, उप्पत्तियाए जाव परिणामियाए वट्टमाणस्स

१७ शतके उद्देशः २ बलत्वादौ जीवजीवात्मनोश्चान्यमतं सू ५९५-५९६

॥७२३॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अन्ने जीवे अन्ने जीवाया, उप्पत्तियाए उग्गहे ईहा अवाए धारणाए वट्टमाणस्स जाव जीवाया, उट्ठाणे जाव परक्कमे वट्टमाणस्स जाव जीवाया, नेरइयत्ते तिरिक्खमणुस्सदेवत्ते वट्टमाणस्स जावजीवाया, नाणावरणिज्जे जाव अंतराइए वट्टमाणस्स जाव जीवाया, एवं कण्हलेस्साए जाव सुक्कलेस्साए सम्मदिट्ठीए ३ एवं चक्खुदंसणे ४ आभिणिबोहियनाणे ५ मतिअन्नाणे ३ आहारसन्नाए ४ एवं ओरालियसरीरे ५ एवं मणजोए ३ सागारोवओगे अणागारोवओगे वट्टमाणस्स अण्णे जीवे अन्ने जीवाया, से कहमेयं भंते ! एवं ?, गोयमा ! जण्णं ते अन्नउत्थिया एवमाइक्खंति जाव मिच्छं ते एवमाहंसु, अहं पुण गोयमा ! एवमाइक्खामि जाव परूवेमि– एवं खलु पाणातिवाए जाव मिच्छादंसणसल्ले वट्टमाणस्स सचेव जीवे सचेव जीवाया जाव अणागारोवओगे वट्टमाणस्स सचेव जीवे सचेव जीवाया (सूत्रं५९६)॥ देवे णं भंते! महड्ढीए जाव महेस० पुव्वामेव रूवी भवित्ता पभू अरूविं विउव्वित्ताणं चिट्ठित्तए ?, णो तिणट्ठे समट्ठे, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुचइ देवे णं जाव नो पभू अरूविं विउव्वित्ताणं चिट्ठित्तए ?, गोयमा ! अहमेयं जाणामि अहमेयं पासामि अहमेयं बुज्झामि अहमेयं अभिसमन्नागच्छामि, मए एयं नायं मए एयं दिट्ठं मए एयं बुद्धं मए एयं अभिसमन्नागयं जण्णं तहागयस्स जीवस्स सरूविस्स सकम्मस्स सरागस्स सवेदणस्स समोहस्स सलेसस्स ससरीरस्स ताओ सरीराओ अविप्पमुक्कस्स एवं पन्नायति, तंजहा–कालत्ते वा जाव सुक्किल्लत्ते वा सुब्भिगंधत्ते वा दुब्भिगंधत्ते वा तित्ते वा जाव महुर० कक्खडत्ते जाव लुक्खत्ते, से तेणट्ठेणं गोयमा ! जाव चिट्ठित्तए ॥ सचेव णं भंते ! से जीवे

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पुव्वामेव अरूवी भवित्ता पभू रूविं विउव्वित्ताणं चिट्ठित्तए ?, णो तिणट्ठे० जाव चि०, गो० ! अहमेयं जाणामि जाव जन्नं तहागयस्स जीवस्स अरूवस्स अकम्म० अराग० अवेदस्स अमोहस्स अलेसस्स असरीरस्स ताओ सरीराओ विप्पमुक्कस्स णो एवं पन्नायति, तं०–कालत्ते वा जाव लुक्खत्ते वा, से तेणट्ठेणं जाव चिट्ठित्तए वा ॥ सेवं भंते ! २ त्ति (सूत्रं ५९७) ॥ १७–२ ॥

'अन्नउत्थिया ण'मित्यादि, प्राणातिपातादिषु वर्त्तमानस्य देहिनः 'अन्ने जीवे'त्ति जीवति–प्राणान् धारयतीति जीवः–शरीरं प्रकृतिरित्यर्थः स चान्यो–व्यतिरिक्तः अन्यो जीवस्य–देहस्य सम्बन्धी अधिष्ठातृत्वादात्मा–जीवात्मा पुरुष इत्यर्थः, अन्यत्वं च तयोः पुद्गलापुद्गलस्वभावत्वात्, ततश्च शरीरस्य प्राणातिपातादिषु वर्त्तमानस्य दृश्यत्वाच्छरीरमेव तत्कर्तृ न पुनरात्मेत्येके, अन्ये त्वाहुः–जीवतीति जीवो–नारकादिपर्यायः जीवात्मा तु सर्वभेदानुगामि जीवद्रव्यं, द्रव्यपर्याययोश्चान्यत्वं तथाविधप्रतिभासभेदनिबन्धनत्वात् घटपटादिवत्, तथाहि–द्रव्यमनुगताकारां बुद्धिं जनयति पर्यायास्त्वननुगताकारामिति, अन्ये त्वाहुः–अन्यो जीवोऽन्यश्च जीवात्मा–जीवस्यैव स्वरूपमिति, प्राणातिपातादिविचित्रक्रियाभिधानं चेह सर्वावस्थासु जीवजीवात्मनोर्भेदख्यापनार्थमिति परमतं, स्वमतं तु 'सचेव जीवे सचेव जीवाय'त्ति स एव जीवः–शरीरं स एव जीवात्मा जीव इत्यर्थः कथञ्चिदिति गम्यं, न ह्यनयोरत्यन्तं भेदः, अत्यन्तभेदे देहेन स्पृष्टस्यासंवेदनप्रसङ्गो देहकृतस्य च कर्म्मणो जन्मान्तरे वेदनाभावप्रसङ्गः, अन्यकृतस्यान्यसंवेदने चाकृताभ्यागमप्रसङ्गः, अत्यन्तमभेदे च परलोकाभाव इति, द्रव्यपर्यायव्याख्यानेऽपि न द्रव्यपर्याययोरत्यन्तं भेदस्तथाऽनुपलब्धेः, यश्च प्रतिभासभेदो नासावात्यन्तिकतद्भे-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

दकृतः किन्तु पदार्थानामेव तुल्यातुल्यरूपकृत इति, जीवात्मा–जीवस्वरूपं, इह तु व्याख्याने स्वरूपवतो न स्वरूपमत्यन्तं भिन्नं, भेदे हि निःस्वरूपता तस्य प्राप्नोति, न च शब्दभेदे वस्तुनो भेदोऽस्ति, शिलापुत्रकस्य वपुरित्यादाविवेति ॥ पूर्वं जीवद्रव्यस्य तत्पर्यायस्य वा भेद उक्तः, अथ जीवद्रव्यविशेषस्य पर्यायान्तरापत्तिवक्तव्यतामभिधातुमिदमाह—'देवे ण'मित्यादि, 'पुव्वामेव रूवी भवित्त'त्ति पूर्वं–विवक्षितकालात् शरीरादिपुद्गलसम्बन्धात् मूर्त्तो भूत्वा मूर्त्तः सन्नित्यर्थः प्रभुः 'अरूविं'ति अरूपिणं–रूपातीतममूर्त्तमात्मानमिति गम्यते, 'गोयमा'इत्यादिना स्वकीयस्य वचनस्याव्यभिचारित्वोपदर्शनाय सद्बोधपूर्वकतां दर्शयन्नुत्तरमाह—'अहमेयं जाणामि'त्ति अहम् 'एतत्' वक्ष्यमाणमधिकृतप्रश्ननिर्णयभूतं वस्तु जानामि विशेषपरिच्छेदेनेत्यर्थः 'पासामि'त्ति सामान्यपरिच्छेदतो दर्शनेनेत्यर्थः 'बुज्झामि'त्ति बुद्धे–श्रद्दधे, बोधेः सम्यग्दर्शनपर्यायत्वात्, किमुक्तं भवति ?—'अभिसमागच्छामि'त्ति अभिविधिना साङ्गत्येन चावगच्छामि—सर्वैः परिच्छित्तिप्रकारैः परिच्छिनद्मि, अनेनात्मनो वर्त्तमानकालेऽर्थपरिच्छेदकत्वमुक्तमथातीतकाले एभिरेव धातुभिस्तद्दर्शयन्नाह—'मए'इत्यादि, किं तदभिसमन्वागतम् ? इत्याह—'जन्न'मित्यादि, 'तहागयस्स'त्ति तथागतस्य–तं देवत्वादिकं प्रकारमापन्नस्य 'सरूविस्स'त्ति वर्णगन्धादिगुणवतः, अथ स्वरूपेणामूर्त्तस्य सतो जीवस्य कथमेतत् ? इत्याह—'सकम्मस्स'त्ति कर्म्मपुद्गलसम्बन्धादिति भावः, एतदेव कथमित्यत आह—'सरागस्स'त्ति रागसम्बन्धात् कर्म्मसम्बन्ध इति भावः, रागश्चेह मायालोभलक्षणो ग्राह्यः, तथा 'सवेयस्स'त्ति रुयादिवेदयुक्तस्य, तथा 'समोहस्स'त्ति इह मोहः–कलत्रादिषु स्नेहो मिथ्यात्वं चारित्रमोहो वा 'सलेसस्स ससरीरस्स'त्ति व्यक्तं 'ताओ सरीराओ अविप्पमुक्कस्स'त्ति येन शरीरेण

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

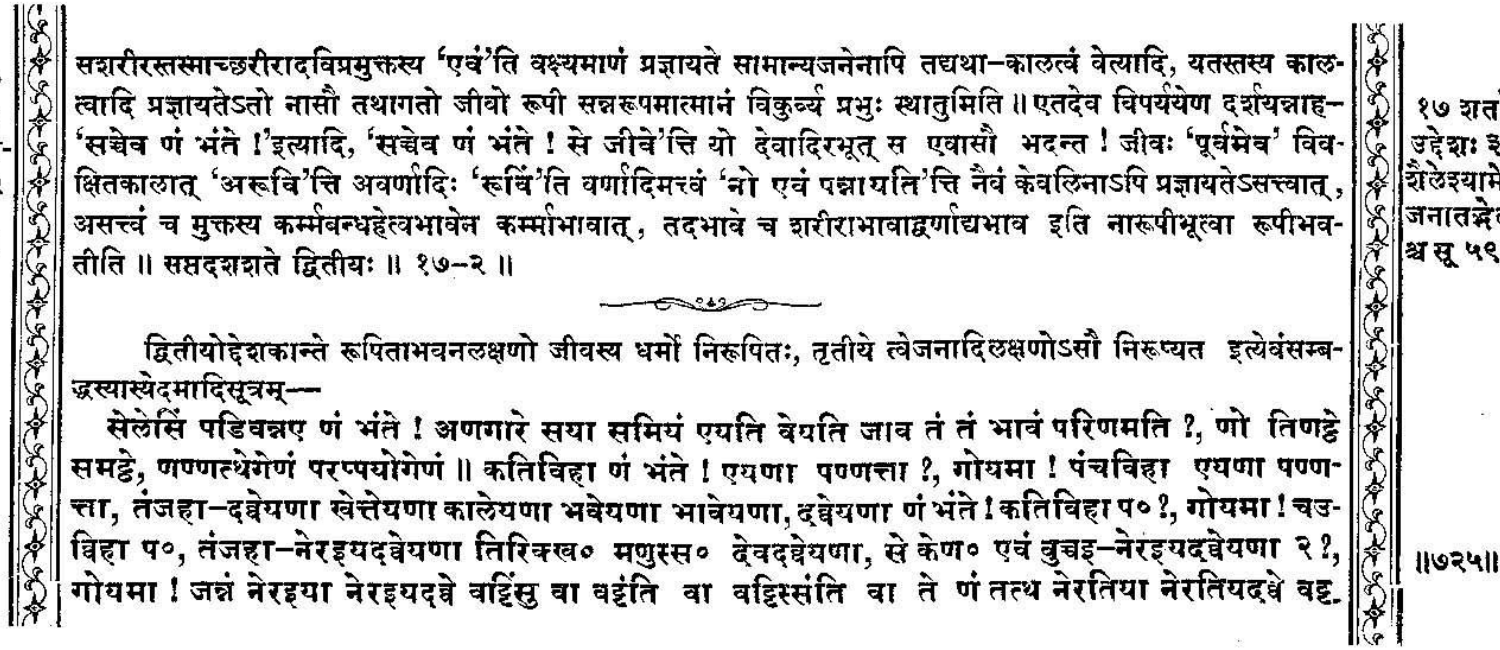

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः२

॥७२५॥

सशरीरस्तस्माच्छरीरादविप्रमुक्तस्य 'एवं'ति वक्ष्यमाणं प्रज्ञायते सामान्यजनेनापि तद्यथा–कालत्वं वेत्यादि, यतस्तस्य कालत्वादि प्रज्ञायतेऽतो नासौ तथागतो जीवो रूपी सन्नरूपमात्मानं विकुर्व्य प्रभुः स्थातुमिति ॥ एतदेव विपर्ययेण दर्शयन्नाह–'सचेव णं भंते !'इत्यादि, 'सचेव णं भंते ! से जीवे'त्ति यो देवादिरभूत् स एवासौ भदन्त ! जीवः 'पूर्वमेव' विवक्षितकालात् 'अरूवि'त्ति अवर्णादिः 'रूविं'ति वर्णादिमत्त्वं 'नो एवं पन्नायति'त्ति नैवं केवलिनाऽपि प्रज्ञायतेऽसत्त्वात्, असत्त्वं च मुक्तस्य कर्म्मबन्धहेत्वभावेन कर्म्माभावात्, तदभावे च शरीराभावाद्वर्णाद्यभाव इति नारूपीभूत्वा रूपीभवतीति ॥ सप्तदशशते द्वितीयः ॥ १७–२ ॥

द्वितीयोद्देशकान्ते रूपिताभवनलक्षणो जीवस्य धर्मो निरूपितः, तृतीये त्वेजनादिलक्षणोऽसौ निरूप्यत इत्येवंसम्बन्धस्यास्येदमादिसूत्रम्—

सेलेसिं पडिवन्नए णं भंते ! अणगारे सया समियं एयति वेयति जाव तं तं भावं परिणमति ?, णो तिणट्ठे समट्ठे, णण्णत्थेगेणं परप्पयोगेणं ॥ कतिविहा णं भंते ! एयणा पण्णत्ता ?, गोयमा ! पंचविहा एयणा पण्णत्ता, तंजहा–दव्वेयणा खेत्तेयणा कालेयणा भवेयणा भावेयणा, दव्वेयणा णं भंते ! कतिविहा प० ?, गोयमा ! चउविहा प०, तंजहा–नेरइयदव्वेयणा तिरिक्ख० मणुस्स० देवदव्वेयणा, से केण० एवं वुच्चइ–नेरइयदव्वेयणा २ ?, गोयमा ! जन्नं नेरइया नेरइयदव्वे वट्टिंसु वा वट्टंति वा वट्टिस्संति वा ते णं तत्थ नेरतिया नेरतियदव्वे वट्ट-

१७ शतके उद्देशः २ शैलेश्यामेजनातद्भेदा श्च सू ५९८

॥७२५॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र सप्तदशमे शतके द्वितीय-उद्देशक: परिसमाप्त:

अत्र सप्तदशमे शतके तृतीय-उद्देशक: आरब्ध:

माणा नेरइयदव्वेयणं एइंसु वा एयंति वा एइस्संति वा, से तेणट्ठेणं जाव दव्वेयणा, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ तिरिक्खजोणियदव्वेयणा एवं चेव, नवरं तिरिक्खजोणियदव्वे० भाणियव्वं, सेसं तं चेव, एवं जाव देवदव्वेयणा । खेत्तेयणा णं भंते ! कतिविहा पण्णत्ता ?, गोयमा ! चउव्विहा प०, तं०–नेरइयखेत्तेयणा जाव देवखेत्तेयणा, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ नेरइयखेत्तेयणा णे० २ ?, एवं चेव नवरं नेरइयखेत्तेयणा भाणियव्वा, एवं जाव देवखेत्तेयणा, एवं कालेयणावि, एवं भवेयणावि, भावेयणावि जाव देवभावेयणा (सूत्रं५९८)॥

'सेलेसि'मित्यादि, 'नन्नत्थेगेणं परप्पओगेणं'ति न इति 'नो इणट्ठे समट्ठे'त्ति योऽयं निषेधः सोऽन्यत्रैकस्मात् परप्रयोगाद्, एजनादिकारणेषु मध्ये परप्रयोगेणैवैकेन शैलेश्यामेजनादि भवति न कारणान्तरेणेति भावः॥ एजनाधिकारादेवेदमाह—'कई'त्यादि, 'दव्वेयण'त्ति द्रव्याणां–नारकादिजीवसंपृक्तपुद्गलद्रव्याणां नारकादिजीवद्रव्याणां वा एजना–चलना द्रव्यैजना 'खेत्तेयण'त्ति क्षेत्रे–नारकादिक्षेत्रे वर्त्तमानानामेजना क्षेत्रैजना 'कालेयण'त्ति काले–नारकादिकाले वर्त्तमानानामेजना कालैजना 'भवेयण'त्ति भवे–नारकादिभवे वर्त्तमानानामेजना भवैजना 'भावेयण'त्ति भावे–औदयिकादिरूपे वर्त्तमानानां नारकादीनां तद्गतपुद्गलद्रव्याणां वैजना भावैजना, 'नेरइयदव्वे वट्टिंसु'त्ति नैरयिकलक्षणं यज्जीवद्रव्यं द्रव्यपर्यायययोः कथञ्चिदभेदान्नारकत्वमेवेत्यर्थः तत्र 'वट्टिंसु'त्ति वृत्तवन्तः 'नेरइयदव्वेयण'त्ति नैरयिकजीवसंपृक्तपुद्गलद्रव्याणां नैरयिकजीवद्रव्याणां वैजना नैरयिकद्रव्यैजना ताम् 'एइंसु'त्ति ज्ञातवन्तोऽनुभूतवन्तो वेत्यर्थः॥ एजनाया एव विशेषमधिकृत्याह—

कतिविहा णं भंते ! चलणा पण्णत्ता ?, गोयमा ! तिविहा चलणा प०, तं०–सरीरचलणा इंदियचलणा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥७२६॥

जोगचलणा, सरीरचलणा णं भंते ! कतिविहा प० ?, गोयमा ! पंचविहा प०, तं०–ओरालियसरीरचलणा जाव कम्मगसरीरचलणा, इंदियचलणा णं भंते ! कतिविहा प० ?, गोयमा ! पंचविहा पण्णत्ता, तंजहा— सोइंदियचलणा जाव फासिंदियचलणा, जोगचलणा णं भंते ! कतिविहा प० ?, गो० ! तिविहा प०, तं०— मणजोगचलणा वइजोगचलणा कायजोगचलणा, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ ओरालियसरीरचलणा ओ० २ ?, गोयमा ! जे णं जीवा ओरालियसरीरे वट्टमाणा ओरालियसरीरपयोगाइं दव्वाइं ओरालियसरीरत्ताए परिणामेमाणा ओरालियसरीरचलणं चलिंसु वा चलंति वा चलिस्संति वा से तेणट्ठेणं जाव ओरालियसरीरचलणा०ओ० २, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वु० वेउव्वियसरीरचलणा वेउ०, एवं चेव नवरं वेउव्वियसरीरे वट्टमाणा एवं जाव कम्मगसरीरचलणा, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वु० सोइंदियचलणा २ ?, गोयमा ! जन्नं जीवा सोइंदिए.वट्टमाणा सोइंदियपाओगाइं दव्वाइं सोइंदियत्ताए परिणामेमाणा सोइंदियचलणं चलिंसु वा चलंति वा चलिस्संति वा से तेणट्ठेणं जाव सोतिंदियचलणा सो० २, एवं जाव फासिंदियचलणा, से केणट्ठेणं एवं वुच्चइ मणोजोगचलणा २ ?, गोयमा ! जण्णं जीवा मणजोए वट्टमाणा मणजोगप्पाओगाइं दव्वाइं मणजोगत्ताए परिणामेमाणा मणजोगचलणं चलिंसु वा चलिंति वा चलिस्संति वा से तेणट्ठेणं जाव मणजोगचलणा मण० २, एवं वइजोगचलणावि, एवं कायजोगचलणावि ॥ (सू० ५९९) अह भंते ! संवेगे निव्वेए गुरुसाहम्मियसुस्सूसणया आलोयणया निंदणया गरहणया खमावणया सुयसहायता विउसमणया भावे अप्पडिबद्धया

१७ शतके उद्देशः ३ चलनात-भेदाश्च सू ५९९

॥७२६॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विणिवट्टणया विवित्तसयणासणसेवणया सोइंदियसंवरे जाव फासिंदियसंवरे जोगपच्चक्खाणे सरीरपच्चक्खाणे कसायपच्चक्खाणे संभोगपच्चक्खाणे उवहिपच्चक्खाणे भत्तपच्चक्खाणे खमा विरागया भावसच्चे जोगसच्चे करणसच्चे मणसमण्णाहरणया वयसमन्नाहरणया कायसमन्नाहरणया कोहविवेगे जावमिच्छादंसणसल्लविवेगे णाणसंपन्नया दंसणसं० चरित्तसं० वेदणअहियासणया मारणंतियअहियासणया एए णं भन्ते ! पया किंपज्जवसाणफला पण्णत्ता ?, समणाउसो ! गोयमा ! संवेगे निव्वेगे जाव मारणंतियअहियास० एए णं सिद्धिपज्जवसाणफला पं० समणाउसो ! ॥ सेवं भंते ! २ जाव विहरति ॥ (सूत्रं ६००) ॥ १७–३ ॥

'कई'त्यादि, 'चलण'त्ति एजना एव स्फुटतरस्वभावा 'सरीरचलण'त्ति शरीरस्य–औदारिकादेश्चलना–तत्प्रायोग्यपुद्गलानां तद्रूपतया परिणमने व्यापारः शरीरचलना, एवमिन्द्रिययोगचलने अपि, 'ओरालियसरीरचलणं चलिंसु'त्ति औदारिकशरीरचलनां कृतवन्तः ॥ अनन्तरं चलनाधर्मो भेदत उक्तः, अथ संवेगादिधर्मान् फलतोऽभिधित्सुरिदमाह— 'अहे'त्यादि, अथेति परिप्रश्नार्थः 'संवेए'त्ति संवेजनं संवेगो–मोक्षाभिलाषः 'निव्वेए'त्ति निर्वेदः–संसारविरक्तता 'गुरुसाहम्मियसुस्सूसणय'त्ति गुरूणां–दीक्षाद्याचार्याणां साधर्म्मिकाणां च–सामान्यसाधूनां या शुश्रूषणता–सेवा सा तथा 'आलोयण'त्ति आ–अभिविधिना सकलदोषाणां लोचना–गुरुपुरतः प्रकाशना आलोचना सैवालोचनता 'निंदणय'त्ति निन्दनं–आत्मनैवात्मदोषपरिकुत्सनं 'गरहणय'त्ति गर्हणं–परसमक्षमात्मदोषोद्भावनं 'खमावणय'त्ति परस्यासन्तोषवतः क्षमोत्पादनं 'विउसमणय'त्ति व्यवशमनता–परस्मिन् क्रोधान्निवर्त्तयति सति क्रोधोज्झनं, एतच्च क्वचिन्न दृश्यते, 'सुयस

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥७२७॥

हायय'त्ति श्रुतमेव सहायो यस्यासौ श्रुतसहायस्तद्भावस्तत्ता, 'भावे अप्पडिबद्धय'त्ति भावे–हासादावप्रतिबद्धता–अनुबन्धवर्जनं 'विणिवट्टणय'त्ति विनिवर्त्तनं–विरमणमसंयमस्थानेभ्यः 'विवित्तसयणासणसेवणय'त्ति विविक्तानि–स्त्र्याद्यसंसक्तानि यानि शयनासनानि उपलक्षणत्वादुपाश्रयश्च तेषां या सेवना सा तथा श्रोत्रेन्द्रियसंवरादयः प्रतीताः 'जोगपच्चक्खाणे'त्ति कृतकारितानुमतिलक्षणानां मनःप्रभृतिव्यापाराणां प्राणातिपातादिषु प्रत्याख्यानं–निरोधप्रतिज्ञानं योगप्रत्याख्यानं, 'सरीरपच्चक्खाणे'त्ति शरीरस्य प्रत्याख्यानं–अभिष्वङ्गप्रतिवर्जनपरिज्ञानं शरीरप्रत्याख्यानं 'कसायपच्चक्खाणे'त्ति क्रोधादिप्रत्याख्यानं–तान् न करोमीति प्रतिज्ञानं 'संभोगपच्चक्खाणे'त्ति समिति–संकरेण स्वपरलाभमीलनात्मकेन भोगः सम्भोगः–एकमण्डलीभोक्तृकत्वमित्येकोऽर्थः तस्य यत् प्रत्याख्यानं–जिनकल्पादिप्रतिपत्त्या परिहारस्तत्तथा, 'उवहिपच्चक्खाणे'त्ति उपधेरधिकस्य नियमः भक्तप्रत्याख्यानं व्यक्तं 'खम'त्ति क्षान्तिः 'विरागय'त्ति वीतरागता–रागद्वेषापगमरूपा 'भावसच्चे'त्ति भावसत्यं–शुद्धान्तरात्मतारूपं पारमार्थिकावितथत्वमित्यर्थः 'जोगसच्चे'त्ति योगाः–मनोवाक्कायास्तेषां सत्यं–अवितथत्वं योगसत्यं 'करणसच्चे'त्ति करणे–प्रतिलेखनादौ सत्यं–यथोक्तत्वं करणसत्यं 'मणसमन्नाहरणय'त्ति मनसः समिति–सम्यक् अन्विति–स्वावस्थानुरूपेण आङिति–मर्यादया आगमाभिहितभावाभिव्याप्त्या वा हरणं–सङ्क्षेपणं मनःसमन्वाहरणं तदेव मनःसमन्वाहरणता, एवमितरे अपि, 'कोहविवेगे'त्ति क्रोधविवेकः–कोपत्यागः तस्य दुरन्ततादिपरिभावनेनोदयनिरोधः 'वेयणअहियासणय'त्ति क्षुधादिपीडासहनं 'मारणंतियअहियासणय'त्ति कल्याणमित्रबुद्ध्या मारणान्तिकोपसर्गसहनमिति ॥ सप्तदशशते तृतीयः ॥ १७–३ ॥

१७ शतके उद्देशः ३ चलनातद्भेदाश्च सू ५९९

॥७२७॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	अत्र सप्तदशमे शतके तृतीय-उद्देशक: परिसमाप्त:

तृतीयोद्देशके एजनादिका क्रियोक्ता, चतुर्थेऽपि क्रियैवोच्यते इत्येवंसम्बन्धस्यास्येदमादिसूत्रम्—

तेणं कालेणं २ रायगिहे नगरे जाव एवं वयासी–अत्थि णं भंते ! जीवाणं पाणाइवाएणं किरिया कज्जइ ?, हंता अत्थि, सा भंते ! किं पुट्ठा कज्जइ अपुट्ठा कज्जइ ?, गोयमा ! पुट्ठा कज्जइ नो अपुट्ठा कज्जइ, एवं जहा पढमसए छट्ठुद्देसए जाव नो अणाणुपुव्विकडाति वत्तव्वं सिया, एवं जाव वेमाणियाणं, नवरं जीवाणं एगिंदियाण य निव्वाघाएणं छद्दिसिं वाघायं पडुच्च सिय तिदिसिं सिय चउदिसिं सिय पंचदिसिं सेसाणं नियमं छद्दिसिं। अत्थि णं भंते ! जीवाणं मुसावाएणं किरिया कज्जइ ?, हंता अत्थि, सा भंते ! किं पुट्ठा कज्जइ जहा पाणाइवाएणं दंडओ एवं मुसावाएणवि, एवं अदिन्नादाणेणवि मेहुणेणवि परिग्गहेणवि, एवं एए पंच दंडगा ५। जंसमयन्नं भंते ! जीवाणं पाणाइवाएणं किरिया कज्जइ सा भंते ! किं पुट्ठा कज्जइ अपुट्ठा कज्जइ, एवं तहेव जाव वत्तव्वं सिया जाव वेमाणियाणं, एवं जाव परिग्गहेणं, एवं एतेवि पंच दंडगा १०। जंदेसेणं भंते ! जीवाणं पाणाइवाएणं किरिया कज्जति एवं चेव जाव परिग्गहेणं, एवं एतेवि पंच दंडगा १५। जंपएसन्नं भंते ! जीवाणं पाणाइवाएणं किरिया कज्जइ सा भंते ! किं पुट्ठा कज्जति एवं तहेव दण्डओ एवं जाव परिग्गहेणं २०, एवं एए वीसं दंडगा। (सूत्रं ६०१) जीवाणं भंते ! किं अत्तकडे दुक्खे परकडे दुक्खे तदुभयकडे दुक्खे ?, गोयमा ! अत्तकडे दुक्खे नो परकडे दुक्खे नो तदुभयकडे दुक्खे, एवं जाव वेमाणियाणं, जीवा णं भंते ! किं अत्तकडं दुक्खं वेदेंति परकडं दुक्खं वेदेंति तदुभयकडं दुक्खं वेदेंति ?, गोयमा ! अत्तकडं दुक्खं वेदेंति नो

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र सप्तदशमे शतके चतुर्थ-उद्देशक: आरभ्यते

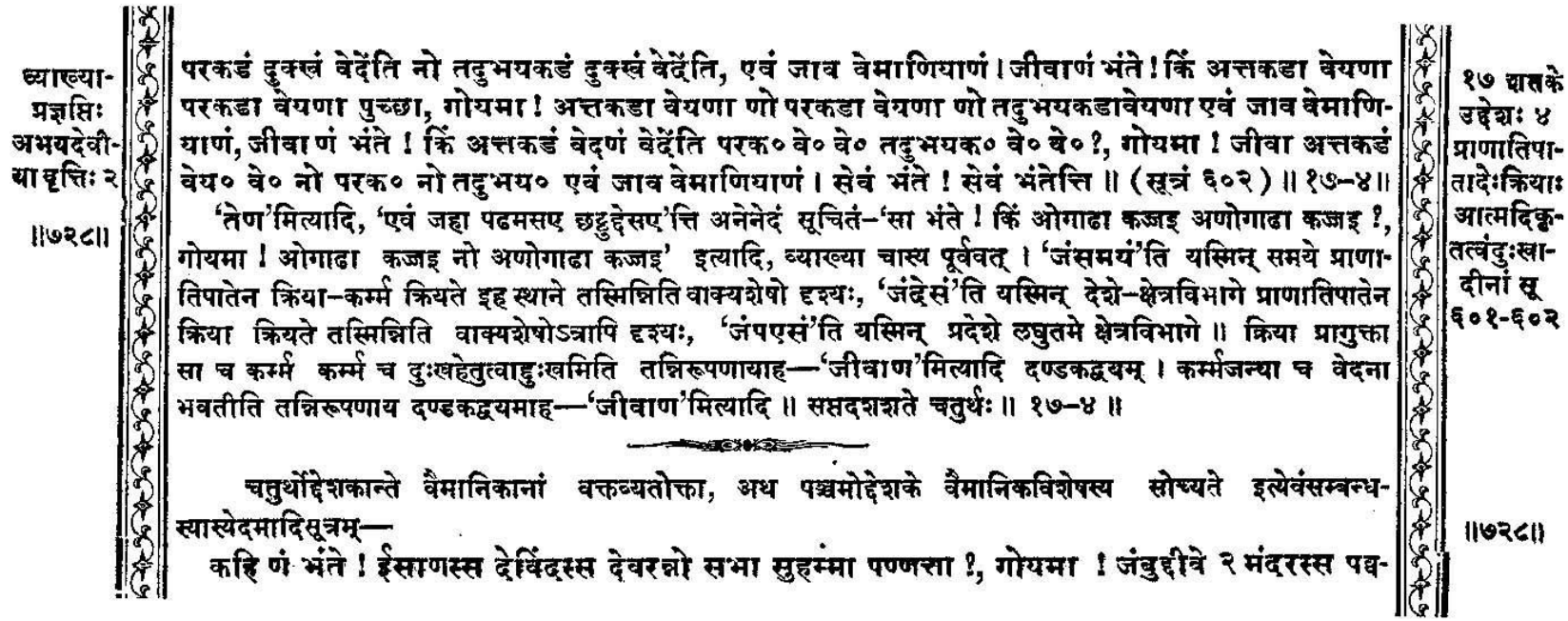

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥७२८॥

परकडं दुक्खं वेदेंति नो तदुभयकडं दुक्खं वेदेंति, एवं जाव वेमाणियाणं। जीवाणं भंते! किं अत्तकडा वेयणा परकडा वेयणा पुच्छा, गोयमा! अत्तकडा वेयणा णो परकडा वेयणा णो तदुभयकडावेयणा एवं जाव वेमाणियाणं, जीवा णं भंते! किं अत्तकडं वेदणं वेदेंति परक० वे० वे० तदुभयक० वे० वे०?, गोयमा! जीवा अत्तकडं वेय० वे० नो परक० नो तदुभय० एवं जाव वेमाणियाणं। सेवं भंते! सेवं भंतेत्ति ॥ (सूत्रं ६०२) ॥ १७–४॥

'तेण'मित्यादि, 'एवं जहा पढमसए छट्ठुद्देसए'त्ति अनेनेदं सूचितं–'सा भंते! किं ओगाढा कज्जइ अणोगाढा कज्जइ?, गोयमा! ओगाढा कज्जइ नो अणोगाढा कज्जइ' इत्यादि, व्याख्या चास्य पूर्ववत्। 'जंसमयं'ति यस्मिन् समये प्राणातिपातेन क्रिया–कर्म्म क्रियते इह स्थाने तस्मिन्निति वाक्यशेषो दृश्यः, 'जंदेसं'ति यस्मिन् देशे–क्षेत्रविभागे प्राणातिपातेन क्रिया क्रियते तस्मिन्निति वाक्यशेषोऽत्रापि दृश्यः, 'जंपएसं'ति यस्मिन् प्रदेशे लघुतमे क्षेत्रविभागे॥ क्रिया प्रागुक्ता सा च कर्म्म कर्म्म च दुःखहेतुत्वाद्दुःखमिति तन्निरूपणायाह—'जीवाण'मित्यादि दण्डकद्वयम्। कर्म्मजन्या च वेदना भवतीति तन्निरूपणाय दण्डकद्वयमाह—'जीवाण'मित्यादि॥ सप्तदशशते चतुर्थः॥ १७–४॥

चतुर्थोद्देशकान्ते वैमानिकानां वक्तव्यतोक्ता, अथ पञ्चमोद्देशके वैमानिकविशेषस्य सोच्यते इत्येवंसम्बन्धस्यास्येदमादिसूत्रम्—

कहि णं भंते! ईसाणस्स देविंदस्स देवरन्नो सभा सुहम्मा पण्णत्ता?, गोयमा! जंबुद्दीवे २ मंदरस्स पव-

१७ शतके उद्देशः ४ प्राणातिपातादेःक्रियाः आत्मदिकृतत्वंदुःखादीनां सू ६०१-६०२

॥७२८॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	अत्र सप्तदशमे शतके चतुर्थ-उद्देशक: परिसमाप्त: अथ सप्तदशमे शतके पंचम-उद्देशक: आरभ्यते

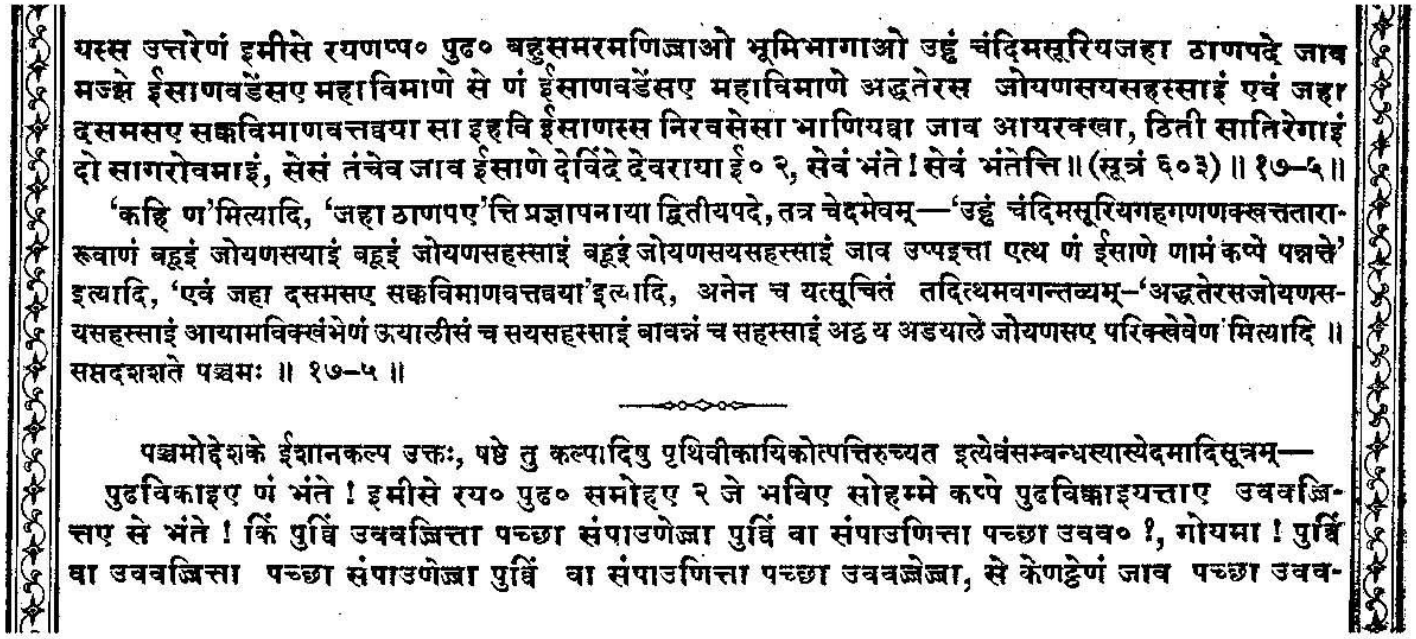

यस्स उत्तरेणं इमीसे रयणप्प० पुढ० बहुसमरमणिज्जाओ भूमिभागाओ उड्ढं चंदिमसूरियजहा ठाणपदे जाव मज्झे ईसाणवडेंसए महाविमाणे से णं ईसाणवडेंसए महाविमाणे अद्धतेरस जोयणसयसहस्साइं एवं जहा दसमसए सक्कविमाणवत्तव्वया सा इहवि ईसाणस्स निरवसेसा भाणियव्वा जाव आयरक्खा, ठिती सातिरेगाइं दो सागरोवमाइं, सेसं तंचेव जाव ईसाणे देविंदे देवराया ई० २, सेवं भंते ! सेवं भंतेत्ति ॥ (सूत्रं ६०३) ॥ १७–५ ॥

'कहि ण'मित्यादि, 'जहा ठाणपए'त्ति प्रज्ञापनाया द्वितीयपदे, तत्र चेदमेवम्—'उड्ढं चंदिमसूरियगहगणणक्खत्ततारारूवाणं बहूइं जोयणसयाइं बहूइं जोयणसहस्साइं बहूइं जोयणसयसहस्साइं जाव उप्पइत्ता एत्थ णं ईसाणे णामं कप्पे पन्नत्ते' इत्यादि, 'एवं जहा दसमसए सक्कविमाणवत्तव्वया'इत्यादि, अनेन च यत्सूचितं तदित्थमवगन्तव्यम्–'अद्धतेरसजोयणसयसहस्साइं आयामविक्खंभेणं ऊयालीसं च सयसहस्साइं बावन्नं च सहस्साइं अट्ठ य अडयाले जोयणसए परिक्खेवेण'मित्यादि ॥ सप्तदशशते पञ्चमः ॥ १७–५ ॥

पञ्चमोद्देशके ईशानकल्प उक्तः, षष्ठे तु कल्पादिषु पृथिवीकायिकोत्पत्तिरुच्यत इत्येवंसम्बन्धस्यास्येदमादिसूत्रम्—

पुढविकाइए णं भंते ! इमीसे रय० पुढ० समोहए २ जे भविए सोहम्मे कप्पे पुढविकाइयत्ताए उववज्जित्तए से भंते ! किं पुविं उववज्जित्ता पच्छा संपाउणेज्जा पुविं वा संपाउणित्ता पच्छा उवव० ?, गोयमा ! पुविं वा उववज्जित्ता पच्छा संपाउणेज्जा पुविं वा संपाउणित्ता पच्छा उववज्जेज्जा, से केणट्ठेणं जाव पच्छा उवव-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र सप्तदशमे शतके पंचम-उद्देशक: परिसमाप्त:

अथ सप्तदशमे शतके षष्ठात् सप्तदशपर्यन्ता: उद्देशका: आरभ्यते

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २

॥७२९॥

जेज्जा ?, गोयमा ! पुढविक्काइयाणं तओ समुग्घाया पं०, तं०–वेदणासमुग्घाए कसायसमुग्घाए मारणंतियसमुग्घाए, मारणंतियसमुग्घाएणं समोहणमाणे देसेण वा समोहणति सव्वेण वा समोहणति देसेणं समोहणमाणे पुव्विं संपाउणित्ता पच्छा उववज्जिज्जा, सव्वेणं समोहणमाणे पुव्विं उववज्जेत्ता पच्छा संपाउणेज्जा, से तेणट्ठेणं जाव उववज्जिज्जा । पुढविक्काइए णं भंते ! इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए जाव समोहए स० २ जे भविए ईसाणे कप्पे पुढवि एवं चेव ईसाणेवि, एवं जाव अच्चुयगेविज्जविमाणे, अणुत्तरविमाणे ईसिपब्भाराए य एवं चेव । पुढविकाइए णं भंते ! सक्करप्पभाए पुढवीए समोहए २ स० जे भविए सोहम्मे कप्पे पुढवि० एवं जहा रयणप्पभाए पुढविकाइए उववाइओ एवं सक्करप्पभाएवि पुढविकाइओ उववाएयव्वो जाव ईसिपब्भाराए, एवं जहा रयणप्पभाए वत्तव्वया भणिया एवं जाव अहेसत्तमाए समोहए ईसीपब्भाराए उववाएयव्वो । सेवं भंते ! २ त्ति ॥ (सूत्रं ६०४) ॥ १७–६ ॥ पुढविकाइए णं भंते ! सोहम्मे कप्पे समोहए समोहणित्ता जे भविए इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए पुढवीकाइयत्ताए उववज्जित्तए से णं भंते ! किं पुव्विं सेसं तं चेव जहा रयणप्पभापुढविकाइए सव्वकप्पेसु जाव ईसिपब्भाराए ताव उववाइओ एवं सोहम्मपुढविकाइओवि सत्तसुवि पुढवीसु उववाएयव्वो जाव अहेसत्तमाए, एवं जहा सोहम्मपुढविकाइओ सव्वपुढवीसु उववाइओ एवं जाव ईसिपब्भारापुढविकाइओ सव्वपुढवीसु उववाएयव्वो जाव अहेसत्तमाए, सेवं भंते ! २ ॥ (सूत्रं ६०५) ॥ १७–७ ॥ आउक्काइए णं भंते ! इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए समोह० २ जे भविए सोहम्मे कप्पे आउकाइ-

१७ शतके उद्देशः ५ ईशानसुधर्मसभा सू ६०३ उ.६-१७ पृथ्वादीनां संघातोत्पादौ

॥७२९॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

यत्ताए उववज्जित्तए एवं जहा पुढविकाइओ तहा आउकाइओवि सव्वकप्पेसु जाव ईसिपब्भाराए तहेव उववाएयव्वो एवं जहा रयणप्पभाआउकाइओ उववाइओ तहा जाव अहेसत्तमापुढविआउकाइओ उववाएयव्वो जाव ईसिपब्भाराए, सेवं भंते ! २॥ (सूत्रं ६०६)॥ १७–८ ॥ आउकाइए णं भंते ! सोहम्मे कप्पे-समोहए समोह० जे भविए इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए घणोदधिवलएसु आउकाइयत्ताए उववज्जित्तए से णं भंते ! सेसं तं चेव एवं जाव अहेसत्तमाए जहा सोहम्मआउक्काइओ एवं जाव ईसिपब्भाराआउक्का-इओ जाव अहेसत्तमाए उववाएयव्वो, सेवं भंते ! २ ॥ (सूत्रं ६०७) ॥ १७–९ ॥ वाउक्काइए णं भंते ! इमीसे रयणप्पभाए जाव जे भविए सोहम्मे कम्मे वाउक्काइयत्ताए उववज्जित्तए से णं जहा पुढविकाइओ तहा वाउ-काइओवि नवरं वाउक्काइयाणं चत्तारि समुग्घाया पं०, तं०–वेदणासमुग्घाए जाव वेउव्वियसमुग्घाए, मारणं-तियसमुग्घाएणं समोहणमाणे देसेण वा समो० सेसं तं चेव जाव अहेसत्तमाए समोहओ ईसिपब्भाराए उववाएयव्वो, सेवं भंते ! २ ॥ (सूत्रं ६०८) ॥ १७–१० ॥ वाउक्काइए णं भंते ! सोहम्मे कप्पे समोहए स० २ जे भविए इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए घणवाए तणुवाए घणवायवलएसु तणुवायवलएसु वाउक्काइयत्ताए उववज्जेत्तए से णं भंते ! सेसं तं चेव एवं जहा सोहम्मे वाउकाइओ सत्तसुवि पुढवीसु उववाइओ एवं जाव ईसिपब्भाराए वाउक्काइओ अहेसत्तमाए जाव उववाएयव्वो, सेवं भंते ! २ ॥ (सूत्रं ६०९) ॥ १७–११ ॥ एगिंदियाणं भंते ! सव्वे समाहरा सव्वे समसरीरा एवं जहा पढमसए बितियउद्देसए पुढविक्काइयाणं वत्त-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥७३०॥

यथा भणिया सा चेव एगिंदियाणं इह भाणियव्वा जाव समाउया समोववन्नगा। एगिंदिया णं भंते ! कति लेस्साओ प० ?, गोयमा ! चत्तारि लेस्साओ पं०, तं–कण्हलेस्सा जाव तेउलेस्सा। एएसि णं भंते ! एगिंदियाणं कण्हलेस्साणं जाव विसेसाहिया वा ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा एगिंदियाणं तेउलेस्सा काउलेस्सा अणंतगुणा णीललेस्सा विसेसाहिया कण्हलेसा विसेसाहिया। एएसि णं भंते ! एगिंदिया णं कण्हलेस्सा इहं जहेव दीवकुमाराणं, सेवं भंते ! २ ॥ (सूत्रं ६१०) ॥ १७–१२ ॥ नागकुमारा णं भंते ! सव्वे समाहारा जहा सोलसमसए दीवकुमारुद्देसे तहेव निरवसेसं भाणियव्वं जाव इहीति, सेवं भंते ! सेवं भंते ! जाव विहरति ॥ (सूत्रं ६११) ॥ १७–१३ ॥ सुवन्नकुमारा णं भंते ! सव्वे समाहारा एवं चेव सेवं भंते ! २ ॥ (सूत्रं ६१२) ॥ ॥ १७–१४ ॥ विज्जुकुमारा णं भंते ! सव्वे समाहारा एवं चेव, सेवं भंते ! २ ॥ (सूत्रं ६१३) ॥ १७–१५ ॥ वायुकुमारा णं भंते ! सव्वे समाहारा एवं चेव, सेवं भंते ! २ ॥ (सूत्रं ६१४) ॥ १७–१६ ॥ अग्गिकुमारा णं भंते ! सव्वे समाहारा एवं चेव, सेवं भंते ! २ ॥ (सूत्रं ६१५) ॥ १७–१७ ॥ सत्तरसमं सयं समत्तं ॥ १७ ॥

'पुढविकाइए ण'मित्यादि, 'समोहए'ति समवहतः–कृतमारणान्तिकसमुद्घातः 'उववज्जित्त'त्ति उत्पादक्षेत्रं गत्वा 'संपाउणेज्ज'त्ति पुद्गलग्रहणं कुर्यात् उत व्यत्ययः ? इति प्रश्नः, 'गोयमा ! पुव्विं वा उववज्जित्ता पच्छा संपाउणेज्ज'त्ति मारणान्तिकसमुद्घातान्निवृत्य यदा प्राक्तनशरीरस्य सर्वथात्यागाद् गेन्दुकगत्योत्पत्तिदेशं गच्छति तदोच्यते पूर्वमुत्पद्य पश्चात्संप्राप्नुयात्–पुद्गलान् गृह्णीयात् आहारयेदित्यर्थः, 'पुव्विं वा संपाउणित्ता पच्छा उववज्जेज्ज'त्ति यदा मारणान्तिकसमु-

१७ शतके उद्देशः ५ ईशानसुधर्मसभा सू ६०३ उ.६-१७ पृथ्वादीनां संप्राप्त्युत्पादौ

॥७३०॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [६०४-६१५]

दीप अनुक्रम [७०९--७२०]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

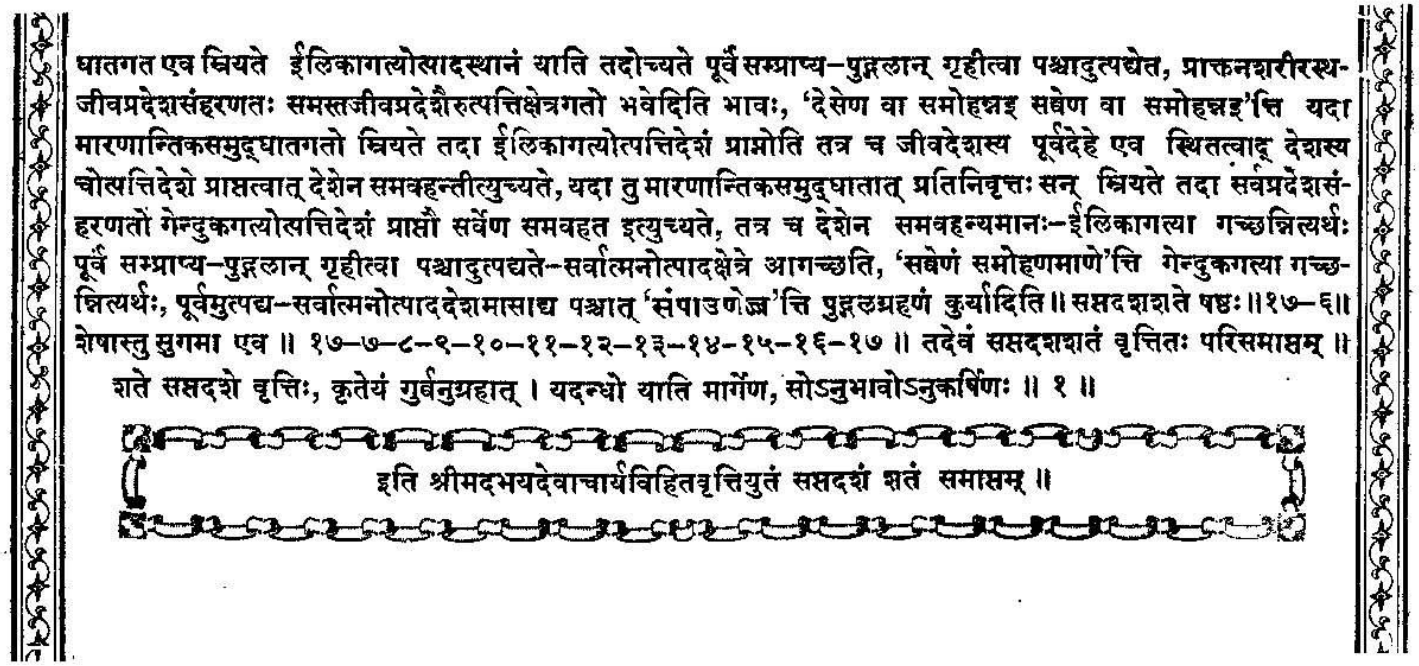

घातगत एव म्रियते ईलिकागत्योत्पादस्थानं याति तदोच्यते पूर्वं सम्प्राप्य–पुद्गलान् गृहीत्वा पश्चादुत्पद्येत, प्राक्तनशरीरस्थजीवप्रदेशसंहरणतः समस्तजीवप्रदेशैरुत्पत्तिक्षेत्रगतो भवेदिति भावः, 'देसेण वा समोहण्इ सव्वेण वा समोहण्इ'त्ति यदा मारणान्तिकसमुद्घातगतो म्रियते तदा ईलिकागत्योत्पत्तिदेशं प्राप्नोति तत्र च जीवदेशस्य पूर्वदेहे एव स्थितत्वाद् देशस्य चोत्पत्तिदेशे प्राप्तत्वात् देशेन समवहन्तीत्युच्यते, यदा तु मारणान्तिकसमुद्घातात् प्रतिनिवृत्तः सन् म्रियते तदा सर्वप्रदेशसंहरणतो गेन्दुकगत्योत्पत्तिदेशं प्राप्तौ सर्वेण समवहत इत्युच्यते, तत्र च देशेन समवहन्यमानः–ईलिकागत्या गच्छन्नित्यर्थः पूर्वं सम्प्राप्य–पुद्गलान् गृहीत्वा पश्चादुत्पद्यते–सर्वात्मनोत्पादक्षेत्रे आगच्छति, 'सव्वेणं समोहणमाणे'त्ति गेन्दुकगत्या गच्छन्नित्यर्थः, पूर्वमुत्पद्य–सर्वात्मनोत्पाददेशमासाद्य पश्चात् 'संपाउणेज्ज'त्ति पुद्गलग्रहणं कुर्यादिति॥ सप्तदशशते षष्ठः॥१७–६॥ शेषास्तु सुगमा एव ॥ १७–७–८–९–१०–११–१२–१३–१४–१५–१६–१७ ॥ तदेवं सप्तदशशतं वृत्तितः परिसमाप्तम् ॥

शते सप्तदशे वृत्तिः, कृतेयं गुर्वनुग्रहात् । यदन्धो याति मार्गेण, सोऽनुभावोऽनुकर्षिणः ॥ १ ॥

इति श्रीमदभयदेवाचार्यविहितवृत्तियुतं सप्तदशं शतं समाप्तम् ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र सप्तदशमे शतके षष्ठात् सप्तदश: पर्यन्ता: उद्देशका: परिसमाप्ता:

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [६१६] + गाथा: दीप अनुक्रम [७२१--७२६]

व्याख्या प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः२ ॥७३१॥

व्याख्यातं सप्तदशं शतम्, अथावसरायातमष्टादशं व्याख्यायते, तस्य च तावदादावेवेयमुद्देशकसङ्ग्रहणी गाथा—

पढमे १ विसाह २ मायंदिए य ३ पाणाइवाय ४ असुरे य ५। गुल ६ केवलि ७ अणगारे ८ भविए ९ तह सोमिलऽट्ठारसे १० ॥ ७ ॥ तेणं कालेणं तेणं समएणं रायगिहे जाव एवं वयासी–जीवे णं भंते ! जीवभावेणं किं पढमे अपढमे ?, गोयमा ! नो पढमे अपढमे, एवं नेरइए जाव वे० । सिद्धे णं भंते ! सिद्धभावेणं किं पढमे अपढमे ?, गोयमा ! पढमे नो अपढमे, जीवा णं भंते ! जीवभावेणं किं पढमा अपढमा ?, गोयमा ! नो पढमा अपढमा, एवं जाव वेमाणिया १। सिद्धा णं पुच्छा, गोयमा ! पढमा नो अपढमा ॥ आहारए णं भंते ! जीवे आहारभावेणं किं पढमे अपढमे ?, गोयमा ! नो पढमे अपढमे, एवं जाव वेमाणिए, पोहत्तिए एवं चेव। अणाहारए णं भंते ! जीवे अणाहारभावेणं पुच्छा, गोयमा ! सिय पढमे सिय अपढमे। नेरइए णं भंते ! एवं नेरतिए जाव वेमाणिए नो पढमे अपढमे, सिद्धे पढमे नो अपढमे। अणाहारगा णं भंते ! जीवा अणाहारभावेणं पुच्छा, गोयमा ! पढमावि अपढमावि, नेरइया जाव वेमाणिया णो पढमा अपढमा, सिद्धा पढमा नो अपढमा, एक्केके पुच्छा भाणियव्वा २॥ भवसिद्धीए एगत्तपुहुत्तेणं जहा आहारए, एवं अभवसिद्धीएवि, नोभवसिद्धीयनोअभवसिद्धीए णं भंते ! जीवे नोभव० पुच्छा, गोयमा ! पढमे नो अपढमे, णोभवसिद्धीनोअभवसिद्धीया णं भंते ! सिद्धा नोभ० अभव०, एवं चेव पुहुत्तेणवि दोण्हवि ॥

१८ शतके उद्देशः १ जीवादीनां प्रथमचरमत्वे सू ६१६

॥७३१॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अथ सप्तदशमे शतके अष्टादश-उद्देशक: आरभ्यते

सन्नी णं भंते ! जीवे सन्नीभावेणं किं पढमे पुच्छा, गोयमा ! नो पढमे अपढमे, एवं विगलिंदियवज्जं जाव वेमाणिए, एवं पुहुत्तेणवि ३ । असन्नी एवं चेव एगत्तपुहुत्तेणं नवरं जाव वाणमंतरा, नोसन्नीनोअसन्नी जीवे मणुस्से सिद्धे पढमे नो अपढमे, एवं पुहुत्तेणवि ४ ॥ सलेसे णं भंते ! पुच्छा, गोयमा ! जहा आहारए एवं पुहुत्तेणवि कण्हलेस्सा जाव सुक्कलेस्सा एवं चेव नवरं जस्स जा लेसा अत्थि । अलेसे णं जीवमणुस्ससिद्धे जहा नोसन्नीनोअसन्नी ५ ॥ सम्मदिट्ठीए णं भंते ! जीवे सम्मदिट्ठिभावेणं किं पढमे पुच्छा, गोयमा ! सिय पढमे सिय अपढमे, एवं एगिंदियवज्जं जाव वेमाणिए, सिद्धे पढमे नो अपढमे, पुहुत्तिया जीवा पढमावि अपढमावि, एवं जाव वेमाणिया, सिद्धा पढमा नो अपढमा, मिच्छादिट्ठीए एगत्तपुहुत्तेणं जहा आहारगा, सम्मामिच्छादिट्ठी एगत्तपुहुत्तेणं जहा सम्मदिट्ठी, नवरं जस्स अत्थि सम्मामिच्छत्तं ६ ॥ संजए जीवे मणुस्से य एगत्तपुहुत्तेण जहा सम्मदिट्ठी, असंजए जहा आहारए, संजयासंजए जीवे पंचिंदियतिरिक्खजोणिय-मणुस्सा एगत्तपुहुत्तेणं जहा सम्मदिट्ठी नोसंजएनोअस्संजएनोसंजयासंजए जीवे सिद्धे य एगत्तपुहुत्तेणं पढमे नो अपढमे ७ ॥ सकसायी कोहकसायी जावलोभकसायी एए एगत्तपुहुत्तेणं जहा आहारए, अकसा० जीवे सिय पढमे सिय अपढमे, एवं मणुस्सेवि, सिद्धे पढमे नो अपढमे, पुहुत्तेणं जीवा मणुस्सावि पढमावि अपढमावि, सिद्धा पढमा नो अपढमा ८ ॥ णाणी एगत्तपुहुत्तेणं जहा सम्मदिट्ठी आभिणिबोहियनाणी जाव मणपज्जवनाणी एगत्तपुहुत्तेणं एवं चेव नवरं जस्स जं अत्थि, केवलनाणी जीवे मणुस्से सिद्धे य एग-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

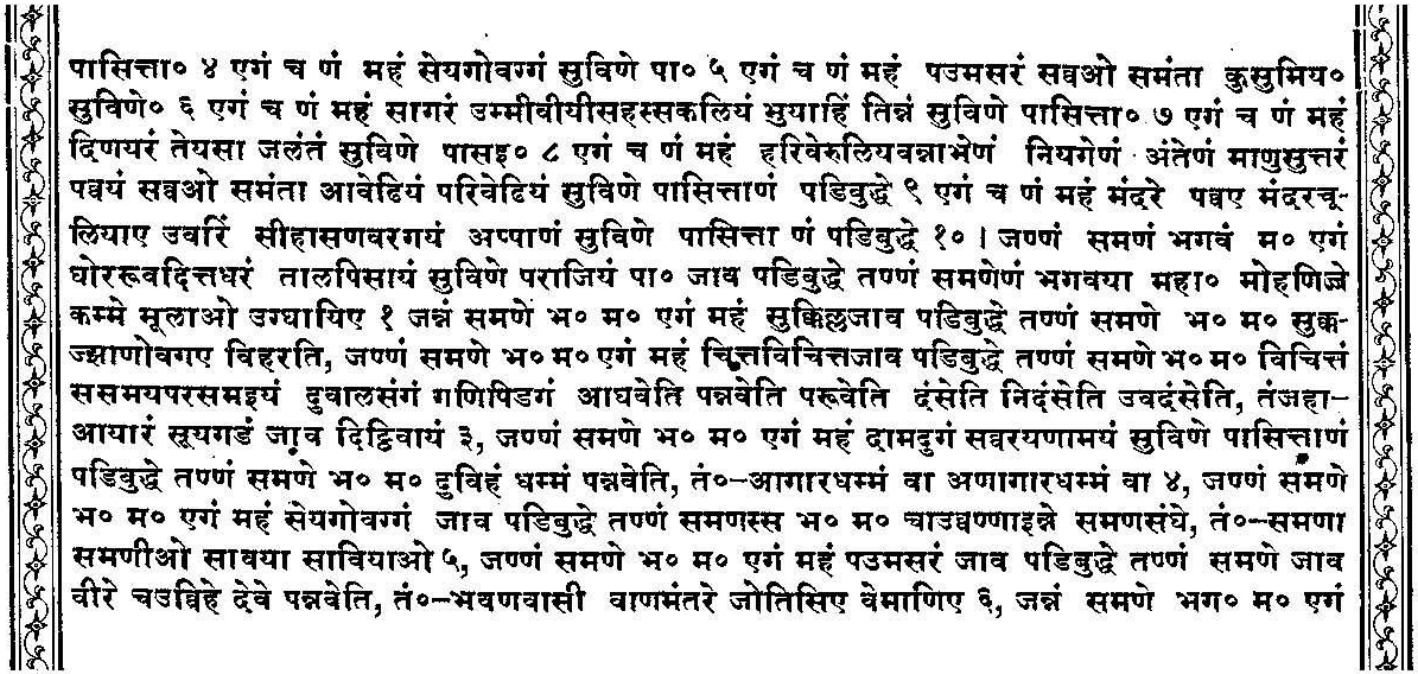

पासित्ता० ४ एगं च णं महं सेयगोवग्गं सुविणे पा० ५ एगं च णं महं पउमसरं सव्वओ समंता कुसुमिय० सुविणे० ६ एगं च णं महं सागरं उम्मीवीयीसहस्सकलियं भुयाहिं तिन्नं सुविणे पासित्ता० ७ एगं च णं महं दिणयरं तेयसा जलंतं सुविणे पासइ० ८ एगं च णं महं हरिवेरुलियवन्नाभेणं नियगेणं अंतेणं माणुसुत्तरं पवयं सव्वओ समंता आवेढियं परिवेढियं सुविणे पासित्ताणं पडिबुद्धे ९ एगं च णं महं मंदरे पव्वए मंदरचूलियाए उवरिं सीहासणवरगयं अप्पाणं सुविणे पासित्ता णं पडिबुद्धे १० । जण्णं समणं भगवं म० एगं घोररूवदित्तधरं तालपिसायं सुविणे पराजियं पा० जाव पडिबुद्धे तण्णं समणेणं भगवया महा० मोहणिज्जे कम्मे मूलाओ उग्घायिए १ जन्नं समणे भ० म० एगं महं सुक्किलजाव पडिबुद्धे तण्णं समणे भ० म० सुक्कज्झाणोवगए विहरति, जण्णं समणे भ० म० एगं महं चित्तविचित्तजाव पडिबुद्धे तण्णं समणे भ० म० विचित्तं ससमयपरसमइयं दुवालसंगं गणिपिडगं आघवेति पन्नवेति परूवेति दंसेति निदंसेति उवदंसेति, तंजहा–आयारं सूयगडं जाव दिट्ठिवायं ३, जण्णं समणे भ० म० एगं महं दामदुगं सव्वरयणामयं सुविणे पासित्ताणं पडिबुद्धे तण्णं समणे भ० म० दुविहं धम्मं पन्नवेति, तं०–आगारधम्मं वा अणागारधम्मं वा ४, जण्णं समणे भ० म० एगं महं सेयगोवग्गं जाव पडिबुद्धे तण्णं समणस्स भ० म० चाउव्वण्णाइन्ने समणसंघे, तं०–समणा समणीओ सावया साविआओ ५, जण्णं समणे भ० म० एगं महं पउमसरं जाव पडिबुद्धे तण्णं समणे जाव वीरे चउव्विहे देवे पन्नवेति, तं०–भवणवासी वाणमंतरे जोतिसिए वेमाणिए ६, जन्नं समणे भग० म० एगं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

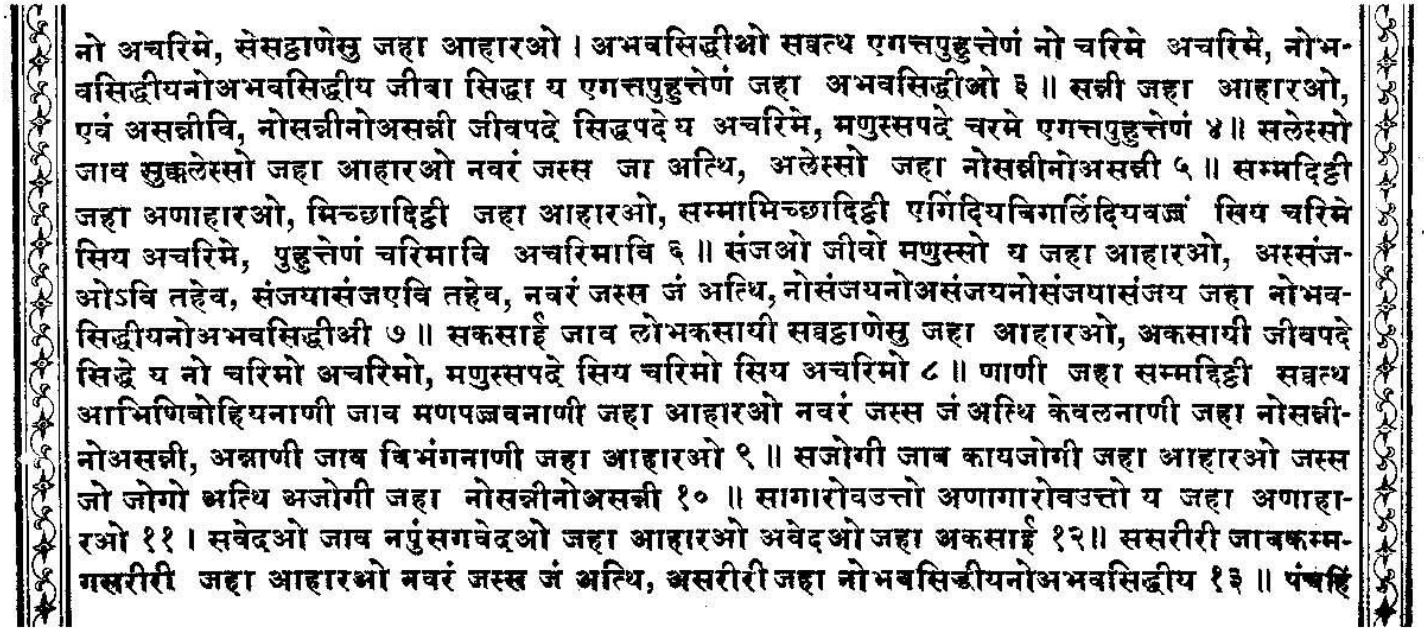

नो अचरिमे, सेसट्ठाणेसु जहा आहारओ। अभवसिद्धीओ सव्वत्थ एगत्तपुहुत्तेणं नो चरिमे अचरिमे, नोभवसिद्धीयनोअभवसिद्धीय जीवा सिद्धा य एगत्तपुहुत्तेणं जहा अभवसिद्धीओ ३॥ सन्नी जहा आहारओ, एवं असन्नीवि, नोसन्नीनोअसन्नी जीवपदे सिद्धपदे य अचरिमे, मणुस्सपदे चरमे एगत्तपुहुत्तेणं ४॥ सलेस्सो जाव सुक्कलेस्सो जहा आहारओ नवरं जस्स जा अत्थि, अलेस्सो जहा नोसन्नीनोअसन्नी ५॥ सम्मदिट्ठी जहा अणाहारओ, मिच्छादिट्ठी जहा आहारओ, सम्मामिच्छादिट्ठी एगिंदियविगलिंदियवज्जं सिय चरिमे सिय अचरिमे, पुहुत्तेणं चरिमावि अचरिमावि ६॥ संजओ जीवो मणुस्सो य जहा आहारओ, अस्संजओऽवि तहेव, संजयासंजएवि तहेव, नवरं जस्स जं अत्थि, नोसंजयनोअसंजयनोसंजयासंजय जहा नोभवसिद्धीयनोअभवसिद्धीओ ७॥ सकसाई जाव लोभकसायी सव्वट्ठाणेसु जहा आहारओ, अकसायी जीवपदे सिद्धे य नो चरिमो अचरिमो, मणुस्सपदे सिय चरिमो सिय अचरिमो ८॥ णाणी जहा सम्मदिट्ठी सव्वत्थ आभिणिबोहियनाणी जाव मणपज्जवनाणी जहा आहारओ नवरं जस्स जं अत्थि केवलनाणी जहा नोसन्नीनोअसन्नी, अन्नाणी जाव विभंगनाणी जहा आहारओ ९॥ सजोगी जाव कायजोगी जहा आहारओ जस्स जो जोगो अत्थि अजोगी जहा नोसन्नीनोअसन्नी १०॥ सागारोवउत्तो अणागारोवउत्तो य जहा अणाहारओ ११। सवेदओ जाव नपुंसगवेदओ जहा आहारओ अवेदओ जहा अकसाई १२॥ ससरीरी जावकम्मगसरीरी जहा आहारओ नवरं जस्स जं अत्थि, असरीरी जहा नोभवसिद्धीयनोअभवसिद्धीय १३॥ पंचहिं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥७३३॥

पज्जत्तीहिं पंचहिं अपज्जत्तीहिं जहा आहारओ सवत्थ एगत्तपुहुत्तेणं दंडगा भाणियव्वा १४ ॥ इमा लक्खण-गाहा—जो जं पाविहिति पुणो भावं सो तेण अचरिमो होइ । अचंतविओगो जस्स जेण भावेण सो चरिमो ॥ १ ॥ सेवं भंते ! २ जाव विहरति ॥ (सूत्रं ६१६) ॥ १८–१ ॥

'पढमे'त्यादि, तत्र 'पढमे'त्ति जीवादीनामर्थानां प्रथमाप्रथमत्वादिविचारपरायण उद्देशकः प्रथम उच्यते, स चास्य प्रथमः १ 'विसाह'त्ति विशाखानगरी तदुपलक्षितो विशाखेति द्वितीयः २ 'मागंदिए'त्ति माकन्दीपुत्राभिधानानगारो-पलक्षितो माकन्दिकस्तृतीयः ३ 'पाणाइवाय'त्ति प्राणातिपातादिविषयः प्राणातिपातश्चतुर्थः ४ 'असुरे य'त्ति असुरादि-वक्तव्यताप्रधानोऽसुरः पञ्चमः ५ 'गुल'त्ति गुलाद्यर्थविशेषस्वरूपनिरूपणपरो गुलः षष्ठः ६ 'केवलि'त्ति केवल्यादिविषयः केवली सप्तमः ७ 'अणगारे'त्ति अनगारादिविषयोऽनगारोऽष्टमः ८ 'भविय'त्ति भव्यद्रव्यनारकादिप्ररूपणार्थो भव्यो नवमः ९ 'सोमिल'त्ति सोमिलाभिधानब्राह्मणवक्तव्यतोपलक्षितः सोमिलो दशमः १०, 'अट्ठारसे'त्ति अष्टादशशते एते उद्देशका इति ॥ तत्र प्रथमोद्देशकार्थप्रतिपादनार्थमाह—'तेण'मित्यादि, उद्देशकद्वारसङ्ग्रहणी चेयं गाथा क्वचिद्दृश्यते—"जीवाहारग-भवसन्निलेसादिट्ठी य संजयकसाए । णाणे जोगुवओगे वेए य सरीरपज्जत्ती ॥ १ ॥" अस्याश्चार्थ उद्देशकार्थाधिगम्यः, तत्र प्रथमद्वाराभिधानायाह—'जीवे णं भंते'इत्यादि, जीवो भदन्त ! 'जीवभावेन' जीवत्वेन किं 'प्रथमः' प्रथमताधर्म्म-युक्तः ?, अयमर्थः–किं जीवत्वमसत्प्रथमतया प्राप्तं उत 'अपढमे'त्ति अप्रथमः–अनाद्यवस्थितजीवत्व इत्यर्थः, अत्रो-त्तरं–'नो पढमे अपढमे'त्ति, इह च प्रथमत्वाप्रथमत्वयोर्लक्षणगाथा—"जो जेण पत्तपुव्वो भावो सो तेणऽपढमओ

१८ शतके उद्देशः १ जीवादीनां प्रथमचरमत्वे सू ६१६

॥७३३॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

होइ। जो जं अपत्तपुव्वं पावइ सो तेण पढमो उ ॥ १ ॥" इति [यो येन प्राप्तपूर्वो भावः स तस्याप्रथमो भवति। यो यमप्राप्तपूर्वं प्राप्नोति स तस्य प्रथमः ॥ १ ॥] 'एवं नेरइए 'त्ति नारकोऽप्यप्रथमः अनादिसंसारे नारकत्वस्यानन्तशः प्राप्तपूर्वत्वादिति। 'सिद्धे णं भंते !' इत्यादौ 'पढमे'त्ति सिद्धेन सिद्धत्वस्याप्राप्तपूर्वस्य प्राप्तत्वात्तेनासौ प्रथम इति, बहुत्वेऽप्येवमेवेति ॥ आहारकद्वारे—'आहारए ण'मित्यादि, आहारकत्वेन नो प्रथमः अनादिभवेऽनन्तशः प्राप्तपूर्वकत्वादाहारकत्वस्य, एवं नारकादिरपि, सिद्धस्त्वाहारकत्वेन न पृच्छ्यते, अनाहारकत्वात्तस्येति। 'अणाहारए ण'मित्यादौ, 'सिय पढमे'त्ति स्यादिति–कश्चिज्जीवोऽनाहारकत्वेन प्रथमो यथा सिद्धः कश्चिच्चाप्रथमो यथा संसारी, संसारिणो विग्रहगतावनाहारकत्वस्यानन्तशो भूतपूर्वत्वादिति। 'एक्केक्के पुच्छा भाणियव्व'त्ति यत्र किल पृच्छावाक्यमलिखितं तत्रैकैकस्मिन् पदे पृच्छावाक्यं वाच्यमित्यर्थः। भव्यद्वारे—'भवसिद्धीए'इत्यादि, भवसिद्धिक एकत्वेन बहुत्वेन च यथाऽऽहारकोऽभिहितः एवं वाच्यः, अप्रथम इत्यर्थः, यतो भव्यस्य भव्यत्वमनादिसिद्धमतोऽसौ भव्यत्वेन न प्रथमः, एवमभवसिद्धिकोऽपि, 'नोभवसिद्धियनोअभवसिद्धिए णं' इह च जीवपदं सिद्धपदं च दण्डकमध्यात्संभवति नतु नारकादीनि, नोभवसिद्धिकनोअभवसिद्धिकपदेन सिद्धस्यैवाभिधानात्, तयोश्चैकत्वे पृथक्त्वे च प्रथमत्वं वाच्यम् ॥ सञ्ज्ञिद्वारे—'सन्नी ण'मित्यादि, सञ्ज्ञी जीवः सञ्ज्ञिभावेनाप्रथमोऽनन्तशः सञ्ज्ञित्वलाभात्, 'विगलिंदियवज्जं जाववेमाणिए'त्ति एकद्वित्रिचतुरिन्द्रियान् वर्जयित्वा शेषा नारकादिवैमानिकान्ताः सञ्ज्ञिनोऽप्रथमतया वाच्या इत्यर्थः, एवमसञ्ज्ञ्यपि नवरं 'जाव वाणमंतर'त्ति असञ्ज्ञित्वविशेषितानि जीवनारकादीनि व्यन्तरान्तानि पदान्यप्रथमतया वाच्यानि, तेषु हि

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २ ॥७३४॥

सञ्ज्ञिष्वपि भूतपूर्वगत्याऽसञ्ज्ञित्वं लभ्यते असञ्ज्ञिनामुत्पादात्, पृथिव्यादयस्त्वसञ्ज्ञिन एव, तेषां चाप्रथमत्वमनन्तस्तल्लाभादिति, उभयनिषेधपदं च जीवमनुष्यसिद्धेषु लभ्यते, तत्र च प्रथमत्वं वाच्यमत एवोक्तं–नोसञ्ज्ञीत्यादि ॥ लेश्याद्वारे—'सलेसे ण'मित्यादि 'जहा आहारए'त्ति अप्रथम इत्यर्थः अनादित्वात्सलेश्यत्वस्येति 'नवरं जस्स जा लेसा अत्थि'त्ति यस्य नारकादेर्या कृष्णादिलेश्याऽस्ति सा तस्य वाच्या, इदं च प्रतीतमेव, अलेश्यपदं तु जीवमनुष्यसिद्धेष्वस्ति, तेषां च प्रथमत्वं वाच्यं, नोसञ्ज्ञिनोऽसंज्ञिनामिवेति, एतदेवाह–'अलेसे ण'मित्यादि ॥ दृष्टिद्वारे—'सम्मद्दिट्ठिए ण'मित्यादि, 'सिय पढमे सिय अपढमे'त्ति कश्चित्सम्यग्दृष्टिर्जीवः सम्यग्दृष्टितया प्रथमो यस्य तत्प्रथमतया सम्यग्दर्शनलाभः कश्चिच्चाप्रथमो येन प्रतिपतितं सत् सम्यग्दर्शनं पुनर्लब्धमिति, 'एवं एगिंदियवज्जं'ति एकेन्द्रियाणां सम्यक्त्वं नास्ति ततो नारकादिदण्डकचिन्तायामेकेन्द्रियान् वर्जयित्वा शेषः स्यात्प्रथमः स्यादप्रथम इत्येवं वाच्यः, प्रथमसम्यक्त्वलाभापेक्षया प्रथमः द्वितीयादिलाभापेक्षया त्वप्रथमः, सिद्धस्तु प्रथम एव सिद्धत्वानुगतस्य सम्यक्त्वस्य तदानीमेव भावात्। 'मिच्छादिट्ठी'त्यादि, 'जहा आहारग'त्ति एकत्वे पृथक्त्वे च मिथ्यादृष्टीनामप्रथमत्वमित्यर्थः, अनादित्वान्मिथ्यादर्शनस्येति। 'सम्मामिच्छादिट्ठी'त्यादि 'जहा सम्मद्दिट्ठि'त्ति स्यात्प्रथमः स्यादप्रथमः प्रथमेतरसम्यग्मिथ्यादर्शनलाभापेक्षयेति भावः, 'नवरं जस्स अत्थि सम्मामिच्छत्तं'ति दण्डकचिन्तायां यस्य नारकादेर्मिश्रदर्शनमस्ति स एवेह प्रथमाप्रथमचिन्तायामधिकर्त्तव्यः ॥ संयतद्वारे—'संजए'इत्यादि, इह च जीवपदं मनुष्यपदं चैते द्वे एव स्तः, तयोश्चैकत्वादिना यथा सम्यग्दृष्टिरुक्तस्तथाऽसौ वाच्यः, स्यात्प्रथमः स्यादप्रथम इत्यर्थः, एतच्च संयमस्य प्रथमेतरलाभापेक्षयाऽवसेयमिति 'असंजए जहा आहारए'त्ति

१८ शतके उद्देशः १ जीवादीनां प्रथमचरमत्वे सू ६१६ ॥७३४॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अप्रथम इत्यर्थः असंयतत्वस्यानादित्वात्, 'संजयासंजए'इत्यादि संयतासंयतो जीवपदे पञ्चेन्द्रियतिर्यक्पदे मनुष्यपदे च भवतीत्यत एतेष्वेकत्वादिना सम्यग्दृष्टिवद्वाच्यः स्यात्प्रथमः स्यादप्रथम इत्यर्थः, प्रथमाप्रथमत्वं च प्रथमेतरदेशविरतिलाभापेक्षयेति 'नोसंजएनोअस्संजए'इत्यादि, निषिद्धसंयमासंयममिश्रभावो जीवः सिद्धश्च स्यात् स च प्रथम एवेति ॥ कषायद्वारे—'सकसाई'त्यादि, कषायिणः आहारकवदप्रथमा अनादित्वात्कषायित्वस्येति 'अकसाई'त्यादि, अकषायो जीवः स्यात्प्रथमो यथाख्यातचारित्रस्य प्रथमलाभे स्यादप्रथमो द्वितीयादिलाभे, एवं मनुष्योऽपि, सिद्धस्तु प्रथम एव, सिद्धत्वानुगतस्याकषायभावस्य प्रथमत्वादिति ॥ ज्ञानद्वारे—'णाणी'त्यादि, 'जहा सम्मद्दिट्ठी'त्ति स्यात्प्रथमः स्यादप्रथम इत्यर्थः तत्र केवली प्रथमः अकेवली तु प्रथमज्ञानलाभे प्रथमः अन्यथा त्वप्रथम इति, 'नवरं जं जस्स अत्थि'त्ति जीवादिदण्डकचिन्तायां यत् मतिज्ञानादि यस्य जीवनारकादेरस्ति तत्तस्य वाच्यमिति, तच्च प्रतीतमेव, 'केवलनाणी'त्यादि व्यक्तम्, 'अन्नाणी'त्यादि, 'जहा आहारए'त्ति अप्रथम इत्यर्थः, अनादित्वेनानन्तशोऽज्ञानस्य सभेदस्य लाभादिति ॥ योगद्वारे—'सजोगी'त्यादि, एतदप्याहारकवदप्रथममित्यर्थः 'जस्स जो जोगो अत्थि'त्ति जीवनारकादिदण्डकचिन्तायां यस्य जीवादेर्यो मनोयोगादिरस्ति स तस्य वाच्यः, स च प्रतीत एवेति, 'अजोगी'त्यादि, जीवो मनुष्यः सिद्धश्चायोगी भवति स च प्रथम एवेति ॥ उपयोगद्वारे–'सागारे'त्यादि 'जहा अणाहारए'त्ति साकारोपयुक्ता अनाकारोपयुक्ताश्च यथाऽनाहारकोऽभिहितस्तथा वाच्याः, ते च जीवपदे स्यात्प्रथमाः सिद्धापेक्षया स्यादप्रथमाः संसार्यपेक्षया, नारकादिवैमानिकान्तपदेषु तु नो प्रथमा अप्रथमा अनादित्वात्तल्लाभस्य, सिद्धपदे तु प्रथमा नो अप्रथमाः साकारानाकारोपयोग-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विशेषितस्य सिद्धत्वस्य प्रथमत एव भावादिति ॥ वेदद्वारे—'सवेयगे'त्यादि, 'जहा आहारए' अप्रथम एवेत्यर्थः 'नवरं जस्स जो वेदो अत्थि'त्ति जीवादिदण्डकचिन्तायां यस्य नारकादेर्यो नपुंसकादिर्वेदोऽस्ति स तस्य वाच्यः स च प्रतीत एवेति, 'अवेयओ'इत्यादि अवेदको यथाऽकषायी तथा वाच्यस्त्रिष्वपि पदेषु–जीवमनुष्यसिद्धलक्षणेषु, तत्र च जीवमनुष्यपदयोः स्यात्प्रथमः स्यादप्रथमः अवेदकत्वस्य प्रथमेतरलाभापेक्षया, सिद्धस्त्वप्रथम एवेति ॥ शरीरद्वारे—'सस-रीरी'त्यादि, अयमप्याहारकवदप्रथम एवेति 'नवरमाहारगसरीरी'त्यादि 'जहा सम्मदिट्ठि'त्ति स्यात्प्रथमः स्यादप्रथम इत्यर्थः, अयं चैवं प्रथमेतराहारकशरीरस्य लाभापेक्षयेति, अशरीरी जीवः स्यात् सिद्धश्च स च प्रथम एवेति ॥ पर्याप्तिद्वारे—'पंचही'त्यादि, पञ्चभिः पर्याप्तिभिः पर्याप्तकः तथा पञ्चभिरपर्याप्तिभिरपर्याप्तक आहारकवदप्रथम इति, 'जस्स जा अत्थि'-त्ति दण्डकचिन्तायां यस्य याः पर्याप्तयस्तस्य ता वाच्यास्ताश्च प्रतीता एवेति ॥ अथ प्रथमाप्रथमलक्षणाभिधानायाह—'जो जेण'गाहा, यो–भावो–जीवत्वादिर्येन जीवादिना कर्त्रा 'प्राप्तपूर्वः' अवाप्तपूर्वः 'भावः' पर्यायः 'सः' जीवादिस्तेन–भावे-नाप्रथमको भवति, 'सेसेसु'त्ति सप्तम्यास्तृतीयार्थत्वात् 'शेषैः' प्राप्तपूर्वभावव्यतिरिक्तैर्भवति प्रथमः, किंस्वरूपैः शेषैः ? इत्याह–अप्राप्तपूर्वैर्भावैरिति गाथार्थः ॥ अथ प्रथमादिविपक्षं चरमादित्वं जीवादिष्वेव द्वारेषु निरूपयन्निदमाह—'जीवे ण'-मित्यादि, जीवो भदन्त ! 'जीवभावेन' जीवत्वपर्यायेण किं चरमः ?–किं जीवत्वस्य प्राप्तव्यचरमभागः किं जीवत्वं मोक्ष्यतीत्यर्थः 'अचरमे'त्ति अविद्यमानजीवत्वचरमसमयो, जीवत्वमत्यन्तं न मोक्ष्यतीत्यर्थः, इह प्रश्ने आह–'नो' नैव 'चरमः' प्राप्तव्यजीवत्वावसानो, जीवत्वस्याव्यवच्छेदादिति । 'नेरइए ण'मित्यादि 'सिय चरिमे सिय अचरिमे'त्ति

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [६१६] + गाथा:

दीप अनुक्रम [७२१--७२६]

यो नारको नारकत्वादुद्वृत्तः सन् पुनर्नरकगतिं न यास्यति सिद्धगमनात् स चरमः अन्यस्त्वचरमः, एवं यावद्वैमानिकः । 'सिद्धे जहा जीवे'त्ति अचरम इत्यर्थः, न हि सिद्धः सिद्धतया विनङ्क्ष्यतीति । 'जीवा ण'मित्यादि, पृथक्त्वदण्डकस्तथाविध एवेति ॥ आहारकद्वारे—'आहारए सव्वत्थ'त्ति सर्वेषु जीवादिपदेषु 'सिय चरिमे सिय अचरिमे'त्ति कश्चिच्चरमो यो निर्वास्यति अन्यस्त्वचरम इति । अनाहारकपदेऽनाहारकत्वेन जीवः सिद्धश्चाचरमो वाच्यः, अनाहारकत्वस्य तदीयस्यापर्यवसितत्वात्, जीवश्चेह सिद्धावस्थ एवेति, एतदेवाह–'अणाहारओ'इत्यादि, 'सेसठाणेसु'त्ति नारकादिषु पदेषु 'जहा आहारओ'त्ति स्याच्चरमः स्यादचरम इत्यर्थः, यो नारकादित्वेनानाहारकत्वं पुनर्न लप्स्यते स चरमो यस्तु तल्लप्स्यतेऽसौ अचरम इति ॥ भव्यद्वारे—'भवसिद्धीओ'इत्यादि, भव्यो जीवो भव्यत्वेन चरमः, सिद्धिगमनेन भव्यत्वस्य चरमत्वप्राप्तेः, एतच्च सर्वेऽपि भवसिद्धिका जीवाः सेत्स्यन्तीति वचनप्रामाण्यादभिहितमिति 'अभवसिद्धिओ सव्वत्थ'त्ति सर्वेषु जीवादिपदेषु 'नो चरिमे'त्ति अभव्यस्य भव्यत्वेनाभावात्, 'नोभवे'त्यादि उभयनिषेधवान् जीवपदे सिद्धपदे चाभवसिद्धिकवदचरमः तस्य सिद्धत्वात् सिद्धस्य च सिद्धत्वपर्यायानपगमादिति ॥ सञ्ज्ञिद्वारे—'सन्नी जहा आहारओ'त्ति सञ्ज्ञित्वेन स्याच्चरमः स्यादचरम इत्यर्थः, एवमसञ्ज्ञ्यपि, उभयनिषेधवांश्च जीवः सिद्धश्चाचरमो, मनुष्यस्तु चरमः उभयनिषेधवतो मनुष्यस्य केवलित्वेन पुनर्मनुष्यत्वस्यालाभादिति ॥ लेश्याद्वारे—'सलेसा'इत्यादि, 'जहा आहारओ'त्ति स्याच्चरमः स्यादचरम इत्यर्थः, तत्र ये निर्वास्यन्ति ते सलेश्यत्वस्य चरमाः, अन्ये त्वचरमा इति ॥ दृष्टिद्वारे—'सम्मद्दिट्ठी जहा अणाहारओ'त्ति जीवः सिद्धश्च सम्यग्दृष्टिरचरमो यतो जीवस्य सम्यक्त्वं प्रतिपतितमप्यवश्यंभावि,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

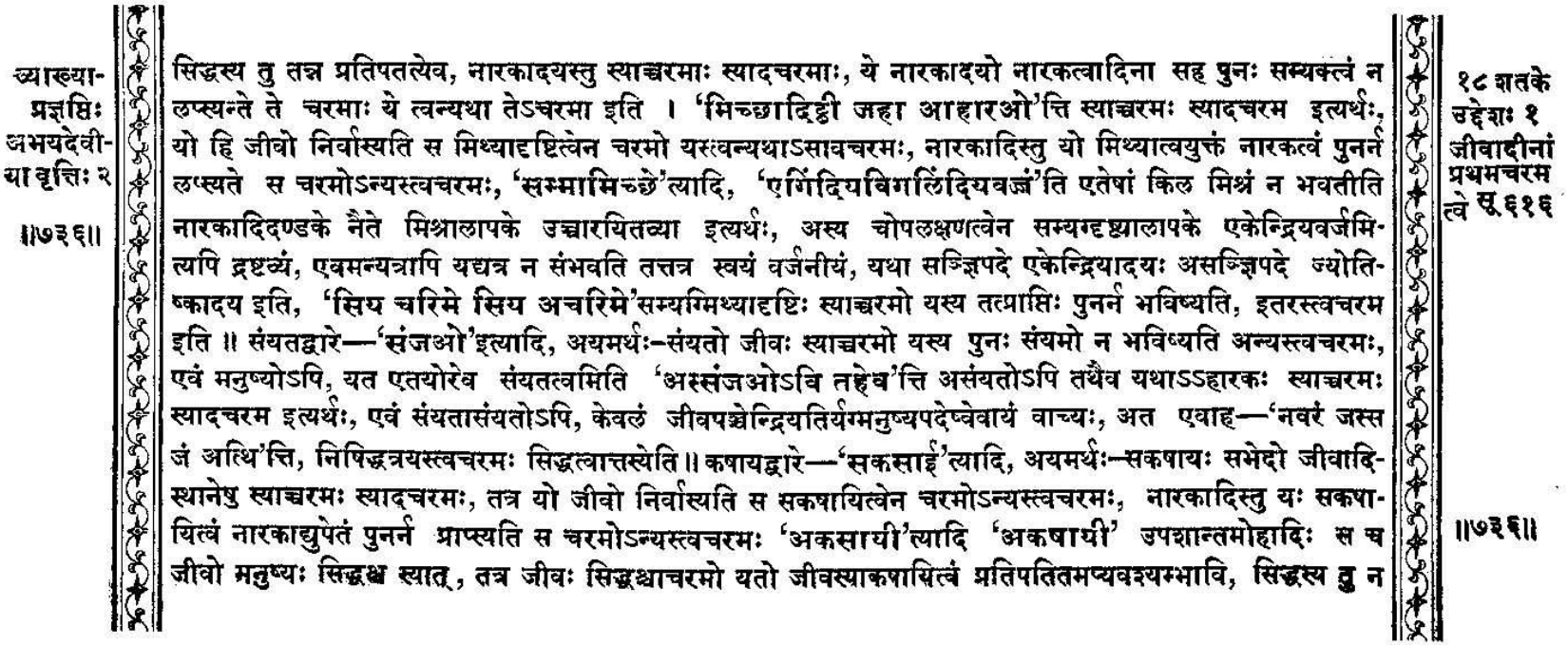

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥७३६॥

सिद्धस्य तु तन्न प्रतिपतत्येव, नारकादयस्तु स्याच्चरमाः स्यादचरमाः, ये नारकादयो नारकत्वादिना सह पुनः सम्यक्त्वं न लप्स्यन्ते ते चरमाः ये त्वन्यथा तेऽचरमा इति । 'मिच्छादिट्ठी जहा आहारओ'त्ति स्याच्चरमः स्यादचरम इत्यर्थः, यो हि जीवो निर्वास्यति स मिथ्यादृष्टित्वेन चरमो यस्त्वन्यथाऽसावचरमः, नारकादिस्तु यो मिथ्यात्वयुक्तं नारकत्वं पुनर्न लप्स्यते स चरमोऽन्यस्त्वचरमः, 'सम्मामिच्छे'त्यादि, 'एगिंदियविगलिंदियवज्ज'ंति एतेषां किल मिश्रं न भवतीति नारकादिदण्डके नैते मिश्रालापके उच्चारयितव्या इत्यर्थः, अस्य चोपलक्षणत्वेन सम्यग्दृष्ट्यालापके एकेन्द्रियवर्जमित्यपि द्रष्टव्यं, एवमन्यत्रापि यद्यत्र न संभवति तत्तत्र स्वयं वर्जनीयं, यथा सञ्ज्ञिपदे एकेन्द्रियादयः असञ्ज्ञिपदे ज्योतिष्कादय इति, 'सिय चरिमे सिय अचरिमे'सम्यग्मिथ्यादृष्टिः स्याच्चरमो यस्य तत्प्राप्तिः पुनर्न भविष्यति, इतरस्त्वचरम इति ॥ संयतद्वारे—'संजओ'इत्यादि, अयमर्थः–संयतो जीवः स्याच्चरमो यस्य पुनः संयमो न भविष्यति अन्यस्त्वचरमः, एवं मनुष्योऽपि, यत एतयोरेव संयतत्वमिति 'असंजओऽवि तहेव'त्ति असंयतोऽपि तथैव यथाऽऽहारकः स्याच्चरमः स्यादचरम इत्यर्थः, एवं संयतासंयतोऽपि, केवलं जीवपञ्चेन्द्रियतिर्यग्मनुष्यपदेष्वेवायं वाच्यः, अत एवाह—'नवरं जस्स जं अत्थि'त्ति, निषिद्धत्रयस्त्वचरमः सिद्धत्वात्तस्येति॥ कषायद्वारे—'सकसाई'त्यादि, अयमर्थः–सकषायः सभेदो जीवादिस्थानेषु स्याच्चरमः स्यादचरमः, तत्र यो जीवो निर्वास्यति स सकषायित्वेन चरमोऽन्यस्त्वचरमः, नारकादिस्तु यः सकषायित्वं नारकाद्युपेतं पुनर्न प्राप्स्यति स चरमोऽन्यस्त्वचरमः 'अकसायी'त्यादि 'अकषायी' उपशान्तमोहादिः स च जीवो मनुष्यः सिद्धश्च स्यात्, तत्र जीवः सिद्धश्चाचरमो यतो जीवस्याकषायित्वं प्रतिपतितमप्यवश्यम्भावि, सिद्धस्य तु न

१८ शतके उद्देशः १ जीवादीनां प्रथमचरमत्वे सू.६१६

॥७३६॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रतिपतत्येव, मनुष्यस्त्वकषायितोपेतं मनुष्यत्वं यः पुनर्न लप्स्यते स चरमो यस्तु लप्स्यते सोऽचरम इति ॥ ज्ञानद्वारे—'नाणी जहा सम्मदिट्ठि'त्ति, अयमिह सम्यग्दृष्टिदृष्टान्तलब्धोऽर्थः—जीवः सिद्धश्चाचरमः जीवो हि ज्ञानस्य सतः प्रतिपातेऽप्यवश्यं पुनर्भावेनाचरमः, सिद्धस्त्वक्षीणज्ञानभाव एव भवतीत्यचरमः, शेषास्तु ज्ञानोपेतनारकत्वादीनां पुनर्लाभासम्भवे चरमा अन्यथा त्वचरमा इति, 'सव्वत्थ'त्ति सर्वेषु जीवादिसिद्धान्तेषु पदेषु एकेन्द्रियवर्जितेष्विति गम्यं, ज्ञानभेदापेक्षयाऽऽह—'आभिणिबोहिए'इत्यादि, 'जहा आहारओ'त्तिकरणात् स्याच्चरमः स्यादचरम इति दृश्यं, तत्राभिनिबोधिकादिज्ञानं यः केवलज्ञानप्राप्त्या पुनरपि न लप्स्यते स चरमोऽन्यस्वत्वचरमः, 'जस्स जं अत्थि'त्ति यस्य जीवनारकादेर्यदाभिनिबोधिकाद्यस्ति तस्य तद्वाच्यं, तच्च प्रतीतमेव, 'केवलनाणी'त्यादि, केवलज्ञानी अचरमो वाच्य इति भावः 'अन्नाणी' इत्यादि अज्ञानी सभेदः स्याच्चरमः स्यादचरम इत्यर्थः यो ह्यज्ञानं पुनर्न लप्स्यते स चरमः यस्त्वभव्यो ज्ञानं न लप्स्यते एवासावचरम इति [ग्रन्थाग्रम् १५०००] एवं यत्र यत्राहारकातिदेशस्तत्र तत्र स्याच्चरमः स्यादचरम इति व्याख्येयं, शेषमप्यनयैव दिशाऽभ्युह्यमिति ॥ अथ चरमाचरमलक्षणाभिधानायाह—'जो जं पाविहिति'गाहा 'यः' जीवो नारकादिः 'यं' जीवत्वं नारकत्वादिकमप्रतिपतितं प्रतिपतितं वा 'प्राप्स्यति'लप्स्यते पुनः पुनरपि 'भावं' धर्म्मं स 'तेन' भावेनतद्भावापेक्षयेत्यर्थः अचरमो भवति, तथा 'अत्यन्तवियोगः' सर्वथाविरहः 'यस्य' जीवादेर्येन भावेन स तेनेति शेषः चरमो भवतीति ॥ अष्टादशशतस्य प्रथमः ॥ १८–१ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र अष्टादशमे शतके प्रथम-उद्देशक: परिसमाप्त:

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [६१७]

दीप अनुक्रम [७२७]

प्रथमोद्देशके वैमानिको वैमानिकभावेन स्याच्चरमः स्यादचरम इत्युक्तम्, अथ वैमानिकविशेषो यस्तद्भावेन चरमः स द्वितीयोद्देशके दर्श्यते इत्येवंसम्बन्धस्यास्येदमादिसूत्रम्—

तेणं कालेणं २ विसाहानामं नगरी होत्था वन्नओ, बहुपुत्तिए चेइए वन्नओ, सामी समोसढे जाव पज्जुवासइ, तेणं कालेणं २ सक्के देविंदे देवराया वज्जपाणी पुरंदरे एवं जहा सोलसमसए बितियउद्देसए तहेव दिव्वेणं जाणविमाणेणं आगओ नवरं एत्थ आभियोगादि अत्थि जाव बत्तीसतिविहं नट्टविहिं उवदंसेति उव० २ जाव पडिगए। भंतेत्ति भगवं गोयमे समणं भगवं महावीरं जाव एवं वयासी–जहा तईयसए ईसाणस्स तहेव कूडागारदिट्ठंतो तहेव पुव्वभवपुच्छा जाव अभिसमन्नागया?, गोयमादि समणे भगवं महावीरे भगवं गोयमं एवं वयासी–एवं खलु गोयमा! तेणं कालेणं तेणं समएणं इहेव जंबुद्दीवे २ भारहे वासे हत्थिणापुरे नामं नगरे होत्था वन्नओ, सहस्संबवणे उज्जाणे वन्नओ, तत्थ णं हत्थिणागपुरे नगरे कत्तिए नामं सेट्ठी परिवसति अड्ढे जाव अपरिभूए णेगमपढमासणिए णेगमट्ठसहस्सस्स बहुसु कज्जेसु य कारणेसु य कोडुंबेसु य एवं जहा रायप्पसेणइज्जे चित्ते जाव चक्खुभूए णेगमट्ठसहस्सस्स सयस्स य कुडुंबस्स आहेवच्चं जाव कारेमाणे पालेमाणे य समणोवासए अहिगयजीवाजीवे जाव विहरति। तेणं कालेणं २ मुणिसुव्वए अरहा आदिगरे जहा सोलसमसए तहेव जाव समोसढे जाव परिसा पज्जुवासति, तए णं से कत्तिए सेट्ठी इमीसे कहाए लद्धट्ठे समाणे हट्ठतुट्ठ एवं जहा एक्कारसमसए सुदंसणे तहेव निग्गओ जाव पज्जु-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अथ अष्टादशमे शतके द्वितीय-उद्देशक: आरभ्यते

कार्तिकश्रेष्ठी कथा

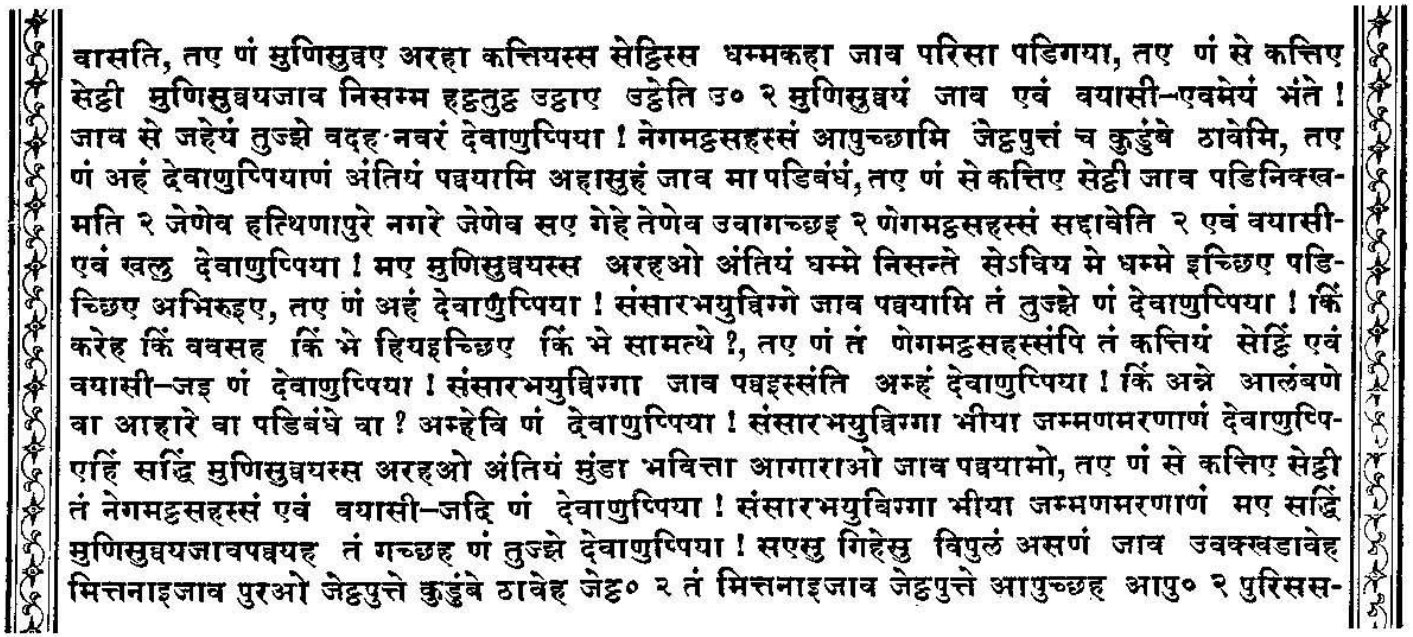

वासति, तए णं मुणिसुव्वए अरहा कत्तियस्स सेट्ठिस्स धम्मकहा जाव परिसा पडिगया, तए णं से कत्तिए सेट्ठी मुणिसुव्वयजाव निसम्म हट्ठतुट्ठ उट्ठाए उट्ठेति उ० २ मुणिसुव्वयं जाव एवं वयासी–एवमेयं भंते ! जाव से जहेयं तुज्झे वदह नवरं देवाणुप्पिया ! नेगमट्ठसहस्सं आपुच्छामि जेट्ठपुत्तं च कुडुंबे ठावेमि, तए णं अहं देवाणुप्पियाणं अंतियं पव्वयामि अहासुहं जाव मा पडिबंधं, तए णं से कत्तिए सेट्ठी जाव पडिनिक्खमति २ जेणेव हत्थिणापुरे नगरे जेणेव सए गेहे तेणेव उवागच्छइ २ णेगमट्ठसहस्सं सद्दावेति २ एवं वयासी-एवं खलु देवाणुप्पिया ! मए मुणिसुव्वयस्स अरहओ अंतियं धम्मे निसन्ते सेऽविय मे धम्मे इच्छिए पडिच्छिए अभिरुइए, तए णं अहं देवाणुप्पिया ! संसारभयुव्विग्गे जाव पव्वयामि तं तुज्झे णं देवाणुप्पिया ! किं करेह किं ववसह किं भे हियइच्छिए किं भे सामत्थे ?, तए णं तं णेगमट्ठसहस्संपि तं कत्तियं सेट्ठिं एवं वयासी–जइ णं देवाणुप्पिया ! संसारभयुव्विग्गा जाव पव्वइस्संति अम्हं देवाणुप्पिया ! किं अन्ने आलंबणे वा आहारे वा पडिबंधे वा ? अम्हेवि णं देवाणुप्पिया ! संसारभयुव्विग्गा भीया जम्मणमरणाणं देवाणुप्पिएहिं सद्धिं मुणिसुव्वयस्स अरहओ अंतियं मुंडा भवित्ता आगाराओ जाव पव्वयामो, तए णं से कत्तिए सेट्ठी तं नेगमट्ठसहस्सं एवं वयासी–जदि णं देवाणुप्पिया ! संसारभयुव्विग्गा भीया जम्मणमरणाणं मए सद्धिं मुणिसुव्वयजावपव्वयह तं गच्छह णं तुज्झे देवाणुप्पिया ! सएसु गिहेसु विपुलं असणं जाव उवक्खडावेह मित्तनाइजाव पुरओ जेट्ठपुत्ते कुडुंबे ठावेह जेट्ठ० २ तं मित्तनाइजाव जेट्ठपुत्ते आपुच्छह आपु० २ पुरिसस-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [६१७]

दीप अनुक्रम [७२७]

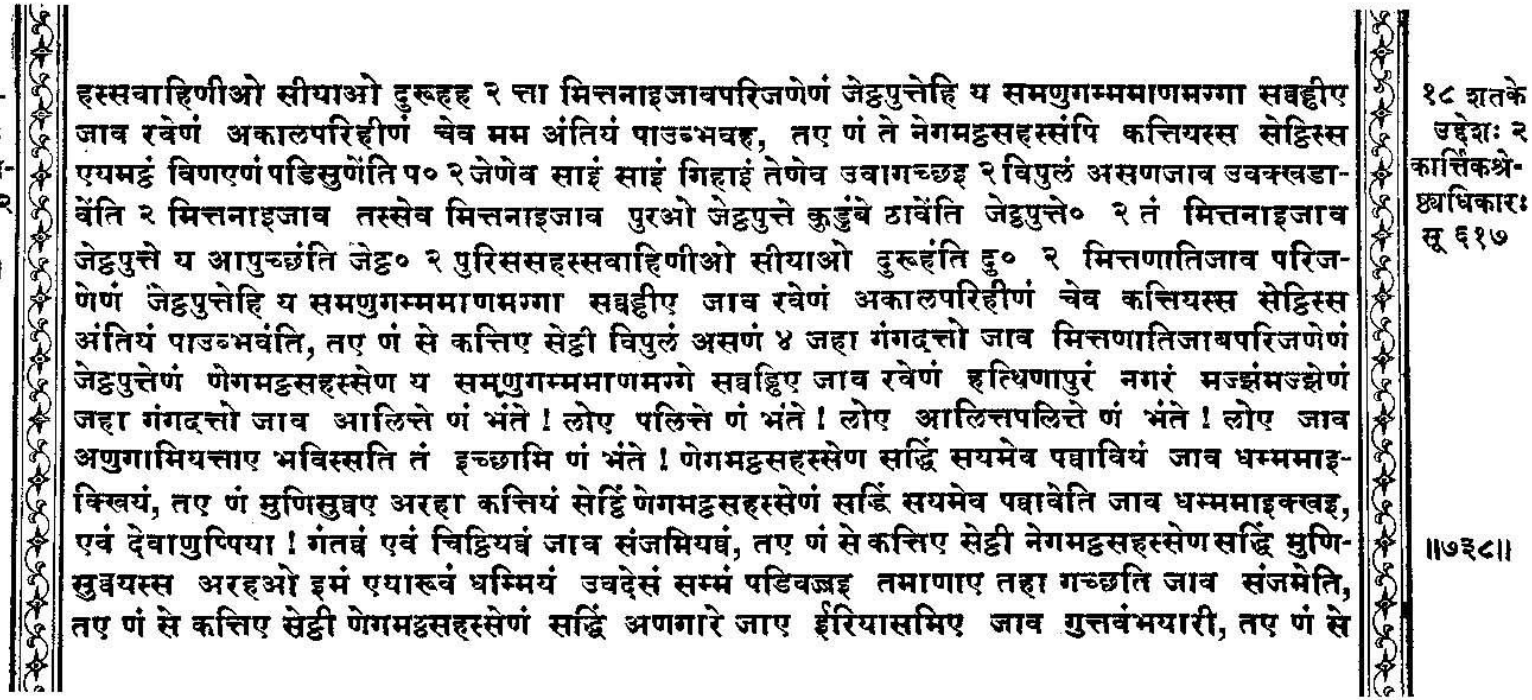

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥७३८॥

हस्सवाहिणीओ सीयाओ दुरूहह २ त्ता मित्तनाइजावपरिजणेणं जेट्ठपुत्तेहि य समणुगम्ममाणमग्गा सव्वड्ढीए जाव रवेणं अकालपरिहीणं चेव मम अंतियं पाउब्भवह, तए णं ते नेगमट्ठसहस्संपि कत्तियस्स सेट्ठिस्स एयमट्ठं विणएणं पडिसुणेंति प० २ जेणेव साइं साइं गिहाइं तेणेव उवागच्छइ २ विपुलं असणजाव उवक्खडावेंति २ मित्तनाइजाव तस्सेव मित्तनाइजाव पुरओ जेट्ठपुत्ते कुडुंबे ठावेंति जेट्ठपुत्ते० २ तं मित्तनाइजाव जेट्ठपुत्ते य आपुच्छंति जेट्ठ० २ पुरिससहस्सवाहिणीओ सीयाओ दुरूहंति दु० २ मित्तणातिजाव परिजणेणं जेट्ठपुत्तेहि य समणुगम्ममाणमग्गा सव्वड्ढीए जाव रवेणं अकालपरिहीणं चेव कत्तियस्स सेट्ठिस्स अंतियं पाउब्भवंति, तए णं से कत्तिए सेट्ठी विपुलं असणं ४ जहा गंगदत्तो जाव मित्तणातिजावपरिजणेणं जेट्ठपुत्तेणं णेगमट्ठसहस्सेण य समणुगम्ममाणमग्गे सव्वड्ढिए जाव रवेणं हत्थिणापुरं नगरं मज्झंमज्झेणं जहा गंगदत्तो जाव आलित्ते णं भंते ! लोए पलित्ते णं भंते ! लोए आलित्तपलित्ते णं भंते ! लोए जाव अणुगामियत्ताए भविस्सति तं इच्छामि णं भंते ! णेगमट्ठसहस्सेण सद्धिं सयमेव पव्वाविय जाव धम्ममाइक्खियं, तए णं मुणिसुव्वए अरहा कत्तियं सेट्ठिं णेगमट्ठसहस्सेणं सद्धिं सयमेव पव्वावेति जाव धम्ममाइक्खइ, एवं देवाणुप्पिया ! गंतव्वं एवं चिट्ठियव्वं जाव संजमियव्वं, तए णं से कत्तिए सेट्ठी नेगमट्ठसहस्सेण सद्धिं मुणिसुव्वयस्स अरहओ इमं एयारूवं धम्मियं उवदेसं सम्मं पडिवज्जइ तमाणाए तहा गच्छति जाव संजमेति, तए णं से कत्तिए सेट्ठी णेगमट्ठसहस्सेणं सद्धिं अणगारे जाए ईरियासमिए जाव गुत्तबंभयारी, तए णं से

१८ शतके उद्देशः २ कार्त्तिकश्रेष्ठ्यधिकारः सू ६१७

॥७३८॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कार्तिकश्रेष्ठी कथा

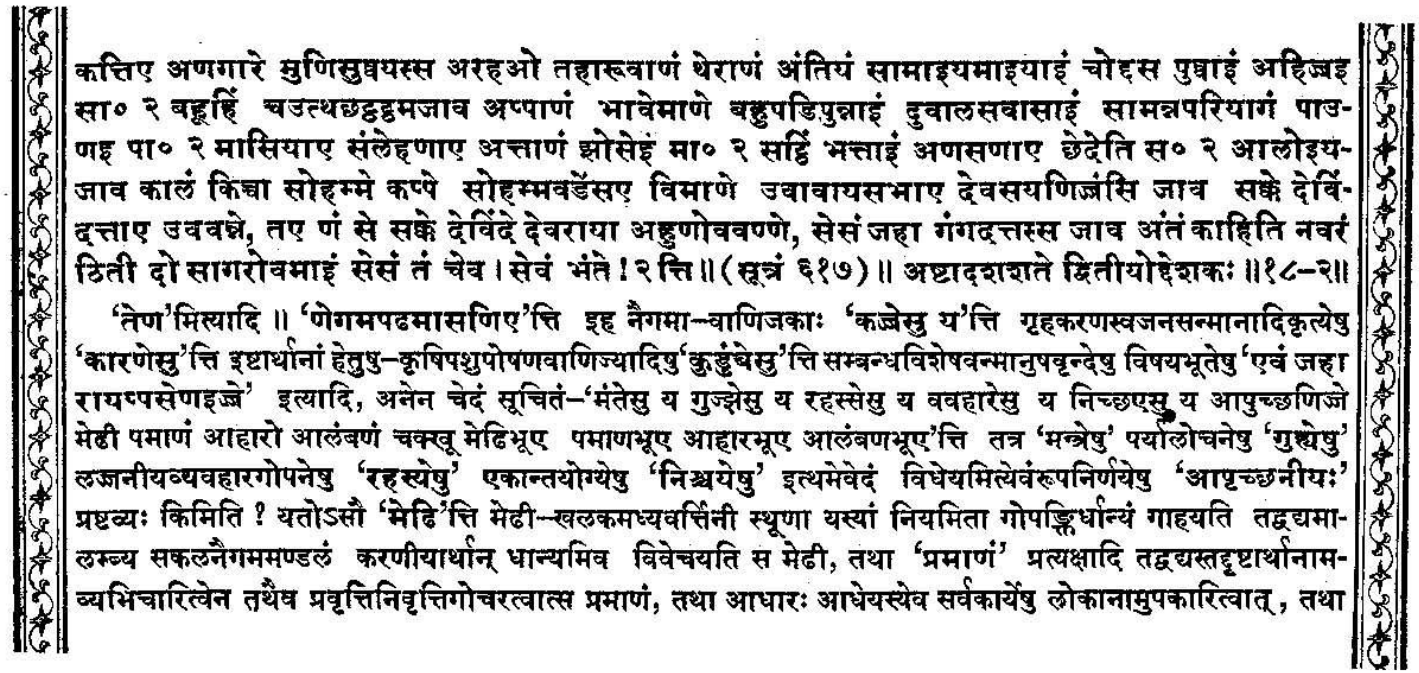

कत्तिए अणगारे सुणिसुव्वयस्स अरहओ तहारूवाणं थेराणं अंतियं सामाइयमाइयाइं चोद्दस पुव्वाइं अहिज्जइ सा० २ बहूहिं चउत्थछट्ठट्ठमजाव अप्पाणं भावेमाणे बहुपडिपुन्नाइं दुवालसवासाइं सामन्नपरियागं पाउणइ पा० २ मासियाए संलेहणाए अत्ताणं झोसेइ मा० २ सट्ठिं भत्ताइं अणसणाए छेदेति स० २ आलोइयजाव कालं किच्चा सोहम्मे कप्पे सोहम्मवडेंसए विमाणे उवावायसभाए देवसयणिज्जंसि जाव सक्के देविंदत्ताए उववन्ने, तए णं से सक्के देविंदे देवराया अहुणोववण्णे, सेसं जहा गंगदत्तस्स जाव अंतं काहिति नवरं ठिती दो सागरोवमाइं सेसं तं चेव। सेवं भंते! २ त्ति ॥ (सूत्रं ६१७) ॥ अष्टादशशते द्वितीयोद्देशकः ॥१८–२॥

'तेण'मित्यादि ॥ 'णेगमपढमासणिए'त्ति इह नैगमा–वाणिजकाः 'कज्जेसु य'त्ति गृहकरणस्वजनसन्मानादिकृत्येषु 'कारणेसु'त्ति इष्टार्थानां हेतुषु–कृषिपशुपोषणवाणिज्यादिषु 'कुडुंबेसु'त्ति सम्बन्धविशेषवन्मानुषवृन्देषु विषयभूतेषु 'एवं जहा रायप्पसेणइज्जे' इत्यादि, अनेन चेदं सूचितं–'मंतेसु य गुज्झेसु य रहस्सेसु य ववहारेसु य निच्छएसु य आपुच्छणिज्जे मेढी पमाणं आहारो आलंबणं चक्खू मेढिभूए पमाणभूए आहारभूए आलंबणभूए'त्ति तत्र 'मन्त्रेषु' पर्यालोचनेषु 'गुह्येषु' लज्जनीयव्यवहारगोपनेषु 'रहस्येषु' एकान्तयोग्येषु 'निश्चयेषु' इत्थमेवेदं विधेयमित्येवंरूपनिर्णयेषु 'आपृच्छनीयः' प्रष्टव्यः किमिति ? यतोऽसौ 'मेढि'त्ति मेढी–खलकमध्यवर्त्तिनी स्थूणा यस्यां नियमिता गोपङ्क्तिर्धान्यं गाहयति तद्वद्यमालम्ब्य सकलनैगममण्डलं करणीयार्थान् धान्यमिव विवेचयति स मेढी, तथा 'प्रमाणं' प्रत्यक्षादि तद्वद्यस्तदृष्टार्थानामव्यभिचारित्वेन तथैव प्रवृत्तिनिवृत्तिगोचरत्वात्स प्रमाणं, तथा आधारः आधेयस्येव सर्वकार्येषु लोकानामुपकारित्वात्, तथा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [६१७]

दीप अनुक्रम [७२७]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥७३९॥

'आलम्बनं' रज्ज्वादि तद्ग्रदापद्गर्त्तादिनिस्तारकत्वादालम्बनं, तथा चक्षुः–लोचनं तद्गलोकस्य विविधकार्येषु प्रवृत्तिनिवृत्ति-विषयप्रदर्शकत्वाच्चक्षुरिति, एतदेव प्रपञ्चयति–'मेढिभूए'इत्यादि, भूतशब्द उपमार्थ इति, 'जहा गंगदत्तो'त्ति षोडश-शतस्य पञ्चमोद्देशके यथा गङ्गदत्तोऽभिहितस्तथाऽयं वाच्य इति ॥ अष्टादशशते द्वितीय उद्देशकः समाप्तिमगमत् ॥

द्वितीयोद्देशके कार्त्तिकस्यान्तक्रियोक्ता, तृतीये तु पृथिव्यादेः सोच्यते इत्येवंसम्बन्धस्यास्येदमादिसूत्रम्—

तेणं कालेणं २ रायगिहे नगरे होत्था वन्नओ गुणसिलए चेइए वन्नओ जाव परिसा पडिगया, तेणं कालेणं तेणं स० समणस्स भगवओ महावीरस्स जाव अंतेवासी मागंदियपुत्ते नामं अणगारे पगइभद्दए जहा मंडि-यपुत्ते जाव पज्जुवासमाणे एवं वयासी–से नूणं भंते ! काउलेस्से पुढविकाइए काउलेस्सेहिंतो पुढविकाइए-हिंतो अणंतरं उव्वट्टित्ता माणुसं विग्गहं लभति मा० २ केवलं बोहिं बुज्झति के० २ तओ पच्छा सिज्झति जाव अंतं करेति ?, हंता मागंदियपुत्ता ! काउलेस्से पुढविकाइए जाव अंतं करेति । से नूणं भंते ! काउलेसे आउकाइए काउलेसेहिंतो आउकाइएहिंतो अणंतरं उव्वट्टित्ता माणुसं विग्गहं लभति मा० २ केवलं बोहिं बुज्झति जाव अंतं करेति ?, हंता मागंदियपुत्ता ! जाव अंतं करेति । से नूणं भंते ! काउलेस्से वणस्सइका-इए एवं चेव जाव अंतं करेति, सेवं भंते २ त्ति मागंदियपुत्ते अणगारे समणं भगवं महावीरं जाव नमंसित्ता जेणेव समणे निग्गंथे तेणेव उवागच्छति उवा० २ समणे निग्गंथे एवं वयासी–एवं खलु अज्जो ! काउलेस्से

१८ शतके उद्देश २ माकन्दिका य श्रमणा-नां मिथ्या-दुष्कृतं सू ६१८

॥७३९॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र अष्टादशमे शतके द्वितीय-उद्देशक: परिसमाप्त:

अथ अष्टादशमे शतके तृतीय-उद्देशक: आरभ्यते

माकंदिक-अनगारस्य लेश्या, कर्म-वेदना,निर्जरा,बन्ध इत्यादि सम्बन्धी प्रश्नोत्तराणि

प्रत सूत्रांक [६१८]

दीप अनुक्रम [७२८]

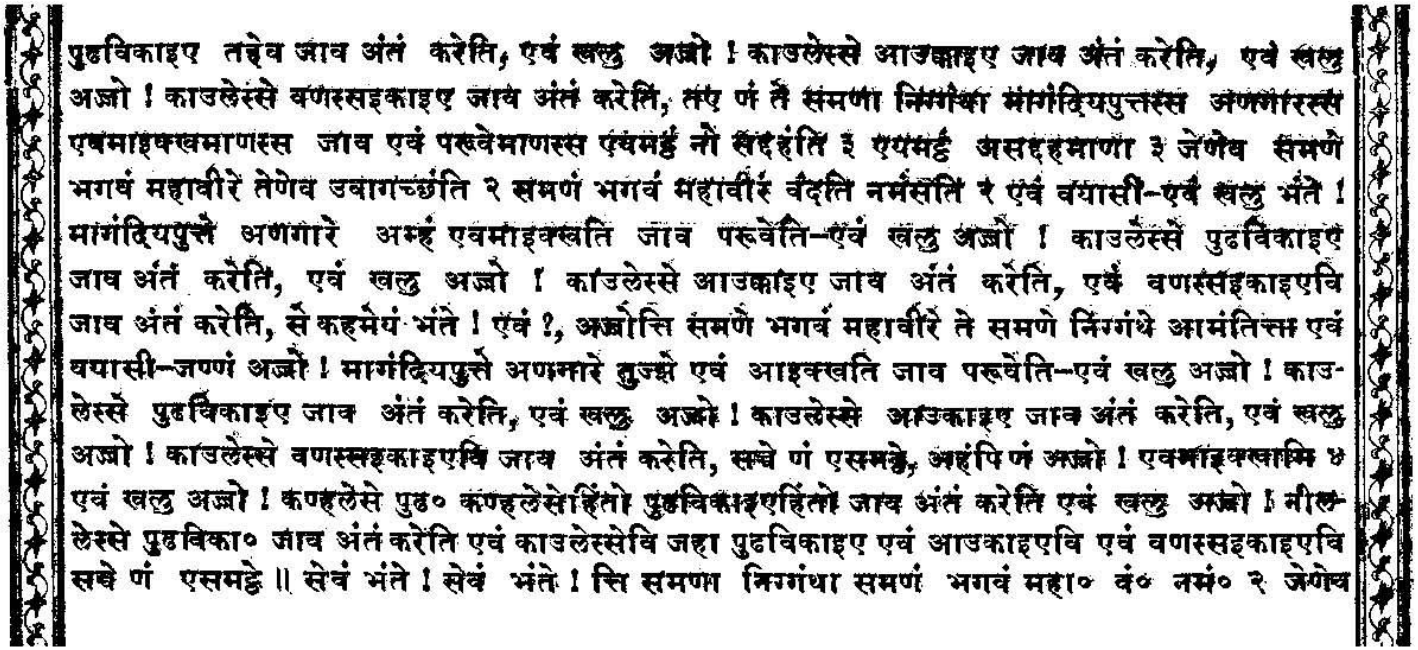

पुढविकाइए तहेव जाव अंतं करेति, एवं खलु अज्जो ! काउलेस्से आउकाइए जाव अंतं करेति, एवं खलु अज्जो ! काउलेस्से वणस्सइकाइए जाव अंतं करेति, तए णं ते समणा निग्गंथा मागंदियपुत्तस्स अणगारस्स एवमाइक्खमाणस्स जाव एवं परूवेमाणस्स एयमट्ठं नो सद्दहंति २ एयमट्ठं असद्दहमाणा ३ जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छंति २ समणं भगवं महावीरं वंदंति नमंसंति २ एवं वयासी–एवं खलु भंते ! मागंदियपुत्ते अणगारे अम्हं एवमाइक्खति जाव परूवेति–एवं खलु अज्जो ! काउलेस्से पुढविकाइए जाव अंतं करेति, एवं खलु अज्जो ! काउलेस्से आउकाइए जाव अंतं करेति, एवं वणस्सइकाइएवि जाव अंतं करेति, से कहमेयं भंते ! एवं ?, अज्जोत्ति समणे भगवं महावीरे ते समणे निग्गंथे आमंतित्ता एवं वयासी–जण्णं अज्जो ! मागंदियपुत्ते अणगारे तुज्झे एवं आइक्खति जाव परूवेति–एवं खलु अज्जो ! काउलेस्से पुढविकाइए जाव अंतं करेति, एवं खलु अज्जो ! काउलेस्से आउकाइए जाव अंतं करेति, एवं खलु अज्जो ! काउलेस्से वणस्सइकाइएवि जाव अंतं करेति, सच्चे णं एसमट्ठे, अहंपि णं अज्जो ! एवमाइक्खामि ४ एवं खलु अज्जो ! कण्हलेसे पुढ० कण्हलेसेहिंतो पुढविकाइएहिंतो जाव अंतं करेति एवं खलु अज्जो ! नीललेस्से पुढविका० जाव अंतं करेति एवं काउलेस्सेवि जहा पुढविकाइए एवं आउकाइएवि एवं वणस्सइकाइएवि सच्चे णं एसमट्ठे ॥ सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति समणा निग्गंथा समणं भगवं महा० वं० नमं० २ जेणेव

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	मार्कंदिक-अनगारस्य लेश्या, कर्म-वेदना,निर्जरा,बन्ध इत्यादि सम्बन्धी प्रश्नोत्तराणि

सागंदियपुत्ते अणगारे तेणेव उवाग० २ सागंदियपुत्तं अणगारं वंदति नमं० २ एयमट्ठं सम्मं विणएणं भुज्जो २ खामेंति (सूत्रं ६१८) ॥

'तेणं कालेण'मित्यादि, 'जहा मंडियपुत्ते'त्ति अनेनेदं सूचितं–'पगइउवसंते पगइपयणुकोहमाणमायलोभे'त्यादि, इह च पृथिव्यब्वनस्पतीनामनन्तरभवे मानुषत्वप्राप्त्याऽनन्तक्रिया संभवति न तेजोवायूनां, तेषामानन्तर्येण मानुषत्वाप्राप्तेरतः पृथिव्यादित्रयस्यैवान्तक्रियामाश्रित्य 'से नूण'मित्यादिना प्रश्नः कृतो न तेजोवायूनामिति ॥ अनन्तरमन्तक्रियोक्ता, अथान्तक्रियायां ये निर्जरापुद्गलास्तद्वक्तव्यतामभिधातुमाह—

तए णं से सागंदियपुत्ते अणगारे उट्ठाए उट्ठेति जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छति ते० २ समणं भगवं महा० वं० नमं० २ एवं वयासी–अणगारस्स णं भंते ! भावियप्पणो सव्वं कम्मं वेदेमाणस्स सव्वं कम्मं निज्जरेमाणस्स चरिमं मारं मरमाणस्स सव्वं मारं मरमाणस्स सव्वं सरीरं विप्पजहमाणस्स चरिमं कम्मं वेदेमाणस्स चरिमं कम्मं निज्जरेमाणस्स चरिमं सरीरं विप्पजहमाणस्स मारणंतियं कम्मं वेदेमाणस्स मारणंतियं कम्मं निज्जरेमाणस्स मारं मरमाणस्स मारणंतियं सरीरं विप्पजहमाणस्स जे चरिमा निज्जरापोग्गला सुहुमा णं ते पोग्गला प० समणाउसो ! सव्वं लोगंपिणं ते उग्गाहित्ताणं चिट्ठंति ?, हंता सागंदियपुत्ता !, अणगारस्स णं भंते ! भावियप्पणो जाव ओगाहित्ताणं चिट्ठंति छउमत्थे णं भंते ! मणुस्से तेसिं निज्जरापोग्गलाणं किंचि आणत्तं वा पाणत्तं वा एवं जहा इंदियउद्देसए पढमे जाव वेमाणिया जाव तत्थ णं जे ते उवउत्ता ते जाणंति पासंति

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	मार्कंदिक-अनगारस्य लेश्या, कर्म-वेदना,निर्जरा,बन्ध इत्यादि सम्बन्धी प्रश्नोत्तराणि

आहारेंति, से तेणट्ठेणं निक्खेवो भाणियव्वोत्ति न पासंति आहारंति, नेरइया णं भं० निज्जरापुग्गला न जाणंति न पासंति आहारंति, एवं जाव पंचिंदियतिरिक्खजोणियाणं, मणुस्सा णं भंते ! निज्जरापोग्गले किं जाणंति पासंति आहारंति उदाहु न जाणंति न पासंति नाहारंति ?, गोयमा ! अत्थेगइया जाणंति ३ अत्थेग० न जाणंति न पासंति आहारंति, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ अत्थेगइया जाणं० पासं० आहा० अत्थेग० न जाणं० न पासं० आहारं० ?, गोयमा ! मणुस्सा दुविहा पन्नत्ता, तंजहा–सन्नीभूया य असन्नीभूया य, तत्थ णं जे ते असन्निभूया ते न जाणंति न पासंति आहारंति, तत्थ णं जे ते सन्नीभूया ते दुविहा पं०, तं०–उवउत्ता अणुवउत्ता य, तत्थ णं जे ते अणुवउत्ता ते न याणंति न पासंति आहारंति, तत्थ णं जे ते उवउत्ता ते जाणंति ३, से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ अत्थेगइया न जाणंति २ आहारेंति अत्थेगइया जाणंति ३, वाणमंतरजोइसिया जहा नेरइया । वेमाणिया णं भंते ! ते निज्जरापोग्गले किं जाणंति ६ ?, गोयमा ! जहा मणुस्सा नवरं वेमाणिया दुविहा पं०, तं०–माइमिच्छदिट्ठीउववन्नगा य अमाइसम्मदिट्ठीउववन्नगा य, तत्थ णं जे ते मायिमिच्छदिट्ठिउववन्नगा ते णं न जा० न पा० आहा० तत्थ णं जे ते अमायिसम्मदिट्ठीउवव० ते दुविहा पं० तं०–अणंतरोववन्नगा य परंपरोववन्नगा य, तत्थ णं जे ते अणंतरोववन्नगा ते णं न याणंति न पासंति आहारेंति, तत्थ णं जे ते परंपरोववन्नगा ते दुविहा पं०, तं०–पज्जत्तगा य अपज्जत्तगा य, तत्थ णं जे ते

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	मार्कंदिक-अनगारस्य लेश्या, कर्म-वेदना,निर्जरा,बन्ध इत्यादि सम्बन्धी प्रश्नोत्तराणि

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [६१९]

दीप अनुक्रम [७२९]

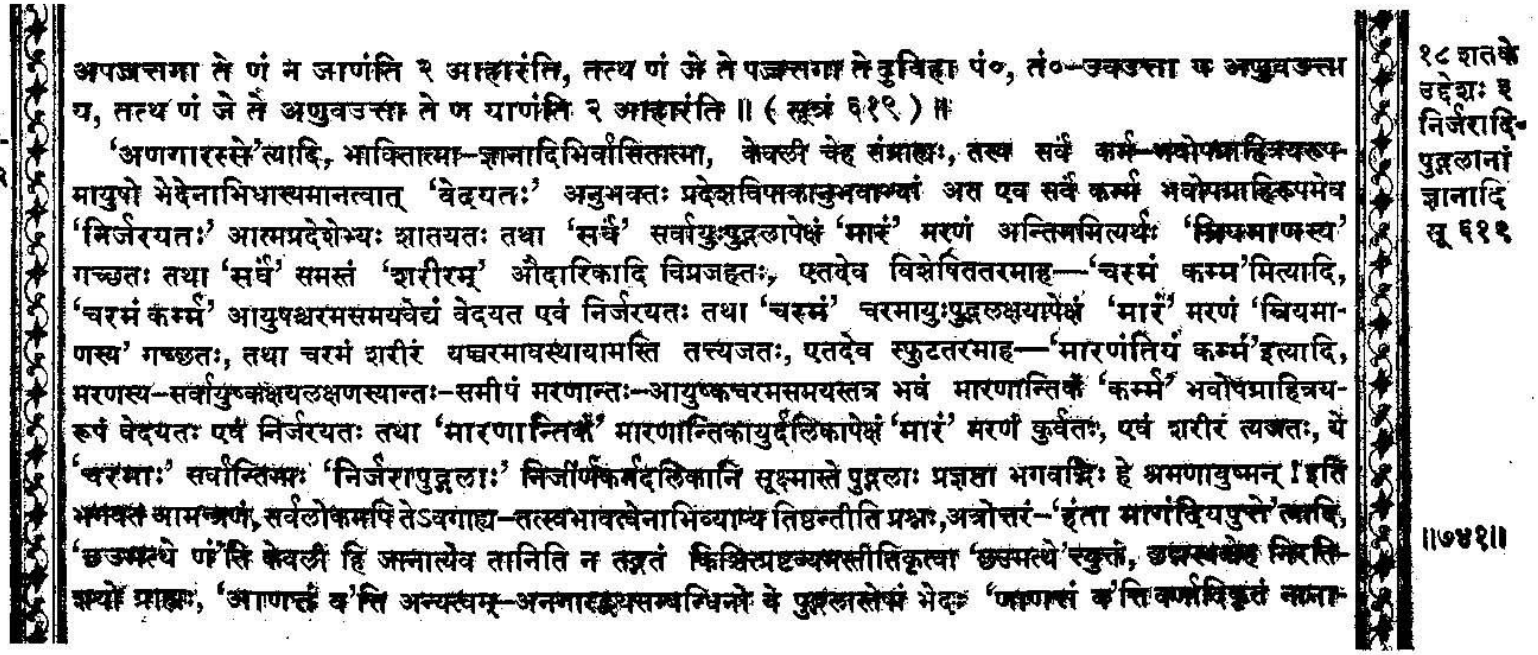

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥७४१॥

अपज्जत्तगा ते णं न जाणंति २ आहारंति, तत्थ णं जे ते पज्जत्तगा ते दुविहा पं०, तं०–उवउत्ता य अणुवउत्ता य, तत्थ णं जे ते अणुवउत्ता ते ण याणंति २ आहारंति ॥ (सूत्रं ६१९) ॥

'अणगारस्से'त्यादि, भावितात्मा–ज्ञानादिभिर्वासितात्मा, केवली चेह संग्राह्यः, तस्य सर्वं कर्म–भवोपग्राहित्यरूपमायुषो भेदेनाभिधास्यमानत्वात् 'वेदयतः' अनुभवतः प्रदेशविपाकानुभवाभ्यां अत एव सर्वं कर्म भवोपग्राहिरूपमेव 'निर्जरयतः' आत्मप्रदेशेभ्यः शातयतः तथा 'सर्वं' सर्वायुःपुद्गलापेक्षं 'मारं' मरणं अन्तिममित्यर्थः 'म्रियमाणस्य' गच्छतः तथा 'सर्वं' समस्तं 'शरीरम्' औदारिकादि विप्रजहतः, एतदेव विशेषिततरमाह—'चरमं कम्म'मित्यादि, 'चरमं कर्म्म' आयुषश्चरमसमयवेद्यं वेदयत एवं निर्जरयतः तथा 'चरमं' चरमायुःपुद्गलक्षयापेक्षं 'मारं' मरणं 'म्रियमाणस्य' गच्छतः, तथा चरमं शरीरं यच्चरमावस्थायामस्ति तत्त्यजतः, एतदेव स्फुटतरमाह—'मारणंतियं कम्म'इत्यादि, मरणस्य–सर्वायुष्कक्षयलक्षणस्यान्तः–समीपं मरणान्तः–आयुष्कचरमसमयस्तत्र भवं मारणान्तिकं 'कर्म्म' भवोपग्राहित्यरूपं वेदयतः एवं निर्जरयतः तथा 'मारणान्तिकं' मारणान्तिकायुर्दलिकापेक्षं 'मारं' मरणं कुर्वतः, एवं शरीरं त्यजतः, ये 'चरमाः' सर्वान्तिमाः 'निर्जरापुद्गलाः' निर्जीर्णकर्मदलिकानि सूक्ष्मास्ते पुद्गलाः प्रज्ञप्ता भगवद्भिः हे श्रमणायुष्मन् ! इति भगवते आमन्त्रणं, सर्वलोकमपि तेऽवगाह्य–तत्स्वभावत्वेनाभिव्याप्य तिष्ठन्तीति प्रश्नः, अत्रोत्तरं–'हंता मागंदियपुत्ते'त्यादि, 'छउमत्थे णं'ति केवली हि जानात्येव तानिति न तद्व्यं किञ्चित्प्रष्टव्यमस्तीतिकृत्वा 'छउमत्थे'त्युक्तं, छद्मस्थोह निरतिशयो ग्राह्यः, 'आणत्तं व'त्ति अन्यत्वम्–अनगारद्रव्यसम्बन्धिनो ये पुद्गलास्तेषां भेदः 'जाणत्तं व'त्ति वर्णादिकृतं नानात्वं

१८ शतके उद्देशः ३ निर्जरादि-पुद्गलानां ज्ञानादि सू ६१९

॥७४१॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	मार्कंदिक-अनगारस्य लेश्या, कर्म-वेदना,निर्जरा,बन्ध इत्यादि सम्बन्धी प्रश्नोत्तराणि

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [६१९]

दीप अनुक्रम [७२९]

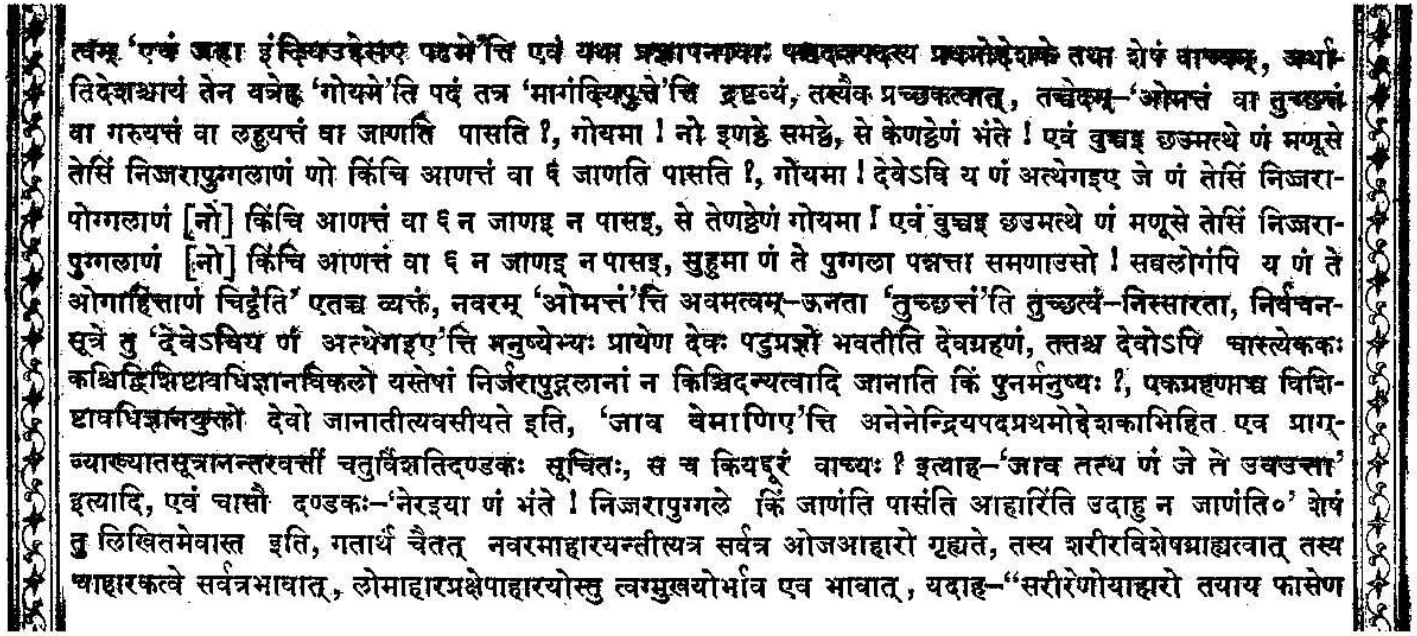

त्वम् 'एवं जहा इंदियउद्देसए पढमे'त्ति एवं यथा प्रज्ञापनायाः पञ्चदशपदस्य प्रथमोद्देशके तथा शेषं वाच्यम्, अर्था-तिदेशश्चायं तेन यत्रेह 'गोयमे'ति पदं तत्र 'मागंदियपुत्ते'त्ति द्रष्टव्यं, तस्यैव प्रच्छकत्वात्, तच्चेदम्–'ओमत्तं वा तुच्छत्तं वा गरुयत्तं वा लहुयत्तं वा जाणति पासति ?, गोयमा ! नो इणट्ठे समट्ठे, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ छउमत्थे णं मणूसे तेसिं निज्जरापुग्गलाणं णो किंचि आणत्तं वा ६ जाणति पासति ?, गोयमा ! देवेऽवि य णं अत्थेगइए जे णं तेसिं निज्जरा-पोग्गलाणं [नो] किंचि आणत्तं वा ६ न जाणइ न पासइ, से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ छउमत्थे णं मणूसे तेसिं निज्जरा-पुग्गलाणं [नो] किंचि आणत्तं वा ६ न जाणइ न पासइ, सुहुमा णं ते पुग्गला पन्नत्ता समणाउसो ! सव्वलोगंपि य णं ते ओगाहित्ताणं चिट्ठंति' एतच्च व्यक्तं, नवरम् 'ओमत्तं'त्ति अवमत्वम्–ऊनता 'तुच्छत्तं'ति तुच्छत्वं–निस्सारता, निर्वचन-सूत्रे तु 'देवेऽवि य णं अत्थेगइए'त्ति मनुष्येभ्यः प्रायेण देवः पटुप्रज्ञो भवतीति देवग्रहणं, तत्तश्च देवोऽपि चास्त्येककः कश्चिद्विशिष्टावधिज्ञानविकलो यस्तेषां निर्जरापुद्गलानां न किञ्चिदन्यत्वादि जानाति किं पुनर्मनुष्यः ?, एकग्रहणाच्च विशि-ष्टावधिज्ञानयुक्तो देवो जानातीत्यवसीयते इति, 'जाव वेमाणिए'त्ति अनेनेन्द्रियपदप्रथमोद्देशकाभिहित एव प्राग्-व्याख्यातसूत्रानन्तरवर्त्ती चतुर्विंशतिदण्डकः सूचितः, स च कियदूरं वाच्यः ? इत्याह–'जाव तत्थ णं जे ते उवउत्ता' इत्यादि, एवं चासौ दण्डकः–'नेरइया णं भंते ! निज्जरापुग्गले किं जाणंति पासंति आहारिंति उदाहु न जाणंति०' शेषं तु लिखितमेवास्त इति, गतार्थं चैतत् नवरमाहारयन्तीत्यत्र सर्वत्र ओजआहारो गृह्यते, तस्य शरीरविशेषग्राह्यत्वात् तस्य चाहारकत्वे सर्वत्रभावात्, लोमाहारप्रक्षेपाहारयोस्तु त्वग्मुखयोर्भाव एव भावात्, यदाह–"सरीरेणोयाहारो तयाय फासेण

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	मार्कंदिक-अनगारस्य लेश्या, कर्म-वेदना,निर्जरा,बन्ध इत्यादि सम्बन्धी प्रश्नोत्तराणि

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥७४२॥

लोमआहारो । पक्खेवाहारो पुण कावलिओ होइ नायव्वो ॥ १ ॥" [कार्मणेनौजआहारः त्वचा स्पर्शेन च लोमाहारः । प्रक्षेपाहारः पुनः कावलिको भवति ज्ञातव्यः ॥ १ ॥] मनुष्यसूत्रे तु सञ्ज्ञिभूता विशिष्टावधिज्ञान्यादयो गृह्यन्ते, येषां ते निर्जरापुद्गला ज्ञानविषयाः । वैमानिकसूत्रे तु वैमानिका अमायिसम्यग्दृष्टय उपयुक्तास्तान् जानन्ति ये विशिष्टाव-धयो, मायिमिथ्यादृष्टयस्तु न जानन्ति मिथ्यादृष्टित्वादेवेति ॥ अनन्तरं निर्जरापुद्गलाश्चिन्तितास्ते च बन्धे सति भवन्तीति बन्धं निरूपयन्नाह—

कतिविहे णं भन्ते ! बंधे प० ?, मागंदियपुत्ता ! दुविहे प० तं०–दव्वबंधे य भावबंधे य, दव्वबंधे णं भंते ! कतिविहे प० ?, मागंदियपुत्ता ! दुविहे प० तं०–पओगबंधे य वीससाबंधे य, वीससाबंधे णं भंते ! कतिविहे पं० ?, मागंदियपुत्ता ! दुविहे प०, तं०–साइयवीससाबंधे य अणादीयवीससाबंधे य, पयोगबंधे णं भंते ! कतिविहे पं०, मागं० पुत्ता ! दुविहे पं०, तं०–सिढिलबंधणबन्धे य धणियबंधणबन्धे य, भावबंधे णं भंते ! कतिविहे पं० ?, मागंदियपुत्ता ! दुविहे पं० तं०–मूलपगडिबंधे य उत्तरपगडिबंधे य, नेरइयाणं भंते ! कतिविहे भाव-बंधे प० ?, मागंदियपुत्ता ! दुविहे भावबंधे पं० तं०–मूलपगडिबंधे य उत्तरपगडिबंधे य, एवं जाव वेमाणि-याणं, नाणावरणिज्जस्स णं भंते ! कम्मस्स कतिविहे भावबंधे प० ?, मागंदिया ! दुविहे भावबंधे प० तं०–मूलपगडिबंधे य उत्तरपयडिबंधे य, नेरतियाणं भंते ! नाणावरणिज्जस्स कम्मस्स कतिविहे भावबंधे० प० ?,

१८ शतके उद्देशः ३ द्रव्यभाव-बन्धौ सू ६२०

॥७४२॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	मार्कंदिक-अनगारस्य लेश्या, कर्म-वेदना,निर्जरा,बन्ध इत्यादि सम्बन्धी प्रश्नोत्तराणि

प्रत सूत्रांक [६२०]

दीप अनुक्रम [७३०]

मागंदियपुत्ता ! दुविहे भावबंधे प० तं०–मूलपगडिबंधे य उत्तरपयडि० एवं जाव वेमाणियाणं, जहा नाणावरणिज्जेणं दंडओ भणिओ एवं जाव अंतराइएणं भाणियव्वो ॥ (सूत्रं ६२०) ॥

'कइविहे ण'मित्यादि, 'दव्वबंधे य'त्ति द्रव्यबन्ध आगमादिभेदादनेकविधः केवलमिहोभयव्यतिरिक्तो ग्राह्यः, स च द्रव्येण–स्नेहरज्ज्वादिना द्रव्यस्य वा परस्परेण बन्धो द्रव्यबन्धः, 'भावबंधे य'त्ति भावबन्ध आगमादिभेदाद् द्वेधा, स चेह नोआगमतो ग्राह्यः, तत्र भावेन–मिथ्यात्वादिना भावस्य वा–उपयोगभावाव्यतिरेकात् जीवस्य बन्धो भावबन्धः, 'पओयबंधे य'त्ति जीवप्रयोगेण द्रव्याणां बन्धनं 'वीससाबंधे'त्ति स्वभावतः 'साईवीससाबंधे'त्ति अभ्रादीनाम् 'अणाईयवीससाबंधे य'त्ति धर्मास्तिकायाधर्म्मास्तिकायादीनां 'सिढिलबंधणबन्धे य'त्ति तृणपूलिकादीनां 'धणियबंधणबन्धे य'त्ति रथचक्रादीनामिति ॥ कर्म्माधिकारादिदमाह—

जीवाणं भंते ! पावे कम्मे जे य कडे जाव जे य कज्जिस्सइ अत्थि याइ तस्स केइ णाणत्ते ?, हंता अत्थि, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ जीवाणं पावे कम्मे जे य कडे जाव जे य कज्जिस्सति अत्थि याइ तस्स णाणत्ते ?, मागंदियपुत्ता ! से जहानामए–केइ पुरिसे धणुं परामुसइ धणुं २ उसुं परामुसइ उ० २ ठाणं ठा० २ आयय-कन्नायतं उसुं करेंति आ० २ उद्धं वेहासं उविहइ से नूणं मागंदियपुत्ता ! तस्स उसुस्स उद्धं वेहासं उव्वीहस्स समाणस्स एयतिवि णाणत्तं जाव तं तं भावं परिणमतिवि णाणत्तं ?, हंता भगवं ! एयतिवि णाणत्तं जाव

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	मार्कंदिक-अनगारस्य लेश्या, कर्म-वेदना,निर्जरा,बन्ध इत्यादि सम्बन्धी प्रश्नोत्तराणि

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [६२१--६२२]

दीप अनुक्रम [७३१--७३२]

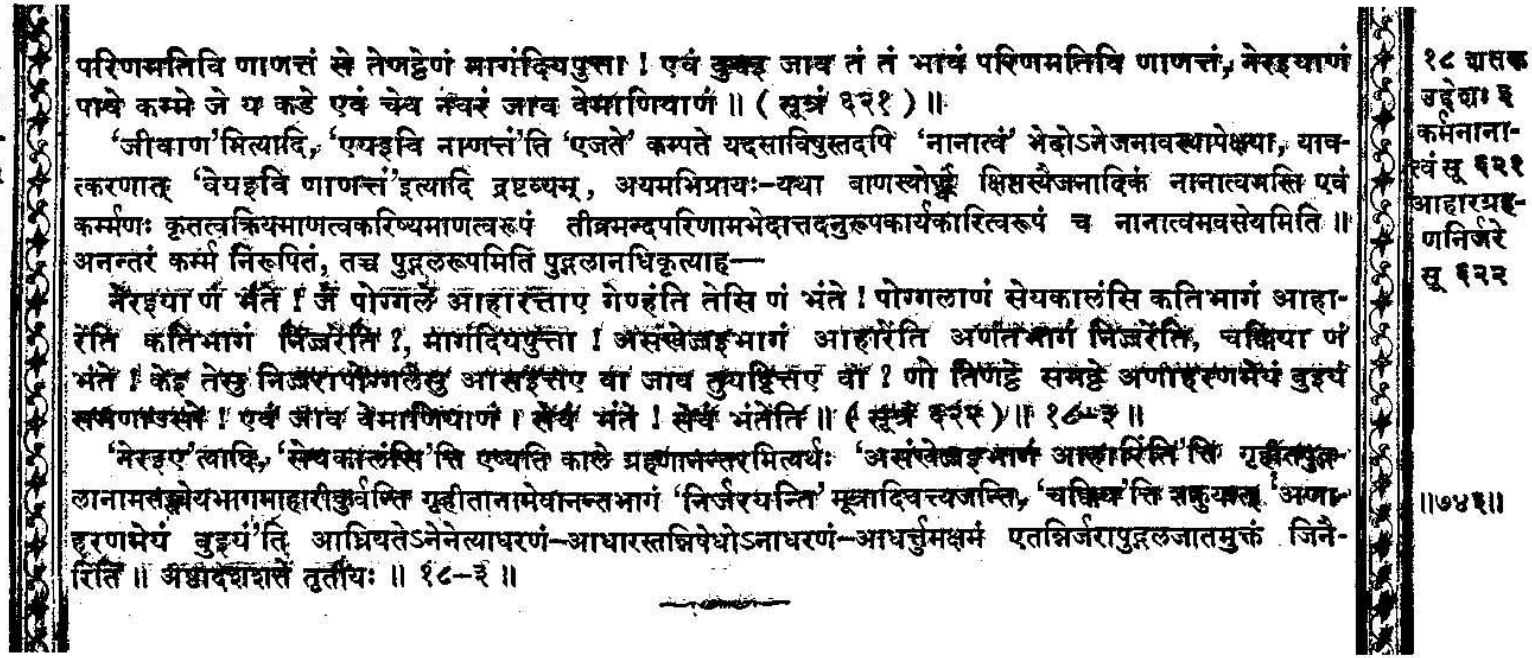

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः२ ॥७४१॥

परिणमतिवि णाणत्तं से तेणट्ठेणं मागंदियपुत्ता ! एवं वुच्चइ जाव तं तं भावं परिणमतिवि णाणत्तं, नेरइयाणं पावे कम्मे जे य कडे एवं चेव नवरं जाव वेमाणियाणं ॥ (सूत्रं ६२१) ॥

'जीवाण'मित्यादि, 'एयइवि णाणत्तं'ति 'एजते' कम्पते यदसाविषुस्तदपि 'नानात्वं' भेदोऽनेजनावस्थापेक्षया, यावत्करणात् 'वेयइवि णाणत्तं'इत्यादि द्रष्टव्यम्, अयमभिप्रायः–यथा बाणस्योर्द्ध क्षिप्तस्यैजनादिकं नानात्वमस्ति एवं कर्म्मणः कृतत्वक्रियमाणत्वकरिष्यमाणत्वरूपं तीव्रमन्दपरिणामभेदात्तदनुरूपकार्यकारित्वरूपं च नानात्वमवसेयमिति ॥ अनन्तरं कर्म्म निरूपितं, तच्च पुद्गलरूपमिति पुद्गलानधिकृत्याह—

नेरइया णं भंते ! जे पोग्गले आहारत्ताए गेण्हंति तेसि णं भंते ! पोग्गलाणं सेयकालंसि कतिभागं आहारेंति कतिभागं निज्जरेंति ?, मागंदियपुत्ता ! असंखेज्जइभागं आहारेंति अणंतभागं निज्जरेंति, चलियं णं भंते ! केइ तेसु निज्जरापोग्गलेसु आसइत्तए वा जाव तुयट्टित्तए वा ? णो तिणट्ठे समट्ठे अणोहरणमेयं वुइयं समणाउसो ! एवं जाव वेमाणियाणं । सेवं भंते ! सेवं भंतेति ॥ (सूत्रं ६२२) ॥ १८–३ ॥

'नेरइए'त्यादि, 'सेयकालंसि'त्ति एष्यति काले ग्रहणानन्तरमित्यर्थः 'असंखेज्जइभागं आहारेंति'त्ति गृहीतपुद्गलानामसङ्ख्येयभागमाहारीकुर्वन्ति गृहीतानामेवानन्तभागं 'निर्जरयन्ति' मूत्रादिवत्त्यजन्ति, 'चलियं'ति शक्नुयात् 'अणोहरणमेयं वुइयं'ति आधियतेऽनेनेत्याधरणं–आधारस्तन्निषेधोऽनाधरणं–आधर्त्तुमक्षमं एतन्निर्जरापुद्गलजातमुक्तं जिनैरिति ॥ अष्टादशशते तृतीयः ॥ १८–३ ॥

१८ शतक उद्देशः ३ कर्मनानात्वं सू ६२१ आहारग्रहणनिर्जरे सू ६२२

॥७४१॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र अष्टादशमे शतके तृतीय-उद्देशक: परिसमाप्त:

मार्कंदिक-अनगारस्य लेश्या, कर्म-वेदना,निर्जरा,बन्ध इत्यादि सम्बन्धी प्रश्नोत्तराणि

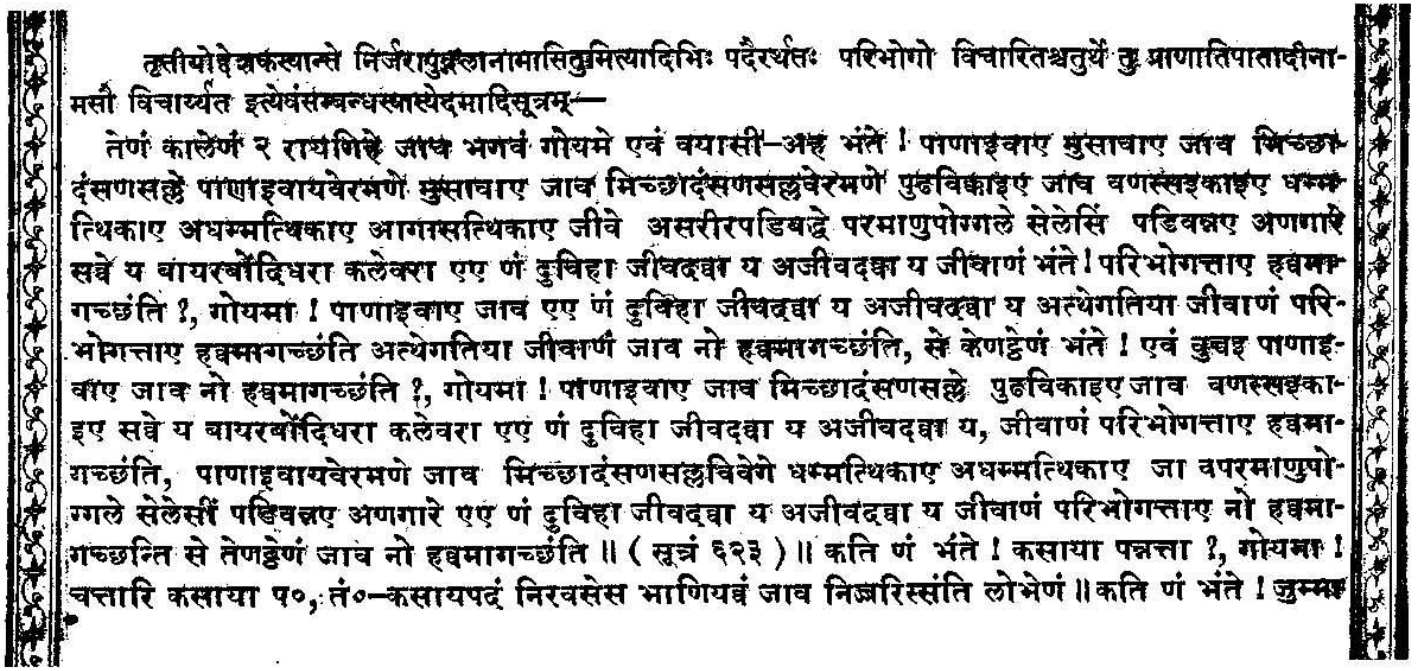

तृतीयोद्देशकस्यान्ते निर्जरापुद्गलानामासितुमित्यादिभिः पदैरर्थतः परिभोगो विचारितश्चतुर्थे तु प्राणातिपातादीनामसौ विचार्य्यत इत्येवंसम्बन्धस्यास्येदमादिसूत्रम्—

तेणं कालेणं २ रायगिहे जाव भगवं गोयमे एवं वयासी–अह भंते ! पाणाइवाए मुसावाए जाव मिच्छादंसणसल्ले पाणाइवायवेरमणे मुसावाए जाव मिच्छादंसणसल्लवेरमणे पुढविकाइए जाव वणस्सइकाइए धम्मत्थिकाए अधम्मत्थिकाए आगासत्थिकाए जीवे असरीरपडिबद्धे परमाणुपोग्गले सेलेसिं पडिवन्नए अणगारे सव्वे य बायरबोंदिधरा कलेवरा एए णं दुविहा जीवदव्वा य अजीवदव्वा य जीवाणं भंते ! परिभोगत्ताए हव्वमागच्छंति ?, गोयमा ! पाणाइवाए जाव एए णं दुविहा जीवदव्वा य अजीवदव्वा य अत्थेगतिया जीवाणं परिभोगत्ताए हव्वमागच्छंति अत्थेगतिया जीवाणं जाव नो हव्वमागच्छंति, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ पाणाइवाए जाव नो हव्वमागच्छंति ?, गोयमा ! पाणाइवाए जाव मिच्छादंसणसल्ले पुढविकाइए जाव वणस्सइकाइए सव्वे य बायरबोंदिधरा कलेवरा एए णं दुविहा जीवदव्वा य अजीवदव्वा य, जीवाणं परिभोगत्ताए हव्वमागच्छंति, पाणाइवायवेरमणे जाव मिच्छादंसणसल्लविवेगे धम्मत्थिकाए अधम्मत्थिकाए जा वपरमाणुपोग्गले सेलेसीं पडिवन्नए अणगारे एए णं दुविहा जीवदव्वा य अजीवदव्वा य जीवाणं परिभोगत्ताए नो हव्वमागच्छन्ति से तेणट्ठेणं जाव नो हव्वमागच्छंति ॥ (सूत्रं ६२३) ॥ कति णं भंते ! कसाया पन्नत्ता ?, गोयमा ! चत्तारि कसाया प०, तं०–कसायपदं निरवसेस भाणियव्वं जाव निज्जरिस्संति लोभेणं ॥ कति णं भंते ! जुम्मा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अथ अष्टादशमे शतके चतुर्थ-उद्देशक: आरभ्यते

पन्नत्ता ?, गोयमा ! चत्तारि जुम्मा पन्नत्ता–कडजुम्मे तेयोगे दावरजुम्मे कलिओगे, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुचइ जाव कलियोए ?, गोयमा ! जे णं रासीचउक्कएणं अवहारेणं अवहीरमाणे चउपज्जवसिए सेत्तं कडजुम्मे, जे णं रासी चउक्कएणं अवहारेणं अवहीरमाणे तिपज्जवसिए सेत्तं तेयोए, जे णं रासी चउक्कएणं अवहारेणं अवहीरमाणे दुपज्जवसिए सेत्तं दावरजुम्मे, जे णं रासी चउक्कएणं अवहारेणं अवहीरमाणे एगपज्जवसिए सेत्तं कलिओगे, से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुचइ जाव कलिओए ॥ नेरइया णं भंते ! किं कडजुम्मा तेयोगा दावरजुम्मा कलियोगा ४ ?, गोयमा ! जहन्नपदे कडजुम्मा उक्कोसपदे तेयोगा अजहन्नुक्कोसपदे सिय कडजुम्मा १ जाव सिय कलियोगा ४, एवं जाव थणियकुमारा । वणस्सइकाइयाणं पुच्छा, गोयमा ! जहन्नपदे अपदा उक्कोसपदे य अपदा अजहन्नुक्कोसियपदे सिय कडजुम्मा जाव सिय कलियोगा । बेइंदिया णं पुच्छा, गोयमा ! जहन्नपदे कडजुम्मा उक्कोसपदे दावरजुम्मा, अजहन्नमणुक्कोसपदे सिय कडजुम्मा जाव सिय कलियोगा, एवं जाव चतुरिंदिया, सेसा एगिंदिया जहा बेंदिया, पंचिंदियतिरिक्खजोणिया जाव वेमाणिया जहा नेरइया, सिद्धा जहा वणस्सइकाइया । इत्थीओ णं भंते ! किं कडजुम्मा० ? पुच्छा, गोयमा ! जहन्नपदे कडजुम्माओ उक्कोसपदे सिय कडजुम्माओ अजहन्नमणुक्कोसपदे सिय कडजुम्माओ जाव सिय कलियोगाओ, एवं असुरकुमारित्थीओवि जाव थणियकुमारइत्थीओ, एवं तिरिक्खजोणियइत्थीओ एवं मणुसित्थीओ एवं जाव वाणमंतरजोइसियवेमाणियदेवित्थीओ ॥ (सूत्रं ६२४) जावतियाणं भंते ! वरा अंधगवण्हिणो जीवा तावतिया परा अंधगव-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

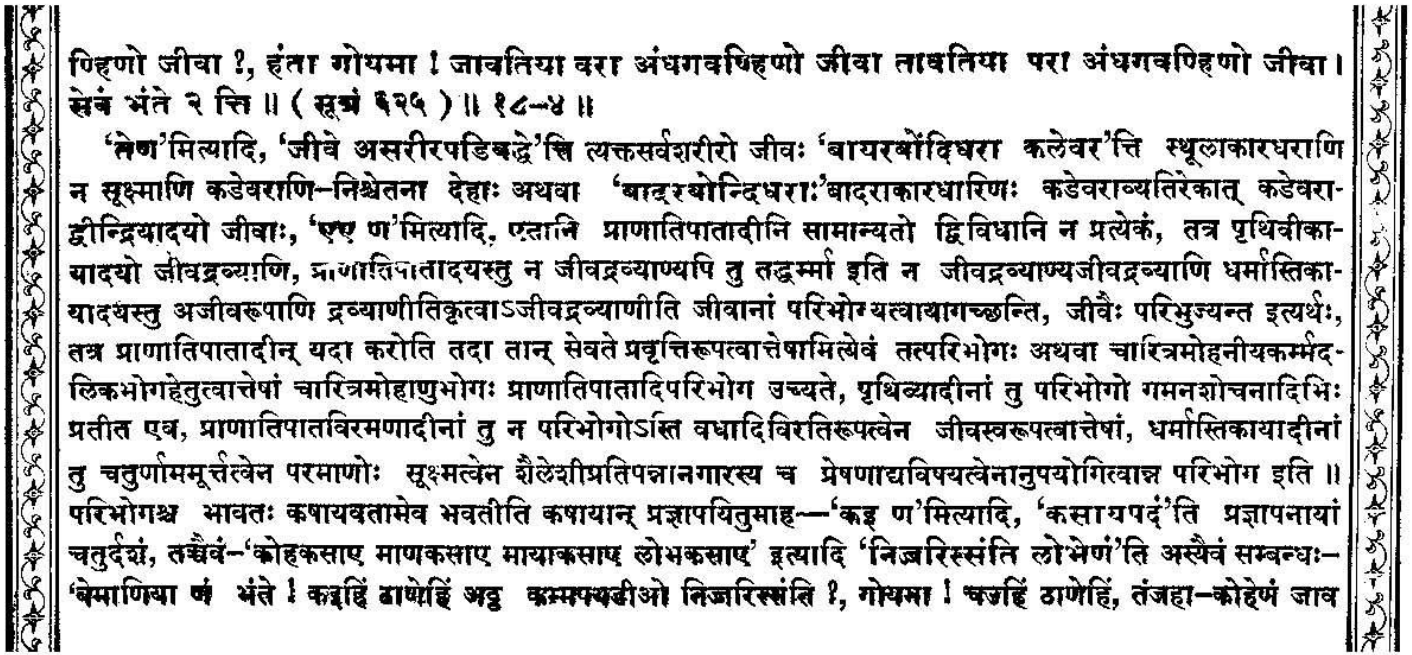

ण्हिणो जीवा ?, हंता गोयमा ! जावतिया वरा अंधगवण्हिणो जीवा तावतिया परा अंधगवण्हिणो जीवा। सेवं भंते २ त्ति ॥ (सूत्रं ६२५) ॥ १८–४ ॥

'तेण'मित्यादि, 'जीवे असरीरपडिबद्धे'त्ति त्यक्तसर्वशरीरो जीवः 'बायरबोंदिधरा कलेवर'त्ति स्थूलाकारधराणि न सूक्ष्माणि कडेवराणि–निश्चेतना देहाः अथवा 'बादरबोन्दिधराः'बादराकारधारिणः कडेवराव्यतिरेकात् कडेवरा-द्वीन्द्रियादयो जीवाः, 'एए ण'मित्यादि, एतानि प्राणातिपातादीनि सामान्यतो द्विविधानि न प्रत्येकं, तत्र पृथिवीका-यादयो जीवद्रव्याणि, प्राणातिपातादयस्तु न जीवद्रव्याण्यपि तु तद्धर्म्मा इति न जीवद्रव्याण्यजीवद्रव्याणि धर्मास्तिका-यादयस्तु अजीवरूपाणि द्रव्याणीतिकृत्वाऽजीवद्रव्याणीति जीवानां परिभोग्यत्वायागच्छन्ति, जीवैः परिभुज्यन्त इत्यर्थः, तत्र प्राणातिपातादीन् यदा करोति तदा तान् सेवते प्रवृत्तिरूपत्वात्तेषामित्येवं तत्परिभोगः अथवा चारित्रमोहनीयकर्म्मद-लिकभोगहेतुत्वात्तेषां चारित्रमोहाणुभोगः प्राणातिपातादिपरिभोग उच्यते, पृथिव्यादीनां तु परिभोगो गमनशोचनादिभिः प्रतीत एव, प्राणातिपातविरमणादीनां तु न परिभोगोऽस्ति वधादिविरतिरूपत्वेन जीवस्वरूपत्वात्तेषां, धर्मास्तिकायादीनां तु चतुर्णाममूर्त्तत्वेन परमाणोः सूक्ष्मत्वेन शैलेशीप्रतिपन्नानगारस्य च प्रेषणाद्यविषयत्वेनानुपयोगित्वान्न परिभोग इति ॥ परिभोगश्च भावतः कषायवतामेव भवतीति कषायान् प्रज्ञापयितुमाह—'कइ ण'मित्यादि, 'कसायपदं'ति प्रज्ञापनायां चतुर्दशं, तच्चैवं–'कोहकसाए माणकसाए मायाकसाए लोभकसाए' इत्यादि 'निज्जरिस्संति लोभेणं'ति अस्यैवं सम्बन्धः– 'वेमाणिया णं भंते ! कइहिं ठाणेहिं अट्ठ कम्मपयडीओ निज्जरिस्संति ?, गोयमा ! चउहिं ठाणेहिं, तंजहा–कोहेणं जाव

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥७४५॥

लोभेणं'ति, इह नारकादीनामष्टापि कर्माण्युदये वर्त्तन्ते, उदयवर्त्तिनां च तेषामवश्यं निर्जरणमस्ति, कषायोदयवर्त्तिनश्च ते ततश्च कषायोदये कर्मनिर्जराया भावात् क्रोधादिभिर्वैमानिकानामष्टकर्मप्रकृतिनिर्जरणमुच्यते इति॥ अनन्तरं कषाया निरूपिताः, ते च चतुःसङ्ख्यत्वात्कृतयुग्मलक्षणसङ्ख्याविशेषवाच्या इत्यतो युग्मस्वरूपप्रतिपादनायाह—'कइ ण'मित्यादि, 'चत्तारि जुम्म'त्ति इह गणितपरिभाषया समो राशिर्युग्ममुच्यते विषमस्त्वोज इति, तत्र च यद्यपीह द्वौ राशी युग्मशब्दवाच्यौ द्वौ चौजःशब्दवाच्यौ भवतस्तथाऽपीह युग्मशब्देन राशयो विवक्षिताः अतश्चत्वारि युग्मानि राशय इत्यर्थः, तत्र 'कडजुम्मे'त्ति कृतं–सिद्धं पूर्णं ततः परस्य राशिसञ्ज्ञान्तरस्याभावेन न त्वोजःप्रभृतिवदपूर्णं यद् युग्मं—समराशिविशेषस्तत्कृतयुग्मं, 'तेओए'त्ति त्रिभिरादित एव कृतयुग्माद्वोपरिवर्त्तिभिरोजो–विषमराशिविशेषरूपोजः, 'दावरजुम्मे'त्ति द्वाभ्यामादित एव कृतयुग्माद्वोपरिवर्त्तिभ्यां यदपरं युग्मं कृतयुग्मादन्यत्तन्निपातनविधेर्द्वापरयुग्मं, 'कलिओए'त्ति कलिना–एकेन आदित एव कृतयुग्माद्वोपरिवर्त्तिना ओजो–विषमराशिविशेषः कल्योज इति। 'जे णं रासी'त्यादि, यो राशिश्चतुष्केनापहारेणापह्रियमाणश्चतुष्पर्यवसितो भवति स कृतयुग्ममित्यभिधीयते, यत्रापि राशौ चतूरूपत्वेन चतुष्कापहारो नास्ति सोऽपि चतुष्पर्यवसितत्वसद्भावात्कृतयुग्ममेव, एवमुत्तरपदेष्वपि ॥ अनन्तरं कृतयुग्मादिराशयः प्ररूपिताः, अथ तैरेव नारकादीन् प्ररूपयन्नाह—'नेरइया ण'मित्यादि 'जहन्नपदे कडजुम्म'त्ति अत्यन्तस्तोकत्वेन 'कृतयुग्माः' कृतयुग्मसञ्ज्ञिताः 'उक्कोसपए'त्ति सर्वोत्कृष्टतायां त्र्योजःसञ्ज्ञिताः मध्यमपदे चतुर्विधा अपि, एतच्चैवमाज्ञाप्रामाण्यादवगन्तव्यम्। 'वणस्सइकाइया ण'मित्यादि, वनस्पतिकायिका जघन्यपदे उत्कृष्टपदे चापदाः, जघन्यपदस्योत्कृष्टपदस्य च तेषामभावात्,

१८ शतके उद्देश ३ प्राणातिपातादीनामुपभोगेतरौ कृतादियुग्माः सू ६२३-६२४

॥७४५॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

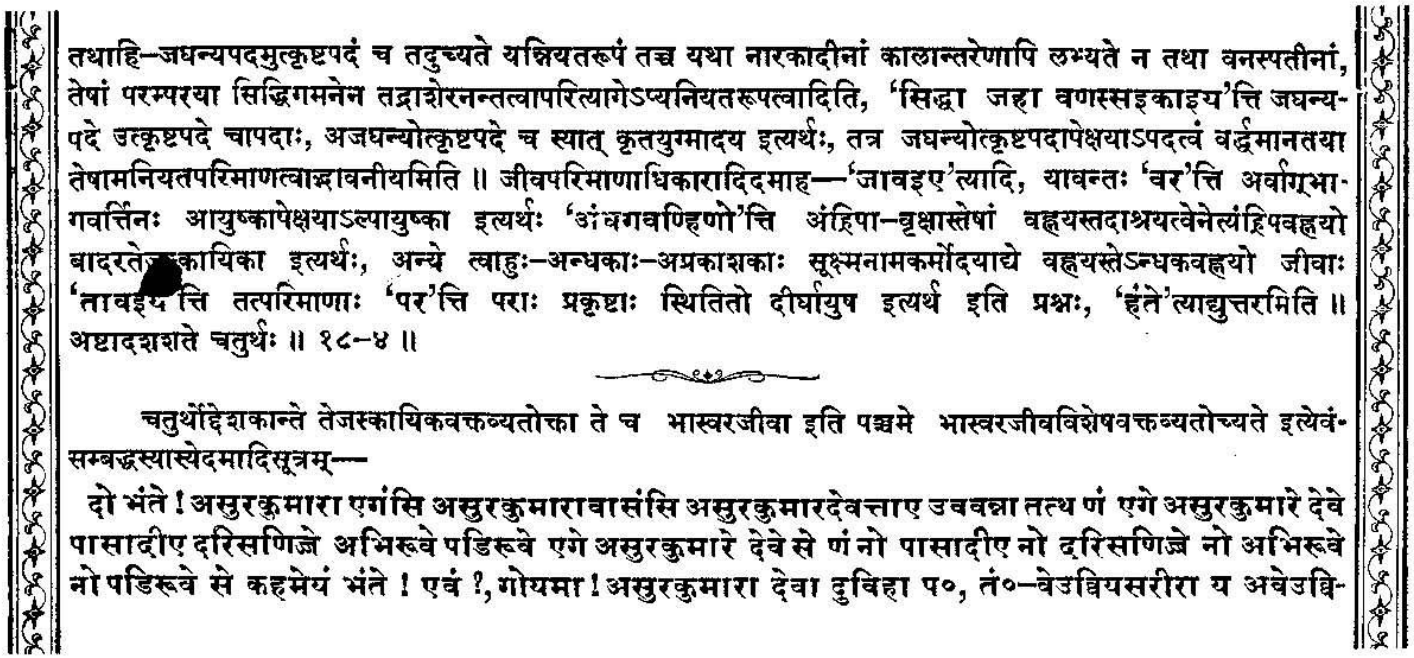

तथाहि–जघन्यपदमुत्कृष्टपदं च तदुच्यते यन्नियतरूपं तच्च यथा नारकादीनां कालान्तरेणापि लभ्यते न तथा वनस्पतीनां, तेषां परम्परया सिद्धिगमनेन तद्राशेरनन्तत्वापरित्यागेऽप्यनियतरूपत्वादिति, 'सिद्धा जहा वणस्सइकाइय'त्ति जघन्यपदे उत्कृष्टपदे चापदाः, अजघन्योत्कृष्टपदे च स्यात् कृतयुग्मादय इत्यर्थः, तत्र जघन्योत्कृष्टपदापेक्षयाऽपदत्वं वर्द्धमानतया तेषामनियतपरिमाणत्वाच्चावनीयमिति ॥ जीवपरिमाणाधिकारादिदमाह—'जावइए'त्यादि, यावन्तः 'वर'त्ति अर्वाग्भागवर्त्तिनः आयुष्कापेक्षयाऽल्पायुष्का इत्यर्थः 'अंधगवण्हिणो'त्ति अंहिपा–वृक्षास्तेषां बहवस्तदाश्रयत्वेनेत्यंहिपबहवो बादरतेजस्कायिका इत्यर्थः, अन्ये त्वाहुः–अन्धकाः–अप्रकाशकाः सूक्ष्मनामकर्मोदयाद्ये बहवस्तेऽन्धकबहवो जीवाः 'तावइय'त्ति तत्परिमाणाः 'पर'त्ति पराः प्रकृष्टाः स्थितितो दीर्घायुष इत्यर्थ इति प्रश्नः, 'हंते'त्याद्युत्तरमिति ॥ अष्टादशशते चतुर्थः ॥ १८–४ ॥

चतुर्थोद्देशकान्ते तेजस्कायिकवक्तव्यतोक्ता ते च भास्वरजीवा इति पञ्चमे भास्वरजीवविशेषवक्तव्यतोच्यते इत्येवंसम्बद्धस्यास्येदमादिसूत्रम्—

दो भंते ! असुरकुमारा एगंसि असुरकुमारावासंसि असुरकुमारदेवत्ताए उववन्ना तत्थ णं एगे असुरकुमारे देवे पासादीए दरिसणिज्जे अभिरूवे पडिरूवे एगे असुरकुमारे देवे से णं नो पासादीए नो दरिसणिज्जे नो अभिरूवे नो पडिरूवे से कहमेयं भंते ! एवं ?, गोयमा ! असुरकुमारा देवा दुविहा प०, तं०–वेउव्वियसरीरा य अवेउव्वि-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र अष्टादशमे शतके चतुर्थ-उद्देशक: परिसमाप्त:

अथ अष्टादशमे शतके पंचम-उद्देशक: आरभ्यते

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [६२६]

दीप अनुक्रम [७३६]

यसरीरा य, तत्थ णं जे से वेउव्वियसरीरे असुरकुमारे देवे से णं पासादीए जाव पडिरूवे, तत्थ णं जे से अवेउव्वियसरीरे असुरकुमारे देवे से णं नो पासादीए जाव नो पडिरूवे, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ तत्थ णं जे से वेउव्वियसरीरे तं चेव जावपडिरूवे ?, गोयमा ! से जहानामए–इहं मणुयलोगंसि दुवे पुरिसा भवंति–एगे पुरिसे अलंकियविभूसिए एगे पुरिसे अणलंकियविभूसिए, एएसि णं गोयमा ! दोण्हं पुरिसाणं कयरे पुरिसे पासादीए जाव पडिरूवे कयरे पुरिसे नो पासादीए जाव नो पडिरूवे जे वा से पुरिसे अलंकिय-विभूसिए जे वा से पुरिसे अणलंकियविभूसिए ?, भगवं ! तत्थ जे से पुरिसे अलंकियविभूसिए से णं पुरिसे पासादीए जाव पडिरूवे, तत्थ णं जे से पुरिसे अणलंकियविभूसिए से णं पुरिसे नो पासादीए जाव नो पडिरूवे से तेणट्ठेणं जाव नो पडिरूवे । दो भंते ! नागकुमारा देवा एगंसि नागकुमारावासंसि एवं चेव एवं जाव थणियकुमारा वाणमंतरजोतिसिया वेमाणिया एवं चेव ॥ (सूत्रं ६२६) ॥

'दो भंते' इत्यादि 'वेउव्वियसरीर'त्ति विभूषितशरीराः ॥ अनन्तरमसुरकुमारादीनां विशेष उक्तः, अथ विशेषाधिकारादिदमाह—

दो भंते ! नेरतिया एगंसि नेरतियावासंसि नेरतियत्ताए उववन्ना, तत्थ णं एगे नेरइए महाकम्मतराए चेव जाव महावेयणतराए चेव एगे नेरइए अप्पकम्मतराए चेव जाव अप्पवेयणतराए चेव से कहमेयं भंते ! एवं ?, गोयमा ! नेरइया दुविहा प० तं०–मायिमिच्छादिट्ठिउववन्नगा य अमायिसम्मदिट्ठिउववन्नगा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

य, तत्थ णं जे से मायिमिच्छादिट्ठिउववन्नए नेरइए से णं महाकम्मतराए चेव जाव महावेयणतराए चेव, तत्थ णं जे से अमायिसम्मदिट्ठिउववन्नए नेरइए से णं अप्पकम्मतराए चेव जाव अप्पवेयणतराए चेव, दो भंते ! असुरकुमारा एवं चेव एवं एगिंदियवज्जं जाव वेमाणिया ॥ (सूत्रं ६२७) ॥

'दो भंते ! नेरइए' त्यादि, 'महाकम्मतराए चेव'त्ति इह यावत्करणात् 'महाकिरियतराए चेव महासवतराए चेव'त्ति दृश्यं, व्याख्या चास्य प्राग्वत् । 'एगिंदियवज्जं'ति इहैकेन्द्रियादिवर्जनमेतेषां मायिमिथ्यादृष्टित्वेनामायिसम्यग्दृष्टिविशेषणस्यायुज्यमानत्वादिति ॥ प्राग् नारकादिवक्तव्यतोक्ता ते चायुष्कप्रतिसंवेदनावन्त इति तेषां तां निरूपयन्नाह—

नेरइए णं भंते ! अणंतरं उव्वट्टित्ता जे भविए पंचिंदियतिरिक्खजोणिएसु उववज्जित्तए से णं भंते ! कयरं आउयं पडिसंवेदेति ?, गोयमा ! नेरइयाउयं पडिसंवेदेति पंचिंदियतिरिक्खजोणियाउए से पुरओ कडे चिट्ठति, एवं मणुस्सेसुवि, नवरं मणुस्साउए से पुरओ कडे चिट्ठइ । असुरकुमारा णं भंते ! अणंतरं उव्वट्टित्ता जे भविए पुढविकाइएसु उववज्जित्तए पुच्छा, गो० ! असुरकुमाराउयं पडिसंवेदेति पुढविकाइयाउए से पुरओ कडे चिट्ठइ, एवं जो जहिं भविओ उववज्जित्तए तस्स तं पुरओ कडं चिट्ठति, जत्थ ठिओ तं पडिसंवेदेति जाव वेमाणिए, नवरं पुढविकाइए पुढविकाइएसु उववज्जति पुढविकाइयाउयं पडिसंवेएति अन्ने य से पुढविकाइयाउए पुरओ कडे चिट्ठति एवं जाव मणुस्सो सट्ठाणे उववाएवो परट्ठाणे तहेव ॥ (सूत्रं ६२८) दो भंते ! असुरकुमारा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

एगंसि असुरकुमारावासंसि असुरकुमारदेवत्ताए उववन्ना तत्थ णं एगे असुरकुमारे देवे उज्जुयं विउविस्सामीति उज्जुयं विउव्वइ वंकं विउविस्सामीति वंकं विउव्वइ जं जहा इच्छइ तं तहा विउव्वइ एगे असुरकुमारे देवे उज्जुयं विउविस्सामीति वंकं विउव्वइ वंकं विउविस्सामीति उज्जुयं विउव्वइ जं जहा इच्छति णो तं तहा विउव्वइ से कहमेयं भंते ! एवं ?, गोयमा ! असुरकुमारा देवा दुविहा पं०, तं०–मायिमिच्छदिट्ठिउववन्नगा य अमायिसम्मदिट्ठीउववन्नगा य, तत्थ णं जे से मायिमिच्छादिट्ठिउववन्नए असुरकुमारे देवे से णं उज्जुयं विउविस्सामीति वंकं विउव्वति जाव णो तं तहा विउव्वइ, तत्थ णं जे से अमायिसम्मदिट्ठिउववन्नए असुरकुमारे देवे से उज्जुयं विउ० जाव तं तहा विउव्वइ । दो भंते! नागकुमारा एवं चेव एवं जाव थणिय० वाणमं० जोइसि० वेमाणिया एवं चेव ॥ सेवं भंते ! २ त्ति ॥ (सूत्रं ६२९) ॥ १८–५ ॥

'नेरइए ण'मित्यादि, एतच्च व्यक्तमेव ॥ पूर्वमायुःप्रतिसंवेदनोक्ता, अथ तद्विशेषवक्तव्यतामाह—'दो भंते ! असुरकुमारा'इत्यादि, यच्चेह मायिमिथ्यादृष्टीनामसुरकुमारादीनामृजुविकुर्वणेच्छायामपि वङ्कविकुर्वणं भवति तन्मायामिथ्यात्वप्रत्ययकर्म्मप्रभावात्, अमायिसम्यग्दृष्टीनां तु यथेच्छं विकुर्वणा भवति तदार्जवोपेतसम्यक्त्वप्रत्ययकर्म्मवशादिति ॥ अष्टादशशते पञ्चमः ॥ १८–५ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र अष्टादशमे शतके पंचम-उद्देशक: परिसमाप्त:

प्रत सूत्रांक [६३०]

दीप अनुक्रम [७४०]

पञ्चमोद्देशकेऽसुरादीनां सचेतनानामनेकस्वभावतोक्ता, षष्ठे तु गुडादीनामचेतनानां सचेतनानां च सोच्यते इत्येवंसम्बद्धस्यास्येदमादिसूत्रम्—

फाणियगुले णं भंते ! कतिवन्ने कतिगंधे कतिरसे कतिफासे पण्णत्ते ?, गोयमा ! एत्थ णं दो नया भवंति, तं०–निच्छइयनए य ववहारियनए य, ववहारियनयस्स गोडे फाणियगुले नेच्छइयनयस्स पंचवन्ने दुगंधे पंचरसे अट्ठफासे प० । भमरे णं भंते ! कतिवन्ने ? पुच्छा, गोयमा ! एत्थ णं दो नया भवंति, तं०–निच्छइयनए य ववहारियनए य, ववहारियनयस्स कालए भमरे नेच्छइयनयस्स पंचवन्ने जाव अट्ठफासे पं० । सुयपिच्छे णं भंते ! कतिवन्ने एवं चेव, नवरं ववहारियनयस्स नीलए सुयपिच्छे नेच्छइयनयस्स पंचवण्णे सेसं तं चेव, एवं एएणं अभिलावेणं लोहिया मंजिट्ठिया पीतिया हालिद्दा सुक्किल्लए संखे सुब्भिगंधे कोट्ठे दुब्भिगंधे मयगसरीरे तित्ते निंबे कडुया सुंठी कसाए कविट्ठे अंबा अंबिलिया महुरे खंडे कक्खडे वइरे मउए नवणीए गरुए अए लहुए उलुयपत्ते सीए हिमे उसिणे अगणिकाए णिद्धे तेल्ले, छारिया णं भंते ! पुच्छा, गोयमा ! एत्थ दो नया भवंति, तं०–निच्छइयनए य ववहारियनए य, ववहारियनयस्स लुक्खा छारिया नेच्छइयनयस्स पंचवन्ना जाव अट्ठफासा पन्नत्ता (सूत्रं ६३०) ॥

'फाणिए'त्यादि, 'फाणियगुले णं'ति द्रवगुडः 'गोडे'त्ति गौल्यं–गौल्यरसोपेतं मधुररसोपेतमितियावत्, व्यवहारो

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अथ अष्टादशमे शतके षष्ठं-उद्देशक: आरभ्यते

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥७४८॥

हि लोकसंव्यवहारपरत्वात् तदेव तत्राभ्युपगच्छति शेषरसवर्णादींस्तु सतोऽप्युपेक्षत इति, 'निच्छइयनयस्स'त्ति नैश्चयिकनयस्य मतेन पञ्चवर्णादिपरमाणूनां तत्र विद्यमानत्वात् पञ्चवर्णादिरिति ॥

परमाणुपोग्गले णं भंते ! कतिवन्ने जाव कतिफासे पन्नत्ते ?, गोयमा ! एगवन्ने एगगंधे एगरसे दुफासे पन्नत्ते ॥ दुपएसिए णं भंते ! खंधे कतिवन्ने पुच्छा, गोयमा ! सिय एगवन्ने सिय दुवन्ने सिय एग गंधे सिय दुगंधे सिय एगरसे सिय दुरसे सिय दुफासे सिय तिफासे सिय चउफासे पन्नत्ते, एवं तिपएसिएवि, नवरं सिय एगवन्ने सिय दुवन्ने सिय तिवन्ने, एवं रसेसुवि, सेसं जहा दुपएसियस्स, एवं चउपएसिएवि नवरं सिय एगवन्ने जाव सिय चउवन्ने, एवं रसेसुवि सेसं तं चेव, एवं पंचपएसिएवि, नवरं सिय एगवन्ने जाव सिय पंचवन्ने, एवं रसेसुवि गंधफासा तहेव, जहा पंचपएसिओ एवं जाव असंखेज्जपएसिओ ॥ सुहुमपरिणए णं भंते ! अणंतपएसिए खंधे कतिवन्ने जहा पंचपएसिए तहेव निरवसेसं, बादरपरिणए णं भंते ! अणंतपएसिए खंधे कतिवन्ने पुच्छा, गोयमा ! सिय एगवन्ने जाव सिय पंचवन्ने सिय एगगंधे सिय दुगंधे सिय एगरसे जाव सिय पंचरसे सिय चउफासे जाव सिय अट्ठफासे प० ॥ सेवं भंते ! २ त्ति ॥ (सूत्रं ६३१) ॥ १८–६ ॥

'परमाणुपोग्गले ण'मित्यादि, इह च वर्णगन्धरसेषु पञ्च द्वौ पञ्च च विकल्पाः 'दुफासे'त्ति स्निग्धरूक्षशीतोष्णस्पर्शानामन्यतरविरुद्धस्पर्शद्वययुक्त इत्यर्थः, इह च चत्वारो विकल्पाः शीतस्निग्धयोः शीतरूक्षयो उष्णस्निग्धयोः उष्णरूक्षयोश्च सम्बन्धादिति ॥ 'दुपएसिए ण'मित्यादि, 'सिय एगवन्ने'त्ति द्वयोरपि प्रदेशयोरेकवर्णत्वात्, इह च पञ्च विकल्पाः,

१८ शतके उद्देशः ६ निश्चयेतराभ्यां गौल्यादिवर्णादि परमाण्वादि वर्णादि सू ६३०-६३१

॥७४८॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

'सिय दुवन्ने'त्ति प्रतिप्रदेशं वर्णान्तरभावात्, इह च दश विकल्पाः, एवं गन्धादिष्वपि, 'सिय दुफासे'त्ति प्रदेशद्वयस्यापि शीतस्निग्धत्वादिभावात्, इहापि त एव चत्वारो विकल्पाः, 'सिय तिफासे'त्ति इह चत्वारो विकल्पास्तत्र प्रदेशद्वयस्यापि शीतभावात्, एकस्य च तत्र स्निग्धभावात् द्वितीयस्य च रूक्षभावादेकः, 'एवम्' अनेनैव न्यायेन प्रदेशद्वयस्योष्णभावाद्द्वितीयः, तथा प्रदेशद्वयस्यापि स्निग्धभावात् तत्र चैकस्य शीतभावादेकस्य चोष्णभावात्तृतीयः, 'एवम्' अनेनैव न्यायेन प्रदेशद्वयस्य रूक्षभावाच्चतुर्थ इति, 'सिय चउफासे'त्ति इह 'देसे सीए देसे उसिणे देसे निद्धे देसे लुक्खे'त्ति वक्ष्यमाणवचनादेकः, एवं त्रिप्रदेशादिष्वपि स्वयमभ्यूह्यम् ॥ 'सुहुमपरिणए ण'मित्यादि, अनन्तप्रदेशिको बादरपरिणामोऽपि स्कन्धो भवति द्व्यणुकादिस्तु सूक्ष्मपरिणाम एवेत्यनन्तप्रदेशिकस्कन्धः सूक्ष्मपरिणामत्वेन विशेषितस्तत्राद्याश्चत्वारः स्पर्शाः सूक्ष्मेषु बादरेषु चानन्तप्रदेशिकस्कन्धेषु भवन्ति, मृदुकठिनगुरुलघुस्पर्शास्तु बादरेष्वेवेति ॥ अष्टादशशते षष्ठः ॥ १८–६ ॥

षष्ठोद्देशके नयवादिमतमाश्रित्य वस्तु विचारितं, सप्तमे त्वन्ययूथिकमतमाश्रित्य तद्विचार्यते इत्येवंसम्बन्धस्यास्येदमादिसूत्रम्—

रायगिहे जाव एवं वयासी–अन्नउत्थिया णं भंते ! एवमाइक्खंति जाव परूवेंति–एवं खलु केवली जक्खाएसेणं आतिट्ठे समाणे आहच्च दो भासाओ भासति, तं०–मोसं वा सच्चामोसं वा, से कहमेयं भंते !

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र अष्टादशमे शतके षष्ठं-उद्देशक: परिसमाप्त:

अथ अष्टादशमे शतके सप्तम-उद्देशक: आरभ्यते

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [६३२]

दीप अनुक्रम [७४२]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः२ ॥७४९॥

एवं ?, गोयमा ! जण्णं ते अन्नउत्थिया जाव जे ते एवमाहंसु मिच्छं ते एवमाहिंसु, अहं पुण गोयमा ! एवमाइक्खामि ४–नो खलु केवली जक्खाएसेणं आइस्सति, नो खलु केवली जक्खाएसेणं आतिट्ठे समाणे आहच्च दो भासाओ भासति तं०–मोसं वा सच्चामोसं वा, केवली णं असावज्जाओ अपरोवघाइयाओ आहच्च दो भासाओ भासति, तं०–सच्चं वा असच्चामोसं वा ॥ (सूत्रं ६३२) ॥

'रायगिहे'इत्यादि, 'जक्खाएसेणं आइस्सइ'त्ति देवावेशेन 'आविश्यते' अधिष्ठीयत इति, 'नो खलु'इत्यादि, नो खलु केवली यक्षावेशेनाविश्यते अनन्तवीर्यत्वात्तस्य, 'अण्णातिट्ठे'त्ति अन्याविष्टः–परवशीकृतः ॥ सत्यादिभाषाद्वयं च भाषमाणः केवली उपधिपरिग्रहप्रणिधानादिकं विचित्रं वस्तु भाषत इति तद्दर्शनार्थमाह—

कतिविहे णं भंते ! उवही पण्णत्ते ?, गोयमा ! तिविहे उवही प०, तं०–कम्मोवही सरीरोवही बाहिरभंडमत्तोवगरणोवही, नेरइयाणं भंते ! पुच्छा, गोयमा ! दुविहे उवही प० तं०–कम्मोवही य सरीरोवही य, सेसाणं तिविहा उवही एगिंदियवज्जाणं जाव वेमाणियाणं, एगिंदियाणं दुविहे प० तंजहा–कम्मोवही य सरीरोवही य, कतिविहे णं भंते ! उवही पं ?, गो० तिविहे उवही प० तंजहा–सचित्ते अचित्ते मीसए, एवं नेरइयाणवि, एवं निरवसेसं जाव वेमाणियाणं । कतिविहे णं भंते ! परिग्गहे प० ?, गोयमा ! तिविहे परिग्गहे प०, तं०–कम्मपरिग्गहे सरीरपरिग्गहे बाहिरगभंडमत्तोवगरणपरिग्गहे, नेरइयाणं भंते ! एवं जहा उवहिणा दो दंडगा भणिया तहा परिग्गहेणवि दो दंडगा भाणियव्वा, [ग्रन्थाग्रम् ११०००] कइविहे णं

१८ शतके उद्देशः ७ केवलिनोऽनाविष्टता सू ६३२ कर्मोपध्यायाः सू६३३

॥७४९॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [६३३]

दीप अनुक्रम [७४३]

भंते ! पणिहाणे प० ?, गोयमा ! तिविहे पणिहाणे प०, तं०–मणपणिहाणे वइपणिहाणे कायपणिहाणे, नेरइयाणं भंते ! कइविहे पणिहाणे प०, एवं चेव एवं जाव थणियकुमाराणं, पुढविकाइयाणं पुच्छा, गोयमा ! एगे कायपणिहाणे प०, एवं जाव वणस्सइकाइयाणं, बेइंदियाणं पुच्छा, गोयमा ! दुविहे पणिहाणे प० तं–वइपणिहाणे य कायपणिहाणे य, एवं जाव चउरिंदियाणं, सेसाणं तिविहेवि जाव वेमाणियाणं । कतिविहे णं भंते ! दुप्पणिहाणे प० ?, गोयमा ! तिविहे दुप्पणिहाणे प०, तं०–मणदुप्पणिहाणे जहेव पणिहाणेणं दंडगो भणिओ तहेव दुप्पणिहाणेणवि भाणियव्वो । कतिविहे णं भंते ! सुप्पणिहाणे प० ?, गोयमा ! तिविहे सुप्पणिहाणे प०, तंजहा–मणसुप्पणिहाणे वइसुप्पणिहाणे कायसुप्पणिहाणे, मणुस्साणं भंते ! कइविहे सुप्पणिहाणे प० ? एवं चेव जाव वेमाणियाणं सेवं भंते २ जाव विहरति ॥ तए णं समणे भगवं महावीरे जाव बहिया जणवयविहारं विहरइ ॥ (सूत्रं ६३३) ॥

'कतिविहे ण'मित्यादि, तत्र उपधीयते–उपष्टभ्यते येनात्माऽसावुपधिः, 'बाहिरभंडमत्तोवगरणोवही'ति बाह्ये–कर्म्मशरीरव्यतिरिक्ते ये भाण्डमात्रोपकरणे तद्रूपो य उपधिः स तथा, तत्र भाण्डमात्रा–भाजनरूपः परिच्छदः उपकरणं च–वस्त्रादीति, 'एगिंदियवज्जाणं'ति एकेन्द्रियाणां भाण्डमात्रादि नास्तीति तद्वर्जितानामन्येषां त्रिविधोऽप्यस्तीति । 'सचित्ते'त्यादि, सचित्तादिद्रव्याणि शरीरादीनि, 'एवं नेरइयाणवि'त्ति अनेनेदं सूचितं–'नेरइयाणं भंते ! कइविहे उवही प० ?, गोयमा ! तिविहे उवही प०, तंजहा–सचित्ते अचित्ते मीसए'त्ति तत्र नारकाणां सचित्त उपधिः–शरीरम्

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

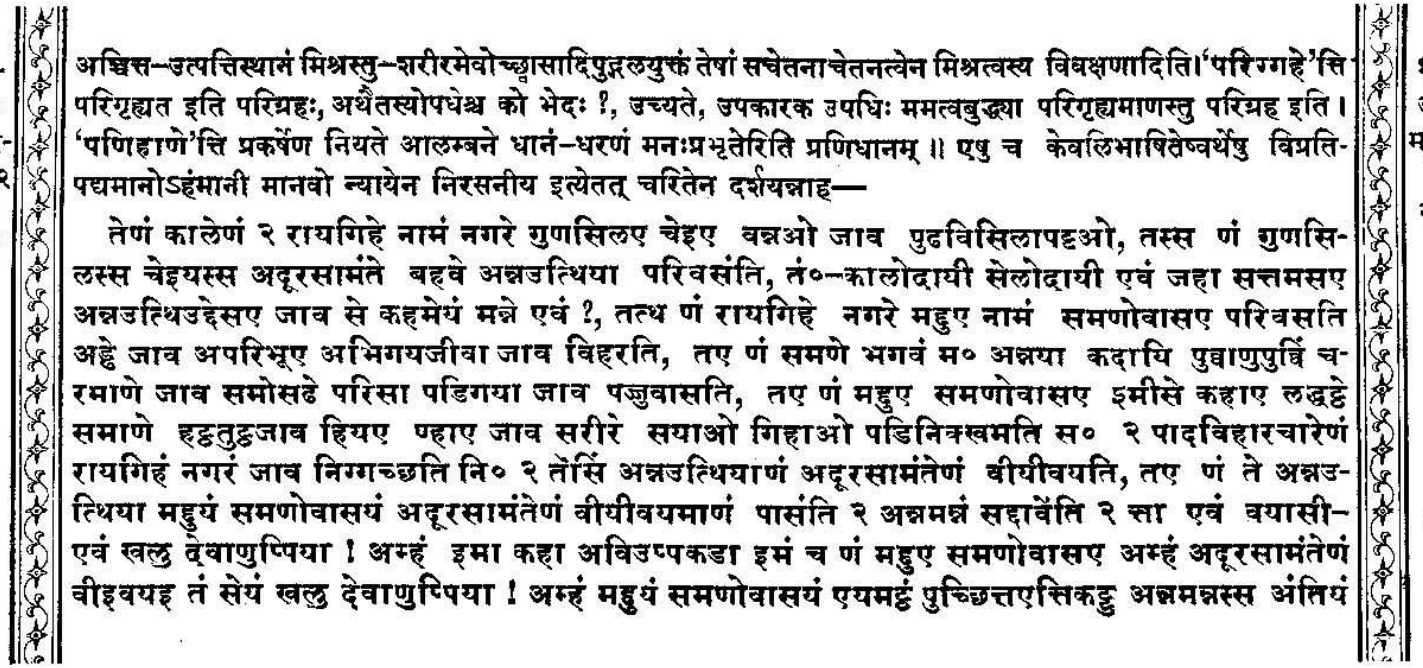

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥७५०॥

अश्चित्त–उत्पत्तिस्थानं मिश्रस्तु–शरीरमेवोच्छ्वासादिपुद्गलयुक्तं तेषां सचेतनाचेतनत्वेन मिश्रत्वस्य विवक्षणादिति।'परिग्गहे'त्ति परिगृह्यत इति परिग्रहः, अथैतस्योपधेश्च को भेदः ?, उच्यते, उपकारक उपधिः ममत्वबुद्ध्या परिगृह्यमाणस्तु परिग्रह इति। 'पणिहाणे'त्ति प्रकर्षेण नियते आलम्बने धानं–धरणं मनःप्रभृतेरिति प्रणिधानम् ॥ एषु च केवलिभाषितेष्वर्थेषु विप्रतिपद्यमानोऽहंमानी मानवो न्यायेन निरसनीय इत्येतत् चरितेन दर्शयन्नाह—

तेणं कालेणं २ रायगिहे नामं नगरे गुणसिलए चेइए वन्नओ जाव पुढविसिलापट्टओ, तस्स णं गुणसिलस्स चेइयस्स अदूरसामंते बहवे अन्नउत्थिया परिवसंति, तं०–कालोदायी सेलोदायी एवं जहा सत्तमसए अन्नउत्थिउद्देसए जाव से कहमेयं मन्ने एवं ?, तत्थ णं रायगिहे नगरे मद्दुए नामं समणोवासए परिवसति अड्ढे जाव अपरिभूए अभिगयजीवा जाव विहरति, तए णं समणे भगवं म० अन्नया कदायि पुव्वाणुपुव्विं चरमाणे जाव समोसढे परिसा पडिगया जाव पज्जुवासति, तए णं मद्दुए समणोवासए इमीसे कहाए लद्धट्ठे समाणे हट्ठतुट्ठजाव हियए ण्हाए जाव सरीरे सयाओ गिहाओ पडिनिक्खमति स० २ पादविहारचारेणं रायगिहं नगरं जाव निग्गच्छति नि० २ तेसिं अन्नउत्थियाणं अदूरसामंतेणं वीयीवयति, तए णं ते अन्नउत्थिया मद्दुयं समणोवासयं अदूरसामंतेणं वीयीवयमाणं पासंति २ अन्नमन्नं सद्दावेंति २ ता एवं वयासी–एवं खलु देवाणुप्पिया ! अम्हं इमा कहा अविउप्पकडा इमं च णं मद्दुए समणोवासए अम्हं अदूरसामंतेणं वीइवयइ तं सेयं खलु देवाणुप्पिया ! अम्हं मद्दुयं समणोवासयं एयमट्ठं पुच्छित्तएत्तिकट्टु अन्नमन्नस्स अंतियं

१८ शतके उद्देशः ७ मद्दुकश्रावक-कवृत्तं सू ६३४

॥७५०॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	मद्रुक-श्रावकस्य वृतांत

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [६३४--६३८]

दीप अनुक्रम [७४४--७४८]

एयमट्ठं पडिसुणेंति अन्नमन्नस्स २त्ता जेणेव मद्दुए समणोवासए तेणेव उवा० २ मद्दुयं समणोवासयं एवं वदासी–एवं खलु मद्दुया ! तव धम्मायरिए धम्मोवदेसए समणे णायपुत्ते पंच अत्थिकाये पन्नवेइ जहा सत्तमे सए अन्नउत्थिउद्देसए जाव कहमेयं मद्दुया ! एवं ?, तए णं से मद्दुए समणोवासए ते अन्नउत्थिए एवं वयासी–जति कज्जं कज्जति जाणामो पासामो अहे कज्जं न कज्जति न जाणामो न पासामो, तए णं ते अन्नउत्थिया मद्दुयं समणोवासयं एवं वयासी—केस णं तुमं मद्दुया ! समणोवासगाणं भवसि जे णं तुमं एयमट्ठं न जाणसि न पाससि ?, तए णं से मद्दुए समणोवासए ते अन्नउत्थिए एवं वयासी—अत्थि णं आउसो ! वाउयाए वाति ?, हंता अत्थि, तुज्झे णं आउसो ! वाउयायस्स वायमाणस्स रूवं पासह ?, णो तिणट्ठे समट्ठे, अत्थि णं आउसो ! घाणसहगया पोग्गला ?, हंता अत्थि, तुज्झे णं आउसो ! घाणसहगयाणं पोग्गलाणं रूवं पासह ?, णो तिणट्ठे०, अत्थि णं भंते ! आउसो ! अरणिसहगये अगणिकाये ?, हंता अत्थि, तुज्झे णं आउसो ! अरणिसहगयस्स अगणिकायस्स रूवं पासह ?, णो ति०, अत्थि णं आउसो ! समुद्दस्स पारगयाइं रूवाइं ?, हंता अत्थि, तुज्झे णं आउसो ! समुद्दस्स पारगयाइं रूवाइं पासह ?, णो ति०, अत्थि णं आउसो ! देवलोगगयाइं रूवाइं ?, हंता अत्थि, तुज्झे णं आउसो ! देवलोगगयाइं रूवाइं पासह ?, णो ति०, एवामेव आउसो ! अहं वा तुज्झे वा अन्नो वा छउमत्थो जइ जो जं न जाणइ न पासइ तं सव्वं न भवति एवं ते सुबहुए लोए ण भविस्सतीतिकट्टु ते णं अन्नउत्थिए एवं पडिहणइ एवं प० २ जेणेव गुणसि० चेइए

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मद्रुक-श्रावकस्य वृतांत

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [६३४--६३८]

दीप अनुक्रम [७४४--७४८]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥७५१॥

जेणेव समणे भ० महा० तेणेव उवाग० २ समणं भगवं महावीरं पंचविहेणं अभिगमेणं जाव पज्जुवासति। मद्दुयादी ! समणे भ० महा० मद्दुयं समणोवासगं एवं वयासी–सुट्ठु णं मद्दुया ! तुमं ते अन्नउत्थिए एवं वयासी, साहू णं मद्दुया ! तुमं ते अन्नउ० एवं वयासी, जे णं मद्दुया ! अट्ठं वा हेउं वा पसिणं वा वागरणं वा अन्नायं अदिट्ठं अस्सुतं अमयं अविण्णायं बहुजणमज्झे आघवेति पन्नवेति जाव उवदंसेति से णं अरिहंताणं आसायणाए वट्टति अरिहंतपन्नत्तस्स धम्मस्स आसायणाए वट्टति केवलीणं आसायणाए वट्टति केवलिपन्नत्तस्स धम्मस्स आसायणाए वट्टति तं सुट्ठु णं तुमं मद्दुया ! ते अन्नउ० एवं वयासी साहू णं तुमं मद्दुया ! जाव एवं वयासी, तए णं मद्दुए समणोवासए समणेणं भग० महा० एवं वु० समाणे हट्ठ तुट्ठे समणं भ० महावीरं वं० न० २ णच्चासन्ने जाव पज्जुवासइ, तए णं सम० भ० म० मद्दुयस्स समणोवासगस्स तीसे य जाव परिसा पडिगया, तए णं मद्दु० समणस्स भ० म० जाव निसम्म हट्ठतुट्ठ पसिणाइं वागरणाइं पुच्छति प० २ अट्ठाइं परियातिइ २ उट्ठाए उट्ठे० २ समणं भगवं महा० वं० नमं० २ जाव पडिगए। भंतेत्ति भगवं गोयमे समणे भगवं महा० वं० नमं० २ एवं वयासी–पभू णं भंते ! मद्दुए समणोवासए देवाणुप्पियाणं अंतियं जाव पव्वइत्तए ?, णो तिणट्ठे समट्ठे, एवं जहेव संखे तहेव अरुणाभे जाव अंतं काहिति ॥ (सूत्रं ६३४) देवे णं भंते ! महड्ढिए जाव महेसक्खे रूवसहस्सं विउव्वित्ता पभू अन्नमन्नेणं सद्धिं संगामं संगामित्तए ?, हंता पभू। ताओ णं भंते ! बोंदीओ किं एगजीवफुडाओ अणेगजीवफुडाओ ?, गोयमा ! एगजीवफुडाओ णो अणेगजी-

१८ शतके उद्देश ७ मद्दुककृत्तं सू ६३४ वैक्रियेण संग्रामः सू ६३५

॥७५१॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मद्रुक-श्रावकस्य वृतांत

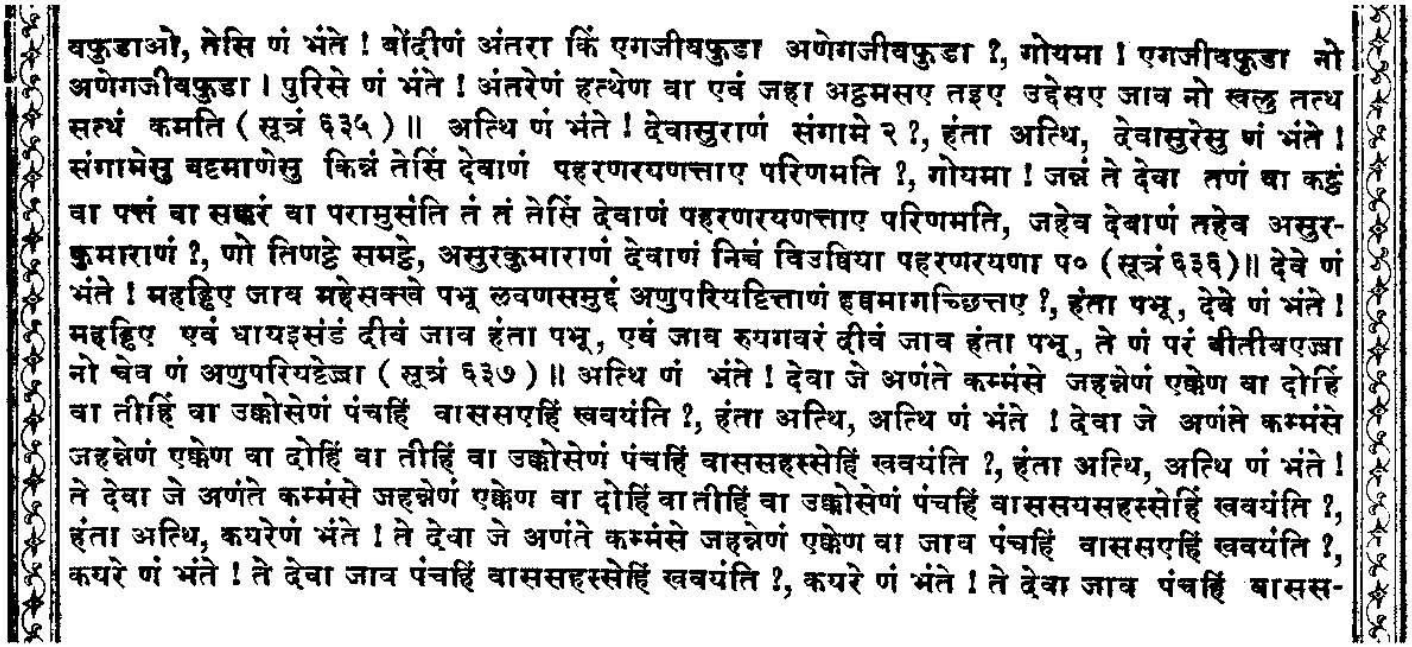

वफुडाओ, तेसि णं भंते ! बोंदीणं अंतरा किं एगजीवफुडा अणेगजीवफुडा ?, गोयमा ! एगजीवफुडा नो अणेगजीवफुडा । पुरिसे णं भंते ! अंतरेणं हत्थेण वा एवं जहा अट्ठमसए तइए उद्देसए जाव नो खलु तत्थ सत्थं कमति (सूत्रं ६३५) ॥ अत्थि णं भंते ! देवासुराणं संगामे २ ?, हंता अत्थि, देवासुरेसु णं भंते ! संगामेसु वट्टमाणेसु किन्नं तेसिं देवाणं पहरणरयणत्ताए परिणमति ?, गोयमा ! जन्नं ते देवा तणं वा कट्ठं वा पत्तं वा सक्करं वा परामुसंति तं तं तेसिं देवाणं पहरणरयणत्ताए परिणमति, जहेव देवाणं तहेव असुरकुमाराणं ?, णो तिणट्ठे समट्ठे, असुरकुमाराणं देवाणं निच्चं विउविया पहरणरयणा प० (सूत्रं ६३६) ॥ देवे णं भंते ! महड्ढिए जाव महेसक्खे पभू लवणसमुद्दं अणुपरियट्टित्ताणं हव्वमागच्छित्तए ?, हंता पभू, देवे णं भंते ! महड्ढिए एवं धायइसंडं दीवं जाव हंता पभू, एवं जाव रुयगवरं दीवं जाव हंता पभू, ते णं परं वीतीवएज्जा नो चेव णं अणुपरियट्टेज्जा (सूत्रं ६३७) ॥ अत्थि णं भंते ! देवा जे अणंते कम्मंसे जहन्नेणं एक्केण वा दोहिं वा तीहिं वा उक्कोसेणं पंचहिं वाससएहिं खवयंति ?, हंता अत्थि, अत्थि णं भंते ! देवा जे अणंते कम्मंसे जहन्नेणं एक्केण वा दोहिं वा तीहिं वा उक्कोसेणं पंचहिं वाससहस्सेहिं खवयंति ?, हंता अत्थि, अत्थि णं भंते ! ते देवा जे अणंते कम्मंसे जहन्नेणं एक्केण वा दोहिं वा तीहिं वा उक्कोसेणं पंचहिं वाससयसहस्सेहिं खवयंति ?, हंता अत्थि, कयरेणं भंते ! ते देवा जे अणंते कम्मंसे जहन्नेणं एक्केण वा जाव पंचहिं वाससएहिं खवयंति ?, कयरे णं भंते ! ते देवा जाव पंचहिं वाससहस्सेहिं खवयंति ?, कयरे णं भंते ! ते देवा जाव पंचहिं वाससस-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥७५२॥

यसहस्सेहिं खवयंति ?, गोयमा ! वाणमंतरा देवा अणंते कम्मंसे एगेणं वाससएणं खवयंति, असुरिंदवज्जिया भवणवासी देवा अणंते कम्मंसे दोहिं वाससएहिं खवयंति, असुरकुमारा णं देवा अणंते कम्मंसे तीहिं वाससएहिं खवयंति, गहनक्खत्ततारारूवा जोइसिया देवा अणंते कम्मंसे चउहिं वास जाव खवयंति चंदिम-सूरिया जोइसिंदा जोतिसरायाणो अणंते कम्मंसे पंचहिं वाससएहिं खवयंति सोहम्मीसाणगा देवा अणंते कम्मंसे एगेणं वाससहस्सेणं जाव खवयंति सणंकुमारमाहिंदगा देवा अणंते कम्मंसे दोहिं वाससहस्सेहिं खवयंति, एवं एएणं अभिलावेणं बंभलोगलंतगा देवा अणंते कम्मंसे तीहिं वाससहस्सेहिं खवयंति महासुक्क-सहस्सारगा देवा अणंते चउहिं वाससह० आणयपाणयआरणअच्चुयगा देवा अणंते पंचहिं वाससहस्सेहिं खवयंति हिट्ठिमगेवेज्जगा देवा अणंते कम्मंसे एगेणं वाससयसहस्सेणं खवयंति मज्झिमगेवेज्जगा देवा अणंते दोहिं वाससयसहस्सेहिं जाव खवयंति उवरिमगेवेज्जगा देवा अणंते कम्मंसे तिहिं वासजाव खवयंति विजय-वेजयंतजयंतअपराजियगा देवा अणंते चउहिं वास जाव खवयंति सव्वट्ठसिद्धगा देवा अणंते कम्मंसे पंचहिं वाससयसहस्सेहिं खवयंति, एएणट्ठेणं गो० ते देवा जे अणंते कम्मंसे जहन्नेणं एक्केण वा दोहिं वा तीहिं वा उक्कोसेणं पंचहिं वाससएहिं खवयंति एएणं गो० ते देवा जाव पंचहिं वाससहस्सेहिं खवयंति, एएणट्ठेणं गो० ते देवा जाव पंचहिं वाससयसहस्सेहिं खवयंति। सेवं भंते ! सेवं भंते ! ॥ (सूत्रं ६३८) ॥ १८–७ ॥

'तेण'मित्यादि, 'एवं जहा सत्तमसए'इत्यादिना यत्सूचितं तत्स्वार्थतो लेशो दर्श्यते–कालोदायिसेलोदायिसेवालोदा-

१८ शतके उद्देशः ७ देवासुरर्-णःतेषांपर्य-टनं कर्माश क्षयकालःसू ६३६-६३८

॥७५२॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

यिप्रभृतिकानामन्ययूथिकानामेकत्र संहितानां मिथः कथासंलापः समुत्पन्नो यदुत महावीरः पञ्चास्तिकायान् धर्मास्तिकायादीन् प्रज्ञापयति, तत्र च धर्माधर्माकाशपुद्गलास्तिकायानचेतनान् जीवास्तिकायं च सचेतनं तथा धर्म्माधर्म्माकाशजीवास्तिकायानरूपिणः पुद्गलास्तिकायं च रूपिणं प्रज्ञापयतीति 'से कहमेयं मन्ने एवं'ति अथ कथमेतद्–धर्म्मास्तिकायादि वस्तु मन्ये इति वितर्कार्थः 'एवं' सचेतनाचेतनादिरूपेण, अदृश्यमानत्वेनासम्भवात्तस्येति हृदयम्, 'अविउप्पकडे'त्ति अपिशब्दः संभावनार्थः उत्–प्राबल्येन च प्रकृता–प्रस्तुता प्रकटा वा उत्प्रकृतोत्प्रकटा वा अथवा अविद्वद्भिः–अजानद्भिः प्रकृता–कृता प्रस्तुता वा अविद्वत्प्रकृता, 'जइ कज्जं कज्जइ जाणामो पासामो'त्ति यदि तैर्धर्मास्तिकायादिभिः कार्यं स्वकीयं क्रियते तदा तेन कार्येण तान् जानीमः पश्यामश्चावगच्छाम इत्यर्थः धूमेनाग्निमिव, अथ कार्यं तैर्न क्रियते तदा न जानीमो न पश्यामश्च, अयमभिप्रायः–कार्यादिलिङ्गद्वारेणैवार्वाग्दृशामतीन्द्रियपदार्थावगमो भवति, न च धर्म्मास्तिकायादीनामस्मत्प्रतीतं किञ्चित् कार्यादिलिङ्गं दृश्यत इति तदभावात्तन्न जानीम एव वयमिति ॥ अथ मद्दुकं धर्म्मास्तिकायाद्यपरिज्ञानाभ्युपगमवन्तमुपालम्भयितुं यत्ते प्राहुस्तदाह—'केस ण'मित्यादि, क एष त्वं मद्दुक ! श्रमणोपासकानां मध्ये भवसि यस्त्वमेतमर्थं श्रमणोपासकज्ञेयं धर्म्मास्तिकायाद्यस्तित्वलक्षणं न जानासि न पश्यसि ?, न कश्चिदित्यर्थः ॥ अथैवमुपालब्धः सन्नसौ यत्तैरदृश्यमानत्वेन धर्म्मास्तिकायाद्यसम्भव इत्युक्तं तद्विघटनेन तान् प्रतिहन्तुमिदमाह—'अत्थि ण'मित्यादि, 'घाणसहगय'त्ति घ्रायत इति घ्राणो–गन्धगुणस्तेन सहगताः–तत्सहचरितास्तद्वन्तो घ्राणसहगताः 'अरणिसहगए'त्ति अरणिः–अग्यर्थं निर्मन्थनीयकाष्ठं तेन सह गतो यः स तथा तं 'सुट्ठु णं मद्दुया ! तुमं'ति सुष्ठु

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥७५३॥

त्वं हे मद्दुका ! येन त्वयाऽस्तिकायानजानता न जानीम इत्युक्तम्, अन्यथा अजानन्नपि यदि जानीम इत्यभणिष्यस्तदाऽर्ह-दादीनामत्याशातनाकारकोऽभविष्यस्त्वमिति ॥ पूर्वं मद्दुकश्रमणोपासकोऽरुणाभे विमाने देवत्वेनोत्पत्स्यत इत्युक्तम्, अथ देवाधिकारादेववक्तव्यतामेवोद्देशकान्तं यावदाह—'देवे णं'इत्यादि, 'तासिं बोंदीणं अंतर'त्ति तेषां विकुर्वितशरीरा-णामन्तराणि 'एवं जहा अट्ठमसए'इत्यादि अनेन यत्सूचितं तदिदं–'पाएण वा हत्थेण वा अंगुलियाए वा सिलागाए वा कट्ठेण वा कलिंचेण वा आमुसमाणे वा आलिहमाणे वा विलिहमाणे वा अन्नयरेण वा तिक्खेणं सत्थजाएणं आछिंदमाणे वा विच्छिंदमाणे वा अगणिकाएण वा समोडहमाणे वा तेसिं जीवप्पएसाणं आबाहं वा बाबाहं वा करेइ छविच्छेयं वा उप्पाएइ ?, णो इणट्ठे समट्ठे'त्ति व्याख्या चास्य प्राग्वत्। 'जइं देवा तणं वा कट्ठं वा' इत्यादि, इह च यदे-वानां तृणाद्यपि प्रहरणीभवति तदचिन्त्यपुण्यसम्भारवशात् सुभूमचक्रवर्त्तिनः स्थालमिव, असुराणां तु यत्तिलवविकुर्वि-तानि तानि भवन्ति तद्देवापेक्षया तेषां मन्दतरपुण्यत्वात्तथाविधपुरुषाणामिवेत्यवगन्तव्यमिति। 'वीतीवएज्ज'त्ति एकया दिशा व्यतिक्रमेत 'नो चेव णं अणुपरियट्टेज्ज'त्ति नैव सर्वतः परिभ्रमेत्, तथाविधप्रयोजनाभावादिति सम्भाव्यते। 'अत्थि णं भंते ! इत्यादि, इह देवानां पुण्यकर्म्मपुद्गलाः प्रकृष्टप्रकृष्टतरप्रकृष्टतमानुभागा आयुष्ककर्म्मसहचरिततया वेदनीया अनन्तानन्ता भवन्ति ततश्च सन्ति भदन्त ! ते देवा ये तेषामनन्तानन्तकर्मांशानां मध्यादनन्तान् कर्म्मांशान् जघन्येन कालस्याल्पतया एकादिना वर्षशतेन उत्कर्षतस्तु पञ्चभिर्वर्षशतैः क्षपयन्तीत्यादि प्रश्नः, 'गोयमे'त्यादुत्तरं, तत्र व्यन्तरा अनन्तान् कर्म्मांशान् वर्षशतेनैकेन क्षपयन्ति अनन्तानामपि तदीयपुद्गलानामल्पानुभागतया स्तोकेनैव कालेन

१८ शतके उद्देशः ७ देवासुरर-णःतेषांपर्य-टनं कर्मांश क्षयकालःसू ६३६-६३८

॥७५३॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

क्षपयितुं शक्यत्वात् तथाविधाल्परुक्षाहारवत्, तथा तावत एव कर्म्मांशान् असुरवर्जितभवनपतयो द्वाभ्यां वर्षशताभ्यां क्षपयन्ति, तदीयपुद्गलानां व्यन्तरपुद्गलापेक्षया प्रकृष्टानुभावेन बहुतरकालेन क्षपयितुं शक्यत्वात् स्निग्धतराहारवदिति, एवमुत्तरत्रापि भावना कार्येति ॥ अष्टादशशते सप्तमोद्देशकः ॥ १८–७ ॥

सप्तमोद्देशकान्ते कर्म्मक्षपणोक्ता, अष्टमे तु तद्बन्धो निरूप्यत इत्येवंसम्बद्धस्यास्येदमादिसूत्रम्—

रायगिहे जाव एवं वयासी–अणगारस्स णं भंते ! भावियप्पणो पुरओ दुहओ जुगमायाए पेहाए रीयं रीयमाणस्स पायस्स अहे कुक्कुडपोते वा वट्टापोते वा कुलिंगच्छाए वा परियावज्जेज्जा तस्स णं भंते ! किं ईरियावहिया किरिया कज्जइ संपराइया किरिया कज्जइ ?, गोयमा ! अणगारस्स णं भावियप्पणो जाव तस्स णं ईरियावहिया किरिया कज्जइ नो संपराइया किरिया कज्जइ, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ जहा सत्तमसए संवुडुद्देसए जाव अट्ठो निक्खित्तो । सेवं भंते सेवं भंते ! जाव विहरति ॥ तए णं समणे भगवं महावीरे बहिया जाव विहरति (सूत्रं ६३९) ॥

'रायगिहे'इत्यादि, 'पुरओ'त्ति अग्रतः 'दुहओ'त्ति 'द्विधा' अन्तराऽन्तरा पार्श्वतः पृष्ठतश्चेत्यर्थः 'जुगमायाए'त्ति यूपमात्रया दृष्ट्या 'पेहाए'त्ति प्रेक्ष्य २ 'रीयं'ति गतं–गमनं 'रीयमाणस्स'त्ति कुर्वत इत्यर्थः 'कुक्कुडपोयए'त्ति कुक्कुटडिम्भः 'वट्टापोयए'त्ति इह वर्त्तका–पक्षिविशेषः 'कुलिंगच्छाए व'त्ति पिपीलिकादिसदृशः 'परियावज्जेज्ज'त्ति 'पर्यापद्येत'

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र अष्टादशमे शतके सप्तम-उद्देशक: परिसमाप्त:

अथ अष्टादशमे शतके अष्टम-उद्देशक: आरभ्यते

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [६३९]

दीप अनुक्रम [७४९]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः२ ॥७५४॥

श्रियेत 'एवं जहा सत्तमसए'इत्यादि, अनेन च यत्सूचितं तस्यार्थलेश एवम्–अथ केनार्थेन भदन्त ! एवमुच्यते, गौतम ! यस्य क्रोधादयो व्यवच्छिन्ना भवन्ति तस्येर्यापथिक्येव क्रिया भवतीत्यादि 'जाव अट्ठो निक्खित्तो'त्ति 'से केण-ट्ठेणं भंते !' इत्यादिवाक्यस्य निगमनं यावदित्यर्थः, तच्च 'से तेणट्ठेणं गोयमा'इत्यादि ॥ प्राग्गमनमाश्रित्य विचारः कृतः, अथ तदेवाश्रित्यान्ययूथिकमतनिषेधतः स एवोच्यते—

तेणं कालेणं २ रायगिहे जाव पुढविसिलापट्टए तस्स णं गुणसिलस्स चेइयस्स अदूरसामंते बहवे अन्नउ-त्थिया परिवसंति, तए णं समणे भगवं महा० जाव समोसढे जाव परिसा पडिगया, तेणं कालेणं २ समणस्स भ० म० जेट्ठे अंतेवासी इंदभूतीनामं अणगारे जाव उड्ढंजाणू जाव विहरइ, तए णं ते अन्नउत्थिया जेणेव भगवं गोयमे तेणेव उवागच्छन्ति उवागच्छइत्ता भगवं गोयमं एवं वयासी–तुज्झे णं अज्जो ! तिविहं तिविहेणं अस्सं-जया जाव एगंतबाला यावि भवह, तए णं भगवं गोयमे अन्नउत्थिए एवं वयासी–से केणं कारणेणं अज्जो ! अम्हे तिविहं तिविहेणं अस्संजया जाव एगंतबाला यावि भवामो, तए णं ते अन्नउत्थिया भगवं गोयमं एवं वयासी–तुज्झे णं अज्जो ! रीयं रीयमाणा पाणे पेचेह अभिहणह जाव उवद्दवेह, तए णं तुज्झे पाणे पेचेमाणा जाव उवद्दवेमाणा तिविहं तिविहेणं जाव एगंतबाला यावि भवह, तएणं भगवं गोयमे ते अन्नउत्थिए एवं वया-सी–नो खलु अज्जो ! अम्हे रीयं रीयमाणा पाणे पेचेमो जाव उवद्दवेमो अम्हे णं अज्जो ! रीयं रीयमाणा कायं च जोयं च रीयं च पडुच्च दिस्सा २ पदिस्सा २ वयामो तए णं अम्हे दिस्सा दिस्सा वयमाणा पदिस्सा पदिस्सा

१८ शतके उद्देशः ८ समितस्यव-धेऽपीर्यापथिकी सू ६३९ अन्यतीर्थिकवादः सू ६४० ॥७५४॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गौतमस्वामिनः अन्यतिर्थिकेन सह प्रश्न-संवादः

प्रत सूत्रांक [६४०--६४१]

दीप अनुक्रम [७५०--७५१]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

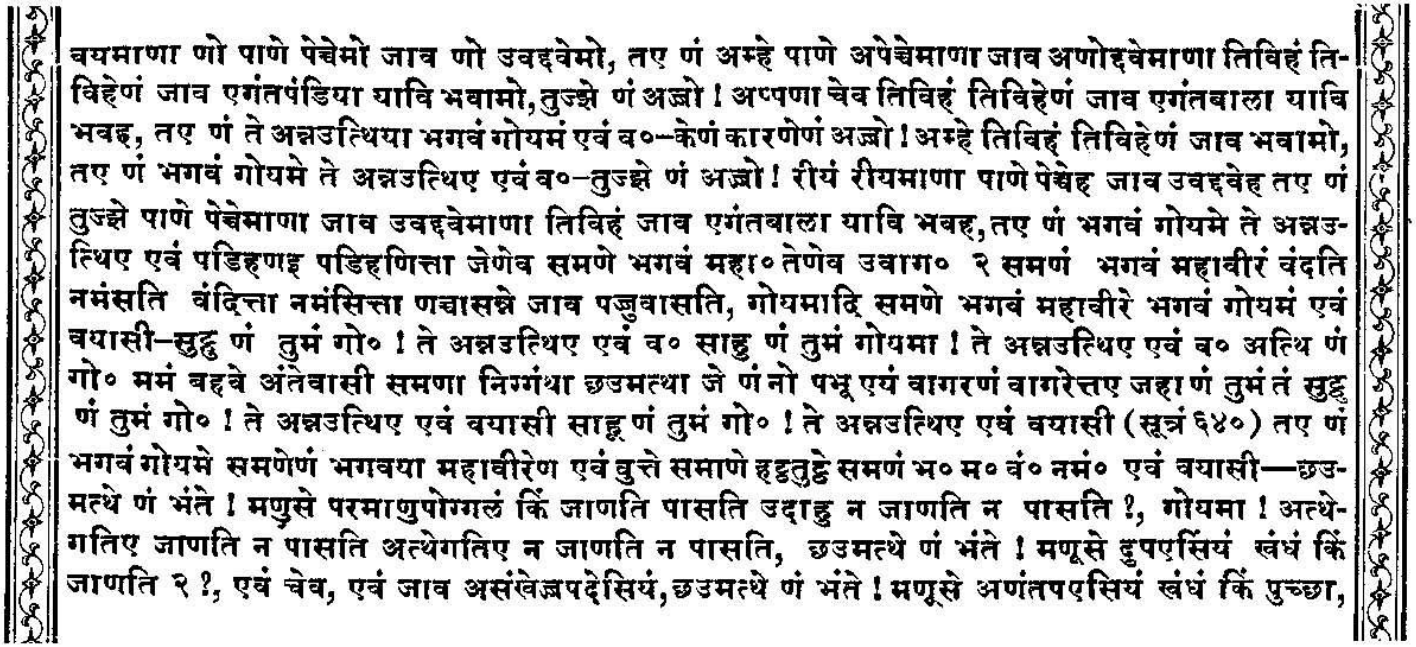

वयमाणा णो पाणे पेचेमो जाव णो उवद्दवेमो, तए णं अम्हे पाणे अपेचेमाणा जाव अणोद्दवेमाणा तिविहं तिविहेणं जाव एगंतपंडिया यावि भवामो, तुज्झे णं अज्जो ! अप्पणा चेव तिविहं तिविहेणं जाव एगंतबाला यावि भवह, तए णं ते अन्नउत्थिया भगवं गोयमं एवं व०–केणं कारणेणं अज्जो ! अम्हे तिविहं तिविहेणं जाव भवामो, तए णं भगवं गोयमे ते अन्नउत्थिए एवं व०–तुज्झे णं अज्जो ! रीयं रीयमाणा पाणे पेचेह जाव उवद्दवेह तए णं तुज्झे पाणे पेचेमाणा जाव उवद्दवेमाणा तिविहं जाव एगंतबाला यावि भवह, तए णं भगवं गोयमे ते अन्नउत्थिए एवं पडिहणइ पडिहणित्ता जेणेव समणे भगवं महा० तेणेव उवाग० २ समणं भगवं महावीरं वंदति नमंसति वंदित्ता नमंसित्ता णच्चासन्ने जाव पज्जुवासति, गोयमादि समणे भगवं महावीरे भगवं गोयमं एवं वयासी–सुट्ठु णं तुमं गो० ! ते अन्नउत्थिए एवं व० साहु णं तुमं गोयमा ! ते अन्नउत्थिए एवं व० अत्थि णं गो० ममं बहवे अंतेवासी समणा निग्गंथा छउमत्था जे णं नो पभू एयं वागरणं वागरेत्तए जहा णं तुमं तं सुट्ठु णं तुमं गो० ! ते अन्नउत्थिए एवं वयासी साहू णं तुमं गो० ! ते अन्नउत्थिए एवं वयासी (सूत्रं ६४०) तए णं भगवं गोयमे समणेणं भगवया महावीरेण एवं वुत्ते समाणे हट्ठतुट्ठे समणं भ० म० वं० नमं० एवं वयासी—छउमत्थे णं भंते ! मणुसे परमाणुपोग्गलं किं जाणति पासति उदाहु न जाणति न पासति ?, गोयमा ! अत्थेगतिए जाणति न पासति अत्थेगतिए न जाणति न पासति, छउमत्थे णं भंते ! मणूसे दुपएसियं खंधं किं जाणति २ ?, एवं चेव, एवं जाव असंखेज्जपदेसियं, छउमत्थे णं भंते ! मणूसे अणंतपएसियं खंधं किं पुच्छा,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गौतमस्वामिन: अन्यतिर्थिकेन सह प्रश्न-संवाद:

गोयमा ! अत्थेगतिए जाणति पासति १ अत्थेगतिए जाणति न पासति २ अत्थेगतिए न जाणति पासइ ३ अत्थेगतिए न जाणइ न पासति ४ अहोहिए णं भंते ! मणुस्से परमाणुपोग्गलं जहा छउमत्थे एवं अहोहिएवि जाव अणंतपदेसियं, परमाहोहिए णं भंते ! मणूसे परमाणुपोग्गलं जं समयं जाणति तं समयं पासति जं समयं पासति तं समयं जाणति ?, णो तिणट्ठे समट्ठे, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ परमाहोहिए णं मणूसे परमाणुपोग्गलं जं समयं जाणति नो तं समयं पासति जं समयं पासति नो तं समयं जाणति ?, गोयमा ! सागारे से नाणे भवइ अणागारे से दंसणे भवइ, से तेणट्ठेणं जाव नो तं समयं जाणति एवं जाव अणंतपदेसियं । केवली णं भंते ! मणुस्से परमाणुपोग्गलं जहा परमाहोहिए तहा केवलीवि जाव अणंतपएसियं ॥ सेवं भंते २ त्ति ॥ (सूत्रं ६४१) ॥ १८–८ ॥

'तए ण'मित्यादि, 'पेचेह'त्ति आक्रामथ 'कायं च'त्ति देहं प्रतीत्य व्रजाम इति योगः, देहश्चेद्गमनशक्तो भवति तदा व्रजामो नान्यथा अश्वशकटादिनेत्यर्थः, योगं च–संयमव्यापारं ज्ञानाद्युपष्टम्भकप्रयोजनं भिक्षाटनादि, न तं विनेत्यर्थः, 'रीयं च'त्ति 'गमनं च' अत्वरितादिकं गमनविशेषं 'प्रतीत्य' आश्रित्य, कथम् ? इत्याह—'दिस्सा दिस्स'त्ति दृष्ट्वा २ 'पदिस्सा पदिस्स'त्ति प्रकर्षेण दृष्ट्वा २॥ प्राक् छद्मस्था एवं व्याकर्तुं न प्रभव इत्युक्तम्, अथ छद्मस्थमेवाश्रित्य प्रश्नयन्नाह—'छउमत्थे'त्यादि, इह छद्मस्थो निरतिशयो ग्राह्यः 'जाणइ न पासइ'त्ति श्रुतोपयुक्तः श्रुतज्ञानी, श्रुते दर्शनाभावात्, तदन्यस्तु 'न जाणइ न पासइ'त्ति अनन्तप्रदेशिकसूत्रे चत्वारो भङ्गा भवन्ति, जानाति स्पर्शनादिना पश्यति च

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

चक्षुषेत्येकः १, तथाऽन्यो जानाति स्पर्शादिना न पश्यति चक्षुषा चक्षुषोऽभावादिति द्वितीयः २, तथाऽन्यो न जानाति स्पर्शाद्यगोचरत्वात् पश्यति चक्षुषेति तृतीयः ३, तथाऽन्यो न जानाति न पश्यति चाविषयत्वादिति चतुर्थः ४॥ छद्मस्थाधिकाराच्छद्मस्थविशेषभूताधोऽवधिकपरमाधोऽवधिकसूत्रे ॥ परमावधिकश्चावश्यमन्तर्मुहूर्त्तेन केवली भवतीति केवलिसूत्रे, तत्र च 'सागारे से नाणे भवति'त्ति.'साकारं'विशेषग्रहणस्वरूपं 'से'तस्य परमाधोऽवधिकस्य तद्वा ज्ञानं भवति, तद्धि पर्यायभूतं च दर्शनमतः परस्परविरुद्धयोरेकसमये नास्ति सम्भव इति ॥ अष्टादशशतेऽष्टमः ॥ १८–८ ॥

अष्टमोद्देशकान्ते केवली प्ररूपितः, स च भव्यद्रव्यसिद्ध इत्येवं भव्यद्रव्याधिकारान्नवमे भव्यद्रव्यनारकादयोऽभिधीयन्ते इत्येवंसम्बद्धस्यास्येदमादिसूत्रम्—

रायगिहे जाव एवं वयासी–अत्थि णं भंते! भवियदव्वनेरइया भवि० २?, हंता अत्थि, से केणट्ठेणंभंते! एवं वुच्चइ भवियदव्वनेर० भ०?, जे भविए पंचिंदिए तिरिक्खजोणिए वा मणुस्से वा नेरइएसु उववज्जित्तए से तेण०, एवं जाव थणियकु०, अत्थि णं भंते! भवियदव्वपुढवि० भ० २?, हंता अत्थि, से केण० गो०! जे भविए तिरिक्खजोणिए वा मणुस्से वा देवे वा पुढविकाइएसु उवव० से तेण० आउक्काइयवणस्सइकाइयाणं एवं चेव उववाओ, तेउवाऊबेइंदियतेइंदियचउरिंदियाण य जे भविए तिरिक्खजोणिए मणुस्से वा, पंचिंदियतिरिक्खजोणियाणं जे भविए नेरइए वा तिरिक्खजोणिए वा मणुस्से वा देवे वा पंचिंदियतिरिक्खजोणिए वा, एवं मणुस्सावि,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र अष्टादशमे शतके अष्टम-उद्देशक: परिसमाप्त:

अथ अष्टादशमे शतके नवम-उद्देशक: आरभ्यते

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥७५६॥

वाणमंतरजोइसियवेमाणियाणं जहा नेरइया ॥ भवियदव्वनेरइयस्स णं भंते ! केवतियं कालं ठिती पन्नत्ता ?, गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं पुव्वकोडी, भवियदव्वअसुरकुमारस्स णं भंते ! केवतियं कालं ठिती पन्नत्ता ?, गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं तिन्नि पलिओवमाइं, एवं जाव थणियकुमारस्स । भवियद-व्वपुढविकाइयस्स णं पुच्छा, गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं सातिरेगाइं दो सागरोवमाइं, एवं आउक्काइयस्सवि, तेउवाऊ जहा नेरइयस्स, वणस्सइकाइयस्स जहा पुढविकाइयस्स, बेइंदियस्स तेइंदि-यस्स चउरिंदियस्स जहा नेरइयस्स, पंचिंदियतिरिक्खजोणियस्स जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं तेत्तीसं सागरोवमाइं, एवं मणुस्सावि, वाणमंतरजोइसियवेमाणियस्स जहा असुरकुमारस्स ॥ सेवं भंते ! सेवं भंतेत्ति ॥ (सूत्रं ६४२) ॥ १८–९ ॥

'रायगिहे'इत्यादि, 'भवियदव्वनेरइय'त्ति द्रव्यभूता नारका द्रव्यनारकाः, ते च भूतनारकपर्यायतयाऽपि भव-न्तीति भव्यशब्देन विशेषिताः, भव्याश्च ते द्रव्यनारकाश्चेति विग्रहः, ते चैकभविकबद्धायुष्काभिमुखनामगोत्रभेदा भवन्ति ॥ 'भवियदव्वनेरइयस्से'त्यादि, 'अंतोमुहुत्तं'ति सञ्ज्ञिनमसञ्ज्ञिनं वा नरकगामिनमन्तर्मुहूर्त्तायुषमपेक्ष्यान्तर्मु-हूर्त्तं स्थितिरुक्ता, 'पुव्वकोडि'त्ति मनुष्यं पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्चं चाश्रित्येति भव्यद्रव्यासुरादीनामपि जघन्या स्थितिरित्थमेव,उत्कृष्टा तु 'तिन्नि पलिओवमाइं'ति उत्तरकुर्वादिमिथुनकनरादीनाश्रित्योक्ता, यतस्ते मृता देवेषूत्पद्यन्त इति, द्रव्यपृथिवीकायि-कस्य 'साइरेगाइं दो सागरोवमाइं'ति ईशानदेवमाश्रित्योक्ता, द्रव्यतेजसो द्रव्यवायोश्च 'जहा नेरइयस्स'त्ति अन्तर्मु-

१८ शतके उद्देशः ९ भव्यद्रव्य-नरकादि सू ६४२

॥७५६॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

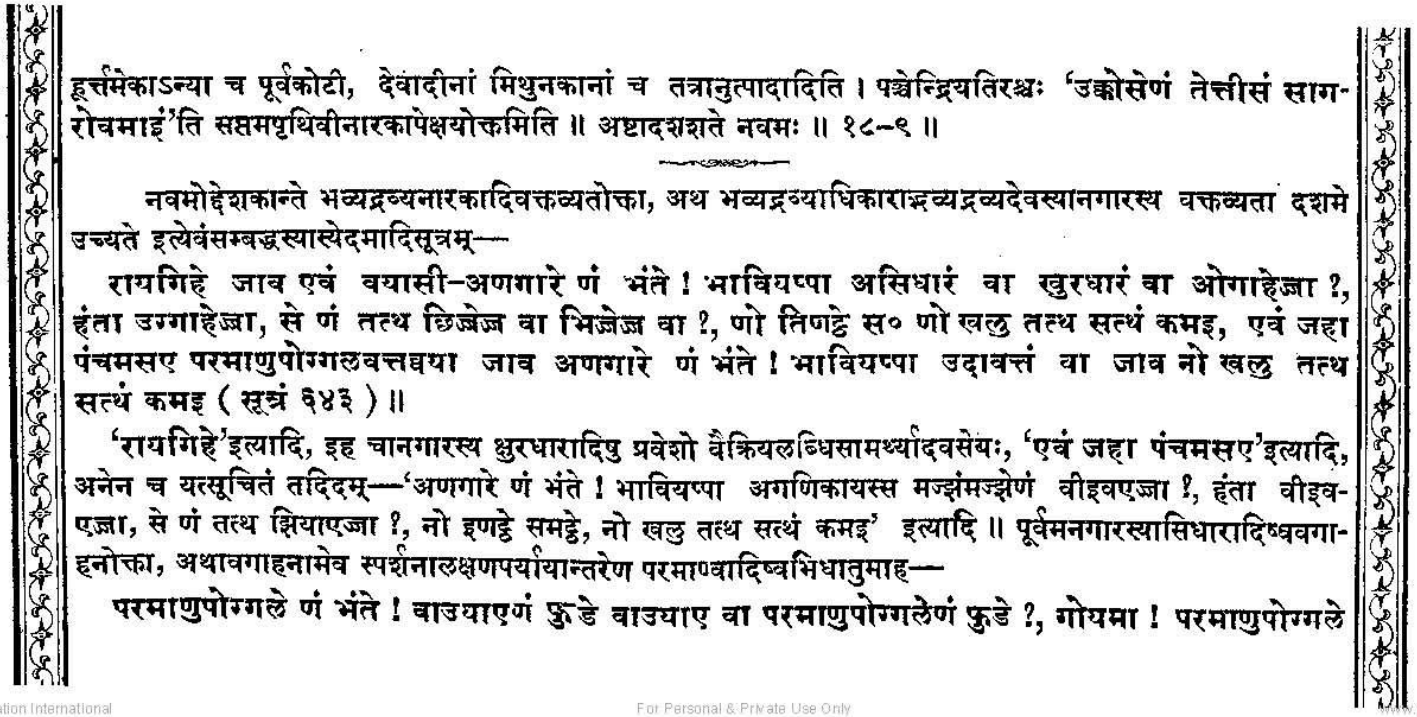

हूर्त्तमेकाऽन्या च पूर्वकोटी, देवादीनां मिथुनकानां च तत्रानुत्पादादिति । पञ्चेन्द्रियतिरश्चः 'उक्कोसेणं तेत्तीसं सागरोवमाइं'ति सप्तमपृथिवीनारकापेक्षयोक्तमिति ॥ अष्टादशशते नवमः ॥ १८–९ ॥

नवमोद्देशकान्ते भव्यद्रव्यनारकादिवक्तव्यतोक्ता, अथ भव्यद्रव्याधिकाराद्भव्यद्रव्यदेवस्यानगारस्य वक्तव्यता दशमे उच्यते इत्येवंसम्बद्धस्यास्येदमादिसूत्रम्—

रायगिहे जाव एवं वयासी–अणगारे णं भंते ! भावियप्पा असिधारं वा खुरधारं वा ओगाहेज्जा ?, हंता उग्गाहेज्जा, से णं तत्थ छिज्जेज्ज वा भिज्जेज्ज वा ?, णो तिणट्ठे स० णो खलु तत्थ सत्थं कमइ, एवं जहा पंचमसए परमाणुपोग्गलवत्तव्वया जाव अणगारे णं भंते ! भावियप्पा उदावत्तं वा जाव नो खलु तत्थ सत्थं कमइ (सूत्रं ६४३) ॥

'रायगिहे'इत्यादि, इह चानगारस्य क्षुरधारादिषु प्रवेशो वैक्रियलब्धिसामर्थ्यादवसेयः, 'एवं जहा पंचमसए'इत्यादि, अनेन च यत्सूचितं तदिदम्—'अणगारे णं भंते ! भावियप्पा अगणिकायस्स मज्झंमज्झेणं वीइवएज्जा ?, हंता वीइवएज्जा, से णं तत्थ झियाएज्जा ?, नो इणट्ठे समट्ठे, नो खलु तत्थ सत्थं कमइ' इत्यादि ॥ पूर्वमनगारस्यासिधारादिष्ववगाहनोक्ता, अथावगाहनामेव स्पर्शनालक्षणपर्यायान्तरेण परमाण्वादिष्वभिधातुमाह—

परमाणुपोग्गले णं भंते ! वाउयाएणं फुडे वाउयाए वा परमाणुपोग्गलेणं फुडे ?, गोयमा ! परमाणुपोग्गले

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र अष्टादशमे शतके नवम-उद्देशक: परिसमाप्त:

अथ अष्टादशमे शतके दशम-उद्देशक: आरभ्यते

वाउयाएणं फुडे नो वाउयाए परमाणुपोग्गलेणं फुडे । दुप्पएसिए णं भंते ! खं० वाउयाएणं एवं चेव एवं जाव असंखेज्जपएसिए ॥ अणंतपएसिए णं भंते ! खंधे वाउपुच्छा, गोयमा ! अणंतपएसिए खंधे वाउयाएणं फुडे वाउयाए अणंतपएसिएणं खंधेणं सिय फुडे सिय नो फुडे ॥ वत्थी भंते ! वाउयाएणं फुडे वाउयाए वत्थिणा फुडे ?, गोयमा ! वत्थी वाउयाएणं फुडे नो वाउयाए वत्थिणा फुडे ॥ (सूत्रं ६४४) ॥

'परमाणुपोग्गले ण'मित्यादि, 'वाउयाएणं फुडे'त्ति परमाणुपुद्गलो वायुकायेन 'स्पृष्टः' व्याप्तो मध्ये क्षिप्त इत्यर्थः 'नो वाउयाए'इत्यादि नो वायुकायः परमाणुपुद्गलेन 'स्पृष्टः'व्याप्तो मध्ये क्षिप्तो, वायोर्महत्त्वाद् अणोश्च निष्प्रदेशत्वेनातिसूक्ष्मतया व्यापकत्वाभावादिति ॥ 'अणंतपएसिए ण'मित्यादि, अनन्तप्रदेशिकः स्कन्धो वायुना व्याप्तो भवति सूक्ष्मतरत्वात्तस्य, वायुकायः पुनरनन्तप्रदेशिकस्कन्धेन स्याद् व्याप्तः स्यान्न व्याप्तः, कथम् ?, यदा वायुस्कन्धापेक्षया महानसौ भवति तदा वायुस्तेन व्याप्तो भवत्यन्यदा तु नेति ॥ 'वत्थी'त्यादि, 'वस्तिः' दतिर्वायुकायेन 'स्पृष्टः' व्याप्तः सामस्त्येन तद्विवरपरिपूरणात् नो वायुकायो वस्तिना स्पृष्टो वस्तेर्वायुकायस्य परित एव भावात् ॥ अनन्तरं पुद्गलद्रव्याणि स्पृष्टत्वधर्म्मतो निरूपितानि, अथ वर्णादिभिस्तान्येव निरूपयन्नाह—

अत्थि णं भंते ! इमीसे रयणप्पभाए पुढ० अहे दव्वाइं वन्नओ कालनीललोहियहालिद्दसुक्किल्लाइं गंधओ सुब्भिगंधाइं दुब्भिगंधाइं रसओ तित्तकडुयकसायअंबिलमहुराइं फासओ कक्खडमउयगरुयलहुयसीयउसिणनिद्धलुक्खाइं अन्नमन्नबद्धाइं अन्नमन्नपुट्ठाइं जाव अन्नमन्नघडत्ताए चिट्ठंति ?, हंता अत्थि, एवं जाव

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [६४५]

दीप अनुक्रम [७५५]

अहेसत्तमाए । अत्थि णं भंते ! सोहम्म० कप्पस्स अहे एवं चेव एवं जाव ईसिपब्भाराए पुढ० । सेवं भंते ! २ जाव विहरइ । तए णं समणे भगवं महावीरे जाव बहिया जणवयविहारं विहरति ॥ (सूत्रं ६४५) ॥

'अत्थी'त्यादि, 'अन्नमन्नबद्धाइं'ति गाढाश्लेषतः 'अन्नमन्नपुट्ठाइं'ति आगाढाश्लेषतः, यावत्करणात् 'अन्नमन्नओगाढाइं'ति एकक्षेत्राश्रितानीत्यादि दृश्यम्, 'अन्नमन्नघडत्ताए'त्ति परस्परसमुदायतया ॥ अनन्तरं पुद्गलद्रव्याणि निरूपितानि, अथात्मद्रव्यधर्म्मविशेषानात्मद्रव्यं च संविधानकद्वारेण निरूपयन्निदमाह—

तेणं कालेणं २ वाणियगामे नामं नगरे होत्था वन्नओ, दूतिपलासए चेतिए वन्नओ, तत्थ णं वाणियगामे नगरे सोमिले नामं माहणे परिवसति अड्ढे जाव अपरिभूए रिउव्वेदजाव सुपरिनिट्ठिए पंचण्हं खंडियसयाणं सयस्स कुडुंबस्स आहेवच्चं जाव विहरति, तए णं समणे भगवं महावीरे जाव समोसढे जाव परिसा पज्जुवासति, तए णं तस्स सोमिलस्स माहणस्स इमीसे कहाए लद्धट्ठस्स समाणस्स अयमेयारूवे जाव समुप्पज्जित्था—एवं खलु समणे णायपुत्ते पुव्वाणुपुव्विं चरमाणे गामाणुगामं दूइज्जमाणे सुहंसुहेणं जाव इहमागए जाव दूतिपलासए चेइए अहापडिरूवं जाव विहरइ तं गच्छामि णं समणस्स नायपुत्तस्स अंतियं पाउब्भवामि इमाइं च णं एयारूवाइं अट्ठाइं जाव वागरणाइं पुच्छिस्सामि, तं जइ इमे से इमाइं एयारूवाइं अट्ठाइं जाव वागरणाइं वागरेहिति ततो णं वंदीहामि नमंसीहामि जावपज्जुवासीहामि, अहमेयं से इमाइं अट्ठाइं जाव वागरणाइं नो वागरेहिति तो णं एएहिं चेव अट्ठेहि य जाव वागरणेहि य निप्पट्ठपसिणवागरणं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सोमिल-ब्राह्मणस्य भगवंत-महावीरेण सह प्रश्न-संवाद:

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [६४६]

दीप अनुक्रम [७५६]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥७५८॥

करेस्सामीतिकट्टु एवं संपेहेइ २ ण्हाए जाव सरीरे साओ गिहाओ पडिनिक्खमति पडि० २ पायविहारचारेणं एगेणं खंडियसएणं सद्धिं संपरिवुडे वाणियगामं नगरं मज्झंमज्झेणं निग्गच्छइ २ जेणेव दूतिपलासए चेइए जेणेव समणे भग० म० तेणेव उवा० २ समणस्स ३ अदूरसामंते ठिच्चा समणं भगवं म० एवं वयासी–जत्ता ते भंते ! जवणिज्जं० अव्वाबाहं० फासुयविहारं० ?, सोमिला ! जत्तावि मे जवणिज्जंपि मे अव्वाबाहंपि मे फासुयविहारंपि मे, किं ते भंते ! जत्ता ?, सोमिला ! जं मे तवनियमसंजमसज्झायझाणावस्सयमादीएसु जोगेसु जयणा सेत्तं जत्ता, किं ते भंते ! जवणिज्जं ?, सोमिला ! जवणिज्जे दुविहे पं०, तं०–इंदियजवणिज्जे य नोइंदियजवणिज्जे य, से किं तं इंदियजवणिज्जे ?, २ जं मे सोइंदियचक्खिंदियघाणिंदियजिब्भिंदियफासिंदियाइं निरुवहयाइं वसे वट्टंति सेत्तं इंदियजवणिज्जे, से किं तं नोइंदियजवणिज्जे ?, २ जं मे कोहमाणमायालोभा वोच्छिन्ना नो उदीरेंति से त्तं नोइंदियजवणिज्जे, सेत्तं जवणिज्जे, किं ते भंते ! अव्वाबाहं ?, सोमिला ! जं मे वातियपित्तियसिंभियसन्निवाइया विविहा रोगायंका सरीरगया दोसा उवसंता नो उदीरेंति सेत्तं अव्वाबाहं, किं ते भंते ! फासुयविहारं ?, सोमिला ! जन्नं आरामेसु उज्जाणेसु देवकुलेसु सभासु पवासु इत्थीपसुपंडगविवज्जियासु वसहीसु फासुएसणिज्जं पीढफलगसेज्जासंथारगं उवसंपज्जित्ताणं विहरामि सेत्तं फासुयविहारं ॥ सरिसवा ते भंते ! किं भक्खेया अभक्खेया ?, सोमिला ! सरिसवा भक्खेयावि अभक्खेयावि, से केणट्ठे० सरिसवा मे भक्खेयावि अभक्खेयावि ?, से नूणं ते सोमिला ! बंभन्नएसु नएसु दुविहा सरि-

१८ शतके उद्देशः १० सोमिलस्य यात्रादिसर्व पादिप्रश्नः सू ६४६

॥७५८॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सोमिल-ब्राह्मणस्य भगवंत-महावीरेण सह प्रश्न-संवाद:

सवा पन्नत्ता, तंजहा–मित्तसरिसवा य धन्नसरिसवा य, तत्थ णं जे ते मित्तसरिसवा ते तिविहा पं०, तं०–सहजायया सहवड्ढियया सहपंसुकीलियया, ते णं समणाणं निग्गंथाणं अभक्खेया, तत्थ णं जे ते धन्नसरिसवा ते दुविहा प०, तं०–सत्थपरिणया य असत्थपरिणया य, तत्थ णं जे ते असत्थपरिणया ते णं समणाणं निग्गंथाणं अभक्खेया, तत्थ णं जे से सत्थपरिणया ते दुविहा पं०, तं०–एसणिज्जा य अणेसणिज्जा य, तत्थ णं जे ते अणेसणिज्जा ते समणाणं निग्गंथाणं अभक्खेया, तत्थ णं जे ते एसणिज्जा ते दुविहा प० तं०–जाइया य अजाइया य, तत्थ णं जे ते अजाइया ते णं समणाणं निग्गंथाणं अभक्खेया, तत्थ णं जे ते जातिया ते दुविहा प०, तं०–लद्धा य अलद्धा य, तत्थ णं जे ते अलद्धा ते णं समणाणं निग्गंथाणं अभक्खेया, तत्थ णं जे ते लद्धा ते णं समणाणं निग्गंथाणं भक्खेया, से तेणट्ठेणं सोमिला ! एवं वुच्चइ जाव अभक्खेयावि । मासा ते भंते ! किं भक्खेया अभक्खेया ?, सोमिला ! मासा मे भक्खेयावि अभक्खेयावि, से केणट्ठेणं जाव अभक्खेयावि, से नूणं ते सोमिला ! बंभन्नएसु नएसु दुविहा मासा प०, तं०–दव्वमासा य कालमासा य, तत्थ णं जे ते कालमासा ते णं सावणादीया आसाढपज्जवसाणा दुवालस तं०–सावणे भद्दवए आसोए कत्तिए मग्गसिरे पोसे माहे फागुणे चित्ते वइसाहे जेट्ठामूले आसाढे, ते णं समणाणं निग्गंथाणं अभक्खेया, तत्थ णं जे ते दव्वमासा ते दुविहा प० तं०–अत्थमासा य धण्णमासा य, तत्थ णं जे ते अत्थमासा ते दुविहा प० तं०–सुवन्नमासा य रुप्पमासा य, ते णं समणाणं निग्गंथाणं अभक्खेया, तत्थ णं जे ते धन्न-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सोमिल-ब्राह्मणस्य भगवंत-महावीरेण सह प्रश्न-संवाद:

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [६४६]

दीप अनुक्रम [७५६]

मासा ते दुविहा प० तं०–सत्थपरिणया य असत्थपरिणया य एवं जहा धन्नसरिसवा जाव से तेणट्ठेणं जाव अभक्खेयावि । कुलत्था ते भंते ! किं भक्खेया अभक्खेया ?, सोमिला ! कुलत्था भक्खेयावि अभक्खेयावि, से केणट्ठेणं जाव अभक्खेयावि ?, से नूणं सोमिला ! ते बंभन्नएसु नएसु दुविहा कुलत्था प० तं–इत्थिकुलत्था य धन्नकुलत्था य, तत्थ णं जे ते इत्थिकुलत्था ते तिविहा पं०, तंजहा–कुलकन्नयाइ वा कुलवहूयाति वा कुलमाउयाइ वा, ते णं समणाणं निग्गंथाणं अभक्खेया, तत्थ णं जे ते धन्नकुलत्था एवं जहा धन्नसरिसवा से तेणट्ठेणं जाव अभक्खेयावि ॥ (सूत्रं ६४६) ॥

'तेण'मित्यादि, 'इमाइं च णं'ति इमानि च वक्ष्यमाणानि यात्रायापनीयादीनि 'जत्त'त्ति यानं यात्रा–संयमयोगेषु प्रवृत्तिः 'जवणिज्जं'ति यापनीयं–मोक्षाध्वनि गच्छतां प्रयोजक इन्द्रियादिवश्यतारूपो धर्म्मः 'अव्वाबाहं'ति शरीरबाधानाभावः 'फासुयविहारं'ति प्रासुकविहारो–निर्जीव आश्रय इति, 'तवनियमसंजमसज्झायझाणावस्सयमाइएसु'त्ति इह तपः–अनशनादि नियमाः–तद्विषया अभिग्रहविशेषाः यथा एतावत्तपःस्वाध्यायवैयावृत्त्यादि मयाऽवश्यं रात्रिन्दिवादौ विधेयमित्यादिरूपाः संयमः–प्रत्युपेक्षादिः स्वाध्यायो–धर्मकथादि ध्यानं–धर्म्मादिः आवश्यकं–षड्विधं, एतेषु च यद्यपि भगवतः किञ्चिन्न तदानीं विशेषतः संभवति तथाऽपि तत्फलसद्भावात्तदस्तीत्यवगन्तव्यं, 'जयण'त्ति प्रवृत्तिः 'इंदियजवणिज्जं'ति इन्द्रियविषयं यापनीयं–वश्यत्वमिन्द्रिययापनीयं, एवं नोइन्द्रिययापनीयं, नवरं नोशब्दस्य मिश्रवचनत्वादिन्द्रियैर्मिश्राः सहार्थत्वाद्वा इन्द्रियाणां सहचरिता नोइन्द्रियाः–कषायाः, एषां च यात्रादिपदानां सामयिकगम्भीरार्थत्वेन भग-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सोमिल-ब्राह्मणस्य भगवंत-महावीरेण सह प्रश्न-संवाद:

वतस्तदर्थपरिज्ञानमसम्भावयता तेनापह्नाजनार्थं प्रश्नः कृत इति ॥ 'सरिसव'त्ति एकत्र प्राकृतशैल्या सदृशवयसः–समानवयसः अन्यत्र सर्षपाः–सिद्धार्थकाः, 'दव्वमास'त्ति द्रव्यरूपा माषाः 'कालमास'त्ति कालरूपा मासाः, 'कुलत्थ'त्ति एकत्र कुले तिष्ठन्तीति कुलस्थाः–कुलाङ्गनाः, अन्यत्र कुलत्थाः धान्यविशेषाः, सरिसवादिपदप्रश्नश्च छलग्रहणेनोपहासार्थं कृत इति ॥ अथ चसूरिं विमुच्य भगवतो वस्तुतत्त्वज्ञानजिज्ञासयाऽऽह—

एगे भवं दुवे भवं अक्खए भवं अव्वए भवं अवट्ठिए भवं अणेगभूयभावभविए भवं ?, सोमिला ! एगेवि अहं जाव अणेगभूयभावभविएवि अहं, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ जाव भविएवि अहं ?, सोमिला ! दव्वट्ठयाए एगे अहं नाणदंसणट्ठयाए दुविहे अहं पएसट्ठयाए अक्खएवि अहं अव्वएवि अहं अवट्ठिएवि अहं उवयोगट्ठयाए अणेगभूयभावभविएवि अहं, से तेणट्ठेणं जाव भविएवि अहं, एत्थ णं से सोमिले माहणे संबुद्धे समणं भगवं महावीरं जहा खंदओ जाव से जहेयं तुज्झे वदह जहा णं देवाणुप्पियाणं अंतिए बहवे राईसर एवंजहा रायप्पसेणइज्जे चित्तो जाव दुवालसविहं सावगधम्मं पडिवज्जति पडिवज्जित्ता समणं भगवं महावीरं वंदति जाव पडिगए, तए णं से सोमिले माहणे समणोवासए जाए अभिगयजीवा जाव विहरइ । भंतेत्ति भगवं गोयमे समणं भगवं महावीरं वंदति नमं० वं० नमं० पभू णं भंते ! सोमिले माहणे देवाणुप्पियाणं अंतिए मुंडे भवित्ता जहेव संखे तहेव निरवसेसं जाव अंतं काहिति । सेवं भंते ! २ त्ति जाव विहरति ॥ (सूत्रं ६४७) ॥ १८–१० ॥ ॥ अट्ठारसमं सयं समत्तं ॥ १८ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥७६०॥

'एगे भव'मित्यादि, एको भवानित्येकत्वाभ्युपगमे भगवताऽऽत्मनः कृते श्रोत्रादिविज्ञानानामवयवानां चात्मनोऽने-कतोपलब्धित एकत्वं दूषयिष्यामीति बुद्ध्या पर्यनुयोगः सोमिलभट्टेन कृतः, द्वौ भवानिति च द्वित्वाभ्युपगमेऽहमित्येक-त्वविशिष्टस्यार्थस्य द्वित्वविरोधेन द्वित्वं दूषयिष्यामीति बुद्ध्या पर्यनुयोगो विहितः, 'अक्खए भव'मित्यादिना च पदत्र-येण नित्यात्मपक्षः पर्यनुयुक्तः, 'अणेगभूयभावभविए भवं'ति अनेके भूता–अतीताः भावाः–सत्तापरिणामा भव्याश्च–भाविनो यस्य स तथा, अनेन चातीतभविष्यत्सत्ताप्रश्नेनानित्यतापक्षः पर्यनुयुक्तः, एकतरपरिग्रहे तस्यैव दूषणायेति, तत्र च भगवता स्याद्वादस्य निखिलदोषगोचरातिक्रान्तत्वात्तमबलम्ब्योत्तरमदायि–'एगेवि अह'मित्यादि, कथमित्येतत् ? इत्यत आह—'दव्वट्ठयाए एगोऽहं'ति जीवद्रव्यस्यैकत्वेनैकोऽहं न तु प्रदेशार्थतया, तथा हि अनेकत्वान्ममेत्यवयवादी-नामनेकत्वोपलम्भो न बाधकः, तथा कञ्चित्स्वभावमाश्रित्यैकत्वसङ्ख्याविशिष्टस्यापि पदार्थस्य स्वभावान्तरद्वयापेक्षया द्वित्व-मपि न विरुद्धमित्यत उक्तं–'नाणदंसणट्ठयाए दुवेवि अहं'ति, न चैकस्य स्वभावभेदो न दृश्यते, एको हि देवदत्तादिः पुरुष एकदैव तत्तदपेक्षया पितृत्वपुत्रत्वभ्रातृत्वभ्रातृव्यत्वादीननेकान् स्वभावाँल्लभत इति, तथा प्रदेशार्थतयाऽसङ्ख्येयप्रदेशतामा-श्रित्याक्षतोऽप्यहं सर्वथा प्रदेशानां क्षयाभावात्, तथाऽव्ययोऽप्यहं कतिपयानामपि च व्ययाभावात्, किमुक्तं भवति ?– अवस्थितोऽप्यहं–नित्योऽप्यहम्, असङ्ख्येयप्रदेशिता हि न कदाचनापि व्यपैति अतो नित्यताऽभ्युपगमेऽपि न दोषः, तथा 'उवओगट्ठयाए'त्ति विविधविषयानुपयोगानाश्रित्यानेकभूतभावभविकोऽप्यहम्, अतीतानागतयोर्हि कालयोरनेकविषयबो-धानामात्मनः कथञ्चिदभिन्नानां भूतत्वाद् भावित्वाच्चेत्यनित्यपक्षोऽपि न दोषायेति। 'एवं जहा रायप्पसेणइज्जे'इत्यादि,

१८ शतके उद्देशः १० एकद्वित्वा-दिप्रश्नः सू ६४७

॥७६०॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अनेन च यत्सूचितं तस्यार्थलेशो दर्श्यते–यथा देवानांप्रियाणामन्तिके बहवो राजेश्वरतलवरादयस्त्यक्त्वा हिरण्यसुवर्णादि मुण्डा भूत्वाऽगारादनगारितां प्रव्रजन्ति न खलु तथा शक्नोमि प्रव्रजितुमितीच्छाम्यहमणुव्रतादिकं गृहिधर्म्मं भगवदन्तिके प्रतिपत्तुं, ततो भगवानाह–यथासुखं देवानांप्रिय ! मा प्रतिबन्धोऽस्तु, ततस्तमसौ प्रत्यपद्यत इति ॥ अष्टादशशते दशमः ॥ १८–१० ॥ ॥ अष्टादशं शतं च वृत्तितः परिसमाप्तमिति ॥ १८ ॥

अष्टादशशतवृत्तिर्विहिता वृत्तानि वीक्ष्य वृत्तिकृताम् । प्राकृतनरो ह्यदृष्टं न कर्म्म कर्त्तुं प्रभुर्भवति ॥ १ ॥

व्याख्यातमष्टादशशतम्, अथावसरायातमेकोनविंशतितमं व्याख्यायते, तत्र चादावेवोद्देशकसङ्ग्रहाय गाथा—

लेस्सा य १ गब्भ २ पुढवी ३ महासवा ४ चरम ५ दीव ६ भवणा ७ य । निव्वत्ति ८ करण ९ वणचर-सुरा १० य एगूणवीसइमे ॥ १ ॥ रायगिहे जाव एवं वयासी–कति णं भंते ! लेस्साओ पन्नत्ताओ ?, गोयमा ! छल्लेसाओ पन्नत्ताओ, तंजहा–एवं जहा पन्नवणाए चउत्थो लेसुद्देसओ भाणियव्वो निरवसेसो । सेवं भंते २ ॥ (सूत्रं ६४८) ॥ १९–१ ॥

'लेस्से'त्यादि, तत्र 'लेस्सा य'त्ति लेश्याः प्रथमोद्देशके वाच्या इत्यसौ लेश्योद्देशक एवोच्यते, एवमन्यत्रापि १ चशब्दः समुच्चये, 'गब्भ'त्ति गर्भाभिधायको द्वितीयः २ 'पुढवि'त्ति पृथिवीकायिकादिवक्तव्यतार्थस्तृतीयः ३ 'महासव'त्ति नारका महाश्रवा महाक्रिया इत्याद्यर्थपरश्चतुर्थः ४, 'चरम'त्ति चरमेभ्योऽल्पस्थितिकेभ्यो नारकादिभ्यः परमा–महास्थि-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र अष्टादशमे शतके दशम-उद्देशक: परिसमाप्त:

अथ एकोनविंशतितमं शतके प्रथम-उद्देशक: आरभ्यते

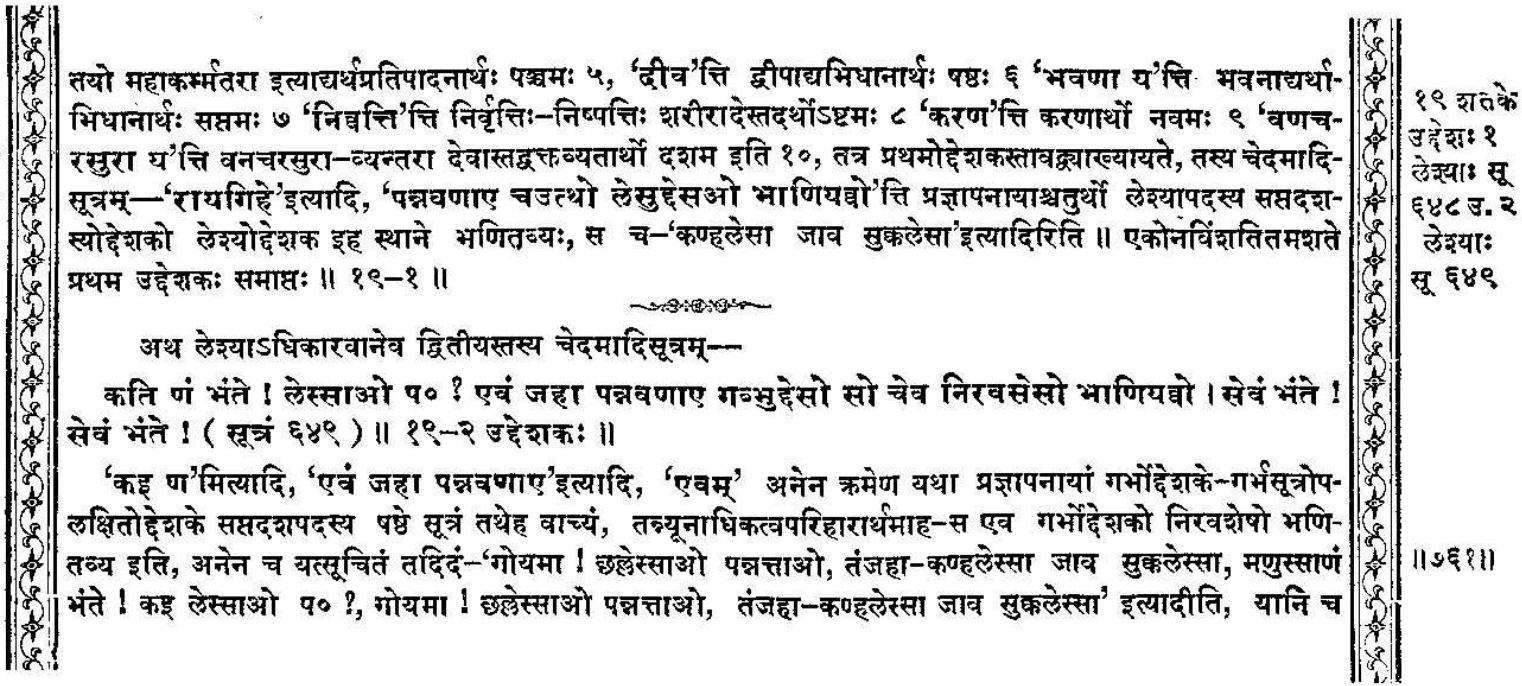

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः२ ॥७६१॥

तयो महाकर्म्मतरा इत्याद्यर्थप्रतिपादनार्थः पञ्चमः ५, 'दीव'त्ति द्वीपाद्यभिधानार्थः षष्ठः ६ 'भवणा य'त्ति भवनाद्यर्थाभिधानार्थः सप्तमः ७ 'निवत्ति'त्ति निर्वृत्तिः–निष्पत्तिः शरीरादेस्तदर्थोऽष्टमः ८ 'करण'त्ति करणार्थो नवमः ९ 'वणचरसुरा य'त्ति वनचरसुरा–व्यन्तरा देवास्तद्वक्तव्यतार्थो दशम इति १०, तत्र प्रथमोद्देशकस्तावद्व्याख्यायते, तस्य चेदमादिसूत्रम्—'रायगिहे'इत्यादि, 'पन्नवणाए चउत्थो लेसुद्देसओ भाणियव्वो'त्ति प्रज्ञापनायाश्चतुर्थो लेश्यापदस्य सप्तदशस्योद्देशको लेश्योद्देशक इह स्थाने भणितव्यः, स च–'कण्हलेसा जाव सुक्कलेसा'इत्यादिरिति ॥ एकोनविंशतितमशते प्रथम उद्देशकः समाप्तः ॥ १९–१ ॥

अथ लेश्याऽधिकारवानेव द्वितीयस्तस्य चेदमादिसूत्रम्—

कति णं भंते ! लेस्साओ प० ? एवं जहा पन्नवणाए गब्भुद्देसो सो चेव निरवसेसो भाणियव्वो । सेवं भंते ! सेवं भंते ! (सूत्रं ६४९) ॥ १९–२ उद्देशकः ॥

'कइ ण'मित्यादि, 'एवं जहा पन्नवणाए'इत्यादि, 'एवम्' अनेन क्रमेण यथा प्रज्ञापनायां गर्भोद्देशके–गर्भसूत्रोपलक्षितोद्देशके सप्तदशपदस्य षष्ठे सूत्रं तथेह वाच्यं, तच्यूनाधिकत्वपरिहारार्थमाह–स एव गर्भोद्देशको निरवशेषो भणितव्य इति, अनेन च यत्सूचितं तदिदं–'गोयमा ! छल्लेस्साओ पन्नत्ताओ, तंजहा–कण्हलेस्सा जाव सुक्कलेस्सा, मणुस्साणं भंते ! कइ लेस्साओ प० ?, गोयमा ! छल्लेस्साओ पन्नत्ताओ, तंजहा–कण्हलेस्सा जाव सुक्कलेस्सा' इत्यादीति, यानि च

१९ शतके उद्देशः १ लेश्याः सू ६४८ उ. २ लेश्याः सू ६४९

॥७६१॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र एकोनविंशतितमे शतके प्रथम-उद्देशक: परिसमाप्त:

अथ एकोनविंशतितमं शतके द्वितीय-उद्देशक: आरभ्यते

प्रत सूत्रांक [६४९]

दीप अनुक्रम [७६०]

सूत्राण्याश्रित्य गर्भोद्देशकोऽयमुक्तस्तानीमानि–कण्हलेस्से णं भंते ! मणुस्से कण्हलेस्सं गब्भं जणेज्जा ?, हंता गोयमा ! जणेज्जा । कण्हलेस्से णं भंते ! मणूसे नीललेसं गब्भं जणेज्जा ? हंता गोयमा ! जणेज्जा' इत्यादीति ॥ एकोनविंशतितमशते द्वितीयः ॥ १९–२ ॥

द्वितीयोद्देशके लेश्या उक्तास्तद्युक्ताश्च पृथिवीकायिकादित्वेनोत्पद्यन्त इति पृथिवीकायिकादयस्तृतीये निरूप्यन्त इत्येवंसम्बन्धस्यास्येदमादिसूत्रम्—

रायगिहे जाव एवं वयासी सिय भंते ! जाव चत्तारि पंच पुढविकाइया एगयओ साधारणसरीरं बंधंति एग० २ तओ पच्छा आहारेंति वा परिणामेंति वा सरीरं वा बंधंति ?, नो इणट्ठे समट्ठे, पुढविकाइयाणं पत्तेयाहारा पत्तेयपरिणामा पत्तेयं सरीरं बंधंति प० २ ततो पच्छा आहारेंति वा परिणामेंति वा सरीरं वा बंधंति ? तेसि णं भंते ! जीवाणं कति लेस्साओ प० ?, गोयमा ! चत्तारि लेस्साओ० प०, तं०–कण्हलेस्सा नील० काउ० तेउ० २, ते णं भंते ! जीवा किं सम्मदिट्ठी मिच्छादिट्ठी सम्मामिच्छादिट्ठी ?, गोयमा ! नो सम्मदिट्ठी मिच्छादिट्ठी नो सम्मामिच्छदिट्ठी ३, ते णं भंते ! जीवा किं नाणी अन्नाणी ?, गोयमा ! नो नाणी अन्नाणी, नियमा दुअन्नाणी, तं०–मइअन्नाणी य सुयअन्नाणी य ४, ते णं भंते ! जीवा किं मणजोगी वयजोगी कायजोगी ?, गोयमा ! नो मणजोगी नो वयजोगी कायजोगी ५, ते णं भंते ! जीवा किं सागारोवउत्ता अणागारोवउत्ता ?,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र एकोनविंशतितमे शतके द्वितीय-उद्देशक: परिसमाप्त:

अथ एकोनविंशतितमं शतके तृतीय-उद्देशक: आरभ्यते

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥७६२॥

गोयमा ! सागारोवउत्तावि अणागारोवउत्तावि ६, ते णं भंते ! जीवा किमाहारमाहारेंति ?, गोयमा ! दव्वओ णं अणंतपदेसियाइं दव्वाइं एवं जहा पन्नवणाए पढमे आहारुद्देसए जावसव्वप्पणयाए आहारमाहारेंति ७, ते णं भन्ते ! जीवा जमाहारेंति तं चिज्जंति जं नो आहारेंति तं नो चिज्जंति चिन्ने वा से उदाइ पलिसप्पति वा ?, हंता गोयमा ! ते णं जीवा जमाहारेंति तं चिज्जंति जं नो जाव पलिसप्पति वा ८, तेसि णं भंते ! जीवाणं एवं सन्नाति वा पन्नाति वा मणोति वा वईइ वा अम्हे णं आहारमाहारेमो ?, णो तिणट्ठे स० आहारेंति पुण ते तेसिं ९, तेसि णं भंते ! जीवाणं एवं सन्ना० जाव वीयीति वा अम्हे णं इट्ठाणिट्ठे फासेपरे वेदेमो पडिसंवेदेमो ?, णो ति० पडिसंवेदेंति पुण ते १०, ते णं भंते ! जीवा किं पाणाइवाए उवक्खाइज्जंति मुसावाए अदिन्ना० जाव मिच्छादंसणसल्ले उवक्खाइज्जंति ?, गोयमा ! पाणाइवाएवि उवक्खाइज्जंति जाव मिच्छादंसणसल्लेवि उवक्खाइज्जंति, जेसिंपि णं जीवाणं ते जीवा एवमाहिज्जंति तेसिंपि णं जीवाणं नो विज्जाए नाणत्ते ११ ॥ ते णं भंते ! जीवा कओहिंतो उवव० किं नेरइएहिंतो उववज्जंति ? एवं जहा वक्कंतीए पुढविक्काइयाणं उववाओ तहा भाणियव्वो १२। तेसि णं भंते ! जीवाणं केवतियं कालं ठिती प० ?, गोयमा ! जहन्नेणं अंतोमुहु० उक्कोसेणं बावीसं वाससहस्साइं १३ ॥ तेसि णं भंते ! जीवाणं कति समुग्घाया प० ?, गोयमा ! तओ समुग्घाया पं०, तं०–वेयणासमुग्घाए कसाय० मारणंतियस० । ते णं भंते ! जीवा मारणंतियसमुग्घाएणं किं समोहया मरंति असमोहया मरंति ?, गोयमा ! समोहयावि मरंति असमोहयावि मरंति ॥ ते णं भंते ! जीवा अणंतरं उव्वट्टित्ता

१९ शतके उद्देशः ३ पृथ्व्यादि-शरीरादि सू ६५० ॥७६२॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कहिं गच्छंति कहिं उववज्जंति ?, एवं उव्वट्टणा जहा वक्कंतीए १२। सिय भंते ! जाव चत्तारि पंच आउक्काइया एगयओ साहारणसरीरं बंधंति एग० २ तओ पच्छा आहारेंति एवं जो पुढविकाइयाणं गमो सो चेव भाणियव्वो जाव उव्वट्टंति नवरं ठिती सत्तवाससहस्साइं उक्कोसेणं सेसं तं चेव। सिय भंते ! जाव चत्तारि पंच तेउक्काइया एवं चेव नवरं उववाओ ठिती उव्वट्टणा य जहा पन्नवणाए सेसं तं चेव। वाउकाइयाणं एवं चेव नाणत्तं नवरं चत्तारि समुग्घाया। सिय भंते ! जाव चत्तारि पंच वणस्सइकाइयापुच्छा, गोयमा ! णो तिणट्ठे समट्ठे, अणंता वणस्सइकाइया एगयओ साहारणसरीरं बंधंति एग० २ तओ पच्छा आहारेंति वा परि० २ सेसं जहा तेउकाइयाणं जाव उव्वट्टंति नवरं आहारो नियमं छद्दिसिं, ठिती जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणवि अंतोमुहुत्तं, सेसं तं चेव ॥ (सूत्रं ६५०)

'रायगिहे' इत्यादि, इह चेयं द्वारगाथा क्वचिद् दृश्यते—"सिय लेसदिट्ठिणाणे जोगुवओगे तहा किमाहारो। पाणाइवाय उप्पायठिई समुग्घायउव्वट्टी ॥ १ ॥"ति, अस्याश्चार्थो वनस्पतिदण्डकान्तोद्देशकार्थाधिगमावगम्य एव, तत्र स्याद्वारे 'सिय'त्ति स्याद्–भवेदयमर्थः, अथवा प्रायः पृथिवीकायिकाः प्रत्येकं शरीरं बध्नन्तीति सिद्धं, किन्तु 'सिय'त्ति स्यात् कदाचित् 'जाव चत्तारि पंच पुढविकाइय'त्ति चत्वारः पञ्च वा यावत्करणाद् द्वौ वा त्रयो वा उपलक्षणत्वाच्चास्य बहुतरा वा पृथिवीकायिका जीवाः 'एगओ'त्ति एकत एकीभूय संयुज्येत्यर्थः 'साहारणसरीरं बंधंति'त्ति बहूनां सामान्यशरीरं बध्नन्ति, आदितस्तत्प्रायोग्यपुद्गलग्रहणतः, 'आहारेंति व'त्ति विशेषाहारापेक्षया सामान्याहारस्यावि[शिष्टशरीरबन्धनसमय

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

एव कृतत्वात् 'सरीरं वा बंधंति'त्ति आहारितपरिणामितपुद्गलैः शरीरस्य पूर्वबन्धापेक्षया विशेषतो बन्धं कुर्वन्तीत्यर्थः, नायमर्थः समर्थो, यतः पृथिवीकायिकाः प्रत्येकाहाराः प्रत्येकपरिणामाश्चातः प्रत्येकं शरीरं बध्नन्तीति तत्प्रायोग्यपुद्गल-ग्रहणतः, ततश्चाहारयन्तीत्यादि एतच्च प्राग्वदिति ॥ किमाहारद्वारे—'एवं जहा पन्नवणाए पढमे आहारुद्देसए'त्ति एवं यथा प्रज्ञापनायामष्टाविंशतितमपदस्य प्रथमे आहाराभिधायकोद्देशके सूत्रं तथेह वाच्यं, तच्चैवं–'खेत्तओ असंखेज्जपए-सोगाढाइं कालतो अन्नयरकालट्ठितीयाइं भावओ वन्नमंताइं गंधमंताइं रसमंताइं फासमंताइं' इत्यादीति 'तं चिन्नइ'त्ति तत्–पुद्गलजातं शरीरेन्द्रियतया परिणमतीत्यर्थः 'चिन्ने वा से उवचइ'त्ति चीर्णं च–आहारितं सत्तत् पुद्गलजातम् 'अप-द्रवति' अपयाति विनश्यतीति मलवत् सारश्चास्य शरीरेन्द्रियतया परिणमति, एतदेवाह—'पलिसप्पइ व'त्ति परि-सर्प्पति च परि–समन्ताद्गच्छति, 'एवं सन्नाइ व'त्ति 'एवं'वक्ष्यमाणोल्लेखेन 'सन्ज्ञा' व्यावहारिकार्थावग्रहरूपा मतिः प्रवर्त्तत इति शेषः, 'पन्नाइ व'त्ति प्रज्ञा–सूक्ष्मार्थविषया मतिरेव, 'मणोइ व'त्ति मनोद्रव्यस्वभावं, 'वईइ व'त्ति वाग् द्रव्य-श्रुतरूपा ॥ प्राणातिपातादिद्वारे—'पाणाइवाए उवक्खाइज्जती'त्यादि प्राणातिपाते स्थिता इति शेषः प्राणातिपातवृत्तय इत्यर्थः, उपाख्यायन्ते–अभिधीयन्ते, यश्चेह वचनाद्यभावेऽपि पृथिवीकायिकानां मृषावादादिभिरुपाख्यानं तन्मृषावादाद्य-विरतिमाश्रित्योच्यत इति, अथ हन्तव्यादिजीवानां का वार्त्ता ? इत्याह—'जेसिंपि ण'मित्यादि, येषामपि जीवानामति-पातादिविषयभूतानां प्रस्तावात्पृथिवीकायिकानामेव सम्बन्धिनाऽतिपातादिना 'ते जीव'त्ति ते–अतिपातादिकारिणो जीवाः 'एवमाहिज्जंति'त्ति अतिपातादिकारिण एते इत्याख्यायन्ते, तेषामपि जीवानामतिपातादिविषयभूतानां न केवलं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

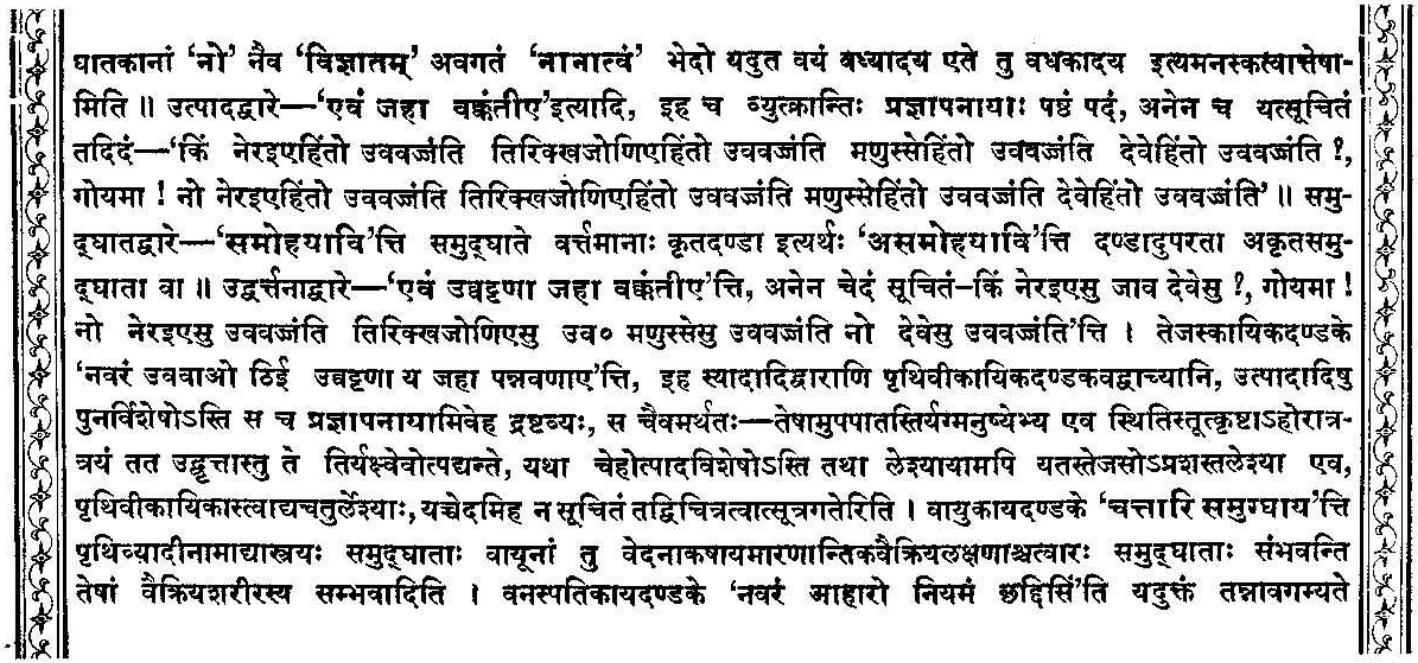

घातकानां 'नो' नैव 'विज्ञातम्' अवगतं 'नानात्वं' भेदो यदुत वयं वध्यादय एते तु वधकादय इत्यमनस्कत्वात्तेषामिति ॥ उत्पादद्वारे—'एवं जहा वक्कंतीए'इत्यादि, इह च व्युत्क्रान्तिः प्रज्ञापनायाः षष्ठं पदं, अनेन च यत्सूचितं तदिदं—'किं नेरइएहिंतो उववज्जंति तिरिक्खजोणिएहिंतो उववज्जंति मणुस्सेहिंतो उववज्जंति देवेहिंतो उववज्जंति ?, गोयमा ! नो नेरइएहिंतो उववज्जंति तिरिक्खजोणिएहिंतो उववज्जंति मणुस्सेहिंतो उववज्जंति देवेहिंतो उववज्जंति' ॥ समुद्घातद्वारे—'समोहयावि'त्ति समुद्घाते वर्त्तमानाः कृतदण्डा इत्यर्थः 'असमोहयावि'त्ति दण्डादुपरता अकृतसमुद्घाता वा ॥ उद्वर्त्तनाद्वारे—'एवं उव्वट्टणा जहा वक्कंतीए'त्ति, अनेन चेदं सूचितं–किं नेरइएसु जाव देवेसु ?, गोयमा ! नो नेरइएसु उववज्जंति तिरिक्खजोणिएसु उव० मणुस्सेसु उववज्जंति नो देवेसु उववज्जंति'त्ति । तेजस्कायिकदण्डके 'नवरं उववाओ ठिई उव्वट्टणा य जहा पन्नवणाए'त्ति, इह स्थादादिद्वाराणि पृथिवीकायिकदण्डकवद्वाच्यानि, उत्पादादिषु पुनर्विशेषोऽस्ति स च प्रज्ञापनायामिवेह द्रष्टव्यः, स चैवमर्थतः—तेषामुपपातस्तिर्यग्मनुष्येभ्य एव स्थितिस्तूत्कृष्टाऽहोरात्रत्रयं तत उद्वृत्तास्तु ते तिर्यक्ष्वेवोत्पद्यन्ते, यथा चेहोत्पादविशेषोऽस्ति तथा लेश्यायामपि यतस्तेजसोऽप्रशस्तलेश्या एव, पृथिवीकायिकास्त्वाद्यचतुर्लेश्याः, यच्चेदमिह न सूचितं तद्विचित्रत्वात्सूत्रगतेरिति । वायुकायदण्डके 'चत्तारि समुग्घाय'त्ति पृथिव्यादीनामाद्यास्त्रयः समुद्घाताः वायूनां तु वेदनाकषायमारणान्तिकवैक्रियलक्षणाश्चत्वारः समुद्घाताः संभवन्ति तेषां वैक्रियशरीरस्य सम्भवादिति । वनस्पतिकायदण्डके 'नवरं आहारो नियमं छद्दिसिं'ति यदुक्तं तन्नावगम्यते

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥७६४॥

लोकान्तनिष्कुटान्याश्रित्य त्रिदिगादेरप्याहारस्य तेषां सम्भवाद् बादरनिगोदान् वाऽऽश्रित्येदमवसेयं, तेषां पृथिव्याद्याश्रित्वेन षड्दिकाहारस्यैव सम्भवादिति ॥ अथैषामेव पृथिव्यादीनामवगाहनाऽल्पत्वादिनिरूपणायाह—

एएसि णं भंते! पुढविकाइयाणं आउतेउवाउवणस्सइकाइयाणं सुहुमाणं बादराणं पज्जत्तगाणं अपज्जत्तगाणं जाव जहन्नुक्कोसियाए ओगाहणाए कयरे २ जाव विसेसाहिया वा ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा सुहुमनिओयस्स अपज्जत्तस्स जहन्निया ओगाहणा १ सुहुमवाउकाइयस्स अपज्जत्तगस्स जहन्निया ओगाहणा असंखेज्जगुणा २ सुहुमतेऊअपज्जत्तस्स जह० ओगाहणा असंखेज्जगुणा ३ सुहुमआऊअपज्ज० जह० असं० ४ सुहुमपुढविअपज्जत्त० जहन्निया ओगाहणा असंखेज्जगुणा ५ बादरवाउकाइयस्स अपज्जत्तगस्स जहन्निया ओगाहणा असंखेज्जगुणा ६ बादरतेऊअपज्जत्तजहन्निया ओगाहणा असंखेज्जगुणा ७ बादरआउअपज्जत्तजहन्निया ओगा० असंखे० ८ बादरपुढवीकाइयअपज्जत्त जहन्निया ओगाहणा असंखेज्जगुणा ९ पत्तेयसरीरबादरवणस्सइकाइयस्स बादरनिओयस्स एएसि णं पज्जत्तगाणं एएसि णं अपज्जत्तगाणं जहन्निया ओगाहणा दोण्हवि तुल्ला असंखे० १०–११ सुहुमनिगोयस्स पज्जत्तगस्स जहन्निया ओगाहणा असं० १२ तस्सेव अपज्जत्तगस्स उक्कोसि० ओगा० विसेसा १३ तस्स चेव अपज्जत्तगस्स उक्को० ओगा० विसेसा० १४ सुहुमवाउकाइयस्स पज्जत्तग० जह० ओगा० असं० १५ तस्स चेव अपज्जत्तगस्स उक्कोसिया ओगाहणा विसे० १६ तस्स चेव पज्जत्तगस्स उक्कोसा विसे० १७ एवं सुहुमतेउक्काइयस्सवि १८।१९।२० एवं सहुमआउक्काइयस्सवि २१।२२।२३ एवं सुहुमपुढविकाइयस्स विसेसा

१९ शतके उद्देशः ३ पृथ्व्याद्यवगाहनाल्पबहुत्वं सू ६५१

॥७६४॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

२४।२५।२६ एवं बादरवाउकाइयस्स वि० २७।२८।२९ एवं बायरतेऊकाइयस्स वि० ३०।३१।३२ एवं बादर-आउकाइयस्स वि० ३३।३४।३५ एवं बादरपुढविकाइयस्स वि० ३६।३७।३८ सवेसिं तिविहेणं गमेणं भाणियवं, बादरनिगोयस्स पज्जत्तगस्स जहन्निया ओगाहणा असंखेज्जगुणा ३९ तस्स चेव अपज्जत्तगस्स उक्कोसिया ओगाहणा विसेसाहिया ४० तस्स चेव पज्जत्तगस्स उक्कोसिया ओगाहणा विसेसाहिया ४१ पत्तेयसरीर-बादरवणस्सइकाइयस्स पज्जत्तगस्स ज० ओगा० असं ४२ तस्स चेव अपज्जत्त० उक्को० ओगाहणा असं० ४३ तस्स चेव पज्ज० उ० ओगा० असं० ४४ ॥ (सूत्रं ६५१) ॥

'एएसि ण'मित्यादि, इह किल पृथिव्यप्तेजोवायुनिगोदाः प्रत्येकं सूक्ष्मबादरभेदाः एवमेते दशैकादशश्च प्रत्येकवनस्पतिः एते च प्रत्येकं पर्याप्तकापर्याप्तकभेदाः २२ तेऽपि जघन्योत्कृष्टावगाहना इत्येवं चतुश्चत्वारिंशति जीवभेदेषु स्तोकादिपदन्यासेनावगाहना व्याख्येया, स्थापना चैवं–पृथिवीकायस्याधः सूक्ष्मबादरपदे तयोरधः प्रत्येकं पर्याप्तापर्याप्तपदे तेषामधः प्रत्येकं जघन्योत्कृष्टावगाहनेति, एवमप्कायिकादयोऽपि स्थाप्याः, प्रत्येकवनस्पतेश्चाधः पर्याप्तापर्याप्तपदद्वयं तयोरधः प्रत्येकं जघन्योत्कृष्टा चावगाहनेति, इह च पृथिव्यादीनामङ्गुलासङ्ख्येयभागमात्रावगाहनत्वेऽप्यसङ्ख्येयभेदत्वादङ्गुलासङ्ख्येयभागस्येतरेतरापेक्षयाऽसङ्ख्येयगुणत्वं न विरुध्यते, प्रत्येकशरीरवनस्पतीनां चोत्कृष्टाऽवगाहना योजनसहस्रं समधिकमवगन्तव्येति ॥ पृथिव्यादीनां येऽवगाहनाभेदास्तेषां स्तोकत्वाद्युक्तम्, अथ कायमाश्रित्य तेषामेवेतरेतरापेक्षया सूक्ष्मत्वनिरूपणायाह—

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [६५२]

दीप अनुक्रम [७६३]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥७६५॥

एयस्स णं भंते ! पुढविकाइयस्स आउक्काइयस्स तेऊ० वाऊ० वणस्सइकाइयस्स कयरे काये सव्वसुहुमे कयरे काए सव्वसुहुमतराए ?, गोयमा ! वणस्सइकाइए सव्वसुहुमे वणस्सइकाइए सव्वसुहुमतराए १, एयस्स णं भंते ! पुढविकाइयस्स आउक्काइ तेउ० वाउक्काइयस्स कयरे काये सव्वसुहुमे कयरे काये सव्वसुहुमतराए ?, गोयमा ! वाउकाए सव्वसुहुमे वाउक्काये सव्वसुहुमतराए २, एयस्स णं भंते ! पुढविकाइयस्स आउक्काइयस्स तेउकाइयस्स कयरे काये सव्वसुहुमे कयरे काए सव्वसुहुमतराए ?, गोयमा ! तेउक्काए सव्वसुहुमे तेउक्काए सव्वसुहुमतराए ३, एयस्स णं भंते ! पुढविकाइयस्स आउक्काइयस्स कयरे काए सव्वसुहुमे कयरे काये सव्वसुहुमतराए ?, गोयमा ! आउक्काए सव्वसुहुमे आउक्काए सव्वसुहुमतराए ४ ॥ एयस्स णं भंते ! पुढविकाइयस्स आउ० तेउ० वाउ० वणस्सइकाइयस्स कयरे काये सव्वबादरे कयरे काये सव्वबादरतराए ?, गोयमा ! वणस्सइकाये सव्वबादरे वणस्सइकाये सव्वबादरतराए १, एयस्स णं भंते ! पुढविकाइयस्स आउक्काइय० तेउक्काइय० वाउक्काइयस्स कयरे काए सव्वबादरे कयरे काए सव्वबादरतराए ?, गोयमा ! पुढविकाए सव्वबादरे पुढविक्काए सव्वबादरतराए २, एयस्स णं भंते ! आउक्काइयस्स तेऊकाइयस्स वाउकाइयस्स कयरे काए सव्वबादरे कयरे काए सव्वबादरतराए ?, गोयमा ! आउक्काए सव्वबादरे आउक्काए सव्वबादरतराए ३, एयस्स णं भंते ! तेउकाइयस्स वाउक्काइयस्स कयरे काए सव्वबादरे कयरे काए सव्वबादरतराए ?, गोयमा ! तेउक्काए सव्वबादरे तेउक्काए सव्वबादरतराए ४ ॥ केमहालए णं भंते ! पुढविसरीरे पन्नत्ते ?, गोयमा ! अणंताणं सुहुमवणस्सइकाइयाणं जावइया सरीरा से

१९ शतके उद्देशः ३ पृथ्व्यादिषु सूक्ष्मावगाहना सू ६५२

॥७६५॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

एगे सुहुमवाउसरीरे असंखेज्जाणं सुहुमवाउसरीराणं जावतिया सरीरा से एगे सुहुमतेऊसरीरे, असंखेज्जाणं सुहुमतेऊकाइयसरीराणं जावतिया सरीरा से एगे सुहुमे आऊसरीरे, असंखेज्जाणं सुहुमआउक्काइयसरीराणं जावइया सरीरा से एगे सुहुमे पुढविसरीरे, असंखेज्जाणं सुहुमपुढविकाइयसरीराणं जावइया सरीरा से एगे बादरवाउसरीरे, असं० बादरवाउक्काइयाणं जावइया सरी० से एगे बादरतेऊसरीरे, असंखेज्जाणं बादरतेउकाइयाणं जावतिया सरीरा से एगे बादरआउसरीरे, असंखेज्जाणं बादरआउ० जावतिया सरीरा से एगे बादरपुढविसरीरे, एमहालए णं गोयमा ! पुढविसरीरे पन्नत्ते ॥ (सूत्रं ६५२) ॥

'एयस्से'त्यादि, 'कयरे काए'त्ति कतरो जीवनिकायः 'सव्वसुहुमे'त्ति सर्वथा सूक्ष्मः सर्वसूक्ष्मः, अयं च चक्षुरग्राह्यतामात्रेण पदार्थान्तरमनपेक्ष्यापि स्याद् यथा सूक्ष्मो वायुः सूक्ष्मं मन इत्यत आह—'सव्वसुहुमतराए'त्ति सर्वेषां मध्येऽतिशयेन सूक्ष्मतरः स एव सर्वसूक्ष्मतरक इति॥ सूक्ष्मविपरीतो बादर इति सूक्ष्मत्वनिरूपणानन्तरं पृथिव्यादीनामेव बादरत्वनिरूपणायाह—'एयस्स ण'मित्यादि ॥ पूर्वोक्तमेवार्थं प्रकारान्तरेणाह—'केमहालए ण'मित्यादि, 'अणंताणं सुहुमवणस्सइकाइयाणं जावइया सरीरा से एगे सुहुमवाउसरीरे'त्ति, इह यावद्ग्रहणेनासङ्ख्यातानि शरीराणि ग्राह्याणि अनन्तानामपि वनस्पतीनामेकाद्यसङ्ख्येयान्तशरीरत्वाद् अनन्तानां च तच्छरीराणामभावात् प्राक् च सूक्ष्मवनस्पत्यवगाहनाऽपेक्षया सूक्ष्मवाय्ववगाहनाया असङ्ख्यातगुणत्वेनोक्तत्वादिति, 'असंखेज्जाण'मित्यादि, 'सुहुमवाउसरीराणं'ति वायुरेव शरीरं येषां ते तथा सूक्ष्माश्च ते वायुशरीराश्च–वायुकायिकाः सूक्ष्मवायुशरीरास्तेषामसङ्ख्येयानां 'सुहुमवाउक्काइयाणं'ति क्वचित्पाठः

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥७६६॥

स च प्रतीत एव, 'जावइया सरीर'त्ति यावन्ति शरीराणि प्रत्येकशरीरत्वात्तेषामसङ्ख्येयान्येव 'से एगे सुहुमे तेउस-रीरे'त्ति तदेकं सूक्ष्मतेजःशरीरं तावच्छरीरप्रमाणमित्यर्थः ॥ प्रकारान्तरेण पृथिवीकायिकावगाहनाप्रमाणमाह—

पुढविकाइयस्स णं भंते ! केमहालिया सरीरोगाहणा पन्नत्ता ?, गोयमा ! से जहानामए रन्नो चाउरंतच-क्कवट्टिस्स वन्नगपेसिया तरुणी बलवं जुगवं जुवाणी अप्पायंका वन्नओ जाव निउणसिप्पोवगया नवरं चम्मेट्ठ-दुहणमुट्ठियसमाहयणिचियगत्तकाया न भण्णति सेसं तं चेव जाव निउणसिप्पोवगया तिक्खाए वय-रामईए सण्हकरणीए तिक्खेणं वइरामएणं वट्टावरएणं एगं महं पुढविकाइयं जतुगोलासमाणं गहाय पडि-साहरिय प० २ पडिसंखिविय पडि० २ जाव इणामेवत्तिकट्टु तिसत्तक्खुत्तो उप्पीसेज्जा तत्थ णं गोयमा ! अ-त्थेगतिया पुढविक्काइया आलिद्धा अत्थेगइया पुढविक्काइया नो आलिद्धा अत्थेगइया संघट्टि(ट्टि)या अत्थेगइया नो संघट्टि(ट्टि)या अत्थेगइया परियाविया अत्थेगइया नो परियाविया अत्थेगइया उद्दविया अत्थेगइया नो उद्दविया अत्थेगइया पिट्ठा अत्थेगतिया नो पिट्ठा, पुढविकाइयस्स णं गोयमा ! एमहालिया सरीरोगाहणा प-ण्णत्ता ॥ पुढविकाइएणं भंते ! अक्कंते समाणे केरिसियं वेदणं पच्चणुब्भवमाणे विहरति ?, गोयमा ! से जहा-नामए–केइ पुरिसे तरुणे बलवं जाव निउणसिप्पोवगए एगं पुरिसं जुन्नं जराजज्जरियदेहं जावदुब्बलं किलंतं जमलपाणिणा मुद्धाणंसि अभिहणिज्जा से णं गोयमा ! पुरिसे तेणं पुरिसेणं जमलपाणिणा मुद्धाणंसि अभि-हए समाणे केरिसियं वेदणं पच्चणुब्भवमाणे विहरति ?, अणिट्ठं समणाउसो !, तस्स णं गोयमा ! पुरिसस्स

१९ शतके उद्देशः ३ पृथ्व्यादि-शरीरमह-त्तावेदने सू ६५३

॥७६६॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वेदणाहिंतो पुढविकाइए अकंते समाणे एत्तो अणिट्ठतरियं चेव अकंततरियं जाव अमणामतरियं चेव वेदणं पच्चणुब्भवमाणे विहरति । आउयाए णं भंते ! संघट्टिए समाणे केरिसियं वेदणं पच्चणुब्भवमाणे विहरति ?, गोयमा ! जहा पुढविकाइए एवं चेव, एवं तेऊयाएवि, एवं वाऊयाएवि, एवं वणस्सइकाएवि जाव विहरति सेवं भंते ! २ त्ति ॥ (सूत्रं ६५३) ॥ १९–३ ॥

'पुढवी'त्यादि, 'वन्नगपेसिय'त्ति चन्दनपेषिका तरुणीति प्रवर्द्धमानवयाः 'बलवं'ति सामर्थ्यवती 'जुगवं'ति सुषमदुष्षमादिविशिष्टकालवती 'जुवाणि'त्ति वयःप्राप्ता 'अप्पायंक'त्ति नीरोगा 'वन्नओ'त्ति अनेनेदं सूचितं–'थिरग्गहत्था दढपाणिपायपिट्ठंतरोरुपरिणए'त्यादि, इह वर्णके 'चम्मेट्ठदुहणे'त्याद्यप्यधीतं तदिह न वाच्यं, एतस्य विशेषणस्य स्त्रिया असम्भवात्, अत एवाह–'चम्मेट्ठदुहणमुट्ठियसमाहयनिचियगत्तकाया न भन्नइ'त्ति, तत्र च चर्मेष्टकादीनि व्यायामक्रियायामुपकरणानि तैः समाहतानि व्यायामप्रवृत्तावत एव निचितानि च–घनीभूतानि गात्राणि–अङ्गानि यत्र स तथा तथाविधः कायो यस्याः सा तथेति, 'तिक्खाए'त्ति परुषायां 'वइरामईए'त्ति वज्रमय्यां सा हि नीरन्ध्रा कठिना च भवति 'सण्हकरणीए'त्ति श्लक्ष्णानि–चूर्णरूपाणि द्रव्याणि क्रियन्ते यस्यां सा श्लक्ष्णकरणी–पेषणशिला तस्यां 'वट्टावरएणं'ति वर्त्तकवरेण–लोष्टकप्रधानेन 'पुढविकाइयं'ति पृथिवीकायिकसमुदयं 'जतुगोलासमाणं'ति डिम्भरूपक्रीडनकजतुगोलकप्रमाणं नातिमहान्तमित्यर्थः 'पडिसाहरिए'त्यादि इह प्रतिसंहरणं शिलायाः शिलापुत्रकाच्च संहृत्य पिण्डीकरणं प्रतिसङ्क्षेपणं तु शिलायाः पततः संरक्षणं, 'अत्थेगइय'त्ति सन्ति 'एके' केचन 'आलिद्ध'त्ति आदिग्धाः शिलायां शिलापुत्रके

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥७६७॥

वा लग्नाः 'संघट्टिय'त्ति सङ्घर्षिताः 'परिताविय'त्ति पीडिताः 'उद्दविय'त्ति मारिताः, कथम् ?, यतः 'पिट्ठ'त्ति पिष्टाः 'एमहालिय'त्ति एवंमहतीति महती चातिसूक्ष्मेति भावः यतो विशिष्टायामपि पेषणसामग्र्यां केचिन्न पिष्टा नैव च छुप्ता अपीति ॥ 'अत्थेगइया संघट्टिय'त्ति प्रागुक्तं सङ्घट्टश्चाक्रमणभेदोऽत आक्रान्तानां पृथिव्यादीनां यादृशी वेदना भवति तत्प्ररूपणायाह—'पुढवी'त्यादि, 'अक्कंते समाणे'त्ति आक्रमणे सति 'जमलपाणिण'त्ति मुष्टिनेति भावः 'अणिट्ठं समणाउसो !'त्ति गौतमवचनम् 'एत्तो'त्ति उक्तलक्षणाया वेदनायाः सकाशादिति ॥ एकोनविंशतितमशते तृतीयः ॥२१–३॥

पृथिवीकायिकादयो महावेदना इति तृतीयोद्देशकेऽभिहितं, चतुर्थे तु नारकादयो महावेदनादिधर्म्मैर्निरूप्यन्त इत्येवं-संबद्धस्यास्येदमादिसूत्रम्—

सिय भंते ! नेरइया महासवा महाकिरिया महावेयणा महानिज्जरा ? गोयमा ! णो तिणट्ठे समट्ठे १ सिय भंते ! नेरइया महासवा महाकिरिया महावेयणा अप्पनिज्जरा ? हंता सिया २, सिय भंते ! नेरइया महासवा महाकिरिया अप्पवेयणा महानिज्जरा ?, गोयमा ! णो तिणट्ठे समट्ठे ३, सिय भंते ! नेरइया महासवा महाकिरिया अप्पवेदणा अप्पनिज्जरा ? गोयमा ! णो तिणट्ठे समट्ठे ४, सिय भंते ! नेरइया महासवा अप्पकिरिया महावेदणा महानिज्जरा ?, गोयमा ! णो तिणट्ठे समट्ठे ५, सिय भंते ! नेरइया महासवा अप्पकिरिया महावेयणा अप्पनिज्जरा ?, गोयमा ! नो तिणट्ठे समट्ठे ६, सिय भंते ! नेरतिया महासवा अप्पक्तिरिया अप्प-

१९ शतक उद्देशः ३ पृथ्व्यादि-शरीरमह-त्तावेदने सू ६५३

॥७६७॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र एकोनविंशतितमे शतके तृतीय-उद्देशकः परिसमाप्तः

अथ एकोनविंशतितमं शतके चतुर्थ-उद्देशकः आरभ्यते

वेदणा महानिज्जरा ?, नो तिणट्ठे समट्ठे, सिय भंते ! नेरतिया महासवा अप्पकिरिया अप्पवेदणा अप्पनिज्जरा ?, णो तिणट्ठे समट्ठे ८, सिय भंते ! नेरइया अप्पासवा महाकिरिया महावेदणा महानिज्जरा ?, नो तिणट्ठे समट्ठे ९, सिय भंते ! नेरइया अप्पासवा महाकिरिया महावेदणा अप्पनिज्जरा ?, नो तिणट्ठे समट्ठे १०, सिय भंते ! नेरइया अप्पासवा महाकिरिया अप्पवेयणा महानिज्जरा ?, नो तिणट्ठे समट्ठे ११, सिय भंते ! नेरइया अप्पासवा महाकिरिया अप्पवेदणा अप्पनिज्जरा ?, णो तिणट्ठे समट्ठे १२, सिय भंते ! नेरइया अप्पासवा अप्पकिरिया महावेयणा महानिज्जरा ? नो तिणट्ठे समट्ठे १३, सिय भंते ! नेरतिया अप्पासवा अप्पकिरिया महावेदणा अप्पनिज्जरा ?, नो तिणट्ठे समट्ठे १४, सिय भंते ! नेरइया अप्पासवा अप्पकिरिया अप्पवेयणा महानिज्जरा ?, नो तिणट्ठे समट्ठे १५, सिय भंते ! नेरइया अप्पासवा अप्पकिरिया अप्पवेयणा अप्पनिज्जरा ?, णो तिणट्ठे समट्ठे १६, एते सोलस भंगा । सिय भंते ! असुरकुमारा महासवा महाकिरिया महावेदणा महानिज्जरा ?, णो तिणट्ठे समट्ठे, एवं चउत्थो भंगो भाणियव्वो, सेसा पन्नरस भंगा खोडेयव्वा, एवं जाव थणियकुमारा, सिय भंते ! पुढविकाइया महासवा महाकिरिया महावेयणा महानिज्जरा ? हंता, एवं जाव सिय भंते ! पुढ-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥७६८॥

विकाइया अप्पासवा अप्पकिरिया अप्पवेयणा अप्पनिज्जरा ? हंता सिया, एवं जाव मणुस्सा, वाणमंतरजोइ-सियवेमाणिया जहा असुरकुमारा सेवं भंते ! २ त्ति ॥ (सूत्रं ६५४) ॥ १९–४ ॥

'सिय भंते !'इत्यादि, 'सिय'त्ति 'स्युः' भवेयुर्नैरयिका महाश्रवाः प्रचुरकर्मबन्धनात् महाक्रियाः कायिक्यादिक्रि-याणां महत्त्वात् महावेदना वेदनायास्तीव्रत्वात् महानिर्जराः कर्मक्षपणबहुत्वात्, एषां च चतुर्णां पदानां षोडश भङ्गा भवन्ति, एतेषु च नारकाणां द्वितीयभङ्गकोऽनुज्ञातस्तेषामाश्रवादित्रयस्य महत्त्वात् कर्म्मनिर्जरायास्त्वल्पत्वात्, शेषाणां तु प्रतिषेधः । असुरादिदेवेषु चतुर्थभङ्गोऽनुज्ञातः, ते हि महाश्रवा महाक्रियाश्च विशिष्टाविरतियुक्तत्वात् अल्पवेदनाश्च प्रायेणासातोदयाभावात् अल्पनिर्जराश्च प्रायोऽशुभपरिणामत्वात्, शेषास्तु निषेधनीयाः, पृथिव्यादीनां तु चत्वार्यपि पदानि तत्परिणतेर्विचित्रत्वात् सञ्यभिचाराणीति षोडशापि भङ्गका भवन्तीति, उक्तञ्च—"बीएण उ नेरइया होंति चउ-त्थेण सुरगणा सव्वे । ओरालसरीरा पुण सबेहि पएहिं भणियव्वा ॥ १ ॥" इति [द्वितीये तु नैरयिका भवन्ति चतुर्थे सुरगणाः सर्वे । औदारिकशरीरिणः पुनः सर्वेषु पदेषु भणितव्याः ॥ १ ॥] ॥ एकोनविंशतितमशते चतुर्थः ॥ २१–४ ॥

चतुर्थे नारकादयो निरूपिताः, पञ्चमेऽपि त एव भङ्गयन्तरेण निरूप्यन्त इत्येवंसम्बद्धस्यास्येदमादिसूत्रम्—

अत्थि णं भंते ! चरिमावि नेरतिया परमावि नेरतिया ?, हंता अत्थि, से नूणं भंते ! चरमेहिंतो नेरइए-हिंतो परमा नेरइया महाकम्मतराए चेव महस्सवतराए चेव महावेयणतराए चेव परमेहिंतो वा नेइरए-

१९ शतके उद्देशः ४ नारकादी-नां महा-ल्पाश्रवव-त्वादि सू ६५४

॥७६८॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र एकोनविंशतितमे शतके चतुर्थ-उद्देशक: परिसमाप्त:

अथ एकोनविंशतितमं शतके पंचम-उद्देशक: आरभ्यते

हिंतो वा चरमा नेरइया अप्पकम्मतराए चेव अप्पकिरियतराए चेव अप्पासवतराए चेव अप्पवेयणतराए चेव ?, हंता गोयमा ! चरमेहिंतो नेरइएहिंतो परमा जाव महावेयणतराए चेव परमेहिंतो वा नेरइएहिंतो चरमा नेरइया जाव अप्पवेयणतरा चेव, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ जाव अप्पवेयणतरा चेव ?, गोयमा ! ठितिं पडुच्च, से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ जाव अप्पवेदणतरा चेव । अत्थि णं भंते ! चरमावि असुरकुमारा परमावि असुरकुमारा ?, एवं चेव, नवरं विवरीयं भाणियव्वं, परमा अप्पकम्मा चरमा महाकम्मा, सेसं तं चेव जाव थणियकुमारा ताव एवमेव, पुढविकाइया जावमणुस्सा एवं जहा नेरइया, वाणमंतरजोइसिय वेमाणिया जहा असुरकुमारा ॥ (सूत्रं ६५५)

'अत्थि ण'मित्यादि, 'चरमावि'त्ति अल्पस्थितयोऽपि 'परमावि'त्ति महास्थितयोऽपि, 'ठिइं पडुचे'ति येषां नारकाणां महती स्थितिस्ते इतरेभ्यो महाकर्म्मतरादयोऽशुभकर्म्मापेक्षया भवन्ति, येषां त्वल्पा स्थितिस्ते इतरेभ्योऽल्पकर्मतरादयो भवन्तीति भावः । असुरसूत्रे 'नवरं विवरीयं'ति पूर्वोक्तापेक्षया विपरीतं वाच्यं, तच्चैवं–'से नूणं भंते ! चरमेहिंतो असुरकुमारेहिंतो परमा असुरकुमारा अप्पकम्मतरा चेव अप्पकिरियतरा चेवे'त्यादि, अल्पकर्मत्वं च तेषामसाताद्यशुभकर्मापेक्षं अल्पक्रियत्वं च तथाविधकायिक्यादिकष्टक्रियाऽपेक्षं अल्पाश्रवत्वं तु तथाविधकष्टक्रियाजन्यकर्म्मबन्धापेक्षं अल्पवेदनत्वं च पीडाभावापेक्षमवसेयमिति । 'पुढविक्काइए'त्यादि, औदारिकशरीरा अल्पस्थितिकेभ्यो महास्थितयो महाकर्म्मादयो भवन्ति, महास्थितिकत्वादेव । वैमानिका अल्पवेदना इत्युक्तम्, अथ वेदनास्वरूपमाह—

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र एकोनविंशतितमे शतके चतुर्थ-उद्देशक: परिसमाप्त:

अथ एकोनविंशतितमं शतके पंचम-उद्देशक: आरभ्यते

कइविहा णं भंते ! वेदणा प० ?, गोयमा ! दुविहा वेदणा प०, तं० निदा य अनिदा य। नेरइया णं भंते ! किं निदायं वेदणं वेयंति अनिदायं जहा पन्नवणाए जाव वेमाणियत्ति। सेवं भंते ! सेवं भंतेत्ति ॥(सूत्रं ६५६)॥१९–५॥

'कई'त्यादि, 'निदा य'त्ति नियतं दानं–शुद्धिर्जीवस्य 'दैप् शोधने' इतिवचनान्निदा–ज्ञानमाभोग इत्यर्थः तद्युक्ता वेदनाऽपि निदा–आभोगवतीत्यर्थः चशब्दः समुच्चये 'अणिदा य'त्ति अनाभोगवती 'किं निदायं'ति ककारस्य स्वार्थिकप्रत्ययत्वान्निदामित्यर्थः 'जहा पन्नवणाए'त्ति तत्र चेदमेवं–'गोयमा ! निदायंपि वेयणं वेयंति अणिदायंपि वेयणं वेयंती'त्यादि ॥ एकोनविंशतितमशते पञ्चमः ॥ १९–५ ॥

पञ्चमोद्देशके वेदनोक्ता सा च द्वीपादिषु भवतीति द्वीपादयः षष्ठे उच्यन्ते इत्येवंसम्बद्धस्यास्येदमादिसूत्रम्—

कहि णं भंते ! दीवसमुद्दा ? केवइया णं भंते ! दीवसमुद्दा ? किंसंठिया णं भंते ! दीवसमुद्दा ? एवं जहा जीवाभिगमे दीवसमुद्देसो सो चेव इहवि जोइसियमंडिउद्देसगवज्जो भाणियव्वो जाव परिणामो जीवउववाओ जाव अणंतखुत्तो सेवं भंतेत्ति ॥ (सूत्रं ६५७) ॥ १९–६ ॥

'कहि ण'मित्यादि, 'एवं जहे'त्यादि, 'जहा'इति यथेत्यर्थः, स चैवं–'किमागारभावपडोयारा णं भंते ! दीवसमुद्दा प० ?, गोयमा ! जंबुद्दीवाइया दीवा लवणाइया समुद्दा'इत्यादि, स च किं समस्तोऽपि वाच्यः ?, नैवमित्यत आह–'जोइसमंडिओद्देसगवज्जो'त्ति ज्योतिषेन–ज्योतिष्कपरिमाणेन मण्डितो य उद्देशको द्वीपसमुद्रोद्देशकावयवविशेषस्तद्वर्जः तं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र एकोनविंशतितमे शतके पंचम-उद्देशक: परिसमाप्त:

अथ एकोनविंशतितमं शतके षष्ठं-उद्देशक: आरभ्यते

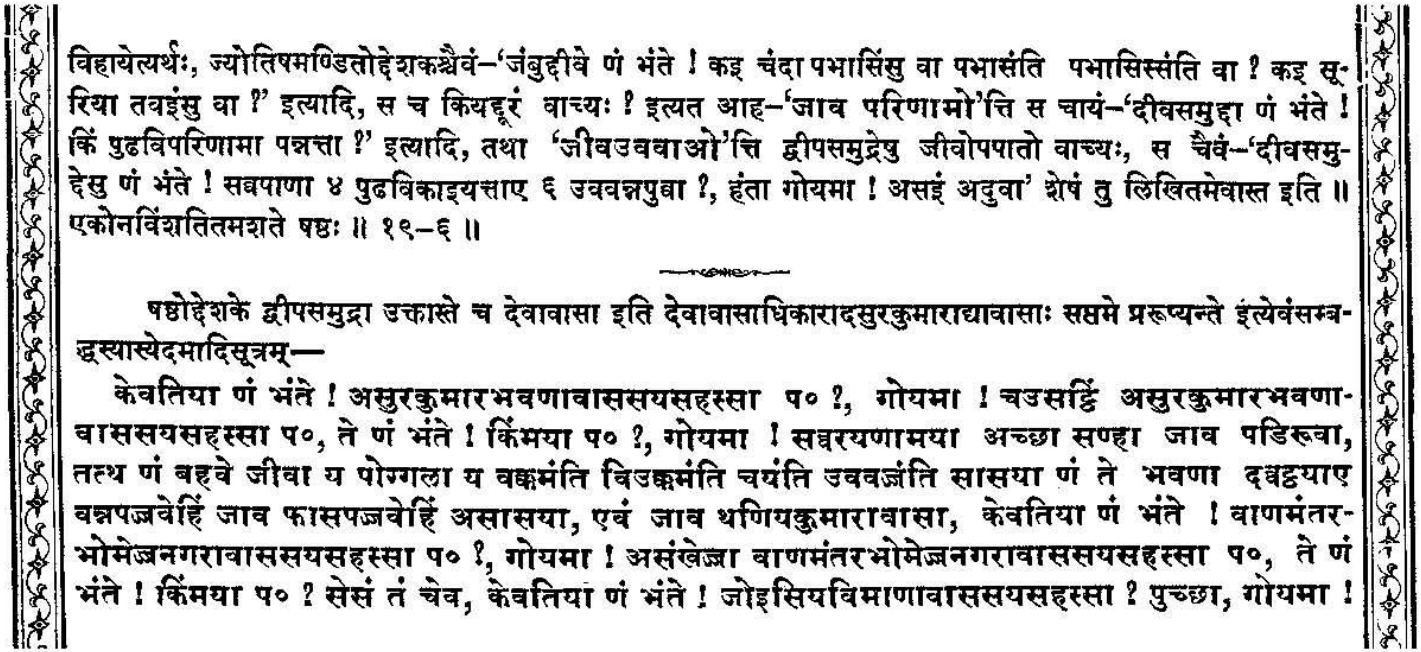

विहायेत्यर्थः, ज्योतिषमण्डितोद्देशकश्चैवं–'जंबुद्दीवे णं भंते ! कइ चंदा पभासिंसु वा पभासंति पभासिस्संति वा ? कइ सूरिया तवइंसु वा ?' इत्यादि, स च कियद्दूरं वाच्यः ? इत्यत आह–'जाव परिणामो'त्ति स चायं–'दीवसमुद्दा णं भंते ! किं पुढविपरिणामा पन्नत्ता ?' इत्यादि, तथा 'जीवउववाओ'त्ति द्वीपसमुद्रेषु जीवोपपातो वाच्यः, स चैवं–'दीवसमुद्देसु णं भंते ! सव्वपाणा ४ पुढविकाइयत्ताए ६ उववन्नपुव्वा ?, हंता गोयमा ! असइं अदुवा' शेषं तु लिखितमेवास्त इति ॥ एकोनविंशतितमशते षष्ठः ॥ १९–६ ॥

षष्ठोद्देशके द्वीपसमुद्रा उक्तास्ते च देवावासा इति देवावासाधिकारादसुरकुमाराद्यावासाः सप्तमे प्ररूप्यन्ते इत्येवंसम्बद्धस्यास्येदमादिसूत्रम्—

केवतिया णं भंते ! असुरकुमारभवणावाससयसहस्सा प० ?, गोयमा ! चउसट्ठिं असुरकुमारभवणावाससयसहस्सा प०, ते णं भंते ! किंमया प० ?, गोयमा ! सव्वरयणामया अच्छा सण्हा जाव पडिरूवा, तत्थ णं बहवे जीवा य पोग्गला य वक्कमंति विउक्कमंति चयंति उववज्जंति सासया णं ते भवणा दव्वट्ठयाए वन्नपज्जवेहिं जाव फासपज्जवेहिं असासया, एवं जाव थणियकुमारावासा, केवतिया णं भंते ! वाणमंतरभोमेज्जनगरावाससयसहस्सा प० ?, गोयमा ! असंखेज्जा वाणमंतरभोमेज्जनगरावाससयसहस्सा प०, ते णं भंते ! किंमया प० ? सेसं तं चेव, केवतिया णं भंते ! जोइसियविमाणावाससयसहस्सा ? पुच्छा, गोयमा !

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र एकोनविंशतितमे शतके षष्ठं-उद्देशक: परिसमाप्त:

अथ एकोनविंशतितमं शतके सप्तम-उद्देशक: आरभ्यते

असंखेज्जा जोइसियविमाणावाससयसहस्सा प०, ते णं भंते ! किंमया प० ?, गोयमा ! सव्वफालिहामया अच्छा, सेसं तं चेव, सोहम्मे णं भंते ! कप्पे केवतिया विमाणावाससयसहस्सा प० ?, गोयमा ! बत्तीसं विमाणावाससयसहस्सा, ते णं भंते ! किंमया प० ?, गोयमा ! सव्वरयणामया अच्छा सेसं तं चेव जाव अणुत्तरविमाणा, नवरं जाणेयव्वा जत्थ जत्तेया भवणा विमाणा वा। सेवं भंते ! २ त्ति ॥ (सूत्रं ६५८) ॥ १९–७॥

'केवइया ण'मित्यादि, 'भोमेज्जनगर'त्ति भूमेरन्तर्भवानि भौमेयकानि तानि च तानि नगराणि चेति विग्रहः 'सव्वफालिहामय'त्ति सर्वस्फटिकमयाः ॥ एकोनविंशतितमशते सप्तमः ॥ १९–७ ॥

सप्तमेऽसुरादीनां भवनादीत्युक्तानि, असुरादयश्च निर्वृत्तिमन्तो भवन्तीत्यष्टमे निर्वृत्तिरुच्यते इत्येवंसम्बद्धस्यास्येदमादिसूत्रम्—

कतिविहा णं भंते ! जीवनिव्वत्ती प० ?, गोयमा ! पंचविहा जीवनिव्वत्ती प०, तं०–एगिंदियजीवनिव्वत्तिए जाव पंचिंदियजीवनिव्वत्तिए, एगिंदियजीवनिव्वत्तिए णं भंते ! कतिविहा प०–?, गोयमा ! पंचविहा प०, तं०–पुढविकाइयएगिंदियजीवनिव्वत्ती जाव वणस्सइकाइयएगिंदियजीवनिव्वत्ती, पुढविकाइयएगिंदियजीवनिव्वत्ती णं भंते ! कतिविहा प०, गोयमा ! दुविहा प० तं०–सुहुमपुढविकाइयएगिंदियजीवनिव्वत्ती य बादरपुढवी एवं चेव एएणं अभिलावेणं भेदो जहा बद्धगबंधो तेयगसरीरस्स जावसव्वट्ठसिद्धअणुत्तरोववातियक-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र एकोनविंशतितमे शतके सप्तम-उद्देशक: परिसमाप्त:

अथ एकोनविंशतितमं शतके अष्टम-उद्देशक: आरभ्यते

प्पानीतवेमाणियदेवपंचिंदियजीवनिवत्ती णं भंते ! कतिविहा प० ?, गोयमा ! दुविहा प० तं०–पज्जत्तगसव्वट्ठसिद्धअणुत्तरोववातियजावदेवपंचिंदियजीवनिवत्ती य अपज्जत्तसव्वट्ठसिद्धाणुत्तरोववाइयजावदेवपंचिंदियजीवनिवत्ती य । कतिविहा णं भंते ! कम्मनिवत्ती प० ?, गोयमा ! अट्ठविहा कम्मनिवत्ती प०, तं०–नाणावरणिज्जकम्मनिवत्ती जाव अंतराइयकम्मनिवत्ती, नेरइयाणं भंते ! कतिविहा कम्मनिवत्ती प०?, गोयमा ! अट्ठविहा कम्मनिवत्ती प०, तं०–नाणावरणिज्जकम्मनिवत्ती जाव अंतराइयकम्मनिवत्ती, एवं जाव वेमाणियाणं । कतिविहा णं भंते ! सरीरनिवत्ती प० ?, गोयमा ! पंचविहा सरीरनिवत्ती प०, तं०–ओरालियसरीरनिवत्ती जाव कम्मगसरीरनिवत्ती । नेरइयाणं भंते ! एवं चेव एवं जाव वेमाणियाणं, नवरं नायवं जस्स जइ सरीराणि । कइविहा णं भंते ! सविंदियनिवत्ती प० ?, गोयमा ! पंचविहा सविंदियनिवत्ती प०, तं०–सोइंदियनिवत्ती जाव फासिंदियनिवत्ती एवं जाव नेरइया जाव थणियकुमाराणं, पुढविकाइयाणं पुच्छा, गोयमा ! एगा फासिंदियनिवत्ती प०, एवं जस्स जइ इंदियाणि जाव वेमाणियाणं । कइविहा णं भंते ! भासानिवत्ती प० ?, गोयमा ! चउविहा भासानिवत्ती पं०, तं०–सच्चाभासानिवत्ती मोसाभासानिवत्ती सच्चामोसभासानिवत्ती असच्चामोसभासानिवत्ती, एवं एगिंदियवज्जं जस्स जा भासा जाव वेमाणियाणं, कइविहा णं भंते ! मणनिवत्तीए प० ?, गोयमा ! चउविहा मणनिवत्ती प०, तं०–सच्चमणनिवत्ती जाव असच्चामोसमणनिवत्तीए एवं एगिंदियविगलिंदियवज्जं जाव वेमाणियाणं । कइविहा णं भंते ! कसायनिवत्ती प० ?,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गोयमा ! चउविहा कसायनिवत्ती प०, तं०–कोहकसायनिवत्ती जाव लोभकसायनिवत्ती एवं जाव वेमाणियाणं । कइविहा णं भंते ! वन्ननिवत्ती प० ?, गोयमा ! पंचविहा वन्ननिवत्ती प० तं०–कालवन्ननिवत्ती जाव सुक्किल्लवन्ननिवत्ती, एवं निरवसेसं जाव वेमाणियाणं, एवं गंधनिवत्ती दुविहा जाव वेमाणियाणं, रसनिवत्ती पंचविहा जाव वेमाणियाणं, फासनिवत्ती अट्ठविहा जाव वेमाणियाणं । कतिविहा णं भंते ! संठाणनिवत्ती प०, गोयमा ! छविहा संठाणनिवत्ती प० तं०–समचउरंससंठाणनिवत्ती जाव हुंडसंठाणनिवत्ती, नेरइयाणं पुच्छा गोयमा ! एगा हुंडसंठाणनिवत्ती प०, असुरकुमाराणं पुच्छा, गोयमा ! एगा समचउरंससंठाणनिवत्ती प०, एवं जावथणियकुमाराणं, पुढविकाइयाणं पुच्छा गोयमा ! एगा मसूरचंदसंठाणनिवत्ती प०, एवं जस्स जं संठाणं जाववेमाणियाणं, कइविहा णं भंते ! सन्नानिवत्ती प० ?, गोयमा ! चउविहा सन्ना निवत्ती प० तं०–आहारसन्नानिवत्ती जाव परिग्गहसन्नानिवत्ती एवंजाव वेमाणियाणं, कइविहा णं भंते ! लेस्सानिवत्ती प० ?, गोयमा ! छविहा लेस्सानिवत्ती प०, तं०–कण्हलेस्सानिवत्ती जाव सुक्कलेस्सानिवत्ती एवं जाववेमाणियाणं जस्स जइ लेस्साओ । कइविहा णं भंते ! दिट्ठीनिवत्ती प० ?, गोयमा ! तिविहा दिट्ठीनिवत्ती प०, तंजहा–सम्मादिट्ठिनिवत्ती मिच्छादिट्ठिनिवत्ती सम्मामिच्छदिट्ठीनिवत्ती एवं जाव वेमाणियाणं जस्स जइविहा दिट्ठी । कतिविहा णं भंते ! णाणनिवत्ती पन्नत्ता ?, गोयमा ! पंचविहा णाणनिवत्ती प०, तं०–आभिणिबोहियणाणनिवत्ती जाव केवलनाणनिवत्ती, एवं एगिंदियवज्जं जाव वेमाणियाणं जस्स जइ णाणा । कतिविहा णं भंते ! अन्नाणनिवत्ती प० ?,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [६५९]

दीप अनुक्रम [७७०--७७३]

गोयमा ! तिविहा अन्नाणनिवत्ती पं०, तं०–मइअन्नाणनिवत्ती सुयअन्नाणनिवत्ती विभंगनाणनिवत्ती, एवं जस्स जइ अन्नाणा जाववेमाणियाणं । कइविहा णं भंते ! जोगनिवत्ती प० ?, गोयमा ! तिविहा जोगनिवत्ती प०, तं०–मणजोगनिवत्ती वयजोगनिवत्ती कायजोगनिवत्ती, एवं जाववेमाणियाणं जस्स जइविहो जोगो । कइविहा णं भंते ! उवओगनिवत्ती प० ?, गोयमा ! दुविहा उवओगनिवत्ती प०, तं०–सागारोवओगनिवत्ती अणागारोवओगनिवत्ती एवं जाव वेमाणियाणं, [अत्र सङ्ग्रहगाथे वाचनान्तरे–जीवाणं निवत्ती कम्मप्पगडी सरीरनिवत्ती । सविंदियनिवत्ती भासा य मणे कसाया य ॥ १ ॥ वन्ने गंधे रसे फासे संठाणविही य होइ बोद्धव्वो । लेसादिट्ठीणाणे उवओगे चेव जोगे य ॥ २ ॥] सेवं भंते ! २ ॥ (सूत्रं ६५९) ॥ १९–८ ॥

'कइविहे ण'मित्यादि, निर्वर्त्तनं–निर्वृत्तिर्निष्पत्तिर्जीवस्यैकेन्द्रियादितया निर्वृत्तिर्जीवनिर्वृत्तिः 'जहा बहुगबंधो तेयगसरीरस्स'त्ति यथा महल्लबन्धाधिकारेऽष्टमशते नवमोद्देशकाभिहिते तेजःशरीरस्य बन्ध उक्त एवमिह निर्वृत्तिर्वाच्या, सा च तत एव दृश्येति ॥ पूर्वं जीवापेक्षया निर्वृत्तिरुक्ता, अथ तत्कार्यतद्धर्मापेक्षया तामाह—'कइविहे'त्यादि, 'कसायनिवत्ति'त्ति कषायवेदनीयपुद्गलनिर्वर्त्तनं 'जस्स जं संठाणं'ति तत्राप्कायिकानां स्तिबुकसंस्थानं तेजसां सूचीकलापसंस्थानं वायूनां पताकासंस्थानं वनस्पतीनां नानाकारसंस्थानं विकलेन्द्रियाणां हुण्डं पञ्चेन्द्रियतिरश्चां मनुष्याणां च षड्व्यन्तरादीनां समचतुरस्रसंस्थानम् ॥ एकोनविंशतितमशतेऽष्टमः ॥ १९–८ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र एकोनविंशतितमे शतके सप्तम-उद्देशक: परिसमाप्त:

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [६६०]

दीप अनुक्रम [७७४]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥७७२॥

अष्टमे निर्वृत्तिरुक्ता, सा च करणे सति भवतीति करणं नवमेऽभिधीयते इत्येवंसम्बद्धस्यास्येदमादिसूत्रम्—

कइविहे णं भंते ! करणे पण्णत्ते ?, गोयमा ! पंचविहे करणे पन्नत्ते, तंजहा–दव्वकरणे खेत्तकरणे कालकरणे भवकरणे भावकरणे, नेरइयाणं भंते ! कतिविहे करणे प० ?, गोयमा ! पंचविहे करणे प०, तं०–दव्वकरणे जाव भावकरणे एवं जाव वेमाणियाणं । कतिविहे णं भंते ! सरीरकरणे प० ?, गोयमा ! पंचविहे सरीरकरणे पन्नत्ते, तंजहा–ओरालियसरीरकरणे जावकम्मगसरीरकरणे य एवं जाव वेमाणियाणं जस्स जइ सरीराणि । कइविहे णं भंते ! इंदियकरणे प० ?, गोयमा ! पंचविहे इंदियकरणे पं०, तंजहा–सोइंदियकरणे जाव फासिंदियकरणे एवं जाव वेमाणियाणं जस्स जइ इंदियाइं, एवं एएणं कमेणं भासाकरणे चउविहे मणकरणे चउविहे कसायकरणे चउविहे समुग्घायकरणे सत्तविहे सन्नाकरणे चउविहे लेसाकरणे छव्विहे दिट्ठिकरणे तिविहे वेदकरणे तिविहे पन्नत्ते, तंजहा–इत्थिवेदकरणे पुरिसवेदकरणे नपुंसकवेदकरणे, एए सव्वे नेरइयादी दंडगा जाव वेमाणियाणं जस्स जं अत्थि तं तस्स सव्वं भाणियव्वं । कतिविहे णं भंते ! पाणाइवायकरणे पं० ?, गोयमा ! पंचविहे पाणाइवायकरणे पं० तं०–एगिंदियपाणाइवायकरणे जाव पंचिंदियपाणाइवायकरणे, एवं निरवसेसं जाववेमाणियाणं । कइविहे णं भंते ! पोग्गलकरणे प० ?, गोयमा ! पंचविहे पोग्गलकरणे पं० तं०–वन्नकरणे गंधकरणे रसकरणे फासकरणे संठाणकरणे, वन्नकरणे णं भंते ! कतिविहे प० ?, गोयमा ! पंचविहे प०, तंजहा–कालवन्नकरणे जाव सुक्किलवन्नकरणे, एवं भेदो, गंधकरणे दुविहे रसकरणे पंचविहे फासकरणे

१९ शतके उद्देशः ९ द्रव्यादिशरीरादिकरणानि सू ६६०

॥७७२॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अथ एकोनविंशतितमं शतके अष्टम-उद्देशक: आरभ्यते

अट्ठविहे, संठाणकरणे णं भंते ! कतिविहे प० ?, गोयमा ! पंचविहे प०, तंजहा–परिमंडलसंठाणे जाव आयतसंठाणकरणेत्ति सेवं भंते ! २ त्ति जाव विहरति ॥ (सूत्रं ६६०) ॥ १९–९ ॥

'कइविहे ण'मित्यादि, तत्र क्रियतेऽनेनेति करणं–क्रियायाः साधकतमं कृतिर्वा करणं–क्रियामात्रं, नन्वस्मिन् व्याख्याने करणस्य निर्वृत्तेश्च न भेदः स्यात्, निर्वृत्तेरपि क्रियारूपत्वात्, नैवं, करणमारम्भक्रिया निर्वृत्तिस्तु कार्यस्य निष्पत्तिरिति । 'दव्वकरणे'त्ति द्रव्यरूपं करणं–दात्रादि द्रव्यस्य वा–कटादेः द्रव्येण–शलाकादिना द्रव्ये वा–पात्रादौ करणं द्रव्यकरणं, 'खेत्तकरणं'ति क्षेत्रमेव करणं क्षेत्रस्य वा–शालिक्षेत्रादेः करणं क्षेत्रेण वा करणं स्वाध्यायादेः क्षेत्रकरणं, 'कालकरणे'त्ति काल एव करणं कालस्य वा–अवसरादेः करणं कालेन वा काले वा करणं कालकरणं, 'भवकरणं'ति भवो–नारकादिः स एव करणं तस्य वा तेन वा तस्मिन् वा करणम्, एवं भावकरणमपि, शेषं तूद्देशकसमाप्तिं यावत् सुबममिति ॥ एकोनविंशतितमशते नवमः ॥ १९–९ ॥

नवमे करणमुक्तं, दशमे तु व्यन्तराणामाहारकरणमभिधीयते इत्येवंसम्बद्धोऽयं—

वाणमंतराणं भंते ! सव्वे समाहारा एवं जहा सोलसमसए दीवकुमारुद्देसओ जाव अप्पड्ढियत्ति सेवं भंते २ ॥ (सूत्रं ६६१) ॥ १९–१० ॥

॥ एकूणवीसतिमं सयं सम्मत्तं ॥ १९ ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र एकोनविंशतितमे शतके नवम-उद्देशक: परिसमाप्त:

अथ एकोनविंशतितमं शतके दशम-उद्देशक: आरभ्यते

*** अत्र द्वे गाथे वर्तते, तद् अनन्तर सूत्रांत वाक्य वर्तते | (यहाँ दो गाथाए तथा सूत्रांत वाक्य है, जो हमारे मूल आगम के प्रकाशन में है, और उनका सूत्र-क्रम है–७७५ से ७७७ | कृपया हमारा "आगमसुत्ताणि-मूलं" देखिए | इसलिए दीप-अनुक्रम में ये तिन नंबर बढ़ जाएंगे | ***

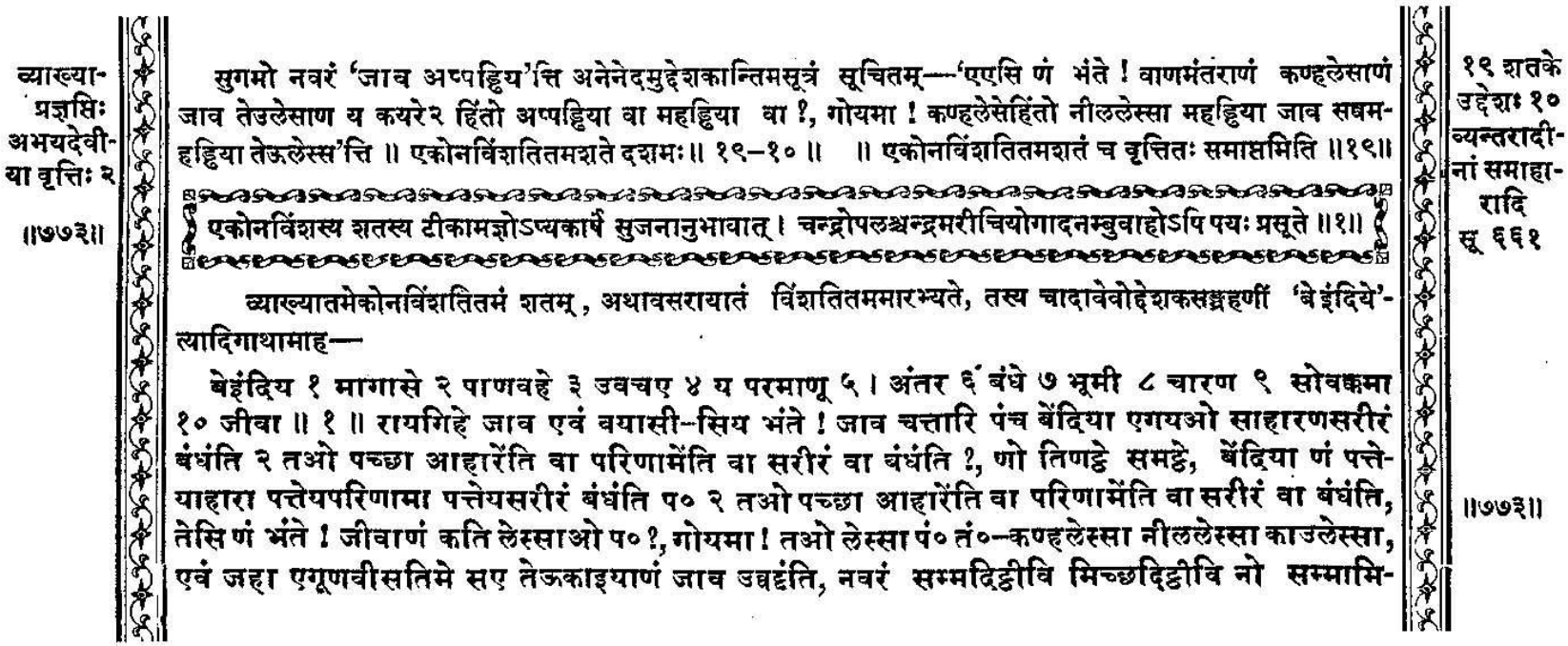

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥७७३॥

सुगमो नवरं 'जाव अप्पड्ढिय'त्ति अनेनेदमुद्देशकान्तिमसूत्रं सूचितम्—'एएसि णं भंते ! वाणमंतराणं कण्हलेसाणं जाव तेउलेसाण य कयरे२ हिंतो अप्पड्ढिया वा महड्ढिया वा ?, गोयमा ! कण्हलेसेहिंतो नीललेस्सा महड्ढिया जाव सव्वमहड्ढिया तेऊलेस्स'त्ति ॥ एकोनविंशतितमशते दशमः॥ १९–१० ॥ ॥ एकोनविंशतितमशतं च वृत्तितः समाप्तमिति ॥१९॥

एकोनविंशस्य शतस्य टीकामज्ञोऽप्यकार्षं सुजनानुभावात्। चन्द्रोपलश्चन्द्रमरीचियोगादनम्बुवाहोऽपि पयः प्रसूते ॥१॥

व्याख्यातमेकोनविंशतितमं शतम्, अथावसरायातं विंशतितममारभ्यते, तस्य चादावेवोद्देशकसङ्ग्रहणीं 'बेइंदिये'-त्यादिगाथामाह—

बेइंदिय १ मागासे २ पाणवहे ३ उवचए ४ य परमाणू ५। अंतर ६ बंधे ७ भूमी ८ चारण ९ सोवक्कमा १० जीवा ॥ १ ॥ रायगिहे जाव एवं वयासी–सिय भंते ! जाव चत्तारि पंच बेंदिया एगयओ साहारणसरीरं बंधंति २ तओ पच्छा आहारेंति वा परिणामेंति वा सरीरं वा बंधंति ?, णो तिणट्ठे समट्ठे, बेंदिया णं पत्तेयाहारा पत्तेयपरिणामा पत्तेयसरीरं बंधंति प० २ तओ पच्छा आहारेंति वा परिणामेंति वा सरीरं वा बंधंति, तेसि णं भंते ! जीवाणं कति लेस्साओ प०?, गोयमा ! तओ लेस्सा पं० तं०–कण्हलेस्सा नीललेस्सा काउलेस्सा, एवं जहा एगूणवीसतिमे सए तेऊकाइयाणं जाव उव्वट्टंति, नवरं सम्मदिट्ठीवि मिच्छदिट्ठीवि नो सम्मामि-

१९ शतके उद्देशः १० व्यन्तरादी-नां समाहा-रादि सू ६६१

॥७७३॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र एकोनविंशतितमे शतके दशम-उद्देशक: परिसमाप्त: तत् समाप्ते एकोनविंशतितमं शतकं अपि समाप्तं

♦ अथ विंशतितमं शतकं आरभ्यते ♦

अथ विंशतितमे शतके प्रथम-उद्देशक: आरब्ध:

प्रत सूत्रांक [६६२] + गाथा

दीप अनुक्रम [७७९--७८०]

च्छदिट्ठीवि, दो नाणा दो अन्नाणा नियमं, नो मणजोगी वयजोगीवि कायजोगीवि, आहारो नियमं छद्दिसिं, तेसि णं भंते ! जीवाणं एवं सन्नाति वा पन्नाति वा मणेति वा वइति वा अम्हे णं इट्ठाणिट्ठे रसे इट्ठाणिट्ठे फासे पडिसंवेदेमो ?, णो तिणट्ठे समट्ठे, पडिसंवेदेंति पुण ते, ठिती जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं बारस संवच्छराइं, सेसं तं चेव, एवं तेइंदियावि, एवं चउरिंदियावि, नाणत्तं इंदिएसु ठितीए य सेसं तं चेव ठिती जहा पन्नवणाए । सिय भंते ! जाव चत्तारि पंच पंचिंदिया एगयओ साहारणं एवं जहा बेंदियाणं नवरं छल्लेसाओ दिट्ठी तिविहावि चत्तारि नाणा तिन्नि अन्नाणा भयणाए तिविहो जोगो, तेसि णं भंते ! जीवाणं एवं सन्नाति वा पन्नाति वा जाव वतीति वा अम्हे णं आहारमाहारेमो ?, गोयमा ! अत्थेगइयाणं एवं सन्नाइ वा पन्नाइ वा मणोइ वा वतीति वा अम्हे णं आहारमाहारेमो अत्थेगइयाणं नो एवं सन्नाति वा जाववतीति वा अम्हे णं आहारमाहारेमो आहारेंति पुण ते, तेसि णं भंते ! जीवाणं एवं सन्नाति वा जाववइति वा अम्हे णं इट्ठाणिट्ठे सद्दे इट्ठाणिट्ठे रूवे इट्ठाणिट्ठे गंधे इट्ठाणिट्ठे रसे इट्ठाणिट्ठे फासे पडिसंवेदेमो ?, गोयमा ! अत्थेगतियाणं एवं सन्नाति वा जाव वयीति वा अम्हे णं इट्ठाणिट्ठे सद्दे जाव इट्ठाणिट्ठे फासे पडिसंवेदेमो अत्थेगतियाणं नो एवं सन्नाइ वा जाववयीइ वा अम्हे णं इट्ठाणिट्ठे सद्दे जाव इट्ठाणिट्ठे फासे पडिसंवे० पडिसंवेदेंति पुण ते, ते णं भंते ! जीवा किं पाणाइवाए उवक्खाविज्जंति० ?, गोयमा ! अत्थेगतिया पाणातिवाएवि उवक्खाइज्जंति जाव मिच्छादंसणसल्लेवि उवक्खाइज्जंति अत्थेगतिया नो पाणाइवाए

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [६६२] + गाथा

दीप अनुक्रम [७७९--७८०]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥७७४॥

उववज्जंति नो मुसा जाव नो मिच्छादंसणसल्ले उववज्जंति, जेसिंपि णं जीवाणं ते जीवा एवमाहिज्जंति तेसिंपि णं जीवाणं अत्थेगतियाणं विन्नाए नाणत्ते अत्थेगतियाणं नो विण्णाए नो नाणत्ते, उववाओ सव्वओ जाव सव्वट्ठसिद्धाओ ठिती जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं तेत्तीसं सागरोवमाइं छस्समुग्घाया केवलिवज्जा उव्वट्टणा सव्वत्थ गच्छंति जाव सव्वट्ठसिद्धंति, सेसं जहा बेंदियाणं । एएसि णं भंते ! बेइंदियाणं पंचिंदियाणं कयरे २ जाव विसेसाहिया वा ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा पंचिंदिया चउरिंदिया विसेसाहिया तेइंदिया विसेसाहिया बेइंदिया विसेसाहिया । सेवं भंते ! सेवं भंते ! जाव विहरति ॥ (सूत्रं ६६२) ॥ २०–१ ॥

तत्र 'बेइंदिय'त्तिद्वीन्द्रियादिवक्तव्यताप्रतिबद्धः प्रथमोद्देशको द्वीन्द्रियोद्देशक एवोच्यत इत्येवमन्यत्रापि, 'आगासे'त्ति आकाशाद्यर्थो द्वितीयः, 'पाणवहे'त्ति प्राणातिपाताद्यर्थपरस्तृतीयः, 'उवचए'त्तिश्रोत्रेन्द्रियाद्युपचर्यार्थश्चतुर्थः, परमाणुवक्तव्यतार्थः पञ्चमः, 'अंतर'त्ति रत्नप्रभाशर्करप्रभाद्यन्तरालवक्तव्यतार्थः षष्ठः, 'बंधे'त्ति जीवप्रयोगादिबन्धार्थः सप्तमः, 'भूमी'ति कर्म्माकर्म्मभूम्यादिप्रतिपादनार्थोऽष्टमः, 'चारण'त्ति विद्याचारणाद्यर्थो नवमः, 'सोवक्कमा जीव'त्ति सोपक्रमायुषो निरुपक्रमायुषश्च जीवा दशमे वाच्या इति, तत्र प्रथमोद्देशको व्याख्यायते, तस्य चेदमादिसूत्रम्—'रायगिहे'इत्यादि, 'सिय'त्ति स्यात् कदाचिन्न सर्वदा 'एगयओ'त्ति एकतः–एकीभूय संयुज्येत्यर्थः 'साहारणसरीरं बंधंति' 'साधारणशरीरम्' अनेकजीवसामान्यं बध्नन्ति प्रथमतया तत्प्रायोग्यपुद्गलग्रहणतः 'ठिई जहा पन्नवणाए'त्ति तत्र त्रीन्द्रियाणामुत्कृष्टा एकोनपञ्चाशद्रात्रिंदिवानि चतुरिन्द्रियाणां तु षण्मासाः, जघन्या तूभयेषामप्यन्तर्मुहूर्त्तं, 'चत्तारि नाण'त्ति पञ्चेन्द्रि-

२० शतके उद्देशः १ द्वीन्द्रियादीनां शरीरबन्धादि सू ६६२

॥७७४॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

याणां चत्वारि मत्यादिज्ञानानि भवन्ति केवलं त्वनिन्द्रियाणामेवेति, 'अत्थेगइयाणं'ति सञ्ज्ञिनामित्यर्थः 'अत्थेगइया पाणाइवाए उवक्खाइज्जंति'त्ति असंयताः 'अत्थेगइया नो पाणाइवाए उवक्खाइज्जंति'त्ति संयताः 'जेसिंपि णं जीवा-ण'मित्यादि येषामपि जीवानां सम्बन्धिनाऽतिपातादिना ते पञ्चेन्द्रिया जीवा एवमाख्यायन्ते यथा प्राणातिपातादिमन्त एत इति तेषामपि जीवानामस्त्ययमर्थो यदुतैकेषां सञ्ज्ञिनामित्यर्थः 'विज्ञातं'प्रतीतं 'नानात्वं' भेदो यदुतैते वयं वध्यादय एते तु वधकादय इति, अस्त्येकेषां–असञ्ज्ञिनामित्यर्थः नो विज्ञातं नानात्वमुक्तरूपमिति ॥ विंशतितमशते प्रथमः ॥ २०–१ ॥

प्रथमोद्देशके द्वीन्द्रियादयः प्ररूपितास्ते चाकाशाद्याधारा भवन्त्यतो द्वितीये आकाशादि प्ररूप्यते इत्येवंसम्बद्धस्यास्ये-दमादिसूत्रम्—

कइविहे णं भंते ! आगासे प० ?, गोयमा ! दुविहे आगासे प०, तं०–लोयागासे य अलोयागासे य, लोया-गासे णं भंते ! किं जीवा जीवदेसा ?, एवं जहा बितियसए अत्थिउद्देसे तह चेव इहवि भाणियव्वं, नवरं अभि-लावो जाव धम्मत्थिकाए णं भंते ! केमहालए प० ?, गोयमा ! लोए लोयमेत्ते लोयप्पमाणे लोयफुडे लोयं चेव ओगाहित्ताणं चिट्ठति, एवं जाव पोग्गलत्थिकाए । अहेलोए णं भंते ! धम्मत्थिकायस्स केवतियं ओगाढे ?, गोयमा ! सातिरेगं अद्धं ओगाढे, एवं एएणं अभिलावेणं जहा बितियसए जाव ईसिपब्भारा णं भंते ! पुढवी लोयागासस्स किं संखेज्जइभागं० ओगाढा ? पुच्छा, गोयमा ! नो संखेज्जइभागं ओगाढा असंखेज्जइ-भागं ओगाढा नो संखेज्जे भागे ओगाढा नो असंखेज्जे भागे नो सव्वलोयं ओगाढा सेसं तं चेव ॥ (सूत्रं ६६३)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	अत्र विंशतितमे शतके प्रथम-उद्देशक: परिसमाप्त: अथ विंशतितमे शतके द्वितीय-उद्देशक: आरभ्यते

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥७७५॥

'कतिविहे' इत्यादि, नवरं 'अभिलावो' त्ति अयमर्थः–द्वितीयशतस्यास्तिकायोद्देशकस्तावदिह निर्विशेषोऽध्येयो यावत् 'धम्मत्थिकाए णं भंते !' इत्यादिरालापकसूत्रं च नवरं–केवलं 'लोयं चेव फुसित्ताणं चिट्ठइ' त्ति एतस्य स्थाने 'लोयं चेव ओगाहित्ताणं चिट्ठइ' इत्यथमभिलापो द्रष्टव्य इति ॥ अथानन्तरोक्तानां धर्मास्तिकायादीनामेकार्थिकान्याह—

धम्मत्थिकायस्स णं भंते ! केवइया अभिवयणा पन्नत्ता ?, गोयमा ! अणेगा अभिवयणा पन्नत्ता, तंजहा–धम्मेइ वा धम्मत्थिकायेति वा पाणाइवायवेरमणाइ वा मुसावायवेरमणेति एवं जाव परिग्गहवेरमणेति वा कोहविवेगेति वा जाव मिच्छादंसणसल्लविवेगेति वा ईरियासमितीति वा भासासमिए एसणासमिए आयाणभंडमत्तनिक्खेवण० उच्चारपासवणखेलजल्लसिंघाणपारिट्ठावणियासमितीति वा मणगुत्तीति वा वइगुत्तीति वा कायगुत्तीति वा जे यावन्ने तहप्पगारा सव्वे ते धम्मत्थिकायस्स अभिवयणा, अधम्मत्थिकायस्स णं भंते ! केवतिया अभिवयणा पन्नत्ता ?, गोयमा ! अणेगा अभिवयणा प०, तं०–अधम्मेति वा अधम्मत्थिकाएति वा पाणाइवाएति वा जाव मिच्छादंसणसल्लेति वा ईरियाअस्समितीति वा जाव उच्चारपासवणजावपारिट्ठावणियाअस्समितीति वा मणअगुत्तीति वा वइअगुत्तीति वा कायअगुत्तीति वा जे यावन्ने तहप्पगारा सव्वे ते अधम्मत्थिकायस्स अभिवयणा, आगासत्थिकायस्स णं पुच्छा, गोयमा ! अणेगा अभिवयणा प० तं०–आगासेति वा आगासत्थिकायेति वा गगणेति वा नभेति वा समेति वा विसमेति वा खहेति वा विहेति वा वीयीति वा विवरेति वा अंबरेति वा अंबरसेत्ति वा छिड्डेत्ति वा झुसिरेति वा मग्गेति

२० शतके उद्देशः २ आकाशादिः सू ६६३ धर्मास्तिकायाद्यभिवचनानि सू ६६४

॥७७५॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वा विमुहेति वा अद्देति वा वियद्देति वा आधारेति वा भायणेति वा अंतरिक्खेति वा सामेति वा उवासंतरेइ वा फलिहेइ वा अगमिइ वा अणंतेति वा जे यावन्ने तहप्पगारा सव्वे ते आगासत्थिकायस्स अभिवयणा। जीवत्थिकायस्स णं भंते ! केवतिया अभिवयणा प० ?, गोयमा ! अणेगा अभिवयणा पं० तं०–जीवेति वा जीवत्थिकायेति वा भूएति वा सत्तेति वा विन्नूति वा चेयाति वा जेयाति वा आयाति वा रंगणाति वा हिंडुएति वा पोग्गलेति वा माणवेति वा कत्ताति वा विकत्ताति वा जएति वा जंतुति वा जोणिति वा सयंभूति वा ससरीरीति वा नायएति वा अंतरप्पाति वा जे यावन्ने तहप्पगारा सव्वे ते जाव अभिवयणा। पोग्गलत्थिकायस्स णं भंते ! पुच्छा, गोयमा ! अणेगा अभिवयणा प० तं०–पोग्गलेति वा पोग्गलत्थिकायेति वा परमाणुपोग्गलेति वा दुपएसिएति वा तिपएसिएति वा जाव असंखेज्जपएसिएति वा अणंतपएसिएति वा जे याव० सव्वे ते पोग्गलत्थिकायस्स अभिवयणा। सेवं भंते ! २ त्ति ॥ (सूत्रं ६६४) ॥ २०–२ ॥

'अभिवयणे'ति 'अभी'त्यभिधायकानि वचनानि–शब्दा अभिवचनानि पर्यायशब्दा इत्यर्थः, 'धम्मेइ व'त्ति जीवपुद्गलानां गतिपर्याये धारणाद्धर्म्मः 'इतिः' उपप्रदर्शने 'वा' विकल्पे 'धम्मत्थिकाए व'त्ति धर्मश्चासावस्तिकायश्च–प्रदेशराशिरिति धर्म्मास्तिकायः, 'पाणाइवायवेरमणेइ वा'इत्यादि, इह धर्म्मः–चारित्रलक्षणः स च प्राणातिपातविरमणादिरूपः, ततश्च धर्म्मशब्दसाधर्म्यादस्तिकायरूपस्यापि धर्म्मस्य प्राणातिपातविरमणादयः पर्यायतया प्रवर्त्तन्त इति, 'जे यावन्ने'त्यादि, ये चान्येऽपि तथाप्रकाराः–चारित्रधर्म्माभिधायकाः सामान्यतो विशेषतो वा शब्दास्ते सर्वेऽपि धर्म्मास्तिकायस्याभि-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

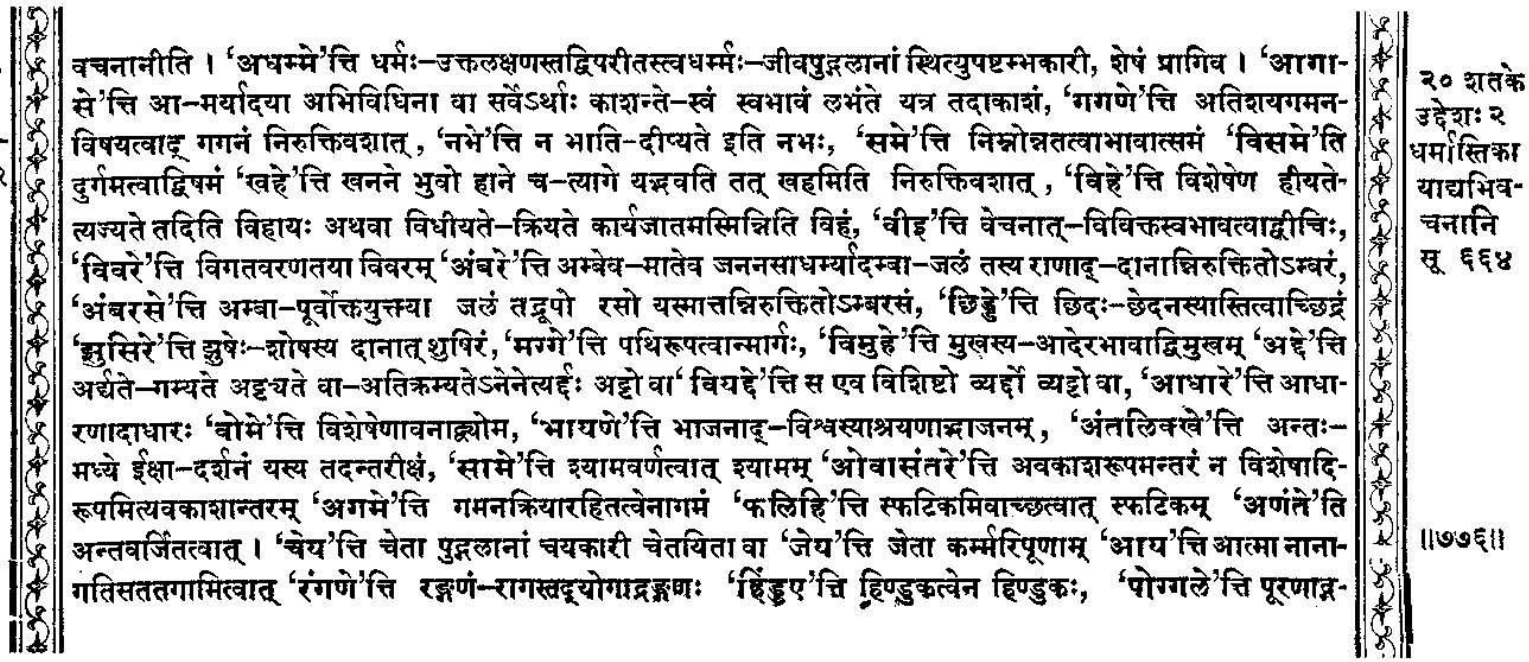

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥७७६॥

वचनानीति । 'अधम्मे'त्ति धर्मः–उक्तलक्षणस्तद्विपरीतस्त्वधर्म्मः–जीवपुद्गलानां स्थित्युपष्टम्भकारी, शेषं प्रागिव । 'आगासे'त्ति आ–मर्यादया अभिविधिना वा सर्वेऽर्थाः काशन्ते–स्वं स्वभावं लभंते यत्र तदाकाशं, 'गगणे'त्ति अतिशयगमनविषयत्वाद् गगनं निरुक्तिवशात्, 'नभे'त्ति न भाति–दीप्यते इति नभः, 'समे'त्ति निम्नोन्नतत्वाभावात्समं 'विसमे'त्ति दुर्गमत्वाद्विषमं 'खहे'त्ति खनने भुवो हाने च–त्यागे यद्भवति तत् खहमिति निरुक्तिवशात्, 'विहे'त्ति विशेषेण हीयते-त्यज्यते तदिति विहायः अथवा विधीयते–क्रियते कार्यजातमस्मिन्निति विहं, 'वीइ'त्ति वेचनात्–विविक्तस्वभावत्वाद्वीचिः, 'विवरे'त्ति विगतवरणतया विवरम् 'अंबरे'त्ति अम्बेव–मातेव जननसाधर्म्यादम्बा–जलं तस्य राणाद्–दानान्निरुक्तितोऽम्बरं, 'अंबरसे'त्ति अम्बा–पूर्वोक्तयुक्त्या जलं तद्रूपो रसो यस्मात्तन्निरुक्तितोऽम्बरसं, 'छिड्डे'त्ति छिदः–छेदनस्यास्तित्वाच्छिद्रं 'झुसिरे'त्ति झुषेः–शोषस्य दानात् शुषिरं, 'मग्गे'त्ति पथिरूपत्वान्मार्गः, 'विमुहे'त्ति मुखस्य–आदेरभावाद्विमुखम् 'अद्दे'त्ति अर्द्यते–गम्यते अट्टयते वा–अतिक्रम्यतेऽनेनेत्यर्द्दः अट्टो वा 'वियद्दे'त्ति स एव विशिष्टो व्यर्द्दो व्यट्टो वा, 'आधारे'त्ति आधारणादाधारः 'वोमे'त्ति विशेषेणावनाद्व्योम, 'भायणे'त्ति भाजनाद्–विश्वस्याश्रयणाद्भाजनम्, 'अंतलिक्खे'त्ति अन्तः–मध्ये ईक्षा–दर्शनं यस्य तदन्तरीक्षं, 'सामे'त्ति श्यामवर्णत्वात् श्यामम् 'ओवासंतरे'त्ति अवकाशरूपमन्तरं न विशेषादिरूपमित्यवकाशान्तरम् 'अगमे'त्ति गमनक्रियारहितत्वेनागमं 'फलिहे'त्ति स्फटिकमिवाच्छत्वात् स्फटिकम् 'अणंते'त्ति अन्तवर्जितत्वात् । 'चेय'त्ति चेता पुद्गलानां चयकारी चेतयिता वा 'जेय'त्ति जेता कर्म्मरिपूणाम् 'आय'त्ति आत्मा नानागतिसततगामित्वात् 'रंगणे'त्ति रङ्गणं–रागस्तद्योगाद्रङ्गणः 'हिंडुए'त्ति हिण्डुकत्वेन हिण्डुकः, 'पोग्गले'त्ति पूरणाद्–

२० शतके उद्देशः २ धर्मास्तिकायाद्यभिवचनानि सू ६६४

॥७७६॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

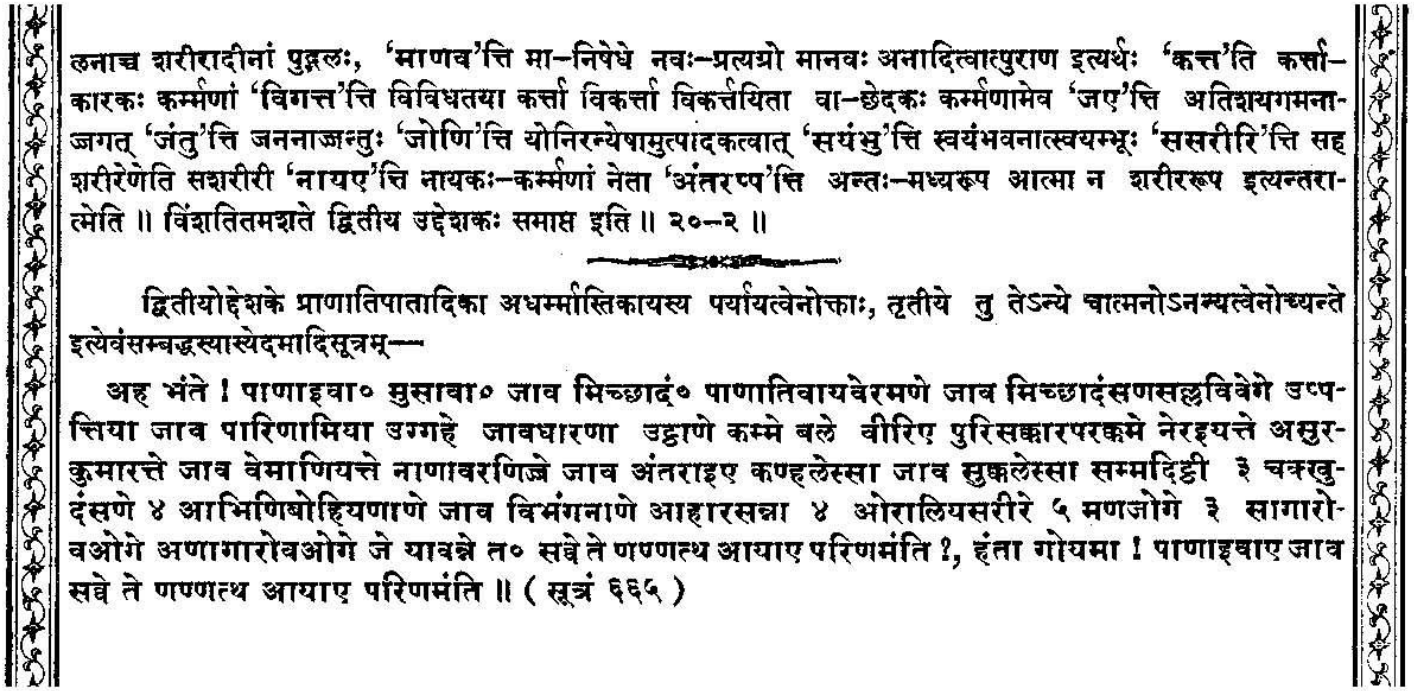

लनाच्च शरीरादीनां पुद्गलः, 'माणव'त्ति मा–निषेधे नवः–प्रत्यग्रो मानवः अनादित्वात्पुराण इत्यर्थः 'कत्त'ति कर्त्ता–कारकः कर्म्मणां 'विगत्त'त्ति विविधतया कर्त्ता विकर्त्ता विकर्त्तयिता वा–छेदकः कर्म्मणामेव 'जए'त्ति अतिशयगमनाज्जगत् 'जंतु'त्ति जननाज्जन्तुः 'जोणि'त्ति योनिरन्येषामुत्पादकत्वात् 'सयंभु'त्ति स्वयंभवनात्स्वयम्भूः 'ससरीरि'त्ति सह शरीरेणेति सशरीरी 'नायए'त्ति नायकः–कर्म्मणां नेता 'अंतरप्प'त्ति अन्तः–मध्यरूप आत्मा न शरीररूप इत्यन्तरात्मेति ॥ विंशतितमशते द्वितीय उद्देशकः समाप्त इति ॥ २०–२ ॥

द्वितीयोद्देशके प्राणातिपातादिका अधर्म्मास्तिकायस्य पर्यायत्वेनोक्ताः, तृतीये तु तेऽन्ये चात्मनोऽनन्यत्वेनोच्यन्ते इत्येवंसम्बद्धस्यास्येदमादिसूत्रम्—

अह भंते ! पाणाइवा० मुसावा० जाव मिच्छादं० पाणातिवायवेरमणे जाव मिच्छादंसणसल्लविवेगे उप्पत्तिया जाव पारिणामिया उग्गहे जावधारणा उट्ठाणे कम्मे बले वीरिए पुरिसक्कारपरक्कमे नेरइयत्ते असुरकुमारत्ते जाव वेमाणियत्ते नाणावरणिज्जे जाव अंतराइए कण्हलेस्सा जाव सुक्कलेस्सा सम्मदिट्ठी ३ चक्खुदंसणे ४ आभिणिबोहियणाणे जाव विभंगनाणे आहारसन्ना ४ ओरालियसरीरे ५ मणजोगे ३ सागारोवओगे अणागारोवओगे जे यावन्ने त० सव्वे ते णण्णत्थ आयाए परिणमंति ?, हंता गोयमा ! पाणाइवाए जाव सव्वे ते णण्णत्थ आयाए परिणमंति ॥ (सूत्रं ६६५)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र विंशतितमे शतके द्वितीय-उद्देशक: परिसमाप्त:

अथ विंशतितमे शतके तृतीय-उद्देशक: आरभ्यते

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [६६५]

दीप अनुक्रम [७८३]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥७७७॥

'अहे'त्यादि, 'णण्णत्थ आयाए परिणमंति'त्ति नान्यत्रात्मनः परिणमन्ति–आत्मानं वर्जयित्वा नान्यत्रैते वर्त्तन्ते, आत्म-पर्यायत्वादेषां, पर्यायाणां च पर्यायिणा सह कथञ्चिदेकत्वादात्मरूपाः सर्व एवैते नात्मनो भिन्नत्वेन परिणमन्तीति भावः ॥ अनन्तरं प्राणातिपातादयो जीवधर्म्माश्चिन्तिताः, अथ कथञ्चित्तद्धर्म्मा एव वर्णादयश्चिन्त्यन्ते—

जीवे णं भंते ! गब्भं वक्कममाणे कतिवन्नं एवं जहा बारसमसए पंचमुद्देसे जाव कम्मओ णं जए णो अकम्मओ विभत्तिभावं परिणमति । सेवं भंते ! २ त्ति जाव विहरति (सूत्रं ६६६) २०–३ ॥

'जीवे ण'मित्यादि, जीवो हि गर्भे उत्पद्यमानस्तैजसकार्मणशरीरसहित औदारिकशरीरग्रहणं करोति, शरीराणि च वर्णादियुक्तानि तदव्यतिरिक्तश्च कथञ्चिज्जीवोऽत उच्यते–'कतिवन्न'मित्यादि, 'एवं जहे'त्यादिना चेदं सूचितं–'कतिरसं कतिफासं परिणामं परिणमति ?, गोयमा ! पंचवन्नं पंचरसं दुगंधं अट्ठफासं परिणामं परिणमती'त्यादि, व्याख्या चास्य पूर्ववदेवेति ॥ विंशतितमशते तृतीयः ॥ २०–३ ॥

तृतीये परिणाम उक्तश्चतुर्थे तु परिणामाधिकारादिन्द्रियोपचयलक्षणः परिणाम एवोच्यत इत्येवंसम्बद्धस्यस्येदमादिसूत्रम्—

कइविहे णं भंते ! इंदियउवचए पन्नत्ते ?, गोयमा ! पंचविहे इंदियोवचए प० तं०–सोइंदियउवचए एवं बितिओ इंदियउद्देसओ निरवसेसो भाणियव्वो जहा पन्नवणाए । सेवं भंते ! २ त्ति भगवं गोयमे जाव विहरति ॥ (सूत्रं ६६७) ॥ २०–४ ॥

२० शतके उद्देशः ३ प्राणातिपातादीनामात्मपरिणामता सू ६६५ गभव्युक्रम सू ६६६

॥७७७॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र विंशतितमे शतके तृतीय-उद्देशक: परिसमाप्त:

अथ विंशतितमे शतके चतुर्थ-उद्देशक: आरभ्यते

'कइ'त्यादि, 'एवं बितिओ इंदियउद्देसओ'इत्यादि यथा प्रज्ञापनायां पञ्चदशस्येन्द्रियपदस्य द्वितीय उद्देशकस्तथाऽयं वाच्यः, स चैवं–सोइंदिओवचए चक्खिंदिओवचए घाणिंदिओवचए रसणिंदिओवचए फासिंदिओवचए' इत्यादि ॥ विंशतितमशते चतुर्थः ॥ २०–४ ॥

चतुर्थे इन्द्रियोपचय उक्तः, स च परमाणुभिरितिपञ्चमे परमाणुस्वरूपमुच्यते इत्येवंसम्बद्धस्यास्येदमादिसूत्रम्—

परमाणुपोग्गले णं भंते ! कतिवन्ने कतिगंधे कतिरसे कतिफासे पन्नत्ते ?, गोयमा ! एगवन्ने एगगंधे एगरसे दुफासे पन्नत्ते, तंजहा–जइ एगवन्ने सिय कालए सिय नीलए सिय लोहिए सिय हालिद्दे सिय सुक्किल्ले, जइ एगगंधे सिय सुब्भिगंधे सिय दुब्भिगंधे, जइ एगरसे सिय तित्ते सिय कडुए सिय कसाए सिय अंबिले सिय महुरे, जइ दुफासे सिय सीए य निद्धे य १ सिय सीए य लुक्खे य २ सिय उसिणे य निद्धे य ३ सिय उसिणे य लुक्खे य ४ ॥ दुप्पएसिए णं भंते ! खंधे कतिवन्ने ? एवं जहा अट्ठारसमसए छट्ठुद्देसए जाव सिय चउफासे पन्नत्ते, जइ एगवन्ने सिय कालए जाव सिय सुक्किल्लए जइ दुवन्ने सिय कालए नीलए य १ सिय कालए य लोहिए य २ सिय कालए य हालिद्दए य ३ सिय कालए य सुक्किल्लए य ४ सिय नीलए लोहिए ५ सिय नी० हालिद्द० ६ सिय नीलए य सुक्किल्लए य ७ सिय लोहिए य हालिद्दए य ८ सिय लोहिए य सुक्किलए य ९ सिय हालिद्दए य सुक्किल्लए य १० एवं एए दुयासंजोगे दस भंगा । जइ एगगंधे सिय सुब्भिगंधे १

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र विंशतितमे शतके चतुर्थ-उद्देशक: परिसमाप्त:

अथ विंशतितमे शतके पंचम-उद्देशक: आरभ्यते

परमाणु-पुद्गलस्य वक्तव्यता

प्रत सूत्रांक [६६८]

दीप अनुक्रम [७८६]

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥७७८॥

सिय दुब्भिगंधे य २ जइ दुगंधे सुब्भिगंधे य रसेसु जहा वन्नेसु जइ दुफासे सिय सीए य निद्धे य एवं जहेव परमाणुपोग्गले ४, जइ तिफासे सवे सीए देसे निद्धे देसे लुक्खे १ सवे उसिणे देसे निद्धे देसे लुक्खे २ सवे निद्धे देसे सीए देसे उसिणे ३ सवे लुक्खे देसे सीए देसे उसिणे ४ जइ चउफासे देसे सीए देसे उसिणे देसे निद्धे देसे लुक्खे १ एए नव भंगा फासेसु ॥ तिपएसिए णं भंते ! खंधे कतिवन्ने जहा अट्ठारसमसए छट्ठुदेसे जाव चउफासे प०, जइ एगवन्ने सिय कालए जाव सुक्किल्लए ५ जइ दुवन्ने सिय कालए य सिय नीलगे य १ सिय कालगे य नीलगा य २ सियकालगा य नीलए य ३ सिय कालए य लोहियए य १ सिय कालए य लोहीयगा य २ सिय कालगा य लोहियए य ३ एवं हालिद्दएणवि समं भंगा ३ एवं सुक्किल्लएणवि समं ३ सिय नीलए य लोहियए य एत्थंपि भंगा ३ एवं हालिद्दएणवि समं भंगा ३ एवं सुक्किल्लेणवि समं भंगा ३ सिय लोहियए य हालिद्दए य भङ्गा ३ एवं सुक्किल्लेणवि समं ३ सिय हालिद्दए य सुक्किल्लए य भंगा ३ एवं सवे ते दस दुयासंजोगा भंगा तीसं भवंति, जइ तिवन्ने सिय कालए य नीलए य लोहियए य १ सिय कालए य नीलए य हालिद्दए य २ सिय कालए य नीलए य सुक्किल्लए य ३ सिय कालए य लोहियए य हालिद्दए य ४ सिय कालए य लोहियए य सुक्किल्लए य ५ सिय कालए य हालिद्दए य सुक्किलए य ६ सिय नीलए य लोहियए य हालिद्दए य ७ सिय नीलए य लोहिए य सुक्किल्लए य ८ सिय नीलए य हालिद्दए य सुक्किल्लए य ९ सिय लोहिए य हालिद्दए य सुक्किल्लए य १० एवं एए दस तियासंजोगा । जइ एगगंधे सिय सुब्भि-

२० शतके उद्देशः ४ इन्द्रियोपचयः सू ६६७ परमाण्वादिवर्णादि सू ६६८

॥७७८॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

***अत्र मूल-संपादने सूत्रक्रमांकन-सुचने एक स्खलना दृश्यते–उद्देश: ५ स्थाने उद्देश: ४ मुद्रितं

परमाणु-पुद्गलस्य वक्तव्यता

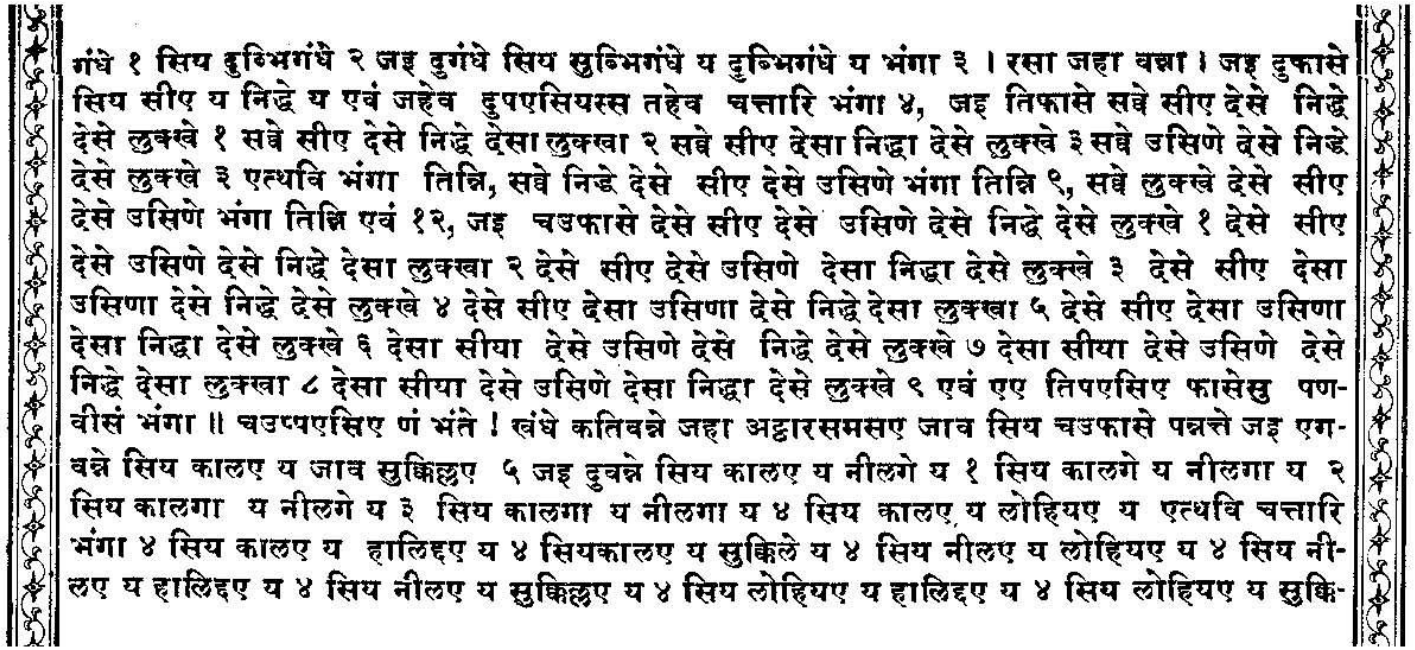

गंधे १ सिय दुब्भिगंधे २ जइ दुगंधे सिय सुब्भिगंधे य दुब्भिगंधे य भंगा ३ । रसा जहा वन्ना । जइ दुफासे सिय सीए य निद्धे य एवं जहेव दुपएसियस्स तहेव चत्तारि भंगा ४, जइ तिफासे सवे सीए देसे निद्धे देसे लुक्खे १ सवे सीए देसे निद्धे देसा लुक्खा २ सवे सीए देसा निद्धा देसे लुक्खे ३ सवे उसिणे देसे निद्धे देसे लुक्खे ३ एत्थवि भंगा तिन्नि, सवे निद्धे देसे सीए देसे उसिणे भंगा तिन्नि ९, सवे लुक्खे देसे सीए देसे उसिणे भंगा तिन्नि एवं १२, जइ चउफासे देसे सीए देसे उसिणे देसे निद्धे देसे लुक्खे १ देसे सीए देसे उसिणे देसे निद्धे देसा लुक्खा २ देसे सीए देसे उसिणे देसा निद्धा देसे लुक्खे ३ देसे सीए देसा उसिणा देसे निद्धे देसे लुक्खे ४ देसे सीए देसा उसिणा देसे निद्धे देसा लुक्खा ५ देसे सीए देसा उसिणा देसा निद्धा देसे लुक्खे ६ देसा सीया देसे उसिणे देसे निद्धे देसे लुक्खे ७ देसा सीया देसे उसिणे देसे निद्धे देसा लुक्खा ८ देसा सीया देसे उसिणे देसा निद्धा देसे लुक्खे ९ एवं एए तिपएसिए फासेसु पणवीसं भंगा ॥ चउप्पएसिए णं भंते ! खंधे कतिवन्ने जहा अट्ठारसमसए जाव सिय चउफासे पन्नत्ते जइ एगवन्ने सिय कालए य जाव सुक्किल्लए ५ जइ दुवन्ने सिय कालए य नीलगे य १ सिय कालगे य नीलगा य २ सिय कालगा य नीलगे य ३ सिय कालगा य नीलगा य ४ सिय कालए य लोहियए य एत्थवि चत्तारि भंगा ४ सिय कालए य हालिद्दए य ४ सियकालए य सुक्किले य ४ सिय नीलए य लोहियए य ४ सिय नीलए य हालिद्दए य ४ सिय नीलए य सुक्किल्लए य ४ सिय लोहियए य हालिद्दए य ४ सिय लोहियए य सुक्कि-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

परमाणु-पुद्गलस्य वक्तव्यता

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥७७९॥

लए य ४ सिय लोहियए य हालिद्दए य ४ सिय लोहियए य सुक्किल्लए य ४ सिय हालिद्दए य सुक्किल्लए य ४ एवं एए दस दुयासंजोगा भंगा पुण चत्तालीसं ४०, जइ तिवन्ने सिय कालए य नीलए य लोहियए य १ सिय कालए नीलए लोहियगा य २ सिय कालगा य नीलगा य लोहियए य ३ सिय कालगा य नीलए य लोहियए य एए भंगा ४ एवं कालनीलहालिद्दएहिं भंगा ४ कालनीलसुक्किल्ल ४ काललोहियहालिद्द ४ काललोहियसुक्किल्ल ४ कालहालिद्दसुक्किल्ल ४ नीललोहियहालिद्दगाणं भंगा ४ नीललोहियसुक्किल्ल ४ नीलहालिद्दसुक्किल्ल ४ लो० हा० सुक्किल्लगाणं भंगा ४ एवं एए दससतियासंजोगा एक्केक्के संजोए चत्तारि भंगा सव्वे ते चत्तालीसं भंगा ४०, जइ चउवन्ने सिय कालए नील० लोहिय हालिद्दए य १ सिय का० नील लो० सुक्किल्लए २ सिय का० नील० हालि० सुक्किल्ल ३ सिय का० लो० हा० सुक्कि० ४ सिय नी० लोहि० हा० सु० ५ एवमेते चउक्कगसंजोए पंच भंगा एए सव्वे नउइभंगा, जइ एगगंधे सिय सुब्भिगंधे सिय दुब्भिगंधे य जइ दुगंधे सिय सुब्भिगंधे य सिय दुब्भिगंधे य। रसा जहा वन्ना। जइ दुफासे जहेव परमाणुपोग्गले ४, जइ तिफासे सव्वे सीए देसे निद्धे देसे लुक्खे १ सव्वे सीए देसे निद्धे देसा लुक्खा २ सव्वे सीए देसा निद्धा देसे लुक्खे ३ सव्वे सीए देसा निद्धा देसा लुक्खा ४ सव्वे उसिणे देसे निद्धे देसे लुक्खे एवं भंगा ४ सव्वे निद्धे देसे सीए देसे उसिणे ४ सव्वे लुक्खे देसे सीए देसे उसिणे ४ एए तिफासे सोलसभंगा, जइ चउफासे देसे सीए देसे उसिणे देसे निद्धे देसे लुक्खे १ देसे सीए देसे उसिणे देसे निद्धे देसा लुक्खा २ देसे सीए देसे उसिणे देसा निद्धा

२० शतके उद्देशः ४ इन्द्रियोपचयः सू ६६७ परमाण्वादिवर्णादि सू ६६८

॥७७९॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

***अत्र मूल-संपादने सूत्रक्रमांकन-सुचने एक स्खलना दृश्यते–उद्देश: ५ स्थाने उद्देश: ४ मुद्रितं

परमाणु-पुद्गलस्य वक्तव्यता

प्रत सूत्रांक [६६८] दीप अनुक्रम [७८६]	पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

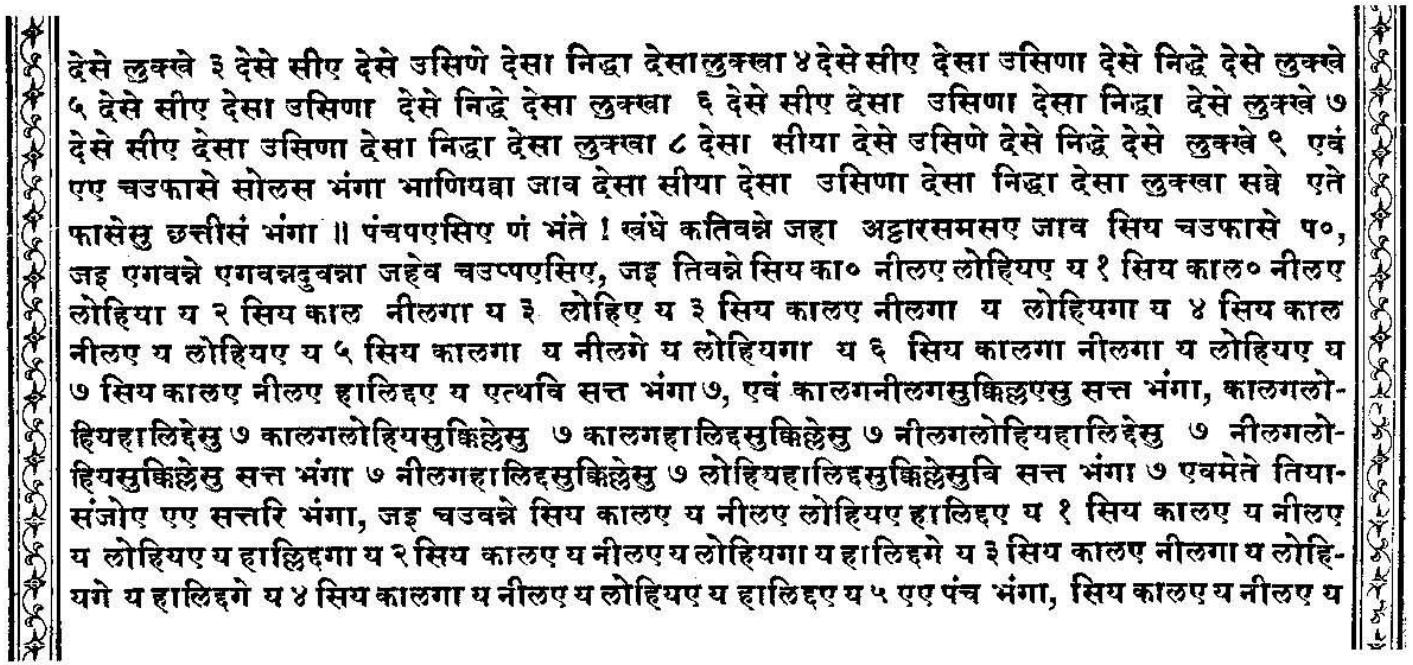

देसे लुक्खे ३ देसे सीए देसे उसिणे देसा निद्धा देसालुक्खा ४ देसे सीए देसा उसिणा देसे निद्धे देसे लुक्खे ५ देसे सीए देसा उसिणा देसे निद्धे देसा लुक्खा ६ देसे सीए देसा उसिणा देसा निद्धा देसे लुक्खे ७ देसे सीए देसा उसिणा देसा निद्धा देसा लुक्खा ८ देसा सीया देसे उसिणे देसे निद्धे देसे लुक्खे ९ एवं एए चउफासे सोलस भंगा भाणियव्वा जाव देसा सीया देसा उसिणा देसा निद्धा देसा लुक्खा सव्वे एते फासेसु छत्तीसं भंगा ॥ पंचपएसिए णं भंते ! खंधे कतिवन्ने जहा अट्ठारसमसए जाव सिय चउफासे प०, जइ एगवन्ने एगवन्नदुवन्ना जहेव चउप्पएसिए, जइ तिवन्ने सिय का० नीलए लोहियए य १ सिय काल० नीलए लोहिया य २ सिय काल नीलगा य ३ लोहिए य ३ सिय कालए नीलगा य लोहियगा य ४ सिय काल नीलए य लोहियए य ५ सिय कालगा य नीलगे य लोहियगा य ६ सिय कालगा नीलगा य लोहियए य ७ सिय कालए नीलए हालिद्दए य एत्थवि सत्त भंगा ७, एवं कालगनीलगसुक्किल्लएसु सत्त भंगा, कालगलोहियहालिद्देसु ७ कालगलोहियसुक्किल्लेसु ७ कालगहालिद्दसुक्किल्लेसु ७ नीलगलोहियहालिद्देसु ७ नीलगलोहियसुक्किल्लेसु सत्त भंगा ७ नीलगहालिद्दसुक्किल्लेसु ७ लोहियहालिद्दसुक्किल्लेसुवि सत्त भंगा ७ एवमेते तियासंजोए एए सत्तरि भंगा, जइ चउवन्ने सिय कालए य नीलए लोहियए हालिद्दए य १ सिय कालए य नीलए य लोहियए य हाल्लिद्दगा य २ सिय कालए य नीलए य लोहियगा य हालिद्दे य ३ सिय कालए नीलगा य लोहियगे य हालिद्दगे य ४ सिय कालगा य नीलए य लोहियए य हालिद्दए य ५ एए पंच भंगा, सिय कालए य नीलए य

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	परमाणु-पुद्गलस्य वक्तव्यता

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवीया वृत्तिः २ ॥७८०॥

लोहियए य सुक्किल्लए य एत्थवि पंच भंगा, एवं कालगनीलगहालिद्दसुक्किल्लेसुवि पंच भंगा, कालगलोहिय-हालिद्दसुक्किल्लएसुवि पंच भंगा ५, नीलगलोहियहालिद्दसुक्किल्लेसुवि पंच भंगा, एवमेते चउक्कगसंजोएणं षण-वीस भंगा, जइ पंचवन्ने कालए य नीलए लोहियए हालिद्दए सुक्किल्लए सव्वमेते एक्कगदुयगतियगचउक्कपंच-गसंजोएणं ईयालं भंगसयं भवति । गंधा जहा चउप्पएसियस्स । रसा जहा वन्ना । फासा जहा चउप्पए-सियस्स ॥ छप्पएसिए णं भंते ! खंधे कतिवन्ने ?, एवं जहा पंचपएसिए जाव सिय चउफासे पन्नत्ते, जइ एगवन्ने एगवन्नदुवन्ना जहा पंचपएसियस्स, जइ तिवन्ने सिय कालए य नीलए य लोहियए य एवं जहेव पंच-पएसियस्स सत्त भंगा जाव सिय कालगा य नीलगा य लोहियए य ७ सिय कालगा य नीलगा य लोहियगा य ८ एए अट्ठ भङ्गा एवमेते दस तियासंजोगा एक्केक्कए संजोगे अट्ठ भंगा एवं सव्वेवि तियगसंजोगे असीति भंगा, जइ चउवन्ने सिय कालए य नीलए य लोहियए य हालिद्दए य १ सिय कालए य नीलए य लोहियए य हालि-द्दया य २ सिय कालए य नीलए य लोहिया य हालिद्दए य ३ सिय कालगे य नीलगे य लोहियगा य हालिद्दए य ४ सिय कालगे य नीलगा य लोहियए य हालिद्दए य ५ सिय कालए य नीलगा य लोहियए हालिद्दगा य ६ सिय कालगे य नीलगा य लोहियगा य हालिद्दए य ७ सिय कालगा य नीलए य लोहियए य हालिद्दए य ८ सिय कालगा नीलए लोहियए हालिद्दगा य ९ सिय कालगा नीलगे लोहियगा य हालिद्दगे य १० सिय कालगा य नीलगा य लोहियए य हालिद्दए य ११ एए एक्कारस भंगा, एवमेते पंचचउक्कासंजोगा कायव्वा

२० शतके उद्देशः ४ इन्द्रियोपचयः सू ६६७ परमाण्वादिवर्णादि सू ६६८

॥७८०॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

***अत्र मूल-संपादने सूत्रक्रमांकन-सुचने एक स्खलना दृश्यते–उद्देश: ५ स्थाने उद्देश: ४ मुद्रितं

परमाणु-पुद्गलस्य वक्तव्यता

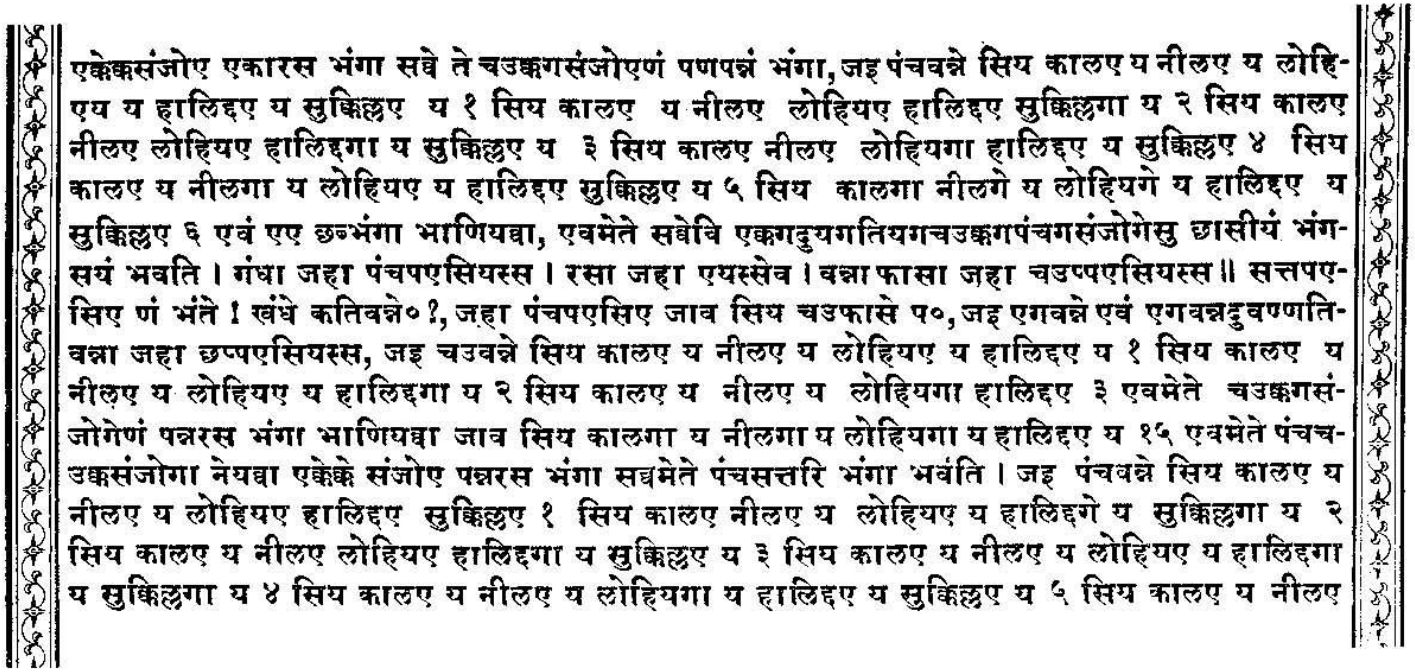

एक्केक्कसंजोए एकारस भंगा सव्वे ते चउक्कगसंजोएणं पणपन्नं भंगा, जइ पंचवन्ने सिय कालए य नीलए य लोहिएय य हालिद्दए य सुक्किल्लए य १ सिय कालए य नीलए लोहियए हालिद्दए सुक्किल्लगा य २ सिय कालए नीलए लोहियए हालिद्दगा य सुक्किल्लए य ३ सिय कालए नीलए लोहियगा हालिद्दए य सुक्किल्लए ४ सिय कालए य नीलगा य लोहियए य हालिद्दए सुक्किल्लए य ५ सिय कालगा नीलगे य लोहियगे य हालिद्दए य सुक्किल्लए ६ एवं एए छब्भंगा भाणियव्वा, एवमेते सव्वेवि एक्कगदुयगतियगचउक्कगपंचगसंजोगेसु छासीयं भंगसयं भवति । गंधा जहा पंचपएसियस्स । रसा जहा एयस्सेव । वन्ना फासा जहा चउप्पएसियस्स ॥ सत्तपएसिए णं भंते ! खंधे कतिवन्ने०?, जहा पंचपएसिए जाव सिय चउफासे प०, जइ एगवन्ने एवं एगवन्नदुवण्णतिवन्ना जहा छप्पएसियस्स, जइ चउवन्ने सिय कालए य नीलए य लोहियए य हालिद्दए य १ सिय कालए य नीलए य लोहियए य हालिद्दगा य २ सिय कालए य नीलए य लोहियगा हालिद्दए ३ एवमेते चउक्कगसंजोगेणं पन्नरस भंगा भाणियव्वा जाव सिय कालगा य नीलगा य लोहियगा य हालिद्दए य १५ एवमेते पंचचउक्कसंजोगा नेयव्वा एक्केक्के संजोए पन्नरस भंगा सव्वमेते पंचसत्तरि भंगा भवंति । जइ पंचवन्ने सिय कालए य नीलए य लोहियए हालिद्दए सुक्किल्लए १ सिय कालए नीलए य लोहियए य हालिद्दगे य सुक्किल्लगा य २ सिय कालए य नीलए लोहियए हालिद्दगा य सुक्किल्लए य ३ सिय कालए य नीलए य लोहियए य हालिद्दगा य सुक्किलगा य ४ सिय कालए य नीलए य लोहियगा य हालिद्दए य सुक्किल्लए य ५ सिय कालए य नीलए

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥७८१॥

य लोहियगा य हालिद्दगे य सुक्किल्लए य ६ सिय कालए य नीलए य लोहियगा य हालिद्दगा य सुक्किल्लए य ७ सिय कालए य नीलगा य लोहियगे य हालिद्दए य सुक्किल्लए य ८ सिय कालगे य नीलगा य लोहियए य हालिद्दए य सुक्किल्लगा य ९ सिय कालगे य नीलगा य लोहियगे हालिद्दगा सुक्किल्लए य १० सिय कालए य नीलगा य लोहियगा य हालिद्दए य सुक्किल्लए य ११ सिय कालगा य नीलगे य लोहियए य हालिद्दए य सुक्किल्लए य १२ सिय कालगा य नीलगे य लोहियगे य हालिद्दए य सुक्किल्लगा य १३ सिय कालगा य नीलए य लोहियए य हालिद्दगा य सुक्किल्लए य १४ सिय कालगा य नीलए य लोहियगा य हालिद्दए य सुक्किलए य १५ सिय कालगा य नीलगा य लोहियए य हालिद्दए य सुक्किल्लए य १६ एए सोलस भंगा, एवं सवमेते एक्कगदुयगतियगचउक्कगपंचगसंजोगेणं दो सोला भंगसया भवंति, गंधा जहा चउप्पएसियस्स, रसा जहा एयस्स चेव वन्ना फासा जहा चउप्पएसियस्स ॥ अट्ठपएसियस्स णं भंते ! खंधे पुच्छा, गोयमा ! सिय एगवन्ने जहा सत्तपएसियस्स जाव सिय चउफासे प० जइ एगवन्ने एवं एगवन्नदुवन्नतिवन्ना जहेव सत्तपए-सिए, जइ चउवन्ने सिय कालए य नीलए य लोहियए य हालिद्दए य १ सिय कालए य नीलए य लोहियए य हालिद्दगा य २ एवं जहेव सत्तपएसिए जाव सिय कालगा य नीलगा य लोहियगा य हालिद्दगे य १५ सिय कालगा य नीलगा य लोहियगा य हालिद्दगा य १६ एए सोलस भंगा, एवमेते पंच चउक्कसंजोगा, एवमेते असीति भंगा ८०, जइ पंचवन्ने सिय कालए य नीलए य लोहियए य हालिद्दए य सुक्किल्लए य १ सिय कालए

२० शतके उद्देशः ४ इन्द्रियोपचयः सू ६६७ परमाण्वा-दिवर्णादि सू ६६८

॥७८१॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

***अत्र मूल-संपादने सूत्रक्रमांकन-सुचने एक स्खलना दृश्यते–उद्देश: ५ स्थाने उद्देश: ४ मुद्रितं

परमाणु-पुद्गलस्य वक्तव्यता

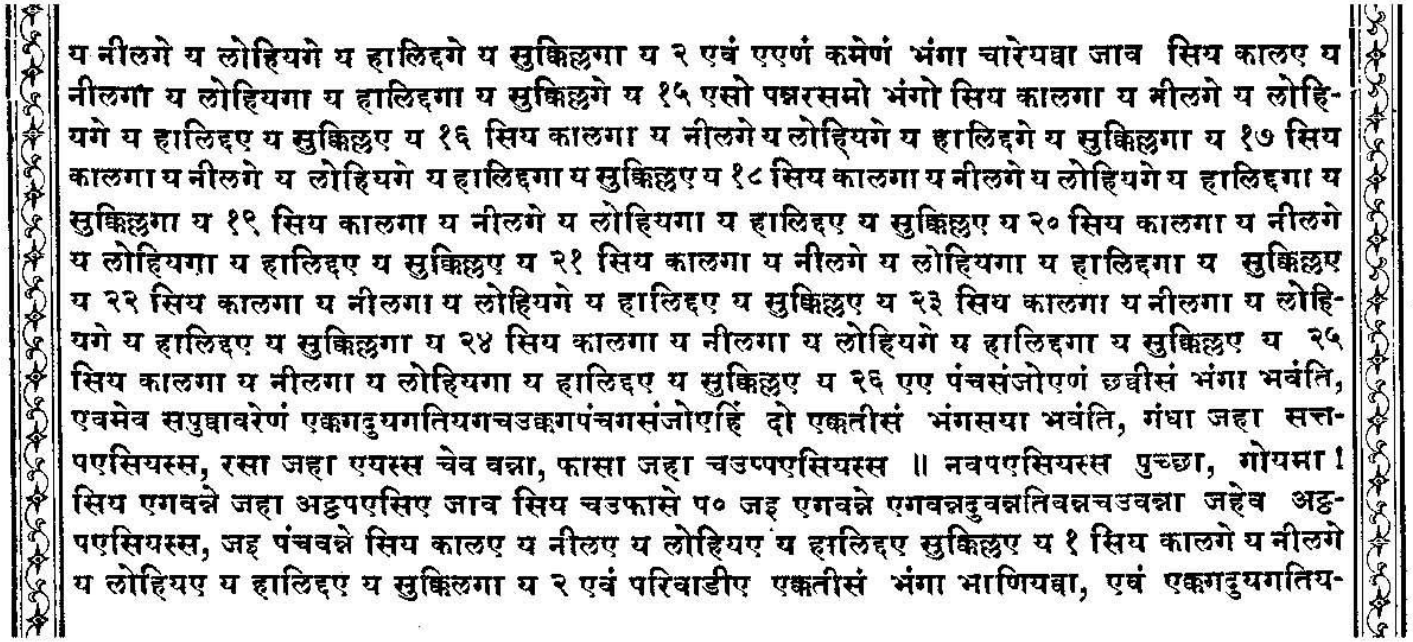

य नीलगे य लोहियगे य हालिद्दगे य सुक्किल्लगा य २ एवं एएणं कमेणं भंगा चारेयव्वा जाव सिय कालए य नीलगा य लोहियगा य हालिद्दगा य सुक्किल्लगे य १५ एसो पन्नरसमो भंगो सिय कालगा य नीलगे य लोहियगे य हालिद्दए य सुक्किल्लए य १६ सिय कालगा य नीलगे य लोहियगे य हालिद्दगे य सुक्किल्लगा य १७ सिय कालगा य नीलगे य लोहियगे य हालिद्दगा य सुक्किल्लए य १८ सिय कालगा य नीलगे य लोहियगे य हालिद्दगा य सुक्किल्लगा य १९ सिय कालगा य नीलगे य लोहियगा य हालिद्दए य सुक्किल्लए य २० सिय कालगा य नीलगे य लोहियगा य हालिद्दए य सुक्किल्लए य २१ सिय कालगा य नीलगे य लोहियगा य हालिद्दगा य सुक्किल्लए य २२ सिय कालगा य नीलगा य लोहियगे य हालिद्दए य सुक्किल्लए य २३ सिय कालगा य नीलगा य लोहियगे य हालिद्दए य सुक्किल्लगा य २४ सिय कालगा य नीलगा य लोहियगे य हालिद्दगा य सुक्किल्लए य २५ सिय कालगा य नीलगा य लोहियगा य हालिद्दए य सुक्किल्लए य २६ एए पंचसंजोएणं छव्वीसं भंगा भवंति, एवमेव सपुव्वावरेणं एक्कगदुयगतियगचउक्कगपंचगसंजोएहिं दो एक्कतीसं भंगसया भवंति, गंधा जहा सत्तपएसियस्स, रसा जहा एयस्स चेव वन्ना, फासा जहा चउप्पएसियस्स ॥ नवपएसियस्स पुच्छा, गोयमा ! सिय एगवन्ने जहा अट्ठपएसिए जाव सिय चउफासे प० जइ एगवन्ने एगवन्नदुवन्नतिवन्नचउवन्ना जहेव अट्ठपएसियस्स, जइ पंचवन्ने सिय कालए य नीलए य लोहियए य हालिद्दए सुक्किल्लए य १ सिय कालगे य नीलगे य लोहियए य हालिद्दए य सुक्किलगा य २ एवं परिवाडीए एक्कतीसं भंगा भाणियव्वा, एवं एक्कगदुयगतिय-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

परमाणु-पुद्गलस्य वक्तव्यता

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [६६८]

दीप अनुक्रम [७८६]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥७८२॥

गचउक्कगपंचगसंजोएहिं दो छत्तीसा भंगसया भवंति, गंधा जहा अट्ठपएसियस्स, रसा जहा एयस्स चेव वन्ना, फासा जहा चउपएसियस्स । दसपएसिए णं भंते ! खंधे पुच्छा, गोयमा ! सिय एगवन्ने जहा नवपएसिए जाव सिय चउफासे पन्नत्ते, जइ एगवन्ने एगवन्नदुवन्नतियन्नचउवन्ना जहेव नवपएसियस्स, पंचवन्नेवि तहेव नवरं बत्तीसतिमो भंगो भन्नति, एवमेते एक्कगदुयगतियगचउक्कगपंचगसंजोएसु दोन्नि सत्ततीसा भंगसया भवंति, गंधा जहा नवपएसियस्स, रसा जहा एयस्स चेव वन्ना, फासा जाव चउप्पएसियस्स । जहा दसपएसिओ एवं संखेज्जपएसिओवि, एवं असंखेज्जपएसिओवि, सुहुमपरिणओवि अणंतपएसिओवि एवं चेव ॥(सूत्रं ६६८)

'परमाणु'इत्यादि, 'एगवन्ने'त्ति कालादिवर्णानामन्यतरयोगात्, एवं गन्धादिष्वपि वाच्यं, 'दुफासे'त्ति शीतोष्णस्निग्धरूक्षाणामन्यतरस्याविरुद्धस्य द्वितयस्य योगाद् द्विस्पर्शः, तत्र च विकल्पाश्चत्वारः, शीतस्य स्निग्धेन रूक्षेण च क्रमेण योगाद्वौ, एवमुष्णस्यापि द्वाविति चत्वारः, शेषास्तु स्पर्शा बादराणामेव भवन्ति ॥ 'दुपएसिए णं'मित्यादि, द्विप्रदेशिकस्यैकवर्णता प्रदेशद्वयस्याप्येकवर्णपरिणामात्, तत्र च कालादिभेदेन पञ्च विकल्पाः, द्विवर्णता तु प्रतिप्रदेशं वर्णभेदात्, तत्र च द्विकसंयोगजाता दश विकल्पाः सूत्रसिद्धा एव, एवं गन्धरसेष्वपि, नवरं गन्धे एकत्वे द्वौ द्विकसंयोगे त्वेकः, रसेष्वेकत्वे पञ्च द्वित्वे तु दश, स्पर्शेषु द्विस्पर्शतायां चत्वारः प्रागुक्ताः, 'जइ तिफासे'इत्यादि 'सवे सीए'त्ति प्रदेशद्वयमपि शीतं १, तस्यैव द्वयस्य देश एक इत्यर्थः स्निग्धः २ देशश्च रूक्षः ३ इत्येको भङ्गकः, एवमन्येऽपि त्रयः सूत्रसिद्धा एव, चतुःस्पर्शे त्वेक एव, एवं चैते स्पर्शभङ्गा सर्वेऽपि मीलिता नव भवन्तीति ॥ 'तिपएसिए'इत्यादि, 'सिय कालए'त्ति त्रयाणामपि प्रदे-

२० शतके उद्देशः ४ इन्द्रियोपचयः सू ६६७ परमाण्वादिवर्णादि सू ६६८

॥७८२॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

***अत्र मूल-संपादने सूत्रक्रमांकन-सुचने एक स्खलना दृश्यते–उद्देश: ५ स्थाने उद्देश: ४ मुद्रितं

परमाणु-पुद्गलस्य वक्तव्यता

शानां कालत्वादित्वेनैकवर्णत्वे पञ्च विकल्पाः, द्विवर्णतायां चैकः प्रदेशः कालः प्रदेशद्वयं तु तथाविधैकप्रदेशावगाहादि-
कारणमपेक्ष्यैकत्वेन विवक्षितमिति स्यान्नील इत्येको भङ्गः, अथवा स्यात्कालस्तथैव प्रदेशद्वयं तु भिन्नप्रदेशावगाहादिना
कारणेन भेदेन विवक्षितमतो नीलकाविति व्यपदिष्टमिति द्वितीयः, अथवा द्वौ तथैव कालकावित्युक्तौ एकस्तु नीलक
इत्येवं तृतीयः, तदेवमेकत्र द्विकसंयोगे त्रयाणां भावाद्दशसु द्विकयोगेषु त्रिंशद्भङ्गा भवन्ति, एते च सूत्रसिद्धा एवेति,
त्रिवर्णतायां त्वेकवचनस्यैव सम्भवाद्दश त्रिकसंयोगा भवन्तीति, गन्धे त्वेकगन्धत्वे द्वौ द्विगन्धतायां त्वेकत्वानेकत्वाभ्यां
पूर्ववत्त्रयः, 'जइ दुफासे'इत्यादि समुदितस्य प्रदेशयत्रस्य द्विस्पर्शतायां द्विप्रदेशिकवच्चत्वारः, त्रिस्पर्शतायां तु सर्वः शीतः
प्रदेशत्रयस्यापि शीतत्वात् देशश्च स्निग्धः एकप्रदेशात्मको देशश्च रूक्षो द्विप्रदेशात्मको द्वयोरपि तयोरेकप्रदेशावगाहनादिना
एकत्वेन विवक्षितत्वात्, एवं सर्वत्रेत्येको भङ्गः १, तृतीयपदस्यानेकवचनान्तत्वे द्वितीयपदस्यानेकवचनान्तत्वे तृतीयः,
तदेवं सर्वशीतेन त्रयो भङ्गाः ३ एवं सर्वोष्णेनापि ३ एवं सर्वस्निग्धेनापि ३ एवं सर्वरूक्षेणापि ३ तदेवमेते द्वादश १२,
चतुःस्पर्शतायां तु 'देसे सीए'इत्यादि, एकवचनान्तपदचतुष्टय आद्यः, स्थापना चेयम् ∴ अन्त्यपदस्यानेकवचनान्तत्वे
तु द्वितीयः, स चैवं–द्वयरूपो देशः शीत एकरूपस्तूष्णः पुनः शीतयोरेकः स्निग्धः द्वितीयश्चोष्ण एतौ रूक्षाविति रूक्षपदेऽ-
नेकवचनं, तृतीयस्त्वनेकवचनान्ततृतीयपदः, स चैवम्–एकरूपो देशः शीतो द्विरूपस्तूष्णः, तथा यः शीतो यश्चोष्णयोरे-
कस्तौ स्निग्धौ इत्येवं स्निग्धपदेऽनेकवचनं यश्चैक उष्णः स रूक्ष इति, चतुर्थस्त्वनेकवचनान्तद्वितीयपदः, स चैवं–स्निग्ध-
रूपस्य द्वयस्यैकः शीतो यश्च तस्यैव द्वितीयोऽन्यश्चैको रूक्षः एतावुष्णाविति उष्णपदेऽनेकवचनं, स्निग्धे तु द्वयोरेकप्रदेशा-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	परमाणु-पुद्गलस्य वक्तव्यता

श्रितत्वादेकवचनं रूक्षे त्वेकत्वादेवेति, पञ्चमस्तु द्वितीयचतुर्थपदयोरनेकवचनान्ततया, स चैवम्—एकः शीतः स्निग्धश्च अन्यौ च पृथग्व्यवस्थितावुष्णौ चेत्युष्णरूक्षयोरनेकवचनं, षष्ठस्तु द्वितीयतृतीयपदयोरनेकवचनान्तत्वे, स चैवम्—एकः शीतो रूक्षश्च अन्यौ च पृथग्व्यवस्थितावुष्णौ स्निग्धौ चेत्युष्णस्निग्धयोरनेकवचनं, सप्तमस्त्वनेकवचनान्ताद्यपदः, स चैवं–स्निग्धरूपस्य द्वयस्यैकोऽन्यश्चैक एतौ द्वौ शीतावित्यनेकवचनान्तत्वमाद्यस्य, अष्टमः पुनरनेकवचनान्तादिमान्तिमपदः, स चैवं–पृथक्स्थितयोः शीतत्वरूक्षत्वे चैकस्य चोष्णत्वे स्निग्धत्वे च, नवमस्त्वनेकवचनान्तत्वे आद्यतृतीययोः, स चैवं–द्वयोर्भिन्नदेशस्थयोः शीतत्वे स्निग्धत्वे च एकस्य चोष्णरूक्षत्वे चेति, 'पणवीसं भंग'त्ति द्वित्रिचतुःस्पर्शसम्बन्धिनां चतुर्द्वादशनवानां मीलनात् पञ्चविंशतिर्भङ्गा भवन्ति ॥ 'चउप्पएसिए ण'मित्यादि, सिय कालए य नीलए य'त्ति द्वौ द्वावेकपरिणामपरिणताविति कृत्वा स्यात्कालको नीलकश्चेति प्रथमः, अन्त्ययोरनेकत्वपरिणामे सति द्वितीयः आद्ययोस्तृतीयः उभयोश्चतुर्थः, स्थापना चेयम् [११] [१२] [२१] [२२] । एवं दशसु द्विकयोगेषु प्रत्येकं चतुर्भङ्गीभावाच्चत्वारिंशद्भङ्गाः । 'जइ तिवन्ने'इत्यादि तत्र प्रथमः कालको द्वितीयो नीलकः अन्त्ययोश्चैकपरिणामत्वाल्लोहितकः १११ इत्येकः तृतीयस्यानेकपरिणामतयाऽनेकवचनान्तत्वे द्वितीयः ११२, एवं द्वितीयस्यानेकतायां तृतीयः १२१ आद्यस्यानेकत्वे चतुर्थः २११ एवमेते चत्वार एकत्र त्रिकसंयोगे, दशसु चैतेषु चत्वारिंशदिति । 'जइ चउवन्ने'इत्यादि, इह पञ्चानां वर्णानां पञ्च चतुष्कसंयोगा भवन्ति, ते च सूत्रसिद्धा एव, 'सव्वे नउइं भंग'त्ति एकद्वित्रिचतुर्वर्णेषु पञ्च चत्वारिंशत् २ पञ्चानां भङ्गकानां भावान्नवतिस्ते स्युरिति। 'जइ एगगंधे'इत्यादि प्राग्वत् । 'जइ तिफासे'इत्यादि, 'सव्वे सीए'त्ति चतुर्णामपि प्रदेशानां शीतपरिणामत्वात् १ 'देसे

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

***अत्र मूल-संपादने सूत्रक्रमांकन-सुचने एक स्खलना दृश्यते–उद्देश: ५ स्थाने उद्देश: ४ मुद्रितं

परमाणु-पुद्गलस्य वक्तव्यता

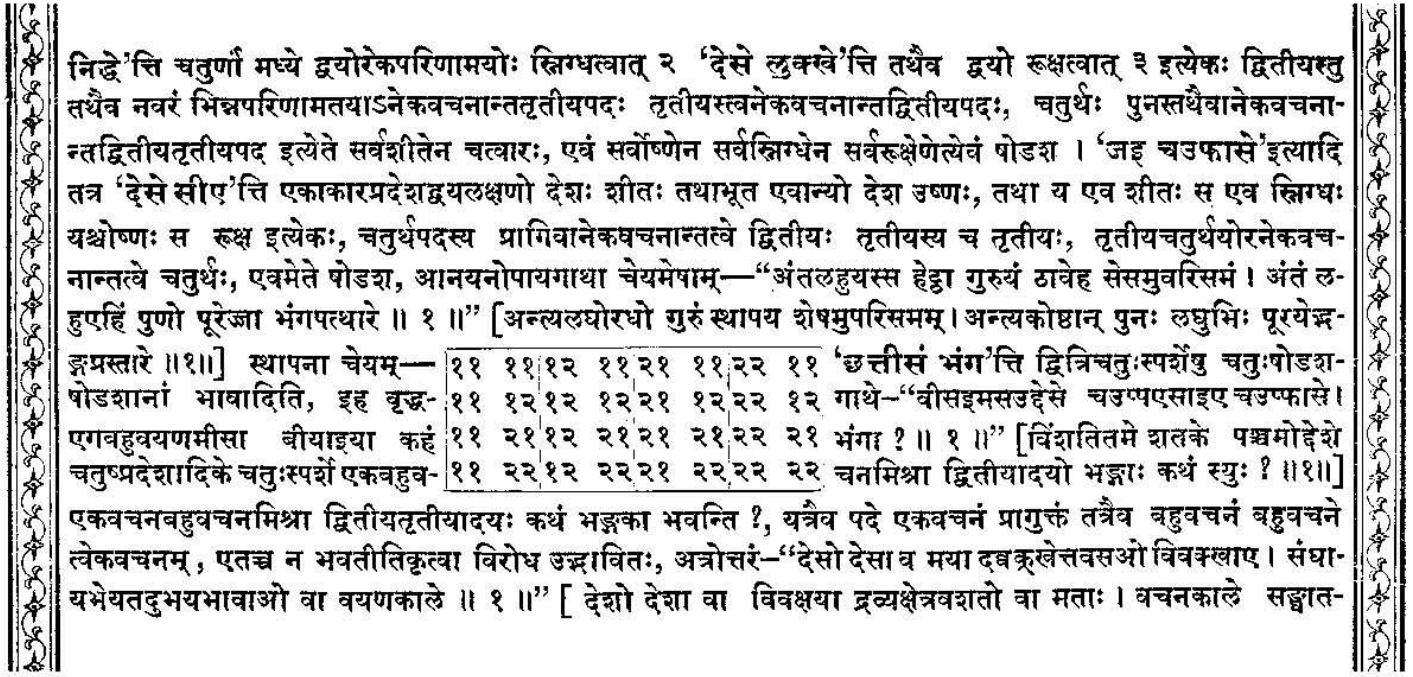

निद्धे'त्ति चतुर्णां मध्ये द्वयोरेकपरिणामयोः स्निग्धत्वात् २ 'देसे लुक्खे'त्ति तथैव द्वयो रूक्षत्वात् ३ इत्येकः द्वितीयस्तु तथैव नवरं भिन्नपरिणामतयाऽनेकवचनान्ततृतीयपदः तृतीयस्त्वनेकवचनान्तद्वितीयपदः, चतुर्थः पुनस्तथैवानेकवचनान्तद्वितीयतृतीयपद इत्येते सर्वशीतेन चत्वारः, एवं सर्वोष्णेन सर्वस्निग्धेन सर्वरूक्षेणेत्येवं षोडश । 'जइ चउफासे'इत्यादि तत्र 'देसे सीए'त्ति एकाकारप्रदेशद्वयलक्षणो देशः शीतः तथाभूत एवान्यो देश उष्णः, तथा य एव शीतः स एव स्निग्धः यश्चोष्णः स रूक्ष इत्येकः, चतुर्थपदस्य प्रागिवानेकवचनान्तत्वे द्वितीयः तृतीयस्य च तृतीयः, तृतीयचतुर्थयोरनेकवचनान्तत्वे चतुर्थः, एवमेते षोडश, आनयनोपायगाथा चेयमेषाम्—"अंतलहुयस्स हेट्ठा गुरुयं ठावेह सेसमुवरिसमं । अंतं लहुएहिं पुणो पूरेज्जा भंगपत्थारे ॥ १ ॥" [अन्त्यलघोरधो गुरुं स्थापय शेषमुपरिसमम् । अन्त्यकोष्ठान् पुनः लघुभिः पूरयेद्भङ्गप्रस्तारे ॥१॥] स्थापना चेयम्—

११	११	१२	११	२१	११	२२	११
११	१२	१२	१२	२१	१२	२२	१२
११	२१	१२	२१	२१	२१	२२	२१
११	२२	१२	२२	२१	२२	२२	२२

'छत्तीसं भंग'त्ति द्वित्रिचतुःस्पर्शेषु चतुःषोडशषोडशानां भावादिति, इह वृद्धगाथे–"वीसइमसउद्देसे चउप्पएसाइए चउफासे। एगवहुवयणमीसा बीयाइया कइ भंगा ? ॥ १ ॥" [विंशतितमे शतके पञ्चमोद्देशे चतुष्प्रदेशादिके चतुःस्पर्शे एकवहुवचनमिश्रा द्वितीयादयो भङ्गाः कथं स्युः ? ॥१॥] एकवचनबहुवचनमिश्रा द्वितीयतृतीयादयः कथं भङ्गका भवन्ति ?, यत्रैव पदे एकवचनं प्रागुक्तं तत्रैव बहुवचनं बहुवचने त्वेकवचनम्, एतच्च न भवतीतिकृत्वा विरोध उद्भावितः, अत्रोत्तरं–"देसो देसा व मया दव्वक्खेत्तवसओ विवक्खाए । संघायभेयतदुभयभावाओ वा वयणकाले ॥ १ ॥" [देशो देशा वा विवक्षया द्रव्यक्षेत्रवशतो वा मताः । वचनकाले सङ्घात-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	परमाणु-पुद्गलस्य वक्तव्यता

भेदतदुभयभावाद्वा ॥१॥] अयमर्थः–देशो देशा वेत्ययं निर्देशो न दुष्टः एकानेकवर्णादिधर्म्मयुक्तद्रव्यवशेनैकानेकावगाहक्षेत्रवशेन वा देशस्यैकत्वानेकत्वविवक्षणात् , अथवा भणनप्रस्तावे सङ्घातविशेषभावेन भेदविशेषभावेन वा तस्यैकत्वानेकविवक्षणादेवेति ॥ पञ्चप्रदेशिके 'जइ तिवन्ने'त्यादि, त्रिषु पदेष्वष्टौ भङ्गाः केवलमिह सप्तैव ग्राह्याः, पञ्चप्रदेशिकेऽष्टमस्यासम्भवात् , एवं च दशसु त्रिकसंयोगेषु सप्ततिरिति । 'जइ चउवन्ने'इत्यादि, चतुर्णां पदानां षोडश भङ्गास्तेषु चेह पञ्च सम्भविनस्ते च सूत्रसिद्धा एव, पञ्चसु वर्णेषु पञ्च चतुष्कसंयोगा भवन्ति, तेषु चैषां प्रत्येकं भावात्पञ्चविंशतिरिति, 'ईयालं भंगसयं'ति पञ्चप्रदेशिके एकद्वित्रिचतुष्पञ्चवर्णसंयोगजानां पञ्चचत्वारिंशत्सप्ततिपञ्चविंशत्येकसङ्ख्यानां भङ्गानां मीलनादेकोत्तरचत्वारिंशदधिकं भङ्गकशतं भवतीति ॥ 'छप्पएसिए ण'मित्यादि, इह सर्वे पञ्चप्रदेशिकस्येव, नवरं वर्णत्रयेऽष्टौ भङ्गा वाच्याः, अष्टमस्याप्यत्र सम्भवात् , एवं च दशसु त्रिकसंयोगेष्वशीतिर्भङ्गका भवन्तीति, चतुर्वर्णे तु पूर्वोक्तानां षोडशानां भङ्गकानामष्टदशान्तिमत्रयवर्जितानां शेषा एकादश भवन्ति, तेषां च पञ्चसु चतुष्कसंयोगेषु प्रत्येकं भावात्पञ्चपञ्चाशदिति । 'जइ पंचवन्ने'इत्यादौ षड् भङ्गाः, 'छासीयं भंगसयं'ति एकादिसंयोगसम्भवानां पञ्चचत्वारिंशदशीतिपञ्चाधिकपञ्चाशत्षट्सङ्ख्यभङ्गकानां मीलनात् षडुत्तराशीत्यधिकं भङ्गकशतं भवति ॥ 'सत्तपएसिय'इत्यादि, इह चतुर्वर्णत्वे पूर्वोक्तानां षोडशानामन्तिमवर्जाः शेषाः पञ्चदश भवन्ति, एषां च पञ्चसु चतुष्कसंयोगेषु प्रत्येकं भावात्पञ्चसप्ततिरिति । 'जइ पंचवन्ने'इत्यादि, इह पञ्चानां पदानां द्वात्रिंशद्भङ्गा भवन्ति, तेषु चेहाद्यानां षोडशानामष्टमद्वादशान्त्यत्रयवर्जिताः शेषा उत्तरेषां च षोडशानामाद्यास्त्रयः पञ्चमनवमौ चेत्येवं सर्वेऽपि षोडश संभवन्तीति, दोसोला भंगसयं'त्ति एकद्वित्रिचतु-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

***अत्र मूल-संपादने सूत्रक्रमांकन-सुचने एक स्खलना दृश्यते–उद्देश: ५ स्थाने उद्देश: ४ मुद्रितं

ष्पञ्चकसंयोगजानां पञ्चचत्वारिंशदशीतिपञ्चाधिकसप्ततिषोडशसङ्ख्यानां भङ्गकानां मीलनाद् द्वे शते षोडशोत्तरे स्यातामिति ॥ 'अट्ठपएसिए'इत्यादि, इह चतुर्वर्णत्वे पूर्वोक्ताः षोडशापि भङ्गा भवन्ति, तेषां च प्रत्येकं पञ्चसु चतुष्कसंयोगेषु भावादशीतिर्भङ्गका भवन्ति, पञ्चवर्णत्वे तु द्वात्रिंशतो भङ्गानां षोडशचतुर्विंशाष्टाविंशाष्टाविंशान्त्यत्रयवर्जाः शेषाः षड्विंशतिर्भङ्गका भवन्तीत्यर्थः, 'दो इक्कतीसाइं'ति पूर्वोक्तानां पञ्चचत्वारिंशदशीत्यशीतिषडुत्तरविंशतिसङ्ख्यानां भङ्गकानां मीलनाद्वे शते एकत्रिंशदुत्तरे भवत इति ॥ 'नवपएसियस्से'त्यादि, इह पञ्चवर्णत्वे द्वात्रिंशतो भङ्गकानामन्त्य एव न भवति शेषं तु पूर्वोक्तानुसारेण भावनीयमिति ॥

बायरपरिणए णं भंते ! अणंतपएसिए खंधे कतिवन्ने एवं जहा अट्ठारसमसए जाव सिय अट्ठफासे पन्नत्ते वन्नगंधरसा जहा दसपएसियस्स, जइ चउफासे सवे कक्खडे सवे गरुए सवे सीए सवे निद्धे १ सवे कक्खडे सवे गरुए सवे सीए सवे लुक्खे २ सवे कक्खडे सवे गरुए सवे उसिणे सवे निद्धे ३ सवे कक्खडे सवे गरुए सवे सीए सवे लुक्खे ४ सवे कक्खडे सवे लहुए सवे सीए सवे लुक्खे ५ सवे कक्खडे सवे लहुए सवे सीए सवे लुक्खे ६ सवे कक्खडे सवे लहुए सवे उसिणे सवे निद्धे ७ सवे कक्खडे सवे लहुए सवे उसिणे सवे लुक्खे ८ सवे मउए सवे गरुए सवे सीए सवे निद्धे ९ सवे मउए सवे गरुए सवे सीए सवे लुक्खे १० सवे मउए सवे गरुए सवे उसिणे सवे निद्धे ११ सवे मउए सवे गरुए सवे उसिणे सवे लुक्खे १२ सवे मउए सवे लहुए सवे सीए सवे निद्धे १३ सवे मउए सवे लहुए सवे सीए सवे लुक्खे १४ सवे मउए सवे लहुए सवे

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [६६९]

दीप अनुक्रम [७८७]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥७८५॥

उसिणे सव्वे निद्धे १५ सव्वे मउए सव्वे लहुए सव्वे उसिणे सव्वे लुक्खे १६ एए सोलस भंगा॥ जइ पंचफासे सव्वे कक्खडे सव्वे गरुए सव्वे सीए देसे निद्धे देसे लुक्खे १ सव्वे कक्खडे सव्वे गरुए सव्वे सीए देसे निद्धे देसा लुक्खा २ सव्वे कक्खडे सव्वे गरुए सव्वे सीए देसा निद्धा देसे लुक्खे ३ सव्वे कक्खडे सव्वे गरुए सव्वे सीए देसा निद्धा देसा लुक्खा ४ सव्वे कक्खडे सव्वे गरुए सव्वे उसिणे देसे निद्धे देसे लुक्खे ४ सव्वे कक्खडे सव्वे लहुए सव्वे सीए देसे निद्धे देसे लुक्खे ४ सव्वे कक्खडे सव्वे लहुए सव्वे उसिणे देसे निद्धे देसे लुक्खे । ४ । एवं एए कक्खडेणं सोलस भंगा । सव्वे मउए सव्वे गरुए सव्वे सीए देसे निद्धे देसे लुक्खे ४ एवं मउएणवि सोलस भंगा एवं बत्तीसं भंगा । सव्वे कक्खडे सव्वे गरुए सव्वे निद्धे देसे सीए देसे उसिणे ४ सव्वे कक्खडे सव्वे गरुए सव्वे लुक्खे देसे सीए देसे उसिणे ४ एए बत्तीसं भंगा, सव्वे कक्खडे सव्वे सीए सव्वे निद्धे देसे गरुए देसे लहुए एत्थवि बत्तीसं भंगा ४, सव्वे गरुए सव्वे सीए सव्वे निद्धे देसे कक्खडे देसे मउए एत्थवि बत्तीसं भंगा, एवं सव्वे ते पंचफासे अट्ठावीसं भंगसयं भवंति । जइ छफासे सव्वे कक्खडे सव्वे गरुए देसे सीए देसे उसिणे देसे निद्धे देसे लुक्खे १ सव्वे कक्खडे सव्वे गरुए देसे सीए देसे उसिणे देसे निद्धे देसा लुक्खा २ एवं जाव सव्वे कक्खडे सव्वे गरुए देसा सीया देसा उसिणा देसा निद्धा देसा लुक्खा १६ एए सोलस भंगा । सव्वे कक्खडे सव्वे लहुए देसे सीए देसे उसिणे देसे निद्धे देसे लुक्खे एत्थवि सोलस भंगा, सव्वे मउए सव्वे लहुए देसे सीए देसे उसिणे देसे निद्धे देसे लुक्खे एत्थवि सोलस भंगा, एए चउसट्ठिं भंगा, सव्वे कक्खडे

२० शतके उद्देशः ४ बादरस्क-न्धे वर्णादि परिणामः सू ६६९

॥७८५॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

***अत्र मूल-संपादने सूत्रक्रमांकन-सुचने एक स्खलना दृश्यते–उद्देश: ५ स्थाने उद्देश: ४ मुद्रितं

प्रत सूत्रांक [६६९]

दीप अनुक्रम [७८७]

सवे निद्धे देसे गरुए देसे लहुए देसे निद्धे देसे लुक्खे एत्थवि चउसट्ठिं भंगा, सवे कक्खडे सवे निद्धे देसे गरुए देसे लहुए देसे सीए देसे उसिणे १ जाव सवे मउए सवे लुक्खे देसा गरुया देसा लहुया देसा सीया देसा उसिणा १६ एए चउसट्ठिं भंगा, सवे गरुए सवे सीए देसे कक्खडे देसे मउए देसे निद्धे देसे लुक्खे एवं जाव सवे लहुए सवे उसिणे देसा कक्खडा देसा निद्धा देसा मउया देसा लुक्खा एए चउसट्ठिं भंगा, सवे गरुए सवे निद्धे देसे कक्खडे देसे मउए देसे सीए देसे उसिणे जाव सवे लहुए सवे लुक्खे देसा कक्खडा देसा मउया देसा सीया देसा उसिणा एए चउसट्ठिं भंगा, सवे सीए सवे निद्धे देसे कक्खडे देसे मउए देसे गरुए देसे लहुए जाव सवे उसिणे सवे लुक्खे देसा कक्खडा देसा मउया देसा गरुया देसा लहुया एए चउसट्ठिं भंगा, सवे ते छफासे तिन्निचउरासीयं भंगसया भवंति ३८४ । जइ सत्तफासे सवे कक्खडे देसे गरुए देसे लहुए देसे सीए देसे उसिणे देसे निद्धे देसे लुक्खे १ सवे कक्खडे देसे गरुए देसे लहुए देसे सीए देसे उसिणे देसा निद्धा देसा लुक्खा ४ सवे कक्खडे देसे गरुए देसे लहुए देसे सीए देसा उसिणा देसे निद्धे देसा लुक्खा ४ सवे कक्खडे देसे गरुए देसे लहुए देसा सीया देसे उसिणे देसे निद्धे देसे लुक्खे ४ सवेते सोलसभंगा भाणियव्वा, सवे कक्खडे देसे गरुए देसा लहुया देसे सीए देसे उसिणे देसे निद्धे देसे लुक्खे एवं गरुएणं एगत्तेणं लहुएणं पुहुत्तेणं एतेवि सोलस भंगा, सवे कक्खडे देसा गरुया देसे लहुए देसे सीए देसे उसिणे देसे निद्धे देसे लुक्खे एएवि सोलस भंगा भाणियव्वा, सवे कक्खडे देसा गरुया देसा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [६६९]

दीप अनुक्रम [७८७]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥७८६॥

लहुया देसे सीए देसे उसिणे देसे निद्धे देसे लुक्खे एएवि सोलस भंगा भाणियव्वा, एवमेते चउसट्ठिं भंगा कक्खडेणं समं, सव्वे मउए देसे गरुए देसे लहुए देसे सीए देसे उसिणे देसे निद्धे देसे लुक्खे। एवं मउएणवि समं चउसट्ठिं भंगा भाणियव्वा, सव्वे गरुए देसे कक्खडे देसे मउए देसे सीए देसे उसिणे देसे निद्धे देसे लुक्खे एवं गरुएणवि समं चउसट्ठिं भंगा कायव्वा, सव्वे लहुए देसे कक्खडे देसे मउए देसे सीए देसे उसिणे देसे निद्धे देसे लुक्खे एवं लहुएणवि समं चउसट्ठिं भंगा कायव्वा, सव्वे सीए देसे कक्खडे देसे मउए देसे गरुए देसे लहुए देसे निद्धे देसे लुक्खे एवं सीतेणवि समं चउसट्ठिं भंगा कायव्वा, सव्वे उसिणे देसे कक्खडे देसे मउए देसे गरुए देसे लहुए देसे निद्धे देसे लुक्खे एवं उसिणेणवि समं चउसट्ठिं भंगा कायव्वा, सव्वे निद्धे देसे कक्खडे देसे मउए देसे गरुए देसे लहुए देसे सीए देसे उसिणे एवं निद्धेणवि चउसट्ठिं भंगा कायव्वा, सव्वे लुक्खे देसे कक्खडे देसे मउए देसे गरुए देसे लहुए देसे सीए देसे उसिणे एवं लुक्खेणवि समं चउसट्ठिं भंगा कायव्वा जाव सव्वे लुक्खे देसा कक्खडा देसा मउया देसा ग० देसा ल० देसा सीया देसा उसिणा, एवं सत्तफासे पंचवारसुत्तरा भंगसया भवंति। जइ अट्ठफासे देसे कक्खडे देसे मउए देसे गुरुए देसे लहुए देसे सीए देसे उसिणे देसे निद्धे देसे लुक्खे ४ देसे कक्खडे देसे मउए देसे गरुए देसे लहुए देसे सीए देसा उसिणा देसे निद्धे देसे लुक्खे ४ देसे कक्खडे देसे मउए देसे गरुए देसे लहुए देसा सीया देसे उसिणे देसे निद्धे देसे लुक्खे ४ देसे कखडे देसे मउए देसे गरुए देसे लहुए देसा सीया देसा उसिणा देसे निद्धे देसे लुक्खे

२० शतके उद्देशः ४ बादरस्क-न्धे वर्णादि परिणामः सू ६६९

॥७८६॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

***अत्र मूल-संपादने सूत्रक्रमांकन-सुचने एक स्खलना दृश्यते–उद्देश: ५ स्थाने उद्देश: ४ मुद्रितं

४ एए चत्तारि चउक्का सोलस भंगा, देसे कक्खडे देसे मउए देसे गरुए देसा लहुया देसे सीए देसे उसिणे देसे निद्धे देसे लुक्खे एवं एते गरुएणं एगत्तएणं लहुएणं पोहत्तएणं सोलस भंगा कायव्वा, देसे कक्खडे देसे मउए देसा गरुया देसे लहुए देसे सीए देसे उसिणे देसे निद्धे देसे लुक्खे ४ एएवि सोलस भंगा कायव्वा, देसे कक्खडे देसे मउए देसा गरुया देसा लहुया देसे सीए देसे उसिणे देसे निद्धे देसे लुक्खे एतेवि सोलस भंगा कायव्वा, सव्वेऽवि ते चउसट्ठिं भंगा कक्खडमउएहिं एगत्तएहिं, ताहे कक्खडेणं एगत्तएणं मउएणं पुहत्तेणं एते चउसट्ठिं भंगा कायव्वा, ताहे कक्खडेणं पुहत्तएणं मउएणं एगत्तएणं चउसट्ठिं भंगा कायव्वा, ताहे एतेहिं चेव दोहिवि पुहुत्तेहिं चउसट्ठिं भंगा कायव्वा जाव देसा कक्खडा देसा मउया देसा गरुया देसा लहुया देसा सीया देसा उसिणा देसा निद्धा देसा लुक्खा एसो अपच्छिमो भंगो, सव्वेते अट्ठफासे दो छप्पन्ना भंगसया भवंति। एवं एते बादरपरिणए अणंतपएसिए खंधे सव्वेसु संजोएसु बारस छन्नउया भंगसया भवंति॥ (सू.६६९) कइविहे भंते ! परमाणु पं० ?, गोयमा ! चउव्विहे परमाणु प० तं०–दव्वपरमाणू खेत्तपरमाणू कालपरमाणू भावपरमाणू, दव्वपरमाणु णं भंते ! कइविहे प०?, गोयमा ! चउव्विहे प० तं०–अच्छेज्जे अभेज्जे अडज्झे अगेज्झे, खेत्तपरमाणू णं भंते! कइविहे प० ?, गोयमा ! चउव्विहे प० तं०– अणद्धे अमज्झे अपदेसे अविभाइमे, कालपरमाणू पुच्छा, गोयमा! चउव्विहे प० तं०–अवन्ने अगंधे अरसे अफासे, भावपरमाणू णं भंते! कइविहे प०?, गोयमा! चउव्विहे प० तं०–वन्नमंते गंधमंते रसमंते फासमंते। सेवं भंते २त्ति जाव विहरति॥(सूत्रं ६७०)॥२०–५॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधितः मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [६६९-६७०]

दीप अनुक्रम [७८७--७८८]

'बायरपरिणए ण'मित्यादि, सर्व एव कर्कशो गुरुः शीतः स्निग्धश्च एकदैवाविरुद्धानां स्पर्शानां सम्भवादित्येको भङ्गः, चतुर्थपदव्यत्यये द्वितीयः, एवमेते एकादिपदव्यभिचारेण षोडश भङ्गाः। 'पंचफासे'इत्यादि, कर्कशगुरुशीतैः स्निग्ध-रूक्षयोरेकत्वानेकत्वकृता चतुर्भङ्गी लब्धा, एवैव च कर्कशगुरूष्णैर्लभ्यत इत्येवमष्टौ, एते चाष्टौ कर्कशगुरुभ्याम्, एवमन्ये च कर्कशलघुभ्याम्, एवमेते षोडश कर्कशपदेन लब्धा एतानेव च मृदुपदं लभते इत्येवं द्वात्रिंशत्, इयं च द्वात्रिंशत् स्निग्धरूक्षयोरेकत्वादिना लब्धा, अन्या च द्वात्रिंशत् शीतोष्णयोरन्या च गुरुलघ्वोरन्या च कर्कशमृद्वोरित्येवं सर्व एवैते मीलिता अष्टाविंशत्युत्तरं भङ्गकशतं भवतीति॥ 'छफासे'इत्यादि, तत्र सर्वकर्कशो १ गुरुश्च २ देशश्च शीतः ३ उष्णः ४ स्निग्धो ५ रूक्षश्चे ६ ति, इह च देशशीतादीनां चतुर्णां पदानामेकत्वादिना षोडश भङ्गाः, एते च सर्वकर्कशगुरुभ्यां लब्धाः, एत एव कर्कशलघुभ्यां लभ्यन्ते तदेवं द्वात्रिंशत्, इयं च सर्वकर्कशपदेन लब्धा इयमेव च सर्वमृदुना लभ्यत इति चतुःषष्टिर्भङ्गाः, इयं च चतुःषष्टिः सर्वकर्कशगुरुलक्षणेन द्विकसंयोगेन सविपर्ययेण लब्धा, तदेवमन्योऽप्येवंविधो द्विकसंयोगस्तां लभते, कर्कशगुरुशीतस्निग्धलक्षणानां च चतुर्णां पदानां षड् द्विकसंयोगास्तदेवं चतुःषष्टिः षड्भिर्द्विकसं-योगैर्गुणितास्त्रीणि शतानि चतुरशीत्यधिकानि भवन्तीति अत एवोक्तं–'सव्वेवेते छफासे'इत्यादि॥ 'जइ सत्तफासे' इत्यादि, इहाद्यं कर्कशाख्यं पदं स्कन्धव्यापकत्वाद्विपक्षरहितं शेषाणि तु गुर्वादीनि षट् स्कन्धदेशाश्रितत्वात् सविपक्षाणी-त्येवं सप्त स्पर्शाः, एषां च गुर्वादीनां षण्णां पदानामेकत्वानेकत्वाभ्यां चतुःषष्टिर्भङ्गका भवन्ति, ते च सर्वशब्दविशेषिते-नादिन्यस्तेन कर्कशपदेन लब्धाः, एवं मृदुपदेनापीत्येवमष्टाविंशत्यधिकं शतं, एवं गुरुलघुभ्यां शेषैः षड्भिः सह १२८,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

शीतोष्णाभ्यामप्येवमेव १२८, एवं स्निग्धरूक्षाभ्यामपि १२८, तदेवमष्टाविंशत्युत्तरशतस्य चतुर्भिर्गुणने पञ्च शतानि द्वादशोत्तराणि भवन्तीति, अत एवाह–'एवं सत्तफासे पंच बारसुत्तरा भंगसया भवंती'ति । 'अट्ठफासे'इत्यादि, चतुर्णां कर्कशादिपदानां सविपर्ययाणामाश्रयणादष्टौ स्पर्शाः, एते च बादरस्कन्धस्य द्विधा विकल्पितस्यैकत्र देशे चत्वारो विरुद्धास्तु द्वितीये इति, एषु चैकत्वानेकत्वाभ्यां भङ्गका भवन्ति, तत्र च रूक्षपदेनैकवचनान्तेन बहुवचनान्तेन द्वौ, एतौ च स्निग्धैकवचनेन लब्धावेतावेव स्निग्धबहुवचनं लभेते, एते चत्वारः, एते च सूत्रपुस्तके चतुष्ककेन सूचिताः, तथैतेष्वेवाष्टासु पदेषूष्णपदेन बहुवचनान्तेनोक्तचतुर्भङ्गीयुक्तेनान्ये चत्वारः ४, एवं शीतपदेन बहुवचनान्तेनैव ४, तथा शीतोष्णपदाभ्यां बहुवचनान्ताभ्यामेत एव ४ एवं चैते १६, तथा लघुपदेन बहुवचनान्तेनैत एव ४, तथा लघुशीतपदाभ्यां बहुवचनान्ताभ्यामेत एव ४, एवं लघूष्णपदाभ्यां ४, एवं लघुशीतोष्णपदैरिति ४ एवमेतेऽपि षोडश १६, एतदेव दर्शयति–'एवं गुरुएणं एगत्तएण'मित्यादि, तथा कर्कशादिनैकवचनान्तेन गुरुपदेन च बहुवचनान्तेनैत एव, तथा गुरूष्णाभ्यां बहुवचनान्ताभ्यामेत एव ४, एवं गुरुशीताभ्यां ४, एवं गुरुशीतोष्णैः ४, एवं चैते षोडश, तथा गुरुलघुभ्यां बहुवचनान्ताभ्यामेत एव ४, एवं गुरुलघूष्णैः ४, एवं गुरुलघुशीतैः ४, एवं गुरुलघुशीतोष्णैः ४, एतेऽपि षोडश, सर्वेऽप्यादित एते चतुःषष्टिः 'कक्खडमउएहिं एगत्तेहिं'ति कर्कशमृदुपदाभ्यामेकवचनवद्भ्यां चतुःषष्टिरेते भङ्गा लब्धा इत्यर्थः, 'ताहे'त्ति तदनन्तरं 'कक्खडेणं एगत्तएणं'ति कर्कशपदेनैकत्वयोगेन एकवचनान्तेनेत्यर्थः 'मउएणं पोहत्तएणं'ति मृदुकपदेन पृथक्त्वयोगेनानेकवचनान्तेनेत्यर्थः 'एते चेव'त्ति एत एव पूर्वोक्तक्रमाच्चतुःषष्टिर्भङ्गकाः कर्त्तव्या इति, 'ताहे कक्खडेण' मित्यादि, 'ताहे'त्ति ततः कर्कशपदेन बहुवचनान्तेन मृदुपदेन चैकवचनान्तेन चतुःषष्टिर्भङ्गाः पूर्वोक्तक्रमेणैव

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [६६९-६७०]

दीप अनुक्रम [७८७--७८८]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥७८८॥

कर्त्तव्याः, ततश्चैतानेव कर्कशमृदुपदाभ्यां बहुवचनान्ताभ्यां पूर्ववच्चतुष्षष्टिर्भङ्गाः कर्त्तव्याः एताश्चादितश्चतस्रश्चतुःषष्टयो मीलिता द्वे शते षट्पञ्चाशदधिके स्यातामिति, एतदेवाह–'सधे ते अट्ठफासे दो छप्पन्ना भंगसया भवंति'-त्ति, एतेषां च सुखतरप्रतिपत्तये यन्त्रकमिदम्—'बारसछन्नउया भंगसया भवंति'त्ति बादरस्कन्धे चतुरादिकाः स्पर्शा भवन्ति, तत्र च चतुःस्पर्शादिषु क्रमेण षोडशानामष्टाविंशत्युत्तरशतस्य चतुरशीत्यधिकशतत्रयस्य द्वादशोत्तरशतपञ्चकस्य षट्पञ्चाशदधिकशतद्वयस्य च भावाद्यथोक्तं मानं भवतीति॥ परमाण्वाद्यधिकारादेवेदमाह—'कई'त्यादि, तत्र द्रव्यरूपः परमाणुर्द्रव्यपरमाणुः–एकोऽणुर्वर्णादिभावानामविवक्षणात् द्रव्यत्वस्यैव विवक्षणादिति, एवं क्षेत्रपरमाणुः–आकाशप्रदेशः कालपरमाणुः समयः भावपरमाणुः–परमाणुरेव वर्णादिभावानां प्राधान्यविवक्षणात् सर्वजघन्यकालत्वादिर्वा, 'चउफ्फिहे'त्ति एकोऽपि द्रव्यपरमाणुर्विवक्षया चतुःस्वभावः 'अच्छेज्ज'त्ति छेद्यः–शस्त्रादिना लतादिवत्तन्निषेधादच्छेद्यः 'अभेज्ज'त्ति भेद्यः–शूच्यादिना चर्म्मवत्तन्निषेधादभेद्यः 'अडज्झे'त्ति अदाह्योऽग्निना सूक्ष्मत्वात्, अत एवाग्राह्यो हस्तादिना, 'अणद्धे'त्ति समसङ्ख्यावयवाभावात् 'अमज्झे'त्ति विषमसङ्ख्यावयवाभावात् 'अपएसे'त्ति निरंशोऽवयवाभावात् 'अविभाइमे'त्ति अविभागेन निर्वृत्तोऽविभागिम एकरूप इत्यर्थः विभाजयितुमशक्यो वेत्यर्थः ॥ विंशतितमशते पञ्चमः ॥ २०–५ ॥

देसे कक्ख	देसे म.	देसे ग.	देसे ल.	देसे सी.	देसे उ.	देसे नि.	देसे रु.
१	१	१	१	१	१	१	१
३	३	३	३	३	३	३	३
२५६	१२८	६४	३२	१६	८	४	२

२० शतके उद्देशः ५ बादरस्कन्धे वर्णादि परिणामः सू ६६९

॥७८८॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र विंशतितमे शतके पंचम-उद्देशक: परिसमाप्त:

पञ्चमे पुद्गलपरिणाम उक्तः, षष्ठे तु पृथिव्यादिजीवपरिणामोऽभिधीयत इत्येवंसम्बद्धस्यास्येदमादिसूत्रम्—

पुढविक्काइए णं भंते ! इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए सक्करप्पभाए पुढवीए अंतरा समोहए समोहणित्ता जे भविए सोहम्मे कप्पे पुढविकाइयत्ताए उववज्जित्तए से णं भंते ! किं पुव्विं उववज्जित्ता पच्छा आहारेज्जा पुव्विं आहारित्ता पच्छा उववज्जेज्जा ?, गोयमा ! पुव्विं वा उववज्जित्ता एवं जहा सत्तरसमसए छट्ठुद्देसे जाव से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ पुव्विं वा जाव उववज्जेज्जा नवरं तहिं संपाउणेज्जा इमेहिं आहारो भन्नति सेसं तं चेव । पुढविक्काइए णं भंते ! इमीसे रयणप्पभाए सक्करप्पभाए पुढवीए अंतरा समोहए जे भविए ईसाणे कप्पे पुढविक्काइयत्ताए उववज्जित्तए एवं चेव एवं जाव ईसीपब्भाराए उववाएयव्वो। पुढविकाइए णं भंते! सक्करप्पभाए वालुयप्पभाए पुढवीए अंतरा समोहते स० २ जे भविए सोहम्मे जाव ईसिपब्भाराए एवं एतेण कमेणं जाव तमाए अहेसत्तमाए य पुढवीए अंतरा समोहए समाणे जे भविए उववाएयव्वो । पुढविकाइए णं भंते ! सोहम्मीसाणसणंकुमारमाहिंदाण य कप्पाणं अंतरा समोहए स० २ जे भविए इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए पुढविक्काइयत्ताए उववज्जित्तए से णं भंते ! पुव्विं उववज्जित्ता पच्छा आहारेज्जा सेसं तं चेव जाव से तेणट्ठेणं जाव णिक्खेवओ । पुढविक्काइए णं भंते ! सोहम्मीसाणाणं सणंकुमारमाहिंदाण य कप्पाणं अंतरा समोहए २ जे भविए सक्करप्पभाए पुढवीए पुढविकाइयत्ताए उववज्जित्तए एवं चेव एवं जाव अहेसत्तमाए उववाएयव्वो, एवं सणंकुमारमाहिंदाणं बंभलोगस्स कप्पस्स अंतरा समोहए समोह० २ पुणरवि जाव अहे-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अथ विंशतितमे शतके षष्ठं-उद्देशक: आरभ्यते

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥७८९॥

सत्तमाए उववाएयव्वो एवं बंभलोगस्स लंतगस्स य कप्पस्स अंतरा समोहए पुणरवि जाव अहेसत्तमाए, एवं लंतगस्स महासुक्कस्स कप्पस्स य अंतरा समोहए पुणरवि जाव अहेसत्तमाए, एवं महासुक्कसहस्सारस्स य कप्पस्स अंतरा पुणरवि जाव अहेसत्तमाए, एवं सहस्सारस्स आणयपाणयकप्पाण अंतरा पुणरवि जाव अहेसत्तमाए, एवं आणयपाणयाणं आरणअच्चुयाण य कप्पाणं अंतरा पुणरवि जाव अहेसत्तमाए, एवं आरणच्चुयाणं गेवेज्जविमाणाण य अंतरा जाव अहेसत्तमाए, एवं गेवेज्जविमाणाणं अणुत्तरविमाणाण य अंतरा पुणरवि जाव अहेसत्तमाए, एवं अणुत्तरविमाणाणं ईसीपब्भाराए य पुणरवि जाव अहेसत्तमाए उववाएयव्वो १।(सू०६७१) आउक्काइए णं भंते! इमीसे रयणप्पभाए सक्करप्पभाए पुढवीए अंतरा समोहए समो० २ जे भविए सोहम्मे कप्पे आउक्काइयत्ताए उववज्जित्तए सेसं जहा पुढविकाइयस्स जाव से तेणट्ठेणं एवं पढमदोच्चाणं अंतरा समोहए जाव ईसीपब्भाराए उववाएयव्वो एवं एएणं कमेणं जाव तमाए अहेसत्तमाए य पुढवीए अंतरा समोहए समोह० २ जाव ईसीपब्भाराए उववाएयव्वो आउक्काइयत्ताए, आउयाए णं भंते! सोहम्मीसाणाणं सणंकुमारमाहिंदाण य कप्पाणं अंतरा समोहए समोहणित्ता जे भविए इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए घणोदधिवलएसु आउक्काइयत्ताए उववज्जित्तए सेसं तं चेव एवं एएहिं चेव अंतरा समोहओ जाव अहेसत्तमाए पुढवीए घणोदधिवलएसु आउक्काइयत्ताए उववाएयव्वो एवं जाव अणुत्तरविमाणाणं ईसिप-

२० शतके उद्देशः ६ पृथ्व्यादीनां पूर्वपश्चादु-त्पादाहारौ सू ६७१-६७२-६७३

॥७८९॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

ब्भाराए पुढवीए अंतरा समोहए जाव अहे सत्तमाए घणोदधिवलएसु उववाएयव्वो। (सू० ६७२) वाउक्काइए णं भंते ! इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए सक्करप्पभाए पुढवीए अंतरा समोहए समोहणित्ता जे भविए सोहम्मे कप्पे वाउक्काइयत्ताए उववज्जित्तए एवं जहा सत्तरसमसए वाउक्काइयउद्देसए तहा इहवि नवरं अंतरेसु समोहणा नेयवा सेसं तं चेव जाव अणुत्तरविमाणाणं ईसीपब्भाराए य पुढवीए अंतरा समोहए समोह० २ जे भविए घणवायतणुवाए घणवायतणुवायवलएसु वाउक्काइयत्ताए उववज्जित्तए सेसं तं चेव जाव से तेणट्ठेणं जाव उववज्जेज्जा। सेवं भंते २ त्ति ॥ (सूत्रं ६७३) ॥ २०–६ ॥

'पुढवी'त्यादि, 'एवं जहा सत्तरसमसए छट्ठुद्देसे'त्ति, अनेन च यत्सूचितं तदिदं–'पुविं वा उववज्जित्ता पच्छा आहारेज्जा पुविं वा आहारित्ता पच्छा उववज्जेज्जे'त्यादि, अस्य चायमर्थः–यो गेन्दुकसंनिभसमुद्घातगामी स पूर्वं समुत्पद्यते–तत्र गच्छतीत्यर्थः पश्चादाहारयति–शरीरप्रायोग्यान् पुद्गलान् गृह्णातीत्यर्थः अत उच्यते–'पुविं वा उववज्जित्ता पच्छा आहारेज्ज'त्ति, यः पुनरीलिकासन्निभसमुद्घातगामी स पूर्वमाहारयति–उत्पत्तिक्षेत्रे प्रदेशप्रक्षेपणेनाहारं गृह्णातीति तत्समनन्तरं च प्राक्तनशरीरस्थप्रदेशानुत्पत्तिक्षेत्रे संहरति अत उच्यते–'पुविं आहारित्ता पच्छा उववज्जेज्ज'त्ति ॥ विंशतितमशते षष्ठः ॥ २०–६ ॥ वाचनान्तराभिप्रायेण तु पृथिव्यब्वायुविषयत्वादुद्देशकत्रयमिदमतोऽष्टमः ॥ [१] ८ ॥

१ एतदभिप्रायेणैव पञ्चविंशत्यधिकैकोनविंशतिशतान्युद्देशकानां, तथा चोद्देशकगाथानुसारेण सर्वाग्रे णोद्देशकद्वयन्यूनतायां न दोषः ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र विंशतितमे शतके षष्ठं-उद्देशक: परिसमाप्त:

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्तिः

प्रत सूत्रांक [६७१-६७३]

दीप अनुक्रम [७८९--७९१]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥७९०॥

षष्ठोद्देशके पृथिव्यादीनामाहारो निरूपितः, स च कर्म्मणो बन्ध एव भवतीति सप्तमे बन्धो निरूप्यते, इत्येवंसम्बद्ध-स्यास्येदमादिसूत्रम्—

कइविहे णं भंते ! बंधे प० ?, गोयमा ! तिविहे पं० तं०–जीवप्पयोगबंधे १ अणंतरपओगबंधे २ परंपरबंधे ३ । नेरइयाणं भंते ! कइविहे प० एवं चेव, एवं जाव वेमाणियाणं । नाणावरणिज्जस्स णं भंते ! कम्मस्स कइविहे बंधे प० ?, गोयमा ! तिविहे बंधे प० तं०–जीवप्पयोगबंधे अणंतरबंधे परंपरबंधे, नेरइयाणं भंते ! नाणावरणिज्जस्स कम्मस्स कइविहे बंधे प० एवं चेव जाव वेमाणियाणं, एवं जाव अंतराइयस्स । णाणावर-णिज्जोदयस्स णं भंते ! कम्मस्स कइविहे बंधे प० ?, गोयमा ! तिविहे बंधे पं० एवं चेव एवं नेरइयाणवि एवं जाव वेमाणियाणं, एवं जाव अंतराइउदयस्स, इत्थीवेदस्स णं भंते ! कइविहे बंधे प० ?, गोयमा ! तिविहे बंधे प०, एवं चेव, असुरकुमाराणं भंते ! इत्थीवेदस्स कतिविहे बंधे प० ?, गो० ! तिविहे बंधे प० एवं चेव एवं जाव वेमाणियाणं, नवरं जस्स इत्थिवेदो अत्थि, एवं पुरिसवेदस्सवि एवं नपुंसगवे० जाव वेमाणियाणं, नवरं जस्स जो अत्थि वेदो, दंसणमोहणिज्जस्स णं भंते! कम्मस्स कइविहे बं ?, एवं चेव निरंतरं जाव वेमा०, एवं चरित्तमोहणिज्जस्सवि जाव वेमाणियाणं, एवं एएणं कमेणं ओरालियसरीरस्स जाव कम्मगसरीरस्स आहारसन्नाए जाव परिग्गहस० कण्हलेसाए जाव सुक्कलेसाए सम्मदिट्ठीए मिच्छादिट्ठीए सम्मामिच्छादि-ट्ठीए आभिणिबोहियणाणस्स जाव केवलनाणस्स मइअन्नाणस्स सुयअन्नाणस्स विभंगनाणस्स एवं आभि-

२० शतके उद्देशः ७ जीवप्रयोग-बन्धादि सू. ६७४

॥७९०॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अथ विंशतितमे शतके सप्तम-उद्देशकः आरभ्यते

णिबो० णाणविसयस्स भंते ! कइविहे बं० प० ? जाव केवलनाणविसयस्स मइअन्नाणविसयस्स सुयअन्नाणविसयस्स विभंगणाणविस० एएसिं सव्वेसिं पदाणं तिविहे बंधे प० सव्वेऽवेते चउवीसं दंडगा भा० नवरं जाणियव्वं जस्स जइ अत्थि जाव वेमाणि० भंते ! विभंगणाणविसयस्स कइवि० बंधे प०, गोयमा ! तिविहे बंधे प०–जीवप्पयोगबंधे अणंतरबंधे परंपरबंधे, सेवं भंते ! २ जाव विहरति ॥ (सूत्रं ६७४) ॥ २०८७ ॥

'कतिविहे ण'मित्यादि, 'जीवप्पओगबंधे'त्ति जीवस्य प्रयोगेण–मनःप्रभृतिव्यापारेण बन्धः–कर्म्मपुद्गलानामात्मप्रदेशेषु संश्लेषो बद्धस्पृष्टादिभावकरणं जीवप्रयोगबन्धः, 'अणंतरबंधे'त्ति येषां पुद्गलानां बद्धानां सतामनन्तरः समयो वर्त्तते तेषामनन्तरबन्ध उच्यते, येषां तु बद्धानां द्वितीयादिः समयो वर्त्तते तेषां परम्परबन्ध इति, 'णाणावरणिज्जोदयस्स'त्ति 'ज्ञानावरणीयोदयस्य' ज्ञानावरणीयोदयरूपस्य कर्म्मण उदयप्राप्तज्ञानावरणीयकर्म्मण इत्यर्थः, अस्य च बन्धो भूतभावापेक्षयेति, अथवा ज्ञानावरणीयतयोदयो यस्य कर्मणस्तत्तथा, ज्ञानावरणादिकर्म्म हि किञ्चिज्ज्ञानाद्यावारकतया विपाकतो वेद्यते किञ्चित्प्रदेशत एवेत्युदयेन विशेषितं कर्म्म, अथवा ज्ञानावरणीयोदये यद्बध्यते वेद्यते वा तज्ज्ञानावरणीयोदयमेव तस्येति, एवमन्यत्रापि । 'सम्मद्दिट्ठीए'इत्यादि, ननु 'सम्मद्दिट्ठी'त्यादौ कथं बन्धो दृष्टिज्ञानाज्ञानानामपौद्गलिकत्वात् ?, अत्रोच्यते, नेह बन्धशब्देन कर्म्मपुद्गलानां बन्धो विवक्षितः किन्तु सम्बन्धमात्रं, तच्च जीवस्य दृष्ट्यादिभिर्द्धर्मैः सहास्त्येव, जीवप्रयोगबन्धादिव्यपदेश्यत्वं च तस्य जीववीर्यप्रभवत्वात् अत एवाभिनिबोधिकज्ञानविषयस्येत्याद्यपि निरवद्यं ज्ञानस्य ज्ञेयेन सह सम्बन्धविवक्षणादिति, इह सङ्ग्रहगाथे–"जीवप्पओगबंधे अणंतरपरंपरे च बोद्धव्वे ८ । पगडी ८ उदए ८ वेए ३

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [६७४]

दीप अनुक्रम [७९२]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥७९१॥

दंसणमोहे चरित्ते य ॥ १ ॥ ओरालियवेउविय आहारगतेयकम्मए चेव । सन्ना ४ लेस्सा ६ दिट्ठी ३ णाणा ५ णाणेसु ३ तविसए ८ ॥ २ ॥" ॥ विंशतितमशते सप्तमः ॥ २०–७ ॥

सप्तमे बन्ध उक्तस्तद्विभागश्च कर्म्मभूमिषु तीर्थकरैः प्ररूप्यत इति कर्म्मभूम्यादिकमष्टमे प्ररूप्यते इत्येवंसम्बद्धस्यास्येदमादिसूत्रम्—

कइ णं भंते ! कम्मभूमीओ प० ?, गोयमा ! पन्नरस कम्मभूमीओ प० तं०–पंच भरहाइं पंच एरवयाइं पंच महाविदेहाइं, कति णं भंते ! अकम्मभूमीओ प० ?, गो० ! तीसं अकम्मभूमीओ प० तं०–पंच हेमवयाइं पंच हेरन्नवयाइं पंच हरिवासाइं पंच रम्मगवासाइं पंच देवकुराइं पंच उत्तरकुराइं, एयासु णं भंते ! तीसासु अकम्मभूमीसु अत्थि उस्सप्पिणीति वा ओसप्पिणीति वा ?, णो तिणट्ठे समट्ठे, एएसु णं भंते ! पंचसु भरहेसु पंचसु एरवएसु अत्थि उस्सप्पिणीति वा ओसप्पिणीति वा ?, हंता अत्थि, एएसुणं पंचसु महाविदेहेसु०, णेवत्थि उस्सप्पिणी नेवत्थि ओसप्पिणी अवट्ठिए णं तत्थ काले प० समणाउसो ! । (सूत्रं ६७५)

एएसु णं भंते ! पंचसु महाविदेहेसु अरिहंता भगवंतो पंचमहव्वइयं सपडिक्कमणं धम्मं पन्नवयंति ?, णो तिणट्ठे समट्ठे, एएसु णं भंते ! पंचसु भरहेसु पंचसु एरवएसु पुरच्छिमपच्छिमगा दुवे अरिहंता भगवंतो पंचमहव्वइयं पंचाणुव्वइयं सपडिक्कमणं धम्मं पन्नवयंति अवसेसा णं अरिहंता भगवंतो चाउज्जामं धम्मं पन्न-

२० शतके उद्देशः ८ कर्माकर्मभूमिषुकालः व्रतानिजिनान्तरं पूर्वगतं तीर्थप्रवचनं सू ६७५-६८२

॥७९१॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र विंशतितमे शतके सप्तम-उद्देशक: परिसमाप्त:

अथ विंशतितमे शतके अष्टम-उद्देशक: आरभ्यते

कर्मभूमि, अकर्मभूमि, तयो: काळ, व्रत, जिन-अंतर इत्यादि:

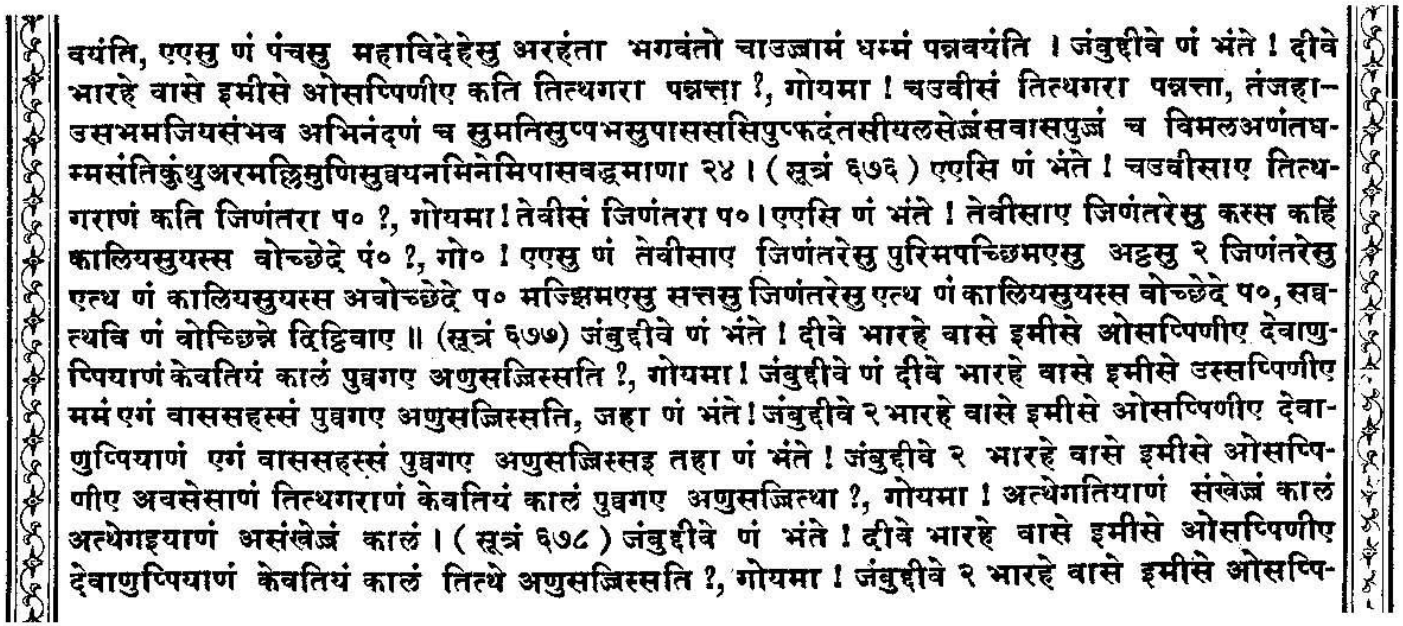

वयंति, एएसु णं पंचसु महाविदेहेसु अरहंता भगवंतो चाउज्जामं धम्मं पन्नवयंति । जंबुद्दीवे णं भंते ! दीवे भारहे वासे इमीसे ओसप्पिणीए कति तित्थगरा पन्नत्ता ?, गोयमा ! चउवीसं तित्थगरा पन्नत्ता, तंजहा– उसभमजियसंभव अभिनंदणं च सुमनिसुप्पभसुपाससंसिपुप्फदंतसीयलसेज्जंसवासपुज्जं च विमलअणंतधम्मसंतिकुंथुअरमल्लिमुणिसुव्वयनमिनेमिपासवद्धमाणा २४ । (सूत्रं ६७६) एएसि णं भंते ! चउवीसाए तित्थगराणं कति जिणंतरा प० ?, गोयमा ! तेवीसं जिणंतरा प० । एएसि णं भंते ! तेवीसाए जिणंतरेसु कस्स कहिं कालियसुयस्स वोच्छेदे पं० ?, गो० ! एएसु णं तेवीसाए जिणंतरेसु पुरिमपच्छिमएसु अट्ठसु २ जिणंतरेसु एत्थ णं कालियसुयस्स अवोच्छेदे प० मज्झिमएसु सत्तसु जिणंतरेसु एत्थ णं कालियसुयस्स वोच्छेदे प०, सव्वत्थवि णं वोच्छिन्ने दिट्ठिवाए ॥ (सूत्रं ६७७) जंबुद्दीवे णं भंते ! दीवे भारहे वासे इमीसे ओसप्पिणीए देवाणुप्पियाणं केवतियं कालं पुव्वगए अणुसज्जिस्सति ?, गोयमा ! जंबुद्दीवे णं दीवे भारहे वासे इमीसे उस्सप्पिणीए ममं एगं वाससहस्सं पुव्वगए अणुसज्जिस्सति, जहा णं भंते ! जंबुद्दीवे २ भारहे वासे इमीसे ओसप्पिणीए देवाणुप्पियाणं एगं वाससहस्सं पुव्वगए अणुसज्जिस्सइ तहा णं भंते ! जंबुद्दीवे २ भारहे वासे इमीसे ओसप्पिणीए अवसेसाणं तित्थगराणं केवतियं कालं पुव्वगए अणुसज्जित्था ?, गोयमा ! अत्थेगतियाणं संखेज्जं कालं अत्थेगइयाणं असंखेज्जं कालं । (सूत्रं ६७८) जंबुद्दीवे णं भंते ! दीवे भारहे वासे इमीसे ओसप्पिणीए देवाणुप्पियाणं केवतियं कालं तित्थे अणुसज्जिस्सति ?, गोयमा ! जंबुद्दीवे २ भारहे वासे इमीसे ओसप्पि-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	कर्मभूमि, अकर्मभूमि, तयो: काळ, व्रत, जिन-अंतर इत्यादि:

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [६७५--६८२]

दीप अनुक्रम [७९३-८००]

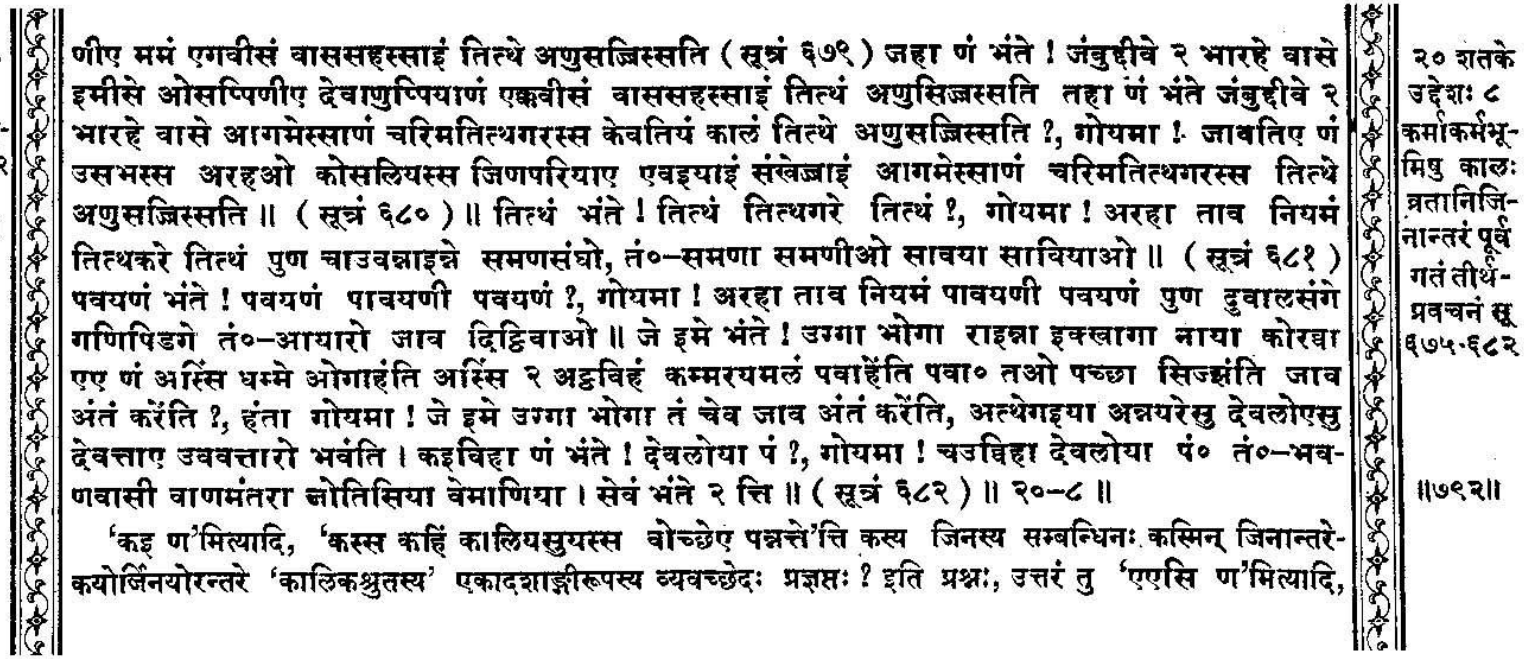

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥७९२॥

णीए मम एगवीसं वाससहस्साइं तित्थे अणुसज्जिस्सति (सूत्रं ६७९) जहा णं भंते ! जंबुद्दीवे २ भारहे वासे इमीसे ओसप्पिणीए देवाणुप्पियाणं एक्कवीसं वाससहस्साइं तित्थं अणुसिज्जस्सति तहा णं भंते जंबुद्दीवे २ भारहे वासे आगमेस्साणं चरिमतित्थगरस्स केवतियं कालं तित्थे अणुसज्जिस्सति ?, गोयमा ! जावतिए णं उसभस्स अरहओ कोसलियस्स जिणपरियाए एवइयाइं संखेज्जाइं आगमेस्साणं चरिमतित्थगरस्स तित्थे अणुसज्जिस्सति ॥ (सूत्रं ६८०) ॥ तित्थं भंते ! तित्थं तित्थगरे तित्थं ?, गोयमा ! अरहा ताव नियमं तित्थकरे तित्थं पुण चाउवन्नाइन्ने समणसंघो, तं०–समणा समणीओ सावया साविआओ ॥ (सूत्रं ६८१) पवयणं भंते ! पवयणं पावयणी पवयणं ?, गोयमा ! अरहा ताव नियमं पावयणी पवयणं पुण दुवालसंगे गणिपिडगे तं०–आयारो जाव दिट्ठिवाओ ॥ जे इमे भंते ! उग्गा भोगा राइन्ना इक्खागा नाया कोरव्वा एए णं अस्सिं धम्मे ओगाहंति अस्सिं २ अट्ठविहं कम्मरयमलं पवाहेंति पवा० तओ पच्छा सिज्झंति जाव अंतं करेंति ?, हंता गोयमा ! जे इमे उग्गा भोगा तं चेव जाव अंतं करेंति, अत्थेगइया अन्नयरेसु देवलोएसु देवत्ताए उववत्तारो भवंति। कइविहा णं भंते ! देवलोया पं ?, गोयमा ! चउविहा देवलोया पं० तं०–भवणवासी वाणमंतरा जोतिसिया वेमाणिया। सेवं भंते २ त्ति ॥ (सूत्रं ६८२) ॥ २०–८ ॥

'कइ ण'मित्यादि, 'कस्स कहिं कालियसुयस्स वोच्छेए पन्नत्ते'त्ति कस्य जिनस्य सम्बन्धिनः कस्मिन् जिनान्तरे-कयोर्जिनयोरन्तरे 'कालिकश्रुतस्य' एकादशाङ्गीरूपस्य व्यवच्छेदः प्रज्ञप्तः ? इति प्रश्नः, उत्तरं तु 'एएसि ण'मित्यादि,

२० शतके उद्देशः ८ कर्माकर्मभू-मिषु कालः व्रतानिजि-नान्तरं पूर्वं गतं तीर्थ-प्रवचनं सू ६७५-६८२

॥७९२॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कर्मभूमि, अकर्मभूमि, तयो: काळ, व्रत, जिन-अंतर इत्यादि:

इह च कालिकस्य व्यवच्छेदेऽपि पृष्टे यदपृष्टस्याव्यवच्छेदस्याभिधानं तद्विपक्षज्ञापने सति विवक्षितार्थबोधनं सुकरं भवतीतिकृत्वा कृतमिति, 'मज्झिमएसु सत्तसु'त्ति अनेन 'कस्स कहिं' इत्यस्योत्तरमवसेयं, तथाहि 'मध्यमेषु सप्तसु' इत्युक्ते सुविधिजिनतीर्थस्य सुविधिशीतलजिनयोरन्तरे व्यवच्छेदो बभूव, तद्व्यवच्छेदकालश्च पल्योपमचतुर्भागः, एवमन्येऽपि षड् जिनाः षट् च जिनान्तराणि वाच्यानि, केवलं व्यवच्छेदकालः सप्तस्वप्येवमवसेयः—"चउभागो १ चउभागो २ तिन्नि य चउभाग ३ पलियमेगं च ४ । तिन्नेव य चउभागा ५ चउत्थभागो य ६ चउभागो ७ ॥१॥" इति, [चतुर्थभागश्चतुर्थभागस्त्रयश्चतुर्भागाः पल्यमेकं त्रयश्चतुर्भागाश्चतुर्भागश्चतुर्थभागस्तीर्थव्युच्छेदः ॥ १ ॥] 'एत्थ णं'ति 'एतेषु' प्रज्ञापकेनोपदर्श्यमानेषु जिनान्तरेषु कालिकश्रुतस्य व्यवच्छेदः प्रज्ञप्तः, दृष्टिवादापेक्षया त्वाह—'सव्वत्थवि णं वोच्छिन्ने दिट्ठिवाए'त्ति 'सर्वत्रापि' सर्वेष्वपि जिनान्तरेषु न केवलं सप्तस्वेव क्वचित् कियन्तमपि कालं व्यवच्छिन्नो दृष्टिवाद इति ॥ व्यवच्छेदाधिकारादेवेदमाह—'जंबुद्दीवे ण'मित्यादि, 'देवाणुप्पियाणं'ति युष्माकं सम्बन्धि 'अत्थेगइयाणं संखेज्जं कालं'ति पश्चानुपूर्व्या पार्श्वनाथादीनां सङ्ख्यातं कालं 'अत्थेगइयाणं असंखेज्जं कालं'ति ऋषभादीनाम् । 'आगमेस्साणं'ति आगमिष्यतां–भविष्यतां महापद्मादीनां जिनानां 'कोसलियस्स'त्ति कोशलदेशे जातस्य 'जिणपरियाए'त्ति केवलिपर्यायः स च वर्षसहस्रन्यूनं पूर्वलक्षमिति ॥ तीर्थप्रस्तावादिदमाह—'तित्थं भंते !' इत्यादि, 'तीर्थं' सङ्घरूपं भदन्त ! 'तित्थं'ति तीर्थशब्दवाच्यं उत तीर्थकरः 'तीर्थं' तीर्थशब्दवाच्यः ? इति प्रश्नः, अत्रोत्तरम्—'अर्हन्' तीर्थकरस्तावत् 'तीर्थङ्करः' तीर्थप्रवर्त्तयिता न तु तीर्थं, तीर्थं पुनः 'चाउवन्नाइन्ने समणसंघे'त्ति चत्वारो वर्णा यत्र स चतुर्वर्णः स चासावाकीर्णश्च–

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [६७५--६८२]

दीप अनुक्रम [७९३-८००]

व्याख्या-प्रशस्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥७९३॥

क्षमादिगुणैर्व्याप्तश्चतुर्वर्णाकीर्णः, क्वचित् 'चाउवन्ने समणसंघे'त्ति पठ्यते, तच्च व्यक्तमेवेति ॥ उक्तानुसारेणैवाह—'पवयणं भंते !' इत्यादि, प्रकर्षेणोच्यतेऽभिधेयमनेनेति प्रवचनम्—आगमस्तद् भदन्त ! 'प्रवचनं' प्रवचनशब्दवाच्यं काक्काऽध्येतव्यम् उत 'प्रवचनी' प्रवचनप्रणेता जिनः प्रवचनं, दीर्घता च प्राकृतत्वात् ॥ प्राक् श्रमणादिसङ्घ इत्युक्तं श्रमणाश्चोग्रादिकुलोत्पन्ना भवन्ति ते च प्रायः सिद्ध्यन्तीति दर्शयन्नाह—'जे इमे'इत्यादि, 'अस्सिं धम्मे'त्ति अस्मिन्नार्हते धर्मे इति ॥ विंशतितमशतेऽष्टमः ॥ २०–८ ॥

अष्टमोद्देशकस्यान्ते देवा उक्तास्ते चाकाशचारिण इत्याकाशचारिद्रव्यदेवा नवमे प्ररूप्यन्ते इत्येवंसम्बद्धस्यास्येदमादिसूत्रम्—

कइविहा णं भंते ! चारणा पन्नत्ता ?, गोयमा ! दुविहा चारणा पं०तं०—विज्जाचारणा य जंघाचारणा य, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ विज्जाचारणा वि० ?, गोयमा ! तस्स णं छट्ठंछट्ठेणं अनिक्खित्तेणं तवोकम्मेणं विज्जाए उत्तरगुणलद्धिं खममाणस्स विज्जाचारणलद्धीनामं लद्धी समुप्पज्जइ, से तेणट्ठेणं जाव विज्जाचार०, विज्जाचारणस्स णं भंते ! कहं सीहा गती कहं सीहे गतिविसए प० ?, गोयमा ! अयन्नं जंबुद्दीवे २ जाव किंचिविसेसाहिए परिक्खेवेणं देवे णं महड्ढीए जाव महेसक्खे जाव इणामेवत्तिकट्टु केवलकप्पं जंबुद्दीवं २ तिहिं अच्छरानिवाएहिं तिक्खुत्तो अणुपरियट्टित्ता णं हव्वमागच्छेज्जा, विज्जाचारणस्स णं गोयमा ! तहा

२० शतके उद्देशः ९ जङ्घाविद्या चारणाः सू ६८३-६८४

॥७९३॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र विंशतितमे शतके अष्टम-उद्देशक: परिसमाप्त:

अथ विंशतितमे शतके नवम-उद्देशक: आरभ्यते

चारण, तस्याभेदा:, तेषाम सामर्थ्य

सीहा गती तहा सीहे गतिविसए प० । विज्जाचारणस्स णं भंते ! तिरियं केवतियं गतिविसए प० ?, गो० ! से णं इओ एगेणं उप्पाएणं माणुसुत्तरे पव्वए समोसरणं करेति माणु० २ तहिं चेइयाइं वंदति तहिं २ बितिएणं उप्पाएणं नंदीसरवरे दीवे समोसरणं करेति नंदीस० २ तहिं चेइयाइं वंदति तहिं० २ तओ पडिनियत्तति २ इहमागच्छइ २ इह चेइयाइं वंदति । विज्जाचारणस्स णं गो० ! तिरियं एवतिए गतिविसए प०, विज्जाचारणस्स णं भंते ! उड्ढं केवतिए गतिविसए प० ?, गोयमा ! से णं इओ एगेणं उप्पाएणं नंदणवणे समोसरणं करेइ नंद० २ तहिं चेइयाइं वंदति तहिं० २ बितिएणं उप्पाएणं पंडगवणे समोसरणं करेइ पंडग० २ तहिं चेइयाइं वंदइ तहिं चेइयाइं वं० २ तओ पडिनियत्तति तओ० २ इहमागच्छइ इहमा० २ इहं चेइयाइं वं० २ विज्जाचारणस्स णं गोयमा ! उड्ढं एवतिए गतिविसए प०, से णं तस्स ठाणस्स अणालोइयपडिक्कंते कालं करेति नत्थि तस्स आराहणा, से णं तस्स ठाणस्स आलोइयपडिक्कंते कालं करेति अत्थि तस्स आराहणा (सूत्रं ६८३) । से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ जंघाचारणे २ ?, गोयमा ! तस्स णं अट्ठमंअट्ठमेणं अनिक्खित्तेणं तवोकम्मेणं अप्पाणं भावेमाणस्स जंघाचारणलद्धी नाम लद्धी समुप्पज्जति, से तेणट्ठेणं जाव जंघाचारणे २, जंघाचारणस्स णं भंते ! कहं सीहा गति कहं सीहे गतिविसए प० ?, गोयमा ! अयन्नं जंबुद्दीवे २ एवं जहेव विज्जाचारणस्स नवरं तिसत्तखुत्तो अणुपरियट्टित्ताणं हव्वमागच्छेज्जा जंघाचारणस्स णं गोयमा ! तहा सीहा गती तहा सीहे गतिविसए प० सेसं तं चेव । जंघाचारणस्स णं भंते ! तिरियं केव-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

	चारण, तस्याभेदा:, तेषाम सामर्थ्यं

प्रत सूत्रांक [६८३--६८४]

दीप अनुक्रम [८०१-८०२]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥७९४॥

तिए गतिविसए प० ?, गोयमा ! से णं इओ एगेणं उप्पाएणं रुयगवरे दीवे समोसरणं करेति रुयग० २ तहिं चेइयाइं वंदइ तहिं चे० २ तओ पडिनियत्तमाणे बितिएणं उप्पाएणं नंदीसरवरदीवे समोसरणं करेति नंदी० २ तहिं चेइयाइं वंदइ तहिं चेइयाइं वं २ इहमागच्छइ २ इहं चेइयाइं वंदइ, जंघाचारणस्स णं गोयमा ! तिरियं एवतिए गइविसए पं० । जंघाचारणस्स णं भंते ! उड्ढं केवतिए गतिविसए पन्नत्ते ?, गोयमा ! से णं इओ एगेणं उप्पाएणं पंडगवणे समोसरणं करेति समो० २ तहिं चेइयाइं वंदति तहिं चे० २ ततो पडिनियत्तमाणे बितिएणं उप्पाएणं नंदणवणे समोसरणं करेति नंदणवणे २ तहिं चेइयाइं वंदति तहिं २ इह आगच्छइ २ इह चेइयाइं वंदति, जंघाचारणस्स णं गोयमा ! उड्ढं एवतिए गतिविसए पं०, से णं तस्स ठाणस्स अणालोइयपडिक्कंते कालं करेइ नत्थि तस्स आराहणा से णं तस्स ठाणस्स आलोइयपडिक्कंते कालं करेति अत्थि तस्स आराहणा, सेवं भंते ! सेवं भंते ! जाव विहरइ ॥ (सूत्रं ६८४) ॥ २०–९ ॥

'कइ ण'मित्यादि, तत्र चरणं–गमनमतिशयवदाकाशे एषामस्तीति चारणाः 'विज्जाचारण'त्ति विद्या–श्रुतं तच्च पूर्वगतं तत्कृतोपकाराश्चारणा विद्याचारणाः, 'जंघाचारण'त्ति जङ्घाव्यापारकृतोपकाराश्चारणा जङ्घाचारणाः, इहार्थे गाथाः—"अइसयचरणसमत्था जंघाविज्जाहिं चारणा मुणओ । जंघाहिं जाइ पढमो निस्सं काउं रविकरेवि ॥ १ ॥ एगुप्पाएण तओ रुयगवरंमि उ तओ पडिनियत्तो । बीएणं नंदीसरमिहं तओ एइ तइएणं ॥ २ ॥ पढमेणं पंडगवणं बीउप्पाएण णंदणं एइ । तइउप्पाएण तओ इह जंघाचारणो एइ ॥ ३ ॥ पढमेण माणुसोत्तरनगं स नंदिस्सरं बिईएणं । एइ तओ तइएणं कयचे-

२० शतके उद्देशः ९ जङ्घाविद्या चारणाः सू ६८३-६८४

॥७९४॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

चारण, तस्याभेदाः, तेषाम सामर्थ्य

इयवंदणो इहयं ॥ ४ ॥ पढमेण नंदणवणं बीउप्पाएण पंडगवणंमि । एइ इहं तइएणं जो विज्जाचारणो होइ ॥ ५ ॥" [अतिशयेन चरणसमर्था जङ्घाविद्याभ्यां चारणा मुनयः । जङ्घाभ्यां याति प्रथमो निश्रीकृत्य रविकरानपि ॥ १ ॥ एको-त्पादेन ततो रुचकवरं ततः प्रतिनिवृत्तो द्वितीयेन नन्दीश्वरमिह तत आगच्छति तृतीयेन ॥ २ ॥ प्रथमेन पण्डकवनं द्विती-योत्पादेन नन्दनमेति तृतीयोत्पादेन तत इहायाति जङ्घाचारणः ॥ ३ ॥ प्रथमेन मानुषोत्तरनगं द्वितीयेन नन्दीश्वरं स एति । ततस्तृतीयेनेहैति कृतचैत्यवन्दनः ॥ ४ ॥ प्रथमेन नन्दनवनं द्वितीयोत्पादेन पण्डकवनम् । एतीह तृतीयेन यो विद्याचारणो भवति ॥ ५ ॥] इति । 'तस्स णं'ति यो विद्याचारणो भविष्यति तस्य षष्ठंषष्ठेन तपःकर्म्मणा विद्यया च–पूर्वगतश्रुतविशेषरूपया करणभूतया 'उत्तरगुणलद्धिं'ति उत्तरगुणाः–पिण्डविशुद्ध्यादयस्तेषु चेह प्रक्रमात्तपो गृह्यते ततश्च 'उत्तरगुणलब्धिं' तपोलब्धिं 'क्षममाणस्य' अधिसहमानस्य तपः कुर्वत इत्यर्थः । 'कहं सीहा गइ'त्ति कीदृशी शीघ्रा 'गतिः' गमनक्रिया 'कहं सीहे गइविसए'त्ति कीदृशः शीघ्रो गतिविषयः, शीघ्रत्वेन तद्विषयोऽप्युपचारात् शीघ्र उक्तः, 'गतिविषयः' गतिगोचरः ?, गमनाभावेऽपि शीघ्रगतिगोचरभूतं क्षेत्रं किम् ? इत्यर्थः, 'अयन्न'मित्यादि, अयं–जम्बूद्वीप एवंभूतो भवति ततश्च 'देवे ण'मित्यादि 'हवमागच्छेज्जा' इत्यत्र यथा शीघ्राऽस्य देवस्य गतिरित्ययं वाक्य-शेषो दृश्यः, 'से णं तस्स ठाणस्से'त्यादि, अयमत्र भावार्थः–लब्ध्युपजीवनं किल प्रमादस्तत्र चासेविते अनालोचिते न भवति चारित्रस्याराधना, तद्विराधकश्च न लभते चारित्राराधनाफलमिति, यच्चेहोक्तं विद्याचारणस्य गमनमुत्पादद्वयेन आगमनं चैकेन जङ्घाचारणस्य तु गमनमेकेनागमनं च द्वयेनेति तल्लब्धिस्वभावात्, अन्ये त्वाहुः–विद्याचारणस्यागमनकाले

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य आगमोद्धारकश्री संशोधित: मुनि दीपरत्नसागरेण संकलित..आगमसूत्र- [०५], अंगसूत्र- [०५] "भगवती" मूलं एवं अभयदेवसूरि-रचिता वृत्ति:

प्रत सूत्रांक [६८३--६८४]

दीप अनुक्रम [८०१-८०२]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥७९५॥

विद्याऽभ्यस्ततरा भवतीत्येकेनागमनं गमने तु न तथेति द्वाभ्यां, जङ्घाचारणस्य तु लब्धिरुपजीव्यमानाऽल्पसामर्थ्या भवती-त्यागमनं द्वाभ्यां गमनं त्वेकेनैवेति ॥ विंशतितमशते नवमः ॥ २०–९ ॥

नवमोद्देशके चारणा उक्तास्ते च सोपक्रमायुष इतरे च संभवन्तीति दशमे सोपक्रमादितया जीवा निरूप्यन्त इत्ये-वंसम्बन्धस्यास्येदमादिसूत्रम्—

जीवा णं भंते ! किं सोवक्कमाउया निरुवक्कमाउया ?, गोयमा ! जीवा सोवक्कमाउयावि निरुवक्कमाउयावि, नेरइया णं पुच्छा, गोयमा ! नेरइया नो सोवक्कमाउया निरुवक्कमाउया, एवं जाव थ०, पुढविक्काइया जहा जीवा, एवं जाव मणुस्सा, वाणमं० जोइसि० वेमा० जहा नेरइया ॥ (सूत्रं ६८५) ॥

'जीवा ण'मित्यादि, 'सोवक्कमाउय'त्ति उपक्रमणमुपक्रमः–अप्राप्तकालस्यायुषो निर्जरणं तेन सह यत्तत्सोपक्रमं तदेवं-विधमायुर्येषां ते तथा तद्विपरीतास्तु निरुपक्रमायुषः, इह गाथे—"देवा नेरइयावि य असंखवासाउया य तिरिमणुया । उत्तमपुरिसा य तहा चरिमसरीरा निरुवकमा ॥ १ ॥ सेसा संसारत्था हवेज्ज सोवक्कमाउ इयरे य । सोवक्कमनिरुवक्कमभेओ भणिओ समासेणं ॥ २ ॥" [देवा नैरयिका अपि चासङ्ख्यवर्षायुषश्च तिर्यग्मनुजा उत्तमपुरुषाश्च तथा चरमशरीराश्च निरुपक्रमाः ॥ १ ॥ शेषाः संसारस्था भवेयुः सोपक्रमायुष इतरे च सोपक्रमनिरुपक्रमभेदो भणितः समासेन ॥ २ ॥] उपक्रमाधिकारादेवेदमाह—

२० शतके उद्देशः १० सोपक्रमेत-रा आत्मो-पक्रमोत्पा-दादि सू ६८५-६८६

॥७९५॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अत्र विंशतितमे शतके नवम-उद्देशक: परिसमाप्त:

अथ विंशतितमे शतके दशम-उद्देशक: आरभ्यते

नेरइया णं भंते ! किं आओवक्कमेणं उववज्जंति परोवक्कमेणं उवव० निरुवक्कमेणं उववज्जंति ?, गोयमा ! आओवक्कमेणवि उवव० परोवक्कमेणवि उववज्जंति निरुवक्कमेणवि उववज्जंति एवं जाव वेमाणियाणं । नेरइया णं भंते ! किं आओवक्कमेणं उववट्टंति परोवक्कमेणं उववट्टंति निरुवक्कमेणं उववट्टंति ?, गोयमा ! नो आओवक्कमेणं उववट्टंति नो परोवक्कमेणं उवव० निरुवक्कमेणं उववट्टंति, एवं जाव थणियकुमारा, पुढविकाइया जाव मणुस्सा तिसु उव्व०, सेसा जहा नेरइ० नवरं जोइसियवेमाणिया चयंति ॥ नेरइया णं भंते ! किं आइड्ढीए उवव० परिड्ढीए उवव० ?, गोयमा ! आइड्ढीए उवव० नो परिड्ढीए उव० एवं जाव वेमाणियाणं । नेरइया णं भंते ! किं आइड्ढीए उववट्टइ परिड्ढीए उववट्टइ ?, गोयमा ! आइड्ढीए उव्व० नो परिड्ढीए उव० एवं जाव वेमाणि०, नवरं जोइसियवेमाणि० चयंतीति अभिलावो । नेर० भंते ! किं आयकम्मुणा उववज्जंति ? गो० ! आयकम्मुणा उवव० परकम्मुणा उवव० ? गो ! आयकम्मुणा उवव० नो परकम्मुणा उवव० एवं जाव वेमाणि०, एवं उव्वट्टणादंडओवि । नेरइया णं भंते ! किं आयप्पओगेणं उववज्जइ परप्पओगेणं उवव० ?, गोयमा ! आयप्पओगेणं उव० नो परप्पयोगेणं उ० एवं जाव वेमाणि०, एवं उव्वट्टणादंडओवि (सूत्रं ६८६) ॥

'नेरइए'इत्यादि, 'आओवक्कमेणं उववज्जंति'त्ति आत्मना–स्वयमेवायुष उपक्रम आत्मोपक्रमस्तेन मृत्वेति शेषः उत्पद्यन्ते नारकाः यथा श्रेणिकः, 'परोपक्रमेण' परकृतमरणेन यथा कूणिकः, 'निरुपक्रमेण' उपक्रमणाभावेन यथा कालशौकरिकः यतः सोपक्रमायुष्का इतरे च तत्रोत्पद्यन्त इति उत्पादोद्वर्त्तनाऽधिकारादिदमाह— 'नेरइए'इत्यादि,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २ ॥७९६॥

'आइड्ढीए'त्ति नेश्वरादिप्रभावेणेत्यर्थः 'आयकम्मुणं'त्ति आत्मकृतकर्म्मणा–ज्ञानावरणादिना 'आयप्पओगेणं'ति आत्मव्यापारेण ॥ उत्पादाधिकारादिदमाह—

नेरइया णं भंते ! किं कतिसंचिया अकतिसंचिया अवत्तगसंचिया ?, गोयमा ! नेरइया कतिसंचियावि अकतिसंचियावि अवत्तगसंचियावि, से केण० जाव अवत्तगसंचया ?, गोयमा ! जे णं नेरइया संखेज्जएणं पवेसणएणं पविसंति ते णं नेरइया कतिसंचिया जे णं नेरइया असंखेज्जएणं पवेसएणं पविसंति ते णं नेरइया अकतिसंचिया, जे णं नेरइया एक्कएणं पवेसएणं पविसंति ते णं नेरइया अवत्तगसंचिया, से तेणट्ठेणं गोयमा ! जाव अवत्तगसंचियावि, एवं जाव थणिय०, पुढविक्काइयाणं पुच्छा, गोयमा ! पुढविकाइया नो कइसंचिया अकइसंचिया नो अवत्तगसं०, से केणट्ठेणं एवं वुच्चइ जाव नो अवत्तगसंचिया ?, गोयमा ! पुढविकाइया असंखेज्जएणं पवेसणएणं पविसंति से तेणट्ठेणं जाव नो अवत्तगसंचया, एवं जाव वणस्स०, बेंदिया जाव वेमाणि० जहा नेरइया, सिद्धा णं पुच्छा, गोयमा ! सिद्धा कतिसंचिया नो अकतिसंचया अवत्तगसंचियावि, से केणट्ठे० जाव अवत्तगसंचियावि ?, गो० ! जे णं सिद्धा संखेज्जएणं पवेसणएणं पविसंति ते णं सिद्धा कतिसंचिया जे णं सिद्धा एक्कएणं पवेसणएणं पविसंति ते णं सिद्धा अवत्तगसंचिया, से तेणट्ठेणं जाव अवत्तगसंचियावि ॥ एएसि णं भंते ! नेरइ० कतिसंचियाणं अकतिसंचियाणं अवत्तगसंचियाण य कयरे २ जाव विसेसा० ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा नेरइया अवत्तगसंचिया कतिसंचिया संखेज्जगुणा अकतिसंचिया

२० शतके उद्देशः १० कतिसंचितादि सू ६८७

॥७९६॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

असं० एवं एगिंदियवज्जाणं जाव वेमाणियाणं अप्पाबहुगं, एगिंदियाणं नत्थि अप्पाबहुगं । एएसि णं भंते ! सिद्धाणं कतिसंचियाणं अवत्तगसंचियाण य कयरे २ जाव विसेसाहिया वा ?, गो० ! सव्वत्थोवा सिद्धा कतिसंचिया अवत्तगसंचिया संखेज्जगुणा ॥ नेरइयाणं भंते ! किं छक्कसमज्जिया १ नोछक्कसमज्जिया २ छक्केण य नोछक्केण य समज्जिया ३ छक्केहि य समज्जिया ४ छक्केहि य नोछक्केण य समज्जिया ५ ?, गोयमा ! नेरइया छक्कसमज्जियावि १ नोछक्कसमज्जियावि २ छक्केण य नोछक्केण य समज्जियावि ३ छक्केहि य समज्जियावि ४ छक्केहि य नोछक्केण य समज्जियावि ५, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ नेरइया छक्कसमज्जियावि जाव छक्केहि य नोछक्केण य समज्जियावि ?, गोयमा ! जे णं नेरइया छक्कएणं पवेसणएणं पविसंति ते णं नेरइया छक्कसमज्जिया १ जे णं नेरइया जहन्नेणं एक्केण वा दोहिं वा तीहिं वा उक्कोसेणं पंचएणं पवेसणएणं पविसंति ते णं नेरइया नोछक्कसमज्जिया २ जे णं नेरइया एगेणं छक्कएणं अन्नेण य जहन्नेणं एक्केण वा दोहिं वा तीहिं वा उक्कोसेणं पंचएणं पवेसणएणं पविसंति ते णं नेरइया छक्केण य नोछक्केण य समज्जिया ३ जे णं नेरइया णेगेहिं छक्केहिं पवेसणएणं पविसंति ते णं नेरइया छक्केहिं समज्जिया ४ जे णं नेरइया णेगेहिं छक्केहिं अण्णेण य जहन्नेणं एक्केण वा दोहिं वा तीहिं वा उक्कोसेणं पंचएणं पवेसणएणं पविसंति ते णं नेरइया छक्केहि य नोछक्केण य समज्जिया ५ से तेणट्ठेणं तं चेव जाव समज्जियावि, एवं जाव थणियकुमारा । पुढविकाइयाणं पुच्छा, गोयमा ! पुढविकाइया नो छक्कसमज्जिया १ नो नोछक्कसमज्जिया २ नोछक्केण य समज्जिया ३ छक्केहिं समज्जि-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

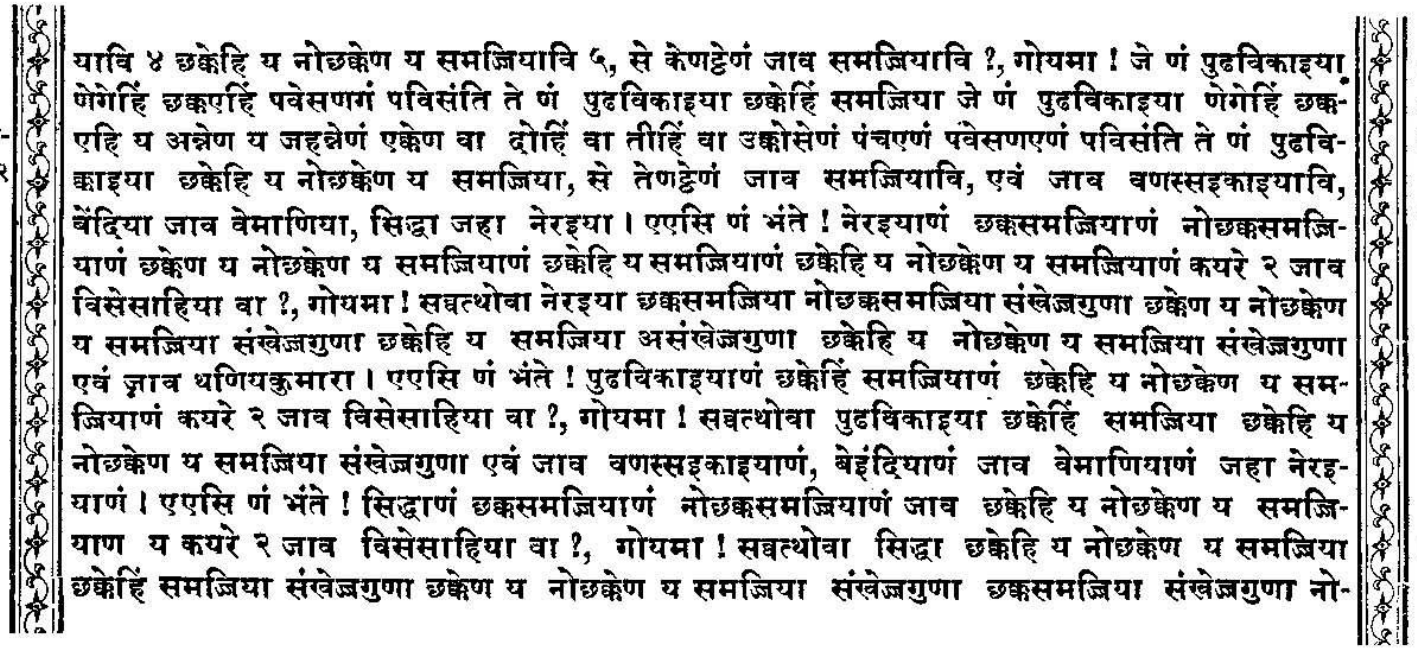

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥७९७॥

यावि ४ छक्केहि य नोछक्केण य समज्जियावि ५, से केणट्ठेणं जाव समज्जियावि ?, गोयमा ! जे णं पुढविकाइया णेगेहिं छक्कएहिं पवेसणगं पविसंति ते णं पुढविकाइया छक्केहिं समज्जिया जे णं पुढविकाइया णेगेहिं छक्कएहि य अन्नेण य जहन्नेणं एक्केण वा दोहिं वा तीहिं वा उक्कोसेणं पंचएणं पवेसणएणं पविसंति ते णं पुढविक्काइया छक्केहि य नोछक्केण य समज्जिया, से तेणट्ठेणं जाव समज्जियावि, एवं जाव वणस्सइकाइयावि, बेंदिया जाव वेमाणिया, सिद्धा जहा नेरइया । एएसि णं भंते ! नेरइयाणं छक्कसमज्जियाणं नोछक्कसमज्जियाणं छक्केण य नोछक्केण य समज्जियाणं छक्केहि य समज्जियाणं छक्केहि य नोछक्केण य समज्जियाणं कयरे २ जाव विसेसाहिया वा ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा नेरइया छक्कसमज्जिया नोछक्कसमज्जिया संखेज्जगुणा छक्केण य नोछक्केण य समज्जिया संखेज्जगुणा छक्केहि य समज्जिया असंखेज्जगुणा छक्केहि य नोछक्केण य समज्जिया संखेज्जगुणा एवं जाव थणियकुमारा । एएसि णं भंते ! पुढविकाइयाणं छक्केहिं समज्जियाणं छक्केहि य नोछक्केण य समज्जियाणं कयरे २ जाव विसेसाहिया वा ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा पुढविकाइया छक्केहिं समज्जिया छक्केहि य नोछक्केण य समज्जिया संखेज्जगुणा एवं जाव वणस्सइकाइयाणं, बेइंदियाणं जाव वेमाणियाणं जहा नेरइयाणं । एएसि णं भंते ! सिद्धाणं छक्कसमज्जियाणं नोछक्कसमज्जियाणं जाव छक्केहि य नोछक्केण य समज्जियाण य कयरे २ जाव विसेसाहिया वा ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा सिद्धा छक्केहि य नोछक्केण य समज्जिया छक्केहिं समज्जिया संखेज्जगुणा छक्केण य नोछक्केण य समज्जिया संखेज्जगुणा छक्कसमज्जिया संखेज्जगुणा नो-

२० शतके उद्देशः १० कतिसंचितादि सू ६८७

॥७९७॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

छक्कसमज्जिया संखेज्जगुणा। नेरइया णं भंते! किं बारससमज्जिया १ नोबारसमज्जिया २ बारसएण य नोबारसएण य समज्जिया ३ बारसएहिं समज्जिया ४ बारसएहिं नोबारसएण य समज्जियावि ५?, गोयमा! नेरतिया बारससमज्जियावि जाव बारसएहि य समज्जियावि, से केणट्ठेणं जाव समज्जियावि?, गोयमा! जे णं नेरइया बारसएणं पवेसणएणं पविसंति ते णं नेरइया बारससमज्जिया १ जे णं नेरइया जहन्नेणं एक्केण वा दोहिं वा तीहिं वा उक्कोसेणं एक्कारसएणं पवेसणएणं पविसंति ते णं नेरइया नोबारससमज्जिया २ जे णं नेरइया बारसएणं अन्नेण य जहन्नेणं एक्केण वा दोहिं वा तीहिं वा उक्कोसेणं एक्कारसएणं पवेसणएणं पविसंति ते णं नेरइया बारसएण य नोबारसएण य समज्जिया ३ जे णं नेरइया णेगेहिं बारसएहिं पवेसणगं पविसंति ते णं नेरतिया बारसएहिं समज्जिया ४ जे णं नेरइया णेगेहिं बारसएहिं अन्नेण य जहन्नेणं एक्केण वा दोहिं वा तीहिं वा उक्कोसेणं एक्कारसएणं पवेसणएणं पविसंति ते णं नेरइया बारसएहि य नोबारसएण य समज्जिया ५, से तेणट्ठेणं जाव समज्जियावि, एवं जाव थणियकुमारा, पुढविकाइयाणं पुच्छा गोयमा! पुढविकाइया नोबारससमज्जिया १ नो नोबारससमज्जिया २ नो बारसएण य समज्जिया ३ बारसएहिं समज्जिया ४ बारसेहि य नो बारसेण य समज्जियावि ५, से केणट्ठेणं जाव समज्जियावि? [ग्रन्थाग्रम् १२०००] गोयमा! जे णं पुढविकाइया णेगेहिं बारसएहिं पवेसणगं पविसंति ते णं पुढविकाइया बारसएहिं समज्जिया. जे णं पुढविकाइया णेगेहिं बारसएहिं अन्नेण य जहन्नेणं एक्केण वा दोहिं वा तीहिं वा उक्कोसेणं एक्कारसएणं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पवेसणएणं पविसंति ते णं पुढविकाइया बारसएहिं नोबारसएण य समज्जिया से तेणट्ठेणं जाव समज्जियावि, एवं जाव वणस्सइकाइया, बेइंदिया जाव सिद्धा जहा नेरइया। एएसि णं भंते ! नेरतियाणं बारससमज्जियाणं० सव्वेसिं अप्पाबहुगं जहा छक्कसमज्जियाणं नवरं बारसाभिलावो सेसं तं चेव। नेरतिया णं भंते ! किं चुलसीतिसमज्जिया नोचुलसीतिसमज्जिया २ चुलसीते य नोचुलसीते य समज्जिया ३ चुलसीतीहिं समज्जिया ४ चुलसीतीहि य नोचुलसीतीए समज्जिया ५ ?, गोयमा ! नेरतिया चुलसीतीए समज्जियावि जाव चुलसीतीहि य नोचुलसीतिए य समज्जियावि, से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुचइ जाव समज्जियावि ?, गोयमा ! जे णं नेरइया चुलसीतीएणं पवेसणएणं पविसंति ते णं नेरइया चुलसीतिसमज्जिया १ जे णं नेरइया जहन्नेणं एक्केण वा दोहिं वा तीहिं वा उक्कोसेणं तेसीतीपवेसणएणं पविसंति ते णं नेरइया नोचुलसीतिसमज्जिया २ जे णं नेरइया चुलसीतीएणं अन्नेण य जहन्नेणं एक्केण वा दोहिं वा तीहिं वा जाव उक्कोसेणं तेसीतीएणं पवेसणएणं पविसंति ते णं नेरतिया चुलसीतीए नोचुलसीतिएण य समज्जिया ३ जे णं नेरइया णेगेहिं चुलसीतीएहिं पवेसणगं पविसंति ते णं नेरतिया चुलसीतीएहिं समज्जिया ४ जे णं नेरइया णेगेहिं चुलसीतिएहिं अन्नेण य जहन्नेणं एक्केण वा जाव उक्कोसेणं तेसीइएणं जाव पवेसणएणं पविसंति ते णं नेरतिया चुलसीतीहि य नोचुलसीतीए य समज्जिया ५, से तेणट्ठेणं जाव समज्जियावि, एवं जाव थणियकुमारा, पुढविक्काइया तहेव पच्छिल्लएहिं दोहिं २ नवरं अभिलावो चुलसीतीओ भंगो एवं जाव वणस्सइकाइया,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

बेंदिया जाव वेमाणिया जहा नेरतिया। सिद्धा णं पुच्छा, गोयमा ! सिद्धा चुलसीतिसमज्जियावि १ नो-चुलसीतिसमज्जियावि २ चुलसीते य नोचुलसीतीए समज्जियावि ३ नोचुलसीतीहिं समज्जिया ४ नोचुल-सीतीहि य नोचुलसीतीए य समज्जिया ५, से केणट्ठेणं जाव समज्जिया ?, गोयमा ! जे णं सिद्धा चुलसीती-एणं पवेसणएणं पविसंति ते णं सिद्धा चुलसीतिसमज्जिया जे णं सिद्धा जहन्नेणं एक्केण वा दोहिं वा तीहिं वा उक्कोसेणं तेसीतीएणं पवेसणएणं पविसंति ते णं सिद्धा नोचुलसीतिसमज्जिया, जे णं सिद्धा चुलसीय-एणं अन्नेण य जह० एक्केण वा दोहिं वा तीहिं वा उक्कोसेणं तेसीएणं पवेसणएणं पविसंति ते णं सिद्धा चुल-सीतीए य नोचुलसीतीए य समज्जिया, से तेणट्ठेणं जाव समज्जिया। एएसि णं भंते ! नेरतियाणं चुलसी-तिसमज्जियाणं नोचुलसी० सवेसिं अप्पाबहुगं जहा छक्कसमज्जियाणं जाव वेमाणियाणं नवरं अभिलावो चुल-सीतिओ। एएसि णं भंते ! सिद्धाणं चुलसीतिसमज्जियाणं नोचुलसीतिसमज्जियाणं चुलसीतीए य नोचुल-सीतीए य समज्जियाणं कयरे २ जाव विसेसा० ?, गोयमा ! सव्वत्थोवा सिद्धा चुलसीतीए य नोचुलसीतीए य समज्जिया चुलसीतीसमज्जिया अणंतगुणा नोचुलसीतिसमज्जिया अणंतगुणा। सेवं भंते ! २ त्ति जाव विहरइ ॥ (सूत्रं ६८७) ॥ २०–१० ॥ वीसतिमं सयं समत्तं ॥ २० ॥

'नेरइए'त्यादि, 'कइसंचिय'त्ति कतीति सङ्ख्यावाची ततश्च कतित्वेन सञ्चिताः–एकसमये सङ्ख्यातोत्पादेन पिण्डिताः कतिसञ्चिताः, एवम् 'अकइसंचिय'त्ति नवरम् 'अकइ'त्ति सङ्ख्यानिषेधः–असङ्ख्यातत्वमनन्तत्वं चेति, 'अवत्तगसंचिय'-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत सूत्रांक [६८७]

दीप अनुक्रम [८०५]

व्याख्या-प्रज्ञप्तिः अभयदेवी-या वृत्तिः २

॥७९९॥

त्ति द्व्यादिसङ्ख्याव्यवहारतः शीर्षप्रहेलिकायाः परतोऽसङ्ख्यातव्यवहारतश्च सङ्ख्यातत्वेनासङ्ख्यातत्वेन च वक्तुं न शक्यतेऽसाव-वक्तव्यः स चैककस्तेनावक्तव्येन–एककेन एकत्वोत्पादेन सञ्चिता अवक्तव्यसञ्चिताः, तत्र नारकादयस्त्रिविधा अपि, एक-समयेन तेषामेकादीनामसङ्ख्यातान्तानामुत्पादात्, पृथिवीकायिकादय ५ स्वकतिसञ्चिता एव, तेषां समयेनासङ्ख्यातानामेव प्रवेशाद्, वनस्पतयस्तु यद्यप्यनन्ता उत्पद्यन्ते तथाऽपि प्रवेशनकं विजातीयेभ्य आगतानां यस्तत्रोत्पादस्तद्विवक्षितं, अस-ङ्ख्याता एव विजातीयेभ्य उद्वृत्तास्तत्रोत्पद्यन्त इति सूत्रे उक्तम् 'एवं जाव वणस्सइकाइय'त्ति, सिद्धा नो अकतिसञ्चिता अन-न्तानामसङ्ख्यातानां वा तेषां समयेनासम्भवादिति ॥ एषामेवाल्पबहुत्वं चिन्तयन्नाह—'एएसी'त्यादि, अवक्तव्यकसञ्चिताः स्तोकाः अवक्तव्यकस्थानस्यैकत्वात्, कतिसञ्चिताः सङ्ख्यातगुणाः, सङ्ख्यातत्वात् सङ्ख्यातस्थानकानाम्, अकतिसञ्चितास्त्व-सङ्ख्यातगुणाः असङ्ख्यातस्थानकानामसङ्ख्यातत्वादित्येके, अन्ये त्वाहुः–वस्तुस्वभावोऽत्र कारणं न तु स्थानकाल्पत्वादि, कथ-मन्यथा सिद्धाः कतिसञ्चिताः स्थानकबहुत्वेऽपि स्तोका अवक्तव्यकस्थानकस्यैकत्वेऽपि सङ्ख्यातगुणा द्व्यादित्वेन केवलिनाम-ल्पानामायुःसमासेः इयं च लोकस्वभावादेवेति ॥ नारकाद्युत्पादविशेषणभूतसङ्ख्याऽधिकारादिदमाह—'नेरइया ण'मि-त्यादि 'छक्कसमज्जिय'त्ति षट् परिमाणमस्येति षट्कं वृन्दं तेन समर्जिताः–पिण्डिताः षट्कसमर्जिताः, अयमर्थः–एकत्र समये ये समुत्पद्यन्ते तेषां यो राशिः स षट्प्रमाणो यदि स्यात्तदा ते षट्कसमर्जिता उच्यन्ते १ 'नोछक्कसमज्जिय'त्ति नोषट्कं–षट्काभावः ते चैकादयः पञ्चान्तास्तेन नोषट्केन–एकाद्युत्पादेन ये समर्जितास्ते तथा २ तथा 'छक्केण य नोछक्केण य सम-ज्जिय'त्ति एकत्र समये येषां षट्कमुत्पन्नमेकाद्यधिकं ते षट्केन नोषट्केन च समर्जिता उक्ताः 'छक्केहि य समज्जिय'त्ति एकत्र

२० शतके उद्देशः १० कतिसंचि-तादि सू ६८७

॥७९९॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

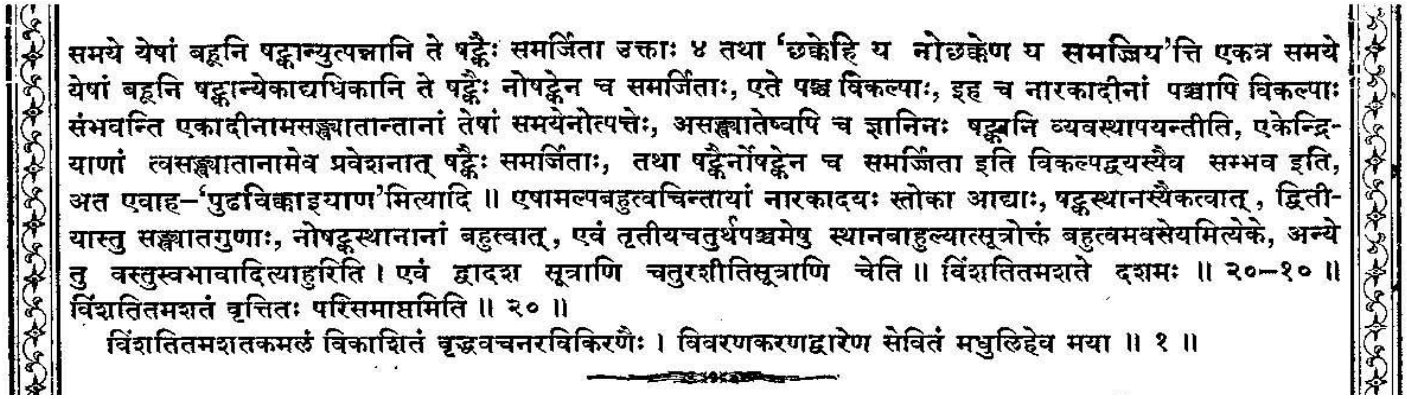

समये येषां बहूनि षट्कान्युत्पन्नानि ते षट्कैः समर्जिता उक्ताः ४ तथा 'छक्केहि य नोछक्केण य समज्जिय'त्ति एकत्र समये येषां बहूनि षट्कान्येकाद्यधिकानि ते षट्कैः नोषट्केन च समर्जिताः, एते पञ्च विकल्पाः, इह च नारकादीनां पञ्चापि विकल्पाः संभवन्ति एकादीनामसङ्ख्यातान्तानां तेषां समयेनोत्पत्तेः, असङ्ख्यातेष्वपि च ज्ञानिनः षट्कानि व्यवस्थापयन्तीति, एकेन्द्रियाणां त्वसङ्ख्यातानामेव प्रवेशनात् षट्कैः समर्जिताः, तथा षट्कैर्नोषट्केन च समर्जिता इति विकल्पद्वयस्यैव सम्भव इति, अत एवाह–'पुढविक्काइयाण'मित्यादि ॥ एषामल्पबहुत्वचिन्तायां नारकादयः स्तोका आद्याः, षट्कस्थानस्यैकत्वात्, द्वितीयास्तु सङ्ख्यातगुणाः, नोषट्कस्थानानां बहुत्वात्, एवं तृतीयचतुर्थपञ्चमेषु स्थानबाहुल्यात्सूत्रोक्तं बहुत्वमवसेयमित्येके, अन्ये तु वस्तुस्वभावादित्याहुरिति। एवं द्वादश सूत्राणि चतुरशीतिसूत्राणि चेति ॥ विंशतितमशते दशमः ॥ २०–१० ॥ विंशतितमशतं वृत्तितः परिसमाप्तमिति ॥ २० ॥

विंशतितमशतकमलं विकाशितं वृद्धवचनरविकिरणैः। विवरणकरणद्वारेण सेवितं मधुलिहेव मया ॥ १ ॥

अत्र विंशतितमे शतके दशम-उद्देशक: परिसमाप्त:

तत् समाप्ते विंशतितमं शतकं अपि समाप्तं

	सवृत्तिक-आगम-सुत्ताणि भाग १ से ४० में कहां क्या मिलेगा?		
भाग	इस भागमे समाविष्ट आगम के नाम और आगम-क्रम		कुलपृष्ठ
01	आगम ०१ आचार मूलं एवं वृत्ति भाग-१ श्रुतस्कन्ध-१, अध्ययन- १,२		३१४
02	आगम ०१ आचार मूलं एवं वृत्ति, भाग-२ श्रुतस्कन्ध-१, अध्ययन- ३ से ९, श्रुतस्कन्ध- २		५८६
03	आगम ०२ सूत्रकृत मूलं एवं वृत्ति, भाग-१ श्रुतस्कन्ध-१, अध्ययन- १ से १३		४९८
04	आगम ०२ सूत्रकृत मूलं एवं वृत्ति, भाग-२ श्रुतस्कन्ध-१, अध्ययन १४ से १६, श्रुतस्कन्ध-२		३९२
05	आगम ०३ स्थान मूलं एवं वृत्ति, भाग-१ स्थान- १ से ४		५९४
06	आगम ०३ स्थान मूलं एवं वृत्ति, भाग-२ स्थान- ५ से १० संपूर्ण		४९४
07	आगम ०४ समवाय मूलं एवं वृत्ति.		३३८
08	आगम ०५ भगवती मूलं एवं वृत्ति, भाग-१ शतक- १ से ६		५९२
09	आगम ०५ भगवती मूलं एवं वृत्ति, भाग-२ शतक- ७ से ११		५५२
10	आगम ०५ भगवती मूलं एवं वृत्ति, भाग-३ शतक- १२ से २०		५१४
11	आगम ०५ भगवती मूलं एवं वृत्ति, भाग-४ शतक- २१ से ४१ संपूर्ण		३८४
12	आगम ०६ ज्ञाताधर्मकथा मूलं एवं वृत्ति.		५२२
13	आगम-७,८,९,१०उपासकदशा, अंतकृतदशा, अनुत्तरोपपातिकदशा, प्रश्नव्याकरण मूलं एवं वृत्ति.		५३८
14	आगम-११,१२, विपाक, उववाई मूलं एवं वृत्ति.		३८४
15	आगम १३ राजप्रश्नीय मूलं एवं वृत्ति.		३१४
16	आगम१४ जीवाजीवाभिगम भाग-१ मूलं एवं वृत्ति. [प्रतिपत्ति-३-अतर्गत] सूत्र- १ से १३८		४८०
17	आगम१४ जीवाजीवाभिगम भाग-२ मूलं एवं वृत्ति. [प्रतिपत्ति-३-अतर्गत] सूत्र- १३९ से प्रतिपत्ती-१० संपूर्ण		४८८
18	आगम १५ प्रज्ञापना भाग-१ मूलं एवं वृत्ति. पद- १ से ५		४२६
19	आगम १५ प्रज्ञापना भाग-२ मूलं एवं वृत्ति. पद- ६ से २२		५१४
20	आगम १५ प्रज्ञापना भाग-३ मूलं एवं वृत्ति. पद- २३ से ३६ संपूर्ण		३३६
21	आगम १६ सूर्यप्रज्ञप्ति मूलं एवं वृत्ति.		६१०

	सवृत्तिक-आगम-सुत्ताणि भाग १ से ४० में कहां क्या मिलेगा?		
भाग	इस भागमे समाविष्ट आगम के नाम और आगम-क्रम		कुलपृष्ठ
22	आगम १७ चन्द्रप्रज्ञप्ति मूलं एवं वृत्ति.		६०८
23	आगम१८ जंबूद्विपप्रज्ञप्ति भाग-१ मूलं एवं वृत्ति. वक्षस्कार- १ एवं २.		३६८
24	आगम१८ जंबूद्विपप्रज्ञप्ति भाग-२ मूलं एवं वृत्ति. वक्षस्कार- ३ एवं ४.		४१६
25	आगम१८ जंबूद्विपप्रज्ञप्ति भाग-३ मूलं एवं वृत्ति. वक्षस्कार- ५ से ७.		३३६
26	आगम १९ थी ३२ निरयावलिका, कल्पवतंसिका, पुष्पिका, पुष्पचूलिका, वृष्णिदशा, चतु:शरण, आतुरपरत्याख्यान, महाप्रत्याख्यान, भक्तपरिज्ञा, तंदुलवैचारिक, संस्तारक, गच्छाचार, गणिविद्या, देवेन्द्रस्तव मूलं एवं छाया		३०४
27	आगम ३३ थी ३९ मरणसमाधि मूलं एवं छाया, निशीथ, ब्रुहत्कल्प, व्यवहार, दशाश्रुतस्कंध, जीतकल्प/पंचकल्प, महानिशीथ मूलं एव		३२०
28	आगम ४० आवश्यक मूलं एवं वृत्ति, भाग-१, निर्युक्ति- १ से ५२१		४५६
29	आगम ४० आवश्यक मूलं एवं वृत्ति, भाग-२, निर्युक्ति- ५२२ से ९५१		४३२
30	आगम ४० आवश्यक मूलं एवं वृत्ति, भाग-३ निर्युक्ति- ९५२ से १२७३ अपूर्ण, [अध्ययन- १ से ४ अपूर्ण]		४५६
31	आगम ४० आवश्यक मूलं एवं वृत्ति, भाग-४ निर्युक्ति- १२७३ अपूर्ण से १६२३, [अध्ययन- ४ अपूर्ण से ६ संपूर्ण]		४१६
32	आगम ४१/१ ओघनिर्युक्ति मूलं एवं वृत्ति.		४६४
33	आगम ४१/२ पिंडनिर्युक्ति मूलं एवं वृत्ति.		३६८
34	आगम ४२ दशवैकालिक मूलं एवं वृत्ति.		५८४
35	आगम ४३ उत्तराध्यन मूलं एवं वृत्ति, भाग-१, अध्ययन- १ से ५		५१२
36	आगम ४३ उत्तराध्यन मूलं एवं वृत्ति, भाग-२, अध्ययन- ६ से २१		४७२
37	आगम ४३ उत्तराध्यन मूलं एवं वृत्ति, भाग-३, अध्ययन- २२ से ३६		४५६
38	आगम ४४ नन्दिसूत्र मूलं एवं वृत्ति.		५२०
39	आगम ४५ अनुयोगद्वार् मूलं एवं वृत्ति.		५५२
40	कल्प[बारसा]सूत्र... चतु:शरण, तन्दुलवैचारिक, गच्छाचार मूलं एवं वृत्ति.		४००

आगम
वाचना शताब्दी वर्ष

नमो नमो निम्मलदंसणस्स

सवृत्तिक-आगम-सुत्ताणि

मूल संशोधक

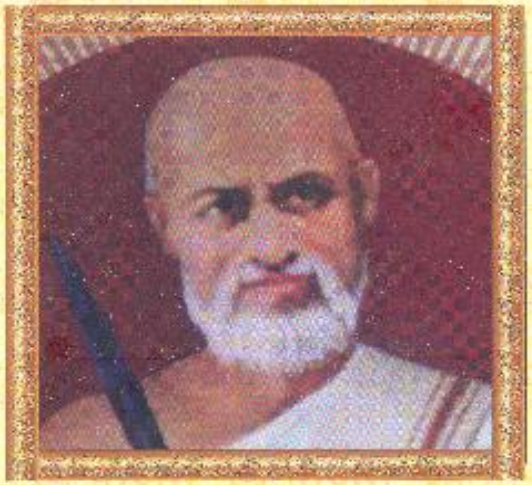

पूज्यपाद आगमोद्धारक आचार्य
श्री आनंदसागरसूरीश्वरजी महाराज

अभिनव-संकलनकर्ता

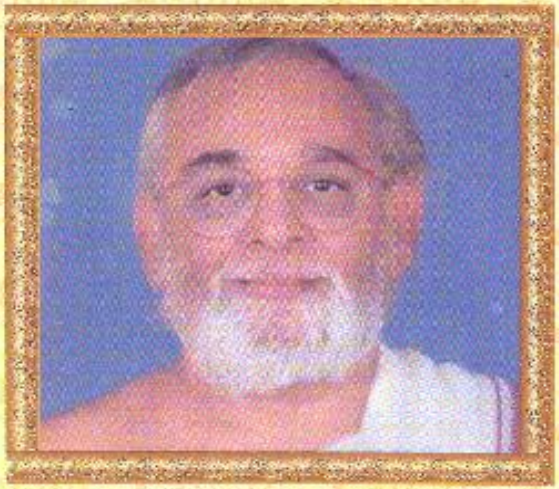

आगम दिवाकर मुनिश्री दीपरत्नसागरजी
[M.Com., M.Ed., Ph.D., श्रुतमहर्षि]

प्रत-प्राप्ति और पेज-सेटिंग कर्ता : www.jainelibrary.org के चेरमन श्री प्रवीणभाई शाह, अमेरिका
मुद्रक : नवप्रभात प्रिन्टींग प्रेस अमदाबाद Mo 9825598855 / 9825306275

ईस प्रोजेक्ट के संपूर्ण-अनुदान-दाता

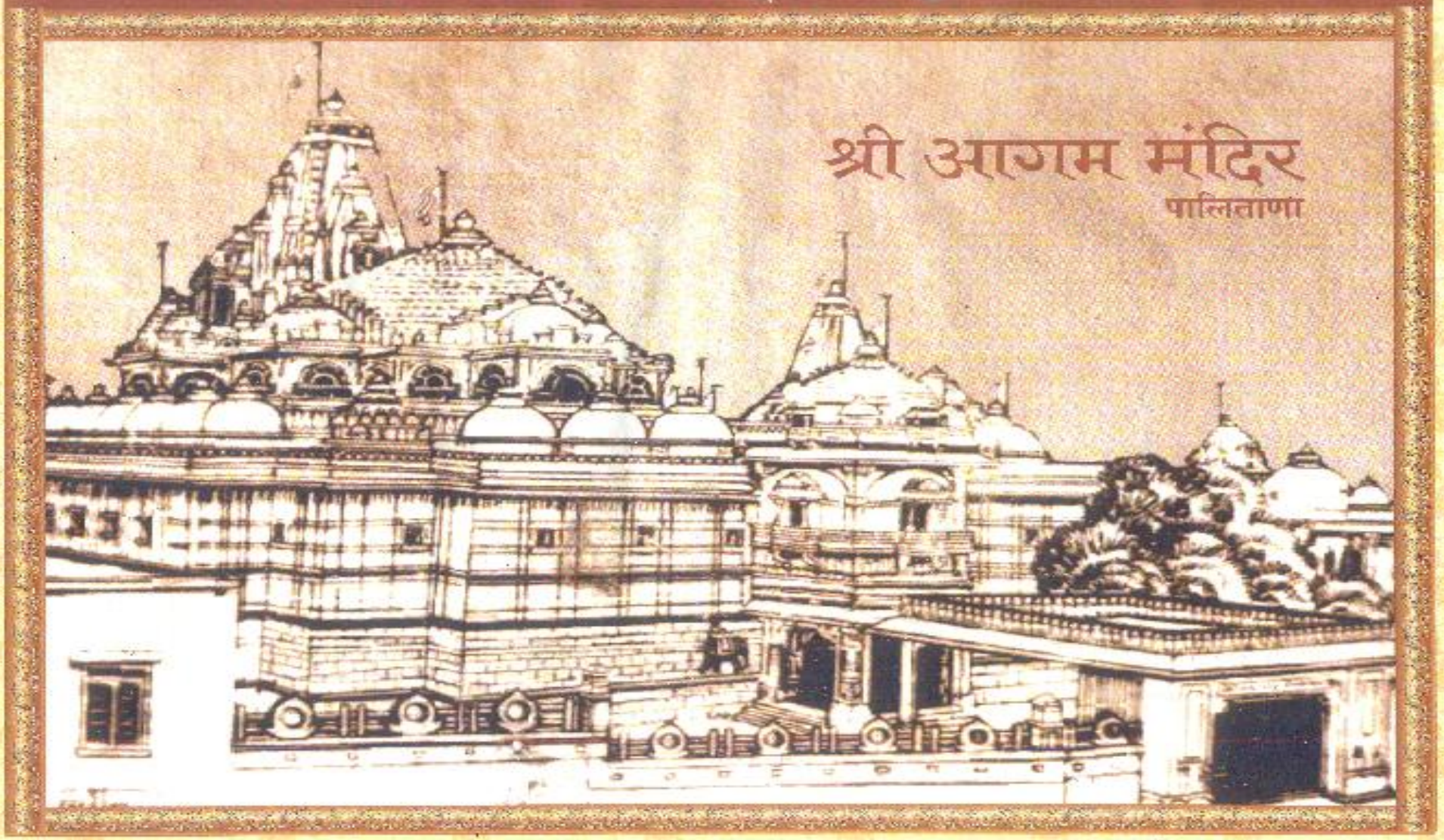

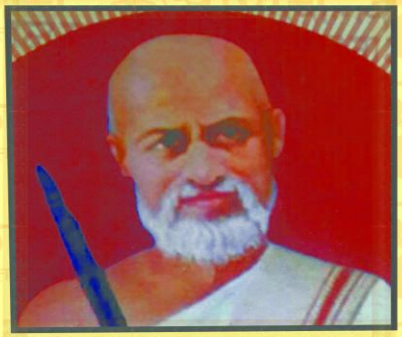

मूल संशोधक

पूज्यपाद आगमोद्धारक आचार्य

श्री आनंदसागरसूरीश्वरजी महाराजसाहेब

आगम - ५

'भगवती' मूलं एवं वृत्तिः [३]

अभिनव-संकलनकर्ता

आगम दिवाकर मुनिश्री दीपरत्नसागरजी

[M.Com., M.Ed., Ph.D., श्रुतमहर्षि]